

प्राथमिक

[प्रथम संस्करण से]

मनुष्य में जो सोचने-समझने की योग्यता है उसके फलस्वरूप उसे अपने विषय की चिन्ता ने अनादिकाल से सताया है। घर्तमान की चिन्ताओं के अतिरिक्त उसे इस बात की भी बड़ी जिज्ञासा रही है कि भविष्य में उसका क्या होने वाला है? कल की बात आज जान लेने के लिए वह इतना आतुर हुआ है कि उसने जाना प्रकार के आधारों से भविष्य का अनुमान करने का प्रयत्न किया है। मनुष्य के रूप, रंग, शरीर व अंग-प्रत्यंग के गठन आदि पर से तो उसके भविष्य का अनुमान करना स्वाभाविक ही है। किन्तु उसकी बाहरी परिस्थितियों, यहाँ तक कि तारों और नक्षत्रों की स्थिति पर से एक-एक प्रणी के भविष्य का अनुमान लगाना भी बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित पाया जाता है। फलित ज्योतिष में लोगों का विश्वास सभी देशों में रहा है। इसी कारण इस विषय का साहित्य बहुत विपुल पाया जाता है। ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान के आधार से अपनी जीविका अर्जन करने वाले लोगों की कभी किसी देश में कमी नहीं हुई।

भारतवर्ष का ज्योतिष शास्त्र भी बहुत प्राचीन है। संस्कृत और प्राकृत में इस विषय के अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। ज्योतिष शास्त्र के मुख्य भेद हैं गणित और फलित। गणित ज्योतिष विज्ञानात्मक है जिसके द्वारा प्रहों की गति और स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर काल-गणना में उसका उपयोग किया जाता है। प्रहों की स्थिति व गति पर से जो शुभ-अशुभ फल का निरूपण किया जाता है उसे फलित ज्योतिष कहते हैं। इसका आधार लोक-अद्वा के सिद्धाय और कुछ प्रतीत नहीं होता। तथापि उसकी लोकप्रियता में कोई सन्देह नहीं। यति, मुनि, साधु-सन्त व विद्वानों से बहुधा लोग आशा करते हैं कि वे उनके व उनके बाल-बच्चों के भावी जीवन व सुख-दुःख की बात बतला दें। किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि ये भविष्यवाणियाँ सदैव सत्य नहीं निकलतीं। यों 'हो' और 'ना' के बीच प्रत्येक पक्ष की पचास प्रतिशत सम्भावना अवश्यम्भावी है। इस प्रसंग में यूनान के द्वितीयास की एक बात याद आती है। उस देश में 'डेल्फी' नामक देवता के मन्दिर के



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

I creator of
hinduism
server!

पुजारी का काम था कि वह लोगों को बतलावे कि वे अमुक कार्य में सफल होंगे या नहीं। एक वैज्ञानिक ने उसकी भविष्यवाणी की प्रामाणिकता में सन्देह प्रकट किया। भविष्यवक्ता ने उनका ध्यान भन्दिर की उस विपुल धनराशि की ओर आकर्षित किया जो वही की सफल भविष्यवाणी के पुरस्कारों द्वारा संचित हुई थी। “यदि समृद्ध-यात्रा को जाने वाले व्यापारियों को बसलाया गया शुभमृद्दत्तं सच न निकला होता, तो वे क्यों यह सब भेट वहीं लौटकर अपित करते !” भविष्य-वक्ता के इस प्रण के उत्तर में वैज्ञानिक ने कहा—“यह एक पक्ष का इतिहास तो आपका ठीक है। किन्तु क्या आपके पास उन व्यापारियों का भी कोई लेखा-जोखा है, जो आपके बतलाये शुभमृद्दत्तं में यात्रा को निकले, किन्तु फिर लौटकर घर न आ सके ?”

फलित ज्योतिष के भर्मस्थल पर यह बज्जाधात सहूलों दर्श पूर्व हो चुका है। हिन्दू, बौद्ध व जैन-शास्त्रों में भी साधुओं को ज्योतिष-फल कहने का निषेध किया गया है, जो उसकी सन्देहात्मकता का ही परिचायक है। तथापि यह कला आज भी जीवित है और कुछ वर्गों में लोकप्रिय भी है।

फलित ज्योतिष का एक अंग है—‘अष्टांगनिमित्त’। इसमें शरीर के तिल, मसा-आदि अंजनों, हाथ-पैर आदि अंगों, छवनियों व स्वरों, भूमि के रंग रूप, वस्त्र-शस्त्रादि के छिद्रों, यह नक्षत्रों के उत्तर-भूस्त, शंख, चक्र, कलश आदि लक्षणों तथा स्वर्ज में देखा गयी वस्तुओं व घटनाओं का विचार कर शुभाशुभ रूप भविष्य फल कहा जाता है। एक जीनश्रुति के अनुसार, इस निमित्तशास्त्र के महान् ज्ञाता भद्रबाहु थे। कोई इन्हें श्रुतकेवली भद्रबाहु ही मानता । जिन्होंने इसी ज्ञान के बल से उत्तर भारत में आने वाले द्वादशवर्षीय दुर्भिक्ष की बात जानकर अपने संप सहित दक्षिण की ओर गमन किया था। कोई इन्हें प्रसिद्ध ज्योतिष-चार्य दराहमिहिर का समकालीन व उनका भ्राता ही कहते हैं। प्रस्तुत भद्रबाहु-संहिता का विषय निमित्तशास्त्र का प्रतिपादन करना है। यह ग्रन्थ पहले भी छम चुका है, तथा इसके कर्तृत्व के सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार भी किया जा चुका है। पं. जुगलकिशोर जी मुजलार के मतानुसार यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली की रचना न होकर कुछ ‘इधर-उधर के प्रकरणों का बेढ़ंगा संग्रह’ है और उसका रचनाकाल वि. सं. 1657 के पश्चात् का है। किन्तु मुनि जिनविजय जी को इस ग्रन्थ की एक प्रति वि. सं. 1480 के आसपास की मिली थी, जिसके आधार से उन्होंने इस ग्रन्थ को वि. सं. थी। १२वीं शताब्दी से भी प्राचीन अनुमान किया है। प्रस्तुत संस्करण के सम्पादक का मत है कि इस रचना का संकलन वि. की आठवीं, नीवीं शताब्दी में हुआ होगा।

पं. नेमिचन्द्र शास्त्री ने अपने इस प्रस्तुत संस्करण में पूर्व मुद्रित ग्रन्थ के अतिरिक्त ‘जैन सिद्धान्त भवन आरा’ की दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों का भी उपयोग किया है। उन्होंने मूल के संस्कृत पद्यों का पूरा अनुवाद भी किया है व

प्रत्येक अध्याय के अन्त में 'वृहत्संहिता' आदि कोई बीस-बाईस अन्य ग्रन्थों के आधार से विषय-विवेचना भी किया है। उन्होंने अपनी बुहत् प्रस्तावना में विषय एवं ग्रन्थ की रचना आदि विषयों पर भी महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है। इस सफल प्रयास के लिए हम यिद्धाज्ञ सम्पादक या अधिनायक नहीं हैं और उसके उत्तम रीति से प्रकाशन के लिए 'भारतीय ज्ञानपीठ' के संचालकों को बधाई देते हैं।

—ही. ला. जीन

—आ. ने. उपाध्ये

ग्रन्थमाला सम्पादक

(प्रथम संस्करण)

प्रस्तावना

[प्रथम संस्करण से]

अत्यन्त प्राचीन काल से ही आकाशमण्डल मानव के लिए कौतूहल का विषय बना हुआ है। सूर्य और चन्द्रमा से परिचित हो जाने के पश्चात् ताराओं के सम्बन्ध में मानव को जिज्ञासा उत्पन्न हुई और उसने ग्रह एवं उपग्रहों के वास्तविक स्वरूप को अवगत किया। जैन परम्परा बतलाती है कि आज से लाखों वर्ष पूर्व कर्मभूमि के प्रारम्भ में प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति के समय में, जब मनुष्यों को सर्व-प्रथम सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो वे इनसे संरक्षित हुए और अपनी उत्कर्णा जान्त करने के लिए उक्त प्रतिश्रुति नामक कुलकर मनु के पास गये। उक्त मनु ने ही सौर-जगत् सम्बद्धी जारी जानकारी वर्णयी और ये ही सौर-जगत् की जातव्य वाले ज्योतिष शास्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुई। आगमिक परम्परा अनवच्छिन्न रूप से अनादि होने पर भी इस युग में ज्योतिषशास्त्र की नींव का इतिहास यहीं से आरम्भ होता है। मूलभूत सौर-जगत् के सिद्धान्तों के आधार पर गणित और फलित ज्योतिष का विकास प्रतिश्रुति मनु के सहस्रों वर्ष के बाद हुआ तथा ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति के आधार पर भावी फलाफलों का निरूपण भी उसी समय से होने लगा। कठिन भारतीय पुरातत्त्वविदों की यह मान्यता है कि गणित ज्योतिष की अपेक्षा फलित ज्योतिष का विकास पहले हुआ है; क्योंकि आदि मानव को अपने कार्यों की सफलता के लिए समय शुद्धि की आवश्यकता होती थी। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यही है कि कठ, यजुष और साम ज्योतिष में नक्षत्र और तिथि-शुद्धि का ही निरूपण मिलता है। ग्रह-गणित की चर्चा सर्वप्रथम सूर्य सिद्धान्त और एच्चसिद्धान्तिका में मिलती है। वेदांग ज्योतिष प्रमुख रूप से समय-शुद्धि का ही विधान करता है।

ज्योतिष के तीन भेद हैं—सिद्धान्त, संहिता और होरा। सिद्धान्त के भी तीन भेद किये गये हैं—सिद्धान्त, तन्त्र और करण। जिन ग्रन्थों में सृष्ट्यादि से इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण बनाकर ग्रह-गणित की प्रक्रिया निरूपित की गयी है, वे तन्त्र ग्रन्थ और जिनमें कलिष्ठ इष्ट वर्ष का युग मानकर उस युग के भीतर ही किसी अभीष्ट दिन का अहर्गण लाकर ग्रहान्तरण की प्रक्रिया निरूपित की जाय,

उन्हें करण ग्रन्थ कहते हैं।

संहिता ग्रन्थों में भूशोधन, दिक्शोधन, शत्योद्धार, मेलापक, आयादानयन, गृहोपकरण, इष्टिकाद्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयनिमणि, मांगलिक कार्यों के मुहूर्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहों के उदयास्त का फल, ग्रह चार का फल, शकुन-विचार, कृषि सम्बन्धी विभिन्न समस्याएं, निमित्त एवं ग्रहण फल आदि बातों का विचार किया जाता है।

होरा का दूसरा नाम जातक भी है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्द से है। आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र' का लोप कर देने से होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहों की स्थिति के अनुसार व्यक्ति के लिए फलाफल का निरूपण किया जाता है। इसमें जातक की उत्पत्ति के समय के नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदि का फल विस्तार के साथ बताया गया है। ग्रह एवं राशियों के वर्ण, स्वभाव, गुण, आकार, प्रकार आदि बातों का प्रतिपादन बड़ी सफलतापूर्वक किया गया है। जन्मकुण्डली का फलादेश कहता तो इस शास्त्र का मुख्य उद्देश्य है तथा इस शास्त्र में पह भी बताया गया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहों के बिन्दुओं में स्वाभाविक शुभ और अशुभपना विद्यमान है, किन्तु उनमें परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्ध से फल विशेष शुभाशुभ रूप में परिणत हो जाता है, जिसका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियों पर भी पूर्ण रूप से पड़ता है। इस शास्त्र में देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावों का वर्णन रहता है। जन्म-नक्षत्र और जन्म-लग्न पर से फलादेश का वर्णन होरा शास्त्र में पाया जाता है।

संहिता-ग्रन्थों का विकास

संहिता-ग्रन्थों का विकास जीवन के व्यावहारिक क्षेत्र में ज्योतिष विषयक तत्त्वों को स्थान प्रदान करने के लिए ही हुआ है। कृषि की उन्नति एवं प्रगति ही संहिता-ग्रन्थों का प्रधान प्रतिपाद्य विषय है। वेदों में भी फलित ज्योतिष के अनेक सिद्धान्त आये हैं। कृषि के सम्बन्ध में नाना प्रकार की जानकारी और विभिन्न प्रकार के निमित्तों का वर्णन अथर्ववेद में आया है। जय-पराजय दिव्यक निमित्त तथा विभिन्न प्रकार के शकुन भी इस ग्रन्थ में वर्णित हैं। ऋग्वेद के कृतु, अयन, वर्ष, दिन, संवत्सर आदि भी संहिताओं के मूलभूत सिद्धान्तों में परिगणित हैं। संस्कृत साहित्य के उत्पत्तिकालीन साहित्य में भी संहिताओं के तत्त्व उपलब्ध होते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि वराहमिहिर के पूर्ववर्ती संहिता-ग्रन्थों का अभाव है, पर इनके द्वारा उल्लिखित मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणितथ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य जैसे अनेक ज्योतिविदों के ग्रन्थ बर्तमान ये, यह सहज में जाना जा सकता है। संहिता-ग्रन्थों में निमित्त, वास्तुशास्त्र, मुहूर्त-

शास्त्र, अरिष्ट एवं शकुन आदि का वर्णन रहता है। जीवनोपयोगी प्रायः सभी व्यावहारिक विषय संहिता के अन्तर्गत आ जाते हैं।

व्यापक रूप से संहिताशास्त्र के बीजसूत्र अथवेद के अतिरिक्त आश्वलायन गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशीसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, सांख्यायन गृह्यसूत्र, पाणिनीय व्याकरण, मनुस्मृति, याज्ञवल्य स्मृति, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, स्वर्णवासवदत्त नाटक एवं हर्षचरित प्रभृति ग्रन्थों में विद्यमान हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र में—“श्रावण्या पौर्णमास्यां श्रावणकमण्डिष्ठानं” “सीषन्तोन्नधनं” “यदा पुष्ट्यनक्षत्रेण चन्द्रमा यृक्तः स्यात्।” इन वाक्यों में मुहूर्त के साथ विभिन्न संस्कारों की समय-शुद्धि एवं विविध विधानों का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ में 3, 7-8 में जंगली कबूतरों का घर में घोंसला बनाना अशुभ कहा गया है। यह शकुन प्रक्रिया संहिता ग्रन्थों का प्राण है। पारस्कर गृह्यसूत्र में—“त्रिषु त्रिषु उत्तरादिषु स्वात्मा भृत्यशिरांसे रोहण्या”—इत्यादि सूत्र में उत्तराफालगुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी नक्षत्र को विवाह नक्षत्र कहा है। इतना ही नहीं इस सूत्रग्रन्थ में अकाश का वर्ण एवं कई ताराओं की विभिन्न आकृतियाँ और उनके फल भी लिखे गये हैं। यह प्रकार संहिता विषय से अति सम्बद्ध है। ‘सांख्यायन गृह्यसूत्र’ (5-10) के अनुसार, मधुमक्खी का घर में छत्ता लगाना तथा कीथों का आधी रात में बोलना अशुभ कहा है। बौद्धायन सूत्र में—“मीन मेषयोमेषवृषभयोदंसन्तः” इस प्रकार का उल्लेख मिलता है। सूर्य संक्रान्ति के आधार पर ऋतुओं की कलानाएँ हो चुकी थीं तथा कृषि पर इन ऋतुओं का कैसा प्रभाव पड़ता है, इसका भी विचार आरम्भ हो गया था।

निरुक्त में दिन, रात, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, उत्तरायण, दक्षिणायन आदि की व्युत्पत्ति मात्र शाब्दिक ही नहीं है, बल्कि परिभाषात्मक है। ये परिभाषाएँ ही आगे संहिता-ग्रन्थों में स्पष्ट हुई हैं। पाणिनि ने अपनी अष्टाव्यायी में संवत्सर, हायन, चैत्रादिमास, दिवस, विभागात्मक मुहूर्त शब्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि की व्युत्पत्तियाँ दी हैं। ‘वाताय कपिला विद्युत्’ उदाहरण द्वारा निमित्तशास्त्र के प्रधान विषय ‘विद्युत् निमित्त’ पर प्रकाश ढाला है तथा कपिला विद्युत् को वायु चलने का सूचक कहा है। पाणिनि ने ‘विभाषा यहः’ (3, 1, 143) में ग्रह शब्द का भी उल्लेख किया है। उत्तरकालीन पाणिनि-तत्त्व के विवेचकों ने उक्त सूत्र के यह शब्द को नवग्रह का दोतक अनुगाम किया है। अष्टाव्यायी में पतिष्ठती रेखा का भी जिक्र आया है, अतः इस ग्रन्थ में संहिता-शास्त्र के अनेक बीजसूत्र विद्यमान हैं।

मनुस्मृति में सिद्धान्तग्रन्थों के समान युग और कल्यमान का वर्णन मिलता है। तीसरे अध्याय के आठवें श्लोक में आया है कि कपिल भूरे वर्णवाली, अधिक

या कम अंगों वाली, अधिक रोप वाली या सर्वथा निर्लोमि कन्या के साथ विवाह नहीं करना चाहिए। इस कथन से लक्षण और व्यंजन दोनों ही निमित्तों का स्पष्ट संकेत मिलता है। इसी अध्याय के 9-10 श्लोक भी लक्षणशास्त्र पर प्रकाश डालते हैं। 'लोब्धमर्दी तृणच्छेदो' (4,71) में शकुनों की ओर संकेत किया गया है। 'अकालिन अन्यायों ना विवेदन करो' हुए 'निद्युत्-स्तनितवर्षेषु महोत्कानां च सम्प्लवे' (4,103), "निघति भूमिवसने ज्योतिषां चोपसर्जने" (4,105), "नीहारे बाणशके" (4,113) एवं "पांसुवर्ष दिशा दाहे" (4,115) का उल्लेख किया है। ये सभी श्लोक शकुनों से सम्बन्ध रखते हैं। अतः अनध्याय प्रकारण संहिता का विकसित रूप है। "न चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्रांगविद्याया" (6,50) में उत्पात, निमित्त, नक्षत्र और अंगविद्या का वर्णन आया है। इस प्रकार मनुस्मृति में संहिताशास्त्र के बीजगूत्र प्रचुर परिमाण में विद्यमान है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में नवग्रहों का स्पष्ट उल्लेख वर्तमान है। कान्तिवृत के द्वादश भागों का भी निरूपण किया गया है, इस कथन से मेषादि द्वादश राशियों की सिद्धि होती है। शाद्वकाल अध्याय में वृद्धियोग का भी कथन है, इससे संहिता-शास्त्र के 27 योगों का समर्थन होता है। याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रायशिक्त अध्याय में—"ग्रहसंयोगज्ञः फलं" इत्यादि वाक्यों द्वारा ग्रहों के संयोगजन्य फलों का भी कथन किया गया है। किस नक्षत्र में किस कार्य को करना चाहिए, इसका वर्णन भी इस ग्रन्थ में विद्यमान है। आचाराध्याय का निम्न श्लोक, जिस पर से सातों वारों का अनुमान विद्वानों ने किया है, बहुत प्रसिद्ध है—

सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः ।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चर्चते ग्रहाः स्मृताः ॥

महाभारत में संहिता-शास्त्र की अनेक बातों का वर्णन मिलता है। इसमें युग-पद्धति मनुस्मृति जैरी ही है। सत् युगादि के नाम, उनमें विद्येय कृत्य कई जगह आये हैं। कल्पवल्ल का निरूपण शान्तिपर्व के 183वें अध्याय में विस्तार से किया गया है। पञ्चवर्षीयक युग का कथन भी उपलब्ध है। संवत्सर, परिवत्सर इदावत्सर, अनुवत्सर एवं इन्द्रत्सर— इन पाँच युग सम्बन्धी पाँच वर्षों में क्रमः पाँचों पाण्डवों की उत्थिति का वर्णन किया गया है—

अनुसंवत्सरं जाता अपि ते कुरुसत्तमाः ।
पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसंवत्सरा इव ॥

—अ० १०, अ० 124-24

पाण्डवों को वनवास जाने के उपरात्रि कितना समय हुआ, इसके सम्बन्ध में भीष्म द्वयोधन से कहते हैं—

तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात् ।
पठ्चमे पठ्चमे वर्षे द्वी मासावृपजायतः ॥
एषामध्यधिका मासाः पञ्च च द्वादश क्षपाः ।
अयोदशतां वर्षणामिति से वर्तते भवतः ॥

—वि० प० अ० 52/3-4

इन श्लोकों में पाँच वर्षों में दो अधिमास का जिक्र किया गया है। सिद्धान्त ज्योतिष के ग्रन्थों के प्रणयन के पूर्व संहिता-ग्रन्थों में अधिमास का विरूपण होने लगा था। गणितागत अधिमास अधिशेष और अधिशुद्धि का विचार होने के पूर्व पाँच वर्षों में दो अधिमासों की कल्पना संहिता के विषय के अन्तर्गत है।

महाभारत के अनुआसन पर्वे के 64वें अध्याय में समस्त नक्षत्रों की सूची देकर बतलाया गया है कि किस नक्षत्रे में दान देने से किस प्रकार का पुण्य होता है। महाभारत लाल में प्रत्येक मुहूर्त का नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त का साम्बन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक रायों से शुभाशुभ के रूप में माना जाता था। इस ग्रन्थ में 27 नक्षत्रों के देवताओं के स्वभावानुसार विद्येय नक्षत्र के अवधी शुभ एवं अशुभ का निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रों में ही विवाह, युद्ध एवं यात्रा करने की प्रथा थी। युधिष्ठिर के जन्म-समय का वर्णन करते हुए कहा गया है—

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मूहूर्तेऽभिजिद्वटमे ।
दिवो मध्यमते सूर्ये तिथी पूर्णे तिपूजिते ॥

अर्थात् आश्विन शुक्ला पंचमी ने दोषहर को अष्टम अमिति नुहूर्ते में, सोमवार के दिन उयेठा नक्षत्र में जन्म हुआ। महाभारत में तुछ यह अधिक अरिष्टवारक बतलाये गये हैं; विशेषतः शनि और मंगल को अधिक दुष्ट कहा है। मंगल लाल रंग का, समस्त प्राणियों को अशान्ति देने वाला और रक्तपात करने वाला समझा जाता था। केवल तुहाही शुभ और समस्त प्राणियों को सुख-शान्ति देने वाला बताया गया है। ग्रहों का शुभ नक्षत्रों के साथ योग होना प्राणियों के लिए नित्याणदायक माना गया है। उद्योग पर्वे के 14वें अध्याय के अन्त में यह और नक्षत्रों के अशुभ योगों का विस्तार से वर्णन किया गया है। श्रीकृष्ण ने जब वर्ण से भेट की, तब कर्ण ने इस प्रकार ग्रह-स्थिति का वर्णन किया—“शनैश्चर रोहिणी नक्षत्रे में मंगल को पीड़ा दे रहा है। उयेठा नक्षत्र में मंगल दक्षी होकर अनुराधा नामक नक्षत्र से योग कर रहा है। महापात संजक यह चित्रा नक्षत्र को पीड़ा दे रहा है। चन्द्रमा के चिह्न विपरीत दिखाई पड़ते हैं और राहु सूर्य को प्रसित करना चाहता है।”

शल्यव्रद्ध के समय प्रातःकाल का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

“भृगुसूनुधरापुत्रै शशिजेन समन्वितो ॥” —श० प० अ० 11-18

अर्थात्—शुक्र, मंगल और बुध इनका योग शनि के साथ अत्यन्त अशुभ कारक है। वर्तमान संहिता-ग्रन्थों में भी बुध और शनि का योग अत्यन्त अशुभ माना जाता है। महाभारत में 13 दिन का पक्ष अशुभ कारक कहा गया है—

सतुर्वशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वीं तु बोडशीम् ।
इसां तु नाभिजानेऽहममावस्यां त्रयोदशीम् ॥
चन्द्रसूर्यावुभीं प्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीम् ।

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहों की स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि 14, 15 एवं 16 दिनों के पक्ष होते थे; पर 13 दिनों का पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मास में सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण का होना है और यह ग्रहणयोग भी त्रयोदशी के दिन पड़ रहा है, अतः समस्त प्राणियों के लिए भयोत्पादक है। महाभारत से यह भी जात होता है कि उस समय व्यक्ति के एुख-दुख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रों की गति से सम्बद्ध माने जाते थे।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के दशवें प्रकरण में युद्धविषयक शकुन, जय-पराजय द्वातक निमित्तों का वर्णन है। वाचा सम्बन्धी शकुनों का सविस्तार विवेचन भी मिलता है।

हृष्णविरिति में वाण ने काव्याणीनी का आथर्व नेकर हर्ष के प्रयाण के फलस्वरूप शत्रुओं में होने वाले दुर्निभित्तों की एक लम्बी सूची दी है। इस सूची से स्पष्ट है कि वाण के समय में संहिता-शास्त्र का पूर्णतया विकास हो च्या था। बताया गया है—

1. यमराज के दूतों की दृष्टि वी तम्भ वाले हिरण उधर-उधर दीड़ने लगे।
2. अग्नि में भद्र-मकिख्यों के छतों से उड़कर भद्र-मकिख्यां भर गयीं।
3. दिन में शृगाली मुह उठाकर रोमे लगीं।
4. जगली कवृतर धरों में अने लगे।
5. उपवन वृक्षों में असमय में पुष्प-फल दिखलाई पड़ने लगे।
6. समास्थान के खम्भों पर बनी हुई शालभजिकाओं के आँख बहने लगे।
7. घोड़ाओं को दर्पण में अपने ही रिर धड़ से अनग होते हुए दिखलाई पड़े।
8. राजमहिलियों की चूड़ामणि में दंरों के निशान प्रकट हो गये।
9. चेटियों के हाथ के चमर छूटकर गिर गये।
10. हाथियों के गण्डरथल भीरों से शून्य हो गये।
11. घोड़ों ने भानो यमराज की गन्ध से हरे धान का खाना छोड़ दिया।

12. अन-अन कंकण पहने हुए बालिकाओं के ताल देकर नज़ारे पर भी मन्दिर-मयूरों ने नाचना छोड़ दिया ।
13. रात में कुत्ते मुँह उठाकर रोने लगे ।
14. रास्तों में कोटबी—मुक्तकेशी नग्न स्त्रियों घूमती हुई दिखलाई पड़ीं ।
15. महलों के कशों में घास निकल आयी ।
16. योद्धाओं की स्थिरों के मुख का जो प्रतिबिम्ब भधुगांव में पड़ता था उसमें विध्वाओं जैसी एक वेणी दिखाई पड़ने लगी ।
17. भूमि कांपने लगी ।
18. शूरों के शरीर पर रक्त की झूंटें दिखाई पड़ीं, जैसे वधुदण्ड प्राप्त व्यक्ति का शरीर लाल चन्दन से सजाया जाता है ।
19. दिशाओं में चारों ओर उल्कापात होने लगा ।
20. भयंकर जंगावात ने प्रत्येक घर को झकझीर ढाला ।

बाण ने 16 महोत्तम, 3 द्रुमिति और 20 उपलिंगों का वर्णन किया है ।

यह वर्णन संहिता-जास्त्र का विकासित विषय है ।

उपर्युक्त विवरन से यह स्पष्ट है कि संहिता शास्त्र के विषयों का विकास अथर्ववेद से आरम्भ होकर सूत्रकाल में विशेष रूप से हुआ । ऐतिहासिक महाकाव्य-ग्रन्थों तथा अन्य संस्कृत साहित्य में भी इस विषय के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं । इस शास्त्र में सूर्योदि ग्रहों की चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, संस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, वक्र, अतिवक्र, अनवक्र, नक्षत्र-विभाग और कूर्म का सब देशों में फैल, अपस्थिय की चाल, ग्रातिष्यों की चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहग्रामाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिव, उल्का, दिनदाह, भूकम्प, गन्धर्वतग्र, इन्द्रधनुष, बास्तुविद्या, अंगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मूर्मचक्र, अन्तरचक्र, प्रामादलक्षण, प्रतिमानक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, पूतलक्षण, कम्बल-लक्षण, खंग-लक्षण, गद्गुलक्षण, कुकुटलक्षण; कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अपवलक्षण, स्त्री-ग्रुह्य लक्षण, यात्रा शकुन, रणयात्रा शकुन एवं गाधारण, अराधारण सभी प्रकार के गुभागुभों का विवेचन अन्तर्भृत होता था । स्वप्न और विभिन्न प्रकार के शकुनों को भी संहिता-जास्त्र में स्थान दिया गया था । कलित ज्योतिष का यह अंग केवल पंचांग ज्ञान तक ही सीपित नहीं था, किन्तु समस्त मास्त्रिक विषयों की आलोचना और निरूपण काल भी इसमें आमिल हो गया था । संहिता-जास्त्र का सबसे पहला ग्रन्थ सन् 505 ई० के बराहमिहिर जा बृहत् संहितानामक ग्रन्थ मिलता है । इसके पश्चात् नारद-संहिता, रावण-संहिता, वसिष्ठ-संहिता, वग्नसंराज-शाकुन, अद्भुतसागर आदि ग्रन्थों की रचना हुई ।

की पूर्णमासी को उस मास का प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। इस वर्णन का प्रयोजन उग महीने के फलादेश से सम्बन्ध रखता है। इस ग्रन्थ में चतुर्थ, अयत, मार्ग, पक्ष, नक्षत्र और तिथि सम्बन्धी चर्चाएँ भी उपलब्ध हैं।

समवायांग में नक्षत्रों की ताराएँ, उनके दिशाघास आदि का वर्णन है। कहा यहा है—“कत्तिआइया सत्त णक्कलत्ता पुव्वदारिआ। महाइया सत्तणक्कलत्ता दाहिण दारिआ। अगुरुहाइआ सत णक्कलत्ता क्कलदारिया। धणिद्वाइआ सत्तणक्कलत्ता उक्करदारिआ।”—गं० अं० गं० 7 ग०० ५

अर्थात् शुक्रिका, रोहिणी, मृगजिरा, आर्द्धा, पुनर्वंशु, पूर्ण और वाञ्छेपा ये सात नक्षत्र पूर्वद्वार; मधा, पूर्वाकाल्युनी, उत्तराकाल्युनी, हरत, चित्रा, रवाति और विज्ञाखा दक्षिणद्वार; अनुराधा, ज्येष्ठा, भूल, पूर्वापादा, उत्तरापादा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्र पश्चिमद्वार एवं धनिष्ठा, शतभिपा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेती, अङ्गिकी और अर्णी ये सात नक्षत्र, उत्तरद्वार वाले हैं। समवायांग $1/6$, $2/4$, $3/2$, $4/3$, $5/9$ और $6/7$ में आयी हुई ज्योतिष चर्चा भी महत्वपूर्ण है।

ठाणांग में चन्द्रमा के साथ स्पर्शयोग करने वाले नक्षत्रों का कथन किया है। बताया गया है¹—“कृतिका, रोहिणी, पुनर्वंशु, मधा, चित्रा, विज्ञाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्श योग करने वाले हैं।” इम योग का फल तिथि के अनुसार बतलाया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रों की अन्य संभागें तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशा की ओर भी चन्द्रमा के साथ योग करने वाले नक्षत्रों के नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक बतलाये गये हैं। आयांग निमिन-ज्ञान की चर्चाएँ भी आगम ग्रन्थों से गिरती हैं। गणित त्रीः फलित ज्योतिष की अनेक मौलिक बातों का संग्रह आगम ग्रन्थों में है।

फुटकर ज्योतिष चर्चा के अलावा मूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, उर्ध्वतिप-उर्ध्वदक, अंगविज्ञा, गणिविज्ञा, मण्डलप्रवेश, गणितगारसंग्रह, गणितगूव, गणितगास्त्र, जोइसार, पंचांगनयन विधि, इष्टतिथि सारणी, लोकविजय यन्त्र, पंचांगतस्व केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, आयसदभाव, रिष्टसमुच्चय, अर्धवाण्ड, ज्योतिष प्रकाश, जातकतिलक, केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि, नक्षत्रचूड़ामणि, चन्द्रोन्मीलन और मानसागरी आदि सौकड़ों ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

विषय-विचार दृष्टि से जैनाचार्यों के ज्योतिष को प्रधानतः दो भागों में विभक्त किया है। एक गणित-गिद्धान्त और दूसरा फलित-सिद्धान्त। गणित

1. अदृढ नस्त्रिनां नदेश गडि पम ८३ जोग जागृहि न० काल्या, गाल्या, पुण्यवंशु, महा, चित्रि, विज्ञाखा, अगुरुहा जिद्वा—अ० ४, मू १००

सिद्धान्त द्वारा ग्रहों की गति, स्थिति, वक्षी-भागी, मध्यफल, मन्दफल, सूक्ष्मफल, कुञ्ज्या, विजया, बाण, चाप, व्यास, परिधि फल एवं केन्द्रफल आदि का प्रतिपादन किया गया है। आकाशमण्डल में विकीर्णित तारिकाओं का ग्रहों के साथ कब किसी सम्बन्ध होता है, इसका ज्ञान भी गणित प्रक्रिया से ही संभव है। जैनाचार्यों ने भीगोलिक ग्रन्थों में 'ज्योतिलोकाधिकार' नामक एक पृथक् अधिकार देकर ज्योतिषी देवों के रूप, रंग, आकृति, भ्रमणमार्ग आदि का विवेचन किया है। यों तो पाटीगणित, बीजगणित, रेखागणित, श्रिकोणमिति, गोलीय रेखागणित, चारीय एवं वक्षीय श्रिकोणमिति, प्रतिभागणित, शृंगोन्नति गणित, वचांगनिमित्त गणित, जन्मपत्रनिमित्त गणित, ग्रहयुति, उदयास्त सम्बन्धी गणित का निरूपण इस विषय के अन्तर्गत किया गया है।

फलित सिद्धान्त में तिथि, नक्षत्र, योग, करण, वार, ग्रहस्वरूप, ग्रहयोग जातक के अन्मकालीन ग्रहों का फल, मुहूर्त, रामयशुद्धि, दिक्षुद्धि, देशशुद्धि आदि विषयों का परिज्ञान करने के लिए फटकर चर्चाओं के अतिरिक्त वर्षप्रबोध, ग्रहभाव प्रकाश, बेड़ाजातक, प्रश्नशतक, प्रश्न चतुर्दिशतिका, लग्नविचार, ज्योतिष रत्नाकर प्रभृति ग्रन्थों की रचना जैनाचार्यों ने की है। फलित विषय के विस्तार में अष्टांगनिमित्तज्ञान भी शामिल है और प्रधानतः यही निमित्त ज्ञान संहिता विषय के अन्तर्गत आता है। जैन दृष्टि में संहिता ग्रन्थों में अष्टांग निमित्त के साथ आयुर्वेद और क्रियाकाण्ड को भी स्थान दिया है। ऋषिपुत्र, माधवनन्दी, अकलंक, भद्रबोसरि आदि के नाम संहिता-ग्रन्थों के प्रणेता के रूप से प्रशिद्ध हैं। प्रश्नशास्त्र और सामुद्रिक शास्त्र का राजावेश भी संहिता शास्त्र में किया है।

अष्टांग निमित्त

जिन लक्षणों को देखकर भूत और भविष्यत् में घटित हुई और होने वाली घटनाओं का निरूपण किया जाता है, उन्हें निमित्त कहते हैं। न्यायशास्त्र में दो प्रकार के निमित्त माने गये हैं—कारक और सूचक। कारक निमित्त वे कहलाते हैं, जो किसी वस्तु को सम्पन्न करने में सहायक होते हैं, जैसे धड़े के लिए कुम्हार निमित्त है और पट के लिए जुलाहा। जुलाहे और कुम्हार की सहायता के बिना घट और पट रूप कार्यों का बनाना संभव नहीं। दूसरे प्रकार के निमित्त गूचवां हैं, इनसे किसी वस्तु या कार्य की सूचना मिलती है, जैसे सिगनल के झुक जाने से रेलगाड़ी के आने की सूचना मिलती है। ज्योतिष शास्त्र में सूचक निमित्तों की विशेषताओं पर विचार किया गया है, तथा संहिता ग्रन्थों का प्रधान प्रतिपाद्य विषय सूचक निमित्त ही है। संहिता शास्त्र मानता है कि प्रत्येक घटना के घटित होने के पहले प्रकृति में विकार उत्पन्न होता है; इन प्राकृतिक विकारों को पहचान से व्यक्ति भावी शुभ-अशुभ घटनाओं को सरलतापूर्वक जान सकता है।

ग्रह नक्षत्रादि की गतिविधि का भूत, भविष्यत् और वर्तमान कालीन क्रियाओं के साथ कार्यकारण भाव सम्बन्ध स्थापित किया गया है। इस अव्यभिचरित कार्यकारण भाव से भूत, भविष्यत् की घटनाओं का अनुमान किया है और इस अनुमान ज्ञान को अव्यभिचारी माना है। न्यायशास्त्र भी मानता है कि गुपरीक्षित अव्यभिचारी कार्यकारण भाव से ज्ञात घटनाएँ निर्देष होती हैं। उत्पादक सामग्री के सदोष होने से ही अनुमान सदोष होता है। अनुमान की अव्यभिचारिता गुपरीक्षित निर्देष उत्पादक सामग्री पर निर्भर है। अतः ग्रह या अन्य प्राकृतिक कारण किसी व्यक्ति का इष्ट अनिष्ट सम्पादन नहीं करते, वल्कि इष्ट या अनिष्ट रूप में घटित होने वाली भावी घटनाओं का सूचना देते हैं। संक्षेप में ग्रह कर्मफल के अभिव्यञ्जक हैं। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय आदि आठ कर्म तथा भोग्यानीय के दर्शन और चरित्रभोग के भेदों के वारण कर्मों के प्रधान भी भेद जैनागम में बताये गये हैं। प्रधान नी ग्रह इन्हीं कर्मों के फलों वी सूचना देते हैं। ग्रहों के आधार पर व्यक्ति के बन्ध, उदय और सत्त्व की कर्मश्रद्धियों का विवेचन भी किया जा सकता है। किसी भी जातक की जन्मकुण्डली की ग्रहस्थिति के साथ गोचर ग्रह की स्थिति का सम्बन्ध कर उक्त बातें सहज में कही जा सकती हैं। अतः ज्योतिष शास्त्र में अव्यभिचारी सूचक निमित्तों का विवेचन किया गया है। इन्हीं सूचक निमित्तों के संहिताग्रन्थों में आठ भेद किये गये हैं—व्यंजन, अंग, स्वर, भीम, छन्न, अन्तरिक्ष, लक्षण एवं स्वप्न।

व्यंजन—तिल, मस्ता, चट्टा आदि को देखकर गुभाणुभ का निरूपण करना व्यंजन निमित्तज्ञान है। साधारणतः पुरुष के शरीर में दाहिनी ओर तिल, मस्ता, चट्टा शुभ समझा जाता है और नारी के शरीर में इन्हीं व्यंजनों का बायीं ओर होना शुभ है। पुरुष की हथेली में तिल होने से उगके भारय की वृद्धि होती है। गद तल में होने से राजा होता है, पितृरेखा पर तिल के होने से विष द्वारा कष्ट पाता है। कपोल के दक्षिण पार्श्व में तिल होने से धनवान् और सम्भ्रान्त होता है। वामपार्श्व या भौंह में तिल के होने से वार्यनाश और आशा भंग होती है। दाहिनी ओर की भौंह में तिल होने से प्रथम उम्र में विवाह होता है और गुणवती पत्नी प्राप्त होती है। नेत्र के कोने में तिल होने से व्यक्ति शान्त, विनीत और अध्यवसायी होता है। गण्डस्थल या कपोल पर तिल होने से व्यक्ति मध्यम वित्त वाला होता है। परिश्रम करने पर ही जीवन में सफलता मिलती है। इस प्रकार के व्यक्ति प्रायः स्वनिमित्त ही होते हैं। गले में तिल का रहना दुख सूचक है। कण्ठ में तिल के होने से विवाह द्वारा भाग्योदय होता है, सगुराल से हर प्रकार की सहायता प्राप्त होती है। वक्षस्थल के दक्षिण भाग में तिल होने से कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती हैं और व्यक्ति प्रायः यजस्वी होता है। दक्षिण पंजर में तिल के होने से व्यक्ति कायर होता है। समय पड़ने पर मित्र और हितेष्यों का धोखा

देता है। उदर में तिल होने से व्यक्ति दीर्घसूक्षी और स्वार्थी होता है। नासिका के वामपार्श्व में तिल रहने से पुरुष धनवीन, मरणादी और मर्यादा होता है। बायीं और कमोज़ पर तिल होने वाले अटूट दाम्पत्य प्रेम होता है और सौभाग्य की वृद्धि होती है। कान में तिल होने से भाग्य और यश की वृद्धि होती है। नितम्ब में तिल होने से अधिक सन्तान प्राप्त होती है, किन्तु सभी जीवित नहीं रहती। दाहिनी बाँध का तिल धनी होने का सूचक है। बायीं जांघ का तिल दरिद्र और रोगी होने की सूचना देता है। दाहिने पैर में तिल होने से व्यक्ति ज्ञानी होता है, आधी अवरथा के पश्चात् संन्यासी का जीवन व्यतीत करता है। दाहिनी बाहु में तिल होने से दृढ़ शरीर, धैर्यशाली एवं बायीं बाहु में तिल होने से व्यक्ति कठोर प्रकृति, त्रोधी और विश्वासघातक होता है। इस प्रकार के तिल बालेव्यक्ति प्रायः डाकू या हत्यारे होते हैं।

यदि नारियों के बायें कान, बायें कमोज़, बायें कण्ठ अथवा बायें हाथ में तिल हो तो वे प्रथम प्रयत्न में पुत्र प्रसव करती हैं। दाहिनी भाँह में तिल रहने से गुणवान् पति-लाभ करती हैं। बायीं छाती के स्तन के नीचे तिल रहने से बुद्धिमती, प्रेमवती और सुखप्रसविनी होती हैं। हृदय में तिल होने से नारी सौभाग्यवती होती है। दक्षिण स्तन में लोहितवर्ण का तिल हो तो चार वर्षाएं और तीन पुत्र उत्पन्न होते हैं। बायें स्तन में तिल या लाल कोई चिह्न हो तो वह स्त्री एक पुत्र प्रसव कर विधवा हो जाती है। बगल में सुदीर्घ तिल होने से नारी पतिश्रिया और पीत्रवती होती है। नख में श्वेत किन्दु हो, तो उसके स्वेच्छाचारिणी तथा गुलटा होने वी संभावना है। जिस स्त्री की माक की नोक पर तिल या मस्सा हो; इस ओर जिह्वा काली हो तो वह स्त्री खिवाह के दशवें दिन विवाह होती है। दक्षिण घुटने पर तिल होने से यनोहर पति-लाभ होता है। दाहिनी बाहु में हो तो पति को सौभाग्यदायिनी तथा शीठ में तिल होने से सुलक्षण और पतिपरायण होती है। बायीं भुजा में तिल या मस्सा होने से स्त्री मुखरा, बालहकारिणी और कटुप्राणिणी होती है। बायें कंधे पर तिल रहने से चंचला, व्यभिचारिणी और असत्यभाषिणी होती है। नाभि के बायें भाग में तिल रहने से चंचला और नाभि के दाहिने भाग में तिल होने से सुलक्षणा होती है। मस्सों और चट्ठों—लहमुनो का शुभाशुभ फल भी तिलों के समान ही समझाना चाहिए। निमित्त शास्त्र में व्यंजनों का विचार विस्तारपूर्वक किया है।

अंगनिमित्तज्ञान—हाथ, पाँव, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल आदि शरीर के अंगों को देखनार शुभाशुभ फल का मिलूपण करना। अंगनिमित्त है। नासिका, नेत्र, दन्त, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल ये छः अवयव उन्नत होने से मनुष्य सुलक्षण युक्त होता है। करतल, पदतल, नयनप्रात्त, नख, तालु, अधर और जिह्वा पे सात अग लाल हों तो शुभप्रद है। जिसकी कमर विशाल हो, वह बहुत पुत्रवान्

होता है। जिसकी शुजाएं लम्बी होती हैं, वह व्यक्ति श्रेष्ठ होता है। जिसका हृदय विस्तीर्ण है, वह धन-धान्यशाली और जिसका मस्तक विजाल है वह मनुष्यों में पूजनीय होता है। जिस व्यक्ति का नियन्त्रण लाल है, लक्ष्मी कभी उसका परित्याग नहीं कर सकती। जिसका शशीर तप्तभाँचन के समान गौरवर्ण है, वह कभी भी निर्धन नहीं होता। जिसके दाँत बड़े होते हैं, वह कदाचित् मूर्ख होता है तथा अधिक लोभ वाला व्यक्ति संसार में गुब्बी नहीं हो गक्ता। जिसकी हथेली चिकनी और मुलायम हो वह ऐश्वर्य भोग करता है। जिसके पैर का तलवा लाल होता है, वह सचारी का उपयोग सदा करता है। पैर के तलवों का चिकना और अरुणवर्ण का होना शुभ माना गया है।

जिस व्यक्ति के केज़ल ताज़ा अर्थर्ण और लम्बे तथा छोटे हों वह प्रतिपादित वर्ष की अवस्था में पागल या उत्तमता हो जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति को धानीग वर्ष की अवस्था तक अनेक काट भोगने पड़ते हैं। जिस व्यक्ति की जिह्वा उत्तमी लम्बी हो, जो नाक का अथभाग स्पर्जन कर ले, तो वह धोगी या मुगुध होता है। जिसके दाँत विशेष अर्थात् अलग-अलग हों और हँसते पर गर्तचिह्न दिखाई दे, उस व्यक्ति को अन्य किसी का धन प्राप्त होता है और यह व्यक्ति व्यभिचारी भी होता है। जिस व्यक्ति के चियुक—ठोड़ी पर बाल न हों अर्थात् जिसे दाढ़ी नहीं हो सका जिसकी छाती पर भी बाल न हों, ऐसा व्यक्ति धूर्त, कगटी और मायाचारी होता है। यह व्यक्ति अपने स्वार्थ-साधन में बड़ा प्रवीण होता है। हाँ, बुद्धि और लक्ष्मी दोनों ही उसके पास रहती हैं।

मस्तक पर विचार करते समय यताया गया है कि मस्तक के नम्बन्ध में चार बातें विचारणीय हैं—बनावट, नसजाल, विस्तार और आभा। बनावट में विचार, विद्या और धार्मिकता के गाय का पता चलता है। मस्तक की हड्डियाँ यदि दृढ़, स्तिघ्न और मुर्ढीय हैं तो उपर्युक्त गुणों की मात्रा और प्रकार में विशेषता रहती है। वेदंगी बनावट होने पर उनमें गुणों का अभाव और दुर्गुणों की प्रधानता होती है।

नस-वर्ण—मस्तक के नसजाल में विद्या, विचार और प्रतिभा का परिज्ञान होता है। विचारशील व्यक्तियों के माथे पर गिरुदृग और ग्रन्थियाँ देखी जाती हैं। रेखाविहीन चिकना मस्तक प्रमाद, अज्ञान और नाप्रवाही का शुचक है।

विस्तार में मस्तक की लम्बाई, लौटाई, ऊँचाई और गहराई सम्प्रगति हैं। मस्तक नीचे की ओर चौड़ा हो और ऊपर की ओर छोटा हो तो व्यक्ति झक्की होता है। नीचे चपड़े और चौड़े माथे में विचार, कार्यशक्ति और काशना वो कभी तथा उदारता का अभाव रहता है। ऐसा व्यक्ति उत्थाही होता है, परन्तु उसके कार्य बे-सिर-पैर के होते हैं। चौड़ा और ढालू मस्तक होने पर व्यक्ति चापाक, चतुर और पेट के प्रायः मलिन होते हैं। उन्नत और चौड़े लम्बाई वाले व्यक्ति

विद्वान् होते हैं। यदि सीधे और चौकोर मस्तक के ऊपरी भाग में कोण (Angles) बन रहे हों और गोलाई लिये हो तो व्यक्ति हठीला और दृढ़ होता है। यदि गोलाई न हो और सीधा हो तो विचार और कर्म में अकर्मण्य होता है। ऊचा, सीधा और आभापूर्ण ललाट लेखकों और कवियों और अर्थशास्त्रियों का होता है। चौड़ा मस्तक होने से व्यक्ति जीवन में दुखी नहीं होता।

आभा——मस्तक की आभा का वही महत्व है, जो किसी सुन्दर बने मकान में रंगाई और पुताई का होता है। आभा रहने से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास दृष्टिमोत्तर होता है। जिस व्यक्ति का मस्तक आभा-रहित होता है, वह दरिद्र, दुखी और अनेक प्रकार के रोगों से पीड़ित रहता है।

ओठों पर विचार करते समय कहा गया है कि ओटे ओठों वाला व्यक्ति मूर्ख, दुरागही और दुराचारी होता है। आधिक दृष्टि से भी यह व्यक्ति कष्ट उठाता है। छोटे मुँह में अधिक पतले ओठ कंजूसी, दरिद्रता और चिन्ता के सूचक हैं। सरस, सुन्दर और आभायुक्त पतले ओठ होने पर व्यक्ति विडान्, धनी, सृष्टि और प्रिय होता है। गोलमुख में गर्दन योल और दृष्टि निष्ठेष चुभता हुआ होने पर व्यक्ति को अविचारी और स्वेच्छाचारी समझना चाहिए। ओठों में ढिलाव, लटकाव और मुड़ाव अवाचार और अविचार के शोहक हैं। ढीले और लटके ओठ होने से व्यक्ति का शिथिलाचारी, निर्धन और चंचल प्रकृति का होना व्यक्त होता है। सरस ओठ होने से दयालुता, परोपकार वृत्ति, सहृदयता एवं स्निग्धता व्यक्त होती है। रुक्ष ओठ अजीर्ण, ज्वर, रोग एवं दारिद्र्य को प्रकट करते हैं।

दाँतों के सम्बन्ध में विचार करते हुए बताया गया है कि चमकीले दाँत वाला व्यक्ति कार्यशील और उत्साही होता है। छोटे होने पर भी पंक्तिबद्ध और स्वच्छ दाँत व्यक्ति के विचारवान् और उत्साही होने की सूचना देते हैं। ऊर के दाँतों में बीच के दो दाँत जो अपेक्षाकृत बड़े होते हैं—अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण हैं। जिस मुख में ये दाँत स्वभावतः खुले रहते हों, स्वच्छ और आभायुक्त हों एवं मूखाभा मनोज्ञ हों तो उस व्यक्ति में शील, सौजन्य और नम्रता का पुण अवश्य होता है। उक्त प्रकार के दाँत वाला व्यक्ति व्यापार में प्रभूत धनार्जन करता है।

गर्दन के पिछले भाग को पिछला मस्तक और अगले भाग को कण्ठ कहते हैं। पिछले मस्तक में सुन्दर घराव और गठाव हो तो व्यक्ति का स्वावलम्बन और स्वाभिगान प्रकट होता है। इस प्रकार का व्यक्ति अग्निम जीवन में अधिक धनी बनता है और गार्हस्थिक सुख का आनन्द लेता है। यदि सिर का पिछला भाग चिकना और शिखा भाग के सम स्तर पर हो, बीच में महराई न हो तो ऐसा व्यक्ति विषयी, गार्हस्थिक कार्यों में अनुरक्त एवं निर्धन होकर वृद्धावस्था में कष्ट प्राप्त करता है। गर्दन सीधी, गठी, दृढ़ और भरी होने से व्यक्ति विचारशील,

धोष राजकर्मचारी एवं धोष न्यायाधीश होता है। इस प्रकार के व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अधिक सफल होते हैं।

स्त्रियों के अंगों का शुभाशुभत्व बतलाते हुए कहा है कि जिस स्त्री की सध्य-मांगुली दूसरी औंगुलियों से मिली हो, वह सदा उत्तम भोग भोगती है, उसका एक भी दिन दुःख से नहीं बीतता। जिसका अंगुष्ठ गोल और मांसल हो तथा अग्रभाग उन्नत हो, वह अतुल सुख और सौभाग्य का सम्भोग करती है। जिसकी औंगुलियाँ लम्बी होती हैं, वह प्राय कुलटा और जिसकी अंगुलियाँ पतली होती हैं, वह प्रायः निर्धन होती हैं।

जिस स्त्री के पैर के तख्त स्तिरध, सभुन्नत, ताम्रवर्ण, गोलाकार और सुन्दर होते हैं तथा जिसके पैर के तलवे उन्नत होते हैं, वह राजमहिषी या राजमहिषी के तुल्य सुख भोगने वाली होती है। जिसके चुटने मांसल तथा गोल हैं, वह सौभाग्यशालिनी होती है। जिसके जानु या चुटने में मांस नहीं, वह दुश्चरित्रा और दरिद्रा होती है। जिसके हृदय में लोय नहीं, जिसका तक्षण लाल नीचा नहीं, किन्तु समतल है, वह स्त्री ऐश्वर्यशालिनी और सीभाग्यवती होती है। जिस स्त्री के स्तन द्वय का गूल भाग गोटा है और उपरिभाग कमज़ो़ पतला होता है, वह बाल्यकाल में सुख भोगती है, पर अन्त में दुःखी होती है। जिस स्त्री की नीचे की पंक्ति में अधिक दीत हो उसकी माता की मृत्यु असमय में ही हो जाती है। किसी भी स्त्री की नासिका के अग्रभाग का स्थूल होना, मध्य भाग का नीचा होना या उन्नत होना अशुभ कहा गया है। ऐसी स्त्री असमय में विधवा होती है।

जिस स्त्री की आँखें गाय की आँखों की तरह पिंगलवर्ण की हों, वह स्त्री गविता होती है। जिसकी आँखें कचूतर की तरह हैं, वह दुषशीला होती है और जिसकी आँखें रक्तवर्ण की हैं, वह पतिघातिनी होती है। जिस स्त्री की बायीं आँख कानी हो, वह दुश्चरित्रा और जिसकी दाहिनी आँख कानी, वह बन्ध्या होती है। सुन्दर और सुडौल आँख वाली नारी सुखी रहती है।

जिस स्त्री का शरीर लम्बा हो तथा उसमें लोम और शिरा—नसें दिखलाई दें, वह रोगिणी होती है। जिसके भौंह या लज्जाट में तिल हो, वह पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करती है। श्याम वर्ण की नारी के पिंगल केश अत्यन्त अशुभ माने याये हैं। ऐसी नारी पति और सन्तान दोनों के लिए कष्टशायक होती है। चीड़े वक्षस्थल वाली नारी प्रायः विधवा होती है। जिसके पैर की तज्ज्ञी, मध्यमा अथवा अनामिका भूगि का स्पर्श नहीं करती, वह सुखी और गौभाग्यशालिनी होती है।

जिस नारी की छोड़ी मोटी, लम्बी या छोटी होती है, वह नारी निर्लज्ज, तुच्छ विचार वाली, भावुक और संकीर्ण हृदय की होती है। महरी छोड़ी वाली नारियों में अधिक कामुकता रहती है, घर में नारियाँ मिलनगार, यशस्विनी और परिवार में सभी की श्रिय होती हैं। गठी छोड़ी वाली नारियाँ कार्यकुशल, सुखी

और सन्तान से युक्त होती हैं। इस प्रकार की नारियाँ जीवन में सुख का ही अनुभव करती हैं, इन्हें किसी भी प्रकार की कठिनाई प्राप्त नहीं होती। ठोड़ी की आकृति सीधी, टेढ़ी, उठी, नुकीली, चौकोर, लम्बी, छोटी, चपटी, गहरी, गठी, फूली और मोटी इस प्रकार वारह तरह की बतलायी गयी है। मस्तक, नाक और आँख आदि के सुन्दर होने पर भी ठोड़ी की भद्री आकृति होने से नर या नारी दोनों को जीवन में कष्ट उठाने पड़ते हैं। भद्री आकृतिवाला व्यक्ति शूरवीर होता है। नारी भयंकर आकृति की कोई भी हो तो वह भी पुरुष के कार्यों को बड़ी तत्परता से करती है।

अंगनिमित्त शास्त्र में शरीर के समस्त अंगों की बनावट, रूप-रंग तथा उनके सार्थक का भी विवेचन किया गया है। वसाया गया है कि जिस पुरुष या नारी के पीर भड़े और मोटे होते हैं, उसे मजदूरी सदा करनी पड़ती है। इस प्रकार के पीर वाला व्यक्ति मदा आसित रहता है। जिसका ललाट विस्तृत हो, पीर पतले और सुन्दर हों, हाथ की हथेली नाल हो, नेहरा गोल हो, बक्षस्थल चौड़ा हो और नेत्र गोल हों, वह व्यक्ति स्त्री या पुरुष हो, शासक का काम करता है। आधिक अभाव उसे जीवन में कभी भी कष्ट नहीं दे सकता है।

स्वरनिमित्त—चत्तन व्राण्यों के और अचेतन पशुओं का शब्द सुनकर शुभाश्रुम का निरूपण करना स्वरनिमित्त कहलाता है। पोदकी का 'चिलिचिलि' इस प्रकार का शब्द गुनाई पड़े तो लाभ की सूचना समझनी चाहिए। 'चिकुचिकु' इस प्रकार का शब्द गुनाई पड़े तो बुलाने के लिए यूचना समझनी चाहिए। पोदकी का 'कीतुबीतु' शब्द कामनासिद्धि का सूचक, 'चिरिचिरि' शब्द कष्टसूचक और 'चच' शब्द विनाश का सूचक होता है।

इस तिमित में काक, उल्लू, विल्ली, कुत्ता आदि के शब्दों का विशेष रूप से विचार किया जाता है। कीवे का नाठोर शब्द कष्टदायक और मधुर शब्द शुभ देने वाला होता है। दीप्त दिशा में स्थित होकर कठोर शब्द करे तो कार्य का विनाश होता है। रात्रि में दीप्त दिशा में सुख कर जान्त शब्द करे तो कार्य-सिद्धि का सूचक, सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में सुन्दर स्थान में बैठकर काक मधुर शब्द करे तो वेगी का नाश, चिन्तित कार्यसिद्धि एवं स्त्री-रत्नलाभ होता है। प्रभात-काल में काक अग्निनोष में सुन्दर देश में स्थित हो शब्द करता है, तो विजय, धनलाभ, स्त्री-रत्न की प्राप्ति; दक्षिण में शब्द करे तो अत्यन्त कष्ट; इसी दिशा में रिश्त काक कठोर शब्द करे तो गोगी की मृत्यु; मधुर शब्द करे तो इष्ट जन समाजम, धन-प्राप्ति, धनेक के सम्मान; प्रभातकाल में पश्चिम दिशा में शब्द करे तो निश्चय वर्षा, सुन्दर वरतुब्रों की प्राप्ति, किसी उत्तम राजकर्मचारी का समामन; वायव्य कोण में काक बोले तो अन्न-वस्त्र की प्राप्ति, प्रियव्यक्ति का आगमन; उत्तर दिशा में शब्द करे तो अतिकष्ट, सम्मेय, दरिद्रता; ईशान दिशा

में काक बोले तो व्याधि, रेणी का जरण एवं आकाश में स्थित हैंकर काक मधुर शब्द करे तो अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। पूर्व दिशा में स्थित काक प्रथम प्रहर में युन्दर शब्द बोले तो चिन्तित कार्य की सिद्धि, प्रचुर धन-लाभ; अग्नि कोण में स्थित होकर काक बोले तो स्त्री-लाभ, मिथुन की प्राप्ति एवं दक्षिण दिशा में बोले तो स्त्री-लाभ, सौख्य-प्राप्ति, नैऋत्य कोण में बोले तो मिष्टान्न प्राप्ति एवं पश्चिम दिशा में बोले तो जल की वर्षा, अतिथि आगमन एवं कार्य-सिद्धि की सूचना मिलती है।

दूसरे प्रहर में काक पूर्व दिशा में बोले तो पथिक-आगमन, चौरभय और आकुलता; अग्नि कोण में बोले तो निष्वय कलह, प्रिय आगमन का श्रवण, स्त्री प्राप्ति और सम्मान लाभ; नैऋत्य कोण में बोले तो प्राणभय, स्त्री-भोजन लाभ, सर्वरोग विनाश और जन-समागम; पश्चिम में बोले तो अम्बुदय का सूचक; वायव्य कोण में बोले तो चोरी का भय; उत्तर दिशा में बोले तो धन-लाभ और इष्ट-जन-समागम; ईशान दिशा में बोले तो वास एवं आकाश में बोले तो मिष्टान्न-लाभ, राजानुद्ध-लाभ और कार्य-सिद्धि होती है।

उल्लू का दिन में बोलना अत्यन्त अशुभ गाना जाता है। रात्रि में कठोर शब्द उल्लू करे तो भय-प्राप्ति, अनिष्ट सूचक, आधि-व्याधि सूचक तथा मधुर शब्द करे तो कार्य-सिद्धि, सम्मान-लाभ और एक वर्ष के भीतर धन-प्राप्ति की सूचना समझनी चाहिए।

मुर्म, हाथी, मोर और शृगाल कूर शब्द करें तो अनेक प्रकार के भय, मधुर शब्द करने में इष्ट-लाभ तथा अति मधुर शब्द करने से धनादि का शीघ्र लाभ होता है। शृगाल का दिन में बोलना अशुभ माना गया है। दिन में शृगाल कर्कश छवनि करे तो आधि-व्याधि की सूचना समझनी चाहिए। क्यूंकि और तोते का रुदन शब्द सर्वदा अशुभ कारक माना गया है। विल्ली का पश्चिम दिशा में स्थित होकर रुदन करना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। पूर्व दिशा में विल्ली का बोलना राधारणतथा शुभ समझा जाता है। वारतविक फलादेश कर्कश, मधुर और मध्यम छवनि के अनुसार शुभाशुभ फल के रूप में समझना चाहिए। विल्ली का तीन बार जोर से बोलना या दोना और चीथी बार धीरे से बोलकर या रोकर चुप हो जाना व्रोता के अत्यधिक अनिष्ट-सूचक है। माय, बैल, भैस, वकरी इनकी मधुर, कोमल, कर्कश एवं मध्यम छवियों के अनुसार फलादेशों का निरूपण किया गया है। रोने की छवनि तथा हँसने की छवनि सभी पशु-प्रक्षियों की अशुभ मानी गयी है। मधुर और सहज छवनि, जो इर्ण कटू न हो, शुभ होती है। फलों से युक्त हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर पक्षियों का बोलना शुभ और युक्त वृक्ष या काठ के ढेर पर स्थित होकर बोलना अशुभ होता है।

अवगत करना भौम निर्मित कहलाता है। इस निर्मित से गृह-निर्माण योग्य भूमि, देवालय-निर्माण योग्य भूमि, जलाशय-निर्माण योग्य भूमि आंदि बातों की जानकारी प्राप्त की जाती है। भूमि के रूप, रस, गन्ध और स्थर्ण द्वारा उसके शुभाग्नभूत्व को जाना जाता है।

भूमि के नीचे के जल का विचार बारते समय बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी पाढ़ु और पीत वर्ण की हो तथा उसमें से शहद जैसी गन्ध निकलती हो तो वहाँ जल निकलता है अर्थात् सवा तीन पुरुष प्रणाणनीचे खोदने से जल का स्रोत मिल जाता है। नीलकमल के रंग की मिट्टी हो तो उसके नीचे खारा जल समझना चाहिए। कपोत वर्ण के समान मृत्तिका होने से भी खारे जल का स्रोत मिलता है। पीत वर्ण की मृत्तिका से दूध के समान गन्ध निकले तो निश्चयतः मीठे जल का स्रोत समझना चाहिए। परन्तु यहाँ इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि मिट्टी चिकनी होनी चाहिए; रुक्ष वर्ण की मिट्टी होने से जल का अभाव या अल्प जल निकलता है। शूभ्र वर्ण की मिट्टी रहने से भी उसके नीचे जल का स्रोत रहता है।

धर बनाने के लिए श्वेत, रक्त, पीत और कुण्ड वर्ण की भूमि, जिसमें से भी, रक्त, अन्न और मद्य के समान गन्ध निकलती हो, शुभ होती है। मधुर, कपायली, आमल और कटु रसबाली भूमि धर बनाने के लिए शुभ होती है। दुग्धग्न्ध युक्त भूमि में धर बनाने से अनिष्ट होता है, शत्रुभय, धन विनाश एवं नाना प्रकार के संक्लेश होते हैं। मंजीठे के समान रक्त वर्ण की भूमि अशुभ है। मूँग के समान हरित वर्ण की भूमि में भी धर बनाना अशुभ होता है। जिस स्थान की मृत्तिका से पुरुष के समान गन्ध निकले या धूप के समान गन्ध आती हो और श्वेत या पीत वर्ण की मृत्तिका हो, उस स्थान पर धर बनाना शुभ होता है। अग्नि के समान लालवर्ण की भूमि में धर बनाना निषिद्ध है। यदि इस भूमि का स्पर्श छत के समान चिकना हो और महुवे के समान गन्ध निकलती हो तो यह भूमि भी धर बनाने के लिए शुभ होती है। मटरमिठ वर्ण की भूमि से यदि मुर्दे जैसी गन्ध आये तो कभी भी उस भूमि में धर नहीं बनाना चाहिए। वर्ण की दृष्टि से श्वेत और पीत वर्ण की भूमि तथा गन्ध की दृष्टि से भधु, घृत, दुग्ध और आत की गन्ध बाली भूमि तथा घृत, दही और शहद के समान स्पर्श वाली भूमि धर बनाने के लिए शुभ मानी जाती है। किस प्रकार की भूमि के नीचे कीन-कीन पदार्थ हैं वह भी भूमि के मणित से निकाला जाता है।

किसी भी स्थान में कहाँ अस्थि है और कहाँ पर धन-धान्यादि हैं, इसकी जानकारी भी भूमि गणित के अनुमार की जाती है। ज्योतिष शास्त्र के विषयों में ऐसे कई प्रकार के गणित हैं जो भूमि के नीचे की बस्तुओं पर प्रकाश डालते हैं। बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी हाथी के भद के समान गन्ध बाली हो, या

कमल के समान गन्ध वाली हो और जहाँ प्रायः कोयल आया-जाया करती हों और गोहद से भपना निवास बनाया हो, इस प्रकार की भूमि में नीचे स्वर्णादि द्रव्य रहते हैं। दूध के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे रजत, मघु और पृथ्वी के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे पत्थर और जल के समान गन्धवाली भूमि के नीचे अस्थिर्या निकलती हैं। जिस भूमि का बर्ण सदा एक तरह का नहीं रहे, निरन्तर बदलता रहे और मटु के समान गन्ध निकले उस भूमि के नीचे सोना या रत्न अवश्य रहते हैं। कदली दृक्ष के वार के इष्टाद जहाँ ने गन्ध निकलती हो तथा मधुर रस हो, उस भूमि के नीचे रजत - चाँदी या चाँदी के सिन्हे निकलते हैं।

छिन्न विमित वस्त्र, शस्त्र, आसन और छृग्रादि को छिन्न हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न विमित ज्ञान के अन्तर्गत है। बताया यथा है कि नथे वस्त्र, आसन, शश्या, शस्त्र, जूता आदि के नीचे भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणों के चार भागों में देवता, पाणान्त—मूल भाग के दो भागों में मनुष्य और मध्य के तीन भागों में राक्षस वसते हैं। नया वस्त्र या उपर्युक्त नयी वस्तुओं में स्थानी, गोवर, तीचड़ आदि लग जाय, उपर्युक्त वस्तुएँ जल जायें, कट जायें तो अशुभ फल समझना चाहिए। कुछ पुराना वस्त्र पहनने पर जल या कट जाय तो सामान्यतया अशुभ होता है। राक्षस के भागों में वस्त्र में छेद हो जाय तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु होती है, मगुआ भागों में छेद हो जाने पर पुत्र-जन्म होता है तथा बैशवशाली पदार्थों की प्राप्ति होती है। देवताओं के भागों में छेद होने पर धन, ऐश्वर्य, वैभव, सम्पादन एवं गोगों की प्राप्ति होती है। देवता, मनुष्य और राक्षस इन तीनों के भागों में छेद हो जाने पर अत्यन्त अनिष्ट होता है।

कंकपक्षी, मेहक, उल्लू, कपोत, काक, मांसभक्षी शृग्रादि, जाम्बुक, गधा, ऊटे और सर्वे के आकार का छेद देवता भाग में होने पर भी वस्त्र-भोक्ता वो मृत्यु तुल्य फल भोगना पड़ता है। इस प्रकार के छेद होने ने धन का विनाश भी होता है। देवता भाग के अतिरिक्त अन्य भागों में छेद होने पर तो वस्त्र-भोक्ता को नाना प्रकार की अधि-व्याधियाँ होने वाली मूर्दना मिलती हैं। अपमान और तिरस्कार भी अनेक प्रकार के सहन करने पड़ते हैं। लत, छब्ज, स्वरितक, विश्वफल—देल, कलश, कमल और तोरणादि के आकार का छेद राक्षस भाग में होने से लक्ष्मी की प्राप्ति, पद-वृद्धि, सम्पादन और अन्य सभी प्रकार के अभीष्ट फल प्राप्त होते हैं।

वस्त्र शारण करने समय उसका दाहिना भाग जल जाय या कट जाय तो वस्त्र-भोक्ता को एक महीने के भीतर अनेक प्रकार की व्रीमारियोंना सामना करना पड़ता है। वार्षि कोने के जलने या कटने में वीम दिन में घर में तो १ न लोई आहसीय

व्यक्ति रोग से पीड़ित होता है तथा वस्त्र-भोवता को अत्यधिक मानसिक ताप उठाना पड़ता है। ठीक महय में वस्त्र के जलने या कटने से व्यक्ति को शारीरिक कष्ट, धूननाश और पद-पद पर अपमानित होता पड़ता है। वस्त्र के मूल भाग में जलना या कटना साधारणतः शुभ माना गया है। अग्रभाग में वस्त्र का छिन्न-भिन्न होना साधारणतः ठीक समझना चाहिए। वस्त्र को धारण करने थे दिन से लेकर दो दिनों तक छिन्न-भिन्न होने के शुभाशुभत्व का विचार करना आवश्यक माना गया है। धारण करने के तत्क्षण ही वस्त्र जल या कट जाय तो उसका फल तत्काल और अदृश्य प्राप्त होता है। धारण करने के एकाध दिन बाद यदि वस्त्र जले, कटे या फटे तो उसका फल अत्यल्प होता है। वर्ग आदि आचार्यों का मत है कि वस्त्र के शुभाशुभत्व का विचार वस्त्र धारण करने के एक प्रहर तक ही करना ज्यादा अच्छा होता है। एक प्रहर के पश्चात् वस्त्र पुरातन हो जाता है, अतः उसके शुभाशुभत्व का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वस्त्र में किसी पदार्थ का दाग लगना भी अशुभ माना गया है। शोदृश्य या मधु के दाग को शुभ बताया है।

नये वस्त्रों में कुर्ता, टोपी, कमीज, खोट आदि ऊपर पहने जाने वाले वस्त्रों का विचार प्रभुख रूप से करना चाहिए तथा शुभाशुभ फल ऊपरी वस्त्रों के जलने-कटने का विशेष रूप से होता है। टोपी, खोट, कमीजामा, पीण्ठ आदि के जलने-कटने का फल अत्यल्प होता है। सब्दे अधिक निकुञ्ज टोपी का जलना या कटना कहा गया है। जिस व्यक्ति की टोपी धारण करते ही कट जाय या जल जाय तो वह व्यक्ति मृत्यु तुल्य कट उठाता है। टोपी के ऊपरी हिस्सा का जलना जितना अशुभ होता है, उतना नीचे के हिस्सा का जलना नहीं। रविवार, मंगल और शनिवार को नवीन वस्त्र धारण करते ही जल या कट जाय तो विशेष कष्ट होता है। सोमवार और शुक्रवार को नये वस्त्र के जलने या कटने से सामान्य कष्ट तथा गुरुवार और बुधवार को वस्त्र का जलना भी अशुभ है।

अन्तरिक्ष ... यह नक्षत्रों के उदायस्त द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्त है। शुक्र, बुध, मंगल, गुरु और शनि इन पाँच ग्रहों के उदयास्त द्वारा ही शुभाशुभ फल का निरूपण किया जाता है। यतः यूर्य और चन्द्रमा का उदायस्त प्रतिदिन होता है, अतएव शुभाशुभ फल के लिए इन ग्रहों के उदयास्त के उदयास्त का विशेष भृत्या नहीं दी गयी है। निमित्त ज्ञानी उक्त पाँचों ग्रहों के उदयास्त से ही फलादेश का कथन करते हैं। वास्तव में इन ग्रहों का उदयास्त विचार है भी महत्वपूर्ण।

शक्र भृशिवनी, मण्डिरा, रेवती, हस्त, पृष्ठ, पुनर्वेसु, अनुराधा, अवण और

स्वाति नक्षत्र में उदय को प्राप्त हो तो सिन्धु, गुजर, आसाम, महाराष्ट्र और बंगाल में अशान्ति, महामारी एवं आपसी संघर्ष होते हैं। पूर्वाफाल्युनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्युनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होने से गुजरात, पंजाब में दुष्मिक्ष तथा बिहार, बंगाल, असम आदि पूर्वी राज्यों में दुष्मिक्ष होता है। घी और धान्य का भाव समस्त देशों में कुछ महंगा होता है। कृत्तिका, मधा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रों में शुक्र का उदय हो तो दक्षिण भारत में सुभिक्ष, पूर्णतया वर्षा तथा उत्तर भारत में वर्षा की कमी रहती है। फसल भी उत्तर भारत में बहुत अच्छी नहीं होती; आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तरा भाद्रपद इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होना समस्त भारत के लिए अशुभ कहा गया है। चीन, अमेरिका, जापान और रूस में भी अशान्ति रहती है।

मेष राशि में शनि का उदय हो तो जलवृष्टि, सुख, शान्ति, धार्मिक विचार, उत्तम फसल और परस्पर सहानुभूति की उत्पत्ति होती है। वृष राशि में शनि का उदय होने से तृणकाष्ठ का अभाव, धोड़ों में रोग, साधारण वर्षा और सामान्यतः पशु-रोगों की वृद्धि होती है। मिथुन राशि में शनि का उदय हो तो प्रचुर परिमाण में वर्षा, उत्तम फसल और सभी पदार्थ सस्त होते हैं। कक्ष राशि में शनि का उदय होने से वर्षा का अभाव, रसों का उत्पत्ति में कमी, बनों का अभाव और खाद्य वस्तुओं के भाव महंग होते हैं। सिंह राशि में शनि का उदय होना अशुभ-कारक होता है। कन्या में शनि का उदय होने से धान्यनाश, अल्पवर्षा, व्यापार में लाभ और आभिजात्य वर्ग के व्यक्तियों को कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि में शनि का उदय हो तो भहावृष्टि, धन का विनाश, बाढ़ का भय और गहौं की फनन कम होती है। धनु राशि में शनि का उदय हो तो नाना प्रकार की वीमारियाँ देश में फैलती हैं। मकर में शनि का उदय हो तो प्रशासकों में संघर्ष, राजनीतिक उत्पट-फेर गवं लोहा महंगा होता है। कुम्भ राशि में शनि का उदय हो सो अच्छी वर्षा, अच्छी फनन और व्यापारियों को लाभ होता है। मीन राशि में शनि का उदय होना अल्प वर्षाकाशक, नाना प्रकार के उपद्रवों का सूचक तथा फसल की कमी का सूचक है।

मेष राशि में गुरु का उदय होने से दुष्मिक्ष, मरण, संकट और आकस्मिक दृष्टिनार्थ उत्पन्न होती हैं। वृष में उदय होने से सुभिक्ष होता है। मिथुन में उदय होने में वेद्याओं को कष्ट, कलात्मक और व्यापारियों को भी कष्ट होता है। नक्ष में गुरु के उदय होने से वेद्याट वर्षा, कन्या में उदय होने से साधारण वर्षा, तुला में गुरु के उदय होने ने विलास के पदार्थ महंग, वृश्चिक में उदय होने से दुष्मिक्ष, धनु-मकर में उदय होने भे उनम् वर्षा, व्याधियों का बाहुल्य, कुम्भ में उदय होने से अतिवृष्टि, अन्त का भाव महंगा और मीन में गुरु का उदय होने से अशान्ति

और संघर्ष होता है।

पौष, आषाढ़, श्रावण, वैशाख और माघ मास में बुध का उदय होना अशुभ एवं आश्विन, कार्तिक और ज्येष्ठ में बुध का उदय होने से शुभ होता है। पूर्व दिशा में बुध का उदय होना अशुभ और पश्चिम दिशा में शुभ माना जाता है। मंगल का शनि की राशि में उदय होना अशुभ माना जाता है और शुक्र, गुरु तथा अपनी राशियों में उदय होना शुभ कहा गया है। कन्या और मिथुन राशि में उदय होना साधारण है।

ग्रहों के अस्त का विचार करते हुए कहा गया है कि अश्विनी, भूगशिरा, हस्त, रेती, पुष्य, पुनर्वंसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र में शुक्र का अस्त होना इटली, रोम, जापान में भूकम्प का छोतक; वर्षा, श्याम, चीन और अमेरिका के लिए सुख-शान्ति सूचक तथा रूस और भारत के लिए साधारण शान्तिप्रद होता है। इन नक्षत्रों में शुक्रास्त होने के उपरान्त एक महीने तक अन्न महंगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता होता है। धी, तेल, जूट, आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कृतिका, मधा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र अस्त हो तो भारत में दिग्रह, मुसलिम राष्ट्रों में शान्ति, इंग्लैण्ड और अमेरिका में समता, चीन में सुभिक्ष, वर्षा में उत्तम फसल और भारत में साधारण फसल होती है। पूर्वभाद्रपद, पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी और भरणी नक्षत्रों में शुक्र का अस्त होना पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, बिहायप्रदेश के लिए सुभिक्षदायक और बंगाल, आसाम तथा बिहार के लिए साधारण सुभिक्षदायक होता है। शुक्र का मध्य रात्रि में अस्त होना तथा आश्लेषा विद्ध मधा नक्षत्र में उदय होना अत्यन्त अशुभकारक माना गया है।

मेष में शनि अस्त हो तो धान्य भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता में असन्तोष और आपसी झगड़े होते हैं। बृष्ट राशि में शनि अस्त हो तो पशुओं को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश और मनुष्यों में संक्रामक रोग उत्पन्न होते हैं। मिथुन राशि में शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी ह्रेष और अशान्ति होती है। कर्क राशि में शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड़, चादी, धी अत्यन्त महंगे होते हैं। कन्या राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा; तुला राशि में शनि अस्त हो तो अच्छी वर्षा; वृश्चिक राशि में शनि अस्त हो तो उत्तम फसल; धनु राशि में शनि के अस्त होने से स्त्री-बच्चों को कष्ट, उत्तम वर्षा और उत्तम फसल; मकर राशि में शनि के अस्त होने से सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी फसल, राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन और पशु-धन की वृद्धि; कुम्भ राशि में शनि के अस्त होने से शीत-प्रकोप और पशुओं की हानि एवं मीन राशि में शनि के अस्त होने से व्यधर्म का प्रचार होता है। सन्ध्याकाल में भरणी नक्षत्र पर शनि का अस्त होना अत्यन्त अशुभ सूचक माना गया है।

मेष में गुरु अस्त हो तो थोड़ी वर्षा, बिहार, बंगाल और आसाम में सुभिक्ष, राजस्थान और पंजाब में दुष्काल; वृष में अस्त हो तो दुभिक्ष, दक्षिण भारत में अच्छी फसल और उत्तर भारत में खण्डवृष्टि; मिथुन में अस्त हो तो घृत, तेल, लवण आदि पदार्थ महँगे महामारी का प्रवाहोप; कर्क में अस्त हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण और समृद्धि; सिंह में अस्त हो तो युद्ध, संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर और धन का नाश; कन्या में अस्त हो तो क्षेत्र, सुभिक्ष, आरोग्य और उत्तम फसल; तुला में अस्त हो तो गीड़ा, द्विजों को विशेष कष्ट, धान्य महँगा; वृश्चिक में अस्त हो तो धनहानि और शस्त्रभय; धनु राशि में अस्त हो तो भय, आतंक, नाना प्रकार के रोग और साधारण फसल; मकर में अस्त हो तो उड्ढ, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे, कुम्भ में अस्त हो तो प्रजा को कष्ट एवं मीन राशि में गुरु अस्त हो तो सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, धान्य भाव सस्ता और अनेक प्रकार की समृद्धि होती है। गुरु का कूर ग्रहों के साथ अस्त या उदय होना अशुभ है। शुभ ग्रहों के साथ अस्त या उदय होने से शुभ-फल प्राप्त होता है।

युध का कूर नक्षत्रों में अस्त होना तथा कूर ग्रहों के साथ अस्त होना अशुभ कहा गया है। मंगल का शनि धेन की राशियों में अस्त होना अशुभसूचक है। जब मंगल अपनी राशि के दीप्तांश में अस्त या उदय को प्राप्त करता है तो शुभ-फल प्राप्त होता है।

ग्रहों के अस्तोदय के समय समान मार्गी और वक्री का भी विचार करना चाहिए। इस निमित्तज्ञान में समस्त ग्रहों के बार प्रकरण गमित हैं। ग्रहों की विभिन्न जातियों के अनुसार शुभाशुभ फल का निरूपण भी इसी निमित्तज्ञान के अन्तर्गत किया गया है। शनि का कूर नक्षत्र पर वक्री होना और मृदुल नक्षत्र पर उदय हो जाना अशुभ है। वोई भी ग्रह अपनी स्वाभाविक गति से चलते समय यकायक वक्री हो जाय तो अशुभ फल होता है।

लक्षणनिमित्त—इवस्तिक, कुलश, शंख, चक्र आदि चिह्नों के द्वारा एवं हस्त, भृत्यक और पदतल की रेखाओं द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना लक्षण-निमित्त है। कारजक्षण में बताया गया है कि मनुष्य लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन-मरण, जय-पराजय एवं न्यास्य-अस्वास्थ्य रेखाओं के बल से प्राप्त करता है। पुरुषों के लक्षण दाहिने हाथ से और स्त्रियों के दायें हाथ की रेखाओं से अवगत करने चाहिए। यदि प्रदेशिनी और भृत्यमा अंगुलियों का अन्तर सधन हो—वे एक-दूसरे से मिली हीं और मिलने से उनके बीच में कोई अन्तर न रहे, तो वचपत में सुख होता है। यदि भृत्यमा और अनामिका के बीच सधन अन्तर हो तो जवानी में सुख होता है। लम्बी अंगुलियाँ दीर्घजीवियों की, शीघ्री अंगुलियाँ सुम्दरों की, पतली वुद्धिमानों की और चपटी दूसरी भी सेवा करने वालों की होती है। मोटी अंगुलियों वाले निर्धन और बाहर की ओर कुकी अंगुलियों वाले आत्मधाती होते

है। कनिष्ठा और अनामिका में सघन अन्तर हो तो बुढ़ापे में सुख प्राप्त होता है। सभी अंगुलियाँ जिसकी सघन होती हैं वह धन-धान्य युक्त, सुखी और कर्तव्यशील होता है। जिनकी अंगुलियों के पर्व लम्बे होते हैं, वे सौभाग्यवान् और दीर्घजीवी होते हैं।

स्पर्श करने में उष्ण, अरुणवर्ण, पसीनारहित, सघन (छिद्र रहित) अंगुलियों वाला, चिकना, चमकदार, मांसल, छोटा, लम्बी अंगुलियों वाला, चीड़ा एवं ताम्रनखबाला हाथ प्रशंसनीय माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति जीवन में धनी, सुखी, ज्ञानी और नाना प्रकार के सम्मानों से युक्त होता है। जिनके हाथ की आकृति बन्दर के हाथ की आकृति के समान कोमल, लम्बी, पतली, नुकीली हथेली वाली होती है वे धनिक होते हैं। व्याघ्र के पंज की आकृति के समान हाथ वाले मनुष्य पापी होते हैं। जिसके हाथ कुछ भी काम नहीं करते हुए भी कठोर प्रतीत हों और जिसके पाँव बहुत चलने-फिरने पर भी कोमल दीख पड़े, वह मनुष्य सुखी होता है तथा जीवन में सर्वदा सुख का अनुभव करता है।

हाथ तीन प्रकार के बताये हैं—नुकीला, समकोण अर्थात् चौकोर और गोल-पतली चपटी अंगुलियों के अग्र की आकृति वाला। जो देखने में नुकीला—लम्बी-लम्बी नुकीली अंगुलियाँ, करतल भाग उन्नत, मांसलयुक्त, ताम्रवर्ण का हो, वह व्यक्ति के धनी, सुखी और ज्ञानी होने की सूचना देता है। नुकीला हाथ उत्तम मनुष्यों का होता है। यह सत्य है कि हस्तरेखा के विचार के पहले हाथ की आकृति का विचार कर का विचार अवश्य करना चाहिए। सबसे पहले हाथ की आकृति का विचार कर लेना आवश्यक है। समकोण हाथ की अंगुलियाँ साधारण लम्बी होती हैं। करतलस्थ रेखाएँ पीले रंग की चौड़ी दीख पड़ती हैं। अंगुलियों के अग्रभाग चौड़े-चौकोर होते हैं। अंगुलियाँ लम्बी करके एक-दूसरी से मिलाकर देखने से उनके बीच की सन्धि में प्रकाश दीख पड़ता है। अंगुलियों के नीचे के उच्चप्रदेश साधारण ऊने उठे हुए और देखने में स्पष्ट दीख पड़ते हैं। हाथ का स्पर्श करने से हाथ कठिन प्रतीत होता है। अंगुलियाँ मोटी होती हैं, हाथ का रंग पीला दिखलाई पड़ता है। उत्तम रेखाएँ उठी हुई रहती हैं। इस प्रकार के लक्षणों से युक्त हाथ वाला व्यक्ति परिश्रमी, दृढ़ अध्यवसायी, कर्मठ, निष्कपट, लोकप्रिय, परोपकारी, तर्कणाप्रधान, और शोधकार्य में भाग लेने वाला होता है। यह हाथ मध्यम दर्जे का माना जाता है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति बहुत बड़ा धनिक नहीं हो सकता है।

गोल, पतले और चपटे ढंग का हाथ निकृष्ट माना जाता है। इस प्रकार के हाथ में करतल का मध्य भाग गहरा, रेखाएँ चौड़ी और कैली हुई अंगुलियाँ छोटी पा टेढ़ी, अंगूठा छोटा होता है। जिस हाथ वी अंगुलियाँ मोटी, हयली का रंग वाला और अल्प रेखाएँ हो, वह हाथ साधारण कोटि का होता है। इस

प्रकार के हाथ वाले व्यक्ति परिवर्षी, अल्प सन्तोषी, मन्दवृद्धि और विशेष भोजन करने वाले होते हैं। जिस हाथ में टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ रहती हैं, देखने में बदसूरत होता है और अँगुलियाँ भद्दी होती हैं, वह हाथ अशुभ माना जाता है। इस हाथ वाला व्यक्ति सर्वदा जीवन में कष्ट उठाता है।

जिस व्यक्ति के हाथ का पिछला भाग पांसन, तुल, कम्हुए की पीठ के समान उन्नत, नसों से रहित और रोम रहित होता है, वह व्यक्ति संसार में पर्याप्त यश, विद्या, धन और भोग को प्राप्त करता है। रुक्ष, सिकुड़ा, कड़ा पृष्ठ भाग अशुभ समझा जाता है। जिस पृष्ठ भाग की नसें दिखलाई दें, केश हो वह जीवन में कष्टों की सूचना देता है। हाथ के पृष्ठ भाग में छः बातें विचारणीय मानी गयी हैं—उन्नत होना, अवन्नत होना, नसों का दिखलाई पड़ना, नसों का नहीं दिखलाई पड़ना, विस्तीर्ण होना और संकुचित या संतीर्ण होना।

हथेली का विचार करते समय कहा गया है कि जिसकी हथेली स्नाध, उन्नत, मांसल हो, उनसी हुई नसों से युक्त न हो, वह शुभ मानी जाती है। इस प्रकार की हथेली वाला व्यक्ति जीवन में नाना प्रकार की उन्नतियों को प्राप्त करता है। जिसके हाथ का या पाँव का तलवा भूढ़ होता है, वे लोग स्थिर कार्य करने वाले होते हैं। कमल के गर्भ के समान गुन्दर वर्ण और अत्यन्त तुकोमल दोनों हाथों का होना उत्तम माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला मनुष्य कठोर में कठोर कार्य करने में समर्थ होता है। जिस मनुष्य के हाथ में प्राकृतिक रूप से विकृति मान्दूम पड़े तो वह व्यक्ति अपने पदों का अभ्युदय करता है। ऐसे लोगों को बाह्य गोचर्य भी मिलता है। जिसकी हथेली पीतवर्ण की हो, वह आगमाभ्यासी, श्वेतवर्ण की हथेली वाला दरिद्री संश्वा काले और नीले वर्ण की हथेली वाला व्यक्ति दुराचारी होता है। जिस व्यक्ति की हथेली सिकुड़ी, पतली और सल पड़ी हुई हो तो वह व्यक्ति मानसिक दुर्बलता वाला, डरपोक, वृद्धिहीन, अन्यायाचरण करने वाला और चंचल स्वभाव वाला होता है। बड़ा और लम्बा करतल भाग महत्वाकांक्षी, असफल और नीरस व्यक्ति का होता है। दृढ़ करतल भाग हो तो चंचल तथा योग्य प्रकृति वाला होता है। हथेली का यहरा होना असफलताओं का गुच्छक है।

जिसके नखों का वर्ण तुप—भूसे के समान हो; वे पुरुषार्थीन, विवर्णनश्च वाले परमुक्तार्थकी, चपटे और फटे नखवाले धनहीन; नीले रंग के नख वाले पाप कार्य में प्रवृत्त, दुराचारी; जिसके नख शिथिल हों वे दरिद्री होते हैं। छोटी अँगुलियों वाले मनुष्य चालाक, साहसी, संकुचित स्वभाव के और भनमाने कार्य करने वाले होते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति कवि, लेखक और प्रशासक भी होते हैं। लम्बी अँगुलियों वाले मनुष्य दीर्घसूत्री, प्रमादी और अस्थिर विचार के होते हैं। लम्बी अँगुलियों यदि मुवीकी हो तो व्यक्ति महत्वाकांक्षी, परिवर्षी, यशस्वी

और धनी होता है। लट्ठ के समान पुष्ट अंगुलियों वाले व्यक्ति ऐश-आरा भोगने वाले, दृढ़ परिश्रमी, मिलनसार और सुख प्राप्त करने की चेष्टा करने वाले होते हैं। लचीली अंगुलियों वाले समझदार, अधिक खर्च करने वाले, ऋण-ग्रस्त और सम्मान प्राप्त करने वाले होते हैं।

जिसका अंगूठा हथेली वी ओर झुका हुआ हो, अन्य अंगुलियाँ पशु के पंजे के समान हों, हथेली संकुचित और चपटी हो ऐसा मनुष्य अधिक तृष्णा वाला होता है। जिसका अंगूठा पीछे वी ओर झुका हुआ हो, वह व्यक्ति कार्यकुशल होता है अंगूठे को इच्छाशक्ति, निग्रहशक्ति, कीर्ति, सुख और समृद्धि का द्योतक माना गया है। अंगूठे के निमित्त द्वारा जीवन के भावी शृंभाशुभ का विचार किया जाता है।

हस्तरेखाओं का विचार करते हुए कहा गया है कि आयु या भोगरेखा, मातृरेखा, पितृरेखा, ऊर्जवरेखा, मणिवन्धरेखा, शुकवन्धिनीरेखा आदि रेखाएँ प्रवान हैं। जो रेखा कनिष्ठा अंगुली से आरम्भ कर तर्जनी के मूलाभिमुख गमन करती है, उसका नाम आयुरेखा है। कुछ आचार्य इसे भोगरेखा भी कहते हैं। आयुरेखा यदि छिन्न-गिन्न न हो, तो यह व्यक्ति 120 वर्ष तक जीवित रहता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा अंगुली के मूल से अनाभिका के मूल तक विसरृत हो तो 50-60 वर्ष की आयु होती है। इस आयुरेखा को जितनी क्षुद्र रेखाएँ छिन्न-गिन्न करती हैं, उतनी ही आयु कम हो जाती है। इस रेखा के छोटी और मोटी होने पर भी व्यक्ति अलगायु होता है। इस रेखा के शुभलकार होने से व्यक्ति लगाट और उत्थाह-हीन होता है। यह रेखा जब छोटी-छोटी रेखाओं से कटी हुई हो, तो व्यक्ति प्रेम में असफल रहता है। इस रेखा के मूल में वृद्ध स्थान में आळा न रहने से सन्तान नहीं होती। शनि स्थान के निम्न देश में मातृरेखा के साथ इस रेखा के मिल जाने पर हठात् मृत्यु होती है। यदि यह रेखा शुभलकार होकर शनि के रथाम में जाय तो व्यक्ति स्त्री-प्रेमी होता है।

आयरेखा की वागल में जो दूसरी रेखा तर्जनी के निम्न देश में भट्ट है, उसका नाम मातृरेखा है। यदि रेखा शनि स्थान या शनि स्थान के बीच तक लगी हो तो अक्षेत्रमुख्य होती है। जिस व्यक्ति की मातृ और गिन्न गेला गिनती नहीं, तो विशेष विचार नहीं करना और कार्य में शीघ्र ही प्रयत्न हो जाता है। इस अक्षेत्र की गेला गाला अन्ति आवश्यिगानि, जीर्मनता और व्याख्यान आड़ने में पड़ जाता है। यो मातृरेखा रहने से भास्त्रायशाली, भक्षणगंडाता और अग्निक होता है तथा इस प्रकार के व्यक्ति को पैतृक समर्पित भी प्राप्त होती है। यदि यह रेखा टूट जाय तो मस्तक में चोट लगती है तथा व्यक्ति अंगहीन होता है। यह रेखा लग्नी हो और हाथ में अन्य वहूत-सी रेखाएँ हों तो यह व्यक्ति विपत्ति काल में अतिमदमन करने वाला होता है।

पितृरेखा हो तो वह मनुष्य परमुखार्थी और डरपोक होता है। मातृरेखा हाथ में सरल भाव से न जाकर बुद्ध के स्थानाभिमुखी हो तो वाणिज्य व्यवसाय में लाभ होता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा और अनामिका के बीच की ओर आये तो शिल्प द्वारा उन्नति लाभ होता है। यह रेखा रवि के स्थान में जाय, तो शिल्प-विद्यानुरागी और यज्ञप्रिय व्यक्ति होता है। यह रेखा शाश्वरेखा को द्वेषकर शनि स्थान में जाय तो मस्तक में चोट लगने से मृत्यु होती है। आयु रेखा के समीप इसके होने से श्वास रोग होता है। इस रेखा में सादे विन्दु होने से व्यक्ति वैज्ञानिक आविष्कर्ता होता है। मातृरेखा के ऊपर यवचिह्न होने से व्यक्ति वायुरोग ग्रस्त होता है। मातृ और पितृ दोनों रेखाओं के अत्यन्त छोटे होने से शीघ्र मृत्यु होती है।

जो रेखा करतल मूल के मध्यस्थल से उठकर साधारणतः मातृरेखा का ऊर्ध्वदेश स्पर्श करती है, अथवा उसके निकट पहुँचती है, उसका नाम पितृरेखा है। कुछ लोग इसे आयुरेखा भी कहते हैं। यह रेखा चौड़ी और विवर्ण हो, तो मनुष्य रुण, नीच स्वभाव, दुर्बल और ईर्ष्यान्वित होता है। दोनों हाथ में पितृरेखा के छोटी होने से व्यक्ति अल्पायु होता है। पितृरेखा के शृङ्खलाकृति होने से व्यक्ति रुण और दुर्बल होता है। दो पितृरेखा होने से व्यक्ति दीर्घयु, विलासी, सुखी और किसी स्त्री के धन का उत्तराधिकारी होता है। यह रेखा शाखा विशिष्ट होती है क्षण से कमजोर होती है। पितृरेखा से कोई शाखा चन्द्र के स्थान में जाने से मूर्खतावश अपव्यय कर व्यक्ति कष्ट में पड़ता है। यह रेखा टेढ़ी होकर चन्द्र स्थान में जाये, तो दीर्घजीवी और इस रेखा की कोई शाखा बुद्ध के क्षेत्र में प्रविष्ट हो तो व्यवसाय में उन्नति एवं ज्ञात्वानुशीलन में सुख्यातिलाभ होता है। पितृरेखा में दो रेखाएं निकलकर एक चन्द्र और दूसरी शुक्र के स्थान में जाये, तो वह मनुष्य स्वदेश का त्याग कर दिलेगा जाता है। चन्द्रस्थान से कोई रेखा आकर पितृरेखा को काटे, तो वह वातरोगी होता है। जिस व्यक्ति के दोनों हाथों में मातृ, पितृ और आयु रेखाएं मिल गई हों, वह व्यक्ति अकस्मात् दुरवस्था को प्राप्त करता है और उसकी मृत्यु भी किसी दुर्घटना से होती है। पितृरेखा बद्धाशुलि के निकट जाये तो व्यक्ति को सन्तान नहीं होती। पितृरेखा में छोटी-छोटी रेखाएं आवार चतुष्कोण उत्पन्न करें तो स्वजनों से विरोध होता है तथा जीवन में अनेक स्थानों पर असफलताएं मिलती हैं।

जो सौधी रेखा पितृरेखा के मूल के सबीष आरम्भ होकर भृत्यमांगुलि की ओर गमन करती है, उसे ऊर्ध्वरेखा कहते हैं। जिसनी ऊर्ध्वरेखा पितृरेखा से उठे, वह अपनी चेष्टा से सुख और सौभाग्य लाभ करता है। ऊर्ध्वरेखा हृततल के बीच से उठकर वृथस्थान तक जाय तो वाणिज्य व्यवसाय में, चरतृता में या विज्ञान-शास्त्र में उन्नति होती है। यह रेखा मणिवन्ध का भेदन करे तो दुष्क और जोक

उपस्थित होता है। इस रेखा के हाथ के बीच से निकलकर रवि के स्थान में जाने से गाहित्य और शिल्प विद्या में उन्नति होती है। यह रेखा मध्यमा अंगुली से जितनी ऊपर उठेगी, उतना ही शुभ कल होगा। ऊर्ध्वरेखा जिस स्थान में टेढ़ी होकर जायगी, उस व्यक्ति को उसी उम्र में कष्ट होगा। इस रेखा के भग्न या छिन्न-भिन्न होने से नाना प्रकार की घटनाएँ पटित होती हैं। इस रेखा के सरल और सुन्दर होने से व्यक्ति सुखी और दीर्घजीवी जीवन व्यतीत करता है। शुक्र स्थान से वाई एक छोटी रेखा निकलकर पितृरेखा और ऊर्ध्वरेखा के काटने से स्त्री विवोग होता है।

जिसके हाथ में ऊर्ध्वरेखा न रहे, वह व्यक्ति दुर्भाग्यशाली, उद्यम रहित और शिथिलाचारी होता है। इस रेखा के अस्पष्ट होने से उद्यम व्यर्थ होता है। इस रेखा के स्पष्ट और सरल भाव से शनि के स्थान में जाने से व्यक्ति दीर्घजीवी होता है। स्त्रियों के करतल में और पादतल में ऊर्ध्वरेखा होने से वे चिर-सध्वा सौभाग्यवती और पुत्र-पौत्रवती होती हैं। जिस व्यक्ति के हाथ में यह रेखा होती है। वह ऐश्वर्यशाली और सुखी होता है। जिसकी तर्जनी से नेकार मूल तक ऊर्ध्वरेखा स्पष्ट हो, वह राजदूत होता है। मध्यमा अंगुली के मूल तक जिसकी ऊर्ध्वरेखा दिखाई दे, वह सुखी, विभवशाली और पुत्र-पौत्रादि समन्वित होता है।

जिस व्यक्ति के मणिवन्ध में तीन सुस्पष्ट सरल रेखाएँ हों वह दीर्घजीवी, सुस्थ जरीरी और सौभाग्यशाली होता है। रेखात्रय जितनी ही साफ और स्वच्छ होगी, स्वास्थ्य उतना ही उत्तम होगा। मणिवन्ध रेखात्रय के बीच में कुण चिह्न रहने से व्यक्ति कठिन परिथमी और सौभाग्यशाली होता है। मणिवन्ध में यदि एक तारिका चिह्न हो तो उत्तराधिकारी के रूप में धन लाभ होता है, यिन्तु यदि चिह्न अस्पष्ट हो तो व्यक्ति गर्वादामितापी होता है। मणिवन्ध से चन्द्रस्थान के ऊपर की ओर जाने वाली रेखा हो तो गमुद्र-वात्रा का योग अधिक होता है। मणिवन्ध से कोई रेखा मुखस्थान की ओर जाय तो धन-लाभ होता है। इस रेखा के सरल होने से आयुवृद्धि होती है। पर यह रेखा इस वात की भी गुचना देती है कि व्यक्ति की मृत्यु जल में डूबने से न हो जाय। करलवधुज में मणिवन्ध रेखा के सम्बन्ध में बताया गया है कि जिसके मणिवन्ध-कलाई पर तीन रेखाएँ हों, उस धात्य, सुवर्ण और रत्नों की प्राप्ति होती है। उसे भाना प्रकार के आभूषणों का उपभोग करने का अवसर प्राप्त होता है। जिस व्यक्ति की मणिवन्ध रेखाएँ मध्य के समान चिंगल लालवर्ण की हों, तो वह गुण सुखी होता है। जिनका मणिवन्ध मठा हुआ और दृढ़ हो वे शाजा होते हैं, ढीला होने से हाथ काटा जाता है। जिसके मणिवन्ध में जवभाला की तीन धाराएँ हों वह व्यक्ति एम० एल० ए० या मिनिस्टर होता है। प्रशासक के कार्यों में उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त होती है। जिसके मणिवन्ध में यवगाला की दो धाराएँ प्राप्त होती हैं, वह व्यक्ति अत्यन्त धर्मतिमा, चतुर-

कार्यपटु और सुखी होता है। जज या मजिस्ट्रेट का पद उसे मिलता है। जिसके मणिबन्ध में धर्मान्वय की एक ही धारा दिखाई पड़े वह पूर्ण धनी होता है। सभी लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। जिस व्यक्ति के हाथ की तीनों मणिबन्ध रेखाएँ स्पष्ट और सारल हों, वह व्यक्ति जगन्मात्य, पूज्य और प्रतिष्ठित होता है।

तर्जनी और मध्यमांगुली के बीच से निकलकर अनामिका और कनिष्ठा के मध्यस्थल तक जाने वाली रेखा शुक्रबन्धनी कहताती है। इस रेखा के भग्न या बहुशाखा विशिष्ट होने पर मुच्छी रोग होता है। इस रेखा के स्थानस्थान में भग्न होने से मनुष्य लम्फट होता है। शुक्रबन्धनी रेखा के होने गे मनुष्य कभी त्रिपाद में मग्न रहता है और कभी आनन्द में। इस रेखा के बहुस्पति स्थान से अङ्गू-चन्द्राकांत ही सीढ़ी हराह ने बुध के स्थान तक जाने से व्यक्ति ऐन्द्रजालिक होता है और साहित्यिक भी होता है।

रेखाओं के रक्तवर्ण होने से मनुष्य आमोदप्रिय, उग्रस्वभाव, रक्तवर्ण में कुछ कालिमा हो अथवा रक्तवर्ण रक्ताभ हो तो प्रतिहिमापरायण, जठ, झोड़ी होता है। जिसकी रेखा पीली होती है, वह उच्चाभिनामों, प्रतिहिमापरायण तथा कर्मठ होता है। पाण्डुवर्ण की रेखाएँ होने से स्वी स्वभाव का व्यक्ति होता है।

यहों के स्थानों का वर्णन करते हुए बताया गया है कि तर्जनी मूल में गुरु का स्थान, मध्यमा औंगुली के मूल में शनि का स्थान, अनामिका के मूल देश में रवि स्थान, कनिष्ठा के मूल में बुध स्थान तथा अङ्गूठे के मूल देश में शुक्र स्थान है। मंगल के दो स्थान हैं—एक तर्जनी और अङ्गूठे के बीच में पितृरेखा के रामाप्ति स्थान के नीचे और दूसरा बुध स्थान के नीचे और चन्द्रस्थान के ऊपर ऊर्ध्व रेखा और मातृ रेखा के नीचे वाले स्थान में। मंगल स्थान के नीचे से मणिबन्ध के ऊपर तक करतल के पाण्डव भाग का स्थान को चन्द्रस्थान कहते हैं।

सूर्य के स्थान के ऊंचा होने से व्यक्ति चंचल होता है, संगीत तथा अन्यान्य कलाविशारद और नये विषयों का आविष्कारक होता है। रवि और बुध का स्थान उच्च होने ने व्यक्ति विज, शास्त्र विशारद और सुवक्ता होता है। अत्युच्च होने से वह आव्यधी, विनामी, अर्थलोभी और ताकिक होता है। रवि का स्थान ऊंचा होने से व्यक्ति मध्यमाङ्गुली, नम्बे केश, बड़े-बड़े नेत्र, किञ्चित् लम्फा गुच्छ-मण्डल, सुन्दर शरीर और अंगुलियाँ लम्बी होती हैं। रवि के स्थान में धोई रेखा न होने पर व्यक्ति को नाना दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ता है। जिसके हाथ का उच्च सूर्य क्षेत्र बुध क्षेत्र की ओर झुक रहा हो, तो उसका स्वभाव नम्ब होता है। व्यापार में उन्नति करने वाला, अर्थशास्त्र का अपूर्व विद्वान् एवं कलाप्रिय होता है। जिसके हाथ का उच्च सूर्यक्षेत्र शनिक्षेत्र वी ओर झुका हुआ हो, वह धनाद्य और अनेक प्रकार के भोग-विलासों में रत रहता है। सूर्यक्षेत्र यदि गुहक्षेत्र की ओर झुका हुआ हो तो व्यक्ति दयालु, मुणी, न्यायप्रिय, सत्यवादी,

परोपकारी, गुरुजनों का भक्त, सुन्दर आकृति वाला, बुद्धिमान्, मधुरभाषी, कला-कीशज में अभिरुचि रखने वाला, धार्मिक और सन्तान वाला होता है। मंगल क्षेत्र की ओर झुके रहने से व्यक्ति सदाचारी, ज्ञानी, साहित्यकार, शिल्पकला विशारद, वैज्ञानिक और कुशल डॉक्टर होता है।

चन्द्रस्थान अन्य होने से प्रत्यक्ष संगीतिय, हातवद्धमत, शिरण्य और चिन्तायुक्त होता है। इस प्रकार का व्यक्ति प्रायः संसार से विरक्त होता है और संन्यासी का जीवन व्यतीत करता है।

पितृरेणा के सन्निवाटस्थ मंगल का स्थान उच्च हो तो वह व्यक्ति असीम साहसी, विवादप्रिय और विशिष्ट बुद्धिमान् होता है। हस्त पार्श्वस्थ मंगल स्थान उच्च होने से वह व्यक्ति अन्याय कार्य में प्रवृत्त नहीं होता तथा धीर, नम्र, धार्मिक साहसी और दृढ़प्रतिज्ञ होता है। दोनों स्थान समान उच्च होने से वह व्यक्ति उत्तम स्वभाव सम्पन्न, कामातुर, निष्ठुर और अत्याचारी होता है। मंगलरक्षान कीचे होने में व्यक्ति भीर, मन्दबुद्धि और पुष्पांघीन होता है। मंगल का स्थान कठिन होने से स्थावर सम्भाति की वृद्धि होती है। मंगल उच्च का सर्वांग सुन्दर रूप में हो तो व्यक्ति भिल या अस्त्र बड़े-बड़े उद्योग धनधों को करता है। मंगल मनुष्य की कार्य-क्षमता की सूचना देता है।

बुध का स्थान उच्च होने से शास्त्रज्ञान में प्रायण, भाषण में पट्ट, साहसी, परिश्रमी, पर्यटनशील और कम अवस्था में ही विवाह करने वाला होता है। बुध जिसका उच्च का हो और साथ ही चन्द्रमा भी उच्च का हो तो व्यक्ति लेखक, कवि या साहित्यकार बनता है। सफल नेता भी इस प्रकार की रेखा वाला व्यक्ति होता है। कन्धा सन्तान इस प्रकार के व्यक्ति को अधिक उत्पन्न होती है। कुछ आचार्यों का अभिमत है कि जिसके हाथ में बुध उच्च का हो, वह व्यक्ति डॉक्टर या अन्य प्रकार का वैज्ञानिक होता है। ऐसे व्यक्तियों को चयी-लयी वस्तुओं के गुण-दोष आविष्कार में अधिक सफलता भिलती है। बुध का पर्वत की ओर झुका हो और मंगल का पर्वत उन्नत हो तो व्यक्ति नेता होता है।

गुरु का स्थान अत्युच्च होने से व्यक्ति अधार्मिक और अहंकारी होता है। इस व्यक्ति में शासन करने की अपूर्व क्षमता होती है। न्याय और अथारण शास्त्र का ज्ञाता उच्च स्थानीय व्यक्ति होता है। गुरु के पर्वत के निम्न होने से व्यक्ति दुराचारी, दुष्की और लम्पट होता है।

शुक्र का स्थान अत्युच्च होने से व्यक्ति लम्पट, लज्जाहीन और व्यभिचारी होता है। उच्च होने से सौन्दर्यप्रिय, नृत्यगीतानुरक्त, कलाविज्ञ, धनी और शिलाविद्या में पट्ट होता है। शुक्र के स्थान के निम्न होने से व्यक्ति स्वार्थी, आवसी और रिपुदमकारी होता है। एक गोटी रेखा शुक्र के स्थान से निकलकर पितृरेणा के ऊपर होती हुई मंगल स्थान में जाये तो व्यक्ति को दगा और खाँसी का रोग होता

है। शुक्रस्थान से जनिस्थान तक यदि रेखा जाय तथा यह रेखा शूँखलायुक्त हो तो व्यक्ति का विद्याह बड़ी कठिनाई से होगा। शुक्र और गुरु दोनों के स्थानों के उच्च होने से संसार में प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

शनि के स्थान के उच्च होने से व्यक्ति अलवभाषी, बजाजिंग, एकान्तजिय, विचारक, दार्शनिक और भाग्यशाली होता है। शनि स्थान के नीचे होने से व्यक्ति भावुक, कमजोर और दुष्मियशाली होता है। शनि और बुध दोनों स्थानों के उच्च होने से व्यक्ति क्रोधी, चोर और अधार्मिक होता है।

इस निमित्त में योगों का विचार करते हुए बताया गया है कि जिस पूर्ण की नामि यही हो, नासिका का अग्र भाग सीधा हो, वक्षस्थल रक्त वर्ण और पैर के तलवे कोगल तथा रक्तवर्ण के हों, वह सम्राट् के तुल्य प्रभावशाली होता है। ऐसा व्यक्ति अनेक प्रकार के सुख भोगता है तथा मन्त्री, नेता या विनी मस्ता का निर्देशक होता है। जिसकी हथेली के मध्य कड़ा, अण्व, मृदंग, वृक्ष, स्तम्भ या दण्ड का चिह्न हो तो वह व्यक्ति समृद्धिशाली, धनी, सुखी और अद्भुत प्रभावशाली होता है। जिसका लगाट चौड़ा और विणाल, नेत्र कमलदल के समान, मस्तक मोल, और भुजाएँ जानुपर्यन्त हों, वह व्यक्ति नेता, राजमान्य, पूज्य, शक्तिशाली और सुखी होता है। जिसके हाथ में फूल की माला, घोड़ा, कमलपुष्प, धनुष, चक्र, ध्वजा, रथ और आसन का चिह्न हो वह जीवन में सदा आनन्द भोगता है, उसके पर में लक्ष्मी का निवास सदा रहता है।

जिसके हाथ की सूर्य रेखा, मस्तक रेखा से मिली हो और मस्तक रेखा से स्पष्ट, सीधी होकर ऊपर गुरु की ओर झुकने से वहाँ चतुष्कोण बन जाय वह प्रधान मन्त्री या मुख्य नेता होता है। जिसके हाथ के सूर्य गुरु पर्वत उच्च हों और शनि एवं बुध रेखा पुष्ट, स्पष्ट और सीधी हो वह राज्यपाल या गवर्नर होता है। जिसके हाथ के शनि पर्वत पर त्रिशूल चिह्न हो, चन्द्ररेखा का भाग्यरेखा या शुद्ध सम्बन्ध हो या भाग्यरेखा हथेली के गध्य से प्रारम्भ होकर उसकी एक शाखा गुरु-पर्वत पर और दूसरी सूर्य पर्वत पर जाय वह उच्च राज्याधिकारी और गुण ग्राही होता है। जिसके हाथ के गुरु और मंगल पर्वत उच्च हों तथा मस्तक रेखा में सर्प का चिह्न हो या बुधांगुली नुकीली और लम्बी हो एवं नख चमकदार हों, वह राजदूत बनता है। जिसके बाये हाथ की तर्जनी और कनिश्चिका की अपेक्षा बढ़िने हाथ की बे ही अङ्गुलियाँ गोटी और बड़ी हों, मंगल पर्वत अधिक ऊँचा उठा हो और सूर्य रेखा प्रवल हो वह जिलाधीश या कमिश्नर होता है। जिसके हाथ के गुरु, शनि, सूर्य और बुध पर्वत उच्च हों, अङ्गुलियाँ लम्बी होकर उनके ऊपरी भाग मोटे हों, सूर्यरेखा प्रवल हो और मध्यमांगुली का दूसरा गर्व लम्बा हो, वह शिशा विभाग का उच्च पदाधिकारी होता है।

जिसके हाथ की हृदय रेखा और मस्तक रेखा के बीच एक चौड़ा चनुप्रकोण

हो, मरतक रेखा सीधी और रवच्छ हो बुधांगूली का पथम पर्व जाता हो, गुरु की अंगूली सीधी हो तथा शूर्य पर्वत उठा हो वह दयालु यायाधीश होता है। जिसकी अंगूलियाँ लम्बी और आम-पास सटी हों, अँगूठा लम्बा और गोदा हो, मरतक रेखा नीधी और शर्पकृति की हो तथा हथेली चपटी हो तो व्यक्ति बैरिस्टर या बैलील होता है।

जिसके हाथ का गुरुकर्वत और तर्जनी लम्बी हो, चम्द्रपर्वत उच्च हो तथा बुधांगूली नुकीली हो, साथ ही मरतकरेखा लम्बी और नीचे झुकी हो तो वह व्यक्ति दर्शनशास्त्र का विदान होता है। जिसके शनि और गुरुके उच्च हों, शनिएवंत पर त्रिकोण चिह्न हो और शूर्यरेखा शृङ्ख हो वह व्यक्ति घोगी या साधू होकर गृण गोद्वय पाता है। जिसका अँगूठा भोटा और टेढ़ा हो, उसकी इच्छा-शक्ति प्रबल होती है। जिसके हाथ में वहा चतुष्कोण या पुष्करणी रेखा हो, वह सब मनुष्यों में धेन और सब वा ल्लामी होता है। हथेली के मध्य में कलण, रवस्तिक, मृग, गज, मत्स्य आदि के निरूप शुभ माने जाते हैं।

अँगूठे के मूल में जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हों उतने भाई और जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हों उतनी बहिन होती हैं। अँगूठे के अधोभाग में जिसके जितनी रेखाएँ हों, उसके उतने ही पूर्व होने हैं। जितनी रेखाएँ सूक्ष्म होती हैं उतनी ही कम्बाएँ होती हैं। जितनी रेखाएँ लित्त-भित्त होती हैं, उतनी सन्तानें मृत और जितनी रेखाएँ अखण्ड और समूर्ण होती हैं उतने बालक जीवित रहते हैं।

स्वप्न निमित्त- स्वप्न द्वारा शुभाशुभ का वर्णन करना इस निमित्तज्ञान का विषय है। दृष्टि, श्रुति, अनुभूति, प्राचित, कल्पित, भावित और दोषज इन भाव प्रकार के स्वप्नों में भी भावित स्वप्न का फल यथार्थ निकलता है। स्वप्न भी कर्म-फल का सूचक है, आगामी शुभाशुभ कर्मफल वी सूचना देता है। सूचक निमित्तों में स्वप्न का भी महस्त्वपूर्ण स्थान है। स्वप्नों का फलादेश इस ग्रन्थ के 26 वें अध्याय में तथा परिज्ञाट स्पष्ट में अंकित 30 वें अध्याय में विस्तार के साथ विद्या गया है। अतः यहाँ स्वप्नों का फलादेश नहीं लिखा जा रहा है।

निमित्तज्ञान का अंगभूत प्रश्नशास्त्र-प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञान का एक प्रधान अंग रहा है। इसमें धातु, पूल, गोव, भगट, मुट्ठि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन, जन्म, कर्म, शल्यानयन, भेना गमन, नदियों की बाढ़, अवृष्टि, अतिवृष्टि, भ्रन्तावृष्टि, फसल, जष-पराजय, लाघालाभ, विद्यासिद्धि, विवाह, सन्तान लाभ, यथा प्राप्ति एवं जीवन के विभिन्न आवश्यक प्रश्नों का उत्तर दिया गया है। जैनाचार्यों ने ब्रह्मांगनिमित्त पर अनेक यन्त्र लिखे हैं। प्रस्तुत प्रश्नशास्त्र निनिनज्ञान का यह अंग है जिसमें विना किशी गणित किया के त्रिवाच की बातें

भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम् ।
 पञ्चप्रकारमार्गं च चतुष्कोशबलाब्लास्म् ॥
 आरुढ़छत्रवर्गं चाभ्युदयादि - बलाब्लास्म् ।
 क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम् ॥
 भूगादि नररूपाणि किरणान्योजनानि च ।
 आपूरसोदयाद्यञ्च परीक्ष्य कथयेद्बुधः ॥

अर्थ—भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, आरुढ़, छत्र, वर्ण, उदयबल, अस्तबल, क्षेत्रदृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मूग तथा भग्नुव्यादिक के रूप, किरण, योजन, आपूर, रस एवं उदय आदि की परीक्षा करके फल का निरूपण करना चाहिए।

प्रश्ननिमित्त का विचार तीन प्रकार से किया गया है—प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और स्वरविज्ञान-सिद्धान्त। प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त का आधार मनोविज्ञान है; यतः बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकार की विभिन्न परिस्थितियों के अधीन मानव-मन की भीतरी तह में जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं, वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते हैं। अतः प्रश्नाक्षरों के निमित्त की लेकर फलादेश का विचार किया गया है।

प्रश्न करने वाला आते ही जिस वाक्य का उच्चारण करे, उसके अक्षरों का विश्लेषण कर प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पंचम वर्ग के अक्षरों में विभक्त कर लेना चाहिए। पश्चात् संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अवभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दध्य प्रश्नाक्षरों के अनुसार उनका फलादेश समझना चाहिए। प्रश्न प्रजाली के वर्गों का विवेचन करने हुए कहा है कि अ क च ट त प य श अथवा आ ए क च ट त प य श इन अक्षरों का प्रमथ वर्ग; आ ए ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरों का द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरों का तृतीय वर्ग; ई औ घ ङ छ थ भ व ह इन अक्षरों का चतुर्थ वर्ग और उ ऊ छ ब ण न म अ अ; इन अक्षरों का पंचम वर्ग बताया गया।

प्रथम और तृतीय वर्ग के संयुक्त अक्षर प्रश्नवाक्य में हों तो वह प्रश्नवाक्य संयुक्त कहलाता है। प्रश्नवर्णों में अ इ ए ओ ये स्वर हों तथा क च ट त प य श ग ज ड द ब ल स ये व्यंजन हों तो प्रश्न संयुक्त संज्ञक होता है। संयुक्त प्रश्न होने पर पृच्छक का कार्य सिद्ध होता है। यदि पृच्छक लहम, जथ, रवास्थ्य, मुख और शान्ति के सम्बन्ध में प्रश्न पूछने आया है तो संयुक्त प्रश्न होने पर उसके सभी कार्य सिद्ध होते हैं। यदि प्रश्न वर्णों में कई वर्गों के अक्षर हैं अथवा प्रथम, तृतीय वर्ग के अक्षरों की बहुलता होने पर भी संयुक्त ही प्रश्न माना जाता है। जैसे पृच्छक के मुख से प्रथम वाक्य कार्य निकला, इस प्रश्नवाक्य का विश्लेषण किया से कृ+आ + रू-+य + अ यह स्वरूप हुआ। इस विश्लेषण में कृ+ यू-+अ ये अक्षर

प्रथम वर्ण के हैं तथा आ और द्वितीय वर्ण के हैं। यहाँ प्रथम वर्ण के तीन वर्ण और द्वितीय वर्ण के दो वर्ण हैं, अतः प्रथम और द्वितीय वर्ण का संयोग होने से यह प्रश्न संयुक्त नहीं कहलायेगा।

यदि प्रश्नवाचन में संयुक्त वर्णों की अधिकता हो — प्रथम और तृतीय वर्ण के वर्ण अधिक हों अथवा प्रश्न वाक्य का आरम्भ कि चि टि ति फि शि को चोटों तो यो शो ग ज ड ब ब ल स गे जे डे दे से अथवा क् + ग्, क् + ज्, क् + ड्, क् + ब्, क् + ल्, क् + स्, च् + ज्, च् + ड्, च् + ब्, च् + ल्, च् + स्, द् + ग्, द् + ज्, द् + ड्, द् + ब्, द् + व्, द् + ल्, द् + स्, त् + ग्, त् + ज्, त् + ड्, त् + ब्, त् + ल्, त् + स्, द् + ग्, द् + ज्, द् + ड्, द् + ब्, द् + ल्, द् + स्, श् + ग्, श् + ज्, श् + ड्, श् + ब्, श् + ल्, श् + स्, ग् + क्, ग् + च्, ग् + द्, ग् + त्, ग् + प्, ग् + य्, म् + श्, ज् + क्, ज् + च्, ज् + ड्, ज् + प्, ज् + य्, ज् + श्, इ + क्, इ + च्, इ + ट्, इ + त्, इ + प्, इ + य्, इ + ण्, इ + क्, द् + च्, द् + ड्, द् + त्, द् + प्, द् + य्, द् + ण्, द् + क्, द् + च्, द् + ड्, द् + त्, द् + प्, द् + य्, द् + ण्, ल् + क्, स् + न्, स् + त्, स् + र्, स् + ष्, स् + ण्, स् + ग्, स् + ण् मे होता हो तो संयुक्त प्रश्न का फल गृभ होता है।

प्रथम और द्वितीय वर्ण, द्वितीय और चतुर्थ वर्ण, तृतीय और चतुर्थ वर्ण एवं पञ्चम वर्ण के वर्णों के मिलने से असंयुक्त प्रश्न कहलाता है। प्रथम और द्वितीय वर्गाधिकरों के संयोग से—क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, य र इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाधिकरों के संयोग से—ख घ, छ झ, टढ़, थ ध, फ भ, और र व इत्यादि; तृतीय और चतुर्थ वर्गाधिकरों के संयोग से—ग घ, ज झ, इढ़, द ध व भ, इत्यादि एवं चतुर्थ और पञ्चम वर्गाधिकरों के संयोग से—अड़, झड़, ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते हैं। असंयुक्त प्रश्न होने से फल की प्राप्ति बहुत दिनों के बाद होती है। यदि प्रथम और द्वितीय वर्णों के अक्षरों के मिलने से असंयुक्त प्रश्न हो तो धन लाभ, कार्य भक्तता और राजसम्पाद अथवा जिस गम्भीर में प्रश्न पूछा गया हो, उस फल की प्राप्ति तीन महीनों के पश्चात् होती है। द्वितीय, चतुर्थ वर्गाधिकरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो भिन्न प्राप्ति, उत्सव वृद्धि, कार्य साफल्य की प्राप्ति छः महीने में होती है। तृतीय और चतुर्थ वर्गाधिकरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो अल्प लाभ, पुत्र प्राप्ति, मांगत्यवृद्धि और प्रियजनों से अगड़ा एक महीने के अन्दर होता है। चतुर्थ और पञ्चम वर्गाधिकरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो घर में विवाह आदि मांगलिक उत्सवों की वृद्धि, स्वजन प्रेम, यशः प्राप्ति, महान् कार्यों में लाभ और बैमद वी वृद्धि इत्यादि फलों की प्राप्ति गीत्र होती है।

यदि पृच्छक रास्ते में हो, श्यनागार में हो, पालकीपर सवार हो, मोटर, साइकिल, घोड़े, हाथी आदि किसी भी सवारी पर सवार हो तथा हाथ में कुछ भी चीज न लिये हो, तो असंयुक्त प्रश्न होता है। यदि पृच्छक अनिष्टित दिशः की ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न करते समय कुर्सी, टेबल, बैंच अथवा अन्य लकड़ी की बस्तुओं को छूता हुआ या नीचता हुआ प्रश्न करे तो उस प्रश्न को भी असंयुक्त समझना चाहिए। असंयुक्त प्रश्न का फल प्रायः अनिष्टिकर ही होता है।

यदि प्रश्न वाक्य का आद्याक्षर गा, जा, ढा, दा, वा, ला, या, यै, वै, डै, लै, सै, धि, लि, पि, धि, गि, वि, हि, को, झो, ठो, बो, हो में से कोई हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है। इस प्रकार के असंयुक्त प्रश्न का फल अशुभ होता है।

प्रश्नकर्ता के प्रश्नाधारों में क्षब, घग, गध, घड, चढ़, ज़ज़, झज़, टठ, ड़ड, ढण, तथ, थद, दध, धन, पफ, फब, बम, भग, यर, रल, लव, वण, णण, और सह इन वर्णों के क्रमशः विपर्यय होने पर परस्पर में पूर्व और उन रवती हो जाने पर अर्थात् खक, ग्ख, घग, झग, ल्ख, ज्ज, ज्ञ, ठ्ठ, ड्ड, ण्ण, थत, दथ, धद, न्ध, फप, बफ, भद, मभ, रय, लर, वल, पण, सप, और हस होने पर अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्नाधारों के होने से वार्य मिळनहीं दोती। प्रश्न वाक्य के विश्लेषण करते पर पञ्चम वर्ण के वर्णों की संख्या अधिक हो तो भी अभिहित प्रश्न होता है। प्रश्न वाक्य का आरम्भ उपर्युक्त अक्षरों के संयोग से निष्पत्त वर्णों से हो तो अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्न का फल भी अशुभ है।

अकार स्वर सहित और अन्य रवरों से रहित अकाचतपयशङ्कामन में प्रश्नाधार या प्रश्नवाक्य के आद्याक्षर हों तो अनभिहित प्रश्न होता है। अनभिहित प्रश्नाक्षर स्वर्वर्गक्षारों में हों, तो व्याधि-पीड़ा और अन्य वर्गक्षिरों में हों तो शोक, सन्ताप, दुःख भय और पीड़ा फल होता है। जैसे किसी व्यक्ति का प्रश्न वाक्य 'चमेली' है। इस वाक्य में आद्याक्षर में अ स्वर और संञ्जन का संयोग है, द्वितीय वर्ण 'मे' में ए स्वर और म व्यंजन का संयोग है तथा तृतीय वर्ण ली में ई स्वर और ल व्यंजन का संयोग है। अतः च-+अ-+म-+ए-+ल-+ई इस विश्लेषण में अ-+च-+म-+ ये तीन वर्ण अनभिहित, ई अमिधूमित, ए आलिंगित और ल अभिहित संज्ञक है। "परस्परं शोधयित्वा थोड़क्षिकः स एव प्रश्नः" इस नियम के अनुसार यह प्रश्न अनभिहित हुआ; क्योंकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहित प्रश्न के हैं। अथवा मूविद्या के लिए प्रथम वर्ण जिस प्रश्न का जिस संज्ञक हो उस प्रश्न को उसी संज्ञक मान लेना चाहिए, जिस वास्तविक फल जानने के लिए प्रश्न वाक्य में सबसे अधिक प्रश्नाक्षर जिस संज्ञक प्रश्न के हों, उसे उसी संज्ञक प्रश्न समझना चाहिए।

प्रश्नश्रेणी के सभी वर्ण चतुर्थ वर्ण और प्रथम वर्ण के हों अथवा एञ्चम वर्ग

अनिष्ट कर बताया गया है। यदि पृच्छक कमर, हाथ, पैर और छाती खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिधातित प्रश्न होता है।

प्रश्न वाक्य के प्रारम्भ में या समस्त प्रश्नवाक्य में अधिकांश स्वर अ इ ए औ ये चार हों तो आलिंगित प्रश्न; आ ई ऐ औ ये चार हों तो अभिधूगित प्रश्न और उ ऊ अं अः ये चार हों तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होने पर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्राममन एवं यशलाभ और दग्ध प्रश्न होने पर दृष्टि, शोक, चिन्ता, पीड़ा एवं धनहानि होती है। जब पृच्छक दाहिने हाथ से दाहिने अंग को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिंगित; याहिने या बायें हाथ से समस्त शरीर को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूगित प्रश्न एवं रोते हुए नींवे की ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। प्रश्नाक्षरों के साथ-साथ उग्रयुवत् चर्या-चेष्टा का भी विचार करता अत्यावश्यक है। यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित हो और पृच्छक की चेष्टा दग्ध प्रश्न की हो ऐसी अवस्था में फल मिथित कहना चाहिए। प्रश्नवाक्य या प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण का स्वर आलिंगित हो और चर्या-चेष्टा अभिधूगित या दग्ध प्रश्न की हो तो मिथित फल समझना चाहिए।

उपर्युक्त बाठ नियमों द्वारा प्रश्नों का विचार करते समय उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, वर्णाधर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर इन नेंद्रों का विचार करना चाहिए। अ और क वर्ग उत्तरोत्तर, अ वर्ग और उ वर्ग उत्तराधर, त वर्ग और प वर्ग अधरोत्तर एवं य वर्ग और श वर्ग अधराधर होते हैं। प्रथम और तृतीय वर्ग वाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग वाले अक्षर अधरोत्तर एवं पञ्चम वर्ग वाले अक्षर दोनों—प्रथम और तृतीय मिला देने से भगवः वर्गोत्तर और वर्णाधर होते हैं। क ग ङ च ज अ ई ण त द न प व य य ल ग ष ये उन्नीस वर्ण उत्तर संज्ञक, ख ख छ झ ञ ठ ठ थ ध फ भ र व ष ये वर्ण अधर संज्ञक, अ इ उ ए ओ अं ये वर्ण स्वरोत्तर संज्ञक, अ च त य ड ज र ल ये आठ वर्ण गुणोत्तर संज्ञक और क ट ष श ग ङ य ह ये आठ वर्ण गुणाधर संज्ञक हैं।

प्रश्नकर्ता के प्रथम, तृतीय और पंचम स्थान के वास्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ रथाल के वास्याक्षर अधर कह सकते हैं। यदि प्रश्न में दीर्घक्षर प्रश्न, तृतीय और पंचम स्थान में हों तो लाभ करने वाले होते हैं। शेष स्थान में रहने वाले दूसरे और प्लुताधर दर्शन करने वाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरों परंग जीवन, भरण, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि को अवगत करता है।

प्रश्नवाक्य में प्रथम दो प्रकार के बताये जाते हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्न में प्रश्नकर्ता जिस बात को पूछना चाहता है, उसे ज्योतिषी के सामने प्रकट कर उसका फल जात करता है। परन्तु

मानसिक प्रश्न में पृच्छक अपने मन की बात नहीं बतलाता है, केवल प्रतीकों—फल, पुष्प, नदी पहाड़, देव आदि के नाम ढारा ही पृच्छक के मन की बात जात करनी पड़ती है।

साधारणतः तीन प्रकार के पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी उक्त तीन ही प्रकार के हो सकते हैं। प्रश्नशास्त्र के चिन्तकों ने इनका नाम जीवयोनि, धातुयोनि और मूलयोनि रखा है। अ आ इ ए ओ अः ये छः स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ध य श ह ये पञ्चद्वय व्यंजन इस प्रकार कुल 21 वर्ण जीव संज्ञक, उ ऊ अं ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ व भ व स ये दस व्यंजन इस प्रकार कुल 13 वर्ण धातु संज्ञक और ई ऐ ओ ये तीन स्वर तथा ठ अ ण न म ल र ष ये भाठ व्यंजन इस प्रकार कुल 11 वर्ण मूलसंज्ञक हैं।

जीवयोनि में अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुर्ष्वद संज्ञक, इ ओ ग ज ड द व ल स ये अक्षर अपद संज्ञक और ई और घ झ छ ध फ व ह ये अक्षर पादसंकुल संज्ञक होते हैं। द्विपद योनि के देव, मनुष्य, पश्ची और राक्षस ये चार भेद हैं। अ क ख ग घ ङ प्रश्नवर्णों के होने पर मनुष्य योनि; त थ द ध न प फ व भ म के होने पर पशु योनि या पश्चियोनि और य र ल व श ष म ह प्रश्नवर्णों के होने पर राक्षस योनि होती है। देवयोनि के चार भेद होते हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी। देवयोनि के वर्णों में आशार की मात्रा होने पर कल्पवासी, इकार मात्रा होने पर भवनवासी, एकार मात्रा होने पर व्यन्तर और ओकार मात्रा होने पर ज्योतिषक देवयोनि होती है।

मनुष्ययोनि के ज्ञात्यज्ञ, अचिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पाँच भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण जात्ययोनि संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र प ये वर्ण क्षत्रिय योनि संज्ञक; इ ओ ग ज ड द व ल रा ये वर्ण वैश्ययोनि संज्ञक; ई ओ घ झ छ ध भ व ह ये वर्ण शूद्रयोनि संज्ञक; पवं उ ऊ ङ झ ण न म अं अः ये वर्ण अन्त्यजयोनि संज्ञक होते हैं। इन पाँचों योनियों के वर्णों में यदि अ इ ए ओ ये मात्राएँ हों तो पुरुष और आ ई ऐ मात्राएँ हों तो स्त्री एवं उ ऊ अं अः ये मात्राएँ हों तो नपुंसक संज्ञक होते हैं। पुरुष, स्त्री और नपुंसक में भी आलिंगित होने पर गौर वर्ण, अभिधूमित होने पर श्याम और दग्ध होने पर कृष्ण वर्ण होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर ब्रात्यावस्था, अभिधूमित होने पर युवावस्था और दग्ध प्रश्न होने पर बृद्धावस्था होती है। आलिंगित प्रश्न होने पर सम—त कद अधिक बड़ा और न अधिक छोटा, अभिधूमित होने पर लम्बा और दग्धप्रश्न होने पर कुब्जा या बौना होता है।

त थ द ध न प्रश्नाक्षरों के होने पर जलचर पक्षी और प फ व भ म प्रश्नाक्षरों के होने पर थलचर पक्षियों की चिन्ता रामशंकरी चाहिए। रामग योनि के

दो भेद हैं—कर्मज और योनिज । भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहलाते हैं और अमुरादि को योनिज कहते हैं । त य द ध न प्रश्नाक्षरों के होने पर कर्मज और शप स ह प्रश्नाक्षरों के होने पर योनिज राक्षसों की चिन्ता समझनी चाहिए ।

चतुष्णद योनि के खुरी, नखी, दन्ती और शृंगी ये चार भेद हैं । यदि प्रश्नाक्षरों में आ और ऐ स्वर हों तो खुरी; छ और ढ प्रश्नाक्षरों में हों तो नखी, थ और फ प्रश्नाक्षरों में हों तो दन्ती एवं र और प प्रश्नाक्षरों में हों तो शृंगीयोनि होती है । खुरी योनि के ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं । आ ऐ प्रश्नाक्षरों में हों तो ग्रामचर—धोड़ा, गधा, ऊट आदि पवेशी की चिन्ता और ख प्रश्नाक्षरों में हों तो वनचारी पशु—हिरण, खरगोश आदि पशुओं की चिन्ता समझनी चाहिए ।

अपदयोनि के जलचर और थलचर ये दो भेद हैं— प्रश्नवाक्यों में इ ओ ग ज ड अथर हों तो जलचर-मछली, शंख, मकर आदि की चिन्ता और द ब ल स ये अथर हों तो शरीर, मेड़क आदि थलचर अपदों की चिन्ता समझनी चाहिए ।

पादसंकुल योनि के दो भेद हैं—अण्डज और स्वेदज । इ औ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर अण्डज संज्ञक अमर, पतंग इत्यादि एवं ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदज संज्ञक - जू, खटमल आदि हैं ।

धातु योनि के भी दो भेद हैं—धात्य और अधात्य । त द प व अं स इन प्रश्नाक्षरों के होने पर अधात्य धातु योनि होती है । धात्ययोनि के आठ भेद हैं—
सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, कौसा, लोहा, सीशा, पित्तल । धात्ययोनि के प्रवारान्तर से दो भेद हैं—घटित और अघटित । उत्तराक्षर प्रश्नवर्णों में रहने पर घटित और अघटित रहने पर अघटित धातुयोनि होती है । घटित धातुयोनि के तीन भेद हैं—जीवाभरण-आभूपण, गृहाभरण-वत्तेन और नाणक-सिवांक, नोट आदि । अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हों तो द्विपदाभरण—दों पैर लाले जीवों के आभूपण होते हैं । इसके तीन भेद हैं—देवताभूपण, पक्षि आभूपण और मनुष्याभूपण । मनुष्याभरण के शिराभरण, कण्ठाभरण, नासिका-भरण, ग्रीवाभरण, हृत्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं । इस आभूपणों में मुकुट, खीट, सीसफूल आदि शिराभरण; कानों में पहने जाने वाले छुड़न, गरिग आदि कण्ठाभरण; नाक में पहनी जाने वाली लौग, बाली, नथ आदि नासिकाभरण; कण्ठ में पहनी जाने वाली हँसुली, हार, कण्ठी आदि ग्रीवाभरण; हाथों भ पहन जाने वाले कंकण, अँगूठी, मुंदरी, छल्ला, छाप आदि हस्ता-भरण; जाधों में वाँचे जाने वाले धुंघरू, छुद्रवणिका आदि जंघाभरण और पैरों में पहने जाने वाले विछुए, छल्ला, पांजव आदि पादाभरण होते हैं । क ग ड च ज ब ट ड ण त द न ग व म य ल श स प्रश्नाक्षरों के होने पर मनुष्याभरण की चिन्ता एवं ख थ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व प ह प्रश्नाक्षरों के होने पर स्त्रियों के

आभूषणों की चिन्ता समझनी चाहिए।

उत्तराक्षर वर्णों के प्रश्नाक्षर होने पर दक्षिण अंग का आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णों के होने पर वाम अंग का आभूषण समझना चाहिए। अ के साथ ग ड प्रश्नाक्षरों के होने पर या प्रश्नवर्णों में उक्त प्रश्नाक्षरों की बहुलता होने पर देवों के उत्तरकरण छत्र, चम्पर आदि आभूषण और त थ द ध न प फ ब भ म इन प्रश्नवर्णों के होने पर योग्यियों के आभूषणों की चिन्ता समझनी चाहिए।

यदि प्रश्नवाक्य का आद्यवर्ण के ग ड च ज ब ट ड ण त द न प ब भ म य ल श स इन अक्षरों में से कोई हो तो हीरा, माणिक्य, मरकत, पद्मराग और मूँगा की चिन्ता; छ घ छ छ ठ ढ श ध फ भ र ब ग ह इन अक्षरों में से कोई हो तो हरिताल, शिला, पत्थर, आदि की चिन्ता एवं उ ऊ अं अः स्वरों से मुक्त व्यंजन प्रश्न के आदि में हो तो गंकरा, लबण, बालू आदि वीं चिन्ता गमनी चाहिए। यदि प्रश्नवाक्य के आदि में अ इ ए ओ इन चार मात्राओं में से कोई हो तो हीरा, मोती, माणिक्य आदि जवाहरात की चिन्ता; आ ई ऐ औ इन मात्राओं में से कोई हो तो जिना, पत्थर, नीमेण्ट, चूना, संयमरभर आदि की चिन्ता एवं उ ऊ अं अः इन मात्राओं में से कोई मात्रा हो तो चीमी, बालू आदि वीं चिन्ता कहनी चाहिए। गुणितका प्रश्न में मुट्ठी के अन्दर भी इन्हीं प्रश्नविचारों के अनुमार योग्यिनी का निर्णय कर बरतु बतलानी चाहिए।

मूलयोग्यि के चार भेद हैं—कृत, गुल्म, नक्ता और बल्ली। यदि प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण की मात्रा आ हो तो कृत, ई हो तो गुल्म, ए हो तो नक्ता और ओ हो तो बल्ली समझनी चाहिए। पुनः मूलयोग्यि के चार भेद हैं—यन्कल, पत्ते, पुष्प और फल। प्रश्न वाक्य के आदि में के च ट त त्रिपां के होने पर फल वीं चिन्ता करनी चाहिए।

जीव योग्यि गे मानसिक चिन्ता और मूलित्यत प्रश्नों के उत्तरों के साथ चौर की जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एवं वात्सा आदि का पता लगाया जा सकता है। धानु योग्यि में चोरी गथी वस्तु का स्वरूप अस्तित्वाम बताया जा सकता है। धानु योग्यि ने विज्ञेयण ने इहां जा सकता है कि अगुक प्रकार की वस्तु चोरी गयी है या नप्ट हुई है। इन योग्यियों के विचार द्वाया द्वितीयी भी व्यक्ति की मतःस्थिति का सहज भै पता लगाया जा सकता है। प्रश्नज्ञानव का विवेचन करने वाले व्यक्ति को उपर्युक्त भी प्रश्न संज्ञाओं पर धरित्वात् रहना चाहिए।

लाभालाभ तथ्यस्त्री योग्यिनों का विचार करते हुए कहा है कि प्रश्नाक्षरों में आलिंगित अ इ ए ओ मात्राओं के होने पर शीघ्र अधिक लाभ, अशिधूमित आ ई ऐ औ मात्राओं के होने पर अल्प लाभ एवं दध उ ऊ अं अः मात्राओं के होने पर अलाभ एवं हानि होती है। उ ऊ अं अः इन चार मात्राओं से संयुक्त के ग ड च ज ज ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये प्रश्नाक्षर हों तो बहुत लाभ होता

है। आईऐ औ मात्राओं से संयुक्त क गडच जबटडणतदनपबमयल
शसइन प्रश्नाक्षरों के होने पर अल्प लाभ होता है। व आईऐ औ मात्राओं से
संयुक्त उपर्युक्त प्रश्नाक्षरों के होने पर जीव लाभ और रूपया, पेसा, सोना, चाँदी,
भोती, माणिकय आदि का लाभ होता है। ईऐ औ डबणनमलरष प्रश्नाक्षर
होने तो लकड़ी, बृक्ष, कुर्सी, टेबुल, पलंग आदि वस्तुओं का लाभ होता है।

शुभाशुभ प्रकरण में प्रधानतया रोगी के स्वास्थ्य लाभ एवं उसकी आयु का
विचार किया जाता है। प्रश्नवाक्य में आद्य वर्ण आलिंगित मात्रा से युक्त हो तो
रोगी का रोग यत्नसाध्य; अभिधूमित मात्रा से युक्त हो तो कष्टसाध्य और दग्ध
मात्रासे संयुक्त संयुक्ताक्षर हो तो मृत्यु फल समझना चाहिए। पृच्छक के प्रश्नाक्षरों
में आद्य वर्ण आईऐ औ मात्राओं में युक्त संयुक्ताक्षर हो तो पृच्छक जिसके
सम्बन्ध में पूछता है उसकी तीर्थयु होती है। आईऐ औ इन मात्राओं से युक्त
क गडच जबटडणतदनपबमयलशसवणों में से कोई भी वर्ण प्रश्न
वाक्य का आव्यक्त हो तो लम्बी वीमारी भोगने के बाद रोगी स्वास्थ्य लाभ करता
है।

पृच्छक में किसी फल का नाम पूछना तथा कोई अंक संख्या पूछने के
पश्चात् अंक संख्या को द्विगुण कर फल और नाम के अक्षरों की संख्या जोड़ देनी
चाहिए। जोड़ने के पश्चात् जो योग आये, उसमें 13 जोड़कर 9 का भाग देना
चाहिए। 1 शेष में श्रनवृद्धि, 2 में धनक्षय, 3 में आरोग्य, 4 में व्याधि, 5 में स्त्री
लाभ, 6 में वृत्त्यु नाश, 7 में कार्यसिद्धि, 8 में भरण और 0 शेष में राज्य प्राप्ति
होती है।

कार्यसिद्धि-असिद्धि का प्रश्न होने पर पृच्छक का मुख जिस दिशा में हो उस
दिशा की अंक संख्या (पूर्व 1, पश्चिम 2, उत्तर 3, दक्षिण 4), प्रहर संख्या (जिस
प्रहर में प्रश्न किया गया है, उसकी संख्या प्रातःकाल सूर्योदय से तीन घण्टे तक
प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टे पर एक-एक प्रहर की गणना करनी चाहिए), वार
संख्या (रविवार 1, सोम 2, मंगल 3, बुध 4, बृहस्पति 5, शुक्र 6, शनि 7)
और नक्षत्र संख्या (अश्विनी 1, भरणी 2, कृतिका 3 इत्यादि गणना) को जोड़
कर योगफल में आठ का भाग देना चाहिए। एक अथवा पाँच शेष रहे तो शीघ्र
कार्यसिद्धि, छः अथवा चार शेष में तीन दिन में कार्यसिद्धि, तीन अथवा सात शेष
में विलम्ब से कार्यसिद्धि एवं अवशिष्ट शेष में कार्यअसिद्धि होती है।

हेसते हुए प्रश्न करने गे कार्यसिद्धि होता है और उदासीन रूप से प्रश्न करने
पर कार्यअसिद्धि रहता है।

पृच्छक से एक से लेकर एक सौ आठ अंक के बीच की एक अंक संख्या पूछनी
चाहिए। इस अंक संख्या में 12 का भाग देने पर 1121913 शेष में विलम्ब से
कार्यसिद्धि; 81411015 शेष में कार्यभाषा एवं 2161110 शेष में शीघ्र कार्य

सिद्धि होती है।

पृच्छक से किसी फूल का नाम पूछकर उसमें स्वर राख्या को व्यंजन संख्या से गुणा कर दें; गुणनफल में पृच्छक के नाम के अक्षरों की संख्या जोड़कर योगफल में 9 का भाग दें। एक शेष में शीघ्र कार्यसिद्धि; 21510 में विलम्ब से कार्यसिद्धि और 41618 शेष में कार्य नाश तथा अवशिष्ट शेष में कार्य मन्द गति से होता है। पृच्छक के नाम के अक्षरों को दो से गुणा कर गुणनफल में 7 जोड़ दे। उस योग में 3 का भाग देने पर सभ शेष में कार्य नाश और विषम शेष में कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

पृच्छक के तिथि, वार, नक्षत्र संख्या में गमिणी के नाम अक्षरों को जोड़कर सात का भाग देने में एकाधिक शेष में रविवार आदि होते हैं। रवि, भौम और मुरुवार में पूर्व तथा सोम, बुध और शुक्रवार में कल्या उत्पन्न होती है। शनिवार उपद्वय कारक है।

इस प्रकार अष्टांग निमित्त का विचार हमारे देश में प्राचीन काल से होता आ रहा है। इस निमित्त ज्ञान द्वारा वर्षण-अवर्षण, सुभिद्र-दुभिद्र, मुख-दुख, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि वातों का पहले से ही पता लगाकर व्यक्ति अपने लौकिक और पारलौकिक जीवन में सफलता प्राप्त कर बैता है।

अष्टांग निमित्त और श्रीस तथा रोप के सिद्धान्त

जैनाचार्यों ने अष्टांग निमित्त का विकास स्वतन्त्र रूप से किया है। इनकी विचारधारा पर श्रीस या रोप का प्रचाव नहीं है। ज्योतिषकरण्डक (ई० पू० 300-350) में लग्न का जो निरूपण किया गया है, उससे इस बात पर प्रकाश पड़ता है कि जैनाचार्यों के श्रीक सम्पर्क के पहले ही अष्टांग निमित्त का प्रतिपादन हुआ था। बताया गया है—

सम्म च दक्षिणायविसुदेसु वि अस्स उत्तरं अयणे ।
लग्नं साई विसुदेसु पंचसु वि दक्षिणे अयणे ॥

इस पद्म में अस्स यानी अण्वनी और साई अर्थात् स्वाति ये विषुव के लग्न बताये गये हैं। ज्योतिषकरण्डक में विशेष अवस्था के नक्षत्रों को भी लग्न कहा है। यवनों के आगमन के पूर्व भारत में यही जैन लग्न प्रणाली प्रचलित थी। प्राचीन भारत में विशिष्ट अवस्था की राशि के समान विशिष्ट अवस्था के नक्षत्रों को भी लग्न कहा जाता था। ज्योतिषकरण्डक में व्यतीपात आनयन की जिस प्रत्रिया का वर्णन है वह इस बात की साक्षी है कि श्रीक सम्पर्क से पूर्व ज्योतिष का प्रचार राशि प्रहृ, लग्न आदि के रूप में भारत में वर्तमान था। बहु गया है—

अयणाणं संबन्धे रविसोमाणं तु वे हि य जुगम्मि ।
 वं हवइ भागलदं वद्दहया तत्तिथा होन्निति ॥
 बादत्तपरीयमाणे फलरासी इच्छित्तेऽ जुगम्भे ए ।
 इच्छिष्ठवद्वायं पि य इदं आऊण आणे हि ॥३

इन पाठांशों की व्याख्या करते हुए मलयगिरि ने लिखा है—“इह सूर्यचन्द्र-मसी स्वचीयेऽयने वर्तमानी यत्र परस्परं व्यतिपततः स काले व्यतिपातः, तत्र रविसमयोः युगे युगमध्ये यानि अयनानि तेयां परस्परं सम्बन्धे एकत्र मेलने कृते द्वाभ्यां भागे हिंगते । इते च ते पद् भवति गतानव्यं तावन्तः तावत्प्रभाणाः युगे व्यतिपाता भवन्ति ।”¹

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हॉटर ने लिखा है—“आठवीं शती में अरब विद्वानों ने भारत से ज्योतिषविद्या सीधी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तों का ‘सिद हिद’ के नाम से अरबी में अनुचाद किया ।”² अरबी भाषा में सिद्धी गयी “आइन-उल-अंबा फितज कालूली अत्था” नामक पुस्तक में लिखा है कि “भारतीय विद्वानों ने अरब के अन्तर्गत बगदाद की राजसभा में आकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रों की पिधा दी थी । उके नाम के एक विद्वान् शक संवत् 694 में बादशाह अलमसूर के दरबार में ज्योतिष और चिकित्सा के ज्ञानदात के निमित्त गये थे ।”³

मैक्सपूलर ने लिखा है कि “भारतीयों को आकाश का रहस्य जानने की भावना विदेशीय प्रगाववश उद्भूत नहीं हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूप से उत्पन्न हुई है ।” अतएव स्पष्ट है कि अष्टांग निमित्त ज्ञान में फलित ज्योतिष की प्रायः सभी बाले परिपणित हैं । अष्टांग निमित्त ने फलित सिद्धान्तों को विकसित और पत्तवित किया है । भारत में इराका प्रभार ई० मन् से पूर्व की शताव्दियों में ही हो चुका था । क्षाम्सीसी पर्यटक काक्षीस बनियर भी इस बात का समर्थन करता है कि भारत में इस विद्या का वित्तास स्वतन्त्र रूप से हुआ है ।

यह सत्य है कि अष्टांगनिमित्त विद्या भारत में जन्मी, विकसित हुई और समृद्धिशाली हुई; पर शान वी धारा सभी देशों में प्रवाहित होती है । अतः ईस्वी सन् वी आरम्भिक शताव्दियों में ग्रीस और रोम में भी निमित्त का विचार किया जाता था । यहाँ ग्रीस और रोम का निमित्त विचार तुलना के लिए उद्धृत किया जायेगा ।

ग्रीस-इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिनमें वर्ताया गया है कि भूकम्प और ग्रहण गेलोगोनेशियन लडाई के पहले हुए थे । इसके सिवा एकसरसेस ग्रीस से

1. देख—ज्योतिषकरण्डक पृ. 200-205 । 2. हॉटर इण्डियन-र्सेजेटिव-इण्डिया पृ. 217 । 3. ज्योतिष रत्नाकर, प्रथम भाग, धूमिका; 4. Vol. XIII. Lecture in objections p. 130

होकर अपनी सेना ले जा रहा था, तब उसे हार का अनागत कथन पहले से ही ज्ञात हो गया था। श्रीक लोगों में विचित्र वातों की यथा—चोड़ी से घरसांश का जन्म होना, स्त्री को साँप के बच्चे का जन्म देना, मुरझाये फूलों का सम्मुख आना, विभिन्न प्रकार के पक्षियों के शब्दों का सुनना तथा उनका दिशान्परिवर्तन कर दायें या वायें आना प्रभृति वातें युद्ध में पराजय की शूचक मानी जाती थीं। इस साहित्य में शकुन और अपशकुन के अध्याध में पुज्जर उल्लिख हैं। कठिन ज्योतिष के अंग, राशि और ग्रहों के बारे में ग्रीकों ने आज से कम-से-कम दो हजार वर्ष पहले पर्याप्त विचार किया था। भारतवर्ष में जब अष्टांग निमित्त का विचार शारम्भ हुआ, ग्रीस में भी स्वप्न, प्रश्न, दिक्षुद्धि, कालशुद्धि और देण-शुद्धि पर विचार किया जाता था। इनके साहित्य में रात्थ्या, उपा तथा आकाश-मण्डल के विभिन्न परिवर्तन से घटित होने वाली पटनाओं का जिक्र किया गया है।

ग्रीकों का प्रभाव रोमन सभ्यता पर भी पूरा पड़ा। इन्होंने भी अपने शकुन शास्त्र में ग्रीकों की तरह प्रकृति परिवर्तन, विशिष्ट-विशिष्ट ताराओं का उदय, ताराओं का टूटना, चन्द्रमा का परिवर्तित अस्वाभाविक रूप का दिखलाई पड़ना, ताराओं का लालवर्ण का होकर सुर्य के चारों ओर एकत्र हो जाना, आग की बड़ी-बड़ी चिकित्सारियों का आकाश में फैल जाना, इत्यादि विचित्र वातों को देश के लिए हानिकारक बतलाया है। रोम के लोगों ने जितना ग्रीस से सीखा, उससे कहीं अधिक भारतवर्ष से।

बराहमिहिर की पंचसिद्धान्तिका में रोम और पौलस्त्य नाम के सिद्धान्त आये हैं, जिनसे पता चलता है कि भारतवर्ष में भी रोम सिद्धान्त का प्रथार था। रोम के कई छात्र भारतवर्ष में आये और वर्षीयही के आचारों के पाय रहकर निमित्त और ज्योतिष का अध्ययन करते रहे। बराहमिहिर के रामय में भारत में अष्टांगनिमित्त का अधिक प्रचार था। ज्योतिष का उद्देश्य वीवन के समरत आवश्यक विषयों का विवेचन करना था। अतः अध्ययनार्थ आये हुए विदेशी विद्वान् छात्र अष्टांगनिमित्त और मंहिताशास्त्र का अध्ययन करते थे। उस युग में संहिता में आयुर्वेद का भी अन्तर्भूति होता था, राजनीति के युद्धसम्बन्धी धार-पैंच भी इसी शास्त्र के अन्तर्गत थे। अतः रोम में निमित्तों का प्रचार विशेष रूप से हुआ। गणित प्रक्रिया के बिना केवल प्रकृति परिवर्तन या आकाश की स्थिति के अवलोकन से ही फल निरूपण रोम में हुआ है। शकुन और अपशकुन विषय भी इसी के अन्तर्गत आता है। रोम के इतिहास में ऐसी अनेक घटनाएँ का निरूपण है जिनसे सिद्ध होता है कि बहीं शकुन और अपशकुन का फल एट्र को भोगना पड़ा था।

इस प्रकार ग्रीस, रोम आदि देशों में भारत के समान ही निमित्तों का विचार

होता था। इन दोनों देशों के ज्योतिष सिद्धान्त निमित्तों पर आश्रित थे। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय एवं यात्रा के शकुनों के सम्बन्ध में वैसा ही लिखा मिलता है, जैसा हमारे यहाँ है। प्राकृतिक और शारीरिक दोनों प्रकार के अरिष्टों का विवेचन श्रीष और रोम सिद्धान्तों में मिलता है। पंचसिद्धान्तिका में जो रोमक सिद्धान्त उपलब्ध है, उससे ग्रहणित की मान्यताओं पर भी प्रकाश पड़ता है।

भद्रबाहु संहिता का वर्ण्य विषय

अष्टांग निमित्तों का इस एक ही ग्रन्थ में वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ द्वादशांग वाणी के वेता श्रुतकेवली भद्रबाहु के नाम पर रचित है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में बतलाया गया है कि प्राचीन काल में भग्ध देश में नाना प्रकार के वैभव से युक्त राजगृह नाम का सुन्दर नगर था। इस नगर में राजगुणों से परिपूर्ण नानागुणसम्बन्ध सेनजित (प्रेसनजित संभवतः विष्वसार का पिता) नाम का राजा राज्य करता था। इस नगर के बाहरी भाग में नाना प्रकार के वृक्षों से युक्त पाण्डुगिरि नाम का पर्वत था। इस पर्वत के वृक्ष फल-फूलों से युक्त समृद्धिशाली थे तथा इन पर पक्षिगण सर्वेषां मनोरम कलरव किया फरते थे। एक समय श्रीभद्रबाहु आचार्य इसी पाण्डुगिरि पर एक वृक्ष के नीचे अनेक शिष्य-प्रशिष्यों से युक्त स्थित थे, राजा सेनजित ने उम्रीभूत होकर आचार्य से प्रश्न किया—

पार्थिवानां हितार्थाय भिक्षूणां हितकाम्यया ।
आदकाणां हितार्थाय दिव्य ज्ञानं ब्रह्मीहि नः ॥
शुभाशुभं सभुदभूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः ।
बिजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं याति महीं सदा ॥
राजभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः ।
विहरन्ति तिरुद्विग्नास्तेन राजाभियोजिताः ॥
सुखग्राह्यं लघुप्रथं स्पष्टं शिष्यहितावहम् ।
सर्वज्ञभाषितं तथं निमित्तं तु ब्रह्मीहि नः ॥

इस ग्रन्थ में उल्का, परिवेष, विद्युत्, अध्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धवैनगर, गर्भलक्षण, यात्रा, उत्पात, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, इन्द्रसम्बदा, लक्षण, वर्णजन, चिह्न, लग्न, विद्या, औषध प्रभूति सभी निमित्तों के वलाबल, विरोध और पराजय आदि विषयों के विरूपण करने की प्रतिक्रिया ही है। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ में जितने अध्याय प्राप्त हैं, उनमें मुहूर्त तक ही वर्णन मिलता है। अवशेष विषयों पर प्रतिपादन 27वें अध्याय से आगे आने वाले अध्यायों में हुआ होगा।

श्रद्धेय पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार द्वारा लिखित ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भाग

से ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ में पाँच खण्ड और बारह हजार श्लोक हैं। बताया गया है—

प्रथमो व्यवहाराल्यो ज्योतिराल्यो द्वितीयकः ।
तृतीयोऽपि निमित्ताल्यश्चतुर्थोऽपि शारीरजः ॥ 1 ॥
पंचमोऽपि स्वराल्यश्च पंचष्ठैरियं भता ।
द्वात्प्रत्यहस्त्रं प्रसिद्धं गंहितेर्व लिङ्गेदिता ॥ 2 ॥

व्यवहार, ज्योतिष, निमित्त, शरीर एवं स्वर ये पाँच खण्ड भद्रबाहु संहिता में हैं। इस ग्रंथ में एक विलक्षण बात यह है कि पाँच खण्डों के होने पर दूसरे खण्ड को मध्यम और तीसरे खण्ड को उत्तर खण्ड कहा गया है।

इस संस्मरण में हम केवल 27 अध्याय ही देखते हैं। 30वाँ अध्याय परिशिष्ट रूप से दिया जा रहा है। अतः 27 अध्यायों के वर्ण्य विषय पर विचार करना आवश्यक है।

प्रथम अध्याय में वर्ण्य के वर्ण्य विषयों की तालिका प्रस्तुत की गयी है। आरम्भ में बताया गया है कि यह देश कुणिप्रधान है, अतः इसी की जानकारी—किस वर्ष किस प्रकार की प्रभाव होगी प्राप्त करना आवश्यक और मुनि दोनों के लिए आवश्यक था। यद्यपि मुनि का पार्श्व ज्ञान-ध्यान में रह रहा है, पर आहार आदि-क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए उन्हें आवकों के अधीन रहना पड़ता था, अतः सुभिक्ष-दुभिक्ष की जानकारी प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक है। निमित्तशास्त्र का ज्ञान ऐहिक जीवन के व्यवहार को चलाने के लिए आवश्यक है। अतः इस अध्याय में निमित्तों के उर्जन करने की प्रतिक्रिया की गयी है और वर्ण्य विषयों की तालिका दी गयी है।

द्वितीय अध्याय में उल्का-चिमित्त का वर्णन किया गया है। बताया गया है कि प्रकृति का अन्यथाभाव विकार कहा जाता है; इस विकार को देखकर शुभा-शुभ के सम्बन्ध में जान लेगा चाहिए। रात को घो तारे टूटकर गिरते हुए जान पड़ते हैं, वे उल्काएँ हैं। इस ग्रन्थ में उल्का के धिरण्या, उल्का, अणनि, विद्युत् और तारा ये पाँच शब्द हैं। उल्का फल 15 दिनों में, धिरण्या और अणनि का 45 दिनों में एवं तारा और विद्युत् का 60 दिनों में प्राप्त होता है। तारा का जितना प्रमाण है उससे लम्बाई में दूना धिरण्या का है। विद्युत् नाम वाली उल्का बड़ी कुटिल—टेढ़ी-पेढ़ी और श्रीव्रगामिनी होती है। अणनि नाम की उल्का चक्राकार होती है, पौरुषी नाम की उल्का स्वभावतः लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है। ध्वज, मत्स्य, हाथी, वर्षत, कम्ल, घन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंस के समान दिखाई पड़ने वाली उल्का शुभ मानी जाती है। श्रीवत्स, वज्र, शंख और स्वस्तिकरूप प्रकाशित होने वाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। जिन उल्काओं के सिर का भाग मकार के समान और पूँछ गाय के समान हो, वे उल्काएँ

अनिष्टयूचक तथा संसार के लिए भयप्रद होती है। इस अध्याय में संक्षेप में उल्काओं की बनावट, रूप-रंग आदि के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय में 69 श्लोक हैं। इसमें विस्तारपूर्वक उल्कापात का फलादेश बताया गया है। 7 से 11 श्लोकों में उल्काओं के आकार-प्रकार का विवेचन है। 16वें श्लोक से 18वें श्लोक तक वर्णन के अनुसार उल्का का फलादेश वर्णित है। बताया गया है कि अग्नि की प्रभावाली उल्का अग्निभय, मंजिष्ठ के समान रंग वाली उल्का व्याधि और कृष्णर्वण की उल्का दुष्मिका की सूचना देती है। 19वें श्लोक से 29वें तक दिशा के अनुसार उल्का का फलादेश बतलाया गया है। अवशेष श्लोकों में विभिन्न दृष्टिकोणों से उल्का का फलादेश वर्णित है। सुभिक्ष-दुष्मिका, जय-पराजय, हानि-लाभ, जीवन-मरण, सुख-दुख आदि बातों की जानकारी उल्का निमित्त से की जा सकती है। पाप रूप उल्काएँ और पुण्यरूप उल्काएँ अपने-आपने स्वभाव-गुणानुसार इष्टानिष्ट की सूचना देती हैं। उल्काओं की विशेष पहचान भी इस अध्याय में बतलायी गयी है।

चौथे अध्याय में परिवेष का वर्णन किया गया है। परिवेष दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त। इस अध्याय में 39 श्लोक हैं। आरम्भिक श्लोकों में परिवेष होने के कारण, परिवेष का स्वरूप और आकृति का वर्णन है। वर्षा कर्तु में सूर्य या चन्द्रमा के चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकार में एक मण्डल-गत बनता है, यही परिवेष कहलाता है। चाँदी या कबूतर के रंग के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो जल-वृष्टि, इन्द्रधनुष के समान वर्णवाला परिवेष हो तो संग्राम या विग्रह की सूचना, काले और नीले वर्ण का चक्र परिवेष हो तो वर्षा की सूचना, पीत वर्ण का परिवेष हो तो व्याधि की सूचना एवं भरम के समान आकृति और रंग का चन्द्र परिवेष हो तो किसी महाभय की सूचना समझती चाहिए। उदयकालीन चन्द्रमा के चारों ओर सुन्दर परिवेष हो तो वर्षा तथा उदयकाल में चन्द्रमा के चारों ओर रुक्ष और इवेत वर्ण का परिवेष हो तो ज्योरों के उपद्रव की सूचना देता है। सूर्य का परिवेष साधारणतः अशुभ होता है और आधि-व्याधि को सूचित बताता है। जो परिवेष नीलकंठ, मोर, रजत, दुध और जल की आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्थिर हो, वह सुभिक्ष और मंगल करने वाला होता है। जो परिवेष रामरत आकाश में गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, स्थिर के रामान लाल हो, रुखा और खण्डित हो तथा धनुष और शूर्याटक के समान हो तो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है। चन्द्रमा के परिवेष से प्रायः वर्षा, आतप का विचार किया जाता है और सूर्य के परिवेष से महत्वपूर्ण घटित

होने वाली घटनाएँ सूचित होती हैं।

पांचवें अध्याय में विशुद्ध का वर्णन किया है। इस अध्याय में 25 श्लोक हैं। आरम्भ में सौदामिनी और विजली के स्वरूपों का कथन किया गया है। विजली-निमित्तों का प्रधान उद्देश्य वर्षा के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना है। यह निमित्त फलल के भविष्य को अवगत करने के लिए भी उपयोगी है। बताया गया है कि जब आकाश में थने वाल छाये हों, उग समय तूर्च दिशा में विजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयतः वर्षा होती है और यह फल दूसरे ही दिन प्राप्त होता है। ऋतु, दिशा, मास और दिन या रात में विजली के चमकने का फलादेश इस अध्याय में बताया गया है। विशुद्ध के रूप, और मार्ग का विवेचन भी इस अध्याय में है तथा इसी विवेचन के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है।

छठे अध्याय में अन्नवक्षण का निरूपण है। इसमें 3। श्लोक है, आरम्भ में मेघों के स्वरूप का कथन है। इस अध्याय का प्रधान उद्देश्य भी वर्षा के सम्बन्ध में जानकारी उपस्थित करना है। आकाश में विभिन्न आकृति और विभिन्न वर्णों के भेद छाये रहते हैं। तिथि, मास, ऋतु के अनुसार विभिन्न आकृति के मेघों का फलादेश बतलाया गया है। वर्षा की सूचना के अनावा भेद अपनी आकृति और वर्ण के अनुसार राजा के जय, पराजय, युद्ध, सन्धि, विग्रह आदि की भी सूचना देता है। इस अध्याय में मेघों की चाल-दाल का वर्णन है, इससे भविष्यत्काल की अनेक बातों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मेघों की गर्जन-तर्जन ध्वनि के परिज्ञान से अनेक प्रकार की बातों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सप्तवर्ती अध्याय सन्ध्या लक्षण है। इसमें 26 श्लोक हैं। इस अध्याय में प्रातः और साथं सन्ध्या का लक्षण विशेष रूप से बतलाया गया है तथा उन सन्ध्याओं के रूप, आकृति और समय के अनुसार फलादेश बतलाया गया है। प्रतिदिन सूर्य के अर्धास्त हो जाने के समय से जब तक आकाश में नक्षत्र भली-भाँति दिखलाई न दें तब तक सन्ध्याकाल रहता है; इसी प्रकार अधर्मदिति सूर्य से पहले तारा दर्शन तक उदय सन्ध्याकाल पाना जाता है। सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि एवेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा में स्थित हो तो ब्राह्मणों को भय देने वाली होती है। सूर्योदय के गमय लाभवर्ण की सन्ध्या धर्मियों को, पीत वर्ण की सन्ध्या वैश्यों को और धृष्टिं वर्ण की सन्ध्या शूद्रों को जय देती है। सन्ध्या का फल दिशाओं के अनुसार भी कहा गया है। असाधारण वी सन्ध्या वी अपेक्षा उदयकाल की सन्ध्या अधिक महत्त्व रखती है। उदयकाल नाना प्रकार वी भावी घटनाओं की सूचना देता है। प्रस्तुत अध्याय में उदयकालीन सन्ध्या का विस्तृत फलादेश बतलाया गया है। सन्ध्या के स्पर्श और रंग को एहत्तानने के लिए कुछ

दिन अध्यास आवश्यक है।

आठवें अध्याय में मेघों का लक्षण बतलाया गया है। इसमें 27 श्लोक हैं। इस अध्याय में मेघों की आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा एवं गर्जन-छवनि के अनुसार फलादेश का वर्णन है। बताया गया है कि शरदऋतु के मेघों से अनेक प्रकार के शुभाशुभ फल की सूचना, ग्रीष्मऋतु के मेघों से वर्षा की सूचना एवं वर्षा ऋतु के मेघों से केवल वर्षा की सूचना मिलती है। मेघों की गर्जना को मेघों की भाषा कहा गया है। मेघों की भाषा से वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की अनेक महत्वपूर्ण बातें ज्ञात की जा सकती हैं। पश्च, पश्ची और मनुष्यों की बोली के समान मेघों की भाषा—गर्जना भी अनेक प्रकार की होती है। जब मेघ सिंह के समान गर्जना करें तो राष्ट्र में विलव, मृग के समान गर्जना करें तो शस्त्रदृढ़ि एवं हाथी के समान गर्जना करें तो राष्ट्र के समान की वृद्धि होती है। जनता में भय का संचार, राष्ट्र की आर्थिक क्षति एवं राष्ट्र में नाना प्रकार की व्याधियाँ उस समय उत्पन्न होती हैं, जब मेघ बिल्ली के समान गर्जना करते हों। खरगोश, सियार और बिल्ली के समान मेघों की गर्जना अशुभ मानी गयी है। नारियों के समान कोमल और मधुर गर्जना कला की उन्नति एवं देश की समृद्धि में विशेष सहायक होती है। रोते हुए मनुष्य की छवनि के समान जब मेघ गर्जना करे तो निश्चयतः भहारारी की सूचना समझनी चाहिए। मधुर और कोमल गर्जना शुभ-फलदायक मानी जाती है।

नौवें अध्याय में वायु का वर्णन है। इस अध्याय में 65 श्लोक हैं। इस अध्याय के आरम्भ में वायु की विशेषता, उपयोगिता एवं स्वरूप का कथन किया गया है। वायु के परिज्ञान द्वारा भावी शुभाशुभ फल का विचार किया गया है। इसके लिए तीन तिथियाँ विशेष महत्व की मानी गयी हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा, आषाढ़ी प्रतिपदा और अपाढ़ी पूर्णिमा। इन तीन तिथियों में वायु के परीक्षण द्वारा वर्षा, कृषि, वाणिज्य, रोग आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है। आषाढ़ी प्रतिपदा के दिन सूर्योरत के समय में पूर्व दिशा में वायु चले तो आश्विन गहीने में अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार की वायु से श्रावण मास में भी अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। रात्रि के समय जब आकाश में मेघ छाये हों और धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व दिशा में वायु चले तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। श्रावण मास में पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास में पूर्वीय और आश्विन में ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा का योग समझना चाहिए। तथा फसल भी उत्तम होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को निरञ्च आकाश रहे और दधिण वायु चले तो उस वर्षे अच्छी वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ पूर्णिमा को प्रात काल सूर्योदय के समय में पूर्वीय वायु के चलने से फसल खराब होती है, पश्चिमीय के चलने से अच्छी, दक्षिणीय से दुष्काल और उत्तरीय वायु से

समान्य फसल को सूचना समझनी चाहिए।

दसवें अध्याय में प्रबर्षण कर वर्णन है इस अध्याय में 55 श्लोक हैं। इस अध्याय में विभिन्न निमित्तों द्वारा वर्षा का परिमाण निश्चित किया गया है। वर्षा शत्रु में प्रथम दिन वर्षा जिस दिन होती है, उसी के फलादेशानुसार समस्त वर्ष की वर्षा का परिमाण ज्ञात किया जा सकता है। अश्वनी, भरणी आदि 27 नक्षत्रों में प्रथम वर्षा होने से समस्त वर्ष में कुल कितनी वर्षा होगी, इसकी जानकारी शी इस अध्याय में बतलायी गयी है। प्रथम वर्षा अश्वनी नक्षत्र में हो तो 49 आढ़क जल, भरणी में हो तो 19 आढ़क जल, कुत्तिका में हो तो 51 आढ़क, रोहिणी में हो तो 91 आढ़क, मृगशिर नक्षत्र में हो तो 91 आढ़क, आर्द्धा में हो तो 32 आढ़क, पुत्रवंश में हो तो 91 आढ़क, पृष्ठ में हो तो 42 आढ़क, आश्लेषा में हो तो 64 आढ़क, भघा में हो तो 16 द्रोण, पूर्वी फालगुनी में हो तो 16 द्रोण, उत्तरा फालगुनी में हो तो 67 आढ़क, हस्त में हो तो 25 आढ़क, चित्रा में हो तो 22 आढ़क, स्वाति में हो हो 32 आढ़क, विशाखा में हो तो 16 द्रोण, अनुराधा में हो तो 16 द्रोण, ज्येष्ठा में हो तो 18 आढ़क और मूल में हो तो 16 द्रोण जल की वर्षा होती है। इस अध्याय में पूर्वांगांडा, उत्तरांगांडा, श्वेत, श्वनिष्ठा जातभिष्ठा, पूर्वभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र में वर्षा होने का फलादेश पहले कहा गया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पूर्वांगांडा से नक्षत्र की गणना की गयी है।

बारहवें अध्याय में गन्धर्वनगर का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में 34 श्लोक हैं। इस अध्याय में बताया गया है कि सूर्योदयकाल में पूर्व दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो तायरिकों का वध होता है। सूर्य के अस्तकाल में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो आक्रमणकारियों के लिए योर भय की सूचना समझनी चाहिए। रक्त वर्ण का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात, पीतवर्ण का दिखलाई पड़े तो शृंखला तुल्य कष्ट, कृष्णवर्ण का दिखलाई पड़े तो मारकाट, इवेतवर्ण का दिखलाई पड़े तो विजय, कपिलवर्ण का दिखलाई पड़े तो क्षोभ, मंजिष्ठ वर्ण का दिखलाई पड़े तो सेना में क्षोभ एवं इन्द्रजितुष के वर्ण के समान वर्ण वाला दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है। गन्धर्वनगर अपनी आकृति, वर्ण, रक्तनासन्निवेश एवं दिशाओं के अनुसार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के शुभाशुभ भविष्य की सूचना देते हैं। शुभवर्ण और सीम्य आकृति के गन्धर्वनगर प्रायः शुभ होते हैं। विकृत आकृति वाले, कृष्ण और नील वर्ण के गन्धर्वनगर व्यक्ति, राष्ट्र और समाज के लिए अशुभसूचक हैं। शान्ति, अशान्ति, आन्तरिक उपद्रव एवं राष्ट्रों के सन्धि-विग्रह के सम्बन्ध में भी गन्धर्व नगरों से सूचना प्रिलकी है।

बारहवें अध्याय में 38 श्लोकों में गर्भधारण का वर्णन किया गया है। मेघ गर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। पूर्व दिशा के मेघ जब

पश्चिम दिशा की ओर दौड़ते हैं और पश्चिम दिशा के मेघ पूर्व दिशा में जाते हैं, इसी प्रकार चारों दिशाओं में मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का मर्भ चाल जानना चाहिए। जब उत्तर ईशानकोण और पूर्व दिशा की बायु द्वारा आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और वहु धेरेदार होता है, उस समय भी मेघों के गर्भधारण का समय रहता है। मेघों के गर्भधारण का समय मार्गशीर्ष अग्रहन, पौष, माघ और फाल्गुन है। इन्हीं महीनों में मेघ गर्भधारण करते हैं। जो व्यक्ति मेघों के गर्भधारण को पहचान लेता है, वह सरलतापूर्वक वर्षा का समय जान सकता है। यह गणित का सिद्धान्त है कि गर्भधारण के 195 दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अग्रहन के महीने में जिस तिथि को मेघ गर्भधारण करते हैं, उस तिथि से ठीक 195वें दिन में अवश्य वर्षा होती है। इस अध्याय में गर्भधारण की तिथि का परिज्ञान कराया गया है। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं; उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियों का कलरव सुनाई पहने लगता है। अग्रहन के महीने में जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुसूत और मण्डलाकार होते हैं। उसी तिथि को उनकी गर्भधारण किया समझनी चाहिए। इस अध्याय में गर्भधारण की परिस्थिति और उस परिस्थिति के अनुसार घटित होने वाले फलादेश का निरूपण किया गया है।

तेरहवें अध्याय में यात्रा के शकुनों का वर्णन है। इस अध्याय में 186 श्लोक हैं। इसमें प्रधान रूप से राजा की विजय यात्रा का वर्णन है, पर यह विजय यात्रा सर्वसाधारण की यात्रा के रूप में भी वर्णित है। यात्रा के शकुनों का विचार सर्व साधारण को भी करना चाहिए। सर्वप्रथम यात्रा के लिए शुभमुहूर्त का विचार करना चाहिए। ग्रह, नक्षत्र, कारण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यंजन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तों का विचार यात्रा काल में अवश्य करना चाहिए। यात्रा में तीन प्रकार के निमित्तों—आकाश से पतित, भूमि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाओं का विचार करना होता है। सर्वप्रथम पुरोहित तथा हवन किया द्वारा शकुनों का विचार करना चाहिए। कौशा, भूषक और शूकर आदि पीछे की ओर आते हुए दिखाई पड़े अथवा वार्यों ओर चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो यात्रा में कष्ट की सूचना समझनी चाहिए। ग्राह्यण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्त, दही, आम, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, वाजा, मोर, पर्याय, नौला, बैंधा हुआ पशु, ऊख, जलपूर्ण कलश, बैल, कन्या, रत्न, मछली, मन्दिर एवं गुवाहती नारी का दर्शन यात्रारम्भ में हो तो यात्रा सफल होती है। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, धोने के लिए वस्त्र ले जाते हुए धोबी, घृत, मछली, सिंहासन, गुर्गा, छवजा, शहद, मेवा, धनुष, मोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, मांगलिक गायन ये पदार्थ समूल आये तथा बिना जल—खाली घड़ा लिये कोई व्यक्ति

पीछे की ओर जाता दिखाई पड़े तो यह शकुन अत्युत्तम है। बाँझ स्त्री, चमड़ा, घान का भूसा, पुआल, सूखी लकड़ी, अंगार, हिजड़ा, विष्ठा के लिए पुरुष या स्त्री, तेल, पागल व्यक्ति, जटा वाला संचारी व्यक्ति, लूण, संचारी, तेल मालिश किये बिना स्नान के व्यक्ति, नाक या कान कटा व्यक्ति, एधिर, रजस्वला स्त्री, गिरणिट, बिल्ली का लड़ना या रास्ता कटकार निकल जाना, बीचड़, कोयला, राख, दुर्भग व्यक्ति आदि शकुन यात्रा के आरम्भ में अशुभ समझे जाते हैं। इन शकुनों से यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं और कार्य भी राफल नहीं होता है। यात्रा के समय में दधि, मछली और जलपूर्ण कलश आना अत्यन्त शुभ माना गया है। इस अध्याय में यात्रा के विभिन्न शकुनों का विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। यात्रा करने के पूर्व शुभ शकुन और मुहूर्त का विचार अवश्य करना चाहिए। शुभ समय का प्रभाव यात्रा पर ध्वन्य पड़ता है। अतः दिमाश्युल का ध्यान कर शुभ समय में यात्रा करनी चाहिए।

चौदहवें अध्याय में उत्पातों का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में 182 श्लोक हैं। आरम्भ में बताया गया है कि प्रत्येक जनाद को शुभाशुभ की सूचना उत्पातों से मिलती है। प्रकृति के विषयक कार्य होने को उत्पात कहते हैं। यदि शीत कृतु में गर्भी पड़े और ग्रीष्म कृतु में बाढ़ा के बीं सर्दीं पड़े तो उत्त घटना के नौ या दस महीने के उपरान्त महान् भय होता है। गृज, पक्षी और मनुष्यों का स्वभाव विपरीत आचरण दिखलाई पड़े अर्थात् पशुओं के पक्षी या मानव सन्तान हो और स्त्रियों के पशु-पक्षी रात्तान हो तो भय और विपत्ति की सूचना समझनी चाहिए। देव प्रतिमाओं द्वारा जिन उत्पातों की सूचना मिलती है वे दिव्य उत्पात, नक्षत्र, उल्का, निवृति, पवन, विद्युत्पात, इन्द्रधनुष आदि के द्वारा जो उत्पात दिखलायी पड़ते हैं वे अन्तरिक्ष; पाथिव विद्यार्ग द्वारा जो विशेषताएँ दिखलाई पड़ती हैं वे भौमोत्पात कहलाते हैं। तीर्थकर प्रतिमा से पसीना निकलना, प्रतिमा का हँसना, रोना, अपने स्थान से हटकर दूसरी जगह पहुँच जाना, छब्बंग होना, छत्र का स्वयमेव हिलना, चलना, कौपना आदि उत्पातों को अत्यधिक अशुभ समझना चाहिए। ये उत्पात व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इन तीनों के लिए अशुभ हैं। इन उत्पातों से राष्ट्र में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। घरेलू मंथर्ष भी इन उत्पातों के कारण होते हैं। इस अध्याय में दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीनों प्रकार के उत्पातों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

वन्दहवें अध्याय में शुक्राचार्य का वर्णन है। इसमें 230 श्लोक हैं। इसमें शुक्र के गमन, उदय, अस्त, वक्ती, मानों आदि के द्वारा भूत-भवित्व का फल, वृष्टि, अदृष्टि, भय, अग्निप्रकोण, जय, पराजय, रोग, धन, समाजि आदि फलों का विवेचन किया गया है। शुक्र के छहों मण्डलों में भ्रमण करने के फल का कथन किया है। शुक्र का नागवीथि, गजवीथि, ग्रेताक्तवीथि, वृग्वीथि, गोवीथि,

जरदगवदीयि, अजवीयि, मूगवीयि और वैश्वानरवीयि में अमण करने का फलादेश बताया गया है। दक्षिण, उत्तर, पश्चिम और पूर्व दिशा की ओर से शुक्र के उदय होने का तथा अस्त होने का फलादेश कहा गया है। अश्विनी, भरणी आदि नक्षत्रों में शुक्र के अस्तोदय का फल भी विस्तारपूर्वक बताया गया है। शुक्र की आरुढ़, दीप्त, अस्तंगत आदि अवस्थाओं का विवेचन भी किया गया है। शुक्र के प्रतिलोम, अनुलोम, उदयास्त, प्रवास आदि का प्रतिपादन भी किया गया है। इस अध्याय में, गणित त्रिया के बिना केवल शुक्र के उदयास्त को देखने से ही राष्ट्र का शुभाशुभ ज्ञान किया जा सकता है।

सोलहवें अध्याय में शनिचार का कथन है। इसमें ३२ श्लोक हैं। शनि के उदय, अस्त, आरुढ़, छात, दीप्त आदि जटत्राओं का उद्देश किया गया है। कहा गया है कि थ्रवण, स्वाति, हस्त, आद्री, भरणी और पूर्वफिलगुनी नक्षत्र में शनि स्थित हो, तो पृथ्वी पर जल वी वर्षा होती है, मुभिक्ष, समर्घता—वस्तुओं के भावों में समता और और प्रजा का विकास होता है। अश्विनी नक्षत्र में शनि के विचरण करने से अश्व, अग्नवारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियों को हानि उठानी पड़ती है। शनि और चन्द्रमा के परस्पर वेद, परिवेष आदि का वर्णन भी इस अध्याय में है। शनि के बड़ी और मार्गी होने का फलादेश भी इस अध्याय में कहा गया है।

सत्रहवें अध्याय में गुरु के वर्ण, गति, आश्वार, मार्गी, अस्त, उदय, वश आदि का फलादेश वर्णित है। इस अध्याय में ४६ श्लोक हैं। बृहस्पति का, कृत्तिका, रोहिणी, मूगधिर, आद्री, पुनर्वंश, पुर्ण्य, आश्लेषा, गघा और पूर्वफिलगुनी इन नी नक्षत्रों में उत्तर मार्ग, उत्तरार्धालगुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वापिंडा इन नी नक्षत्रों में भव्यम मार्ग एवं उत्तरार्धादा, थ्रवण, धनिष्ठा, शतभिपा, पूर्वभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेत्वती, अश्विनी और भरणी इन नी नक्षत्रों में दक्षिण मार्ग होता है। इन मार्गों का फलादेश इस अध्याय में विस्तारपूर्वक निरूपित है। संचत्सर, परिवत्सर, इरावत्सर, अनुवत्सर और इद्रत्सर इन पाँचों संवर्तसरों के नक्षत्रों का वर्णन फलादेश के साथ किया गया है। गुरु की विभिन्न दशाओं का फलादेश भी बतलाया गया है।

अठारहवें अध्याय में बुध के अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस अध्याय में ३७ श्लोक हैं। बुध की सौम्या, विमिथा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गी और पापा इन सात प्रकार वी गतियों का वर्णन किया गया है। बुध वी सौम्या, विमिथा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं। शेष सभी गतियाँ पाप गतियाँ हैं। यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शक्टवाहक के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का लाभ करे तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है। बुध की

वृद्धि होती है।

बाईसवें अध्याय में 21 श्लोक हैं। इस अध्याय में सूर्य की विशेष अवस्थाओं का फलादेश वर्णित है। सूर्य के प्रवास, उदय और चार का फलादेश बतलाया गया है। लाल वर्ण का सूर्य अस्त्र प्रकोप करनेवाला, पीत और लोहित वर्ण का सूर्य व्याधि-मृत्यु देनेवाला और धूम्र वर्ण का सूर्य भुखमरी तथा अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। सूर्य की उदयकालीन आकृति के अनुसार भारत के विभिन्न प्रदेशों के सुभिक्ष और दुभिक्ष का वर्णन किया गया है। स्वर्ण के समान सूर्य का रंग सुखदायी होता है तथा इस प्रकार के सूर्य के दर्शन करने से व्यक्ति को सुख और आनन्द प्राप्त होता है।

तीसवें अध्याय में 54 श्लोक हैं। इसमें चन्द्रमा के वर्ण, मंशान, प्रमाण आदि का प्रतिपादन किया गया है। स्निधि, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा शुभ समझा जाता है। चन्द्रमा का शृंग-किनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ रहे तो दस्युओं का वात होता है। उत्तर शृंग वाला चन्द्रमा अशमक, कर्लिंग, भालव, दक्षिण ढीप आदि के लिए अशुभ तथा दक्षिण शृंगोन्नति वाला चन्द्र यवन देश, हिमाचल, पांचाल आदि देशों के लिए अशुभ होता है। चन्द्रमा की विभिन्न आकृति का फलादेश भी इस अध्याय में बतलाया गया है। चन्द्रमा की गति, भार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार, नक्षत्र आदि के अनुसार चन्द्रमा का विशेष फलादेश भी इस अध्याय में वर्णित है।

चौबीसवें अध्याय में 43 श्लोक हैं। इसमें ग्रहयुद्ध का वर्णन है। ग्रहयुद्ध के चार भेद हैं— भद्र, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य। ग्रहगेद में वर्षा का नाश, सुहृद और शुलीनों में भेद होता है। उल्लेख युद्ध में शस्त्रभय, मत्त्वा विरोध और दुभिक्ष होता है। अंशुमर्दन युद्ध में राष्ट्रों में संघर्ष, अन्नाभाव एवं अनेक प्रकार के वाष्ट होते हैं। अपसव्य युद्ध में पूर्वीय राष्ट्रों में आन्तरिक संघर्ष होता है तथा राष्ट्रों में वैमनस्य भी बढ़ता है। इस अध्याय में ग्रहों के नक्षत्रों का कथन तथा ग्रहों के वर्णों के अनुसार उनके फलादेशों का निरूपण किया गया है। ग्रहों का आपस में टकराना धन-जन के लिए अशुभ सूचक होता है।

पचासवें अध्याय में 50 श्लोक हैं। इसमें ग्रह, नक्षत्रों के दर्शन द्वारा शुभा-शुभ फल का कथन किया गया है। इस अध्याय में ग्रहों के पदार्थों का निरूपण किया गया है। ग्रहों के वर्ण और आकृति के अनुसार पदार्थों के तेज, मन्द और समत्व का परिज्ञान किया गया है। यह अध्याय व्यापारियों के लिए अधिक उपयोगी है।

छब्बीसवें अध्याय में स्वप्न का फलादेश बतलाया गया है। इस अध्याय में 86 श्लोक हैं। स्वप्न निमित्त का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। धनागम, विवाह, मंगल, कार्यसिद्धि, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि विभिन्न फलादेशों

चारों दिशाओं की वर्णियतें का भी वर्णन किया गया है। विभिन्न ग्रहों के साथ बुध का फलादेश बताया गया है।

उन्नीसवें अध्याय में 39 श्लोक हैं। इसमें मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र का विवेचन किया गया है। मंगल का चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होता है। वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, कुद्ध और बायी और गमन करने वाला मंगल सदा अशुभ होता है। मंगल के पाँच प्रकार के वक्र बताये गये हैं—उष्ण, शोष-मुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर। ये पाँच प्रधान वक्र हैं। मंगल का उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पर हुआ हो और वह लौटकर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं। इस उष्ण वक्र में मंगल के रहने से वर्षा अच्छी होती है विष; कीट और अग्नि की कृद्धि होती है। जलता को साधारणतया कष्ट होता है। जब मंगल दसवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्र से लौटता है तो शोषमुख वक्र कहलाता है। इस वक्र में आकाश से जल की वर्षा होती है। जब मंगल राशि परिवर्तन करता है, उस समय वर्षा होती है। यदि मंगल चौदहवें अथवा तेरहवें नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्याल चक्र होता है। इसका फलादेश अच्छा नहीं होता। जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र से लौटता है तब लोहित वक्र कहलाता है। इसका फलादेश जल का अभाव होता है। जब मंगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र से लौटता है, तब लोहमुद्गर कहलाता है। इस वक्र का फलादेश भी राष्ट्र और समाज को अहितकर होता है। इसी प्रकार मंगल के नक्षत्र-भोग का भी वर्णन किया गया है।

बीसवें अध्याय में 63 श्लोक हैं। इस अध्याय में राहु के गमन, रंग आदि का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में राहु की दिशा, वर्णन, ममन और नक्षत्रों के संयोग आदि वा फलादेश वर्णित है। चन्द्रग्रहण तथा ग्रहण की दिशा, नक्षत्र आदि का फल भी बताया गया है। नक्षत्रों के अनुसार ग्रहणों का फलादेश भी इस अध्याय में आया है।

इक्कोसवें अध्याय में 58 श्लोक हैं। इसमें केतु के नाना गेद, प्रभेद, उनके स्वरूप, फल आदि का विस्तार सहित वर्णन किया गया है। बताया गया है कि 120 वर्ष में पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होता है। इस केतु का फल संसार को उथल-पुथल करनेवाला होता है। जब विषम केतु वा उदय होता है, तब विश्व में युद्ध, रक्तपात, महामारी आदि उपद्रव अवश्य होते हैं। केतु के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन भी इस अध्याय में फल सहित विया है। अश्वनी आदि नक्षत्रों में उत्पन्न होने पर केतु का फल विभिन्न प्रकार का होता है। क्रूर नक्षत्रों में उत्पन्न होने पर केतु भय और शीढ़ा का सूचक होता है और सौम्य नक्षत्रों में केतु के उदय होने से राष्ट्र में शान्ति और शुभ रहता है। देश में धन-धान्य की

की सूचना देनेवाले स्वप्नों का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में दृष्टि, श्रुति, अनुभूति, प्राधित, भाविका और दोषज इन सात प्रकार के स्वप्नों में से केवल भाविक स्वप्नों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

सत्ताईसवें अध्याय में कुल 13 श्लोक हैं। इस अध्याय में वस्त्र, आसन, पादुका आदि के छिन्न त्रौने का फलादेश कहा गया है। एह छिन्न निमित्त का विषय है। नवीन वस्त्र धारण करने में नक्षत्रों का फलादेश भी बताया गया है। शुभ मुहूर्त में नवीन वस्त्र धारण करने से उपभोक्ता का कल्याण होता है। मुहूर्त का उपयोग तो सभी कार्यों में करना चाहिए।

परिशिष्ट में दिये गये 30वें अध्याय में अरिष्टों का वर्णन किया गया है। मृत्यु के पूर्व प्रकट होने वाले अरिष्टों का कथन विस्तारपूर्वक किया गया है। पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ तीनों प्रकार के अरिष्टों का कथन इस अध्याय में किया गया है। शरीर में जितने प्रकार के विशार उत्पन्न होने हैं उन्हें पिण्डस्थ अरिष्ट कहा गया है। यदि कोई अशुभ लक्षण के रूप में चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु को देखता है तो ये सब अरिष्ट मुनियों के द्वारा पदस्थ—बाह्य वस्तुओं से सम्बन्धित कहलाते हैं। आकाशीय दिव्य परायीं का शुभाशुभ रूप में दर्शन करना, कुत्ते, बिल्ली, कौआ आदि प्राणियों की दृष्टानिष्ट शूचक आवाज का सुनना या उनकी अन्य किसी प्रकार की चेष्टाओं को देखना पदस्थ अरिष्ट कहा गया है। पदस्थ अरिष्ट में मृत्यु की सूचना दो-तीन वर्ष पूर्व भी मिल जाती है। जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट छाया पुरुष; स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रणन के द्वारा अवगत किया जाता है। छायादर्शन द्वारा आयु का ज्ञान करना चाहिए। उक्त तीनों प्रकार के अरिष्ट व्यक्ति की आयु की सूचना देते हैं।

भद्रवाहुसंहिता की बृहत्संहिता से तुलना तथा ज्योतिष शास्त्र में उसका स्थान

भद्रवाहु संहिता के कई अध्याय विषय की दृष्टि से बृहत्संहिता से मिलते हैं। भद्रवाहु संहिता के दूसरे और तीसरे अध्याय बृहत्संहिता के 33वें अध्याय से मिलते हैं। दूसरे अध्याय में उल्काओं का स्वरूप और तीसरे अध्याय में उल्काओं का फल वर्णित है। उल्का की परिभाषा का वर्णन कहते हुए वहा है—

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रत्यवतामिह ।

संभवश्चात्तरिक्षे तु तज्ज्ञेरुल्केति संज्ञिता ॥

तत्र द्वारा तथा धिष्ठयं विद्युत्त्वाशनिभिः सह ।

उल्काचिकारा बोद्धव्या ते पतन्ति निमित्ततः ॥

इसी आशय को वराहमिहिर ने निम्न श्लोकों में प्रकट किया है—

दिवि भृक्तशुभफलानां पश्चतां रूपाणि यानि तान्युत्काः ।

धिष्ठ्योद्धकाशनिविद्युत्ताएः इति पञ्चदा भिन्नाः ॥

-अ० 30, श्लो० 1

भद्रबाहुसंहिता के दूसरे अध्याय के 8, 9वाँ श्लोक वाराहीसंहिता के 33वें अध्याय के 3, 4 और 8वें श्लोक के समान हैं। भाव साम्य के साथ अकार साम्य भी प्रायः मिलता है। भद्रबाहुसंहिता के तीसरे अध्याय का 5, 9, 16, 18, 19वाँ श्लोक वाराही संहिता के 33वें अध्याय के 9, 10, 12, 15, 16, 18 और 19वें श्लोक से प्रायः मिलते हैं। भाव की दृष्टि से दोनों ग्रन्थों में आश्रचर्यजनक समता है।

अत्तर इतना है कि वाराही संहिता में जहाँ विषय वर्णन में संक्षेप किया है, वहाँ भद्रबाहुसंहिता में विस्तृत है। विरतार है : इत्येक विषय को विरतार के साथ समझाने की चेष्टा की है। फलादेशों में भी कहीं-कहीं अन्तर है, एक बात या परिस्थिति का फलादेश वाराही संहिता से भद्रबाहुसंहिता में पृथक् है। कहीं-कहीं तो यह पृथकता इतनी बढ़ गयी है कि फल विपरीत दिशा ही दिखलाता है।

परिवेष वा वर्णन भद्रबाहुसंहिता के चौथे अध्याय में और वाराही संहिता के 34वें अध्याय में है। भद्रबाहुसंहिता के इस अध्याय के तीसरे और सोलहवें श्लोक में खण्डित परिवेषों को अनिष्टकारी कहा गया है। चार्दी और तेल के समान वर्ण वाले परिवेष गुम्भिक करनेवाले कहे गये हैं। यह कथन वाराही संहिता के 34वें अध्याय के 4 और 5वें श्लोक से मिलता-जुलता है। परिवेष प्रकरण के 8, 14, 20, 28, 29, 37, 38वाँ श्लोक वाराही संहिता के 34वें अध्याय के 6, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, १६वं ३७वें श्लोक से मिलते हैं। भाव में पर्याप्त साम्य है। दोनों ग्रन्थों का फलादेश तुल्य है। परिवेष के नक्षत्र तिथियों एवं वर्णों का फल-कथन भद्रबाहुसंहिता में नहीं है, यिन्तु वाराही संहिता में ये विषय कुछ विस्तृत और व्यवस्थित रूप में वर्णित हैं। प्रकरणों में केवल विस्तार ही नहीं है, विषय का गम्भीर भी है। भद्रबाहुसंहिता के परिवेष अध्याय में विस्तार के साथ पूर्वरूपित भी विवरणान हैं।

भद्रबाहुसंहिता का १२वाँ अध्याय मेघ-गर्भलक्षणाध्याय है। इसके चौथे और सातवें श्लोक में बताया है कि सात-सात महीने और सात-सात दिन में गर्भ पूर्ण परिपक्व अवस्था को प्राप्त होता है। वाराही संहिता में (अ० 22 श्लो० ७) में १९५ दिन कहा गया है। अतः स्थूल रूप से दोनों कथनों में अन्तर मालूम पड़ता है, पर वास्तविक में दोनों कथन एक हैं। भद्रबाहुसंहिता में नाक्षत्र मास गहीज है, जो २७ दिन का होता है। अतः यहाँ १९६ दिन आते हैं। वाराहमिहिर

वर्ष 195 दिन तथा वर्तमान 196वाँ दिन ही माना है, जो भद्रबाहुरांहिता के नाक्षत्र मास के तुल्य है। गर्भ का धारण और वर्षण प्रभाव सामान्यतया एक हैं, परन्तु भद्रबाहु संहिता के कथन में विशेषता है। भद्रबाहुसंहिता में गर्भधारण का वर्णन महीनों के अनुसार किया है। वाराहीसंहिता में यह कथन नहीं है।

उत्पात प्रकरण दोनों ही संहिताओं में है। भद्रबाहुसंहिता के चौदहवें अध्याय में और वाराही संहिता के छियालीसवें अध्याय में यह प्रकरण है। भद्रबाहु संहिता में उत्पातों के दिव्य, अन्तरिक्ष और भीम वे तीन शब्द किये हैं तथा इनका वर्णन बिना किसी क्रम के मनमाने ढंग से किया है। इस ग्रन्थ के वर्णन में किसी भी प्रकार का क्रम नहीं है। दिव्य उत्पातों के साथ भीम उत्पातों का वर्णन भी किया गया है। पर वाराही संहिता में अशुभ, अनिष्टकारी, अयकारी, राज-भयोत्पादक, नगरभयोत्पादक, सुभिक्षदायक आदि का वर्णन युक्त्यवस्थित ढंग से किया है। लिंगवैकृत, लग्नवैकृत, वशवैकृत, सम्यवैकृत, अस्त्रवैकृत, प्रसववैकृत, अतुष्पादवैकृत, वायव्यवैकृत, मृगपक्षी विकार एवं शक्तवज्जन्द्रकीलवैकृत इत्यादि विभागों का वर्णन किया है। वाराहमिहिर का यह उत्पात प्रकरण भद्रबाहुसंहिता के उत्पात प्रकरण की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यवस्थित है। वैसे वाराहमिहिर ने केवल 99 श्लोकों में उत्पात का वर्णन किया है, जबकि भद्रबाहुसंहिता में 182 श्लोकों में उत्पातों का कथन दिया गया है। उत्पात का लक्षण प्रायः दोनों का समान है। 'प्रकृतेषो विष्यासः सः उत्पातः प्रवीतितः' (भ० सं० 14, 2) तथा वाराह ने 'प्रकृतेरन्यत्वमुत्पातः' (वा० सं० 46, 1)। इन दोनों लक्षणों का तात्पर्य एक ही है। राजमन्त्री, राष्ट्रसम्बन्धी फलादेश प्रायः दोनों ग्रन्थों में समान है।

शुक्लार दोनों ही ग्रन्थों में है। भद्रबाहुसंहिता के पचाहवें अध्याय में और वाराही संहिता के तीवें अध्याय में यह प्रकरण आया है। उल्का, सन्ध्या, वात, गन्धवनयर आदि तो आकस्मिक घटनाएँ हैं, जतः दैनन्दिन शुभाशुभ को अवधत करने के लिए श्रहचार का निरूपण करना अत्यावश्यक है। यही कारण है कि संहिताकारों ने ग्रहों के वर्णनों को भी अपने ग्रन्थों में स्थान दिया है। राष्ट्रविष्वव, राजभय, नगरभय, संग्राम, महामारी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि का विवेचन ग्रहों की गति के अनुसार करना ही अधिक युक्तिसंगत है। अतएव संहिताकारों ने ग्रहों के चार को स्थान दिया है। शुक्लार को अन्य ग्रहों की अपेक्षा अधिक उपयोगी और बलवान कहा गया है।

शुक्र के ग्रन्थ-मार्ग को, जो कि 27 नक्षत्रात्मक है, वीथियों में विभक्त किया गया है। नाग, गज, ऐरावण, वृषभ, गो, जरद्भव, अज, मृग और वैश्वानर ये वीथिर्या भद्रबाहुसंहिता में आयी हैं (15 अ० 44-48 श्लोक) और नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग और दहन ये वीथियाँ वाराही संहिता

(९ अ० । श्लो०) में आयी हैं। इन वीथियों में भद्रबाहु संहिता में अज नाम की वीथि एक नयी है तथा ऐरावत के स्थान पर ऐरावण और दहन के स्थान पर वैश्वानर वीथियाँ आयी हैं। इस निरूपण में केवल शब्दों का अन्तर है, भाव में कोई अन्तर नहीं है। भद्रबाहुसंहिता में भरणी से लेकर चार-चार नक्षत्रों का एक-एक मण्डल बताया गया है। नहा है—

भरण्यादीनि चत्वरि चतुर्नक्षत्रकाणि हि ।
षड्ब भण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत् ॥
चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च ।
पञ्चकं षट्कं विज्ञेयो भरण्यादी तु भाग्यवः ॥

—भ० सं०, 15 अ० 7, 9 श्लो०

बाराही संहिता के १०वें अध्याय के १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०वें श्लोक में उपर्युक्त वात का कथन है। भद्रबाहुसंहिता के अगले श्लोकों में फलादेश का भी वर्णन किया जाता है, जबकि बाराही संहिता में मण्डल के नक्षत्र और फलादेश साथ-साथ वर्णित हैं। शुक्र के नक्षत्र-भेदन का फल दोनों ग्रन्थों में रूपान्तर है। भद्रबाहुसंहिता में कहा गया है कि शुक्र यदि रोहिणी नक्षत्र में आरोहण करे तो भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चौल, कर्णाटिक, चेदि, चेर और त्रिदर्भ आदि देशों में दीड़ा और उपद्रव होता है। बाराही संहिता में भी मृगशिर नक्षत्र का भेदन या आरोहण अशुभ माना गया है। बाराही संहिता के शुक्रचार में केवल ४५ श्लोक हैं, जबकि भद्रबाहुसंहिता में २३। श्लोक हैं। इसमें विस्तारपूर्वक शुक्र के गमन, उदय एवं अस्त आदि का वर्णन किया गया है। बाराही संहिता की अपेक्षा उभयों कई नयी वातें हैं।

भद्रबाहुसंहिता और बाराही संहिता में शनैश्चर चार नामक अध्याय आया है। यह भद्रबाहुसंहिता का ।६वाँ अध्याय और बाराही संहिता का दसवाँ अध्याय है। बाराही संहिता का यह वर्णन भद्रबाहुसंहिता के वर्णन की अपेक्षा अधिक विस्तृत और ज्ञानवर्धक है। बाराही संहिता में प्रत्येक नक्षत्र के भोगानुसार फलादेश कहा गया है, इस प्रकार के वर्णन का भद्रबाहु संहिता में अभाव है। भद्रबाहुसंहिता में कहा गया है कि गृहितों में जनि और विशाखा में गुरु हो तो चारों ओर दारणता व्याप्त हो जाती है तथा वर्षा खूब होती है। जनि के रंग का फलादेश लगभग समान है। भद्रबाहु संहिता में बताया गया है—

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम् ।
पीतो जनयते व्यर्धि ग्रहत्रकोपं च दारणम् ॥
कृष्णे शुद्ध्यन्ति सरितो वासंवश्च न वर्षति ।
स्नेहबानत्र गृहणाति रूक्षः शोषयते प्रजाः ॥

—भ० सं०, अ० 16, श्लो० 26-27

वाराही संहिता में शनि के वर्ण का फलादेश निम्न प्रकार बताया है—

अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुदभयकृद्यदि पीतमयूषः ।
शस्त्रभयाय च रक्तवर्णो भस्मनिभो लहुवरकरश्च ॥
वैद्युर्यकान्तिरमलः शुभदः प्रजानां बाणातसोकुसुभवर्णनिभश्च शस्तः ।
पंचापि वर्णभूषयच्छति तत्सबर्गान् सूर्यात्मजः क्षप्रतीति मुनिप्रबादः ॥

—बा० सं०, अ० १०, श्लो० 20-21

भ० सं० में कहा है कि एवेत शनि का रंग हो तो गुभिदा, पाण्डु और लोहित रंग का होने पर भय एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोष होता है। शनि के छुरण वर्ण होने पर नदिर्यां सूख जाती है और वर्षा नहीं होती है। स्त्रिघ द्वारा पर प्रजा में सहयोग और रुक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है।

वाराही—संहिता में यदि शनि अनेक रंग वाला दिखाई दे तो अंडज प्राणियों का नाश होता है। पीतवर्ण होने से क्षुधा और भय होता है। रामवर्ण होने से शस्त्रभय और भस्म के समान रंग होने से अत्यन्त अशुभ होता है। यदि शनि वैद्युर्यमणि के समान कान्तिमान् और निर्मल हो तो प्रजा का अत्यन्त अशुभ होता है। तुलतात्मक दृष्टि से विचार करने पर दोनों ग्रन्थों के अनिवार्य फल में पर्याप्त अन्तर है।

भद्रवाहुसंहिता में (18, 20, 21, श्लो० में) नग्न और जनि के योग का फलादेश बतलाया गया है, जो वाराही संहिता में नहीं है। योग फल भ० सं० का महत्त्वपूर्ण है और यह एक नवीन प्रकार है।

वृहस्पति चार का अथवा भ० सं० के 17वें अध्याय और वा० मं० के 8वें अध्याय में आया है। निस्सान्देह भद्रवाहुसंहिता का यह प्रकरण फलादेश की दृष्टि से वाराही संहिता की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि विस्तार की दृष्टि में वाराही संहिता का प्रकरण भ० सं० की अपेक्षा बड़ा है। एक से निमित्तों का भी फलादेश समान नहीं है। उदाहरण के लिए कतिपय वाहस्पति-संवत्सरों का फलादेश दोनों ग्रन्थों से उद्धृत किया जाता है—

माघमल्पोदकं विद्यात् फालमुने दुर्भगः स्त्रिः ।
चैत्रं चित्रं विजातीयात् सस्यं तोयं सरीसृपाः ॥
विशाखा नृपभेदश्च पूर्णतोयं चिनिदिशत् ।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते ॥
आयाहं तोषसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम् ।
ध्यावणे दंडिणश्चैरा व्यालाश्च प्रबलाः समृताः ॥

—भ० सं०, 17 अ० 29-31

अर्थ—माघ नाम का वर्ष हो तो अल्प वर्षा होती है, फालमुन नाम का वर्ष

हो तो स्त्रियों का कुभाण्य बढ़ता है। चैत्र नाम के वर्ष में धान्य और जल-वृष्टि विचित्र रूप में होती है तथा सरीसृपों की वृद्धि होती है। वैशाख नामक संवत्सर में राजाओं में मतभेद होता है और जल की अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ नामक वर्ष में अच्छी वर्षा होती है और मित्रों में मतभेद बढ़ता है। आषाढ़ नामक वर्ष में जल की कमी होती है, पर कहीं-कहीं अच्छी वर्षा भी होती है। श्रावण नामक वर्ष में दाँत वाले जन्तु प्रबल होते हैं। भाद्र नामक संवत्सर में शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सर में सरीसृपों का अधिक भय रहता है।

बाराही राहिता में यही प्रकरण निम्न प्रकार मिलता है—

शुभकृज्जगतः पौषो निवृत्तर्वराः परस्परं क्षितिपाः ।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घः पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च ॥
पितृपूजापरिवृद्धिमधिं हार्दं च सर्वभूतानाम् ।
आरोग्यवृष्टिधान्यसर्वसम्पदो मित्रलाभश्च ॥
फालगुने वर्षे विद्यात् ववचित् ववचित् क्षेमवृद्धिसस्यानि ।
दीर्घायं प्रमदानां प्रबलाश्चैरा नृपाश्चोप्राः ॥
चैत्रे मन्दा वृष्टिः प्रियमन्त्वक्षेममवनिए गृदन् ।
वृद्धिस्तु कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम् ॥
वैशाखे धर्मपरा विगतभयाः प्रभुदिताः प्रजाः सनृपाः ।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिनिष्पत्तिः सर्वसस्यानाम् ॥

—का० सं० 8 अ० 5-9 इल०

अर्थ—पौष नामक वर्ष में जगत् का शुभ होता है, याजा आपस में वैरभाव का त्याग कर देते हैं। अनाज की कीमत दूनी पा तिगुनी हो जाती है और पौष्टिक कार्य की वृद्धि होती है। माघ नाम के वर्ष में पितृ लोगों की पूजा बढ़ती है, सर्व प्राणियों का हार्द होता है; आरोग्य, सुवृष्टि और धान्य का मोल सम रहता है, मित्रलाभ होता है। फलगुन नाम वाले वर्ष में कहीं-कहीं क्षेम और अन्न की वृद्धि होती है, स्त्रियों का कुभाण्य, चोरों की प्रबलता और राजाओं में उम्रता होती है। चैत्र नाम के वर्ष में साधारण वृष्टि होती है, राजाओं में सन्धि, कोष और धान्य की वृद्धि और रूपवान् व्यक्तियों को पीडा होती है। वैशाख नामक वर्ष में राजा-प्रजा दोनों ही धर्म में तत्त्वर रहते हैं, भय शून्य और हृषित होते हैं, यज्ञ करते हैं और समस्त धान्य भलीभांति उत्पन्न होते हैं। (ज्येष्ठ नामक वर्ष में राजा लोग धर्मज्ञ और भल-मिलाप से रहते हैं। आषाढ़ नामक वर्ष में समस्त धान्य पैदा होते हैं, कहीं-कहीं अनावृष्टि भी रहती है। श्रावण नामक वर्ष में अच्छी फसल पैदा होती है। भाद्रपद नामक वर्ष में लता जातीय समस्त गुरु धान्य अच्छी तरह पैदा होते हैं।

और आश्विन नामक वर्ष में अत्यन्त वर्षा होती है।)

तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर दोनों वर्णनों में बहुत अन्तर है। विषय एक होने पर भी फल-कथन करने की शैली भिन्न है। इसी अध्याय में गुरु की विभिन्न गतियों का फलादेश भी बाहा गया है।

बुधचार भ० सं० के 18वें अध्याय और वा० सं० के 7वें अध्याय में आया है। भ० सं० के 18वें अध्याय के द्वितीय श्लोक में बुध की सौम्या, विमिश्ना, संक्षिप्ता, तीक्ष्णा, घोरा, दुर्गा और पाणा ये सात प्रकार की गतियाँ बतलायी गयी हैं। वा० सं० के 7वें श्लोक में बुध की प्रकृता, विमिश्ना, संक्षिप्ता, तीक्ष्णा, योगमत्ता, घोरा और पाणा इन गतियों का उल्लेख किया है। तुलना करने से जात होता है कि भ० सं० में जिसे सौम्या कहा है, उसी को वा० सं० में प्रकृता; जिसे भ० सं० में तीक्ष्णा कहा है, उसे वा० सं० में तीक्ष्णा; भ० सं० में जिसे दुर्गा कहा है, उसे वा० सं० में योगमत्ता कहा है। इन गतियों के फलादेशों में भी अन्तर है। वाराहमिहिर ने सभी प्रकार की गतियों की दिन मंड्या भी बतलायी है, जब कि भ० सं० इस विषय पर भौत है। अस्त, उदय और वक्री आदि का कथन भ० सं० में कुछ अश्विक है, जब कि वा० सं० में नाम भाव को है।

अंगारकचार, राहुचार, केतुचार, मूर्यचार और चन्द्रचार विषयक वर्णनों की दोनों प्रन्थों में बहुत कुछ समता है। कठिनय श्लोकों के भाव ज्यो-के-त्यो मिलते हैं।

भद्रवाहुसंहिता का अंगारकचार विस्तृत है, वाराहीसंहिता का संक्षिप्त। वर्णन प्रविया में भी दोनों में अन्तर है। भद्रवाहुसंहिता (अ० 19; श्लोक 11) में मंगल के बक्री का कथन करते हुए कहा है कि मंगल को उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर ये पाँच प्रधान बक्र हैं। ये बक्र मंगल के उदय नक्षत्रों की अपेक्षा से बताये गये हैं। वाराही संहिता में (अ० 6 श्लो० 1-5) उष्ण, अथुमुख, व्याल, रुधिरानन और असिमुमल इन बक्रों-का उल्लेख किया है। इन बक्रों में पहले और तीसरे बक्र के नाम दोनों में एक हैं, शेष नाम भिन्न हैं। द्वासरी बात यह है कि भ० सं० में सभी बक्र उदय नक्षत्र के अनुसार वर्णित हैं, किन्तु वाराही संहिता में व्याल, रुधिरानन और असिमुमल को अस्त नक्षत्रों के अनुसार बताया गया है। भ० सं० (19; 25-34) में कहा गया है कि कृतिकादि सात नक्षत्रों में मंगल गमन करे तो कष्ट; माघादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो अय, अनु-राधादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो अनीति; धनिष्ठादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो निन्दित फल होता है। वा० सं० (6; 11-12) में बताया गया है कि रोहिणी, श्रवण, मूल, उत्तराफालगुनी, उत्तराष्ट्रादा, उत्तराभाद्रपद या ज्येष्ठा नक्षत्र में मंगल का विचरण हो तो मेषों का नाश एवं श्रवण, मधा, पुनर्वसु, मूल, हस्त, पूर्वभाद्रपद, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्र में विचरण करता है।

तो शुभ होता है। इस प्रकार वाराही संहिता में समस्त नक्षत्रों पर भंगल के विचरण का फल नहीं, जबकि भद्रबाहु संहिता में है। भ० सं० (19;1) में प्रतिज्ञानुसार भंगल के चार, प्रवास, वर्ग, दीप्ति, काष्ठा, गति, फल, बक्र और अनुवक्र का फलादेश बताया गया है।

राहुचार का निरूपण भद्रबाहु संहिता के 20वें अध्याय में और वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय में आया है। वाराही संहिता में यह प्रकरण खूब विस्तार के साथ दिया गया है, पर भद्रबाहु संहिता में संक्षिप्त रूप से आया है। भद्रबाहु संहिता (20; 2, 57) में राहु का प्रेत, स्पष्ट, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, धर्मिय, वैश्य और शुद्रों के लिए शुभाशुभ निमित्तक माना गया है, पर वाराही संहिता (5; 53-57) में हरे रंग का राहु रोगमूलक, कपिल वर्ण का राहु म्लेज्जों का नाश प्रवृत्त दुर्भिक्षमूलक, अरुण वर्ण का राहु दुर्भिक्षमूलक, कपोत, अरुण, कपिल वर्ण का राहु भगमूलक, पीत वर्ण का वैश्यों का नाशमूलक, दूर्वादिल या हल्दी के समान वर्ण वाला राहु मरीसूचक एवं धूलि पा खाल वर्ण का राहु धर्मियनाशक होता है। इस विवेचन से स्पष्ट है कि राहु के वर्ण का फल वाराही संहिता में अधिक व्यापक वर्णित है। वाराही संहिता के आरम्भिक 26-27 लिंगों में जहाँ प्रहण का ही कथन है, वहाँ भद्रबाहुसंहिता में आरम्भ में ही राहुनिमित्तों पर विचार किया गया है। वाराही संहिता (5; 42-52) में प्रहण के ग्राय के सब्द, अपसद्य, लेह, प्रसन, निरोध, अवमर्द, आरोह, अव्रात, ग्राध्यतम और तमोनय ये दस भेद बताये हैं तथा इनका लक्षण और फलादेश भी कहा गया है। भद्रबाहु संहिता में प्रहण का फल साधारण रूप में कहा गया है, विशेष रूप में तो राहु और चन्द्रमा वी आकृति, रूप-रंग, चक्र-भंग आदि निमित्तों का ही वर्णन किया है। निमित्तों वी दृष्टि में यह अध्याय वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय वी अपेक्षा अधिक उपयोगी है।

भद्रबाहु संहिता के 21वें अध्याय में और वाराही संहिता के 11वें अध्याय में केतुचार का वर्णन आया है। वाराही संहिता में केतुओं का वर्णन दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम इन तीन रूपों के अनुसार किया गया है। केतुओं वी विभिन्न संख्यायें इसमें आयी है। भद्रबाहुसंहिता में इस प्रकार का विस्तृत वर्णन नहीं आया है। भ० सं० (21; 6-7-18) में केतु की आकृति और वर्ण के अनुसार फलादेश बताया गया है। केतु का ग्रसन कृतिका ये लेनार गरणी तक दक्षिण, पश्चिम और इत्तर इन तीन दिशाओं में जानवा चाहिए। नौ-नी नक्षत्र तक केतु एक दिशा में ग्रसन करता है। वाराही संहिता (11; 53-59) में बताया है कि केतु अग्निवनी नक्षत्र का स्वर्ण करे तो अग्नमक देश का विनाश, गरणी में किशतपति, कृतिका में कलिगराज, रोहिणी में शूरमेड, मृगशिरा में उज्जीनरराज, आर्द्ध में मत्स्यराज, पुनर्वसु में अश्वकनाथ, गुरु में मण्डाविष्टि, आश्लेषा में असिकेश्वर,

मध्य नक्षत्र में अंगराज, पूर्वफ़िल्लयुनी में पाठ्यनरपति, उत्तराहाल्युनी में उज्जविनी स्वामी, हस्त में दण्डाधिपति, चित्रा में कुष्ठेश्वराज, स्वाति में काष्मीर, विशाखा में इक्ष्वाकु, अनुराधा में पुण्ड्रदेश, ज्येष्ठा में चक्रवर्ती वा विवाश, मूल में मद्राज, एवं पूर्वपिंडा में काण्डीपति वा विनाश होता है। इस प्रकार प्रत्येक नक्षत्र का फलादेश पृथक्-पृथक् रूप से बताया गया है। केतुओं में श्वेतकेतु और धूम केतु का फल प्रायः दोनों घन्यों में समान है।

भद्रबाहु संहिता के 22वें अध्याय में सूर्यचार का कथन है तथा यह प्रकरण बाराही संहिता के तीसरे अध्याय में आया है। भद्रबाहुसंहिता (22; 2) में बताया गया है कि अच्छी किरणों वाला, रजत के समान कान्तिवाला, स्फटिक के समान निर्मल, महान् कान्ति वाला सूर्य राजकल्याण और सुभिक्ष प्रदान करता है। बाराही-संहिता (3; 40) में आया है कि निर्मल, गोलमण्डलाकार, दीर्घ निर्मल किरण वाला, विकाररहित शरीर वाला, चित्र रहित मण्डलवाला जगत् का कल्याण करता है। दोनों की तुलना करने से दोनों में बहुत साम्य प्रतीत होता है। सूर्य के वर्ण का कथन करते समय कहा गया है कि अमुक वर्ण का सूर्य इष्ट वा अनिष्ट करता है। इस प्रकरण में भद्रबाहुसंहिता (22; 3-4, 16-17) और बाराहीसंहिता (3; 25, 29, 30) में बहुत कुछ साम्य है। अन्तर इतना ही है कि बाराहीसंहिता में इस प्रकरण का विस्तार किया गया है, पर भद्रबाहु संहिता में संक्षेप रूप से ही कथन किया गया है।

चन्द्रचार का कथन भद्रबाहुसंहिता के 23वें अध्याय में और बाराहीसंहिता के चौथे अध्याय में आया है। भ० सं० (23; 3, 4) में चन्द्र शृंगान्ति का जैसा विवेचन किया गया है, लगभग वैसा ही विवेचन बाराही संहिता (4; 16) में भी मिलता है। भद्रबाहुसंहिता (23; 15-16) में ऋस्व, रूद्ध और काला चन्द्रमा भयोत्पादक तथा रिनमध्य, शुक्ल और मुन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक माना गया है। श्वेत, पीत, सम और कृष्ण वर्ण का चन्द्रमा क्रमशः ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिए भुखद माना गया है। मुन्द्र चन्द्र सभी के लिए सुखदायक होता है। बाराही संहिता (4; 29-30) में बताया गया है कि भस्म-तुल्य रूप्ता, अरुण वर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण चन्द्रमा भयकारक एवं संभ्राम-सूचक होता है। हिमकण, कुन्दपुष्प, स्फटिकगणि के समान चन्द्रमा जगत् का कल्याण करने वाला होता है। उपर्युक्त दोनों वर्णन तुल्य हैं। भद्रबाहुसंहिता में चन्द्र शृंगान्ति का उतना विस्तार नहीं है, जितना विस्तार बाराही संहिता में है। तिथियों के अनुगार विकृत वर्ण के चन्द्रमा वा जितना विस्तृत फलादेश भद्रबाहु संहिता (23; 9-14) में आया है, उतना बाराही संहिता में नहीं। इसी प्रकार चन्द्रमा में अन्य ग्रहों के प्रवेश का कथन भद्रबाहु संहिता (23; 17-19) में अपने ढंग का है। चन्द्रमा की दीथियों का कथन भ० सं० (22; 25-30) में है, यह

कथन वाराह के कथन से भिन्न है।

गृहयुद्ध की चर्चा भ० सं० के 24वें अध्याय में और वाराही संहिता के 17वें अध्याय में आयी है। इस विषय का निरूपण जितना विस्तार के साथ वाराही संहिता में आया है, उतना भद्रबाहु संहिता में नहीं। यद्यपि भद्रबाहु संहिता के इस प्रकरण में 43 श्लोक हैं और वाराही संहिता में 27 श्लोक; परं विषय का प्रतिपादन जितना जमकर वाराही संहिता में हुआ है, उतना भद्रबाहु संहिता में नहीं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भद्रबाहु संहिता विषय एवं भाषाशैली की दृष्टि उतनी व्यवस्थित नहीं है, जितनी वाराही संहिता। भद्रबाहु संहिता के दो-चार स्थल विस्तृत अवश्य हैं, परं एकाधि स्थल ऐसे भी हैं, जो स्पष्ट नहीं हुए हैं, जहाँ कुछ और कहने की आवश्यकता रह गयी है। एक बात यह भी है कि भद्रबाहु संहिता में कथन की पुनरुक्ति भी पायी जाती है। छन्दोभंग, व्याकरणदोष, गिरिधिता एवं विषय विवेचन में अक्रमता आदि दोष प्रचुर मात्रा में वर्तमान हैं। फिर भी इतना सत्य है कि निमित्तों का यह संकलन किन्हीं दृष्टिरूपों से वाराही संहिता की ओरेका उत्कृष्ट है। स्वप्न निमित्त एवं यात्रा निमित्तों का वर्णन वाराही संहिता की अपेक्षा अच्छा है। इन निमित्तों में विषय सामग्री भी प्रचुर परिणाम में दी यदी है।

भद्रबाहु संहिता का ज्योतिष शास्त्र में महत्त्वपूर्ण स्थान माना जायगा। 'वसन्तराज शाकुन' और 'अद्भूत सागर' जैसे संकलित ग्रन्थ विषय विवेचन की दृष्टि से आज महत्त्वपूर्ण माने जाने हैं। इन ग्रन्थों में निमित्तों का सांगोषांग विवेचन विद्यमान है। प्रस्तुत भद्रबाहु संहिता भी जितने अधिक विषयों का एक साथ परिचय प्रस्तुतत करती है, उतने अधिक विषयों से परिचित करने वाले ग्रन्थ ज्योतिष शास्त्र में भरे पड़े हैं। फिर भी वाराही संहिता के अतिरिक्त ऐसा एक भी ग्रन्थ नहीं है, जिसे हम भद्रबाहुसंहिता की तुलना के लिए ले गके। जैन-ज्योतिष के ग्रन्थ तो अभी बहुत ही काग उपलब्ध हैं और जो उपलब्ध भी हैं उनका भी प्रकाशन अभी शेष है। अतः जैन-ज्योतिष-संहित्य में इस ग्रन्थ की समता करने वाला कोई ग्रन्थ नहीं है। प्रश्नांग पर जैनाचार्यों ने बहुत कुछ लिखा है, परं अष्टांग निमित्त के गम्बन्ध में इस एक ही ग्रन्थ में बहुत लिखा गया है।

अष्टांग निमित्त का सांगोषांग वर्णन इसी अकेले ग्रन्थ में है। अभी इस ग्रन्थ का जितना भाग प्रकाशित किया जा रहा है, उतने में सभी निमित्त नहीं आते हैं। लक्षण और वर्जन विलक्षण छुटे हुए हैं। परन्तु इस ग्रन्थ के आद्योषान्त अवलोकन से ऐसा लगता है कि इसके अखण्डत ये दो निमित्त भी अवश्य रहे होंगे तथा वास्तु—प्रामाद, मूर्ति आदि के सम्बन्ध में भी प्रकाश ढाना गया होगा। संक्षेप में हम इतना ही कह सकते हैं कि जैनेतर ज्योतिष में वाराही संहिता का जो स्थान

है, वही स्थान जैन-ज्योतिष में भद्रबाहुसंहिता का है। निमित्त ज्ञान के विषय को इतने विस्तार के साथ उपस्थित करना इसी ग्रन्थ का कार्य है।

भद्रबाहु संहिता के रचयिता और उनका समय

इस ग्रन्थ का रचयिता कौन है और इतनी रचना कब हुई है, यह अत्यन्त विचारणीय है। यह ग्रन्थ भद्रबाहु के नाम पर लिखा गया है, क्या सचमुच में द्वादशांगवाणी के ज्ञाता श्रुतकेवली भद्रबाहु इसके रचयिता हैं या उनके नाम पर यह रचना किसी दूसरे के द्वारा लिखी गयी है। परम्परा से यह बात प्रमिद्ध चली आ रही है कि भगवान् वीतरामी, सर्वेज गायित निमित्तानुसार श्रुतकेवली भद्रबाहु ने किसी निमित्त ज्ञास्त्र की रचना को थी; किन्तु आज यह निमित्त ज्ञास्त्र उपलब्ध नहीं है। श्रुतकेवली भद्रबाहु की ० नि० सं० १५५ में स्वर्गस्थ हुए, इनके ही शिष्य सम्राट् गुरु थे। मगथ में बारह वर्ष के पड़ने वाले दुष्काल को अपने निमित्त ज्ञान से जानकर ये संबंधी दक्षिण भारत की ओर ले गये थे और वहीं इन्होंने समाधि ग्रहण की थी। अतः दिगम्बर जैन साधुओं की स्थिति बहुत समय तक दक्षिण भारत में रही। कुछ साथु उत्तर भारत में ही रह गये, समय दोष के कारण जब उनकी चर्या में बाधा आने लगी तो उन्होंने वस्त्र धारण कर लिये तथा अपने अनुकूल तिथियों का भी निर्णय लिया। दुष्काल के समाप्त होने पर जब मुनिसंघ दक्षिण रो वास्त्र लौटा, तो उसने यहाँ रहने वाले मुनियों की चर्या की भत्सेना की तथा उन लोगों ने अपने आचरण के अनुकूल जिन ग्रन्थों की रचना की थी उन्हें अमात्य घोषित किया। इसी समय से श्वेताम्बर सम्प्रदाय का विकास हुआ। वे जियिलाचारी मुनि ही वस्त्र धारण करने के कारण श्वेताम्बर सम्प्रदाय के प्रबत्तक हुए। भगवान् महाकीरण के समय में जैन सम्प्रदाय एक था; किन्तु भद्रबाहु के अनन्तर यह सम्प्रदाय दो टुकड़ों में विभक्त हो गया। उक्त भद्रबाहु श्रुतकेवली को ही निमित्तज्ञास्त्र का ज्ञाता माना जाता है, क्या वहीं श्रुतकेवली इस ग्रन्थ के रचयिता हैं? इस ग्रन्थ को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भद्रबाहु रवामी इसके रचयिता नहीं हैं।

यद्यपि इस ग्रन्थ के आरम्भ में कहा गया है कि पाण्डुगिरि पर स्थित गहारमा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तास्त्री, कल्याणमूर्ति, रोगरहित, द्वादशांग श्रुत के वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यों गे युक्त और तत्त्ववेदियों में निपुण आचार्य भद्रबाहु को सिर में नगरसार कर उनसे निमित्तज्ञास्त्र के उपदेश देने की प्रार्थना की।

तत्रासीनं महात्मानं ज्ञानविज्ञानसागरम् ।
 तथोयुक्तं च शेषांसं भद्रबाहुं निराधर्यम् ॥
 द्वादशांगत्य वेत्तारं नैर्गंयं च महाद्युतिम् ।
 वृत्तं शिष्ये प्रजिष्ठ्यैश्च निष्पुणं तत्त्ववेदनाम् ॥
 प्रणम्य शिरसाऽऽच यंसूचुः शिष्यास्तदा गिरम् ।
 सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यज्ञानं बभूतस्वः ॥

(अ० सं० अ० १ श्लोक 5-7)

द्वितीय अध्याय के अद्दरम्भ में बताया गया है कि शिष्यों के प्रश्न के पश्चात् भगवान् भद्रबाहु कहने लगे—

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्बासाः अमणोत्तमः ।
 यथावस्थासु विन्यासं द्वादशांगविशारदः ॥
 भवद्भिर्यथाह पृष्ठो निमित्तं जिनभाषितम् ।
 समासव्यासतः सर्वं तनिवोध यथाविधि ॥

इस वाक्यम् ने यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी रचना श्रुतकेवली भद्रबाहु ने की होगी । परन्तु ग्रन्थ के आगे के हिस्से को देखने से निराशा होती है । इस ग्रन्थ के अनेक रथानों पर 'भद्रबाहुवचो यथा' (अ० ३ श्लो० 64; अ० ६ श्लो० 17; अ० ७ श्लो० 19; अ० ९ श्लो० 26; अ० १० श्लो० 16, 45, 53; अ० ११ श्लो० 26, 30; अ० १२ श्लो० 37; अ० १३ श्लो० 74, 100, 178; अ० १४ श्लो० 54, 136; अ० १५ श्लो० 37, 73, 128) लिखा मिलता है । इसमें राहज में अनुमान लिया जा सकता है कि यह रचना भद्रबाहु के वचनों के आधार पर किसी अन्य विद्वान् ने लिखी है । इस ग्रन्थ के पुष्पिका वाक्यों में 'भद्रबाहुके निमित्ते', 'भद्रबाहुसंहितायाँ', 'भद्रबाहु निभित्तशास्त्रे' लिखा मिलता है । ग्रन्थ की उत्थानिका में जो श्लोक आये हैं, उनसे निम्न प्रकाश पढ़ता है—

1. इस ग्रन्थ की रचना मगध देश के राजगृह नामक नगर के निकटवर्ती पाण्डुगिरि पर राजा सेनगिरि के राज्यकाल में हुई होगी ।

2. यह ग्रन्थ मर्वेश कथित वचनों के आधार पर भद्रबाहु स्वामी ने अपने दिव्य ज्ञान के बल से लिखा ।

3. राजा, भिक्षु, आवक एवं जन-साधारण के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गयी ।

4. दस ग्रन्थ के रचयिता भद्रबाहु स्वामी दिग्म्बर आम्नाय के अनुयायी थे ।

जिस प्रकार मनुस्मृति की रचना स्वयं मनु ने नहीं की है, वृत्तिक मनु के वचनों के आधार पर की गयी है; फिर भी वह मनु के नाम से प्रसिद्ध है तथा मनु के ही विचारों का प्रतिनिधित्व करती है । उस रचना में भी मनु के वचनों का

कथन मिलता है। इसी प्रकार भद्रबाहुसंहिता स्वयं भद्रबाहु की न होकर, भद्रबाहु के वचनों का प्रतिनिधित्व करती है।

ग्रन्थ की उत्थानिका में आये हुए सिद्धान्तों पर विचार करने से जात होता है कि उत्थानिका के कथन में ऐतिहासिक दृष्टि से विरोध आता है। भद्रबाहु स्वामी चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में हुए, जब कि मगध की राजधानी पाटलिपुत्र में थी। सेनजित् या प्रसेनजित् महाराज श्रेणिकु या बिष्वसार के पिता थे। इनके समय में और चन्द्रगुप्त के समय में लगभग 140 वर्षों का अन्तराल है, अतः श्रुतकेवली भद्रबाहु तो इस ग्रन्थ के रचिता नहीं हो सकते हैं। हाँ, उनके वचनों के अनुसार किसी अन्य विद्वान् ने इस ग्रन्थ की रचना की होगी।

'जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास' में देसाई ने इस ग्रन्थ का रचयिता वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु को माना है। जैस प्रकार वराहमिहिर ने वृहत्संहिता या बाराही संहिता की रचना की, उसी प्रकार भद्रबाहु ने भद्रबाहुसंहिता की रचना की होगी। वराहमिहिर और भद्रबाहु का सम्बन्ध राजशेखरकृत प्रबन्धकोण (चतुविशतिप्रबन्ध) से भी सिद्ध होता है। यह अनुमान स्वाभाविक रूप से संभव है कि प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु भी ज्योतिज्ञानी रहे होंगे। कहा जाता है कि वराहमिहिर के पिता भी अच्छे ज्योतिषी थे। वृहजातक में स्वयं वराहमिहिर ने बताया है कि कालपी नगर में सूर्य से वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिषशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। इससे सिद्ध है कि इनके बंश में ज्योतिषशास्त्र के पठन-पाठन का प्रचार था और यह इनकी विद्या बंशगत थी। अतः इनके भाई भद्रबाहु द्वारा रचित कोई ज्योतिष प्रन्थ हो सकता है। पर यह सत्य है कि यह भद्रबाहु श्रुतकेवली भद्रबाहु से भिन्न हैं। इनका समय भी श्रुतकेवली भद्रबाहु से सेकड़ों वर्ष बाद वा है।

थी प० जुगलकिशोर मुख्तार ने ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भाग में इस ग्रन्थ के अनेक उद्धरण देकार तथा उन उद्धरणों की पारस्परिक असम्बद्धता दिखालाकर यह सिद्ध किया है कि यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ न होकर इधर-उधर के प्रकरणों का बेढ़गा संग्रह है। उन्होंने अपने वक्तव्य का निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है—“यह खण्डत्रयात्मक ग्रन्थ (भद्रबाहुसंहिता) भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ नहीं है, न उनके किसी शिष्य-प्रशिष्य का बनाया हुआ है और न विक्रम सं० 1657 के पहले का बनाया हुआ है, बल्कि उक्त संबत् के पीछे का बनाया हुआ है।” मुख्तार साहब का अनुमान है कि ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषणजी की कृष्ण का यह एकामात्र फल है। उनका अभिमत है, “बही उस समय इस ग्रन्थ के सबं सत्त्वाभिकारी थे। उन्होंन वामदेव सरदेख अपने किसी कृपापात्र या आत्मीयजन के द्वारा इसे तैयार कराया है अथवा उसकी सहायता से स्वयं तैयार किया है। तैयार हो जाने पर जब इसके दो-चार अध्याय किसी को पढ़ने

के लिए दिये गये और वे किसी कारण से वापस न मिल सके तब वामदेवजी को दुबारा उनके लिए परिधम करना पड़ा ; जिसके लिए प्रशस्ति का यह वाक्य ‘यदि वामदेवजी फेर शुद्ध करि लिखो तैयार करी’ खासतौर से ध्यान देने योग्य है और इस बात को सूचित करता है कि उक्त अध्यायों को पहले भी वामदेव जी ने ही तैयार किया था । मालूम होता है कि लेखक ज्ञानभूषणजी धर्मभूषण भट्टारक के परिचित व्यक्तियों में से थे और आश्चर्य नहीं कि वे उनके शिष्यों में भी थे । उनके द्वारा खास तौर से यह प्रति लिखवायी गयी है ।”

थद्वेय मुख्तार साहव के उपर्युक्त उल्लेख है कि उपर्युक्त पुष्टि में यह ग्रन्थ । 7वीं शताब्दी का है तथा इसके लेखक ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषण या उनके द्वारा लिखा गया है । मुख्तार साहव ने अपने कथन की पुष्टि के लिए इस ग्रन्थ के जितने भी उद्धरण लिये हैं, वे सभी उद्धरण इस ग्रन्थ के प्रस्तुत 27 अध्यायों के बाहर के हैं । 30वीं अध्याय जो परिशिष्ट में दिया गया है, इससे उस अध्याय की रचना-तिथि पर प्रकाश पड़ता है । इस अध्याय के आरम्भ में 10वें श्लोक में बताया गया है—

पूर्वचार्यव्यया प्रोक्तं दुर्गच्छेत्तदभिर्यथा ।
पृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं चदाम्भस् ॥

इस श्लोक में दुर्गचार्य और पूर्वचार्य के कथन के अनुसार अरिष्टों के वर्णन की बात कही गयी है । दुर्गचार्य का ‘रिष्टसगुच्छय’ नामक एक भूत्य उपलब्ध है । इस ग्रन्थ की रचना लक्ष्मीनिवास राजा के राज्य में कुम्भनगर नामक पहाड़ी नगर के ग्रान्तिनाथ चैत्यालय में गोई है । इसका रचनाकाल 21 जुलाई शुक्रवार ईस्वी सन् 1032 में माना गया है । इस ग्रन्थ में 261 गाथाएँ हैं, जिनका भाव इस तीव्रवें अध्याय में ज्यो-का-त्यों दिया गया है । अन्तर इसना ही है कि रिष्टसगुच्छय जो कथन व्यवस्थित, क्रमबद्ध और प्रभावक है, किन्तु इस अध्याय की निरूपण शैली शिथिल, अक्रमिक और अव्यवस्थित है । विषय दोनों का समान है । इस अध्याय के अन्त में कतिअप श्लोक वाराही संहिता के वस्त्रचलेद नामक 7।वें अध्याय के ज्यो-के-त्यों उद्धृत हैं । केवल श्लोकों के क्रम में व्यतिक्रम कर दिया गया है । अतः यह सत्य है कि भद्रवाहुसंहिता के सभी प्रकरण एक साथ नहीं लिखे गये ।

समग्र भद्रवाहुसंहिता में तीन खण्ड हैं । प्रथम खण्ड में दम अध्याय है, जिसके नाम हैं—चकुर्वर्ण नित्यक्रिया, अक्रिय नित्यकाम, शत्रियधर्म, कृतिसंग्रह, सीमा-निर्णय, दण्डपारसव्य, स्तंभकर्म, स्वीराप्रहृण, दायभाग और प्राप्तिष्ठित । इन दण्डों अध्याय के विषय मनुस्मृति और ग्रन्थों के बाहार से लिखे गये हैं । कतिअप पद्य तो ज्यो-के-त्यों मिल जाते हैं और कतिअप वह उपर्युक्त शिथिल

है। यह समस्त खण्ड नकल किया गया-सा मालूम होता है।

दूसरे खण्ड को ज्योतिष और तीसरे को निमित्त कहा गया है। परन्तु इन दोनों अध्यायों के विषय अधिकास में इतने अधिक सम्बद्ध हैं कि उनका यह भेद उचित प्रतीत नहीं होता है। दूसरे खण्ड के 25 अध्याय, जिनमें उल्का, विद्युत्, गन्धर्वनगर आदि निमित्तों का वर्णन किया गया है, निष्पत्तयतः प्राचीन हैं। छब्बीसवें अध्याय में स्वप्नों का निरूपण किया गया है। इस अध्याय के आरम्भ में मंगलाचरण भी किया गया है।

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुरजन्मेतत्म् ।
स्वप्नाध्यायं प्रवद्यार्पि शुभाशुभसमीरितम् ॥

देव और दानवों के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर को नमस्कार कर शुभाशुभ से पुक्त स्वप्नाध्याय का वर्णन करता है।

इससे जात होता है कि यह अध्याय पूर्व के 24 अध्यायों की रचना के बाद लिखा गया है और इसका रचनाकाल पूर्व अध्याय के रचनाकाल के बाद था होगा।

मुख्तार साहब ने तृतीय खण्ड के श्लोकों की समता मुहूर्त चिन्तामणि, पाराशरी, नीलकण्ठी आदि ग्रन्थों से दिखलायी है और सिद्ध किया है कि इस खण्ड का विषय नया नहीं है, संग्रहरूता ने उक्त ग्रन्थों में श्लोक लेखार तथा उन श्लोकों में जहाँ-तहाँ शुद्ध या अशुद्ध रूप में परिवर्तन करके अव्यवसित रूप में संकलन किया है। अतः मुख्तार साहब ने इस ग्रन्थ का रचना काल 17वीं ज्ञाताव्दी माना है।

इस ग्रन्थ के रचना-काल के माध्यम्भ में गुनि जिनविजयजी ने मिथ्यी जैव ग्रन्थ माला से प्रकाशित भद्रबाहुभंहिता के किञ्चित् प्रास्तावित में लिखा है - “ते विषे म्हारो अभिप्राय जरा जुदो छे हुं एने पंदरमी सदीनी पछीनी रचना नथी समजतो ओछामाँ ओछी 12सो सदी जेटलो जूनी तो ए कृति छेज, एवो म्हारो साधार अभिमत थाय छे, म्हारा अनुमाननो आधार ए प्रमाणे छे - पटणना वाडी पाइर्वनाथ भण्डार माँथी जे प्रति म्हने मली छे ते जिनभद्र सूरिना समयमाँ - एटले के बि० सं० 1475-85 वा अरसामाँ लखाएली छे, एम हुं मानुं छुं कारण के ए प्रतिमा आकार-प्रकार, लखाण, पत्रांक आदि बधा संकेतो जिनभद्रसूरिए लखादेला सेंकडो ग्रन्थ तो तहन मलता अनेतेज स्वरूपता छे, जेम म्हे ‘विज्ञप्ति त्रिवेणि, ती म्हारी प्रस्तावनामाँ म्होटा ग्रन्थ-भण्डारो स्थापन कर्या हुताँ अने तेताँ, तेमणे नष्ट यताँ जुनाँ एवाँ सेंकडो ताडपत्रीय पूतकोनी प्रतिलिपिओ कागल उपर उत्तराद्वी-उत्तराद्वी ने नूतन पुस्तकोंनो संग्रह कर्यो हुतो, ए भंडारमाँथी मलेली

भद्रबाहु संहितानी उक्त प्रति वर्ण एज रीते कोई प्राचीन साडपत्रनी प्रतिलिपि रूपे उत्तररेली छे, कारण के, ए प्रतिमाँ ठेकठेकाए एवो केटलीय पंक्तिओ दृष्टिशोच्चर थाय छे, जेमौलहियाए पोताने मलली आदर्श प्रतिमर्य उपलब्ध थता खंडित के त्रुटित शब्दो अने बाक्ष्यो माटे, पाठलथी कोई तेनी पूर्ति करी शके ते सार्हे ॥ आ जातनी अक्षरविहीन मात्र शिरोरेखाओ दोरी मुकेली छे, एनो अर्य ए छे के ए प्रतिना लहियाने जे ताडपत्रीय प्रति मलीहती ते विशेष जीर्ण थएली होक्ती जोईए अने तेमाँ से ते स्थजना लखण्यना व्रक्षरो, नान्दपत्रोनो किन्तरो लटी गडवाई नता रहेला के भुसाई गएला होवा जोईए-ए उपरथी एवं अनुमान सहेजे करी शकाय के ते जूनी ताडपत्रीय प्रति पर्ण ठी ठीक अवस्थाए पहोची गएली होक्ती जोईए, आ रीते जिनभद्र सूरिना समयमाँ जो ए प्रति 300-400 बर्षो जेटली जूनी होय - अने ते होवानो विशेष संभव लेज—तो सहेजे ते मूलं प्रति विक्रमना ॥ ११। १२। सेका जेटली जूनी होई शके । पाठण अने जेसलमेरना जूना भंडारोमाँ आवी जातनी जीर्ण-शीर्ण यएली ताडपत्रीय प्रतिथो तेमज्ज तेमना उपरथी उतारदामाँ आदेली कागलनी सेकडो प्रतियो म्हारा जोवामाँ आवीछे ।”

इस नम्ब्रे कथन से आप ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भद्रबाहुसंहिता का रचनाकाल ११-१२ शताब्दी से अवधीन नहीं है । यह ग्रन्थ इससे प्राचीन ही होगा । मूनिजी का अनुमान है कि इस ग्रन्थ का प्रचार जैन साधुओं और गृहस्थों में अधिक रहा है, इसी कारण इसके पाठान्तर अधिक मिलते हैं । इसके रचयिता कोई प्राचीन जैनाचार्य है, जो भद्रबाहु से भिन्न है । मूल ग्रन्थ प्राकृत भाषा में लिखा गया था, पर किसी कारण वर्ण आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है । यत्र-तत्र प्राप्त गीतिशया विभिन्न रूप में प्राचीन गाथाओं को लेकर उनका संस्कृत रूपान्तर कर दिया है । जिन विषयों के प्राचीन उद्धरण नहीं मिल सके, उन्हें वाराही संहिता, मृगुनी चित्तामणि आदि ग्रन्थोंमें लेकर किसी भट्टारक या यति ने संकलित कर दिया ।

श्री मुकुमार साहव, गृनिश्री गितविजय जी तथा प्रो० अमृतलाल मावचंद गोपणी आदि सहानुभावों के कथनों पर विचार करते तथा उपलब्ध ग्रन्थ के अवलोकन थे हमारा अपना मत यह है कि इस ग्रन्थ का विषय, रचना शैली और वर्णनकार वाराही संहिता में प्राचीन है । उल्का प्रकरण में वाराहीसंहिता की अवधारणा नवीनता है, और यह नवीनता ही प्राचीनता का संकेत करती है । अतः उपर्युक्त ग्रन्थ के २५ अध्यावो का, किसी व्यक्ति ने प्राचीन गाथाओं के वाराहन पर किया होगा । बहुत संभव है कि भद्रबाहु स्वामी वी कोई रूपना इस प्रकार की रही होगी, जिसका प्रतिपाद्य विषय निमित्तशास्त्र है । अतः एवं मनुष्यानि के नमान भद्रबाहु संहिता का संकलन भी किसी भाषा तथा विषय वी द्वारा विद्युत्पन्न व्यक्ति ने किया है । निमित्तशास्त्र के महाविद्वान् भद्रबाहु

की मूल कृति आज उपलब्ध नहीं है, पर उनके बचनों का कुछ रार अवश्य विद्यमान है। इस रचना का संकलन 8-9वीं शती में अवश्य हुआ होगा।

हाँ, यह सत्य है कि इस ग्रन्थ में प्रक्षिप्त अंश अधिक बढ़ते गये हैं। इनमा प्रथम खण्ड भी पीछे से जोड़ा गया है तथा इसमें उत्तरोत्तर परिवर्द्धन और संवर्द्धन किया जाता रहा है। द्वितीय खण्ड का स्वप्नाध्याय भी अर्वाचीन है तथा इसमें 28, 29 और 30 वें अध्याय तो और भी अर्वाचीन हैं। अतएव यह स्वीकार करने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं है कि इस ग्रन्थ का प्रणयन एक समय पर नहीं हुआ है। विभिन्न समय पर विभिन्न विद्वानों ने इस ग्रन्थ के कलेवर को बढ़ाने की चेष्टा की है। “भद्रबाहुवचो यथा” का प्रयोग प्रमुख रूप से 15वें अध्याय तक ही मिलता है। इसके आगे इस वाक्य का प्रयोग बहुत बहुत हुआ है, इससे भी पता चलता है कि संभवतः 15 अध्याय प्राचीन भद्रबाहु संहिता के आधार पर लिखे गये होंगे। और संहिता ग्रन्थों की परम्परा में रखने के लिए या इसे बाराही संहिता के समान उपयोगी और ग्राह्य बनाने के लिए, आगे बालं अध्यायों वा कलेवर बढ़ाया जाता रहा है। श्री मुख्तार साहव ने जो अनुमान लगाया है कि खालियर के भट्टारक धर्मभूषण जी की कृपा का यह फल है तथा वामदेव ने या उनके अन्य किसी शिष्य ने यह ग्रन्थ बनाया है, वह पूर्णतया सही तो नहीं है। इस अनुमान में इतना अंश तथ्य है कि कुछ अध्याय उन लोगों की कृपा से जोड़े गये होंगे या परिवर्द्धित हुए होंगे। इस ग्रन्थ के 15 अध्याय तो निश्चयतः प्राचीन हैं और ये भद्रबाहु के बचनों के आधार पर ही लिखे गये हैं। शैली और श्रम 25 अध्यायों तक एक-सा है, अतः 25 अध्यायों को प्राचीन माना जा सकता है।

भद्रबाहुसंहिता का प्रचार जैन सम्प्रदाय में उतना अधिक था, जिससे यह श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायों में समान रूप से समादृत थी। इसकी प्रतियाँ पूना, पाटण, बम्बई, हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञान भर्तिर पाटण, जैन सिद्धान्त भवन आरा आदि विभिन्न स्थानों पर पायी जाती हैं। पूना की प्रति में 26वें अध्याय के अन्त में वि० स० 1504 लिखा हुआ है और समस्त उपलब्ध प्रतियों में यही प्रति प्राचीन है। अतः इस सत्य से कोई इनकार नहीं कर सकता है कि इसकी रचना वि० स० 1504 से पहले हो चुकी थी। श्री मुख्तार साहव का अनुमान इस लिपिकाल से खंडित हो जाता है और उन 26 अध्यायों की रचना इसी सत् की पन्द्रहवीं शती के पहले हो चुकी थी। इस ग्रन्थ के अत्यधिक प्रचार का एक सबल प्रमाण यह भी है कि इसके पाठान्तर इतने अधिक मिलते हैं, जिससे इसके निश्चित स्वरूप के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जैन भिड्डान्त भवन आरा की दोनों प्रतियों में भी पर्याप्त पाठ-भेद मिलता है। अतः इस ग्रन्थ को सर्वथा ऋषि या कल्पित मानना अनुचित होगा। उसका प्रचार उतना अधिक

बहुलता है। इन्हीं प्रतिपत्ति अंशोंने इस ग्रन्थ की मौलिकता को तिरोहित कर दिया है। अतः यह भद्रबाहु के वचनों के अनुसार उनके किसी शिष्य या प्रशिष्य अथवा परम्परा के किसी अन्य दिग्म्बर विद्वान् द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है। इसके आरम्भ के 25 अध्याय और विशेषतः 15 अध्याय पर्याप्त प्राचीन हैं। यह भी सम्भव है कि इनकी रचना वराह-मिहिर के पहले भी हुई हो।

भाषा की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यन्त सरल है। व्याकरण सम्मत भाषा के प्रयोगों की अवहेलना की गई है। छन्दोभंग तो लगभग 300 श्लोकों में है। प्रत्येक अध्याय में कुछ पद्य ऐसे अवश्य हैं जिनमें छन्दोभंग दोष है। व्याकरण दोष लगभग 125 पद्यों में विद्यमान है। इन दोषों का प्रधान कारण यह है कि ज्योतिष और वैद्यक विषय के ग्रन्थों में प्रायः भाषा सम्बन्धी शिखिलता रह जाती है। वराही संहिता जैसे श्रेष्ठ ग्रन्थ में व्याकरण और छन्द दोष हैं, पर भद्रबाहु संहिता की अपेक्षा कम।

सम्पादन और अनुवाद

इस ग्रन्थ का सम्पादन 'शिखी जैन ग्रन्थ गाला' में मुद्रित प्रति तथा जैन सिद्धान्त भवन आशा भी दो हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर हुआ है। एक प्रति पूज्य आचार्य महावीरकीर्ति जी में भी प्राप्त हुई थी। मुद्रित प्रति में और जैन सिद्धान्त भवन की प्रतियों में बहुत अन्तर था। कई श्लोक भवन की प्रतियों में मुद्रित प्रति की अपेक्षा अधिक निकले। भवन की दोनों प्रतियों भी आपस में भिन्न थीं तथा आचार्य महावीरकीर्ति जी की हस्तलिखित प्रति भवन की प्रतियों वी अपेक्षा कुछ भिन्न तथा मुद्रित प्रति में उल्लिखित बम्बई वी प्रति से बहुत कुछ अंशों में समान थी। प्रस्तुत गंस्करण में भवन वी छ/174 प्रति का पाठ ही रखा गया है। प्रस्तुत प्रति में मुद्रित प्रति वी अपेक्षा अनेक विशेषताएँ हैं। कुछ पाठान्तर तो इतने अच्छे हैं जिसमें प्रकरणसत अर्थ स्पष्ट होता है और विषय का विवेचन भी स्पष्ट हो जाता है। हमने मु० के द्वारा मुद्रित प्रति के पाठ को सूचित किया है। मु० A से हमारा संकेत यह है कि आचार्य महावीरकीर्ति जी की प्रति में वह पाठ मिलता है। आचार्य महावीरकीर्ति की प्रति उनके हाथ से स्वयं कहीं से प्रतिलिपि की गयी थी और उसमें अनेक स्थलों पर वर्णन में पाठान्तर भी दिये गये थे। यह प्रति हमें 15 अध्याय तक मिली तथा इसके आगे एक दूसरे रजिस्टर में 30वाँ अध्याय और एक पृथक् रजिस्टर में कुछ फुटकर शकुन और निभित्त सम्बन्धी श्लोक लिखे थे। फुटकर श्लोकों में अध्याय का संकेत नहीं किया गया था, अतः हमने उन श्लोकों को उस ग्रन्थ में स्थान नहीं दिया। 35वें अध्याय को परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। उपर्योगी विषय होने के बारण इस अध्याय को भी अनुवाद सहित दिया

जा रहा है।

जिस प्रस्ति का पाठ इस ग्रन्थ में रखा गया है, उसके मात्र 27 अध्याय ही हमें उपलब्ध हुए हैं। भवन की दूसरी प्रति में 26 अध्याय हैं। दोनों ही प्रतियों के देखने से ऐसा लगता है कि इनकी प्रतिलिपि विभिन्न प्रतियों से की गयी है। ग्रन्थ समाप्ति सूचक कोई चिह्न या पुष्टिका नहीं दी गयी है, अतः प्रतिलिपि-काल की जानकारी नहीं हो सकी।

अनुवाद के पश्चात् प्रत्येक अध्याय के अन्त में विवेचन लिखा गया है। विवेचन में वाराही संहिता, अद्भुतशास्त्र, वसन्तराज शाकुन, मुहर्त्तमणवति, वर्षप्रबोध, वृहत्पाराशारी, रिष्टसमुच्चय, केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि, नरपतिजयचर्या, भविष्यज्ञान ज्योतिष, एव रोडे एस्ट्रोलाजी, केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, ज्योतिषसिद्धान्तसार संग्रह, जातक क्रोडपत्र, चन्द्रोन्मीलनप्रश्न, ज्ञानप्रदीपिका, दैवज्ञकामधेनु, ऋषिपूत्रनिमित्तशास्त्र, वृहदज्योतिषपाणीव, भुवनदीपक एवं विद्यामाधवीय का आधार लिया गया है। विवेचन में उद्धरण कहीं से भी उद्धृत नहीं किये हैं। अध्ययन के बल से विषय को पचाकर तत्त्वत् प्रकरण से विषय से सम्बद्ध विवेचन लिखा गया है। विषय के स्पष्टीकरण की दृष्टि से ही यह विवेचन उपयोगी नहीं होगा, बल्कि विषय का सार्वोपांग अध्ययन करने के लिए उपयोगी होगा। प्रत्येक प्रकरण पर उपलब्ध ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर निचोड़ रूप में विवेचन लिखा गया है। यद्यपि इस विवेचन को ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से संक्षिप्त करने की पूरी चेष्टा की गयी है; फिर भी सैकड़ों ग्रन्थों का सार एक ही जगह प्रत्येक प्रकरण के अन्त में मिल जायगा। अन्य ज्योतिर्वेत्ताओं का उस प्रकरण के सम्बन्ध में जो नया विचार मिला है उसे भी विवेचन में रखा दिया गया है। पाठक एक ही ग्रन्थ में उपलब्ध समस्त संहिताशास्त्र का सार भाव प्राप्त कर सकेगा, पेरु सा हमारा पूर्ण विश्वास है।

अनुवाद तथा विवेचन में समस्त पारिभाषिक शब्दों को स्पष्ट कर दिया गया है। पारिभाषिक शब्दों पर विवेचन भी लिखा गया है। अतः पृथक् पारिभाषिक शब्दसूची नहीं दी जा रही है। यतः शब्दसूची पुनरावृत्ति ही होगी।

अनुवाद में शब्दार्थ की अपेक्षा भाव को स्पष्ट करने की अधिक चेष्टा की गयी है। सम्बद्ध श्लोकों का अर्थ एक साथ लिखा गया है। इस ग्रन्थ वा हिन्दी अनुवाद अभी तक नहीं हुआ। तथा विषय की दृष्टि से इसका अनुवाद करना आवश्यक था। ज्योतिष विषयक जिमितों की जानकारी के लिए इसका हिन्दी अनुवाद अधिक उपयोगी होगा। संहिताशास्त्र के समग्र विषयों की जानकारी इस एक ग्रन्थ से ही सकती है।

आत्म-निवेदन

भद्रबाहु संहिता का अनुवाद करने की बलबती इच्छा केवलज्ञान प्रश्नचूडामणि के अनुवाद के अनन्तर ही उत्पन्न हुई। सन् 1956 में इस कार्य को हाथ में लिया। जैन सिद्धान्त भवन, आरा की दोनों हस्तलिखित प्रतियों का मिलान मुद्रित प्रति से करने के पश्चात् यह निश्चय किया कि ख / 174 प्रति का पाठ अधिक उपयोगी है, अतः इसे ही मूल पाठ मानकर अनुवाद कार्य किया जाय। इधर-उधर के अनेक व्यासंगों के कारण कार्य मन्थर गति से चलता रहा। ही, सदा की प्रवृत्ति के अनुसार ग्रन्थ का कार्य समाप्त करके भारतीय ज्ञानपीठ के मन्त्री श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय की सेवा में इसे अवलोकनार्थ भेज दिया। उन्होंने अपनी कार्य प्रणाली के अनुसार ग्रन्थमाला के सम्पादक डॉ० हीरालाल जी जैन, निर्देशक प्राकृतिक जैन विद्वानीठ, मुजफ्फरगुर तथा डॉ० ए० एन० उपाध्ये कोलहापुर के यहाँ इस ग्रन्थ की पाण्डुलिङ्गि को भेज दिया। कुछ समय के पश्चात् डॉ० हीरालाल जी साहब का एक सूचना पत्र मिला और उनकी सूचनाओं के अनुसार संशोधन, परिवर्तन कर पुनः ग्रन्थ को ज्ञानपीठ भेज दिया।

मैं ग्रन्थमाला के सम्पादक उपर्युक्त डॉ० द्रुष्ट का अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के प्रकाशन का अवसर तथा अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। श्री अयोध्या प्रसाद जी गोयलीय, मन्त्री भारतीय ज्ञानपीठ, काशी का भी कृतज्ञ हूँ, जिनकी उत्साहवर्धक प्रेरणों से सर्वदा साहित्य-सेवा के लिए मिलती रहती हैं। परामर्श रूप में सहायता देने वाले विद्वानों में आचार्य श्री राममोहनदास जी एम० ए० संस्कृत और प्राकृत विभागाध्यक्ष हरप्रसाद जैन कालेज, आरा; प० लक्ष्मणजी विपाठी व्याकरणाचार्य, राजकीय संस्कृत विद्यालय आरा, श्री प्रेमचन्द्र जैन साहित्याचार्य बी० ए० ह० दा० जैन स्कूल, आरा एवं श्री अमरचन्द्र तिवारी, आमरा प्रभृति विद्वानों का आभारी हूँ। प्रूफ-संशोधन श्री प० महादेवी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने किया है। मैं आपका भी अत्यन्त आभारी हूँ।

श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा के विशाल ग्रन्थागार से विवेचन लिखने के लिए सेवाओं ग्रन्थों का उपयोग किया, अतः भवन का आभार स्वीकार करना परमावश्यक है।

प्रूफ में कई गलियाँ छूट गयी हैं, विज्ञ पाठक संशोधन कर लाभ उठायें। इसमें प्रूफ संशोधन का दोष नहीं है; दोष मेरा है, यतः मेरी लिपि कुछ अस्पष्ट और अवाच्च छोटी है, जिससे प्रूफ सम्बन्धी त्रुटियाँ रह जाना आवश्यक है। सम्पादन, अनुवाद और विवेचन में प्रमाद एवं अज्ञानतावश अनेक त्रुटियाँ रह गयी होंगी, बृगालु पाठक उनके लिए क्षमा करेंगे। यह भद्रबाहु संहिता का प्रथम भाग ही है।

अवशेष मिल जाने पर दूसका द्वितीय भाग सानवाद और सविवेचन प्रकाशि।

किया जायगा। वर्धोंकि ज्योतिष और निमित्त शास्त्र की दृष्टि से यह ग्रन्थ उपयोगी है। जिन कृपालु पाठकों के पास या उनकी जानकारी में इसके अवशेष अध्याय हों, वे सूचित करने का काला करेंगे।

हरप्रसाद दास जैन कालेज, आरा }
संस्कृत एवं प्राकृत विभाग }
11-10-1958

नेमिचन्द्र शास्त्री

विषयानुक्रम

पहला अध्याय	
मंगलाचरण	1
रचना का उद्देश्य	1
प्रतिपाद्य विषयों की तालिका	3
विवेचन	4
दूसरा अध्याय	
विकार का स्वरूप	16
उत्पत्ति का स्वरूप	16
उल्काओं की उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृति के वर्णन का निश्चय	16
उल्का का स्वरूप	17
उल्का के विकार	17
शुभ और अशुभ उल्काएँ	17
विवेचन	18
तीसरा अध्याय	
उल्काओं द्वारा नक्षत्र-ताड़न का फल	21
नील वर्ण, बिखरी हुई, सिह-व्याघ्र आदि विभिन्न आकार की उल्काएँ	21
अग्रभाग आदि के अनुसार उल्काओं के गिरने का फल	22
स्नेहयुक्त एवं विचित्र वर्ण की उल्काओं का फल	23
विविध वर्ण और आकृति वाली उल्काओं का फल	23
विद्युत् संज्ञक उल्का और उसका फल	26
उल्का के गिरने का स्थानानुसार फल	27
राजभयमूचक उल्काएँ	27
स्थायी नागरिकों की भयमूचक उल्काएँ	27
अस्तकालीन उल्काओं का फल	28
प्रतिलोम मार्ग से जानेवाली उल्काओं का फल	28
विभिन्न मार्गों से गिरने वाली उल्काओं का सेवा के लिए फल	29

जन्मनक्षत्र में बाणसदृश गिरने वाली उल्काओं का फल	30
अन्य शुभ-अशुभ उल्काएं	31
विवेचन	32
तीर्था अध्याय	
परिवेष और उनके भेद	44
चन्द्र-परिवेष, विविध रूप एवं फल	45
सूर्य-परिवेष का फल	46
नक्षत्रों के अनुसार परिवेषों का फल	48
वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेषों का फलादेश	48
परिवेषों का राष्ट्र राष्ट्रसम्बन्धी फलादेश	50
विवेचन	51
पांचवाँ अध्याय	
विद्युत्-स्वरूप और प्रकार	63
विद्युत्-वर्णों का निरूपण एवं फलादेश	64
विद्युत्-मार्गों का कथन	65
विद्युत् के रूप-रंग, आकार तथा शब्द द्वारा वर्षा का निर्देश	65
विवेचन	68
छठा अध्याय	
बादलों के प्रकार और वर्षा-फल	73
शुभ चिह्नों वाले बादल	74
संग्राम-सूचक बादल	76
राजा, युवराज, मंत्री के मरणसूचक बादल	76
सेना के युद्धस्थल से पराइ-मुख होने की सूचना देने वाले बादल	77
गर्जना सहित और गर्जना रहित बादलों का फल	77
मलिन तथा वर्ण रहित बादलों का दीप्ति दिशा में फल	77
नक्षत्र, ग्रह आदि के निमित्त से बादलों का फल	77
शीघ्रगामी बादलों का फल	78
विरागी, प्रतिलोप, अनुलोप गतिवाले बादलों का फल	78
नागरिक एवं शासन के अनुकूल, प्रतिकूल दृष्टि वाले बादल	79
विवेचन	
सातवाँ अध्याय	
सूच्याओं के लक्षण और निमित्तशास्त्र के तत्त्वों के अनुसार उनका फल	85
ठार्मा की परिभाषा	86

स्त्रियों वर्षा की सन्ध्या का फल	87
तत्काल वर्षा-सूचक सन्ध्या	87
सन्ध्या में सूर्य-परिवेष का फल	87
सन्ध्या में सूर्य के भण्डलों का फल	87
सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप, कुम्भ आदि सदृश स्त्रियों सन्ध्या का फल	88
राजभय-उत्पादक सन्ध्या	88
सन्ध्याकाल में बादलों की आकृति का फल	88
सन्ध्या-काल में विद्युत्-दर्शन का फल	89
विवेचन	89
आठवाँ अध्याय	
मेघों के भेद	94
वर्षा के कारक मेघ	94
अच्छी वर्षा के सूचक मेघ	95
युद्ध और सन्धि के सूचक मेघ	96
युद्ध की सफलता और असफलता की सूचना देनेवाले मेघ	96
विभिन्न आकृतिवाले मेघों का फलादेश	97
तिथि-नक्षत्र, मुहूर्त आदि के अनुसार मेघ-फल	97
कुवर्ण, कटुकरस और दुर्गन्धि वाले मेघों का फल	98
अन्य प्रकार मेघ-अणुभ सूचक मेघ	98
विवेचन	99
नौवाँ अध्याय	
वायु के भेद	104
वायु द्वारा वर्षण, भय, क्षेम आदि	104
बलवती वायु	105
दिशा के अनुसार वायु का कथन	105
आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन विभिन्न दिशाओं की वायु के फलादेश	106
दिशाओं एवं विदिजाओं की वायु का संक्षिप्त फल	110
परस्पर वात कर वहने वाली वायुओं का फल	110
सब्द-अपसब्द वायुओं का फल	112
प्रदक्षिणा करती हुई वहने वाली वायु का फल	112
मध्यलौ और अर्धसत्त्वि के वायु प्रदाह का फल	112
राजा के प्रयाण के समय प्रतिलोम और अनुलोम वायुओं का फल	112
अगुभ वायु का फल	113

ऊर्ध्वगामी एवं क्लूर वायु का फल	113
शीघ्रगामी वायु का फल	113
द्विग्नित प्रतिलोम वायु का फल	113
सैन्य-बध एवं सैन्य-पराजय सूचक वायु	114
दिशा एवं दिशा के अनुसार वायुफल	115
विवेचन	116
 इसर्वां अध्याय	
मूल नक्षत्र को बिताकर होने वाली वर्षा	122
पूर्वाषाढ़ा एवं उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की प्रथम वर्षा	122
नक्षत्र-अम से प्रथम वर्षा का फल	122
थावण मास की प्रथम वर्षा का फल	129
विवेचन	130
 भ्यारहवां अध्याय	
गन्धर्वनगर के फलादेश कथन की प्रतिज्ञा	141
सूर्योदय कालीन गन्धर्वनगर का फल	142
वर्णों के अनुसार पूर्व दिशा के गन्धर्वनगर का फल	142
सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर का फल	143
कपिलवर्ण के गन्धर्वनगर का फल	143
राज-विजयसूचक गन्धर्वनगर	143
विविध भयतृचक गन्धर्वनगर	143
पर-शासन के आकाश ने सूचना देने वाले गन्धर्वनगर	144
दक्षिण की ओर मग्न करने वाले गन्धर्वनगर का फल	144
प्रज्वलित गन्धर्वनगर वी सूचना	144
राघु-विलव के सूचक गन्धर्वनगर	144
राजवृद्धि के सूचक गन्धर्वनगर	144
वर्षासूचक गन्धर्वनगर	145
अनेक वर्ण एवं आकार के गन्धर्वनगर	145
विवेचन	146
 बारहवां अध्याय	
मेघगर्भ कथन की प्रतिज्ञा	162
मेघों के गर्भधारण करने का शमय	163
रात्रि और दिन के गर्भ का फल	163
पूर्व सत्त्वा और पश्चिम सत्त्वा के गर्भ का फल	163

• मेघों के गर्भधारण के चिह्नों का कथन	163
मेघगर्भ के भेद और उनके द्वारा सूचना	164
मेघ के मास-गर्भ का फल	165
सौम्यगर्भ के मास और उनका फल	166
नक्षत्रों के अनुसार गर्भ का फल	167
विदिध वर्ण एवं आकार के मेघगर्भ	167
विवेचन	169
तेरहवाँ अध्याय	
राजयात्रा के वर्णन की प्रतिज्ञा	175
सफल एवं असफल यात्रिक के लक्षण	175
यात्रा करने की विधि	175
यात्रा में विचारणीय निमित्त	175
चतुरंग सेना में यात्राशालीन निमित्त	176
शनिश्चर की यात्रा का फल	176
सेनापति के ब्रह्मसूचक यात्रा-शकुन	176
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित रूप विष्णुभ और उसके विभ्व	177
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित के लक्षण	177
योग्य नैमित्तिक आदि के होने से राजकार्य में सिद्धि	179
प्रयाण-काल में निमित्तों द्वारा शुभ-अशुभ योग का परिज्ञान	182
प्रयाणकालीन शुभ एवं अशुभ निमित्त	184
निन्दित यात्रा-सूचक निमित्त	186
सूर्य-नक्षत्रों एवं चन्द्र-नक्षत्रों के अनुसार यात्रा-फल	191
प्रयाण-काल में वायु-परिभाण का विचार	191
प्रयाण-काल में अनेक वस्तुओं के दर्शन के आधार पर शुभ-अशुभ विचार	193
द्विपदादि की विकृत ध्वनि का फल	193
प्रयाण के समय सेना में कलह या मतभेद से अशुभ फल	193
प्रयाण के समय मनुष्य, पशु-पक्षियों की आवाज पर विचार	195
युद्ध के उपकरण तथा सन्ध्याकालीन बादलों के विवर्ण होने का फल	196
मांसप्रिय पक्षियों के अबलोकन का फलादेश	196
विजातियों के मैथुन में विपरीत किया का फलादेश	197
गमनकाल में घोड़ों के रंग, आवृत्ति, स्वर एवं अन्य क्रियाओं में विकृति का विचार	198
गमनकाल में हाथी-घोड़ों के विभिन्न प्रकार के दर्शनों का फलादेश	201
विशेष स्थान के अनुसार फलादेश	203

प्रयाण के समय अन्य विचारणीय बातें	204
राज्य, धर्मात्मक, कार्यसिद्धि के निमित्तों का निरूपण	205
विवेचन	206
चौदहवाँ अध्याय	
उत्पातों के निरूपण की प्रतिज्ञा	222
उत्पात का लक्षण और भेद	222
क्रहुओं के उत्पातों का फलादेश	223
पशु-गविष्यों के विपरीत आचरण का फल	223
विकृत सन्तानोपत्ति का फल	224
गदा, रुधिर आदि वरसने का फल	224
सरीसूप, मेंढ़ा आदि वरसने का फल	225
विना ईथन अग्नि के प्रज्वलित होने का फल	225
वृक्षों से रस चूने, मिथन, वस्त्रवैष्टित होने तथा अन्य प्रकार की विकृतियों का विचार	225
देवों के हृसन, रोन, तृत्य करने आदि का फल	229
नदियों के हृसन-रोने आदि प्रकृति का विचार	229
अस्व-शस्त्रों के गव्वों का फल	230
विना वजाये वादियों का फल	230
आकाश में अकारण घोर शब्द गुनने का फल	231
भूमि के अकारण निर्धारित होने तथा वृक्षों के अकारण हरे हो जाने का फल	231
चीटियों की चिंगा अनुसार फल-विचार	231
राजा के छग, चैवर, युकुट आदि उपकरण तथा हाथी, बोड़ा आदि वाहनों के भंग होने का फल	232
असमय में गोपल के वृक्ष के पुष्पित होने का फल	232
इन्द्रधनुष के भंग आदि होने का फल	233
गन्त्री-गात्रों का फलादेश	233
लिंग, वरण आदि प्रतिमाओं एवं उपकरणों के उत्पातों का फल	234
नन्धातात्र में व्रत्य-दर्शन का फल	236
शूर के वर्ण के अनुसार फलादेश	237
चन्द्रीपात्र का विचार	238
जहाँ का पारस्पर भेदन या विचार	238
गङ्ग-गुद और ग्रहोन्मात का वर्णन	238
दर्शनी होने, नर्तन आदि क्रियाओं का विचार	240

पृथ्वी के धंसने का फलादेश	241
बूलि, राख, अग्नि आदि बरसने का फलादेश	241
विभिन्न ग्रहों के प्रताङ्गित मार्ग में विभिन्न ग्रहों के गमन का फल	242
निर्जिव पदार्थों के विकृत होने का फलादेश	243
पूजा आदि के स्वयमेव बन्द हो जाने आदि का विचार	243
वृक्षों की छाया आदि विकृतियों का विचार	244
चन्द्रशूर्ग एवं चन्द्रोल्पातों का फलादेश	244
शिवलिंगों के विवाद आदि का फलादेश	245
मंगलकलश के अकारण विष्वंश का फल	246
नवीन वस्त्रों के अकारण जलने का फल	246
पक्षियों एवं सर्वारियों वी विकृति का फल	246
घोड़ों के उत्पातों का फल	247
नक्षत्रों के उत्पात का फलादेश	250
उत्पात-शान्ति विचार	252
विवेचन	252
पन्द्रहवाँ अध्याय	
ग्रहाचार के निरूपण की प्रतिज्ञा	263
शुक्र ग्रह का महत्व	264
शुक्र के उदय और अस्त का सामान्य कथन	264
शुक्र की किरणों के ध्रातित होने का फलादेश	264
शुक्र के मण्डलों और नक्षत्रों के नाम और लक्षण एवं उनमें शुक्र का गमन का फल	265
शुक्र की नाम आदि वीथियों के नक्षत्र	270
शुक्र के दीथि-गमन का फल	271
कृतिका आदि नक्षत्रों के उत्तर एवं दक्षिण की ओर से शुक्र के गमन का फलादेश	271
वीथि-मार्ग	274
वार और नक्षत्रों के सूर्योग्म ग्रह-गमन का फल	274
सूर्य में शुक्र के विचरण का फल	275
तृतीयादि मण्डलों में शुक्र के विचरण वा गमन	275
कृतिका आदि नक्षत्र तथा दक्षिण आदि दिशाओं में शुक्र के गमन का फलादेश	276
मध्य आदि नक्षत्रों में मध्यम गति के शुक्र का फलादेश	276
वर्षासुनक शुक्र का गमन	277
प्रातःकाल पूर्व में शुक्र और अनुग्रामी वृहस्पति का फल	277

विभिन्न आकार के शुक्र का कृतिका आदि नक्षत्रों में गमन करने का फल	278
शुक्र के घात का फल	279
नक्षत्रों के आरोहण और भेदम करनेवाले शुक्र का फल	279
शुक्र के अस्तदिनों की संख्या	288
शुक्र के मासों का फलादेश	288
गज, ऐरावण आदि वीथिकाओं का फलादेश	289
शुक्र के विभिन्न वर्णों का फल	290
शुक्र के प्रवास और बक्त होने का फल	291
शुक्र के अतिचार	295
विवेचन	299
सोलहवाँ अध्याय	
शनि-चार के वर्णन की प्रतिज्ञा	306
दक्षिण मार्ग में शनि के अस्त होने का काल-प्रमाण	306
शनि के दो, तीन, चार नक्षत्र-प्रमाण गमन करने का फल	307
उत्तरमार्ग में वर्ण के अनुसार शनि का फल	307
मध्यमार्ग में शनि के उदयास्त का फल	307
शनि के दक्षिणमार्ग में गमन का फल	307
शनि की नक्षत्र-प्रदक्षिणा के आधार पर जन्म-फल	308
शनि के अप्रसव्य भार्ग में गमन करने का फल	308
शनि पर चन्द्रपरिवेष का फल	308
चन्द्र और शनि के एक साथ होने का फल	309
शनि के वेद का फल	309
शनि के कृतिका पर होने का फल	309
शनि के विविध वर्णों का फल	309
शनि के युद्ध का फल	310
शनि के अस्तोदय का फल	310
विवेचन	310
सत्रहवाँ अध्याय	
बृहस्पति (गुरु) के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, उदयास्त के फलादेश	
वर्णन की प्रतिज्ञा	317
बृहस्पति के अशुभ मण्डल	317
बृहस्पति द्वारा कृतिका आदि के घात का फल	319
बृहस्पति द्वारा वायों और शायी ऊर नक्षत्रों के अभिधातित होने का फल	323
बृहस्पति द्वारा चन्द्रमा की प्रदक्षिणा का फल	324

चन्द्रमा द्वारा बृहस्पति के आच्छादन का फल	324
विवेचन	325
बठारहवाँ अध्याय	
बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण और ग्रहयोग के वर्णन की प्रतिज्ञा	331
बुध की सात प्रकार की मतियाँ और उनका स्वभाव	331
बुध का नियतचार	332
वर्णनुसार बुध का फल	332
बुध की वीथियाँ और फलादेश	333
बुध की कान्ति का फल	333
अन्य ग्रह द्वारा बुध की दक्षिण-वीथि का भेदन	333
बुध की उत्तर-वीथि का भेदन	334
कृतिका, विशाखा आदि नक्षत्रों में बुध के गमन का फल	335
विवेचन	336
उःनीसवाँ अध्याय	
मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति आदि के कथन की प्रतिज्ञा	339
मंगल के चार और प्रवास की काल-गणना	340
मंगल के शुभ और अशुभ का विचार	340
प्रजापति मंगल	340
ताम्रवर्णे के मंगल का फल	340
रोहिणी नक्षत्र पर मंगल की चेष्टा वा फल	340
दक्षिण मंगल के सभी हारों का अंवलोकन	341
मंगल के पर्वत प्रमुख वक्र और उनका फल	341
वक्रगति से मंगल के गमन और नक्षत्रघात का फल	341
अपगति के गमन का फल	342
मंगल के वर्ण, कान्ति और स्पर्श का फल	345
विवेचन	345
द्वौसवाँ अध्याय	
राहु-चार के कथन की प्रतिज्ञा	349
राहु की प्रकृति, विकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ निमित्त	349
चन्द्रग्रहण का वर्णन	349
राशि तथा समय के अनुसार ग्रहण-फल	351
चन्द्रग्रहण का विभिन्न दृष्टियों से फल	351
चन्द्रग्रहण सम्बन्धी अन्य शक्तुन	356

विवेचन	358
इकौसदाँ अध्याय	
केतु-वर्णन की प्रतिज्ञा	364
केतुओं के चिह्न	365
केतु का वर्ण के अनुसार फलादेश	365
विकृति केतु का फल	366
केतु की शिखा के अनुसार फलादेश	366
गुलम, विक्रान्त, कवच, मण्डनी, पशुग, धूमगोतु	366
धूमकेतु का विशेष फल	367
केतूदय का फल	369
विषय केतु का फल	370
स्वाति नक्षत्र में उद्दित केतु का फल	370
भृथ उत्पन्न करने वाले वेतुओं के नाम	371
उदात नहीं करनेवाले केतु	372
केतु-शान्ति के पूजा-विधान की आवश्यकता	372
विवेचन	373
बाईसदाँ अध्याय	
सूर्य-चार के कथन की प्रतिज्ञा	380
उदय-काल में सूर्य की कान्ति के अनुरूप फल	381
दिशाओं के अनुभार सूर्योदय काल की आकृति का फलादेश	381
शृंगी वर्ण के सूर्य का फलादेश	383
अस्तकालीन सूर्य का फल	383
चन्द्र और सूर्य के पर्वकाल का फल	383
विवेचन	384
तेईसदाँ अध्याय	
चन्द्र-विचार और उसके शुभाशुभ विलयण की प्रतिज्ञा	387
चन्द्रमा की शृंगोल्ति का विचार	387
चन्द्रमा की आभा और वर्ण-विचार	387
चतुर्थी, पञ्चमी आदि तिथियों में चन्द्रमा की विकृति का फल	388
प्रतिपदा आदि तिथियों में चन्द्रमा में अस्त्र ग्रहों के प्रविष्ट होने का फल	389
चन्द्र-विष्णुष का फल	389
विभिन्न वीथियों और नक्षत्रों में विवरण चन्द्र के गमन करने का फल	391
वैश्वानर आदि पार्वों में चन्द्रमा के विभिन्न प्रकार का फल	392

चन्द्र द्वारा जनि, रवि आदि ग्रहों के घात का फल	393
श्रीण चन्द्रमा का फल	395
विवेचन	395
चौबीसवाँ अध्याय	
ग्रहयुद्ध के बर्णन की प्रतिक्रिया	399
याथी संज्ञक ग्रह	399
जय-पराजय सूचक ग्रह	400
चन्द्रघात और राहुघात	400
शुक्रघात	401
ग्रहयुद्ध के समय होने वाले ग्रहवर्णों के अनुसार फलादेश	401
रोहिणी नक्षत्र के घातित होने का फल	403
ग्रहों की वात-गित्ताति प्रकृतियों का विचार	404
विवेचन	405
पचासवाँ अध्याय	
नक्षत्र और ग्रहों के निमित्तज्ञान की आवश्यकता	408
ग्रहों की आकृति, वर्ण और चिह्नों द्वारा तेजी-मन्दी का विचार	408
ग्रहों के प्रतिपूद्यगल	409
नक्षत्रों के सम्बन्ध के अनुसार विभिन्न ग्रहों द्वारा तेजी-मन्दी एवं हीमाधिकता का विचार	415
विवेचन	416
छालोंसवाँ अध्याय	
मंगलाचरण	430
स्वप्नदर्शन के कारण वात, पित्त और कफ प्रकृतिवालों द्वारा दृष्ट स्वप्नों का फल	431
राज्यप्राप्तिसूचक स्वप्न	431
जयसूचक स्वप्न	433
विपत्तिमोचन-सूचक स्वप्न	433
धन-धान्यवृद्धि-सूचक स्वप्न	434
शस्त्रघात, पीड़ा तथा काटसूचक स्वप्न	435
स्त्रीप्राप्ति सूचक स्वप्न	435
मृत्युसूचक स्वप्न	436
कल्याण-अकल्याण सूचक स्वप्न	438
पन-प्राप्ति एवं धनवृद्धि सूचक स्वप्न	439

भद्रबाहुसंहिता

प्रथमोऽध्यायः

नमस्कृत्य जिनं वीरं सुरासुरनतकम् ।

यस्य ज्ञानाम्बुधेः प्राप्य किञ्चिद् वधे निमित्तकम्¹ ॥ 1 ॥

जिनके चरणों में सुर और अगुर नम्रित हुए हैं, ऐसे वीर महावीर श्वामी को नमस्कार कर, उनके ज्ञानरूपी समुद्र के आधय में मैं निमित्तों का किञ्चित् वर्णन करता हूँ ॥ 1 ॥

मागधेषु पुरं ख्यातं नाम्ना राजगृहं शुभम् ।

नानाजनसमाकीर्णे² नानागुणविभूषितम् ॥ 2 ॥

मगध देश के नगरों में प्रसिद्ध राजगृह नाम का थेठ नगर है, जो नाना प्रकार के मनुष्यों से व्याप्त और अनेक मुण्डों से युक्त है ॥ 2 ॥

तत्रास्ति सेनजिद् राजा युक्तो राजगुणः शुभैः ।

तस्मिन् शैले सुविख्यातो नाम्ना पाण्डुगिरिः शुभः³ ॥ 3 ॥

राजगृह नगरी में राजाओं के उच्चयुक्त शुभ गुणों गे भाष्यन मेनजित् नाम का राजा है । तथा उस नगरी में (पौत्र) पर्वतों में विख्यात पाण्डुगिरि नाम का थेठ पर्वत है ॥ 3 ॥

नानावृक्षसमाकीर्णे नानाविहगसेवितः ।

चतुष्पदैः सरोभिश्च साधुभिश्चोपसेवितः⁴ ॥ 4 ॥

यह पर्वत अनेक प्रकार के वृक्षों से व्याप्त है । अनेक पर्वतों का कीदारथल है ।

1. यह श्वेत मूढित प्रति में नहीं है । 2. नानावीलं म् । 3. शुभम् य.. । 4. शोभितः आ० ।

नाना प्रकार के पशुओं नी विहारभूमि है, तालाबों से युक्त है और साधुओं से उपसेवित है ॥ 4 ॥

तत्रासीनं महात्मानं¹ ज्ञानविज्ञानसागरम्² ।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम् ॥ 5 ॥
द्वादशांश्चाप्य वेत्तारं निर्गत्वं च रहाहुलिम् ।
वृत्तं शिष्यः प्रशिष्येश्च निषुणं तत्त्ववेदिनाम्³ ॥ 6 ॥
प्रणम्य⁴ शिरसाऽचार्यमूर्च्छः शिष्यास्तदा गिरम्⁵ ।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यं ज्ञानं बुभुत्सवः ॥ 7 ॥

उस पाण्डुगिरि (पर्वत) पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तपस्वी, कट्ट्याणमूर्ति, अपराधीन, द्वादशाशांग श्रुत के वेता, निर्गत्व, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यों से युक्त और तत्त्ववेदियों में निषुण आचार्य भद्रबाहु को सिर से नमस्कार कर राब जीवों पर प्रीति करने वाले और दिव्य ज्ञान के इच्छुक शिष्यों ने उनसे प्रार्थना की ॥ 5-7 ॥

पार्थिवानां हिताथयि शिष्याणां⁶ हितकाम्यया ।
आवकाणां हिताथयि दिव्यं ज्ञानं ब्रवीहि नः ॥ 8 ॥

राजाओं, भिक्षुओं और शावकों के हित के लिए आप हमें दिव्यज्ञान—निपित्ति ज्ञान का उपदेश दीजिए ॥ 8 ॥

शुभाशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः ।
विजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं पाति महीं सदा ॥ 9 ॥

यतः पशुओं को जीतने का इच्छुक राजा निमित्त के बल से अपने शुभाशुभ को गुनकार स्थिरमति हो सुखपूर्वक सदा पृथ्वी का पालन करता है ॥ 9 ॥

राजाभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः ।
विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजभियोजिताः⁷ ॥ 10 ॥

धर्मपालक सभी भिक्षु राजाओं द्वारा पूजित होते हुए और उनकी मेवादि शो प्राप्त करते हुए निराकृततापूर्वक लोक में विचरण करते हैं ॥ 10 ॥

पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा ययुद्देशाश्च भिक्षवः ।
स्फीतान् जनपदांश्चेव संक्षयेयुः प्रचोदिताः⁸ ॥ 11 ॥

1. महाकान्ति शब्द । 2. निराश्रयम् शब्द । 3. वादिनम् शब्द A. । 4. आचार्यम् शब्द ।
5. ज्ञानरातिम् शब्द । 6. भिक्षुणाम् शब्द । 7. विहारियोजिताः शब्द । 8. अन्तोदिता शब्द ।

भिक्षु आश्रित देश को भविष्यत्काल में पापयुक्त अथवा उपद्रवयुक्त अवगत कर वहाँ से देशान्तर को चले जाते हैं तथा स्वतन्त्रतापूर्वक धन-धान्यादि सम्पन्न देशों में निवास करते हैं ॥ 11 ॥

श्रावकाः स्थिरसंकल्पा दिव्यज्ञानेन हेतुना ।

नाश्रयेयुः¹ परं तीर्थं यथा² सर्वज्ञभाषितम् ॥ 12 ॥

श्रावक इस दिव्य निमित्त ज्ञान को पाकर दृढ़संकल्पी होते हैं और सर्वज्ञकथित तीर्थ-धर्म को स्थोड़कर अन्य तीर्थ का आश्रय नहीं लेते ॥ 12 ॥

सर्वेषामेव सन्त्वानां³ दिव्यज्ञानं⁴ सुखावहम् ।

भिक्षुकाणां विशेषेण परणिष्ठोपजीविनाम् ॥ 13 ॥

यह दिव्य ज्ञान—अष्टांगनिमित्त ज्ञान यथ जीवों को सुख देने वाला है और परणिष्ठोपजीवी साधुओं को विशेष रूप से सुख देने वाला है ॥ 13 ॥

विस्तीर्ण द्वादशांगं तु भिक्षुवश्चाल्पमेधसः ।

भवितारो हि वहवस्तेषां चैवेदमुच्यताम् ॥ 14 ॥

द्वादशांग श्रुत तो बहुत विश्रुत है और आगामी काल में भिक्षु अल्पबुद्धि के धारक होंगे, अतः उनके लिए निमित्त शास्त्र का उपदेश कीजिए ॥ 14 ॥

सुखग्राहं⁵ लघुग्रन्थं स्पष्टं शिष्यहितावहम् ।

सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि नः ॥ 15 ॥

जो सरलता से ग्रहण किया जा सके, संक्षिप्त हो, स्पष्ट हो, शिष्यों का हित करने वाला हो, सर्वज्ञ द्वारा भाषित हो और यथार्थ हो, उस निमित्त शास्त्र का हम लोगों के लिए उपदेश कीजिए ॥ 15 ॥

उहकाः समासतो व्यासात् परिवेषांस्तथैव च ।

विद्युतोऽभ्याणि सन्ध्याइच मेधान् वातान् प्रबणर्बम् ॥ 16 ॥

गन्धर्वनगरं गर्भान् यात्रोत्पातांस्तथैव च ।

ग्रहचारं पृथक्त्वेन ग्रहयुद्धं च कृत्स्नतः ॥ 17 ॥

वातिकं चाय स्वप्नाइच मुहूर्तश्च तिथीस्तथा ।

करणाति निमित्तं च शकुनं⁶ पाकमेव च ॥ 18 ॥

1. माश्रयेयुः मूः A. । 2. गदा जाः । 3. जन्मूलाण् मूः । 4. विद्य ज्ञानं मूः ।

5. भिक्षुः स्वल्पमेधसः मूः । A. । 6. ग्रास्यं वृः । 7. वायामूलात्मकम् मूः A. ।

8. स्वप्नश्च मूः A. । 9. निमित्ताति मूः A. । 10. याकुनं पाकमेव च मूः A. ।

ज्योतिषं केवलं कालं वास्तुदिव्येन्द्र^१सम्पदा ।
 लक्षणं व्यञ्जनं चिह्नं तथा^२ दिव्योषधानि^३ च ॥१९॥

बलाबलं च सर्वेषां विरोधं च पराजयम् ।
 तत्सर्वमानुपूर्वेण प्रद्रवीहि महामते^४ ! ॥२०॥

सवनितान् यथोदिष्टान् भगवन् वक्तुमर्हसि ।
 प्रश्नान् शुश्रूषावः सर्वे वयमन्ये च साधवः ॥२१॥

हे महामते ! संक्षेप और विस्तार से उल्का, परिवेष, विद्यात्, अध्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भ, यात्रा, उत्पात, पृथक्-पृथक्, ग्रहचार, गृहयुद्ध, वातिक—तेजी-मद्दी, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, निमित्त, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, दिव्येन्द्रसंपदा, लक्षण, व्यञ्जन, चिह्न, दिव्योषध, बलाबल, विरोध और जय-पराजय इन समस्त विषयों का श्रमशः वर्णन कीजिए । हे भगवन् ! जिस क्रम से इनका निर्देश किया है, उसी क्रम से इनका उत्तर दीजिए । हम सभी तथा अन्य साधुजन इन प्रश्नों का उत्तर गुनने के लिए उत्कृष्ट हैं ॥ १६-२१ ॥

इति श्रीमहामुनिर्णयभद्रबाहुसंहितायां ग्रन्थांगसंचयोऽनाम प्रथमोऽध्यायः ।

विवेचन—इस ग्रन्थ में आवक और मुनि दोनों के लिए उपयोगी निमित्त का विवेचन आचार्य भद्रबाहु खामी ने किया है । इसके प्रथम अध्याय में ग्रन्थ में विवेच्य विषय का निर्देश किया गया है । इस ग्रन्थ में उन निमित्तों का निरूपण किया है, जिनके अबलोकन मात्र से कोई भी व्यक्तित्व अपने शुभाशुभ को अद्वगत कर सकता है । अष्टांग निमित्त ज्ञान को आचार्यों ने विज्ञान के अन्तर्गत रखा है; यतः “मोक्षे धीर्जनिमयत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोऽथ” । अर्थात्—निर्णय-प्राप्ति सम्बन्धी ज्ञान को ज्ञान और शिल्प तथा अन्य शास्त्र संबन्धी ज्ञानकारी को विज्ञान कहते हैं । यह उभय लोक की सिद्धि में प्रथोजक है, इसलिए गृहस्थों के समान मुनियों के लिए भी उपयोगी माना गया है । किसी एक निमित्त से व्यार्थ का निर्णय नहीं हो सकता । निर्णय करना निमित्तों के स्वभाव, परिमाण, गुण एवं प्रकारों पर भी बहुत अंशों में विर्भर है । यहाँ प्रथम अध्याय में निरूपित वर्ष

1. वास्तु दिव्येन्द्रसंपदा गुणः ८., वासुदेवेन्द्र आदृ । 2. लक्षणं गुणः । 3. विद्योषधानि च गुणः । 4. निर्णय ग्रन्थः । 5. भद्रबाहुके निमित्ते । 6. ग्रन्थाङ्कयो आदृ ।

विषयों का संक्षिप्त परिभाषात्मक परिचय दे देना भी अग्रसंगेक न होगा।

उल्का—“ओष्ठति, उष षकारस्य लत्वं क ततः टाप्”—अर्थात् उष ध्रुतु के षकार का 'ल' हो जाने से क प्रत्यय कर देने पर स्त्रीलिंग में उल्का शब्द बनता है। इसका शाब्दिक अर्थ है तेजःपुञ्ज, ज्वाला या लपट। तात्पर्यार्थ लिया जाता है, आकाश से पतित अग्नि। कुछ मनीषी आकाश से पतित होने वाले उल्काकाण्डों को टूटा तारा के नाम से कहते हैं। ज्योतिष शास्त्र में बताया गया है कि उल्का एक उपग्रह है। इसके आनन्दन का प्रकार यह है कि सूर्यकान्त नक्षत्र से पंचम विद्युन्मुख, अष्टम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंश उल्का, द्वाविंशति कला, वयोविंशति वज्र और चतुविंशति निषात संज्ञक होता है। विद्युन्मुख, शून्य, सन्निपात, केतु, उल्का, कला, वज्र, और निषात ये आठ उपग्रह माने जाते हैं। इनका आनन्दन पूर्ववत् सूर्य नक्षत्र में किया जाता है।

मान लें कि गुर्ये कृतिका नक्षत्र पर है। यहाँ कृतिका से गणना की सो पंचम पुनर्बंधु नक्षत्र विद्युन्मुख-संज्ञक, अष्टम मध्या शून्यसंज्ञक, चतुर्दश विशाखा नक्षत्र सन्निपात-संज्ञक, अष्टादश पूर्वविंशति केतु-संज्ञक, एकविंशति धनिष्ठा उल्का संज्ञक, द्वाविंशति शतभिष्पा कला-संज्ञक, वयोविंशति पूर्वोभाद्रपद वज्र-संज्ञक और चतुविंशति उत्तराभाद्रपद निषातसंज्ञक माना जायगा। इन उपग्रहों का फलादेश नामानुसार है तथा विशेष आगे बतलाया जायगा।

निमित्तज्ञान में उपग्रह सम्बन्धी उल्का का विचार गही होता है। इसमें आकाश से पतित होनेवाले तारों का विचार किया जाता है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने उल्का के रहस्य को पूर्णतया अवगत करने की चेष्टा की है। कुछ लोग इसे Shooting stars टूटनेवाला नक्षत्र, कुछ Fire-bells अग्नि-गोलक और कुछ इसे Asteroids उपनाम देते हैं। प्राचीन ज्योतिगियों का मत है कि वायुमण्डल के ऊर्ध्वे भाग में नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान पदार्थ समय-समय पर दीख पड़ते हैं और गगनगार्भ में द्रुतवेग से चलते हैं तथा अन्धकार में लुप्त हो जाते हैं। कभी-कभी कतियाय वृहदाकार दीप्तिमान पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं; पर धायु की गति से विवर्य ही जाने के कारण उनके कई खण्ड हो जाते हैं और गम्भीर गर्जन के साथ भूमितल पर पतित हो जाते हैं। उल्काएँ पृथ्वी पर नाना प्रकार के आकार में पिरती हुई दिखताई पड़ती हैं। कभी-कभी निरभ्र आकाश में गम्भीर गर्जन के साथ उल्कापात होता है। कभी निमंल आकाश में झटिति मेघों के एकत्रित होते ही अन्धकार में भीषण शब्द के साथ उल्कापात होते देखा जाता है। योरोपीय ब्रिटानी ने उल्कापात के मन्त्रन्धर में निम्न भाष्मति है

(1) तरल पदार्थ से जैसे धूम उठता है, वैसे ही उल्का सम्बन्धी इव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकार में पृथ्वी ने वायुमण्डल के उच्चरस्य में इव गर जा जुटता है।

और रासायनिक क्रिया से मिलकर अपने गुरुत्व के अनुसार नीचे गिरता है।

(2) उल्का के समस्त प्रकार पहुँचे आवेदन गिरि से जिज्ञासा अपनी गति के अनुसार आकाश मण्डल पर बहुत दूर पर्यन्त चढ़ते हैं और अवशेष में पुनः प्रबल वेग से पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं।

(3) किसी-किसी समय चन्द्रमण्डल के आग्नेय गिरि से इतने वेग में धातु निकलता है कि पृथ्वी के निकट आ जाता है और पृथ्वी की शक्ति से छिन्नकर नीचे गिर पड़ता है।

(4) समस्त उल्काएँ उपग्रह हैं। ये सूर्य के चारों ओर अपने-अपने कक्ष में घूमती हैं। इनमें सूर्य जैसा आलोक रहता है। परन्तु ये अभिभूत होकर उल्काएँ पृथ्वी पर पतित होती हैं। उल्काएँ अनेक आकार-प्रकार की होती हैं।

आचार्य ने यहाँ पर ददीप्यमान नक्षत्र-नुञ्जनों की उल्का संज्ञा दी है, ये नक्षत्र-पुञ्ज निमित्तशूचक हैं। इनके पतन के आकार-प्रकार, शीर्ष, दिशा आदि से शुभाशुभ का विचार किया जाता है। द्वितीय अध्याय में इसके फलादेश का निष्पाण किया जायगा।

परिवेष—“परिती विष्टते व्याप्तेऽनेन” अर्थात् चारों ओर से व्याप्त होकर मण्डलाकार हो जाना परिवेष है। यह शब्द विष् धातु से ध्य् प्रत्यय कर देने पर निष्पन्न होता है। इस शब्द का तात्पर्य यह है कि सूर्य या चन्द्र की किरणें जब बायु द्वारा मण्डलीभूत हो जाती हैं तब आकाश में नानावर्ण आकृति विशिष्ट मण्डल बन जाता है, इसी की परिवेष कहते हैं। यह परिवेष रूप, नील, पील, कृष्ण, हरित आदि विभिन्न रंगों का होता है और इसका फलादेश भी इन्हीं रंगों के अनुसार होता है।

विद्युत्—“विशेषेण द्योतते इति विद्युत्” विद्युत् धातु से किंवद् प्रत्यय करने पर विद्युत् शब्द बनता है। इसका अर्थ है विज्ञा, तडित्, ऋण्या, सौदाभिनी आदि। विद्युत् के वर्ण की अंगूष्ठा से चार भूद मान गये हैं कपिला, अतिलोहिता, सिता और पीता। कपिल वर्ण की विद्युत् होने से बायु, लोहित वर्ण की होने से आतप, पीत वर्ण की होने से वषण और सित वर्ण की होने से दुमिदा होता है। विद्युत्पत्ति का एक मात्र कारण मेध है। समुद्र और स्थल भाग की ऊपरवाली बायु तडित् उत्पन्न करने में असमर्थ है, किन्तु जल के बाष्पीभूत होते ही उसमें विद्युत् उत्पन्न हो जाती है। आचार्य ने इस प्रत्यय में विद्युत् द्वारा विशेष फलादेश का निष्पाण किया है।

अभ्र - आकाश के रूप-रंग, आकृति आदि के द्वारा फलादेश का निष्पाण करना अभ्र का अन्तर्गत है। अभ्र शब्द का अर्थ गगन है। दिग्दाह-दिशा आदि की

आकृति भी अध्र के अन्तर्गत आ जाती है।

सन्ध्या —दिवा और रात्रि का जो सन्धिकाल है उसी को सन्ध्या कहते हैं। अर्द्ध अस्तमित और अर्द्ध उदित सूर्य जिस समय होता है, वही प्रकृत सन्ध्याकाल है। यह काल प्रकृत सन्ध्या होने पर भी दिवा और रात्रि एक-एक दण्ड सन्ध्याकाल माना गया है। प्रातः और सायं को छोड़कर और भी एक सन्ध्या है, जिसे मध्याह्न कहते हैं। जिस समय गुर्य आकाश मण्डल के मध्य में पहुँचता है, उस समय मध्याह्न सन्ध्या होती है। यह सन्ध्याकाल सप्तम मुहूर्त के बाद अष्टम मुहूर्त में होता है। प्रत्येक सन्ध्या का काल २४ मिनट या ? घटी प्रमाण है। संध्या के रूप-रूप, आकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ कल का निरूपण इस ग्रन्थ में किया जायगा।

मेघ—मिह, धातु में अच् प्रत्यय कर देने गे मेघ शब्द बनता है। इसका अर्थ है बादल। आकाश में हमें कुण्ड, झेत आदि वर्ण वी वायवीय जलराशि की रेखा वाण्याकार में चक्कती हुई दिखलाई गड़ती है, इसी को मेघ (Cloud) कहते हैं। पर्वत के ऊपर कुहासे की तरह गहरा अन्धकार दिखाई देता है, वह मेघ का रूपान्तर मात्र है। वह आकाश में यन्त्रित धनीभूत जल-वाण्य से बहुत कुछ तरक्क होता है। यही तरब कुहरे की जैसी बाष्पराशि पीछे धनीभूत होकर रथानीय शीतलता के कारण अपने गर्भस्थ उत्ताप को नाट कार शिशिर विन्दु की तरह बर्पा करती है। मेघ और कुहासे की उत्पत्ति एक ही है, अन्तर इतना ही है कि मेघ आकाश में चलता है और कुहासा पृथ्वी पर। मेघ अनेक वर्ण और अनेक आकार के होते हैं। फलादेश इनके आकार और वर्ण के अनुसार वर्णित किया जाता है। मेघों के अनेक गेद हैं, उनमें चार प्रधान हैं आवर्त, संवर्त, पुष्कर और द्रोण। आवर्त मेघ निर्मल, संवर्त मेघ बहुजल विशिष्ट, पुष्कर दुर्कर-जल और द्रोण शस्त्रपूरक होते हैं।

वायु—वायु के गमन, दिशा और चक्र द्वारा शुभाशुभ पल वात अध्याय में निरूपित किया गया है। वायु का संचार अनेक प्रकार के निषितों को प्रकट करने वाला है।

प्रवर्षण—वर्षा-विचार प्रकारण को प्रवर्षण में रखा गया है। ज्येष्ठ पूर्णिमा के बाद यदि पूर्वापादा नक्षत्र में वृद्धि हो तो जल के परिमाण और शुभाशुभ सम्बन्ध में विद्वानों का मत है कि एक हाथ गहरा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा गड़दा खोदकर रखे। यदि यह गड़दा वर्षा के जल से भर जावे तो एक आढ़क जल होता है। पिसी-किमी का मत है कि जहाँ तक दृष्टि जाय, वहाँ तक जल दिखलाई दे तो अतिवृद्धि समझनी चाहिए। वर्षा का विचार ज्येष्ठ की

पूर्णिमा के अनन्तर आषाढ़ की प्रतिपदा और द्वितीया तिथि की वर्षा से ही किया जाता है।

गन्धर्वनगर—गगन-मण्डल में उदित अनिष्टसूचक पुराविशेष को गन्धर्वनगर कहा जाता है। पुदमल के आकार विशेष नगर के रूप में आकाश में निर्मित हो जाते हैं। इन्हीं नगरों द्वारा फलादेश का निरूपण करना गन्धर्वनगर सम्बन्धी निर्मित कहलाता है।

गर्भ—बताया जाता है कि ज्येष्ठ महीने की शुक्ला अष्टमी से चार दिन तक मेघ वायु से गर्भ धारण करता है। उन दिनों यदि मन्द वायु चले तथा आकाश में सरसा मेघ दीख पड़े तो शुभ जानना चाहिए और उन दिनों में यदि स्वाति आदि चार नक्षत्रों में शमनुसार वृष्टि हो तो श्रावण आदि चाहीनों में बैसा ही वृष्टियोग रामजना चाहिए। किसी-किसी का मन है कि कातिक मास के शुक्ल पक्ष के उपरान्त गर्भदिवस आता है। गर्भादि के भूत से अग्रहन के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उपरान्त जिस दिन चन्द्रमा और पूर्वांशुदा का संयोग होता है, उसी दिन गर्भसंधान रामजना चाहिए। चन्द्रमा के जिस नक्षत्र को प्राप्त होने पर मेघ के गर्भ रहता है, उन्द्रोंवचार से 195 दिनों में उस गर्भ का प्रसवकाल आता है। शुक्लपक्ष का गर्भ शुक्लपक्ष में, कृष्णपक्ष का शुक्लपक्ष में, दिवसजात गर्भ रात में, रात का गर्भ दिन में एवं सन्ध्या का गर्भ प्रातः और प्रातः का गर्भ संध्या को प्रसव वर्षा करता है। मृगशिरा और पीत शुक्लपक्ष का गर्भ मन्द फल देनेवाला होता है। पीत कृष्णपक्ष के गर्भ का प्रसवकाल श्रावण शुक्लपक्ष, माघ शुक्लपक्ष के मेघ का श्रावण कृष्णपक्ष, माघ कृष्णपक्ष के मेघ का श्रावण शुक्लपक्ष, फाल्गुन शुक्लपक्ष के मेघ का भाद्राशद कृष्णपक्ष, फाल्गुन कृष्णपक्ष के मेघ का आश्विन शुक्लपक्ष, चैत्र शुक्लपक्ष के मेघ का आश्विन कृष्णपक्ष एवं चैत्र कृष्णपक्ष के मेघ का कार्तिक शुक्लपक्ष वर्षकाल है। पूर्व का मेघ पञ्चिम और पञ्चिम का मेघ पूर्व में बरता है। गर्भ से वृष्टि एवं परिज्ञान लथा खेती का विचार किया जाता है। ऐसे गर्भ के मरण वायु के योग का विचार कर लेना भी आवश्यक है।

यात्रा—इस प्रतिपदा में मुख्य स्थान से यात्रा की यात्रा का निरूपण किया है। यात्रा के समय में होने वाले अकुण-अशगुनों द्वारा शुभाशुभ फल निरूपित हैं। यात्रा के लिए शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ वार, शुभ योग और शुभ कारण का होना प्रसादवश्यक है। शुभ समय में यात्रा करने ने जीव और अनायास ही कार्यसिद्धि होती है।

उत्पात रथनाय के विवरित भग्नि हीना ही उत्पात है। उत्पात तीन प्रकार के होते हैं दिव्य, जन्तरिध और भाग। नक्षत्रों का विचार, उल्का,

निष्ठाति, पवन और घेरा दिव्य उत्पात है, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि अन्तरिक्ष उत्पात हैं और चर एवं स्थिर आदि पदार्थों से उत्पन्न हुए उत्पात भीम कहे जाते हैं।

ग्रहचार—सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन ग्रहों के गमन द्वारा शुभाशुभ फल अवगत करना ग्रहचार कहलाता है। समस्त नक्षत्रों और राशियों में ग्रहों की उदय, अस्त, लक्षी, मार्गी इत्यादि अवस्थाओं द्वारा फल का निरूपण करना ग्रहचार है।

ग्रहयुद्ध—मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन ग्रहों में से किन्हीं द्वी ग्रहों की अधोपरि स्थिति होने से किरणों परस्पर में स्पर्श करें तो उसे ग्रहयुद्ध कहते हैं। बृहत्सहिता के अनुसार अधोपरि अपनौ-अपनी कक्षा में अवस्थित ग्रहों में अतिदूरत्वनिबन्धन देखने के विषयोंमें जो समता होती है, उसे ही ग्रहयुद्ध कहते हैं। ग्रहयुति और ग्रहयुद्ध में पर्याप्त अन्तर है। ग्रहयुति में मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पाँच ग्रहों में से कोई भी ग्रह जब सूर्य या चन्द्र के गाथ समरूप में स्थित होते हैं, तो ग्रहयुति कहलाती है और जब मंगलादि पाँचों ग्रह ग्राम में ही समसूत्र में स्थित होते हैं तो ग्रहयुद्ध कहा जाता है। स्थिति के अनुसार ग्रहयुद्ध के चार भेद हैं—उल्लेख, भेद, अशुभिमर्द और अपशब्द। छायामात्र से ग्रहों के स्पर्श हो जाने को उल्लेख; दोनों ग्रहों का परिमाण यदि योगफल के आधे से ग्रहद्वय का अन्तर अधिक हो तो उस युद्ध को भेद; दो ग्रहों की किरणों का संधट होना अशुभिमर्द एवं दोनों ग्रहों का अन्तर याठ कला से न्यून हो तो उसे अपशब्द कहते हैं।

वातिक या अर्धकाण्ड—ग्रहों के स्वरूप, यगन, अवस्था एवं विभिन्न प्रकार के बाह्य निमित्तों द्वारा बस्तुओं की तंजी-मन्त्री व्यवगत नाम अर्धकाण्ड है।

स्वप्न—चिन्ताधारा दिन और रात दोनों में यथान स्वभाव भूमि चलती है। जाग्रतावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण रहता है, पर शुगुप्तावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण नहीं रहता है, इसीलिए स्वप्न भी नाना अलंकार-मयी प्रतिरूपों में दिखलाई पड़ते हैं। स्वप्न में दर्शन और प्रत्यभिज्ञानभूति के अतिरिक्त शेषानुभूतियों का अभाव होने पर भी मुख्य, दुःख, कोध, आत्मद, मय, ईर्ष्या आदि सभी प्रकार के मनोभाव पाये जाते हैं। इन मार्गों के पाये जाने का प्रधान कारण हमारी अज्ञान इच्छा है। स्वप्न द्वारा भवित्व में उठित होने वाली शुभाशुभ शटनाओं की मूलना अलंकृत भाषा में भिन्नी है, अतः उस अलंकृत भाषा का विश्लेषण करता ही स्वप्न-विज्ञान का कार्य है। अरस्ट (Aristotle) ने स्वप्न के कारणों का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि आपूर्त अवस्था में जित प्रवृत्तियों की ओर व्यक्ति का ध्यान नहीं जाता, वे ही वृत्तियां अद्वितीय

अवस्था में उत्तेजित होकर मानसिक जगत् में जागरूक हो जाती है। अतः स्वप्न में भावी घटनाओं की सूचना के साथ हमारी छिपी हुई प्रवृत्तियों का ही दर्शन होता है। एक दूसरे पश्चिमीय दार्शनिक ने मनोवैज्ञानिक कारणों की खोज करते हुए बतलाया है कि स्वप्न में मानसिक जगत् के साथ वाह्य जगत् का सम्बन्ध रहता है, इसलिए हमें भविष्य में घटने वाली घटनाओं की सूचना स्वप्न की प्रवृत्तियों से मिलती है। डॉक्टर जी. जे. व्हाइटबे (Dr. G. J. Whitbey) ने मनोवैज्ञानिक ढंग से स्वप्न के कारणों की खोज करते हुए लिखा है कि गर्भ के कारण हृदय भी जो क्रियाएँ जागृत अवस्था में सुषुप्त रहती हैं, वे ही स्वप्नावस्था में उत्तेजित होकर सामने आ जाती हैं। जागृत अवस्था में कार्य-संलग्नता के कारण जिन विचारों की ओर हमारा ध्यान नहीं जाता है, निद्रित अवस्था में वे ही विचार स्वप्नस्था में सामने आते हैं। उचित्योरियन मिद्दान्त में माना गया है कि प्रतीर आत्मा की कल है। निद्रित अवस्था में आत्मा स्वतन्त्र रूप से असल जीवन की ओर प्रवृत्त होता है और अनन्त जीवन की घटनाओं को ला उपस्थित करता है। अतः स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यकाल के साथ भी है। बेबीलोनियन (Babylonian) कहते हैं कि स्वप्न में देव और देवियों आती हैं तथा स्वप्न में हमें उनके द्वारा भावी जीवन की सूचनाएँ मिलती हैं, अतः स्वप्न की बातों द्वारा भविष्यत् कालीन घटनाएँ सुनित ही जाती हैं। जिल्जेम्स (Giljames) नामक महाकाव्य में लिखा है कि बीरों को रात में स्वप्न द्वारा उनके भविष्य की सूचना दी जाती थी। स्वप्न का सम्बन्ध देवी-देवताओं से है, गनुओं से नहीं। देवी-देवता स्वभावतः व्यक्ति में प्रभन्न होकर उसके शुभाश्रुत वी सूचना देते हैं।

उपर्युक्त विचारायाओं का गणन्य करने में यह साप्त है कि खल के बीच अवदगित इच्छाओं का प्रवाणन नहीं, विकिंग भावी शुभाश्रुत एवं गुरुत्व है। फ्राइडे ने स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यत् गे घटने वाली घटनाओं से कुछ भी नहीं एवं निया है; पर वायतविकास इस दूर है। स्वप्न अविष्य एवं सूचक है। क्योंकि गुणप्रतापस्था में भी आत्मा तो जागृत ही रहती है, क्युंकि इन्द्रियों और मन की अस्तियों विद्याम करने के लिए शुगृण-नी ही जाती है। अतः मान की भावा की उपज्वलता में निद्रित अवस्था में जो कुछ देखते हैं, उसका सम्बन्ध हमारे भूत, वर्तमान और भावी जीवन से है। इसी कारण वाचायों ने स्वप्न को भूत, भविष्य और वर्तमान एवं सूचक बताया है।

मुहूर्त---मांगलिक कार्यों के लिए शुश्रामय का विचार करता मुहूर्त है। यन् गमय का प्रभाव प्रलेक जड़ पूर्व नीतन सभी प्रकार के पदार्थों पर पड़ता है। अन् गर्भाधारा दि पौर्ण वर्षान्तर एवं प्रातःकाल, शूषणमय, गृहप्रवेश, वाया प्रभृति शुभ कार्यों के लिए गुहूर्त का अधिक लिना परम जावणक है।

तिथि—चन्द्र और सूर्य के अन्तरांशों पर से तिथि का मान निकाला जाता है। प्रतिदिन 12 अंशों का अन्तर सूर्य और चन्द्रमा के भ्रमण में होता है, यही अन्तरांश का मध्यम मान है। अमावास्या के बाद प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियाँ शुक्लपक्ष की और पूर्णिमा के बाद प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक की तिथियाँ कृष्णपक्ष की होती हैं। ज्योतिष शास्त्र में तिथियों की गणना शुक्ल-पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होती है।

तिथियों की संज्ञाएँ—॥१॥१ नन्दा, २॥७॥१२ भद्रा, ३॥८॥३ जया, ४॥९॥१४ रिक्ता और ५॥१०॥१५ पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्षरन्त्र—४॥६॥८॥९॥१२॥१४ तिथियाँ पक्षरन्त्र हैं। ये विशिष्ट कार्यों में त्याज्य हैं।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्र में दोनों पक्षों की अष्टमी और नवमी; वैशाख के दोनों पक्षों की द्वादशी, ज्येष्ठ में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी प्रीर शुक्लपक्ष की चतुर्दशी; आषाढ़ में कृष्णपक्ष की पष्ठी और शुक्लपक्ष की सप्तमी; श्रावण में दोनों पक्षों की द्वितीया और तृतीया; भाद्रपद में दोनों पक्षों की प्रतिपदा और द्वितीया; आश्विन में दोनों पक्षों की दशमी और एकादशी; कार्तिक में कृष्णपक्ष की पञ्चमी और शुक्लपक्ष की चतुर्दशी; मार्गशीर्ष में दोनों पक्षों की सप्तमी और अष्टमी; पौष में दोनों पक्षों की चतुर्थी और पंचमी; माघ में कृष्णपक्ष की पंचमी और शुक्लपक्ष की षष्ठी एवं फाल्गुन में कृष्णपक्ष की चतुर्थी और शुक्लपक्ष की तृतीया मासशून्य संज्ञक हैं।

सिद्धा तिथियाँ—मंगलवार को ३॥८॥३, बुधवार को २॥७॥२, गुरुवार को ५॥१०॥१५, शुक्रवार को ॥६॥१ एवं शनिवार को ४॥८॥४ तिथियाँ सिद्ध देने वाली सिद्धा संज्ञक हैं।

दाघ, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ—रविवार को द्वादशी, गोमवार को एकादशी, मंगलवार को पंचमी, बुधवार को तृतीया, गुरुवार को पाठी, शुक्र को अष्टमी, शनिवार को नवमी दस्या संज्ञक; रविवार को चतुर्थी, गोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सातमी, बुधवार को द्वितीया, गुरुवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी विषसंज्ञक एवं रविवार को द्वादशी, गोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सप्तमी; बुधवार को अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनिवार को एकादशी हुताशनसंज्ञक हैं। ये तिथियाँ नाम के अनुसार फल देती हैं।

करण—तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं अर्थात् एक तिथि में दो करण होते हैं। करण ॥ ॥ होते हैं—(१) वव (२) वालव (३) वौलव (४) तैतिल (५) गर (६) वणिज (७) विटि (८) शकुनि (९) चतुर्गाद (१०) नाग और

(11) किस्तुष्म। इन करणों में पहले के 7 करण चरसंजक और अन्तिम 4 करण स्थिर संजक हैं।

करणों के स्वामी—वक्त का इन्द्र, बालव का ब्रह्मा, कीलव का सूर्य, तैतिल का गूर्ध्न, गरुड़ की पृथ्वी, वणिज की लक्ष्मी, विष्णु का यग, शकुनि का कलि, चतुष्पाद का रुद्र, ताग का सर्प एवं किस्तुष्म का वायु है। विष्णु करण का नाम भद्रा है, प्रत्येक पञ्चवार्ष में भद्रा के आरम्भ और अन्त का समय दिया रहता है।

निमित्त—जिन वक्षणों को देखकर भूत और भवित्य में घटित हुई और होने वाली घटनाओं का निरूपण किया जाता है, उन्हें निमित्त कहते हैं। निमित्त के आठ भव हैं—
 (1) व्यंजन—तिल, मरसा, चट्टा आदि को देखकर शुभाशुभ का निरूपण करना व्यंजन निमित्तज्ञान है।
 (2) मस्तक, हाथ, पाँव आदि अंगों को देखकर शुभाशुभ कहना अंग निमित्तज्ञान है।
 (3) कृषि और अन्नेतर के शब्द गुनकर शुभाशुभ का वर्णन करना स्वर निमित्तज्ञान है।
 (4) पृथ्वी की चिकनाई और रुक्षण को देखकर पालादेश निरूपण करना भौम निमित्तज्ञान है।
 (5) वस्त्र, शरन, आनन, छवादि की छिद्रा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन निमित्तज्ञान है।
 (6) प्रहृ नदीओं के उदयासत द्वारा फल निरूपण करना अन्तरिधि निमित्तज्ञान है।
 (7) स्वस्तिक, कलश, शंख, घंटा आदि चिह्नों द्वारा एवं हस्तरेखा की परीक्षा कर फलादेश बतलाना लक्षण निमित्तज्ञान है।
 (8) स्वप्न द्वारा शुभाशुभ फल कहना स्वप्न निमित्तज्ञान है। ऋषिगुप्त निमित्तज्ञासत्र में निमित्तों के लीन ही भेद किये गये हैं—

जो दिट्ठ भुविरस्थ जे दिद्वा युहमेष कत्ताण।

सदसंकुलेन दिद्वा दउसदिष्ट ऐण याणधिया॥

अथत्—पृथ्वी पर देखलाई देने वाले निमित्त, आकाश में देखलाई देने वाले निमित्त और शब्दशब्दण द्वारा सूचित होने वाले निमित्त, इस प्रकार निमित्त के तीन भेद हैं।

शकुन—जिसमें शुभाशुभ का जान किया जाय, वह शकुन है। ब्रह्मतत्त्वाज्ञ शकुन में वसाया गया है कि जिन चिह्नों के देखने से शुभाशुभ जाना जाय, उन्हें जग्नुन कहते हैं। जिस निमित्त द्वारा शूभ विषय जाना जाय उसे शुभ शकुन और जिसके द्वारा शूभ जाना जाय उसे जग्नुन कहते हैं। दधि, घृत, दुर्वा, आतप, तप्तुल, पूर्णगुध्म, सिद्धान्त, श्वेत सर्प, चन्दन, शंख, मृत्तिका, गोरोचन, विषमुग्धि, वीणा, फल, पुष्प, अलंकार, अस्त्र, ताम्बूल, मान, आसन, छवज, छव, व्यज्ञन, वस्त्र, रस्त, गुरुण, पात्र, भूमार, प्रज्वलित वहिन, हस्ती, छाग, कुश, वाष्प, ताम्र, वग, वीणध, गवाह इस गम्भुओं की गणना शुभ शकुनों में की गई है। यात्रा के समय इनका दर्शन और स्पष्टमें शूभ माना गया है। यात्राकाल

में संगीत सुनना, वाद्य सुनना भी शुभ माना गया है। गमनकाल में यदि कोई खाली घड़ा लेकर पथिक के साथ जाय और घड़ा भर कर लौट आवे तो पथिक भी कृतकार्य होकर निविधि लौटता है। यात्रा-काल में चुल्लू भर जल से कुल्ली करने पर यदि अकस्मात् कुछ जल मले के शीतल चला जाय तो अशीर्ष कार्य की सिद्धि होती है।

अंगार, भस्म, काठ, रज्जु, कर्दम-कीचड़, कपास, तुष, अस्थि, विठ्ठा, मलिन व्यक्ति, लौह, कृष्णधान्य, प्रस्तर, केश, सर्प, तेल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तिनका, तक, शृंखला आदि का दर्शन और स्पर्शन यात्रा काल में अशुभ माना जाता है। यदि यात्रा करते समय गाड़ी पर चढ़ते हुए पैर फिसल जाय अथवा गाड़ी छूट जाय तो यात्रा में विघ्न होता है। मार्जीरियुद्ध, मार्जीरिशब्द, कुटुम्ब का परस्पर विवाद दिखलायी पड़े तो यात्रा काल में अनिष्ट होता है। अतः यात्रा करना वजित है। नये घर में प्रवेश वारते समय शब्द-दर्शन होने से मृत्यु अथवा दशा रोग होता है।

जाते अथवा आते समय यदि अत्यन्त सुन्दर शुक्लवस्त्र और शुक्ल मालाधारी पुरुष या स्त्री के दर्शन हों तो कार्य सिद्ध होता है। राजा, प्रसन्न व्यक्ति, कुमारी कन्या, गजारूढ़ या अश्वारूढ़ व्यक्ति दिखलाई पड़े तो यात्रा में शुभ होता है। श्वेत वस्त्रधारिणी; श्वेतचम्दनविष्टा और मिर पर श्वेत माला धारण किये हुए गौरांग नारी मिल जाय तो सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

यात्राकाल में अपमानित, अंगहीन, नगन, हैलजिप्त, रजस्वला, गर्भवती, रोदनकारिणी, मलिनवेशधारिणी, उन्मत्त, मुक्तकेशी नारी दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट होता है। जाते समय 'पीछे' से या सामने खड़ा हो दूसरा व्यक्ति कहे—'जाओ, मंगल होगा' तो पथिक को सब प्रकार से विजय मिलती है। यात्राकाल में शब्दहीन शृगाल दिखलाई पड़े तो अनिष्ट होता है। यदि शृगाल पहले 'हुआ-हुआ' शब्द करके पीछे 'टटा' ऐसा शब्द करे तो शुभ और अन्य प्रकार का शब्द करने से अशुभ होता है। रात्रि में त्रिस घर के परिचम और शृगाल शब्द करे, उसके मालिक का उच्चाटन, पूर्व की और शब्द होने से भय, उत्तर और इक्षिण की ओर शब्द करने से शुभ होता है।

यदि भ्रमर वाई और युन-गुन शब्द कर किसी स्थान में ठहर जाएं अथवा भ्रमण करते रहें तो यात्रा में लाभ, हर्ष होता है। यात्राकाल में पैर में कॉटा लगने से विघ्न होता है।

अंग का दक्षिण भाग फड़कने से शुभ तथा पृष्ठ और हृदय के वामभाग का स्फुरण होने से अशुभ होता है। मस्तक स्फुरन होने से स्थानवृद्धि तथा भ्रू और नासा स्फुरन से प्रियसंगम होता है। चक्षु स्फुरन से भूत्यलाभ, चक्षु के उपान्त

देश का स्पन्दन होने से अर्थलाभ और समय देण के फड़कने से उद्देश और मृत्यु होती है। अपांग देश के फड़कने से स्वीलाभ, कार्ण के फड़कने से प्रियंसंवाद, नासिका के फड़कने से प्रणय, अधर ओढ़ के फड़कने से अभीष्ट विषयलाभ, कण्ठ देश के फड़कने से सुख, बाहु के फड़कने से मिथ्यसनेह, स्कन्धप्रदेश के फड़कने से सुख, हाथ के फड़कने से धनलाभ, पीठ के फड़कने से पराजय, और वक्षस्थल के फड़कने से जयलाभ होता है। मिथ्यों की कुक्षि और स्तन फड़कने से सन्तानलाभ, ताभि फड़कने से कष्ट और स्थान-च्युति फल होता है। स्त्री का दामांग और पुरुष का दक्षिणांग ही फल निरूपण के लिए ग्रहण किया जाता है।

पाठ—सूर्यादि ग्रहों का फल कितने समय में मिलता है, इसका निरूपण करना ही इस अध्याय का विषय है।

ज्योतिष—सूर्यादि ग्रहों के गमन, संचार आदि के द्वारा फल का निरूपण किया जाता है। इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र, धूमनेत्रु आदि ज्योति पदार्थों का स्वरूप, संचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओं का निरूपण एवं ग्रह, नक्षत्रों की गति, शिखि और संचारानुसार शुभाशुभ फलों का गमन किया जाता है। क्षेत्रिक भग्नीपिशों का अभियंत है कि नभोमङ्गल में स्थित ज्योतिःगम्ब्रन्त्री विविध विषयक विद्या को ज्योतिविद्या कहते हैं, जिस शास्त्र में इस विद्या का यांगोपांग वर्णन रहता है, वह ज्योतिपश्चास्त्र कहलाता है।

वास्तु—वास स्थान की वास्तु कहा जाता है। वास करने के पहले वास्तु का शुभाशुभ स्थिर करके वास करना होता है। ज्याणादि द्वारा इस बात का निर्णय करना होता है कि कौन वास्तु शुभकारक है और कौन अशुभकारक। इस प्रकरण में ग्रहों की लम्बाई, चौड़ाई तथा प्रकार आदि का निरूपण किया जाता है।

दिव्येन्द्र संपदा आपांग की दिव्य विभूति द्वारा फलादेश का वर्णन करता ही इस अध्याय के अन्तर्गत है।

लक्षण —इस विषय में दीपक, लक्ष, बाढ़, श्वास, गो, कुकुट, कूर्म, छाग, अश्व, गज, पुरुष, स्त्री, चमर, छवि, प्रतिमा, शश्यामन, प्रासाद प्रभृति के स्वरूप गुण आदि का विवेचन किया जाता है। स्त्री और पुरुष के लक्षणों के अन्तर्गत गामुद्रि, शास्त्र भी आ जाता है। अंगोपांगों की बनावट एवं आकृति द्वारा भी शुभाशुभ लक्षणों का निरूपण इस अध्याय में किया जाता है।

चिह्न विभिन्न प्रयत्न के श्रीरच्चाल्य एवं श्रीरात्तर्गत चिह्नों द्वारा शुभाशुभ फल का विवरण करना विद्युत के अन्तर्गत आता है। इसमें तिल, मस्ता आदि चिह्नों का विचार विशेष रूप में होता है।

लग्न—जिस समय में कान्तिवृत्त का जो प्रदेश स्थान दितिज वृत्त में लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि दिन का

उतना अंश जितने में किसी एक राशि का उदय होता है, उसने कहलाना है। अहोरात्र में वारह राशियों का उदय होता है, इसलिए एक दिन-रात में बारह लग्न मानी जाती हैं। लग्न निकालने की किया गणित द्वारा की जाती है। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्ह और मीन ये लग्न राशियाँ हैं।

मेष—पुरुषजाति, चर संज्ञक, अग्नितत्त्व, रक्तपीतवर्ण, पित्तप्रकृति, पूर्व-दिशा की स्वामिनी और पृथ्वेदयी है।

वृष—स्त्रीराशि, स्थिरसंज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल रवभाव, वातप्रकृति, श्वेत-वर्ण, किष्मोदयी और दक्षिण की स्वामिनी है।

मिथुन—पश्चिम की स्वामिनी, वायुतत्त्व, हरितवर्ण, गुरुपराशि, द्विस्वभाव, उष्ण और दिनबली है।

कर्क—चर, स्त्रीजाति, शीघ्र, कफ प्रकृति, जननशारी, गमोदयी, रात्रिवली और उत्तर दिशा की स्वामिनी है।

सिंह—गुरुपराशि, स्थिरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनवली, पित्तप्रकृति, पृथ्व-शरीर, भ्रमजप्रिय और पूर्व की स्वामिनी है।

कन्या—पिगलवर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण की स्वामिनी, रात्रिवली, वायु-पित्त प्रकृति और पृथ्वीतत्त्व है।

तुला—पुरुष, चर, वायुतत्त्व, पञ्चिक की स्वामिनी, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, दिनबली और कूरस्वभाव है।

वृश्चिक—गिथर, शुभ्रवर्ण, स्त्रीजाति, जननतत्त्व, उत्तर दिशा की स्वामिनी, कफप्रकृति, रात्रिवली आंग छड़ी है।

धनु—पुरुष, कांचनवर्ण, द्विस्वभाव, कूर, पित्तप्रवृत्ति, दिनबली, अग्नितत्त्व और पूर्व की स्वामिनी है।

मकर—चर, स्त्री, पृथ्वीतत्त्व, वातप्रकृति, पिगलवर्ण, रात्रिवली, उच्चाभिलाषी और दक्षिण की स्वामिनी है।

कुम्ह—पुरुष, मिथर, वायुतत्त्व, विच्चित्रवर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, क्रियोप्रकृति और दिनबली है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्रीजाति, कफप्रकृति, जननतत्त्व, रात्रिवली, पिगलवर्ण और उत्तर की स्वामिनी है।

इन लग्नों का जैसा स्वरूप बतलाया गया है, उन लग्नों में उत्पन्न हुए अवितथों का यैसा ही स्वभाव होता है।

द्वितीयोऽध्यायः

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्बासा श्रमणोत्तमः ।
यथावस्थासु^१ विज्ञासं द्वादशांगविशारदः ॥१॥

शिष्यों के उक्त प्रश्नों के किये जाने पर द्वादशांग के पारगामी दिग्म्बर श्रमणोत्तम भगवान् भद्रवाहु आगम में जिस प्रकार से उक्त प्रश्नों का वर्णन निहित है उसी प्रकार से अथवा प्रश्नक्रम से उत्तर देने के लिए उद्यत हुए ॥ १ ॥

भवद्भयदहं पृष्ठो निमित्तं जिनभाषितम् ।
समासव्यासतः सर्वं तन्निबोध यथाविधि ॥२॥

आप सबने मृत्युमें यह पूछा कि “जुभाशृभ जानने के लिए जिनेन्द्र भगवान् ने जिन निमित्तों का वर्णन किया है, उन्हें बतलाओ ।” अतः मैं संशोध और विस्तार गे उन सबका यथाविधि वर्णन करता हूँ, अवगत करो ॥ २ ॥

प्रकृतेयोऽन्यथाभावो दिक्पारः सर्वं उच्यते ।
एवं विकारेऽविज्ञेयं भयं तत्प्रकृतेः सदा ॥३॥

प्रकृति का अन्यथाभाव दिक्पार कहा जाता है। जब कभी तुमको प्रकृति का विकार दिखलाई पड़े तो उस पर से जात करना कि यहाँ पर भय होने वाला है ॥ ३ ॥

यः प्रकृतेविद्यर्थिः प्रायः संक्षेपत उत्पातः ।
क्षिति-गगन-दिव्यजातो यथोत्तरं गुरुतरं भवति ॥४॥

प्रकृति के विपरीन घटना घटित होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं - भौमिक, अन्तरिक्ष और दिव्य। क्रमशः उत्तरोत्तर ये दुःखदायक तथा कठिन होते हैं ॥ ४ ॥

उल्कानां प्रभवं रूपं प्रभाणं फलमाकृतिः ।
यथावत्^२ संप्रबद्ध्यामि तन्निबोधय^३ तत्त्वतः ॥५॥

उल्काओं वी उल्कनि, रूप, प्रभाण, फल और आकृति का यथार्थ वर्णन करता हूँ। आग जोग यथार्थ रूप से इसे अवगत करें ॥ ५ ॥

1. शहत्रदिव्यान् मृ० । 2. विकारो विजेतः मृ० A. । 3. य प्रकृतेऽन्यथाममः मृ० A. ।
4. यह फलोंक मुद्रित प्रति में नहीं है । 5. यथावस्थं त. । 6. तन्निबोधत मृ० ।

**भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामि ह ।
सम्भवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुलकेति संजिता ॥6॥**

भौतिक—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पाँच भूतों से निरानन शरीरों को धारण किये हुए, देव जब स्वर्ग से इस लोक में आते हैं, तब उनके शरीर आकाश में विचित्र ज्योति-रूप को धारण करते हैं; इसी ज्योति का नाम विद्वानों ने उल्का कहा है ॥ 6 ॥

**तत्र तारा तथा धिष्णुं विद्युच्चाशनिधिः सह ।
उल्का विकारा बोद्धव्या निपतन्ति निमित्ततः ॥7॥**

तारा, धिष्णु, विद्युत् और अशनिधि ये सब उल्का के विकार हैं और ये निमित्त पात्र हिस्ते हैं ॥ 7 ॥

**ताराणां च प्रमाणं च^१ धिष्ण्यं तद्द्विगुणं भवेत् ।
विद्युद्विशालकुटिला रूपतः क्षिप्रकारिषी^२ ॥8॥**

तारा का जो प्रमाण है उसमें लम्बाई में दुना धिष्ण्य होता है। विद्युत् नाम ताली उल्का बड़ी, कुटिल—ठेढ़ी-मेढ़ी और श्रीब्रग्नामिनी होती है ॥ 8 ॥

**अशनिश्चक्षसंस्थाना दीर्घा भवति रूपतः ।
पौरुषी तु भवेदुल्का प्रपतन्ती विवर्णते ॥9॥**

अशनि नाम की उल्का चक्राकार होती है। पौरुषी नाम की उल्का स्वभाव से लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है ॥ 9 ॥

**चतुर्भागफला तारा द्विष्ण्यमर्धफलं भवेत् ।
पूजिता^३ पद्मसंस्थाना मांगल्या ताश्च पूजिता^४ ॥10॥**

तारा नाम की उल्का का फल चतुर्थांश होता है, धिष्ण्य गांत्रक उल्का का फल आधा होता है और जो उल्का क्रमवालाकार होती है वह गूजरे पोथी तथा मंगलकारी होती है ॥ 10 ॥

**पापाः^५ घोरफलं दद्युः शिवाश्चापि शिवं फलम् ।
व्यामिश्राश्चापि व्यामिश्रं येषां तेः प्रतिपुद्गलः ॥11॥**

1. ते पतन्ति मू० । 2. तारातारा मू० । 3. तु मू० । 4. क्षिप्रकारिषि मू० । 5. रक्ता पीताल्पु मष्टाल्पु श्वेता: इन्द्रधास्तु पूजिता: मू० । 6. पापफलं मू० ।

पापरूप उल्काएँ और अशुभ फल देती हैं तथा शुभ रूप उल्काएँ शुभ फल देती हैं। शुभ और अशुभ मिथित उल्काएँ मिथित उभय रूप फल प्रदान करती हैं। इन पुद्गलों का ऐसा ही स्वभाव है ॥ 11 ॥

इत्येतावत् समासेन प्रोक्तुमुल्कासुलक्षणम् ।

पृथक्त्वेन प्रवक्ष्यामि लक्षणं व्यासतः पुनः ॥ 21 ॥

यहाँ तक उल्काओं के संक्षेप में लक्षण कहे, अब पृथक्-पृथक् पुनः विस्तार से वर्णन करता है ॥ 12 ॥

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायामुल्कालक्षणो द्वितीयोऽध्यायः ।

विवेचन - प्रकृति का विएरीत परिणमन होने ही अनिष्ट घटनाओं के घटने की संभावना समझ लेनी चाहिए। जब तक प्रकृति अपने स्वभावरूप में परिणमन करती है, तब तक अनिष्ट होने की आशंका नहीं। संहिता ग्रंथों में प्रकृति को इष्टानिष्ट गूचक निभिल माना गया है। दिवाएँ, अकाश, आत्मा, वर्षा, जांदी, नेह-गीधि, पशु-पक्षी, उपा, सन्ध्या आदि मधी निभिल गूचक हैं। ज्योतिष जाग्र में उन सभी निभिलों द्वारा भावी इष्टानिष्टों की विवेचना की गई है। इस द्वितीय अध्याय में उल्काओं के स्वरूप का विवेचन किया गया है और इनका फलादेश तृतीय अध्याय में वर्णित है। प्रत्येक प्रथम अध्याय के विवेचन में उल्काओं के स्वरूप का वर्णित और ग्रामान्य परिचय दिया गया है, तो भी यहाँ संक्षिप्त विवेचन करना प्रभीष्ट है।

पात की प्रायः जो तारे दूरदूर गिरते हुए जान पड़ते हैं, ये श्री उल्काएँ हैं। अधिकांश उल्काएँ हमारे वायुमण्डल में ही भूम हो जाती हैं और उनका कोई अंश पृथ्वी तक नहीं आ पाता, परतु कुछ उल्काएँ वही होती हैं। जब वे भूमि पर गिरती हैं, तो उनसे प्रचण्ड ज्वाला गी तिकलती है और सारी भूमि उस ज्वाला से प्राप्तित हो जाती है। वायु को चीरने हुए भयानक वेग से उनके चलने का अद्वितीय तक सुनाई पड़ता है और पृथ्वी पर गिरने की थमक भूकम्प-गी जान पड़ती है। अहा जाता है कि आगम में उल्कापिण्ड एक सामान्य ठूँडे प्रस्तुत-पिण्ड के रूप में रहता है। यदि यह वायुमण्डल में प्रविष्ट हो जाता है तो भौगोलिक ताप और प्रकाश उत्पन्न होता है, जिससे वह जल उठता है और भौगोलिक में दीप्त होता हुआ अच्छ में राख हो जाता है और जब यह वायुमण्डल में राख नहीं होता, तब पृथ्वी पर गिरने का भयानक दृश्य उत्पन्न कर देता है।

उल्काओं के गुण या मार्ग तक्षक कथा के आधार पर निश्चित किया जाय

तो प्रतीत होगा कि बहुतेरी उल्काएँ एक ही विन्दु से चलती हैं, परं आरम्भ में अदृश्य रहने के कारण वे हमें एक बिन्दु से आती हुई नहीं जान पड़तीं। केवल उल्का-जड़ियों के समान ही उनके एक विन्दु से चलने का आभास हमें मिलता है। उस विन्दु को जहाँ से उल्काएँ चलती हुई मालूम पड़ती हैं, सांगत मूल कहते हैं। आधुनिक ज्योतिष उल्काओं -ों के तुओं के रोड़े, टूकड़े या थंथ मानता है। अनुमान किया जाता है कि केतुओं के मार्ग में असंख्य रोड़े और ढांके बिखर जाते हैं। सूर्य गमन करते-करते जब इन रोड़ों के निकट से जाता है तो ये रोड़े टकरा जाते हैं और उल्का के रूप में भूमि में पतित हो जाते हैं। उल्काओं की ऊँचाई पृथ्वी से 50-70 मील के अवधार होती है। ज्योतिषशास्त्र में इन उल्काओं का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। इनके पतन द्वारा शुभाशुभ का परिव्राज किया जाता है।

उल्का के ज्योतिष में पाँच भेद हैं—धित्या, उल्का, अण्णि, विद्युत् और तारा। उल्का का 15 दिनों में, धित्या और अण्णि का 45 दिनों में पूर्वास और विद्युत् का 72 दिनों में फल प्राप्त होता है। अण्णि का आकाश चक्र के समान है, यह बड़े शब्द के साथ पृथ्वी परावर्ती हुई प्रकृष्टि, गज, अश्व, मूर्ग, पत्थर, मूह, वृक्ष और पशुओं के ऊपर गिरती है। तड़-तड़ अद्य करती हुई विद्युत् अचानक प्राणियों को त्रास उत्पन्न करती हुई कुटिल और विशाल रूप में जीवों और ईधन के द्वेर पर गिरती है। पतनकी छोटी पूँछवाली धित्या जलक्षे हुए अंगारे के समान चालीय हाथ तक दिखलाई देती है। उगकी ऊँचाई दो हाथ की होती है। तारा ताँचा, कगाल, ताम्रहृषि और शुक्ल होती है, इसकी ऊँचाई एक हाथ और खिचती हुई-सी आकाश में तिरछी या आधी उड़ी हुई गमन करती है। प्रतनुपृच्छा धिंजाला उल्का गिरने-गिरने बढ़ती है, परन्तु उगकी पूँछ छोटी होती जाती है, इसकी दीर्घता पुरुष के समान होती है, इसके अनेक भेद हैं। कभी यह प्रेत, शास्त्र, खर, अर्थ, माला, वन्देश, तीर्थ दत्तवाले जीव और मूर्ग के समान आकारवाली हो जाती है। कभी गोह, गांग और धूमहृषि वाली हो जाती है। कभी यह दो सिरवाली दिखलाई पड़ती है। यह उल्का पाप-मय मानी गई है।

कभी छवज, मत्स्य, द्वार्थी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तथा रज और छ्रूम के समान दिखलायी पड़ती है, यह उल्का शुभकारक पृष्ठामयी है। वीधत्ति, वज्र, शंख और स्वस्तिक रूप में प्रकाशित होनेवाली उल्का संव्याष्टिकारी और मुभिक्षदायक है। अनेक वर्णवाली उल्काएँ आकाश में निश्चिर अमण करती रहती हैं।

जिन उल्काओं के सिर का भाग मकर के समान और पूँछ गाय के समान

हो, वे उल्काएँ अनिष्ट सूचक तथा मनुष्य जाति के लिए भयप्रद होती हैं। चमक या प्रकागवाली छोटी-छोटी उल्काएँ—जिनका स्वरूप धिल्लिया के समान हैं, किसी महत्त्वपूर्ण घटना की सूचना देती है। तार के समान लम्बी उल्काएँ, जिनका गगन सम्मात बिन्दु में भूमण्डल तक एक-सा हो रहा है, बीच में किसी भी प्रकार का विराम नहीं है, वे व्यक्ति के जीवन की गुणता और महत्त्वपूर्ण बातों को प्रकट करती हैं। तार या लड़ी रूप में रहना उसका व्यवित्र और समाज के जीवन की शृंखला की सूचक है। सूची रूप में पढ़ने वाली उल्का देश और राष्ट्र के उत्थान की सूचिका है।

इधर-उधर उठी हुई और विश्रृंखलित उल्काएँ आन्तरिक उपद्रव की सूचिता है। जब देश में महान् अशान्ति उत्पन्न होती है, उस रामय इस प्रकार की छिट-फूट गिरती पड़ती उल्काएँ दिखलायी पड़ती हैं। उल्काओं का पतन प्रायः प्रतिदिन होता है। पर उनसे इष्टानिष्ट की सूचना अवसर विशेषों पर ही मिलती है।

उल्काओं का फलादेश उनकी बनावट और रूप-रंग पर निर्भर करता है। यदि उल्का फीकी, केवल तारे की तरह जान पड़ती है, तो उसे छोटी उल्का या टूटना तारा कहने हैं। यदि उल्का इतनी बड़ी हुई कि उसका अंश पृथ्वी तक पहुँच जाय तो उसे उल्का प्रस्तर कहते हैं और यदि उल्का बड़ी होने पर भी आकाश ही में कटकर चूर-चूर हो जाए, तो उसे साधारणतः अग्निपिण्ड कहते हैं। छोटी उल्काएँ महत्त्वपूर्ण नहीं होती हैं, इनके द्वारा किसी खास घटना की सूचना नहीं मिलती है। ये केवल दर्शक व्यवित्र के जीवन के लिए ही उपयोगी सूचना देती है। बड़ी-बड़ी उल्काओं का सम्बन्ध गाढ़ रो है, ये राष्ट्र और देश के लिए उपयोगी सूचनाएँ देती हैं। यद्यपि आशुनिक विज्ञान उल्का-पतन को भात्र प्रकृतिलीला मानता है, किन्तु प्राचीन ज्योतिषियों ने इनका सम्बन्ध वैयवितक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के उत्थान-पतन के साथ जोड़ा है।

तृतीयोऽध्यायः

नक्षत्रं यस्य यत्पुंसः पूर्णमुलका प्रताङ्गेत् ।
भवं तस्य भवेद् घोरं यतस्तत् कम्पते हतम् ॥१॥

जिस पुरुष के जन्म-नक्षत्र को अपना नाम-नवाव के उल्लंग शिरसे से ताड़ित करे उस पुरुष को योर भय होता है । यदि जन्म-नक्षत्र को कमायमान करे तो उसका बात होता है ॥ १ ॥

अनेकवर्णं नक्षत्रमुलका हत्युर्यदा समाः ।
तस्य देशस्य तावन्ति भयात्युग्राणि निर्विशेषः ॥२॥

जिस वर्ष जिस देश के नक्षत्र की अनेक वर्ण की उल्का आपात करे तो उस देश या शाम को उग्र भय होता है ॥ २ ॥

येषां वर्णेन संयुक्ता सूर्यदुलका प्रवत्तते ।
तेभ्यः संजायते लेषां भयं येषां दिशं पतेत् ॥३॥

सूर्य से मिलती हुई उल्का जिस वर्ण से युज्ज्वल होकर जिस दिशा में गिरे, उस दिशा में उस वर्ण वाले को वह दोर भय करने वाली होती है ॥ ३ ॥

नीला पतन्ति या उल्काः सस्थं सर्वं विनाशयेत् ।
क्रिवर्णी त्रीणि घोराणि भयात्युलका निषेदयेत् ॥४॥

यदि नीलवर्ण की उल्का गिरे तो वह सर्व प्रकार के धान्यों को नाश करती है अर्थात् उनके नाश की गूचना देती है और यदि तीन वर्ण की उल्का गिरे तो तीन प्रकार के थोर भयों को प्रकट करती है ॥ ४ ॥

विकीर्यं विष्णा कविला विशेषं वावस्सिता ।
खण्डा भ्रमन्त्योऽ विकृताः^१ सर्वा उल्काः भयावहाः ॥५॥

विष्णुरी हुई कविल वर्ण की विशेषकर वामशाग में गग्न करने वाली, शूगती हुई, खण्डरूप एवं विकृत उल्काएँ दिखाई दें तो वे सब भय होते की गूचना करती हैं ॥ ५ ॥

उल्काऽशनिश्च धिष्ठां च प्रपतन्ति थतो मुखाः ।
तस्यां दिशि विजानीयात् ततो भयमुपस्थितम् ॥६॥

उल्का, अणानि और विष्ण्या जिस दिशा में युज्ज्वल में गिरे तो उस दिशा में भय की उपस्थिति अवश्य उनकी चाहिए ॥ ६ ॥

1. वामकर्णस्थिता मु० B. C. + 2. अमन्त्रमु० C. + 3. विकृताः गु० C. +

सिंह-व्याघ्र-वराहोष्टु-श्वानद्वीपि । खरोपमा ।
 शूलपट्टिशसंस्थाना धनुवणि-गदा^१ यथा ॥७॥
 पाशवज्जा । सिसदृशा । परश्वर्धन्दुसंनिभाः ।
 गोधा-सर्प-शृगालाना^२ सदृशा । शल्यकस्य च ॥८॥
 मेषाजमहिषाकाराः काकाऽकृतिवृकोपमा ।
 शशमाजार-सदृशा । पश्यकोदयसन्निभाः ॥९॥
 ऋक्ष-वानरसंस्थानाः कबन्धसदृशाश्च याः ।
 अला^३तचक्षसदृशा “वक्राक्षप्रतिमाश्च” याः^४ ॥१०॥
 शक्तिलाङ् गूलसंस्थाना^५ यस्याश्चोभयतः शिरः ।
 स्वास्तन्यमाना नागाभाः प्रपतन्ति^६ स्वभावतः ॥११॥

सिंह, व्याघ्र, चीता, शूलार, ऊंट, कुत्ता, तेंदुआ, गदहा, विशूल, पट्टिण—एक प्रकार का आयुध, धनुप, बाण, गदा, छरसा, वज्र, तलबार, फरसा-अङ्ग-खन्द्रावार कुलहाड़ी, गोह, सर्प, शृगाल, भाला, मेढ़ा, वकरा, भैसा, चौआ, खड़िया, खरगोश, विल्की, अत्यन्त ऊंचे उड़नेवाले पक्षी—गृद्ध आदि, रीछ, बन्दर, शिर वर्टे हुए धड़, कुम्हार का चाक, टेढ़ी औंचवाला, शक्तिभायुध विशेष, हल इन सबके आकार वाली और दो सिरवाली तथा हाथी के आकारवाली उल्काएँ स्वभाव से गिरती हैं ॥७-११॥

उल्काऽशनिश्च विद्युत्त्वं सम्पूर्णं कुरुते फलम् ।
 पतन्ती जनपदान् त्राणि उल्का तीक्र^७ प्रबोधते ॥१२॥

उल्का, अशनि और विद्युत् ये तीनों पूर्ण फल देती हैं और इन तीनों के गिरने से देशवासियों को पूर्ण बाधा होती है ॥१२॥

यथा बदनुपूर्वेण तत् प्रबक्ष्यामि तत्त्वतः ।
 अग्रते देशमाग्नेण सध्येनानन्तरं ततः ॥१३॥
 पुच्छेन पृष्ठतो देशं पतन्त्युल्का विनाशयेत् ।
 मध्यमा न प्रशस्यन्ते न भस्युल्काः पतन्ति याः ॥१४॥

1. शृंगव्याल मूः । 2. यव निष्ठा, मूः । 3. शशमाजार-शृदणा: प्रथांदयसन्निभाः, मूः ।
4. गोधा-सर्प-शृगाल-पश्यको, मूः । 5. अलाम मूः A । 6. ऋक्षादा मूः C-D ।
7. तेंदुशब्द मूः C । 8. अलुवा मूः C । 9. रंकाषा जार । 10. प्रयाणि मूः ।
11. प्रबोधते मूः A-B ।

पूर्व परम्परा के अनुसारे फलादेश का निष्पण करता है। यदि उल्का अग्रभाग से गिरे तो देश के मार्ग का नाश करती है। यदि मध्यभाग से गिरे तो देश के मध्यभाग के और पूछ भाग से गिरे तो देश के पृष्ठ भाग के विनाश की सूचना देती है। मध्यम-समान साधारण अवस्थावाली उल्का का पतन भी प्रशस्त नहीं होता है ॥ 13-14॥

**१ स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो प्रशस्ताः स्युः प्रदक्षिणाः ।
उल्का यदि गतेचिद्दद्रा लक्षणात्तहिताय^१ सा ॥ १५॥**

मध्यम उल्का स्नेहयुक्त होती हुई दक्षिण मार्ग से गतन करे तो वह प्रशस्त है और चित्र-चित्र रंग की मध्यम उल्काएँ बाम मार्ग से गतन करे तो पक्षियों के लिए अहित कारक होती हैं ॥ १५॥

**श्याम-लोहितवर्णा च सदा कुर्याद् महद् भयम् ।
उल्कायां भस्मवर्णायां परवक्त्राण्यमो भवते ॥ १६॥**

आली और कालवर्ण की उल्का गिरे तो वह जीव ही महाभय नहीं सूचना देती है तथा भस्मवर्ण को उल्का परवक्त्र का आना सूचित करती है ॥ १६॥

**अग्निभिन्नप्रभा कुर्याद् व्याधिमञ्जिलसन्निभा ।
नीता कृष्णा च धूम्रा च शुक्ला वाऽसिसमयुतिः^२ ॥ १७॥
उल्का नीचैः समा स्त्रिधा पतन्ति भयमादिशत् ॥ १७॥
शुक्ला रक्ता च पीता च कृष्णा चापि यथाक्रमम् ।
चतुर्बर्णा विभक्तव्या साधुनोक्ता यथाक्रमम् ॥ १८॥**

अग्नि की प्रभावशाली उल्का अग्नि का भव करती है। मंजिल के गपान रंगवाली उल्का व्याधि की सूचना देती है। नीत, कृष्ण, धूम्र तलधार के समान द्युतिवाली उल्का नीच प्रकृति-बधम होती है। स्त्रिधा उल्का गम प्रकृति-बाली होती है। शुक्ल, रक्त, पीत और कृष्ण इन चारोंवाली उल्का अमण्डलाद्याण, अक्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण में विभाजित समझनी चाहिए। ये चारों वर्णवाली उल्काएँ क्रमशः श्राद्धाणादि चारों वर्णों की भय की सूचना देती है, ऐसा पूर्वावायों ने कहा है। अभिप्राय यह है कि श्वेतवर्ण की उल्का श्राद्धा संज्ञका है, इसका फलादेश श्राद्धण वर्ण के लिए विशेष रूप से और सामान्यतः अन्य वर्णवालों को भी प्राप्त होता है। इसी प्रकार रक्त रोक्षनिय, पीत गवेश्य और कृष्ण से शूद्रवर्ण के लिए प्रधानतः फज्ज और गौण स्थं रो अन्य वर्णवालों को भी फलादेश प्राप्त होता है ॥ १७-१८॥

1. लंहरनी जाति 2. दक्षिणा मु० A. D. 3. महात्मा मु० C. 4. एक्षण तदादिशत् मु० B. गते त्रृतीय गदा 5. दिशेत् मु० D. ।

**उद्दीचयां ब्राह्मणान् हन्ति प्राच्यामपि च क्षत्रियान् ।
वैश्यान् निहन्ति यात्यायां प्रतीचयां शूद्रघातिनी ॥19॥**

यदि उल्का उत्तर दिशा में गिरे तो ब्राह्मणों का घात करती है, पूर्व दिशा में गिरे तो अनियों का, दक्षिण दिशा में गिरे तो वैश्यों का और पश्चिम दिशा में गिरे सो शूद्रों का घात करती है ॥19॥

**उल्का 'रुक्षेण वर्णेन स्वं स्वं वर्णं प्रबाधते ।
स्तिरधा चैवानुलोमा च प्रसन्ना च न बाधते ॥20॥**

उल्का रुक्ष वर्ण से अपने-अपने वर्ण को बाधा देती है—स्वेतवर्ण की होकर रुक्ष हो तो ब्राह्मणों के लिए बाधासूचक, रक्तवर्ण की होकर रुक्ष हो तो क्षत्रियों को बाधासूचक, पीतवर्ण की होकर रुक्ष हो तो वैश्यों को बाधासूचक और कृष्णवर्ण की होकर रुक्ष हो तो शूद्रों को बाधासूचक होती है। स्तिरधा और अनुलोम—सब्यमार्ग तथा प्रसन्न उल्का हो तो शुभ होने से आगे-आगे वर्ण को बाधा नहीं देती है ॥20॥

**या चादित्यात् पतेदुल्का वर्णंतो वा दिशोऽपि वा ।
तं तं वर्णं निहन्त्याशु वैश्वानर इवाच्चिभिः ॥21॥**

जो उल्का सूर्य से निकलकर जिरा वर्ण की होकर जिस दिशा में गिरे उस वर्ण और दिशा पर से उसी-उसी वर्णवाले को अग्नि वी ज्वाला के समान शीघ्र नाश करती है ॥21॥

**अनन्तरां दिशं दीप्ता येषामुल्काग्रतः पतेत् ।
तेषां स्वयमश्च नभाश्च भवत्प्रिच्छन्ति दारुणम् ॥22॥**

यदि उल्का अन्यवर्हित दिशा को दीप्त करती हुई अग्नाग में गिरे तो शिक्षियों और गर्भी की भयानक भय करती है अर्थात् गर्भगात की मूर्चिता है ॥22॥

**कृष्णा नैला च रुक्षाश्च प्रतिलोमाश्च गृह्णताः ।
पशुपक्षिसुसंस्थाना भैरवाश्च भयावहाः ॥23॥**

कृष्ण अथवा नील वर्ण की रुक्ष उल्का प्रतिलोम—उल्के सारे य वर्याश्च अरासब्यमार्ग—वायि से गिरे तो निन्दित हैं। यदि पशु-पक्षी की जड़कायावाली हो तो भयोत्पादक होती है ॥23॥

**अनुगच्छन्ति याश्चोल्का ब्राह्मास्तुल्का समन्ततः ।
वृत्त्वा नुसारिणी लाम सा तु राष्ट्रं विनाशयेत् ॥24॥**

1. स्वेत वर्णं मु० । 2. या रुक्षादिवर्णात् जाति । 3-4. गुणांगा गुण० ।
5. वर्णागुणादिणी मु० ।

जो उल्का मार्ग में गमन करती हुई आरा-पास में दूसरी उल्काओं से भिड़ जाय, वह वत्सानुसारिणी (बच्चे की आकारवाली) उल्का नहीं जाती है और ऐसी उल्का राष्ट्र का नाश सूचित करती है ॥24॥

रक्ता पीता नभस्युल्काश्चेभ-नक्षेण। सन्निभाः ।
अन्येषां गर्हितानां च सत्त्वाना सदृशास्तु याः ॥25॥

उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते निपतन्त्यः सुदारुणाः ।
यासु प्रपत्तमानासुः मृगा विविदमानुषाः ॥26॥

आकाश में उत्पन्न होती हुई जो उल्का हाथी और नक्ष (गगर) के आकार तथा निन्दित प्राणियों के आकारवाली होती है, वह जहाँ भीरे वहाँ दारुण अशुभ फल की सूचना करती है और मृगों तथा विविद गमुष्यों को पार कर्ट देती है ॥25-26॥

शब्द मुञ्चन्ति दीप्तासु दिक्षु चासन्ति काम्यया ।
ऋग्यादाश्चाऽशु दृश्यन्ते या खरा विकृताश्च याः ॥27॥

सधूम्ना पा सनिधीता उल्कायाभ्रमवान्नुयुः ।
सभूमिकस्पा परुषा रजस्त्वयोऽपसव्यग्नाः ॥28॥
ग्रहानादित्यचन्द्रौ च याः स्पृशन्ति दहन्ति वा ।
परचक्रभयं घार अुवाव्याविजनभयम् ॥29॥

जो उल्का अपने द्वारा प्रदीप्त दिक्षाओं में निकट कामना गे शब्द वर्ती - गंडगढ़ाती हुई मांसभक्षी जीवों के गमान शीघ्रता गे दिग्याइ एवं उल्का जो उल्का रुक्ष विकृतरूप धारण करती हुई धूमवाली, शब्दगहिना, अन्य के गमाव वगवानों, भूमि को कैपाती हुई कठोर, धूल उत्पत्ती हुई, बाये गाये गे गर्वत उल्का हुई, यहाँ तथा सूर्य और चन्द्रमा की साझे अन्ति हुई या जलाती हुई दीप्ति परे - भीरे तो वह पर चक्रका घोर भग उपसिंहत करती है तथा अुद्यानीय वृक्ष गाल, महामारी और मनुष्यों के नाश होने की सूचना देती है ॥27-29॥

एवं लक्षणसंयुक्ताः कुर्वन्त्युल्का महाभयम् ।
अष्टादद्वदुल्काभिर्दिशः ॥१०॥ पश्येद् "यदाऽदृतम् ॥30॥
युगम्न्त इति विल्यातः ॥११॥ षड्मसेनोपलभ्यते ॥१२॥
पद्मश्रीवृक्षवन्द्राक्तंद्यावर्तिष्ठोपमाः ॥31॥

1. रथनपात्रम् मूः । 2-3. लक्षणम् । A । 4. परम् जाल । 5. अशुमात्रम् गृः ।
6. आपत्ते अ० । 7. उल्काश्चावानयुः यूः । 8. असव्यग्नाः पूः C । 9. गुप्तमय जाल ।
10. दिग्य अ० । 11. वदावृत्तम् मूः । 12. विन्द्यत् गृः । 13. भृत्याद्वालो गथा मूः ।

वर्द्धप्रत्यक्षजाकाराः पताकामत्स्यकुर्मवत् ।
वाजिवारणरूपश्च शंखवादित्रक्षत्रवत् ॥३२॥
‘सिहासनथाकारा रूपविष्टव्यवस्थिता ।
रूपेरेतः प्रशस्यन्ते^४ सुखमुल्काः^५ समाहिताः ॥३३॥

उपर्युक्त अध्यणयुक्त उल्का महान् ग्रन्थ उत्पादन करती है। यदि अष्टापद के रामान उल्का दृष्टिगोचर हो तो छह मास में युगान्त की सूचिका समझनी चाहिए। यदि प्रत्यक्षजीवन, चन्द्र, सूर्य, नन्द्यावत्, कलश, बृद्धिगत होनेवाले ध्वज, पताका, गद्धी, कलश, अश्व, हस्ती, घोड़, वादिव, रुत्र, सिहासन, रथ और चाँदी के गिरण मोक्षकार स्थान और आनन्दार्थों में उल्का गिरे तो उसे उत्तम अवगत करना चाहिए। यह उल्का सभी तो शुद्ध देवतावाली है ॥३०-३३॥

नक्षत्राणि विमुक्त्यन्त्यः स्तिर्धाः प्रत्युत्तमाः शुभाः ।
सुवृष्टिः लोमसारोग्यं शस्यसम्पत्तिरूपाः ॥३४॥

यदि उल्का नलिनी को छोड़कर या ये वरनेवाली स्तिर्धां और उत्तम शुभ अध्यणकानी लिख दाएं तो सुवृष्टि, लोम, आरोग्य और धान्य की उत्पत्ति यादी होती है ॥३४॥

सोमो राहुश्च शुक्रश्च केतुभौमश्च यायिनः ।
बृहस्पतिर्बृद्धः सूर्यः सरिश्चात्पीहै नागराः^६ ॥३५॥

यादी—शुक्र एव लिङ अन्य देव या तृपति पर आक्रमण वरनेवाले व्यक्ति के नक्षत्र, चन्द्र, रुद्र, शूक्र, गन्तु और मंगल का वल आवश्यक होता है और स्थायी—वराहगण इवा गम्या देव, तृपति या दत्य व्यक्ति त्राक्रमित के लिए बृहस्पति, बृद्ध, सूर्य और लक्ष्मि का वल आवश्यक होता है। इन प्रहों के वरनावल पर ये यादी और यादी के वल का विशास करना चाहिए ॥३५॥

हस्त्युर्मध्येन याः उल्का ग्रहाणां नाम विद्युता ।
सन्निवृत्तां सधूप्रावा तत्र विन्द्यादिवरं फलम् ॥३६॥

या उल्का कल्प आग न पहुं को होता—प्रताडित कर, वह विद्युत् संगक है। यह उल्का निराग नार्ता जात भूप रहता होता तो उसका फल निष्ठ प्राप्त होता है ॥३६॥

1. वन्देवतान् मुः A. रथस्त्वान् मुः B. D. 2. प्रताडिते मुः + 3. स्वं रुद्धं मुः A. ग्राम्यं मुः C. 4. लिपुविद्यो आवृ 5. प्रत्युत्तमा मुः D. 6. यो उपि नः मुः A. वामगण मुः C. 7. जीर्ण मुः A. सीर्ण मुः D. 8-9. श्वाचलयवर्णं मुः A. 10. गाम मुः ।

नगरेषुपसृष्टेषु नागराणां महदभयम् ।
यायिषु चोपसृष्टेषु यायिनां तदभयं भवेत् ॥३७॥

स्वायी के नगर की ब्यूह रचना पर पूर्वोत्तर प्रकार की उम्मा गिरे तो उस स्वायी के नगरयासियों को महान् भय होता है । यदि यायी के गैन्य-जिविर पर गिरे तो यायी पक्ष वालों को महान् भय होता है ॥३६॥

सन्ध्यानां रोहिणीं पौष्ट्रं चित्रां श्रीण्युत्तराणि च ।
मैत्रं चोल्कां^१ यदा हन्त्यात् तदा स्यात् पाथिवं^२ भयम् ॥३८॥

यदि सन्ध्या कालीन उल्का रोहिणी, रेती, चित्रा, उत्तराकाश्युनी, उत्तरांशा, उत्तराभाद्रपदा और अनुराधा नक्षत्रों को हन्ते प्रतादित करे तो राजा को भय होता है अर्थात् सन्ध्याकालीन उल्का इन नक्षत्रों में उत्पादित गिरे तो देश और नृपति पर विपत्ति आती है ॥३८॥

वायव्यं वैष्णवं पुष्ट्यं यद्युल्काभिः प्रताड्येत् ।
द्वह्यक्षत्रभ्यं चिन्द्याद् राजश्च भयमादिगत् ॥३९॥

स्वाती, श्वेत और पुष्ट्य नक्षत्रों को यदि उल्का प्रतादित करे तो श्रावण, क्षत्रिय और राजा को भय की मूर्चना देती है ॥३९॥

यथा गृहे तथा ऋक्षं चातुर्वर्णं विभावयेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि सेनासूल्का यथाविधि ॥४०॥

जैसे ग्रह अथवा नक्षत्र हीं, उन्हीं के अनुसार नारों वर्णों के निए शुभाशुभ अवगत करना चाहिए । अब इसमें आगे गेना के भवन्त्व में उल्का का शुभाशुभ फल निरूपित करते हैं ॥४०॥

सेनायास्तु समुद्रोगे राजोऽविविधः - मानवः ।
उल्का यदा पतन्तीति तदा वल्यामि लक्षणम् ॥४१॥

युद्ध के उद्योग के समय गेना के समझ जो उल्का गिरती है, उसका लक्षण, फलादि राजाओं और विविध मनुष्यों के लिए वर्णित किया जाता है ॥४१॥

उदगच्छत् सोममकं वा यद्युल्का संविदारयेत् ।
स्थावराणां विपर्यासं तस्मिन्तुत्पातदर्शने ॥४२॥

1. याय्येष्वन्तुपग्राटेषु मूः । 2. चोल्का मूः । 3. पार्वत्याद् मूः । 4. राजा मूः ।
5. विवदमानया मूः । 6. उदगच्छत् । मूः । 7. अस्मिन्दृष्टे दर्शने मूः ।

यदि आर को गमन करती हुई उल्का चन्द्र और सूर्य को विदारण करे तो स्थायी - स्थायी नगरवासियों के लिए विपरीत उत्पातों की सूचना देती है ॥42॥

अहतं यातधथादित्यं सोममुल्का लिखेद् यदा ।

आगन्तुबध्यते सेना यथा चोश^१ यथागमम् ॥43॥

सूर्य और चन्द्रमा के अस्त होने पर यदि उल्का दिखलाई दे तो वह आनेवाले पायी की दिशा में आगन्तुक भेना के बध का निर्देश करती है ॥43॥

उदगच्छेत् सोममक्कं दा यद्युल्का प्रतिलोमतः ।

प्रविशन्नायराणां स्थाद् विद्यर्षिः^२ स्तथागते ॥44॥

प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई उल्का उदय होते हुए सूर्य और चक्र-मण्डल में प्रवण करे तो स्थायी आर यायी दोनों के लिए विपरीत फलदायक अर्थात् अशुभ होती है ॥44॥

एष्वास्तगते^३ उल्का आगन्तुतां भयं भवेत् ।

प्रतिलोमा जयं कुर्याद् यथास्तं चन्द्रसूर्ययोः ॥45॥

उल्का योग में सूर्य-चन्द्र के अस्त समय प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई चक्र-मण्डल के मण्डल में आकर उल्का अस्त हो जाय तो स्थायी और यायी दोनों के लिए शयोत्पादक है ॥45॥

उदये भास्करस्योल्का यातोऽप्रतोऽनिसर्पति^४ ।

सेनामत्यापि जयं कुर्यादिवां शुरसरावृतिः ॥46॥

यदि उल्का सूर्योदय दोल हुए सूर्य के आगे और चन्द्र के उदय होते हुए चन्द्रमा के आगे गमन करे तथा वाणी की आवृति हो हो तो उसे जयसूक्क गमनयना नाहिए ॥46॥

सेनामभिमुखी भूत्वा यद्युल्का प्रतिग्रस्यते^५ ।

प्रतिसेनावधं विन्द्यात् तस्मिन्नुत्पातदर्शते ॥47॥

यदि उल्का भेना के सामन होकर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो प्रतिसेना (प्रतिदंडी भेना) के बध की सूचिका रामझनी चाहिए ॥47॥

1. यथादेव मु०, निष्ठन्धवक्तव्य यथा, मु० C. । 2. नदगते मु० । 3. यथेवास्तमे मु० A., एष्वास्तमन मु० C. । 4. योऽप्रतोऽनिसर्पति मु० । 5. शुरसरावृति आ० ।

C. प्रतिदृश्यते मु० ।

अथ यद्युभया^१ सेनामेकं प्रतिलोभतः ।

उल्का तूष्णि प्रपञ्चेत उभयत्र भयं भवेत् ॥४८॥

यदि दोनों सेनाओं की ओर एक-एक सेना में प्रतिलोम-श्रपणव्य गार्ग ये उल्का शीघ्रता से गिरे तो दोनों सेनाओं को भय होता है ॥४८॥

येषां सेनासु निपत्तेदुल्का नीलमहाप्रभा^२ ।

सेनापतिवधस्तेषामचिरात् सम्प्रजायते ॥४९॥

नीले रंग की महाप्रभाकणाली उल्का जिस गेना में गिरे उग गेना का सेनापति शीघ्र ही मरण की प्राप्ति होता है ॥४९॥

उल्कास्तु लोहिताः सङ्खमाः पतञ्यः पृतनां प्रति ।

पस्य राजा प्रपञ्चतं कुमारो हन्ति तं नृपम् ॥५०॥

लोहेत वर्ण की सूक्ष्म उल्का जिस राजा की सेना के प्रति गिरे, उग गेना के राजा को राजकुमार मारता है ॥५०॥

उल्कास्तु बहुवः पीताः पतञ्यः पृतनां प्रति ।

पृतनां व्याधितां प्रादृस्तस्मिन्नुपातदर्शये ॥५१॥

पीतवर्ण की बहुत उल्काएँ गेना के गमध या गेना में गिरें तो उग उत्तात का फल सेना में रोग फैलना है ॥५१॥

संधशास्त्रानुपद्येत् (?) उल्का श्वेताः समन्ततः ।

ब्राह्मणेभ्यो भयं घोरं तस्य संव्यरुषं निदिङ्गत् ॥५२॥

यदि श्वेत रंग की उल्का गेना में चारों तरफ गिरे तो वह उग सेना को और ब्राह्मणों को घोर भय को सूचना देती है ॥५२॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु या 'पतेत्तियंगामता' ।

न तदा जायते युद्धं परिधा नाम सा भवेत् ॥५३॥

बाण या खड़गरूप तिरछी उल्का रोना की व्यूह रचना में गिरे तो युटिल युद्ध नहीं होता है, उसको परिधा नाम से समरण करते हैं - कहने हैं ४-३।

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु पृष्ठतोऽपि^४ पतन्ति^५ या ।

क्षयव्ययेन पीड्येत्तनुभयोः सेनयोर्नृपान्^६ ॥५४॥

1. उभयं आ० 2. महाप्रभा आ० 3. बहुशास्त्र प्रपञ्चेन् न् म० 4. पतन्ति आ० 5. च सायका आ० 6. पृष्ठतः आ० 7. निपत्तिः आ० 8. नुपाः आ० ।

सेना वरी व्यूह रक्खना के पीछे भाग में उल्का गिरे तो दोनों सेनाओं के राजाओं को वह नाश और हानि द्वारा कष्ट की सूचना करती है ॥५४॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु प्रतिलोमाः पतन्ति याः ।

संग्रामेषु निपतन्ति^१ जायन्ते किञ्चुका वनाः ॥५५॥

सेना वरी व्यूह रक्खना में अपमाण्य मार्ग से उल्का गिरे तो संग्राम में योद्धा गिर पड़ते हैं—यारे जाते हैं, जिसमे रणभूमि रक्तजिल हो जाती है ॥५५॥

उल्का यत्र समायान्ति पथाभावे तथासु च ।

येषां मध्यान्तिकं पान्ति तेषां स्याद्विजयो ध्रुवम् ॥५६॥

जहाँ उल्का जिस रूप में और जब गिरती है तथा जिसके बीच से या निकट से निकलती है, उनकी निश्चय ही विजय होती है ॥५६॥

चतुर्दिक्षु यदा पृतना उल्का गच्छन्ति सन्ततम् ।

चतुर्दिशां तदा यान्ति भयातरमसंघशः^२ ॥५७॥

यदि उल्का गिरती है निश्चतर चारों दिशाओं में गमन करे तो लोग या सेना का गमन भयानक होकर थारी दिशाओं में तितर-वितर हो जाता है ॥५७॥

अग्रतो या पतेदुल्का सा सेनाः तु प्रशस्यते ।

तिर्यगाचरते^३ मार्गं प्रतिलोमा भयावहा ॥५८॥

सेना के आगे भाग में यदि उल्का गिरे तो अच्छी है । यदि तिरछी होकर प्रतिलोम मति भे गिरे तो सेना को भय देनेवाली अवगत करनी चाहिए ॥५८॥

यतः सेनामभिपतेत् तस्य सेनां प्रबाध्येत् ।

तं विजयं कुर्यात् येषां पतेत्सोल्का यदा पुरा ॥५९॥

जिस राजा की सेना में उल्का बीनों-बीच गिरे उस सेना ने काट होता है और आगे गिरे तो उसकी विजय द्वौली है ॥५९॥

डिभरूपा नूपतये वन्धमुल्का प्रताड्येत्^४ ।

प्रतिलोमा विलोमा च^५ प्रतिराजं भयं सूजेत् ॥६०॥

इसमा इस उल्का गिरने से राजा के वन्दी होने की सूचना मिलती है और प्रतिलोम तथा अनुलोम उल्का शब्द सेनाओं को भयोत्पादिका है ॥६०॥

1. विष्वापा आ० । 2. अनुकूला यथुर्यगा, म०० । 3. भवत्युप्रतिः संघशः ग०० ।
4. सेना म०० । 5. विष्वक् संचरते म०० । 6. विजयं तु समाक्षयानि, येषां रौत्का पूर्वस्त्रयः म०० । 7. प्रदापयेत् म०० । 8. यह पाठ म०० प्रति में नहीं है ।

यस्यापि जन्मनक्षत्रं उल्का गच्छेच्छरोपमा ।
विदारणा तस्य वाच्या व्याधिना वर्णसंकरः ॥61॥

जिसके जन्म-नक्षत्र में बाणमदृश उल्का गिरे तो उस व्यक्ति के लिए विदारण—घाव लगने, चीरे जाने का एक मिलता है और ताना वर्णरूप हो तो व्याधि प्राप्त होने की सूझना समझनी चाहिए ॥61॥

उल्का तेषां यथारूपा दृश्यते प्रतिलोमतः ।
तेषां ततो भयं विन्द्यादनुलोमा शुभायमम् ॥62॥

विलोम मार्ग में जैसे रूप यी उल्का जिस दिवार्दि दे तो उसके भय होगा, ऐसा जानना चाहिए और अनुलोम गति से दिव्यार्दि दे तो शयरूप जानना चाहिए ॥62॥

उल्का यत्र प्रसर्त्ति भ्राजमाना दिशो दश ।
सप्तरात्रांतरं वर्ष दशाहादुत्तरं भयम् ॥63॥

जिस स्थान पर उल्का फैलती है दिव्यार्दि दे तो वहाँ भी जाना को दशो दिशाओं में भागना पड़ता है—उपर्युक्त कारण दुर्लभ है इसके जाना पड़ता है। यदि सात रात्रि के मध्य में वर्षा हो जाव तो इस दोग का डार्शन हो जाता है, अन्यथा दस दिन के पश्चात् उपर्युक्त भयरूप कलादिश घटित होता है ॥63॥

पापासूल्कासु यद्यस्तु यदा देव प्रवर्तति ।
प्रशान्तं तद्भयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥64॥

पापरूप उल्कागात् के पश्चात् भय वर्षे जाये वर्षा हो जाय तो भय को शान्त हुआ समझना चाहिए, उस प्रकार भद्रबाहु रवामी का कथन है ॥64॥

यथाभिवृष्याः स्तिर्घा यदि शान्ता निपत्तिं याः ।
उल्कास्वाशु भवेत् क्षेमं सुभिक्षं मन्दरोगवान् ॥65॥

अभिवृष्य, स्तिर्घा और शान्त उल्का जिस दिशा में गिरती है, उस दिशा में वह शीत्र क्षेम-कुशल सुभिक्ष करती है, परन्तु धोड़ाना शोग अवश्य होता है ॥65॥

यथामार्गं यथावृद्धिं यथाद्वारं यथाऽऽगमम् ।
यथाविकारं विज्ञेयं ततो द्रूयाच्छुभाऽशुभम् ॥66॥

जिग मार्ग, वृद्धि, द्वार, आगमन प्रकार और विकार के अनुसार शुभाशुभ रूप उल्कापात हो उसी के समान शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥66॥

तिथिच्च करणं चैव लक्ष्याश्च मुहूर्ततः ।

ग्रहाश्च शकुनं चैव दिशो वर्णः इषाणतः ॥67॥

उल्कापात का शुभाशुभ फल तिथि, करण, लक्ष्य, मुहूर्त, ग्रह, शकुन, दिश, वर्ण, प्रमाण - लम्बाई-चौडाई पर से बतलाना चाहिए ॥67॥

३निमित्तादनुपूर्वच्च पुरुषः कालतो बलात् ।

३प्रभावाच्च गतेश्चैव मूलकाया फलमादितेत् ॥68॥

निमित्तादनुपूर्वक उपर्युक्त प्रकार से निरूपित काल, बल, प्रभाव और गति पर से उल्का के फल नो अवगत करना चाहिए ॥68॥

एतादुक्तमूलकानां लक्षणं जिनभाषितम् ।

परिवेषात् प्रवक्ष्याभि तान्तिबोधत तस्वतः ॥69॥

जिम प्रकार जिनेन्द्र भगवान् ने उल्काओं का लक्षण और फल निरूपित किया है, उसी प्रकार यहाँ वर्णित गिया गया है। अब परिवेष के सम्बन्ध में वर्णन किया जाता है, उस वर्थार्थ स्वयं से अवगत करना चाहिए ॥69॥

इति भद्रबाहुसंहितायां (भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे) तृतीयोऽथायः ।

त्रिवेचन ---उल्कापात का फलादेश संहिता ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक वर्णित है। यहाँ सर्वसाधारण की जानकारी है लिंग, श्रीद्वारा फलादेश निरूपित किया जाता है। उल्कापात से व्यक्ति, ममात्र, देश, राष्ट्र आदि का फलादेश जात किया जाता है। यद्यप्रथम व्यक्ति के लिए धनि, लाभ, जीवन, मरण, रात्तान-सुख, हृषि-विदाद एवं विशेष अवसरों पर धटित होने वाली विभिन्न घटनाओं का निरूपण किया जाता है। आकाश का निरीक्षण कर टूटते हुए ताराओं को देखने से व्यक्ति अपने सम्बन्ध में अनेक प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकता है।

यत वर्ण की टेढ़ी, टूटी हुई उल्काओं को पतित होते देखने से व्यक्ति को भय, पांख महीने में परिवार के व्यक्ति की मृत्यु, धन-हानि और दो महीने के बाद विषे गथे व्यापार में हानि, राज्य से झगड़ा, मुकद्दमा एवं अनेक प्रकार की चिन्ताओं के वारण परेशानी होती है। कुण्ड वर्ण की टूटी हुई, लिङ्ग-भिन्न

1. शकुनाश्चैव मु० । 2. निमित्तादनुपूर्वश्च, पुरुषो कालतो बलात् मु० ।
3. प्रभावाश्च गतिःसंहेतमूलकाया मु० ।

उल्काओं का पतन होते देखने से व्यक्ति के आत्मीय की सात महीने में मृत्यु, हानि, झगड़ा, अशान्ति और परेशानी उठानी पड़ती है। कृष्ण वर्ण की उल्का वा पात सन्ध्या समय देखने से भय, विद्रोह और अशान्ति, सन्ध्या के तीन घटी उपरान्त देखने से विवाद, कलह, परिवार में झगड़ा एवं निसी आत्मीय व्यक्ति को कष्ट; मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का का पतन देखने से स्वर्ण को महाकष्ट, अपनी या किसी आत्मीय की मृत्यु, आर्थिक कष्ट एवं नाना प्रकार की अशान्ति प्राप्त होने की सूचना होती है।

श्वेत वर्ण की उल्का का पतन सन्ध्या समय में दिखलायी पड़े तो धन लाभ, आत्मसन्तोष, सुख और मित्रों से मिलाप होता है। यह उल्का दण्डकार हो तो सामान्य लाभ, मुसलाकार हो तो अत्यल्प लाभ और शक्तिकार—गाढ़ी के आकार या हाथी के आकार हो तो पुष्कल लाभ एवं अश्व के आकार प्रकाशमान हो तो विशेष लाभ होता है। मध्यरात्रि में उक्त प्रकार यी उल्का दिखलायी पड़े तो पुत्र लाभ, स्त्री लाभ, धन लाभ एवं अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है। उपर्युक्त प्रकार की उल्का रोहिणी, पुनर्बंसु, धनिष्ठा और तीनों उत्तराओं में पतित होती हुई दिखलायी पड़े तो व्यक्ति को पूर्णफलादेश मिलता है तथा सभी प्रकार से धन-धान्यादि की प्राप्ति के साथ, पुत्र-स्त्रीलाभ भी होता है। आश्लेषा, भरणी, तीनों पूर्वी—पूर्वापाढा, पूर्वफिल्गुनी और पूर्वभाद्रपद और रेखती इन नक्षत्रों में उपर्युक्त प्रकार का उल्कापतन दिखलाई पड़े तो सामान्य लाभ ही होता है। इन नक्षत्रों में उल्कापतन देखने पर विशेष लाभ या पुष्कल लाभ की आशा नहीं करनी चाहिए, लाभ होते-होते धीरण हो जाता है। आद्रा, पुष्य, मघा, धनिष्ठा, श्रवण और हस्त इन नक्षत्रों में उपर्युक्त प्रकार श्वेतदर्णी की प्रकाशमान उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो प्रायः पुष्कल लाभ होता है। मघा, रोहिणी, तीनों उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तरापाढा और उत्तराभाद्रपद, मूज, मृगशिर और अनुराधा इन नक्षत्रों में उक्त प्रकार का उल्कापात सन्ध्यलाई पड़े तो स्त्रीलाभ और सन्तानलाभ समझना चाहिए। कार्यसिद्धि के लिए चिकनी, प्रकाशमान, श्वेतवर्ण की उल्का का रात्रि के मध्यभाग में पुनर्बंसु और रोहिणी नक्षत्र में पतन होना आवश्यक माना गया है। इस प्रकार के उल्कापतन को देखने से अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। अल्प आभास से भी कार्य सफल हो जाते हैं। पीतवर्ण की उल्का सामान्यतया शुभप्रद है। सन्ध्या होने के तीन घटी नीछे कृतिका नक्षत्र में पीतवर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो मुहूर्मे में विजय, वडी-बड़ी परीक्षाओं में उत्तीर्णता एवं राज्यकर्मचारियों से र्हमी बढ़ती है। आद्रा, पुनर्बंगु, पुष्य और श्रवण में पीतवर्ण की उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो स्वयंपति और स्वदेश में सम्मान बढ़ता है। ग्रध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का दिखलाई पड़े तो

हर्ष, मध्यरात्रि के पश्चात् एक बजे रात में उबत प्रकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्य पीड़ा, अर्थिक लाभ और प्रतिष्ठित व्यक्तियों से प्रशंसा प्राप्त होती है। [प्रायः सभी प्रकार की उल्काओं का फल सन्ध्याकाल में चतुर्थी, दस बजे षष्ठीण, ग्यारह बजे तृतीयांश, बारह बजे अर्ध, एक बजे अधीर्धिक और दो बजे में चार बजे रात तक किञ्चित् न्यून उपलब्ध होता है। सम्पूर्ण फलादेश बारह बजे के उपरान्त और एक बजे के पहले के समय में ही विट्ट होता है। उल्कापात भद्रा – विल्टि काल में हो तो विपरीत फलादेश मिलता है।]

प्रतनुपृच्छा उल्का सिर भाग से गिरने पर व्यक्ति के लिए अरिष्टसूचक, मध्यभाग से गिरने पर विपत्तिसूचक और पूँछ भाग से गिरने पर रोगसूचक प्रतीगई है। सौप के आकार का उल्कापात व्यक्ति के जीवन में भर, आतंक, रोग, जोक आदि उत्पन्न करता है। इस प्रकार का उल्कापात भरणी और आश्लेषा नक्षत्रों का घात वाला हुआ दिखलाई पड़े तो गहान् विपत्ति और अणान्ति मिलती है। पूर्वाकाल्गुनी, पुनर्वैष्णवी, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र के योग तारे को उल्का हत्तन करे तो युनतियों को कष्ट होता है। नारी जाति के लिए इस प्रकार का उल्कापात अनिष्ट का गूचक है। शुक्र और चमगीदड़ के समान आकार की उल्का कृतिका, विशाखा, अभिजित्, भरणी और आश्लेषा नक्षत्र को प्रताङ्गित करती हुई पतित हो तो युवक-युवतियों के लिए रोग की सूचना देती है। इन्द्रध्वज के आकार की उल्का आकाश में प्रकाशपान होकर पतित हो तथा पृथ्वी पर आते-आते चिन्गारियाँ उड़ने लगें तो इस प्रकार की उल्काएँ कारागार जाने की सूचना मन्त्रनिधत व्यक्ति को देती हैं। गिर के ऊर पतित हुई उल्का चन्द्रमा या नक्षत्रों का घात करती हुई दिखलायी पड़े तो आगामी एक महीने में किसी आत्मीय की मृत्यु या परदेशगमन होता है। सामने कृष्णवर्ण की उल्का गिरने से महान् कष्ट, धनक्षय, विवाद, कलह और झगड़े होने की सूचना मिलती है। अश्वनी, कृतिका, आद्रा, आश्लेषा, मधा, विशाखा, अनुराधा, मूल, पूर्वाकाल्गुनी, पूर्वायादा और पूर्वभाद्रपद इन नक्षत्रों में पूर्वोक्त प्रकार की उल्का का अभिधात हो तो व्यक्ति के भावी जीवन के लिए महान् कष्ट होता है। वीष्णु की ओर कृष्णवर्ण की उल्का व्यक्ति को असाध्य रोग की सूचना देती है। विचित्र वर्ण उल्का मध्यरात्रि में चुत होती हुई दिखलाई पड़े तो निश्चयतः अर्थहानि होती है। धूम्रवर्ण की उल्काओं वा उत्तर व्यक्तिगत जीवन में हानि का सूचक है। अग्नि के समान प्रभावशाली, वृषभाकार उल्कापात व्यक्ति की उन्मति का गूचक है। तलवार की सुर्खि समान उल्काएँ व्यक्ति की अवनति सूचित करती हैं। सूक्ष्म आकार वाली उल्काएँ अच्छा फल देती हैं और स्थूल आकार वाली उल्काओं का फलादेश अशुभ होता है। हाथी, घोड़ा, बैल आदि पशुओं के आकार वाली उल्काएँ शान्ति और

सुख की सूचिकाएँ हैं। श्रहों का स्पर्श कर पतित होनेवाली उल्काएँ भयप्रद हैं और स्वतन्त्र रूप से पतित होनेवाली उल्काएँ सामान्य फलवाली होती हैं। उत्तर और पूर्व दिशा की ओर पतित होनेवाली उल्काएँ सभी प्रकार का मुख देती हैं; किन्तु इस फल की प्राप्ति रात के मध्य समय में दर्शन करने से ही होती है।

कमल, बृक्ष, चन्द्र, सूर्य, स्वस्तिक, कलश, छवजा, शंख, वाणी—होल, मंजीरा, तात्पूरा और गोलाकार रूप में उल्काएँ रविवार, भौमवार और गुरुवार को पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो व्यक्ति को अपार लाभ, अकलित धन की प्राप्ति, घर में सत्तान लाभ एवं आगामी मांगलिकों की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का उल्कापतन उक्त उक्त दिनों की सन्ध्या में हो तो अर्धफल, नी-दस बजे रात में हो तो तृतीयांश फल और ठीक मध्यरात्रि में हो तो पूर्ण फल प्राप्त होता है। मध्यरात्रि के पश्चात् पतन दिखलाई पड़े तो पृथ्वीश फल और ब्राह्म-मूहूर्त में दिखलाई पड़े तो चतुर्थांश फल प्राप्त होता है। दिन में उल्काओं का पतन देखनेवाले को असाधारण लाभ या असाधारण हानि होती है। उक्त प्रकार की उल्काएँ सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्रों का भेदन करें तो साधारण लाभ और भविष्य में प्रतित होनेवाली असाधारण शटनाओं वी सूचना समझनी चाहिए। रोहिणी, मृगशिरा और श्रवण नक्षत्र के साथ योग करनेवाली उल्काएँ उनमें भविष्य की सूचिका हैं। कच्छप और मछली के आकार वी उल्काएँ व्यक्ति के जीवन में शुभ फलों की सूचना देती हैं। उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन मध्यरात्रि के उपरान्त और एक बजे के भीतर दिखलाई पड़े तो व्यक्ति को धरती के नीचे रखी हुई निधि मिलती है। इस निधि के लिए प्रयास नहीं करना पड़ता, कोई भी व्यक्ति उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन देखकर चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्वामी की पूजाकर तीन महीने में स्वयं ही निधि प्राप्त करता है। व्यन्तर देव उसे स्वप्न में निधि के स्थान की सूचना देते हैं और वह अनायास इस स्वप्न के अनुसार निधि प्राप्त करता है। उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन सन्ध्याकाल अथवा रात में आठ या नीं बजे हो तो व्यक्ति के जीवन में विषम प्रकार की स्थिति होती है। सफलता मिल जाने पर भी असफलता ही दिखलाई पड़ती है। नी-दस बजे का उल्कापात सभी के लिए अनिष्टकर होता है।

सन्ध्याकाल में गोलाकार उल्का दिखलाई पड़े और घह उल्का पतन समय में छिन्न-भिन्न होती हुई दृष्टिगोचर हो तो व्यक्ति के लिए रोग-गोक की सूचक है। आपस में टकराती हुई उल्काएँ व्यक्ति के लिए गुप्त रोगों की सूचना देती हैं। जिन उल्काओं को शुभ बतलाया गया है, उनका पतन भी शनि, बुध और शुक्र को दिखलाई पड़े तो जीवन में आनेवाले अनेक काटों की सूचना समझनी चाहिए। शनि, राहु और केतु से टकराकर उल्काओं का पतन दिखलाई पड़े तो महान्-

अनिष्टकर है, इससे जीवन में अनेक प्रकार की विपत्तियों की सूचना समझनी चाहिए। खोई हुए, भूली हुई या चोरी गई वस्तु के समय में गुहवार की मध्यरात्रि में दण्डाकार उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो उस वस्तु की प्राप्ति की तीन मास के भीतर की सूचना समझनी चाहिए। मंगलवार, सोमवार और शनिवार उल्कापात दर्शन के लिए अशुभ हैं, इन दिनों वी सन्ध्या का उल्कापात दर्शन अधिक अनिष्टकर समझा जाता है। मंगलवार और आश्लेषा नक्षत्र में शुभ उल्कापात भी अशुभ होता है, इससे आगामी छः मासों में कष्टों की सूचना समझनी चाहिए। अनिष्ट उल्कापात के दर्शन के गुहवार चिन्तात्मणि पाश्वन्तराथ का पूजन करने से आगामी अशुभ की शान्ति होती है। >

राष्ट्रघातक उल्कापात— जब उल्काएँ चन्द्र और सूर्य का स्पर्श कर भ्रमण करती हुई पतित हों और उस समय पृथ्वी कम्पायमान हो तो राष्ट्र दूसरे देश के अधीन होता है। सूर्य और चन्द्रमा के दाढ़िनी और उल्कापात हो तो राष्ट्र में रोग फैलते हैं तथा राष्ट्र की वनस्पति विशेषरूप से नष्ट होती है। चन्द्रगा से मिलकर उल्का मामने आवे तो राष्ट्र के लिए विजय और लाभ की सूचना देती है। श्याम, अरुण, नील, रक्त, दहन, असित, और भस्म के समान स्थित उल्का देश के शक्तिओं के लिए बाधक होती है। रोहिणी, उत्तराराष्ट्रालगुनी, उत्तराराष्ट्रा, उत्तरा आद्रपद, पृथ्वीशिरा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्र वी उल्का घातित करे तो राष्ट्र को पीड़ा होती है। (मंगल और रविवार को अनेक व्यक्ति भ्रमणरात्रि में उल्कापात देखें तो राष्ट्र के लिए भ्रमणूचक समझना चाहिए) पूर्वाकालगुनी, पूर्वापाठ और पूर्वाश्रद्धपद, मध्या, आद्री, आर्द्धिया, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र को उल्का ताडित करे तो देश के व्यापारी वर्ग को कष्ट होता है तथा अजिवनी, पुष्प, अभिजित, कृतिका और विशाला नक्षत्र से उल्का ताडित करे तो कलाकिदों को कष्ट होता है। देवपन्दित या देवमूर्ति से उल्कापात हो तो राष्ट्र में बड़े-बड़े परिवर्तन होते हैं, आन्तरिक संवर्पणों के साथ विदेशीय शक्ति का भी मुकाबला करना पड़ता है। इस प्रकार उल्कापात देश के लिए महान् अनिष्टकारक है। अमात्य भूमि में पतित उल्का प्रशासकों में भय का संचार करती है तथा देश या राज्य में नशीन परिवर्तन उत्पन्न करती है। न्यायालयों पर उल्कापात हो तो किसी द्वड़े नेता की मृत्यु की गूचना अवगत करनी चाहिए। वृक्ष, धर्मशाला, तालाब और अन्य पवित्र भूमियों पर उल्कापात हो तो राज्य में आन्तरिक विक्रोह, वस्तुओं की भैंहगाई एवं देश के नेताओं में फूट होती है। संगठन के अधाव होने से देश या राष्ट्र की महान् धति होती है। ध्येत और पीत वर्ण की सूख्यायार अनेक उल्काएँ किसी रिक्त स्थान पर परिषत हों तो देश या राष्ट्र के लिए शुभ पात्रका समझना चाहिए। राष्ट्र के नागों के बीच भेन-मिलाप की सूचना भी उक्त प्रकार के उल्कापात में ही सम-

सनी चाहिए। मन्दिर के निकटवर्ती बृक्षों पर उल्कापात हो तो प्रशासकों के दीच मतभेद होता है, जिससे देश या राष्ट्र में अनेक प्रकार की अशान्ति फैलती है। पुष्य नक्षत्र में श्वेतवर्ण की चमकती हुई उल्का राजप्रासाद या देवप्रासाद के किनारे पर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो देश या राष्ट्र की शक्ति का विकास होता है, अन्य देशों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है तथा देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। इस प्रकार का उल्कापात राष्ट्र या देश के लिए शुभकारक है। मध्या और श्वेत नक्षत्र में पूर्वकृति प्रकार का उल्कापात हो तो भी देश या राष्ट्र की उन्नति होती है। खलिहान और बगीचे में मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश में अनन्त वा भाव द्विगुणित हो जाता है।

शनिवार और मंगलवार को कृष्णवर्ण की मन्द प्रकाशवाली उल्काएँ शमशान भूमि या निर्जन वन-भूमि में पतित होती हुई देखी जाएँ तो देश में कलह होता है। पारस्परिक अशान्ति के कारण देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था विगड़ जाती है। राष्ट्र के लिए इस प्रकार की उल्काएँ भयोत्पादक एवं घातक होती हैं। आश्लेषा नक्षत्र में कृष्णवर्ण की उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश के किसी उच्चकोटि के नेता की मृत्यु होती है। राष्ट्र की शक्ति और वल वा बढ़ानेवाली श्वेत, पीत और रक्तवर्ण की उल्काएँ शुक्रवार और गुरुवार को पतित होती हैं।)

कृष्णकलादेश सम्बन्धी उल्कापात---प्रकाशित होकर चमक उत्पन्न करती हुई उल्का यदि पतन के पहले ही आकाश में विलीन हो जाय तो कृपि के लिए हानिकारक है। मोर पूँछ के समान आकारवाली उल्का मंगलवार की मध्यरात्रि में पतित हो तो कृपि में एक प्रकार का रोग उत्पन्न होता है, जिसमें फसल नष्ट हो जाती है। मण्डलाकार होती हुई उल्का शुक्रवार की मन्द्या को गजेन के साथ पतित हो तो कृपि में बृद्धि होती है। फसल ठीक उत्पन्न होती है और कृपि में कीड़े नहीं लगते। इन्द्रध्वज के रूप में आश्लेषा, विशाखा, भरणी और रेतती नक्षत्र में तथा रथि, गुरु, सोम और शनि इन वारों में उल्कापात हो तो कृपि में फसल पकने के समय रोग लगता है। इस प्रकार के उल्कापात में गेहूँ, जीं, धान और चने की फसल अच्छी होती है तथा अवशेष धान्य की फसल विगड़ती है। बृष्टि का भी अभाव रहता है। शनिवार को दक्षिण की ओर विजली चमकें तथा तत्काल ही पश्चिम दिशा की ओर उल्का पतित हो तो देश के पूर्वीय भाग में धाढ़, तूफान, अतिवृष्टि आदि के कारण फसल की हानि पहुँचती है तथा इसी दिन पश्चिम की ओर विजली चमकें प्रीत दक्षिण दिशा की ओर उल्कापात हो तो देश के पश्चिमीय भाग में सुभित्त होता है। इस प्रकार का उल्कापात कृपि के लिए अनिष्टकर ही होता है। संहिताकारों ने कृपि के सम्बन्ध में विचार करते समय

समय-समय पर पातत होनेवाली उल्काओं के शुभाशुभत्व का विचार किया है। बराहमिहिर के मतानुसार पूष्य, मघा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में गुरुवार की सन्ध्या या इस दिन की मध्यरात्रि में चने के खेत पर उल्कापात हो तो आगामी वर्ष की कृषि के लिए शुभदायक है। ज्येष्ठ महीने की पूर्णमासी के दिन रात को होनेवाले उल्कापात से आगामी वर्ष के शुभाशुभ फल को ज्ञात करना चाहिए। इस दिन अश्विनी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वफ़िकाल्युनी और ज्येष्ठा नक्षत्र को प्रताडित करता हुआ उल्कापात हो तो वह फसल के लिए खराब होता है। यह उल्कापात कृषि के लिए अनिष्ट का सूचक है। शुक्रवार को अनुराधा नक्षत्र में मध्यरात्रि में प्रकाशमान उल्कापात हो तो कृषि के लिए उत्तम होता है।) इस प्रकार के उल्कापात द्वारा श्रेष्ठ फसल की सूचना समझनी चाहिए। **त्रिवण्ण नक्षत्र** का सर्व करता हुआ उल्कापात सोमवार की मध्यरात्रि में हो तो गेहूँ और धान की फसल उत्तम होती है। **त्रिवण्ण नक्षत्र** में पश्चिमद्वार को उल्कापात हो तो गन्ना अच्छा उत्पन्न होता है किन्तु चने की फसल में रोग लगता है।) सोमवार, गुरुवार और शुक्रवार वो मध्यरात्रि में कढ़क के साथ उल्कापात हो तथा इस उल्का का आकार ध्वजा के समान चौकोर हो तो आगामी वर्ष में कृषि अच्छी होती है, विशेषतः चावल और गेहूँ की फसल उत्तम होती है। ज्येष्ठ मास की शुक्रपक्ष की एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी को पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात हो तो फसल के लिए अशुभ समझना चाहिए।) यहाँ इतनी विशेषता है कि उल्का का आकार त्रिवण्ण होने से यह फल यथार्थ घटित होता है। यदि इन दिनों का उल्कापात दण्डे के समान हो तो आरम्भ में सूखा पश्चात् समयानुकूल वर्ष होती है। दक्षिण दिशा में अनिष्ट फल घटता है। **चुनलपक्ष** की चतुर्दशी की समाप्ति और पूर्णिमा के आरम्भ काल में उल्कापात हो तो आगामी वर्ष के लिए साथारणतः अनिष्ट होता है। पूर्णिमाविद्व प्रतिपदा में उल्कापात हो तो फसल कई गुनी अधिक होती है। किन्तु पशुओं में एक प्रकार का रोग फैलता है जिससे पशुओं की हानि होती है।)

आषाढ़ महीने के आरम्भ में निरधार आकाश में काली और लाल रंग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो आगामी तथा वर्तमान दोनों वर्ष में कृषि अच्छी नहीं होती। वर्षा भी समय पर नहीं होती है। अतिवृष्टि और अनावृष्टि का योग रहता है। (आषाढ़ त्रिवण्ण प्रतिपदा शनिवार और मगलवार को हो और इस दिन गोलाकार काले रंग की उल्काएँ टूटती हुई दिखलाई पड़ें तो महान् भय होता है और कृषि अच्छी नहीं होती) इन दिनों में मध्यरात्रि के बाद खेत रंग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो फसल बहुत अच्छी होती है। यदि इन पतित होनेवाली उल्काओं का आकार मगर और सिंह के समान हो तथा

पतित होते समय शब्द हो रहा हो तो फसल में रोग लगता है और अच्छी होने पर भी कम ही अनाज उत्पन्न होता है। (आषाढ़ कृष्ण तृतीया, पंचमी, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी और चतुर्दशी को मध्यरात्रि के बाद उल्कापात हो तो निश्चय से फसल खराब होती है) इस वर्ष में जोले गिरते हैं तथा पाला पढ़ने का भी भय रहता है। (कृष्णपञ्च की दशमी और अष्टमी को मध्यरात्रि के पूर्व ही उल्कापात दिखलाई पड़े तो उस प्रदेश में कृषि अच्छी होती है) इन्हीं दिनों में मध्यरात्रि के बाद उल्कापात दिखलाई पड़े तो गुड़, गेहूं की फसल अच्छी और अन्य वस्तुओं की फसल में कमी आती है। सन्देश समय चन्द्रोदय के पूर्व या चन्द्रास्त के उपरान्त उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी नहीं होती। अन्य समय में सुन्दर और शुभ आकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी होती है। (शुक्लपक्ष में तृतीया, दशमी और ब्रह्मोदयी को आकाश गर्जन के साथ पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल में कुछ कमी रहती है। तिल, तिलहन और दालबाले अनाज की फसल अच्छी होती है। केवल जावन और गेहूं की फसल में कुछ त्रुटि रहती है।)

फसल की अच्छाई और तुराई के लिए कार्तिक, पौष और माघ इन तीन महीनों के उल्कापात का विचार करना चाहिए। (चैत्र और वैशाख का उल्कापात केवल वृष्टि का सूचक देता है। कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी और चतुर्दशी को धूम्रवर्ण का उल्कापात दक्षिण और पश्चिम दिशा की ओर दिखलाई पड़े तो आगामी फसल के लिए अत्यन्त अनिष्टकारक और पशुओं की महँगी का सूचक है।) बीपायी में भरी के रोग की सूचना भी इसी उल्कापात से समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथियाँ शनिवार, गंगलबार और रविवार को पड़े तो समरत फल और सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार को पड़े तो अनिष्ट चतुर्थी ही मिलता है। कार्तिक की पूर्णिमा को उल्कापात का विशेष निरीक्षण करना चाहिए। इस दिन सूर्यास्त के उपरान्त ही उल्कापात हो तो आगामी वर्ष की वरवादी प्रकट करता है। मध्यरात्रि के पहले उल्कापात हो तो श्रेष्ठ फसल का सूचक है, मध्यरात्रि के उपरान्त उल्कापात हो तो फसल में साधारण गड़बड़ी रहने पर भी अच्छी होती है। मोटा धान्य खूब उत्पन्न होता है। पौय मास में पूर्णिमा को उल्कापात हो तो फसल अच्छी, अमावस्या को हो तो खराब शुक्ल या कृष्णपक्ष की ब्रह्मोदयी को हो तो श्रेष्ठ, द्वादशी को हो तो धान्य की फसल बहुत अच्छी और गेहूं की साधारण, दशमी को हो तो साधारण एवं तृतीया, चतुर्थी और सातमी को हो तो फसलों में रोग लगने पर भी अच्छी ही होती है। (पौय मास में कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को यदि मंगलवार हो और उस दिन उल्कापात हो तो निश्चय ही फसल चौपट हो जाती है) पराहमिहिर ते इस

योग को अत्यन्त अनिष्टकारक माना है।

द्वितीया विद्ध माघ मास की कृष्ण प्रतिपदा को उल्कापात हो तो आगामी वर्ष फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है और अनाज का भाव भी सस्ता हो जाता है। तृतीया विद्ध द्वितीया को रात्रि के पूर्वभाग में उल्कापात हो तो सुधिक्ष और अन्न की उत्पत्ति प्रचुर मात्रा में होती है। चतुर्थी विद्ध तृतीया को कभी भी उल्कापात हो तो कृषि में अनेक रोग, अवृष्टि और अनावर्षण से भी फसल को क्षति पहुँचती है। पंचमी विद्ध चतुर्थी को उल्कापात हो तो साधारणतया फसल अच्छी होती है। दालों की उपज कम होती है, अवशेष अनाज अधिक उत्पन्न होते हैं। तिलहन, गुड़ का भाव भी कुछ महँगा रहता है। इन वस्तुओं की फसल भी कमजोर ही रहती है। पाठी विद्ध पंचमी को उल्कापात हो तो फसल अच्छी उत्पन्न होती है। सप्तमी विद्ध पाठी को मध्यरात्रि के कुछ ही बाद उल्कापात हो तो फसल हल्की होती है। दाल, गेहूँ, बाजरा और ज्वार की उपज कम ही होती है। आठमी विद्ध सप्तमी को रात्रि के प्रथम प्रहर में उल्कापात हो तो अविवृष्टि से फसल की हानि, द्वितीय प्रहर में उल्कापात हो तो साधारणतया अच्छी वर्षा, तृतीय प्रहर में उल्कापात हो तो फसल में कमी और चतुर्थ प्रहर में उल्कापात हो तो गेहूँ, गुड़, तिलहन की खूब उत्पत्ति होती है। नवमी विद्ध अष्टमी को शनिवार या रविवार हो और इस दिन उल्कापात दिखलाई पड़े तो निश्चयतः चने की फसल में क्षति होती है। दशमी, एकादशी और द्वादशी तिथियाँ शुक्रवार या गुरुवार को हो और इनमें उल्कापात दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल उत्पन्न होती है। पूर्णमासी को लाल रंग या काले रंग का उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल की हानि, पीत और श्वेत का उल्कापात दिखलाई पड़े तो श्वेत फसल एवं चिव-विचित्र वर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्य रूप से अच्छी फसल उत्पन्न होती है। होली के दिन होलिकादाह से पूर्व उल्कापात दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष फसल की कमी और होलिकादाह के पश्चात् उल्कापात नीले रंग का विचित्र वर्ण का दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार से फसल को हानि पहुँचती है।

वैयक्तिक फलादेश—सर्प और शूकर के समान आकारयुक्त शब्द सहित उल्कापात दिखलाई पड़े तो दर्शक को तीन यहीने के भीतर मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है। इस प्रकार का उल्कापात आर्थिक हानि भी सूचित करता है। इन्द्रधनुष के आकार समान उल्कापात किसी भी व्यक्ति को सोमवार की रात्रि में दिखलाई पड़े तो धन हानि, रोग वृद्धि तथा भिन्नों द्वारा किरी प्रकार की सहायता की गुच्छ, बुधवार की रात्रि में उल्कापात दिखलाई पड़े तो वस्त्राभूपणों का लाभ, व्यापार में लाभ और मन प्रसन्न होता है। गुरुवार की रात्रि में उल्कापात इन्द्रधनुष के आकार का दिखलाई पड़े तो व्यक्ति को तीन मास में आर्थिक

लाभ, किसी स्वजन को कष्ट, सन्तान की वृद्धि एवं कुटुम्बियों द्वारा यश की प्राप्ति होती है, शुक्रवार को उल्कापात उस आकार का दिखलाई पड़े तो राज-सम्मान, यश, धन एवं मधुर पदार्थ भोजन के लिए प्राप्त होते हैं तथा शनि की रात्रि में उस प्रकार के आकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो आधिक संकट, धन को क्षति तथा आत्मीयों में भी संकर्ष होता है। रविवार की रात्रि में इत्यंद्रधनुष के आकार की उल्का का पतन देखना अनिष्टकारक बताया गया है। रोहिणी, तीनों उत्तरा - उत्तराषाढ़ा, उत्तराकालगुनी और उत्तराभादपदा, चित्रा, अनुराधा और रेती नक्षत्र में इन्हीं नक्षत्रों में उत्पन्न हुए व्यक्तियों को उल्कापात दिखलाई पड़े तो वैयक्तिक दृष्टि से अभ्युदय सूचक और इन नक्षत्रों से भिन्न नक्षत्रों में जन्मे व्यक्तियों को उल्कापात दिखलाई पड़े तो कष्ट सूचक होता है। तीनों पूर्वो—पूर्वाकालगुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभादपदा, आठवें, चौथा, छठा और सूलनक्षत्र में जन्मे व्यक्तियों को इन्हीं नक्षत्रों में शब्द करता हुआ उल्कापात दिखलाई पड़े तो मृत्यु सूचक और भिन्न नक्षत्रों में जन्मे व्यक्तियों को इन्हीं नक्षत्रों में उल्कापात संशब्द दिखलाई पड़े तो किसी आत्मीय की मृत्यु और शब्द रहित दिखलाई पड़े तो आरोग्यलाभ प्राप्त होता है। विपरीत आकारवाली उल्का दिखलाई पड़े—
 (जहाँ से निकली हो, पुनः उसी रथान की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो भयकारक, विपत्तिसूचक तथा किसी भयंकर रोग की सूचक अवगत करना चाहिए।) पवन की प्रतिकूल दिशा में उल्का कुटिल भाव से गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो दर्शक वी पत्नी को भय, रोग और विपत्ति की गुलक समझना चाहिए।

व्याधारिक फल (ग्रीष्म और असितवर्ण की उल्का रविवार की रात्रि के पूर्वार्ध में दिखलाई पड़े तो काले रंग की वस्तुओं की महेंगाई, पीतवर्ण की उल्का इसी रात्रि में दिखलाई पड़े तो गेहूं और चने के व्यापार में अधिक घटा-बढ़ी, श्वेतवर्ण की उल्का इसी रात्रि में दिखलाई पड़े तो चाँदी के भाव में गिरावट और लालवर्ण की उल्का दिखलाई पड़े तो गुवर्ण के व्यापार में गिरावट रहती है।)
 मंगलवार, शनिवार और रविवार की रात्रि में सट्टेवाज व्यक्ति पूर्व दिशा में गिरती हुई उल्का देखें तो उन्हें माल बेचने में लाभ होता है, बाजार का भाव गिरता है और खरीदनेवाले भी हानि होती है। यदि इन्हीं रात्रियों में पश्चिम दिशा की ओर से गिरती हुई उल्का उन्हें दिखलाई पड़े तो भाव बुँद ऊन उठने हैं और सट्टेवालों को खरीदने में लाभ होता है। (दिशा में उत्तर की ओर गमन करती हुई उल्का दिखलाई पड़े तो मोती, हीरा, पत्ता, माणिक्य आदि के व्यापार में लाभ होता है। इन रस्तों के मूल्य में आठ महाने तक घटा-बढ़ी होती रहती है। जवाहरात का बाजार स्थिर नहीं रहता है) यदि सूर्यास्त या चंद्रास्त काल में

उल्कापात हरे और लाल रंग का वृत्ताकार दिखलाई पड़े तो सुवर्ण और चाँदी के भाव स्थिर नहीं रहते। तीन महीनों तक लगातार घटा-बढ़ी चलती रहती है। कृष्ण सर्प के आकार और रंगवाली उल्का उत्तर दिशा से निकलती हुई दिखलाई पड़े तो लोहा, उड़द और तिलहन का भाव ऊँचा उठता है। व्यापारियों को खरीद से लाभ होता है। पतली और छोटी पूँछवाली उल्का मंगलवार की रात्रि में चमकती हुई दिखलाई पड़े तो गहूं, लाल कपड़ा एवं अन्य लाल रंग की वस्तुओं के भाव में घटा-बढ़ी होती है। मनुष्य, गज और अश्व के आकार की उल्का यदि रात्रि के मध्यभाग में शब्द सहित गिरे तो तिलहन के भाव में अस्थिरता रहती है। मृग, अश्व और बृक्ष के आकार की उल्का मन्द-मन्द चमकती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी बृक्ष या घर के ऊपर हो तो पशुओं के भाव ऊँचे उठते हैं, साथ ही साथ तृण के दाम भी महँगे हो जाते हैं। चन्द्रमा या सूर्य के दाहिनी ओर उल्का गिरे तो सभी वस्तुओं के मूल्य में बढ़ि होती है। यह स्थिति तीन महीने तक रहती है, पश्चात् मूल्य पुनः नीचे गिर जाता है। बन या इमशान भूमि में उल्कापात हो तो दाल वाले अनाज महँगे होते हैं और अवशेष अनाज सस्ते होते हैं। पिण्डाकार, चिनगारी फूटती हुई उल्का आकाश में ध्रुवण करती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी नदी या तालाब के किनार पर हो तो कगड़े का भाव सस्ता होता है। रुई, कपास, सूत आदि के भाव में भी गिरावट आ जाती है। चित्रा, मृगशिर, रेवती, पूर्वाषाढ़, पूर्वभाद्रपद, पूर्वफाल्गुनी और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में पश्चिम दिशा से चलकर पूर्व या दक्षिण की ओर उल्कापात हो तो सभी वस्तुओं के मूल्य में बढ़ि होती है तथा विशेष रूप से अनाज का मूल्य बढ़ता है। रोहिणी, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरापाद, उत्तराभाद्रपद, श्रवण और पृथ्वी इन नक्षत्रों में दक्षिण की ओर जाज्वल्यमान उल्कापात हो तो अन्न का भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदी के भावों में भी गिरावट, जवाहरात के भाव में कुछ महँगी, तृण और लकड़ी के मूल्य में बढ़ि एवं लोहा, इस्पात आदि के मूल्य में भी गिरावट होती है। अन्य धातुओं के मूल्य में बढ़ि होती है।

दहन और भस्म के समान रंग और आकारवाली उल्काएँ आकाश में गमन करती हुई रविवार, भौमवार और शनिवार की रात्रि को अवस्थात् किसी कुएं पर पत्तित होती हुई दिखलाई पड़े तो प्रायः अन्न का भाव आगामी बाठ महीनों से महँगा होता है और इस प्रकार का उल्कापात दुभिक्ष का सूचक भी है। अन्नसंश्हेत्र करनेवालों को विशेष लाभ होता है। (शुक्रवार और गुरुवार को पुष्य या पुनर्वसु नक्षत्र हों और इन दोनों की शवि के पूर्वार्ध में श्वेत या गीतवर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो माधारणतया भाव गम रहते हैं) माणिक्य, मूँगा, मोती, हीरा, पद्मराग आदि गत्तों नीं कीपत में बढ़ि होती है। गुरुर्ण और चाँदी का भाव भी

कुछ ऊँचा रहता है। गुरु-पुष्प योग में उल्कापात दिखलाई पड़े तो यह सोने, चाँदी के भावों में विशेष घटा-बढ़ी का सूचक है। जूट, बादाम, घृत, और तेल के भाव भी इस प्रकार के उल्कापात में घटा-बढ़ी को प्राप्त करते हैं। रवि-पुष्प योग में दक्षिणोत्तर आकाश में जाज्बल्यमान उल्कापात दिखलाई पड़े तो सोने का भाव प्रथम तीन महीने-तक नीचे गिरता है, फिर ऊँचा जढ़ता है। यी और तेल के भाव में भी पहले गिरावट, पश्चात् तेजी आती है। यह व्यापार के लिए भी उत्तम है। नये व्यापारियों को इस प्रकार के उल्कापात के पश्चात् अपने व्यापारिक कावों में अधिक प्रगति करनी चाहिए। रोहिणी नक्षत्र यदि सोमवार को हो और उस दिन सुन्दर और थेष्ठ आकार में उल्का पूर्व दिशा से गमन करती हुई किसी हरे-भरे खेत या वृक्ष के ऊपर गिरे तो समस्त वस्तुओं के मूल्य में घटा-बढ़ी रहती है व्यापारियों के लिए यह समय विशेष महत्त्वपूर्ण है, जो व्यापारी इस समय का सदृप्ययोग करते हैं, वे शीघ्र ही हानिक हो जाते हैं।

रोग और स्वास्थ्य सम्बन्धी फल-देश— सचिद्र, शृणवर्ण या नीलवर्ण की उल्काएं ताराओं का स्पर्श करती हुई पश्चिम दिशा में गिरें तो मनुष्य और पशुओं में संक्रामक रोग फैलते हैं तथा इन रोगों के धारण सहस्रों प्राणियों की मृत्यु होती है। आश्लेषा नक्षत्र में मगर या सर्प की आकृति की उल्का नील या रक्तवर्ण की भ्रमण करती हुई गिरे तो जिस स्थान पर उल्कापात होता है, उस स्थान के चारों ओर पचास कोश की दूरी तक महाभारी फैलती है। यह फल उल्कापात से तीन महीने के अन्दर ही उपलब्ध हो जाता है। श्वेतवर्ण वी दण्डाकार उल्का रोहिणी नक्षत्र में पतित हो तो पतन स्थान के चारों ओर सौ कोश तक सुभिक्ष, सुख, शान्ति और स्वास्थ्य जाभ होता है। जिस स्थान पर यह उल्कापात होता है, उससे दक्षिण दिशा में दो सौ कोश वी दूरी पर रोग, कष्ट एवं नाना प्रकार की शारीरिक वीपारियाँ प्राप्त होती हैं। इस प्रकार के ग्रेशों का त्याग कर देना ही श्रेयस्कर होता है। गोपुच्छ के आकार की उल्का मंगलवार के आश्लेषा नक्षत्र में पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो यह नाना प्रकार के रोगों की सूचना देती है। हैजा, चेचक आदि रोगों का प्रकोप विशेष रहता है। बच्चों और स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए विशेष हानिकारक है। किसी भी दिन प्रातःकाल के समय उल्कापात किसी भी वर्ण और किसी भी आकृति का हो तो भी यह रोगों की सूचना देता है। इस समय का उल्कापात प्रकृति विवरीत है; अतः इसके ढारा अनेक रोगों की सूचना समझ लेनी चाहिये। इन्द्रधनुष या इन्द्र वी ध्वजा के आकार में उल्कापात पूर्व की ओर दिखलाई पड़े तो उस दिशा से रोग की सूचना समझनी चाहिए। किवाङ्, बन्दूक और तलवार के आकार की उल्का धूमिल वर्ण की पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़े तो अनिष्टकारव समझना चाहिये। इस प्रकार का

उल्कापात् व्यापी रोग और महामारियों का सूचक है (स्निग्ध, श्वेत, प्रकाशमान और सीधे आकार का उल्कापात् शान्ति, सुख और नीरोगता का सूचक है) उल्कापात् द्वार पर हो तो विशेष बीमारियाँ सामूहिक रूप से होती हैं।

चतुर्थोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि परिवेषान् यथाक्रमम् ।

प्रशस्तानप्रशस्तांश्च यज्ञालबदनुपूर्णतः^१ ॥१॥

उल्काध्याय के पश्चात् जब परिवेषों का पूर्व परम्परानुसार यथाक्रम से कथन करता हूँ। परिवेष दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त-शुभ और अप्रशस्त-अशुभ ॥१॥

पञ्च प्रकारा विज्ञेयाः पञ्चदण्डश्च भौतिकाः ।

ग्रहनक्षत्रयोः कालं परिवेषाः समुत्थिताः^२ ॥२॥

पाँच वर्ण और पाँच भूतों—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—की अपेक्षा से परिवेष पाँच प्रकार के ज्ञानने चाहिए। ये परिवेष ग्रह और नक्षत्रों के काल को धारकर होने हैं ॥२॥

रूक्षाः खण्डाश्च वासाश्च क्रव्यादायुधसन्निभाः ।

अप्रशस्तः^३ प्रकीर्त्यन्ते^४ विपरीतगुणान्विता ॥३॥

जो चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह और नक्षत्रों के परिवेष—मण्डल-कुण्डल रूप, ग्रुणिङ्गत—अपूर्ण, टेढ़े, क्रव्याद—भांसामक्षी जीव अथवा चिता की अग्नि और आयुध—तलवार, धनुष आदि अस्त्रों के समान होते हैं, वे अशुभ और इनसे विपरीत स्थान जाने शुभ माने गये हैं ॥३॥

रस्त्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि प्रथमं तेषु लक्षणम् ।

ततः पश्चाद्विवा भूयो तन्निबोध^५ यथाक्रमम्^६ ॥४॥

1. अनुपूर्वसः मू० । 2. समुत्थिताः आ० । 3. प्रशस्ता मू० C. । 4. न प्रशस्तन्ते मू० C. । 5. विपरीता आ० । 6. तन्निबोधन मू० C. । 7. गत्ततः मू० D. ।

आगे हम रात्रि में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल को कहेंगे; पश्चात् दिन में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल का निरूपण करेंगे। क्रमशः उन्हें अवगत करना चाहिए ॥4॥

क्षीरशंखनिभश्चाहे परिवेषो^१ यदा भवेत् ।
तदा क्षेमं सुभिक्षं च राज्ञो विजयमादिशेत् ॥५॥

चन्द्रमा के इदं-गिरं दूध अथवा शंख के सदृश परिवेष हो तो क्षेम-कुशल और सुभिक्ष होता है तथा राजा की विजय होती है ॥५॥

सपिस्तैलनिकाशस्तु परिवेषो यदा भवेत् ।
न चाऽस्त्रकृष्टोऽतिमात्रं च महामेघस्तदा भवेत् ॥६॥

यदि धूत और तेल के वर्ण का चन्द्रमा का मण्डल हो और वह अत्यन्त श्वेत न होकर शिरिचत् गन्द हो तो अत्यन्त वर्षा होती है ॥६॥

रुप्यपारापत्ताभश्च^२ परिवेषो यदा भवेत् ।
‘महामेघास्तदाभीक्षण’^३ तर्पयन्ति जलैर्महीम् ॥७॥

चाँदी और कबूतर के समान आमा वाला चन्द्रमा का परिवेष होतो निरन्तर जल-वर्षा द्वारा पृथ्वी जलपावित हो जाती है अर्थात् कई दिनों तक झड़ी जगी रहती है ॥७॥

इन्द्रायुध सवर्णस्तु^४ परिवेषो यदा भवेत् ।
संग्रामं तत्र जानीयाद् वर्षे^५ चापि जलागमम्^६ ॥८॥

यदि पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रधनुष के समान वर्ण वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो उस दिशा में संग्राम का होना और जल का बरसना जानना चाहिए ॥८॥

कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षे पीते तु^७ व्याधिमादिशेत् ।
१२रुक्षे भस्मनिभे चापि दुर्वृष्टिभ्यमादिशेत् ॥९॥

काले और नीले वर्ण का चन्द्रमण्डल हो तो निश्चय ही वर्षा होती है। यदि पीले रंग का हो तो व्याधि का प्रकोप होता है। चन्द्रमण्डल के रुक्ष और भस्म सदृश होने पर वर्षा का अभाव रहता है और उसमें भय होता है। तात्पर्य

1. परिवेष आ० । 2. यथा आ० । 3. आकृष्ट मु० । 4. धारा मु० C । 5. प्रभावस्तु मु० C । 6. भेषः A, C, B, मु० । 7. भीक्षं मु० C । 8. मुवर्ण आ० । 9. वर्षे आ० । 10. जलागमे आ० । 11. पीतके आ० । 12. मुद्रित C में इसके पूर्व ‘नक्षत्रप्रतिमास्तु महामेघस्तदा भवेत्’ यह पाठ भी मिलता है।

यह है कि जल की वर्षा न होकर वायु तेज चलती है, जिससे फूल की वर्षा दिखलाई पड़ती है ॥9॥

यदा तु सोममुदितं परिवेषो रुणद्धि हि ।

जीमूतवर्णस्तिर्थश्च महामेघस्तदा भवेत् ॥10॥

यदि चन्द्रमा का परिवेष उदयप्रात् चन्द्रमा को अवरुद्ध करता है—ठक लेता है और वह मेघ के समान तथा स्तिर्थ हो तो उत्तम वृष्टि होती है ॥10॥

अभ्युत्तनतो यदा श्वेतो रुक्षः सन्ध्यानिशाकरः ।

अचिरेण्यैव कालेन राष्ट्रे चौरैविलुप्यते ॥11॥

उदय होना हुआ सन्ध्या के समय का चन्द्रमा यदि श्वेत और रुक्ष वर्ण के परिवेष से गुल हो तो देश को चोरों के उपद्रव का भग होता है ॥11॥

चन्द्रस्य परिवेषस्तु सर्वरात्रं यदा भवेत् ।

शस्त्रं जनक्षयं चैव तस्मिन् देशे विनिर्दिशेत् ॥12॥

यदि यारी रात —उदय में अहत तक चन्द्रमा का परिवेष रहे तो उस प्रदेश में परस्पर कलह-मारपीट और जनता का नाश सूचित होता है ॥12॥

भास्करं तु यदा रुक्षः परिवेषो रुणद्धि हि ।

तदा मरणमाख्याति नागरस्य महीपतेः ॥13॥

यदि सूर्य का परिवेष रुक्ष हो और वह उसे छक ले तो उसके द्वारा नागरिक एवं प्रशासकों भी मृत्यु की सूचना मिलती है ॥13॥

आदित्यपरिवेषस्तु यदा सर्वदिनं भवेत् ।

क्षुद्रभयं जनसारिङ्गं शस्त्रकोपं च निर्दिशेत् ॥14॥

सूर्य का परिवेष सारे दिन उदय में अस्त तक बना रहे तो क्षुधा का भय, मनुष्यों का महामारी द्वारा मरण एवं युद्ध का प्रकोप होता है ॥14॥

हरते सर्वसमस्यानामीतिर्भवति दारणा ।

वृक्षगुलम्लतानां च वर्तनीनां तथैव च ॥15॥

उक्त प्रणाली के परिवेष से मधी प्रकाश के धान्यों का नाश, धोर ईति-भीति और वृक्षों, गुलम्लों-लुरमुटों, लताओं तथा पश्चिमों को हानि पहुँचती है ॥15॥

यतः खण्डस्तु दृश्येत् ततः प्रविशते परः ।

ततः प्रयत्नं¹ कुर्वीत रक्षणे पुरराष्ट्रयोः ॥16॥

उपर्युक्त समस्त दिनव्यापी सूर्य परिवेष का जिस ओर का भाग खण्डित दिखाई दे, उस दिशा से परचक्र का प्रवेश होता है, अतः नगर और देश की रक्षा के लिए उस दिशा में प्रबन्ध करना चाहिए ॥16॥

रक्तो² वा यथाभयुदितं³ कृष्णपर्यन्त एव च ।

परिवेषो रवि⁴ रुद्ध्याद्⁵ राजव्यसनमादिशेत् ॥17॥

रक्त अथवा कृष्णवर्ण पर्यन्त चार वर्ण वाला सूर्य का परिवेष हो और वह उदित सूर्य को आच्छादित करे तो कष्ट सूचित होता है ॥17॥

यदा त्रिवर्णपर्यन्तं परिवेषो दिवाकरम् ।

तद्राष्ट्रमचिरात् कालाद् दस्युभिः परिलुप्यते⁶ ॥18॥

यदि तीन वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को ढक ले तो वायुओं द्वारा देश में उपद्रव होता है, तथा दस्यु वर्ग की उन्नति होती है ॥18॥

हरितो नीलपर्यन्तः परिवेषो यदा भवेत् ।

आदित्ये यदि वा सोमे राजव्यसनमादिशेत् ॥19॥

यदि हरे रंग से लेकर नीले रंग पर्यन्त परिवेष सूर्य अथवा चन्द्रमा का हो तो प्रशासक वर्ग को कष्ट होता है ॥19॥

दिवाकरं बहुविधः परिवेषो रुणद्धि हि ।

⁷भिद्यते बहुधा वर्ति गवां मरणमादिशेत् ॥20॥

यदि अनेक वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को अवश्यद्व कर ने अथवा खण्ड-खण्ड अनेक प्रकार का हो तथा सूर्य को ढक ले तो गायों का मरण सूचित होता है ॥20॥

¹⁰यदा इति मुच्यते शोध्रं⁸ दिशि चैताभिवर्धते ।

गवां विलोपमपि च तस्य राष्ट्रस्य निदिशेत् ॥21॥

1. प्रत्यत्नं तत्र मु० । 2. रपतं मु० A. । 3. अवरंग् प० C. । 4. व० ग० 10. ।
5. रवि मु० D. । 6. विद्यात् आ० । 7. राजा मु० A. । राजा मु० C. । 8. विवरण, और परिताप्यते, ऐ दोनों ही पाठ मिलते हैं । आ० । 9. राष्ट्रक्षोभो भवेत् रुण्, म० ।
10. वषाभिमुच्यते मु० । 11. दिवसश्चैवाभिवर्धते म० ।

जिस दिशा में सूर्य का परिवेष शीघ्र हटे और जिस दिशा में बढ़ता जाय उस दिशा में राष्ट्र की गायों का लोप होता है—गायों का नाश होता है ॥21॥

अंशुमाली¹ यदा तु स्यात् परिवेषः समन्ततः ।

तदा सपुरराष्ट्रस्य देशस्य रुजमादिशेत् ॥22॥

सूर्य का परिवेष यदि सूर्य के चारों ओर हो तो नगर, राष्ट्र और देश के मनुष्य महामारी से पीड़ित होते हैं ॥22॥

ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां परिवेषः प्रगृह्यते ।

अभीष्टं यत्र वर्तते² तं देशं परिवर्जयेत् ॥23॥

ग्रह—गूर्हादि मात्र ग्रह, नक्षत्र - अण्विती, भरणी आदि 28 नक्षत्र और चन्द्राणा का परिवेष निरन्तर बना रहे और वह उस रूप में ग्रहण किया जाय तो उम् देश का परित्याग कर देना चाहिए, यतः कहाँ जीव ही भय उपस्थित होता है ॥23॥

परिवेषो विरुद्धेषु नक्षत्रेषु ग्रहेषु च ।

कालेषु वृष्टिविक्षेपाभ्यमन्यत्र निर्दिशेत्³ ॥24॥

गर्भात्मा में ग्रहों और नक्षत्रों की जिस दिशा में परिवेष हों उस दिशा में वृष्टि होती है और अल्प प्रकार का भय होता है ॥24॥

अभ्यशवितर्यतो गच्छेत् तां दिशं त्वभियोजयेत् ।

रिक्तां वा विपुलां चाये जयं कुर्वीत् शाश्वतम् ॥25॥

जल में रिक्त अथवा जल में विपुल वादलों ने पंकित जिस दिशा की ओर गमन करे उस दिशा में शाश्वत जय होती है ॥25॥

यदाऽभ्यशक्तिर्दृश्येत् परिवेषसमान्वता⁴ ।

नागरान् यायिनो⁵ हन्त्युस्तदा यत्नेन संयोगे ॥26॥

यदि परिवेष महित अभ्यशवित—वादल दिव्यलाई पड़े तो आकर्षण करे वाले जन् द्वारा नगरवायियों का युद्ध में विनाश होता है, अतः यत्नसूर्वक रक्षा करनी चाहिए ॥26॥

1. अश्वमाली आ० । 2. यर्तते म० । 3. आदिशेत् म० B. D. । 4. रक्तां म० ।

5. विपुलां म० । 6. कुर्वीति म० । 7. समरियना म० C. । 8. यायिनो, यायितः म०

A. D., यायिनं म० C. ।

नानारूपो यदा दण्डः परिवेषं प्रमर्देति ।

नागरास्तत्र बध्यन्ते याधिनो नाश संशयः ॥२७॥

यदि अनेक वर्ण वाला दण्ड परिवेष को मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो आक्रमणकारियों द्वारा नाशिकों का नाश होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥२७॥

त्रिकोटि^१ यदि दृश्येत् परिवेषः कथञ्चन ।

त्रिभागशस्त्रवध्योऽसाविति निर्गन्धशासने ॥२८॥

कदाचित् तीन कोने वाला परिवेष देखने में आवे तो युद्ध में तीन भाग सेना मारी जाती है, ऐसा निर्गन्ध शासन में बतलाया गया है ॥२८॥

चतुर्थो यदा चापि परिवेषः प्रकाशते ।

क्षुधया व्याधिभिश्चापि चतुभागोऽवशिष्यते^२ ॥२९॥

यदि चार कोने वाला परिवेष दिखलाई दे तो क्षुधा—भूख और रोग से पीड़ित होकर विनाश को प्राप्त हो जाती है, जिसमें जन-सार्था चतुर्थांश रह जाती है ॥२९॥

अद्वचन्द्रनिकाशस्तु परिवेषो रुणद्धि हि ।

आदित्यं^३ यदि वा सोमं राष्ट्रं संकुलतां ब्रजेत् ॥३०॥

अर्धं चन्द्राकार परिवेष चन्द्रमा अथवा सूर्य को आच्छादित करे तो देश में व्याकुलता होती है ॥३०॥

प्राकाराद्वालिकाप्रख्यः परिवेषो रुणद्धि हि ।

आदित्यं यदि वा सोमं पुररोधं निवेदयेत् ॥३१॥

यदि कोट और अद्वालिका के सदृश होकर परिवेष रूर्य और चन्द्रमा को अवरुद्ध करे तो नगर में शत्रु के बेरे पड़ जाते हैं ऐसा कहना चाहिए ॥३१॥

समन्ताद् बध्यते यस्तु मुच्यते च मुहुर्भूहः ।

संग्रामं तत्र जानीयाद् दारणं पर्युपस्थितम्^४ ॥३२॥

सूर्य अथवा चन्द्रमा के चारों ओर परिवेष हो और वह बार-बार होवे और दिखर जाये तो वहाँ पर कलह एवं संग्राम होता है ॥३२॥

1. वा न्ते मू० । 2. त्रिकोणो मू० । 3. विशिष्टानि मू० । 4. आदित्ये मू० ।
5. सोमे मू० । 6. भयमारुण्यानि दारणम् मू० C. ।

यदा गृहपत्निताद्य परिवेषः प्रकाशते ।
अचिरेणैव कालेन संकुलं^१ तत्र जायते ॥३३॥

यदि परिवेष ग्रह को आच्छादित करके दिखलाई दे तो वहाँ शीघ्र ही सब आकुलता से व्याप्त हो जाते हैं ॥३३॥

यदि राहुमधि प्राप्तं परिवेषो रुणद्वि चेत् ।
तदा सुदृष्टिजनीयाद् व्याधिस्तत्र भयं भवेत् ॥३४॥

यदि परिवेष राहु को भी ढक ले—धेरे के भीतर राहु ग्रह भी आ जाय— तो अच्छी वर्षा होती है, परन्तु वहाँ व्यधि का भय बना रहता है ॥३४॥

पूर्वसन्ध्यां नागराणामागतानां^२ च पश्चिमा ।
अर्द्धरात्रेषु^३ राष्ट्रस्य मध्याह्ने राजा उच्यते ॥३५॥

पूर्व की सन्ध्या का फल स्थायी—नगरवानियों को होता है और पश्चिम की सन्ध्या का फल आयन्त्रुक—सायी को होता है। अर्द्धरात्रि का फल देश भरकी और गण्याद्य का फल राजा को प्राप्त होता है ॥३५॥

धूमकेतुं च सोमं च नक्षत्रं च रुणद्वि हि ।
परिवेषो यदा राहुं तदा यात्रा न सिध्यति ॥३६॥

यदि परिवेष धूमकेतु—पृच्छलतारा, चन्द्रमा, नक्षत्र और राहु को आच्छादित करे तो यात्री—आकरण करने वाले राजा की यात्रा नी सिद्धि नहीं होती ॥३६॥

यदा तु ग्रहनक्षत्रे परिवेषो रुणद्वि हि ।
अभावस्तस्य देशरूप विज्ञेयः पर्युषस्थितः ॥३७॥

यदि परिवेष ग्रह और नक्षत्रों को रोके तो उस देश का अभाव हो जाता है—उस देश में संकट होता है ॥३७॥

त्रयो यत्रावरुद्ध्यन्ते नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः ।
त्रयहाद् वा जायते वर्षं मासाद् वा जायते भयम् ॥३८॥

नक्षत्र, चन्द्रमा और मंगल, बुध, गुरु और शुक्र इन पाँच ग्रहों में से किसी एक को एक साथ परिवेष अवरुद्ध करे तो तीन दिन में वर्षा होती है अथवा एक

1. समाप्त । 2. राहु वे दो वाहुं परिवेषो रुणद्वि हि । 3. चन्द्र चित्तानियत् व्याधिमत भयं भवेत् ॥३४॥ म० ८ । 3. अनन्तुनां म० । 4. नवेष्य ग० । 5. वीर्यं पत्र विकल्पते, नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः ग० ।

मास में भव उत्पन्न होता है ॥३८॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं परिवेषेषु तत्त्वतः ।
लक्षणं सम्प्रब्रह्मामि विद्युतां तन्मिकोधतः ॥३९॥

परिवेषों का फल उल्का के फल के समान ही अवगत करना चाहिए । अब आगे विद्युत के लक्षणादि का निरूपण करते हैं ॥३९॥

इति नैर्यन्ते भद्रवाहुनिमित्सशास्त्रे परिवेषवर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

विवेचन—परिवेषों के द्वारा शुभाशुभ अवगत करने की परम्परा निर्मित शास्त्र के अन्तर्गत है । परिवेषों का विचार ऋग्वेद में आया है । सूर्य अथवा चन्द्रमा की किरणें पर्वत के ऊपर प्रतिबिम्बित और पवन के द्वारा मंडलाकार होकर थोड़े से भेद वाले आकाश में अनेक रंग और आकार नी दिखलाईं पड़ती हैं । इन्हीं परों परिवेष करते हैं । वर्षा ऋतु में सूर्य या चन्द्रमा के चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य त्रियी आकार में एक मंडल-गत बनता है, इसी को परिवेष कहा जाता है ।

परिवेषों का साधारण फलादेश—जो परिवेष नीलकंठ, मोर, चाँदी, तेल, दूध और जल के समान आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसमा वृत्त खण्डित न हो और स्थिर हो, वह गुभित्र और वंशत करने वाला होता है । जो परिवेष समस्त आकाश में गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, रुधिर के समान हो, रुखा हो, खण्डित हो तथा धनुष और शूण्याटिक के समान हो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है । मोर की गर्दन के समान परिवेष हो तो अत्यन्त वर्षा, वहूत रंगों वाला हो तो राजा का वध, धूमवर्ण या होने से गम और इन्द्रधनुष के समान या अशोक के फूल के समान कान्ति वाला हो तो युद्ध होता है । किसी भी ऋतु में यदि परिवेष एक ही वर्ण का हो, स्थिर हो तथा छोट-छोटे भेदों से व्याप्त हो और सूर्य की किरणें पीत वर्ण की हों तो उस प्रकार का परिवेष शीत्र ही वर्षा का सूचक है । यदि तीनों कानों की सन्ध्या में परिवेष दिखलाई पड़े तथा परिवेष की ओर मुख करके सूर्य या पक्षी गव्द करने हों तो इस प्रकार का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारक होता है । यदि परिवेष का भेदन उम्मा या विद्युत द्वारा हो तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा किसी वर्ण नेता की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए । रक्तवर्ण का परिवेष भी किसी नेता की मृत्यु का सूचक है । उदयकाल, अस्तकाल और सम्याह्न या मध्यरात्रि काल में लगातार परिवेष दिखलाई पड़े तो किसी नेता की मृत्यु समझनी चाहिए । दो मण्डल का परिवेष

सेनापति के लिए आतंककारी, तीन मंडल वाला परिवेष शस्त्रकोष का सूचक, चार मंडल का परिवेष देश में उपद्रव तथा महत्वपूर्ण युद्ध का सूचक एवं पाँच मण्डल का परिवेष देश या राष्ट्र के लिए अत्यन्त असुख सूचक है। मंगल परिवेष में हो तो सेना एवं सेनापति को भय; बुध परिवेष में हो तो कलाकार, कवि, लेखक एवं मन्त्री को भय; बृहस्पति परिवेष में हो तो पुरोहित, मन्त्री और राजा को भय; शुक्र परिवेष में हो तो क्षत्रियों को कष्ट एवं देश में अशान्ति और शनि परिवेष में हो तो देश में चोर, डाकुओं का उपद्रव वृद्धिगत हो तथा साधु, संत्यामियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। केनु परिवेष दें हो तो अनिंदा का प्रह्लाद तथा शस्त्रादि का भय होता है। परिवेष में दो ग्रह हों तो कृषि के लिए हानि, वर्षा का अभाव, अशान्ति और साधारण जनता को कष्ट; तीन ग्रह परिवेष में हों तो दुर्भिक्ष, अन्त का भाव महेंगा और धनिक वर्ग को विशेष कष्ट; चार ग्रह परिवेष में हों तो मन्त्री, नेता एवं किसी धर्मत्वा की मृत्यु और पाँच ग्रह परिवेष में हों तो प्रजय तुल्य कष्ट होता है। यदि मंगल बुधादि पाँच ग्रह परिवेष में हों तो विशी बड़े भारी राष्ट्रनायक वी मृत्यु तथा जगत् में अशान्ति होती है। शासन परिवर्तन का योग भी इसी के द्वारा बनता है। यदि प्रतिगदा से लेकर चतुर्थी तक परिवेष हो तो अमानुसार व्राद्धण, अशिय, वैश्य और शूद्रों को कष्टसूचक होता है। पंचमी से लेकर सप्तमी तक परिवेष हो तो नगर, दोप एवं धान्य के लिए अशुभकारक होता है। अष्टमी को परिवेष हो तो युवक, मन्त्री या किसी बड़े शाशनाधिकारी की मृत्यु होती है। इस दिन का परिवेष गाँव और नगरों की उन्नति में रक्षाकट की भी सूचना देता है। नवमी, दशमी और एकादशी में होने वाला परिवेष नागरिक जीवन में अशान्ति और प्रशासक या मंडलाधिकारी की मृत्यु वी सूचना देता है। द्वादशी तिथि में परिवेष हो तो देश या नगर में घरेलू उपद्रव; अयोदशी में परिवेष हो तो शस्त्र का धोम, चतुर्दशी में परिवेष हो तो नारियों में भयानक रोग, प्रशासनाधिकारी की रमणी को कष्ट एवं पूर्णमासी में परिवेष हो तो साधारणतः जान्ति, भमृदि एवं सुख की सूचना भिलती है। यदि परिवेष के भीतर रेखा दिखलाई पड़े तो नगरवासियों को कष्ट और परिवेष के बाहर रेखा दिखलाई पड़े तो देश में जान्ति और सुख का विस्तार होता है। स्तनघ्न, श्वेत, और दीप्तिगावी परिवेष विजय, लक्ष्मी, मुख और जान्ति की सूचना देता है।

रोहिणी, धनिष्ठा और अवण नक्षत्र में परिवेष हो तो देश में सुभिक्ष, जान्ति, वर्षा एवं हर्ष की वृद्धि होती है। अश्विनी, कृत्तिका और मृगजिरा में परिवेष हो तो सप्तपानुकूल वर्षा, देश में जान्ति, धन-धान्य की वृद्धि एवं व्यापारियों को लाभ; भरणी और आश्लेषा में परिवेष हो तो जनता को अनेक प्रकार का

कष्ट, किसी महापुरुष की मृत्यु, देश में उपद्रव, अन्न कष्ट एवं महामारी का प्रकोप; आद्रा नक्षत्र में परिवेष हो तो सुख-शान्ति का कारक; पुनर्वसु नक्षत्र में परिवेष हो तो देश का प्रभाव बढ़े, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिले, नेताओं को सभी प्रकार के सुख प्राप्त हों तथा देश की उपज वृद्धिगति हो; पुष्य नक्षत्र में परिवेष हो तो कल-कारखानों की वृद्धि हो; आश्लेषा नक्षत्र में परिवेष हो तो सब प्रकार से भय, आतंक एवं महामारी की सूचना, मध्या नक्षत्र में परिवेष हो तो श्रेष्ठ वर्षी की सूचना तथा अनाज सस्ते होने की सूचना; तीनों पूर्वाओं में परिवेष हो तो व्यापारियों को भय, साधारण जनता को भी कष्ट और कृपया वर्ग को चिन्ता की सूचना; तीनों उत्तराओं में परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, चेत्क का प्रकोप, फसल की श्रेष्ठता और पर-आसन से भय; हस्त नक्षत्र में परिवेष हो तो सुभिक्ष, धान्य की अच्छी उपज और देश में रामृद्धि; चित्रा नक्षत्र में परिवेष हो तो प्रशासकों में मतभेद, परस्पर कलह, और देश को हानि; स्वाती नक्षत्र में परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षी, प्रशासकों की विजय और शान्ति; विशाखा नक्षत्र में परिवेष हो तो अग्निभय, शरव भय और रोगभय; अनुराधा नक्षत्र में परिवेष हो तो व्यापारियों को कष्ट, देश की आर्थिक क्षति और नगर में उपद्रव; ऊर्ध्वा नक्षत्र में परिवेष हो तो अशान्ति, उपद्रव और आग्न भय; मूल नक्षत्र में परिवेष हो तो देश में घरेलू कलह, नेताओं में मतभेद और अन्न की क्षति; पूर्वांगाढ़ा नक्षत्र में परिवेष हो तो कृपकों को लाभ, पशुओं की वृद्धि और धन-धान्य की वृद्धि; उत्तरांगाढ़ा नक्षत्र में परिवेष हो तो जनता में प्रेम, नेताओं में सहयोग, देश की उन्नति और व्यापार में लाभ; शतभिषा में परिवेष हो तो शत्रु भय, अग्नि का विशेष प्रकोप और अन्न की कमी; पूर्वभाद्रपद में परिवेष हो तो कलाकारों का सम्मान और प्रायः शान्ति; उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में परिवेष हो तो जनता में यह्योग, देश में कल-कारखानों की वृद्धि और आसन में तरक्की एवं रेवती नक्षत्र में परिवेष हो तो सर्वत्र शान्ति की सूचना समझनी चाहिए। परिवेष के रंग, आकृति और मण्डलों की संख्या के अनुसार फलादेश में त्यूनता या अधिकता हो जाती है। किसी भी नक्षत्र में एक मंडल का परिवेष साधारणतः प्रतिपादित फल की सूचना देता है, दो मंडल का परिवेष निरूपित फल से प्रायः डेह गुने फल की सूचना, तीन मंडल का परिवेष द्विगुणित फल की सूचना, चार मंडल का परिवेष त्रिगुणित फल की सूचना और पाँच मंडल का परिवेष चौगुने फल की सूचना देता है। परिवेष में पाँच से अधिक मंडल नहीं होते हैं। साधारणतः एक मंडल का परिवेष शुभ ही माना जाता है। मंडलों में उनकी आकृति की स्पष्टता का भी विचार करना उचित ही होगा।

वर्षी और कृषि खाद्यन्त्री परिवेष का फलादेश —वर्षी का विचार प्रधान रूप

से चन्द्रमा के परिवेष से किया जाता है और कुषि सम्बन्धी विचार के लिए सूर्य परिवेष का अवलम्बन लिया जाता है। यद्यपि दोनों ही परिवेष उभय प्रकार के फल की सूचना देते हैं, फिर भी विशेष विचार के लिए पृथक् परिवेष को ही लेना चाहिए।

चन्द्रमा के परिवेष वर्णन रंग का हो और उसमें अधिक से अधिक दो मण्डल हों तो लगातार सात दिनों तक वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का परिवेष फसल की उत्तमता की सूचना भी देता है। वर्षा अहूतु में समय पर वर्षा होती है। आश्विन और कात्तिक में भी वर्षा होने से धनन्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। यदि उक्त प्रकार के परिवेष के समय चन्द्रमा का रंग श्वेत वर्ण हो तो माघ मास में भी वर्षा होने की सूचना समझ लेनी चाहिए। कदाचित् चन्द्रमा का रंग नीला या काला दिखलाई पड़े तो निष्ठय से अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। चन्द्रमा के नीले या काले होने से गुम्बिका भी होता है। गेहूं, धान और गुड़ की फसल अच्छी उत्पन्न होती है। काले रंग के चन्द्रमा के होने से आश्विन भास में वर्षा का दस दिनों तक अवरोध रहता है, जिससे धान की फसल में कमी आती है। चन्द्रमा हरित वर्ण का मालूम हो और परिवेष दो मण्डलों के घेरे में हो तो वर्षा सामान्य ही होती है, पर फसल अच्छी ही उत्पन्न होती है। चन्द्रमा जिस समय रोहिणी नक्षत्र के मध्य में स्थित हो, उसी समय विचित्र वर्ण का परिवेष रात्रि के मध्य भाग में दिखलाई पड़े तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा देव की उत्पत्ति की सूचना समझनी चाहिए। देश में धन-धान्य की उत्पत्ति प्रचुर रूप में होती है, वर्षा भी समय पर होती है तथा देश में सर्वेत्र गुम्बिका व्याप्त रहता है। चन्द्रमा का परिवेष रक्त वर्ण का दिखलाई पड़े और चन्द्रमा दा रंग श्वेत या क्षयोत्त हो तथा एक ही मण्डल याला परिवेष हो तो वर्षा आपाह में नहीं होती। श्रावण, भाद्रपद में अच्छी वर्षा और आश्विन में वर्षा वा अभाव ही रहता है। फसल भी उत्पन्न नहीं होती। यदि आपाह मास में चन्द्रमा का परिवेष सम्मान गम्भय ही दिखलाई पड़े तो श्रावण में धूप होती है, वर्षा का अभाव रहता है। आपाह कुण्ड प्रतिपदा को सम्मान काल में चन्द्रमा का परिवेष दो मण्डलों में दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, एक मण्डल में रक्त वर्ण वा परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा, एक मण्डल में ही श्वेत वर्ण और हरित वर्ण मिथित परिवेष दिखलाई दे तो प्रचुर वर्षा, तीन मण्डल में परिवेष दिखलाई दे तो दुष्काल, वर्षा का अभाव और चार मण्डल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल में कमी और दूषिका, वर्षा अहूतु के चारों महीनों अस्पृष्ट और अन्न की कमी होती है। आपाह कुण्ड प्रतीया की चन्द्रोदय होते हरित आग रक्त वर्ण मिथित परिवेष दिखलाई पड़े तो धूप वर्षा होती है। तृतीया की चन्द्रोदय के तीन घंटी बाद यदि

लाल वर्ण का एक मंडल बाला परिवेष दिखलाई पढ़े तो निष्चयतः अधिक वर्षा होती है। नदी-नाले जल से भर जाते हैं। श्रावण के महीने में वर्षा की कुछ कमी रहती है, फिर भी कलाल उत्तम होती है। इसी तिथि को मध्य रात्रि के उपरान्त परिवेष दो मंडल बाला दिखलाई पढ़े तो वर्षा का अभाव, कृषि में गड़-बड़ी और सभी प्रकार की फसलों में रोगादि लग जाते हैं। चतुर्थी तिथि को चन्द्रोदय के साथ ही परिवेष दिखलाई पढ़े तो फसल उत्तम होती है और वर्षा भी समयानुकूल होती है, यदि इसी दिन चन्द्रोदय के आर-पाँच घड़ी उपरान्त परिवेष दिखलाई पढ़े तो वर्षा का भादो मास में अभाव ही समझना चाहिए। उपर्युक्त प्रकार का परिवेष फसल के लिए भी अनिष्टकारक होता है।

आषाढ़ कृष्ण पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी को चन्द्रास्त काल में विचित्र वर्ण का परिवेष दिखलाई पढ़े तो निष्चयतः अल्प वर्षा होती है। अष्टमी तिथि को चन्द्रोदय काल में ही परिवेष दिखलाई पढ़े तो वर्षा प्रचुर परिमाण में तथा फसल उत्तम होती है। अष्टमी के उपरान्त कृष्ण पञ्च की अन्य तिथियों में अस्त या उदय काल में चन्द्र परिवेष दिखलाई पढ़े तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी सामान्य ही होती है।

आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को चन्द्रोदय होते ही परिवेष घेर ले तो अगले दिन नियमतः वर्षा होती है। इस परिवेष का फल तीन दिनों तक लगातार वर्षा होना भी है। आषाढ़ शुक्ला तृतीया को चन्द्रोदय के तीन घड़ी भीतर ही विचित्र वर्ण का परिवेष चन्द्रमा को घेर ले तो नियमतः अगले पाँच दिनों तक तेज धूप पड़ती है, पश्चात् हल्की वर्षा होती। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी को चन्द्रोदय काल में ही परिवेष रखत वर्ण का हो तो आषाढ़ मास में सूखा पड़ता है और श्रावण में वर्षा होती है। आषाढ़ी पूर्णिमा को लाल वर्ण का परिवेष दिखलाई पढ़े तो यह सुभिक्ष का सूचक है, इस वर्ष वर्षा विशेष रूप से होती है। फसल भी अच्छी होती है। अन्न का भाव भी सस्ता रहता है। श्रावण कृष्ण प्रतिग्रदा को मध्य रात्रि में चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पढ़े तो अगले आठ दिनों में वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि यह परिवेष ज्वेत वर्ण का हो तो श्रावण भर वर्षा नहीं होती। कड़ाके की धूप पड़ती है, जिससे अनेक प्रकार की वीमारियाँ भी फैलती हैं। उदयकालीन चन्द्रमा को श्रावण कृष्ण द्वितीया के दिन परिवेष वेनिट करें तो वर्षा अच्छी होती है। किन्तु मुर्जर, द्राविड़ और महाराष्ट्र में वर्षा का अभाव सूचित होता है। वर्षा क्रतु में ग्रहों और नक्षत्रों की जिस दिशा में परिवेष हो उस दिशा में वर्षा अधिक होती है, फसल भी अच्छी होती है। श्रावण कृष्ण सप्तमी को उदय काल में चन्द्र परिवेष दिखाई पढ़े तो वर्षा सामान्यतः अल्प समझनी चाहिए। यदि ग्रातःकाल चन्द्रास्त के समय ही परिवेष दिखाई पढ़े तो वर्षा

अगले पाँच दिनों में खूब होती है। यदि व्रिक्षेण परिवेष श्रावण कृष्णा तृतीया को दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, दुष्मिक्ष और उपद्रव समझना चाहिए। नक्षत्रों का भी परिवेष होता है। श्रावण मास में नक्षत्रों का परिवेष हो तो वर्षा का अभाव उस देश में अवगत करना चाहिए। यदि श्रावण मास की किसी भी तिथि में चन्द्र परिवेष चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक बना रहे तो श्रावण और शाद्रपद उन दोनों ही महीनों में वर्षा का अभाव रहता है। आश्विन मास में किसी भी तिथि को चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त काल में चक्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो वह फसल के लिए अच्छाई की सूचना देता है। वर्षा कम होने पर भी फसल अच्छी उत्पन्न होती है। ज्येष्ठ, वैशाख और चैत्र महीने का परिवेष घोर दुष्मिक्ष की सूचना देता है। इन तीनों महीनों में चन्द्रोदय काल में या चन्द्रास्त काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल के लिए अत्यन्त अनिष्टकारक समझना चाहिए। उक्त महीनों की प्रसिंदाविद्ध पूर्णिमा को परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा के लिए उस वर्ष हाहा और होता रहता है। बादल आवागम में व्याप्त रहते हैं, पर वर्षा नहीं होती। तृण और शाम की भी कमी होती है जिसमें पशुओं को भी कष्ट होता है। द्वितीयाविद्ध प्रतिपदा को परिवेष हो तो साधारण वर्षा होती है। द्वितीयाविद्ध पूर्णिमा में चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े तो उस वर्ष निश्चयतः गूँख पड़ता है। कुओं का पानी भी गूँख जाता है। फसल का अभाव ही उस वर्ष रहता है।

सूर्य परिवेष का फल --यदि सूर्योदय काल में ही सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारणतः वर्षा होने की सूचना देता है। मध्याह्न में परिवेष सूर्य को वेरका मंडलाकार हो जाय तो आगामी चार दिनों में घोर वर्षा की सूचना देता है। इस प्रकार के परिवेष में फगल भी अच्छी होती है। सूर्य के परिवेष द्वारा प्रधान रूप से फगल का विचार किया जाना है। यदि किसी भी दिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक परिवेष बना रह जाय तो घोर दुष्मिक्ष या सूचक समझना चाहिए। दिन भर परिवेष का बना रह जाना वर्षा का अवरोधन भी करता है तथा अनेक प्रकार की विपलियों की भी गूँखना देता है। वर्षा कहतु में सूर्य का परिवेष प्रायः वर्षा सूचक समझा जाता है। वैशाख और ज्येष्ठ इन महीनों में यदि सूर्य का परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयतः फसल की वरयादी का सूचक होता है। उस वर्ष वर्षा भी नहीं होती और यदि वर्षा होती है तो इतनी अधिक और असामयिक होती है, जिससे फसल मारी जाती है। इन तीनों महीनों का सूर्य का परिवेष मंगलवार, शनिवार और रविवार इन तीन दिनों में से किसी दिन हो तो संसार के लिए प्रहान् भवानरक, उपद्रवसूचक और दुष्मिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। सूर्य का परिवेष यदि आङ्गोणा, विशाखा और भरणी इन नक्षत्रों में हो तथा सूर्य

भी इन नक्षत्रों में से किसी एक पर स्थित हो तो इस परिवेष का फल फसल के लिए अत्यन्त अशुभसूचक होता है। अनेक प्रकार के उपाय करने पर भी फसल अच्छी नहीं हो पाती। नाना वर्ण का परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध करे अथवा अनेक टुकड़ों में विभक्त होकर सूर्य को आच्छादित करे तो उस वर्ष वर्षा का अभाव एवं फसल की वरबादी समझनी चाहिए। रक्त अथवा कृष्ण वर्ण का परिवेष उदय होते हुए सूर्य को आच्छादित कर ले तो फसल का अभाव और वर्षा की कमी सूचित होती है। मध्याह्न में सूर्य का कृष्ण वर्ण का परिवेष आच्छादित करे तो दालबाले अनाजों की उत्पत्ति अधिक तथा अन्य प्रकार के अनाज कम उत्पन्न होते हैं। मवेझी को कट्ट भी इस प्रकार के परिवेष से समझना चाहिए। यदि रक्त वर्ण का परिवेष सूर्य को आच्छादित करे और सूर्यमण्डल श्वेतवर्ण का हो जाय तो इस प्रकार का परिवेष श्वेत फसल होने की सूचना देता है। आपाह, श्रावण और भाद्रपद ग्रास में होने वाले परिवेषों का फलादेश विशेष रूप से घटित होता है। यदि आपाह शुक्ला प्रतिपदा को सन्ध्या गमय सूर्योस्त काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल का अभाव, प्रातः सूर्योदय काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल एवं गध्याह्न गमय में परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारण फसल उत्पन्न होती है। इस तिथि को सोमवार पड़े तो पूर्णफल, मंगलवार पड़े तो प्रतिपादित फल से कुछ अधिक फल, बुधवार हो तो अल्प फल, गुरुवार हो तो पूर्णफल, शुक्रवार हो तो गमय फल एवं शनिवार हो तो अधिक फल ही प्राप्त होता है। यदि आपाह शुक्ला द्वितीया तिथि को शीतवर्ण का मंडलाकार परिवेष सूर्य के चारों ओर दिखलाई पड़े तो गमय पर वर्षा, श्रेष्ठ फसल की उत्पत्ति, मनुष्य और पशुओं को सब प्राप्त हो आनन्द की प्राप्ति होती है। इस तिथि को त्रिकोणाकार, चौकोर या अनेक नौणाकार टेहा-मेदा परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल में बहुत कमी रहती है। वर्षा भी गमय पर नहीं होती तथा अनेक प्रकार के रोग भी फसल में लग जाने हैं। सूर्य मंडल को दो या तीन बलयों में वेष्टित करने वाला परिवेष मध्यम फल का सूचक है। आपाह शुक्ला चतुर्थी या पंचमी को कृष्ण वर्ण का परिवेष सूर्य को चार घण्टा तक वेष्टित किये रहे तो आगामी भ्यारह दिनों तक सूखा पड़ता है, तेज धूप होती है, जिससे फसल के सभी पांधे सूख जाते हैं। इस प्रवार का परिवेष केवल भारह दिनों तक अपना फल देता है, इसके पश्चात् उसका फल धीरे हो जाता है।

आपाह शुक्ला पण्ठी, अष्टमी और दण्डमी को सूर्योदय होते ही पीत वर्ण का त्रिगुणाकार परिवेष वेष्टित करे तो उस वर्ष फसल अच्छी नहीं होती; वृत्ताकार आच्छादित करे तो फसल साधारणतः अच्छी; दीर्घ वृत्ताकार अण्डाकार या ढोलक के आकार में आच्छादित करे तो फसल बहुत अच्छी, चाबल की उत्पत्ति

विशेष रूप से; चौकोर रूप में आच्छादित करे तो तिथिहन की फसल और अन्य प्रकार की फसलों में गड़बड़ी एवं पंच भूजाकार आच्छादित करे तो गन्ना, ची, मधुआदि की उत्पत्ति प्रचुर परिणाम में तथा रुई की फसल को विशेष क्षति होती है। दण्डी को सूर्यस्त काल में कृष्ण वर्ण वा परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, फसल की क्षति और पशुओं में रोग फैलता है। पट्ठी और अष्टमी वा फल जो उदय काल का है, वही अस्तकाल का भी है। विशेषता इतनी ही है कि उक्त तिथियों में अस्तकालीन परिवेष द्वारा प्रत्येक वस्तु की उपज अवगत की जा सकती है। आधाद गुबला ब्रयोदशी और पूर्णिमा को दोपहर के पश्चात् सूर्य के चारों ओर परिवेष दिखलाई पड़े तो सुभिधा, धान्य और तृण की विशेष उत्पत्ति होती है। थावण मास वा सूर्य परिवेष फसल के लिए हानिकारक माना गया है। भीमादि कोई ग्रह और सूर्य नक्षत्र यदि एक ही परिवेष में हों तो तीन दिन में वर्षा होती है। यदि शनि परिवेष मडल में हो तो छोटे धान्य को नाट करता है और कृष्णों के सिए अत्यन्त अनिष्टकारी होता है, सीक्र पवन चलता है। थावणी पूर्णिमा को मेघाच्छन्न आकाश में गूर्ह का परिवेष दृष्टियोचर होतो अत्यन्त अनिष्टकारी होता है।

भाद्रपद मास में सूर्य के परिवेष का फल वंशवल कृष्णपक्ष की 3। 6। 7। 10। 1। और 13 तथा गुबल पक्ष में 2। 5। 7। 8। 1। 3। 1। 4। 1। 5 तिथियों में मिलता है। हृष्णपक्ष में परिवेष दिखलाई दे तो गाधारण वर्षा की सूचना के साथ कृषि के जघन्य फल को सूचित करता है। विशेषतः कृष्णपक्ष की एकादशी को सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो नाना प्रकार के धान्यों की समृद्धि होती है, वर्षा समय पर होती है। अनाज का भाव भी सस्ता रहता है और जगता में सुख जान्ति रहती है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया और पंचमी तिथि का परिवेष सूर्योदय या मध्याह्न काल में दिखलाई पड़े तो गाधारणतः फसल अच्छी और अपराह्न काल में दिखलाई पड़े तो फसल में कमी ही समझनी चाहिए। गप्तमी और आठमी को अपराह्न काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो वायु की अधिकता समझनी चाहिए। वर्षा के साथ वायु का प्रावल्य रहने से वर्षा की कमी रह जाती है और फसल में व्युत्पत्ता रह जाती है। यदि चार कीर्ति वाला परिवेष द्वीप गहीने गे सूर्य के चारों ओर दिखलाई पड़े तो गराह में अपकीलि के साथ फसल में भी कमी रहती है। आश्विन मास का सूर्य परिवेष के फल फसल में ही कमी नहीं करता, बल्कि इसका प्रभाव अनेक व्यक्तियों पर भी पड़ता है। सूर्य वा परिवेष यदि उदय काल में हो और परिवेष के निकट धुध या गुक कोई ग्रह हो तो शुभ फसल की सूचना समझनी चाहिए। रेती, अण्वरी, भरणी, कुत्तिना और मृगशिर के गत्तन परिवेष का परिधि में आस ही तो पूर्णतया वर्षा का अभाव, धान्य की कमी, पशुओं को कष्ट

एवं विश्व के समस्त प्राणियों में भय का संचार होता है। कार्त्तिक मास का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी और मात्र मास का परिवेष समस्त आगामी वर्ष का फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमा को आकाश में बादल छा जाने पर विचित्र वर्ण का परिवेष सूर्य के चारों ओर वृत्ताकार में दिखलाई पड़े तो पूर्णतया सुभित्र आगामी वर्ष में होता है। इस दिन का परिवेष प्रायः शुभ होता है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश—चन्द्रमा का परिवेष मंगल, गनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भृणी, ज्येष्ठा, मूल और शतभिपा नक्षत्र में काले वर्ण का दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष का फल राष्ट्र में उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओं में मतभेद तथा अगढ़ों के होने से राष्ट्र की क्षति आदि समझाना चाहिए। तीन मंडल और चार मंडल का परिवेष गमी प्रकार से राष्ट्र की क्षति करता है। यदि अनेक वर्ण वाला दण्डाकार चन्द्र परिवेष मर्दन वारसा हुआ दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अशुभ सागङ्गा चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र के निवासियों में आपसी बालह एवं किसी विज्ञा प्रकार की विषनि की सूचना मिलती है। जिन देशों में पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकार के परिवेष से भंग हो जाते हैं अतः पर-राष्ट्र का भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। देश की आधिक क्षति भी होती है। देश में चोर, डाकुओं का अधिक आतंक बढ़ता है और देश की व्यापारिक स्थिति असन्तुलित हो जाती है। रात्रि में शुक्ल पक्ष के दिनों में जब मेघाचलन आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशा की ओर से बढ़ता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बड़ा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी नामूना पड़े तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए धातुः समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र की प्रतिष्ठा में भी कमी आती है तथा राष्ट्र की सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हित के लिए नहीं हो पाते हैं, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते हैं, जिससे राष्ट्र में अगान्ति होती है। राष्ट्र के किसी अच्छे कानूनी कृत्य होती है, जिससे राष्ट्र में महान् अगान्ति छा जाती है। प्रशासकों में भी मतभेद होता है, देश के प्रमुख-प्रमुख शासक अपने-अपने अहंभाव की पुष्टि के लिए विरोध करते हैं, जिससे राष्ट्र में अगान्ति होती है। मध्यरात्रि में निरञ्च आकाश में दक्षिण दिशा की ओर से विचित्र वर्ण का परिवेष उत्पन्न होकर चन्द्रमा को बेपित करे तथा इस मंडल में चन्द्रमा का उस दिन का नक्षत्र भी बेपित हो तो इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र उत्थान का गूँज़ का होता है। कलाकारों के लिए यह परिवेष उत्तरिशूचना है। देश में कर-सारखानों की उन्नति होती है। नादियाँ

एवं विश्व के समस्त प्राणियों में भय का संचार होता है। कार्तिक मास का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी और माघ मास का परिवेष समस्त आगामी वर्ष का फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमा को आकाश में बादल ला जाने पर विचित्र वर्ण का परिवेष सूर्य के चारों ओर वृत्ताकार में दिखलाई पड़े तो पूर्णिमा सुभित्र आगामी वर्ष में होता है। इस दिन का परिवेष प्रायः शुभ होता है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश— चन्द्रमा का परिवेष मंगल, शनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल और शतमिषा नक्षत्र में काले वर्ण का दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष का फल राष्ट्र में उपद्रव, घरेलू बलह, महामारी और नेताओं में मतभेद तथा झगड़ों के होने से राष्ट्र की क्षति आदि समझना चाहिए। तीन मंडल और पाँच मंडल का परिवेष गमी प्रकार से राष्ट्र की क्षति करता है। यदि अनेक वर्ण वाला दण्डानार चन्द्र परिवेष मर्दन बारता हुआ दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अशुभ समझना चाहिए। इस प्रकार ने परिवेष से राष्ट्र के निवासियों में आपसी बलह एवं निसी विशेष प्रकार की विपत्ति की सूचना मिलती है। जिन देशों में पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकार के परिवेष से भय हो जाते हैं। अतः पर-राष्ट्र का भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। देश की आधिक क्षति भी होती है। देश में चोर, डाकुओं का अधिक आतंक बढ़ता है और देश की व्यापारिक स्थिति अग्रन्तुलित हो जाती है। रात्रि में शुक्ल पक्ष के दिनों में जब मेशाङ्कन आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशा की ओर से बढ़ता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बढ़ा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी गालूग पड़े तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए थानक समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र की व्रतिष्ठा में भी कभी आती है तथा राष्ट्र की सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हित के लिए नहीं हो पाते हैं, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते हैं, जिनसे राष्ट्र में अग्रान्ति होती है। राष्ट्र के किसी अच्छे कर्णधार की मृत्यु होती है, जिससे राष्ट्र में महान् अग्रान्ति ला जाती है। प्रणासकों में भी मतभेद होता है, देश के प्रमुख-प्रमुख शासक अपने-अपने अहंभाव की पुष्टि के लिए विरोध करते हैं, जिससे राष्ट्र में अग्रान्ति होती है। गध्यरात्रि में निरञ्च आकाश में दक्षिण दिशा की ओर से विचित्र वर्ण का परिवेष उत्तप्त होने पर चन्द्रमा को वैष्टित कर तथा इस मंडल में चन्द्रमा का उत्तर दिन वा नक्षत्र भी वैष्टित होता है तो इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र उत्थान का गृहस्त्र होता है। कलाकारों के लिए यह परिवेष उन्नतिम स्तर का है। दूसरे में कल-राष्ट्राभिनामी की अपरिहारी होती है। नवरात्रि

पर पुल बांधने का कार्य विशेष रूप से होता है। धन-धान्य की उत्पत्ति विषुल परिणामों में होती है और राष्ट्र में चारों ओर समृद्धि और शान्ति व्याप्त हो जाती है।

सूर्य परिवेष द्वारा भी राष्ट्र के भविष्य का विचार किया जाता है। चैव और बैणाख में बिना वादलों के आकाश में सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और वह कम से कम डेढ़ घण्टे तक बना रहे, तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ की सूचना देता है। इस परिवेष का फल तीन वर्षों तक राष्ट्र को प्राप्त होता है। वर्षा का अभाव होने से तथा राष्ट्र के किसी हिस्से में अतिवृष्टि से बाढ़, महामारी आदि का प्रकोप होता है। इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र में महान् उपद्रव या सूचक है। ऐसा परिवेष तभी दिखलाई पड़ेगा, जब देश के ऊपर महान् विषय आयेगा। रिक्क्तर के आकाश के समय भारत में इस प्रकार का परिवेष देखा गया था। सूर्य के अस्तकाल में, जब नैऋत्य दिशा से चायु वह रहा हो, इसी दिनांके बायु के साथ बढ़ता द्रव्य परिवेष सूर्य ने आज्ञादित धार या तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त शुभभारक होता है। देश में धन-धान्य की वृद्धि होती है। सभी निवासियों को गुण-शान्ति मिलती है। अन्य व्यक्तियों का जन्म होता है। परराष्ट्री संस्थानों होती है तथा राष्ट्र की आर्थिक स्थिति दृढ़ होती है। देश में कला-कीर्ति का प्रचार होता है, नैतिकता, ईमानदारी और सच्चाई की वृद्धि होती है।

परिवेषों का व्यापारिक फलः—देश—रविवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो रुई, गुड़, कपास और चाँदी का भाव पहुँचा; तिल, तिलहन, धी और तैल का भाव सस्ता होता है। गोने के भाव में अधिक घटा-घटी रहती है तथा अनाज का भाव राम दिखलाई पड़ता है। फल और तरकारियों के भाव ऊंचे रहते हैं। रविवार के चन्द्र परिवेष का फल जगने दिन में ही आरम्भ हो जाता है और दो महीनों तक प्राप्त होता है। जूट, गश्ति एवं रस्तों की बीमत घटती है तथा इन बस्तुओं के मूल्यों में नियन्तर घटा-घटी होती रहती है। उस दिन की गूर्ध-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक बस्तु जी महंगाई होती है तथा विषेष रूप में तृण, प्रसु सोना, चाँदी और गश्तीनों के कल पुर्जों के मूल्य में वृद्धि होती है। व्यापारियों के लिए रविवार का सूर्य और चन्द्र-परिवेष विशेष महत्वपूर्ण होता है। इस परिवेष द्वारा सभी प्रकार के छोटे-बड़े व्यापारी लाभान्वित होते हैं। ऊन एवं ऊनी वस्त्रों के व्यापार में विशेष लाभ होता है। इनका मूल्य स्थिर नहीं रहता, उत्तरीतर मूल्य में वृद्धि होती जाती है। सोमवार को सुन्दर आकार वाला चन्द्र-परिवेष निरम आकाश में दिखाई पड़े तो प्रत्येक प्रकार की बस्तु गती होती है। विशेष रूप से घृत, दुध, तील, तिलहन और बन्द का मूल्य सस्ता हो जाता है। व्यापारिक दृष्टि से इस प्रकार का परिवेष घाट की ही सूचना देता है। जो लोग चाँदी,

सोना, रुई, सूत, कपास, जूट आदि का सदूः करत है, उन्हें विशेष रूप से घाटा लगता है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो गेहूँ, गुड़, लाल बस्त्र, लाख, लाल रंग तथा लाल रंग की सभी वस्तुएँ महँगी होती हैं और इस प्रकार के परिवेष से उक्त प्रकार की वस्तुओं के खरीदारों को दुगुना लाभ होता है। यह परिवेष व्यापारिक जगत् के लिए अत्यन्त गङ्गत्वपूर्ण है, रीमेण्ट, चूना, रंग, पत्थर आदि के व्यापार में भी विशेष लाभ की भवावना रहती है। सोमवार को सूर्य परिवेष देखने वाले व्यापारियों को सभी प्रकार की वस्तुओं में लाभ होता है। ईट, कोयला और अल्प प्रकार के इमारती समान के मूल्य में भी वृद्धि होती है।

मंगलवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो लाल रंग की वस्तुओं का मूल्य गिरता है और श्वेत रंग के पदार्थों का मूल्य बढ़ता है। धातुओं के मूल्य में प्रायः समता रहती है। सुवर्ण के मूल्य में परिवेष के एक महीने तक वृद्धि, पश्चात् कमी होती है। चाँदी का मूल्य आरम्भ में गिरता है, पश्चात् ऊँचा हो जाता है। श्वेत रंग का कपड़ा, सूत, कपास, रुई आदि का मूल्य तीन महीनों तक बस्ता होता रहता है। जवाहरात का मूल्य भी गिरता है। मंगलवार का चन्द्र-परिवेष तीन महीनों तक व्यापारिक स्थिति के क्षेत्र में गलते भावों की ही सूचना देता है। यदि मंगलवार को ही सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक वस्तु का मूल्य मवाया बढ़ जाता है, वह स्थिति आरम्भ से एक महीने तक रहती है। पश्चात् सोना, चाँदी, जवाहरात, रुई, चीनी, गुड़ आदि वस्तुओं के मूल्य में गिरावट आ जाती है और बाजार की स्थिति विगड़ने लगती है। मशाला, कल एवं मेवों के मूल्य में भी गिरावट आ जाती है। दो महीने के पश्चात् कपड़ा तथा श्वेत रंग की अन्य वस्तुओं की स्थिति सुधर जाती है। अनाज का भाव कुछ बस्ता होता है, पर कालान्तर में उसमें भी महँगाई आ जाती है। यदि मंगलवार को पुष्य नक्षत्र हो और उस दिन सूर्य-परिवेष फँई गुते लाभ की सूचना देती है। प्रत्येक वस्तु के व्यापार में लाभ होता है। लगभग चार महीने तक इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति अवस्थित रहती है। उक्त प्रकार के परिवेष से सदृः के व्यापारियों को अपने लिए घाटे की ही सूचना समझनी चाहिए।

बुधवार को चन्द्र-परिवेष स्वच्छ रूप में दिखलाई पड़े और इस परिवेष की स्थिति कम से कम आध घण्टे तक रहे तो मशाला, तेल, धी, तिलहन, अनाज, सोना, चाँदी, रुई, जूट, वस्त्र, मेवा, फल, गुड़ आदि का मूल्य गिरता है और यह मूल्य की गिरावट कम से कम तीन महीनों तक बनी रहती है। केवल रेशमी वस्त्र का मूल्य बढ़ता है और इसके व्यापारियों को अच्छा लाभ होता है। यदि

इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और यह एक घण्टे तक स्थित रहे तो सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य की स्थिरता का सूचक समझना चाहिए। बुधवार के सूर्य-परिवेष सूर्योदय काल में ही दिखलाई पड़े तो श्वेत, लाल और काले रंग की वस्तुओं का भाव बढ़ते हैं। यदि परिवेष काल में आकाश का रंग गाय की अँख के समान हो जाय तो इस परिवेष का फल लाल रंग की वस्तुओं के व्यापार में लाभ एवं अम्बु रंग की वस्तुओं के व्यापार में हानि की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति एक महीने तक ही रहती है। गुरुवार को चन्द्र-परिवेष चन्द्रोदय काल या चत्वार्स्त काल में दिखलाई पड़े तो इसका फल महंगता होता है। रसादि पदार्थों में विशेष रूप से महंगाई होती है। अधिकारियों के मूल्यों में भी बढ़ि होती है। घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थों का मूल्य अनुपाततः ही बढ़ता है।

गुरुवार को सूर्य-परिवेष मंडलाकार में दिखलाई पड़े तो लाल, सीने और हरे रंग की वस्तुएँ सस्ती होती हैं, अनाज का मूल्य भी घटता है। बस्त्र, चीनी, गुड़ आदि उपभोग की वस्तुओं में भी सामान्यतः कमी आती है। गहनेबाजों के लिए यह परिवेष अनिष्ट सूचक है; यसके उन्हें हानि ही होती है, लाभ होने की संभावना विलकृत नहीं। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-परिवेष दो घण्टे से अधिक समय तक ठहर जाय तो वस्तुओं के व्यापारियों को विशेष लाभ होता है। श्वेत रंग के सभी पदार्थ महंगे होते हैं और उपभोग की वस्तुओं का मूल्य बढ़ता है। बाजार में यह स्थिति चार महीनों तक रह सकती है।

शुक्रवार को चन्द्र-परिवेष लाल या पीले रंग का दिखलाई पड़े क्षेत्र दूसरे दिन से ही सोना, पीतल आदि पीतवर्ण की धानुओं की कीमत बढ़ जाती है। चाँदी के भाव में थोड़ी गिरावट के पश्चात् बढ़ती होती है। मशाला, फल और तरकारियों के मूल्य में बढ़ि होती है। हरे रंग की सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पर तीन महीनों के पश्चात् हरे रंग की वस्तुओं के भाव में भी पहुँच आ जाती है। हई, नमास और युत के व्यापार में सामान्य नाम होता है। नीले रंग की वस्तुओं में अधिक लाभ की संभावना है। यदि शुक्रवार को सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो आरम्भ में वस्तुओं के भाव तकस्त रहते हैं, परन्तु अधिकारियों, विदेश से आनेवाली वस्तुओं और पशुओं की कीमत में बढ़ि ही जाती है। श्वेत रंग की वस्तुओं का मूल्य राम रहता है, लाल और नीले रंग के पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है।

गविवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो काले रंग के सभी पदार्थ तीन महीनों तक भस्ते रहते हैं। लाल और श्वेत रंग के पदार्थ तीन महीनों तक महंगे रहते हैं। जबाहरात विशेष रूप से महंगे होते हैं। सोना, चाँदी आदि खनिज पदार्थों के मूल्य में असाधारण रूप से बढ़ि होती है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष

दिव्यलाइ परे तो सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य में बढ़ि होती है। विशेष रूप से जूट, गोमेन्ट, कागज एवं विदेश से आनेवाली वस्तुएँ अधिक महंगी होती हैं। चौनी, गुड़, शहद आदि भिट्ठ पदार्थों के मूल्य गिरते हैं। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-पश्चिम दिन भर रह जाय तो इसका फल व्यापार के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। वस्तुओं के मूल्य धीमने का जाने हैं और व्यापारियों को आरम्भित लाभ होता है। बाजार से यह स्थिति अधिक से अधिक गाँव भूमीनों तक रह राहती है। आरम्भ के तीन पाह मट्टेगाई के और अबणेप दो महीने साधारण महंगाई के होते हैं।

पंचमोऽध्यायः

अथातः संप्रवद्यामि विद्युतां नामविस्तरम् ।

प्रशस्ता वाप्रशस्ता च याथवदनुपूर्वतः ॥१॥

अब पूर्वी वार्षीयुगार विद्युत् विजली का विस्तार से विस्तृण करता है। विद्युत् (विजली) दो प्रकार की होती है—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥१॥

सोदामिनी च पूर्व च कुसुमोत्पलनिभा^१ शुभा ।

निरभ्रा मिथकेशो च क्षिप्रगा चार्शनिस्तथा ॥२॥

एतासां नामभिर्वर्षं ज्ञेयं ^२कर्मनिरुक्तिता ।

भयो व्यासेन वक्ष्यामि प्राणिनां पुण्यपापजाम्^३ ॥३॥

गीतामिनी और दूर्वा विजली यदि कमल के पुष्प के समान हो तो वह शुभ-अशुभ नल देने वाली होती है। वह विजली निरभ्रा वादलों से रहित, देवांगना के समान गिराक्षी, शीद्र गमन करने वाली और वज्र के समान हो तो अशनि नाम से ही जाती है। दूर्वा पा कारण है, अतः यह वर्ष भी कही जाती है। इस विजली के वापर इसकी किया निरुक्ति से अवगत कर लेना चाहिए। अब पुनः

1. वक्ष्यपूर्वतः म० । 2. कुम्भेमोत्पला, म० । 3. कर्मनिरुक्तिता म० ।

4. एष्वामिनी म० ।

विजली का विस्तारपूर्वक फल, लक्षण आदि का वर्णन किया जाता है, जो जीवों के पुष्प-पाप के निपत्ति से होते हैं ॥२-३॥

स्त्रिया स्त्रियनधेषु चाभ्रेषु विद्युत् प्राचया जलावहा ।
कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था वातवर्विहा भवेत् ॥४॥

स्त्रिया बादल से उत्पन्न विजली स्त्रिया कही जाती है। यदि यह पूर्व दिशा की हो तो अवश्य वर्षा करती है। यदि काले बादल से उत्पन्न हो तो कृष्णा कही जाती है और यह वायु की वर्षा करती है - पवन चलता है। यहाँ पर 'कृष्ण' शब्द अनिवार्यक है, अतः अमिनकोण के मार्ग में स्थित विद्युत् कृष्णा नाम से कही जाती है। इसका फल तीव्र पवन का चलना है ॥४॥

अथ रश्मिगतोऽमिनाऽप्य हरिता हरितप्रसादा ।
दक्षिणा दक्षिणावर्ता कुर्यादिकसंभवम् ॥५॥

जिस विजली में रश्मियाँ गही हैं, वह अस्त्रिया कही जाती है और हरित प्रभावशाली विजली हरिता कही जाती है, दक्षिण में गमन करने वाली दक्षिणा वहजाती है। इस प्रकार की विद्युत् जल वरसने की सूचना देती है ॥५॥

रश्मिवती॒ मेदिनी॑ भाति॒ विद्युदपरदक्षिणे॑ ।
हरिता॑ भाति॒ रोमाञ्चं सोदकं पातयेद् बहुम् ॥६॥

पृथ्वी पर प्रकाश करने वाली विद्युत् रश्मिवती, नैऋत्यकोण में गमन करने वाली हरिता और बहुत रोमवाली विजली वहुत जल की वृष्टि करने वाली होती है ॥६॥

अपरेण॑ तु या॒ विद्युच्चरते॑ चोत्तरामुखी॑ ।
कृष्णाभ्रसंश्रिता॑ स्त्रिया॒ साऽपि कुर्याज्जलागमम्॑ ॥७॥

पश्चिम दिशा में प्रकट होने वाली, उत्तर मुख करके गमन करने वाली, कृष्ण रंग के बादलों से निकलने वाली और स्त्रिया ये चारों प्रकार की विजलियाँ जल के आने की सूचना देती है ॥७॥

अपरोत्तरा॑ तु या॒ विद्युन्मन्दत्तोया॑ हि सा॒ स्मृता॑ ।
उद्दीच्यां॑ सर्ववर्णस्था॑ रुक्षा॑ तु॒ सा॒ तु॒ वर्षति॑ ॥८॥

1. वातवर्षावहा मू० D. । 2. मांग मू० । 3. नलयम् पू० । 4. अंगी, मू० ।
5. मोदिनी मू० । 6. हरिता नै प्रभासेत् मू० C. । 7. अरणीदेव मू० A. C. ।
8. सूल्यता मू० । 9. जलागमः आ० । 10. एवामवर्णस्था मू० । 11. तक्षात् मू० ।

वायव्यकोण की विजली थोड़ी वर्षा करने वाली और उत्तर दिशा की विजली चाहे किसी भी वर्ण की वर्थमान न हो; अथवा रुक्ष भी हो तो भी जलवृष्टि करने वाली होती है ॥८॥

या तु पूर्वोत्तरा विश्वृत् दक्षिणा^१ च पलायते ।
चरत्यूर्ध्वं च तिर्यक् स्थाना^२ साऽपि श्वेता जलवहा ॥९॥

ईशानकोण की विजली तिरछी होकर पूर्व में गमन करे और दक्षिण में जाकर विलीन हो जाय तथा श्वेत रंग की हो तो वह जल की वृष्टि करने वाली होती है ॥९॥

तथैवोर्ध्वमध्यो^३ वाऽपि स्त्रिघार रशिमस्ती भृशम् ।
सघोषा चाप्यघोषा वा^४ दिक्षु सर्वासु वसंति ॥१०॥

इसी प्रकार ऊपर-नीचे जाने वाली, स्त्रिघार और बहुत रशिम साथे जावद करती हुई अथवा जावद न भी परने वाली विजली सभी दिशाओं में वर्षा करने वाली होती है ॥१०॥

शिशिरे चापि वर्षन्ति रक्ताः पीताश्च विश्वृतः ।
नीलाः श्वेता वसन्तेषु च वर्षन्ति कथंचन ॥११॥

यदि शिशिर—भाव, फालमुग में नीने और नीने रंग की विजली हो तो वर्षा होती है तथा बगल्त—चैत्र, वैशाख में नील और श्वेत रंग की विजली हो तो कदापि वर्षा नहीं होती ॥११॥

हरिता मधुवर्णश्च ग्रीष्मे रुक्षाश्च निश्चलाः ।
भवन्ति ताम्रगौराश्च वर्षास्वपि निरोधिकाः ॥१२॥

हरे और मधु रंग की रुक्ष और स्थिर विजली ग्रीष्म क्रतु—ज्येष्ठ, आषाढ़ में चमके तो वर्षा नहीं होती तथा इसी प्रकार वर्षा क्रतु—शावश, भाद्रपद में ताम्रवर्ण की चमके तो वर्षा का अवगोध होता है ॥१२॥

शारद्यो नाभिवर्षन्ति नीला वर्षश्च विश्वृतः ।
हेमन्ते श्यामताम्रास्तुऽतिंतो निर्जलाः रमूताः ॥१३॥

जरदू क्रतु—आङ्गिक, कान्तिक में नील वर्ण की विजली नमके तो वर्षा नहीं होती और हेमन्त—गार्गशीर्ष, पौष में यदि श्याम और ताम्रवर्ण की विजली

1. दधिष्ठं मूः । 2. रिर्यग् सा, मूः । 3. गृष्ममध्यशतापि ग., A. । 4. च मूः ।
5. हेमन्ते ताम्रवर्णमृतु तिंतो निर्जला रमूता, मूः C. ।

चमके तो जल-वृष्टि नहीं होती ॥ 3॥

रक्तारक्तेषु चाभ्रेषु हरिताहरितेषु च ।
नीलानीलेषु वा स्निग्धा वर्णन्तेऽनिष्टयोनिषु ॥ 4॥

रक्त-अरक्त, हरित-अहरित और नील-अनील बादलों में यदि स्निग्धा विजली चमकती है, तो उक्त प्रकार के बादलों के अनिष्टसूचक होने पर भी जल की वर्षा अवश्य होती है ॥ 4॥

अथ नीलाश्च पीताश्च रक्ताः श्वेताश्च विद्युतः ।
एतां श्वेतां पतत्यूर्ध्वं विद्युदुदकसंप्लवम् ॥ 15॥

प्रत्र विजली के वर्णों का निरूपण करते हैं—नील, पीत, रक्त और श्वेत वर्ण की विजनियों में से श्वेत रंग की विजली ऊपर गिरे तो पृथ्वी पर जल ही अल बरगदा है ।—पृथ्वी जल में एकावित ही जाती है ॥ 5॥

वैश्वानरपथे विद्युत् श्वेता रुक्षा चरेद् यतः ।
विन्दात् तदाऽशनिवर्णं रक्तायामसिनतो भयम् ॥ 16॥

वैश्वानर यथा अर्थात् अग्निकोण में उत्पन्न हुई श्वेता और रुक्षा नाम की विजनियाँ विद्युत् रही जाती हैं । ये अशनि वृष्टि करती हैं । रक्तवर्ण की विजली अग्नि या अग्न करती है ॥ 6॥

यदा श्वेताऽध्रवक्षस्य विद्युच्छरसि संचरेत् ।
अथ वा गृह्योर्मध्ये वातवर्णं सृजेन्महत् ॥ 17॥

यदि श्वेत रंग की विजली वृक्ष के ऊपर गिरे अथवा दो गृहों के मध्य से होकर गिरे तो तेज वायु गहित जल की वर्षा होती है ॥ 7॥

अथ चन्द्राद् विनिष्कम्य विद्युन्मङ्गलसंस्थिता ।
श्वेताऽभा प्रविशेदकं विद्यादुदकसंप्लवम् ॥ 18॥

यदि चन्द्रमण्डल गे निकलकर श्वेत मेष्य शुभत विजली सूर्यमण्डल में प्रवेश करे तो उसे अधिक वार्षिकीया समझनी चाहिए ॥ 8॥

¹अथ सूर्यदि विनिष्कम्य रक्ता समलिना² भवेत् ।
प्रविश्य सोमं वा तस्य³ तत्र⁴ वृष्टिभैर्यंकरा ॥ 19॥

यदि सूर्यमण्डल गे निकलकर रक्त वर्ण की भलिन विद्युत् चन्द्रमण्डल में प्रवेश

1. तदा मूः C. । 2. समलिना आ० । 3. तस्यैव मूः C. । 4. तत्र मूः C. ।

करे तो वहाँ पर भयंकर वायु चलती है ॥19॥

विद्युतं^१ तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा ।

अन्योऽन्यं च लिखेयातां वर्षं विन्द्यात् तदा शुभम् ॥20॥

विजली विजली में ताडित होकर एक-टूमरे से प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए—वर्षा यथोचित रूप में होती है ॥20॥

राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः^२ ।

कृष्टिं विद्युत् यदा साम्रा तदा सर्वं त रोहति ॥21॥

राहु द्वारा चन्द्रमा और केनु द्वारा सूर्य अपमन्य मार्ग से प्रदृश किया गया हो और ये बादल में आच्छादित हों और उस समय उनमें विजली निकले तो धान्य, नहीं उगते ॥21॥

नीला ताम्रा च गीरा^३ च श्वेता चात्मान्तरं चरेत् ।

सघोषा मन्दधोषा च विन्द्यादुदकसंलक्षम् ॥22॥

नील, ताम्र, गीर और श्वेत वादनों से विजली का संचार हो और वह भारी अथवा थोड़ी गर्जना शुक्त हो तो अच्छी वर्षा होती है ॥22॥

मध्यमे सध्यमं वर्षं अधमे अधमं दिशेत् ।

उत्तमं चोत्तमे मार्गं चरन्तीनां च विद्युताम् ॥23॥

आकाश के मध्यमार्ग से गमन करनेवाली विजली मध्यम वर्षा, जधन्य मार्ग से गमन करनेवाली जधन्य वर्षा और उत्तम मार्ग से गमन करनेवाली उत्तम वर्षा की सूचिका है ॥23॥

बीश्यन्तरेषु या विद्युच्चरतामफलं^४ विदुः ।

अभीक्षणं दर्शयेच्चापि तत्र दूरगतं फलम् ॥24॥

यदि विजली बीथी—चन्द्रादि के मार्ग के अन्तराल में संचार करे तो उसका कोई फल नहीं होता । यदि बार-बार दिखलाई पड़े तो उसका फल बुँद दूर जाकर होता है ॥24॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं विद्युतामपि तत्त्वतः ।

अथर्भाणां प्रवद्यामि^५ लक्षणं तनिनबोधत ॥25॥

1. विद्युतिद्युत्यादा भूत्या आ० । 2. चाम० A. । 3. गोणी, मू० A., मैत्रवा० मू० B. । 4. गीरी मू० । 5. चा, मू० । 6. वामफल, मू० A., त्वा० फल मू० B. । धफल मू० C. । 7. संग्रवद्यामि, मू० C. । 8. लक्षणानि मू० C. ।

विजलियों के निमित्तों को उल्का के निमित्तों के समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे बादलों के लक्षण और फल को बतलाते हैं ॥२५॥

इति नैर्यन्ते भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे विद्युत्स्लक्षणो नाम पञ्चमोऽध्यायः ।

विवेचन- विजली के निमित्तों द्वारा प्रथमतः इष्टि है; द्वितीय निमित्त चूना है। रात्रि में चमकने में वर्ण के सम्बन्ध में शुभाशुभ अवगत करने के साथ फल का भविष्य भी ज्ञात किया जा सकता है। जब आकाश में घने बादल छाये हुए हों, उस समय पूर्व दिशा में विजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो लो निश्चयतः वर्षा होती है। यह फल विजली कड़कने के दूसरे दिन ही प्राप्त होता है। विशेषता यहाँ यह भी है कि यह फलादेश उसी स्थान पर प्राप्त होता है, जिस स्थान पर विजली चमकती है। इस बात का सदा ध्यान रखना होता है कि विजली चमकने का पल तत्काल और तदेश में प्राप्त होता है। अत्यन्त इष्ट या अनिष्टमुच्च क यह निमित्त नहीं है और व इस निमित्त द्वारा वर्ण भर का फलादेश ही निगला जा सकता है। सामान्य रूप से दो-चार दिन या अधिक-से-अधिक द३-पत्तेह दिनों का फलादेश निकालना ही इस निमित्त का उद्देश्य है। जब पूर्व दिशा में रक्त वर्ण वर्ण विजली जोर-जोर से कड़क कर चमके तो वायु चलती है तथा अलौकिक वर्षा होती है। गन्द-गन्द चमक के साथ जोर-जोर से कड़ाने का शब्द सुनाई दे तथा एकाएक आकाश से बादल हट जावे तो अच्छी वर्षा होती है और साथ ही ओले भी बरसते हैं। पूर्व दिशा में केशरिया रंग की विजली तेज प्रकाश के साथ चमके तो अगले दिन तेज धूप पड़ती है, पश्चात् मध्याह्नोत्तर जल की वर्षा होती है। जल भी उतना अधिक बरसता है, जिससे पृथ्वी जलमयी दिखलाई पड़ती है।

अदि पश्चिम दिशा में साधारण रूप से मध्य रात्रि में विजली चमके तो तेज धूप पड़ती है। स्त्रिय विद्युत् परिचम दिशा में कड़के के शब्द के साथ चमके तो धूप होने के पश्चात् जल की वर्षा होती है। यहाँ इतनी बात और अवगत करनी चाहिए कि जल की वर्षा के साथ तूफान भी रहता है। अनेक वृक्ष धराशायी हो जाते हैं, पगु और पक्षियों को अनेक प्रकार के कट्ट होते हैं। जिन समय आकाश काले-काले बादलों से आच्छादित हो, चारों ओर अन्धकार-ही-अन्धकार हो, उस समय नील प्रकाश करती हुई विजली चमके, साथ ही भयंकर जोर का शब्द भी हो लो अगले दिन तीव्र वायु बहने की मूचना समझनी चाहिए। वर्षा तीन दिनों के बाद होती है यह भी इस निमित्त का फलादेश है। फसल के लिए इस प्रकार विजली रिनाशकारी ही मानी गई है। पश्चिम दिशा ने निकलकर विचित्रवर्ण की विजली यारों जोर घूमती हुई चमके तो अगले तीव्र दिनों में वर्षा होने की

सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की विजली फूल को भी समृद्धिशाली बनाने वाली होती है। गेहूँ, जी, धान और इख की वृद्धि विशेष रूप से होती है। पश्चिम दिशा में रक्तवर्ण की प्रभावशाली विजली मन्द-गन्द शब्द के साथ उत्तर की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो अगले दिन तेज हवा चलती है और कढ़ाके की धूप पड़ती है। इस प्रकार की विजली दो दिनों में वर्षा होने की सूचना देती है। जिस विजली में रुदिमर्या निकलती हो, ऐसी विजली पश्चिम दिशा में गड़गड़ाहट के साथ चमके तो निष्चयतः अगले दिनों तक वर्षा का अवरोध होता है। आकाश में बादल छाये रहते हैं, फिर भी जल की वर्षा वहीं होती। कृष्णवर्ण के बादलों में पश्चिम दिशा से पीतवर्ण की विद्युत् धारा प्रवाहित हो और यह अपने तेज प्रकाश के द्वारा अस्त्रों में चकाचौध उत्पन्न कर दे तो वर्षा की कमी समझनी चाहिए। वायु के साथ बूदा-बूदी होकर ही रह जाती है। धूप भी इतनी तेज पड़ती है, जिससे इस बूदा बूदी का भी कुछ प्रभाव नहीं होता। पश्चिम से विजली निकलकर पूर्व की ओर जाय तो प्रातःसानु कुछ वर्षा होती है और इस वर्षा का जल फूल के लिए अत्यन्त नाभिप्रद सिद्ध होता है। फूल के लिए इस प्रकार विजली उत्तम समझी गई है।

उत्तर दिशा में विजली चमके तो नियमतः वर्षा होती है। उत्तर में जोर-जोर से कढ़क के साथ विजली चमके और आकाश मेघाञ्छन हो तो प्रातःसानु धनधोर वर्षा होती है। जब आकाश में नीलवर्ण के बादल छाये हों और इनमें पीतवर्ण की विजली चमकती हो तो साधारण वर्षा के साथ वायु का भी प्रकोप समझना चाहिए। जब उत्तर में बेबल मन्द-मन्द शब्द करती हुई विजली कड़ती है, उस समय वायु चलते की ही सूचना समझनी चाहिए। हरे और गीले रंग के बादल आकाश में हों तथा उत्तर दिशा में रह-रहकर बाहु-बाहु विजली चमकती हो तो जल वर्षा का योग विशेष रूप से समझना चाहिए। यह बृंदि उभ स्थान से सी कोण की दूरी तक होती है तथा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है। लालवर्ण के बादल जब आकाश में हों, उस समय दिन में विजली का प्रकाश दिखलाई पड़े तो वर्षा के अभाव की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की विजली दुष्काल पड़ने की सूचना भी देती है। यदि उक्त प्रकार की विजली आगाढ़ गास के आरम्भ में दिखलाई पड़े तो उस वर्षा दुष्काल समझ लेना चाहिए। बायव्य कोण में विराणी चमकती हुई विजली पूर्व दिशा की ओर गमन करे तो जल की वर्षा होती है। यदि इए कोण की विजली गर्जन-तर्जन के साथ चपके तो तूफान की सूचना समझनी चाहिए। आगाढ़मास और आवणमास में उत्तम प्रधार की विद्युत् का

फल घटित होता है। ३

दक्षिण दिशा में विजली की चमकार्चिंध उत्पन्न हो और श्वेत रंग की चमक दिखलाई पड़े तो सात दिनों तक लगातार जल की वर्षा होती है। यदि दक्षिण दिशा में केवल विजली की चमक ही दिखलाई पड़े तो धूप होने की सूचना अवगत करनी चाहिए। जब लाल और काले बर्ण के मेघ आकाश में आच्छादित हों और बार-बार तेजी से विजली चमकती हो तो, साधारणतया दिन भर धूप रहने के पश्चात् रात में वर्षा होती है। दक्षिण दिशा से पूर्वोत्तर गमन करती हुई विजली चमकें और उत्तर दिशा में इसका तेज प्रकाश भर जाए तो तीन दिनों तक लगातार जल-वर्षा होती है। यहाँ इतना विशेष और है कि वर्षा के साथ ओले भी पड़ते हैं। यदि इस प्रकार की विजली शब्द कहु भूमि चमकती है तो निश्चयतः ओले ही पड़ते हैं, जल-वर्षा नहीं हीर्ता। प्री-प कहु भूमि उत्तर प्रकार की विजली चमकती है तो वायु के साथ तेज धूप पड़ती है, वृष्टि नहीं होती। गोवानार रूप में दक्षिण दिशा में विजली चमकें तो आगामी व्याघ्र दिनों तक जल-वर्षा अध्यग्नि वर्षा होती है। इस प्रकार की विजली अतिवृष्टि की सूचना देती है। आपाह वदी प्रतिपदा को दक्षिण दिशा में शब्द रहित विजली चमकें तो आगामी वर्ष में कराल निकृष्ट, उत्तर दिशा में शब्द रहित विजली चमकें तो कराल साधारण; पश्चिम दिशा में शब्द रहित विजली चमकें तो कराल के लिए मध्यम और पूर्व दिशा में शब्द रहित विजली चमकें तो बहुत अच्छी फसल उपजती है। यदि इन्हीं दिशाओं में शब्द रहित विजली चमकें तो क्रमशः आधी, तिहाई, साधारणतः गुण और सवाई परान उत्पन्न होती है। यदि आपाह वदी द्वितीय चतुर्थी से विद्ध हो और उसमें दक्षिण दिशा में निकलती हुई विजली उत्तर की ओर जाये तथा उसके चमक बहुत तेज हो तो ओर दुभिक की सूचना मिलती है। वर्षा भी इस प्रकार की विजली गं अवस्था ही होती है। चटचटाहट करती हुई विजली चमकें तो वर्षभाव एवं ओरोपद्रव की सूचना देती है।

ऋतुओं के अनुसार विश्वुत् निमित्त का फल—शिशिर—माघ और फालगुन मास में नीले और पीले रंग की विजली चमकें तथा आकाश श्वेत रंग का दिखलाई पड़े तो ओलों के साथ जलवर्षा एवं कृषि के लिए हानि होती है। माघ कृष्ण प्रतिपदा तो विजली चमकें तो गुड़, चीमी, मिथी आदि वस्तुएँ महङ्गी होती हैं तथा कपड़ा, सूत, कपास, रुई आदि वस्तुएँ सहस्री और शेष वस्तुएँ सभ रहती हैं। इस दिन विजली का कड़कना वीमारियों की सूचना भी देता है। माघ कृष्ण द्वितीया, पाठी और आठमी को पूर्व दिशा में विजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में अधिक अचिन्तयों के अकालगरण होने की सूचना समझभी चाहिए। यदि चन्द्रमा के विम्ब के चारों ओर परिवेष होने पर उस परिवेष के निकट ही विजली

चमकती प्रकाशमान दिखलाई पड़े तो आगामी आपाह में अच्छी वर्षा होती है। माघ कृष्ण द्वितीया को गर्जन-तज्ज्ञन के साथ विजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में फसल साधारण तथा वर्षा की कमी होती है। माघी पूर्णिमा को मध्य रात्रि में उत्तर-दक्षिण चमकती हुई विजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष राष्ट्र के लिए उत्तम होता है। व्यापारियों को सभी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है। यदि दूसरी रात में चन्द्रोदय के समय में ही लगातार एक मुहूर्त—48 मिनट तक विजली चमके तो आगामी वर्ष में राष्ट्र के लिए अनेक प्रकार से विषयता आती है। फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया और तृतीया को मेघाच्छन्न आकाश हो और उसमें पश्चिम दिशा की ओर विजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में फसल अच्छी होती है और तत्काल ओलों के साथ जलवृष्टि होनी है। यदि होली की रात्रि में पूर्व दिशा से विजली चमके तो आगामी वर्ष में अकाल, वर्षभाव, वीमारियों एवं धन-धान्य की हानि और दक्षिण दिशा में विजली चमके तो आगामी वर्ष में साधारण वर्षा, चैलक का विशेष प्रकार, अन्न की महेंगी एवं खनिज पदार्थ भासान्यतया महेंग होते हैं। पश्चिम दिशा की ओर विजली चमके तो उपद्रव, झगड़े, मार-पीट, हत्याएँ, चोरी एवं आगामी वर्ष में अनेक प्रकार की विषयता अत्यन्त असुख होती है। होली के दिन आकाश में बादलों का छाना और विजली का भमकना अशुभ है। ३

विसन्त ऋतु : चैत्र और बैंगाख में विजली का भमकना प्रायः निरर्थक होता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को आकाश में मेघ व्याप्त हों और चूदा-बूदी के साथ विजली चमके तो आगामी वर्ष के लिए अत्यन्त अशुभ होता है। फसल तो नाट होती ही है, माथ ही गोती, माजिकथा आदि जवाहरात भी नाट होते हैं। दिन में इस दिन मेघ छा जायें और वर्षा के साथ विजली चमके तो अत्यन्त अशुभ होता है। आगामी वर्ष के लिए यह निमित्त विशेष अशुभ की सूचना देता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तृतीया विद्व हो तथा इस दिन भरणी नक्षत्र होतो इस दिन चमकने वाली विजली आगामी वर्ष में मनुष्य और पशुओं के लिए नाना प्रकार के अरिष्टों की सूचना देती है। पशुओं में आगामी आश्विन, कात्तिक, माघ और चैत्र में अव्यानक रोग फैलता है तथा मनुष्यों में भी इस्ती महीनों में वीमारियों फैलती है। भक्षण होने की सूचना भी उक्त प्रकार वी विजली से ही अवगत करनी चाहिए। चैत्री पूर्णिमा को अचानक आकाश में बादल छा जायें और पूर्व-पश्चिम विजली कड़के तो आगामी वर्ष उत्तम रहता है और वर्षा भी अच्छी होती है। फसल के लिए यह निमित्त बहुत अच्छा है। इस प्रकार के निमित्त रो सभी वस्तुओं की

सत्ताई प्रकट होती है। वैशाखी पूर्णिमा के दिन में तेज धूप हो और रात में विजली चमके तो आगामी वर्ष में वर्षा अच्छी होती है।]

गीष्म श्रवण- ज्येष्ठ और आषाढ़ में साधारणतः विजली चमके तो वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ मास में विजली चमकने का फल केवल तीन दिन घटित होता है, अवशेष दिनों में कुछ भी फल नहीं मिलता। ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या और पूर्णिमा इन तीन दिनों में विजली चमकने का विशेष फल प्राप्त होता है। यदि प्रतिपदा को मध्य रात्रि के उपरान्त निरध्र आकाश में दक्षिण-उत्तर की ओर गमन करती हुई विजली दिखाई पड़े तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सम्यानुकूल वर्षा होती है। यदि प्रतिपदा को मध्य रात्रि के उपरान्त निरध्र आकाश में दक्षिण-उत्तर की ओर गमन करती हुई विजली दिखाई पड़े तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सम्यानुकूल वर्षा होती है। अमावस्या के दिन वूदा-वूदी के साथ विजली चमके तो जंगली आमापरी की वर्षा, धातुओं की उत्तरांश में कभी एवं नायरिकों में पर्याप्त बहुत होती है। ज्येष्ठ-पूर्णिमा को आकाश में विजली तद्द-तद्द शब्द के साथ चमके तो आमापरी वर्ष के लिए शुभ, सम्यानुकूल वर्षा और धन-धन्य की उत्तरांश प्रचुर परिमाण में होती है।

क्रिष्ण श्रवण- शावण और भाद्रपद में ताम्रवर्ण की विजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। शावण में कृष्ण द्वितीया, प्रतिपदा, शप्तमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावस्या, शुक्ला प्रतिपदा, पञ्चमी, अष्टमी, द्वादशी और पूर्णिमा तिथियाँ विद्युत् निमित्त को अवगत करने के लिए विशेष महत्वपूर्ण हैं, अवशेष तिथियों में रक्त से वर्षा का अभाव होता है। कृष्ण प्रतिपदा को रात्रि में लगातार दो घण्टे तक विजली चमके तो शावण मास में वर्षा की कमी; द्वितीया को रह-रहकर विजली चमके तथा गर्जन-तर्जन भी हो तो भाद्रों में अल्पवर्षा और शावण के मध्येन में साधारण वर्षा; शतमी को गीले रंग की विजली चमके तथा आकाश में बादल आकाश में विजली चमके तो फसल में कभी और अनेक प्रकार से अज्ञान्ति की सूचना समझनी चाहिए। चतुर्दशी को दिन में विजली चमके तो उत्तम वर्षा और रात में चमके तो साधारण वर्षा होती है। अमावस्या को हरित, नील और ताम्र-वर्ण की विजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को निरध्र आकाश में विजली चमके तो अकाल की सूचना सूचना समझनी चाहिए। कृष्ण पक्ष की गात्रमी और एकादशी को गर्जन-तर्जन के साथ स्पाध और रण्मयुवत विजली चमके तो परम गुरुकाल, सम्यानुकूल वर्षा,

सब प्रकार के नागरिकों में सन्तोष एवं सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पूर्णिमा और अमावस्या को बूंदा-बूंदी के साथ बिजली शब्द करती हुई चमके और उसकी एक धारा-सी बन जाए तो वर्षा अच्छी होती है तथा फसल भी अच्छी ही होती है।

शरदऋतु—आश्विन और कात्तिक में बिजली का चमकना प्रायः निरर्थक है। केवल विजयदशमी के दिन बिजली चमके तो आगमी वर्ष के लिए अशुभ सूचक समझना चाहिए। कात्तिक मास में भी बिजली चमकने का फल अमावस्या और पूर्णिमा के अतिरिक्त अन्य तिथियों में नहीं होता है। अमावस्या को बिजली चमकने से खाश-पदार्थ महंगे और पूर्णिमा को बिजली चमकने से रसायनिक पदार्थ महंगे होते हैं।

हेमन्तऋतु—पार्गशीर्ष और पौय में श्याम और ताम्रवर्ण की बिजली चमकने से वर्षाभाव तथा रक्त, हरित, पीत और चित्र-विचित्र वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा होती है।

षष्ठोऽध्यायः

अभ्राणीं लक्षणं कृत्स्नं प्रदक्षिणि यथाक्रमम् ।

प्रशस्तं सप्रशस्तं^१ च तन्निवोधत तन्नवतः ॥1॥

बादलों की आगृहि के लक्षण यथाक्रम से वर्णित करता है। ये दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥1॥

स्तनग्रधात्यञ्चाणि यावन्ति वर्षदानि न संशयः ।

उत्तरं मार्गामाश्रित्य तिथौ मुखे यदा भवेत् ॥2॥

चिकने बादल अवश्य बररात हैं, इरामें कुछ भी संशय नहीं, और उत्तर दिशा के आवृत बादल प्रातःकाल निष्प्रमतः वर्षा करते हैं ॥2॥

उद्दीच्यान्यथ पूर्वाणि वर्षदानि शिवानि^२ च ।

दक्षिणाण्यवराणि स्युः 'समूत्राणि न संशयः ॥3॥

1. प्रशस्तान् गुणः A, B, D, । 2. अप्रशस्तान् गुणः A, B, D, । 3. शुभानि मुखः C, ।
4. शुभमुहूर्तानि मुखः C, आ०,

उत्तर और पूर्व दिशा के बादल सदा उत्तम वर्षा करते हैं और दक्षिण तथा पश्चिम के बादल मूँत्र के उभान थोड़ो-थोड़ी वर्षा करते हैं, इसमें कुछ संशय नहीं ॥3॥

**कृष्णानि पीत-ताम्राणि इवेतानि च यदा भवेत् ।
तयोनिर्देशं मासृत्य वर्षदानि शिवानि च ॥4॥**

यदि बादल कृष्ण, पीति, ताम्रि और इवेत वर्ण के हों तो वे उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं ॥4॥

**अप्सराणां च सन्नवानां सदृशानि चरणि च ।
सुस्तिग्धानि च यानि स्युर्वर्षदानि शिवानि³ च ॥5॥**

यदि बादल देवांगनाओं और प्राणियों के सदृश आचरण करें—विचरण करें और स्तिग्ध हों तो वे अुभ होते हैं और उनमें उत्तम वर्षा होती है ॥5॥

**शुक्लानि स्तिग्धवर्षानि विद्युच्चित्रघनानि च ।
सद्यो वर्षे समाध्यान्ति तात्यभाणि न संशयः ॥6॥**

बादल अुभ वर्ण के हों, स्तिग्ध हों, विद्युत् रूपानि विचित्र—कानुतर के समान रंग के बादल हों तो उत्काल वर्षा होती है ॥6॥

**शकुनैः कारणैश्चापि सम्भवन्ति शुभर्यदा ।
तदा वर्षे च क्षेमं च सुभिक्ष⁴ च जर्यं भवेत् ॥7॥**

अुभ शकुन और अन्य अुभ-चिक्कों गहित यदि बादल हों तो वे वर्षा करते हैं तथा केम, कुण्ड, गुभिक्ष और राजा वी विजय सूचित रहते हैं ॥7॥

**पक्षिणां द्विषदानां च सदृशानि यदा भवत् ।
चतुष्पदानां सौम्यानां तदा विद्यान्महजलम्⁵ ॥8॥**

सौम्य पक्षियों के सदृश, सौम्य द्विषद—मनुष्यों के यदृश और सौम्य चतुष्पद—चौपायों गाय, भैंग, हाथी थोड़ों आदि ने तुल्य बादल हों तो विजयसूचक समाना चाहिए । इस छलोक में सौम्य विशेषण ने तात्पर्य है कि अुर प्राणियों की वारुति नहीं यहण करनी चाहिए । जो प्राणी सौम्य-गाये स्वभाव के ह, उन्हीं नी वारुति के बादल अुभ सूचक होते हैं । गीम्य प्राणियों में हाथी, थोड़ा, वैल, हंस, मयूर, सारस, लोता, मैना, कोयल, कानुतर आदि प्राणी संग्रहीत है ॥8॥

1 अवधानिदशम् पृ० । 2 अभवाणा पृ० । 3 गुभानि पृ० । 4. वर्षे पृ० A.

B. 5 जय वर्षे पृ० A. B. D. ।

यदा राज्ञः प्रयाणे तु यान्यस्माणि शुभानि च ।
अनुमर्गाणि स्निग्धानि तदा राज्ञो जयं वदेत् ॥१॥

राजा के प्रयाण के समय यदि शुभ रूप बादल हों और वे राजा के मार्ग के साथ-साथ गमन करें, फिर वह होंगे तो उस यात्रा में राजा की विजय होती है ॥१॥

३रथायुधानामश्वानां हस्तिनां सदृशानि च ।
यान्यग्रतो प्रधावन्ति॒ जयमाल्यान्त्युपस्थितम् ॥॥१॥

रथ—गाड़ी, मोटर तथा आयुध—तलवार, बन्दूक और हाथी आदि प्राणियों के सदृश बादल राजा के आगे-आगे गमन करें तो वे उसकी जय की सूचना देते हैं ॥१॥

४वज्ञानां च पत्ताकानां घण्टानां तोरणस्य च ।
सदृशान्यग्रतो यान्ति॒ जयमाल्यान्त्युपस्थितम् ॥॥२॥

४वज्ञा, पत्ताका, घण्टा, तोरण इत्यादि की आकृति वाले बादल राजा के प्रयाण समय आगे-आगे चलें तो उनसे राजा की विजय सूचित होती है ॥२॥

५शुद्धलानि स्निग्धवण्णानि पुरतः॑ पृष्ठतोऽपि वा ।
अभ्राणि॑ दीप्तरूपाणि जयमाल्यान्त्युपस्थितम् ॥॥२॥

श्वेत और चिकने बादल राजा के आगे अथवा पीछे चमकते हुए, गमन करें तो विजयलक्ष्मी उसके सामने उपस्थित रहती है—युद्ध में उसी विजय मिलती है ॥२॥

६चतुर्भवानां पक्षिणां क्रव्यादानां च दंडिणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि बधमाल्यानान्त्युपस्थितम् ॥॥३॥

चौपायों—मैथा, शूकर, गधा आदि पशुओं और गांसभक्ती कूरु पक्षियों—गीध, काळ, बगुखा, बाज, तीतर आदि पक्षियों एवं दौत याके मिहादि हिंगक प्राणियों के आकार वाले बादल राजा के युद्धार्थ गमन करते समय प्रतिलोम गति—अपरावद वार्ष भ गमन करते हुए दिखाई दें तो राजा का शास अथवा पराजय होती है ॥३॥

1. भैरव मूँ C. । 2. श्वायथानाम्, मूँ; पदायधानाम्, मूँ C. । 3. अस्तिधावन्ति मूँ C. । 4. एरवतात् मूँ । 5. अभ्राणि मूँ B. ।

असिद्धिततोमरणा खड्गानां यक्षर्भष्टम् ।
सदृशप्रतिलोभानि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥14॥

तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी, खड्ग, चक्र और ढाल के समान आकार वाले और प्रतिलोभ—विषयीत भार्ग से गमन करते वाले बादल युद्ध की सूचना देते हैं ॥14॥

धनुषां कवचानां च बालानां सदृशानि च ।
खण्डान्यभाणि रुक्षाणि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥15॥

धनुषाकार, कवचाकार, बाल - हाथी, धोड़ों की पूँछ के बालों के समान तथा खण्डित और रुक्ष वाल उन संग्राम की सूचना देते हैं ॥15॥

नानारूपप्रहरणः सर्वे यान्ति परस्परम् ।
सङ्ग्रामं तेषु जानीशादतुलं प्रत्युपस्थितम् ॥16॥

नाना प्रकार के रूप धारण कर मध्य बादल परस्पर में आधात-प्रतिधात करें तो धोर संग्राम की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥16॥

अभ्रवृक्षं समुच्छाय योऽनुलोभसमं वजेत् ।
यस्य राज्ञो वधस्तस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥17॥

जहां से उखड़े हुए वृक्ष के समान यदि बादल गमन करते हुए दिखलाइ पड़े तो राजा के वध की सूचना जात करनी चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥17॥

‘बालाभ्रवृक्षमरणं कुमारामात्पर्योर्बदेत् ।
एवमेवं च वित्तेवं प्रतिराजं’ यदा भवेत् ॥18॥

छोटे-छोटे वृक्ष के समान आकृति वाले बालों से युवराज और मन्त्री का मरण जानना चाहिए ॥18॥

तिर्थकु^३ यानि गच्छन्ति रुक्षाणि^१ च धनानि च ।
निवर्तयन्ति तान्याशु चमू सर्वां सत्तायकाम् ॥19॥

यदि ये तिर्थकु गमन करते हों, रुक्ष हों और सधन हों तो उनसे नायक

1. अथवा पूँछ A. -गिमरण वृद्धि सू. B. -प्राणित यु. । 2. प्रतिवाना पूँछ B., प्रतिराज मू. C., प्रतियाता पू. । 3. विरुद्धि पू. C. । 4. रुक्षाणि यु. A. । D. वृक्षाणि मू. C. । 5. च नायकाम् मू. C. ।

सहित गमस्त सेना के युद्ध से लौट आने या पराह्मुख हो जाने की सूचना मिलती है ॥19॥

अभिद्रवन्ति घोषेण^१ महता थां चम् पुनः ।
तदिद्युतानि^२ चाऽभ्राणि तदा विन्द्याच्चमूर्खधम् ॥20॥

जिस सेना के ऊपर बादल धोर गर्जना करते हुए बरसते हैं तथा बिजली सहित होते हैं तो उस सेना का नाश सूचित होता है ॥20॥

रुधिरोदकवण्णनि निष्पग्न्थोनि यानि च ।
व्रजन्त्यभ्राणि^३ अत्यन्तं सङ्ग्रामं तेषु निर्विशेत् ॥21॥

रुधिर के समान रंग वाली जलवर्षी हो और नीम जैसी गन्ध आती हो तथा बादल गमन करते हुए दिखनाई पड़े तो युद्ध होने का निर्देश जात करना चाहिए ॥21॥

विस्वरं रवमाणाश्च शकुना यान्ति पृष्ठतः ।
यदा^४ चाभ्राणि धूम्राणि^५ तदा विन्द्यान्महद्^६ भयम्^७ ॥22॥

पीछे की ओर शब्द सहित अथवा शब्दरहित शकुन रूप धूम जैसी वाकृति वाले बादल महान् भय भी सूचना देते हैं ॥22॥

मलिनानि विवण्णनि^८ दीप्तायां दिशि यानि च ।
दीप्तान्येव यदा यान्ति भयमाल्यान्त्युपस्थितम् ॥23॥

मलिन सेवा वर्णरहित बादल दीप्ति दिशा – सूर्य जिस दिशा में हो उस दिशा में स्थित हों तो भय की गूचना गगड़ी चाहिए ॥23॥

^१सप्रहे^२चापि तक्षते श्रहयुद्धे^{११} ५शुभे तिथौ ।
^३सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥24॥

मुहूर्ते शकुने वापि निमित्ते वाऽशुभे यदा ।
सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥25॥

१. दोरण म० C. । २. चा. म० । ३. द्रवन्ति-अभ्रामनोः म० A. B. D. । ४. यानि अभ्राणि म० C. । ५. सधूमानि म० A. B. D. । ६-७. महाभयम् म० A., भयम् महत् म० B. E. । ८. विवण्णनि म० A. । ९. क्षप्रहे म० A., संप्रहे म० D. । १०. चा. । ११. अञ्जमूकते म० C. । १२. सम्भ्रमन्ति म० C. ।

अशुभ प्रहृ, नक्षत्र, ग्रहयुद्ध, तिथि-मुहूर्त-शकुन और निमित्त के अशुभ होने पर बादलों का भ्रमण हो तो बहुत भारी भय की सूचना समझनी चाहिए ॥24-25॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशां^१ चाभिष्ठोजयेत्^२ ।
विवुला क्षिप्रगा स्निग्धा जयमाल्याति निर्भयम् ॥26॥

भारी शीत्रगामी और स्निग्ध बादल जिस दिशा में गमन करें उस दिशा में वे यायी राजा की विजय की सूचना करते हैं ॥26॥

यदा तु धान्यसंधाना^३ सदृशानि^४ भद्रन्ति हि ।
अभ्याणि तोयवर्णानि सस्यं तेषु समृद्ध्यते^५ ॥27॥

यदि बादल धान्य के समूह के सदृश अथवा जल के वर्ण वाले दिखाई दे तो धान्य की बहुत पैदावार होती है ॥27॥

विरागान्यनुलोमानि शुब्लरक्तानि यानि च ।
स्थावरणीति जानीयात् स्थावराणां च संश्ये ॥28॥

विगारी, अनुलोम गति वाले तथा ऐत और रक्त वर्ण के बादल स्थिर हों तो स्थायी — उस स्थान के निवासी राजा की विजय होती है ॥28॥

क्षिप्रगानि विलोमानि नीलपीतानि यानि च ।
चलानीति^६ विजानीयाच्चलानि^७ च समागमे^८ ॥29॥

विगामी, प्रतिलोम गति से चलने वाले, नील और नील वर्ण के बादल चल होने हैं और ये यायी के लिए समागमकारक हैं ॥29॥

स्थावराणां जयं विन्द्यात् स्थावराणां द्युतियंदा ।
यायिनां च जयं विन्द्याच्चलाभ्राणां द्युतावर्पि ॥30॥

जो बादल स्थावरी - निवासियों के अनुकूल द्युति आदि चिह्न वाले हों तो उस परमे रथायियों की जय जानना और यायी के अनुकूल द्युति आदि चिह्न वाले हों तो यायी की विजय जानना चाहिए ॥30॥

1. इति ग... 2. वाभियोजयेत् म... 3. वान्यग्रधानान् ग... म... A । 4. मद्यान्तं म... ।
5. गमद्यान्तं ग... । 6. विवरणं ग... A । 7. वराणीति भ... A । चलानीति: ग... । 8. वराणीयाच्चलानि ग... । 9. चलानीति ग... A । 10. नमागमे ग... A ।

राजा^१ तत्प्रतिरूपैस्तु^२ ज्ञेयात्यभ्याणि सर्वशः^३ ।
तत् सर्वे^४ सकल^५ विन्द्याच्छुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥३॥

यदि राजा को बादल अपने प्रतिरूप—सदृश जान पड़े तो उनसे शुभ और अशुभ दोनों प्रकार का फल अवगत करना चाहिए ॥३॥

द्वितीये भद्रद्वातुविगितशास्त्रे अन्तर्मुखी नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

विवेचन—आकाश में बादलों के आच्छादित होने से वर्षा, फसल, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि के सम्बन्ध में जाना जाता है । यह एक प्रकार का निमित्त है, जो शुभ-अशुभ की सूचना देता है । बादलों की आकृतियाँ अनेक प्रकार ती होती हैं । कतिष्य आकृतियाँ पशु-पक्षियों के आकार की होती हैं और कतिष्य मनुष्य, अस्त्र-शस्त्र एवं गेंद, कुर्सी आदि के आकार की भी । इन समस्त आकृतियों को फल की दृष्टि से शुभ और अशुभ इन दो भागों में विभक्त किया गया है । जो पशु सरल, सीधे और पालतू होते हैं, उनकी आकृति के बादलों का फल शुभ और हिरण्य, कूर, दुष्ट जंगली जानवरों वी आकृति के बादलों का फल निकृष्ट होता है । इसी प्रकार सौम्य मनुष्य की आकृति के बादलों का फल शुभ और कूर मनुष्यों की आकृति के बादलों का फल निकृष्ट होता है । अस्त्र-शस्त्रों की आकृति के बादलों का फल साधारणतया अशुभ होता है । मिथ्य वर्ण के बादलों का फल उत्तम और रुक्ष वर्ण के बादलों का फल सर्वदा निकृष्ट होता है ।

पूर्व दिशा में मेघ गर्जन-तज्ज्ञन करने हुए स्थित हों तो उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी उत्तम होती है । उत्तर दिशा में बादल छाये हुए हों तो वर्षा की सूचना देते हैं । दक्षिण और पश्चिम दिशा में बादलों का एकत्र होना वषविरोधक होता है । वर्षा का विचार ज्येष्ठ की पूर्णिमा की वर्षा से किया जाता है । यदि ज्येष्ठ की पूर्णिमा के दिन पूर्वापादा नक्षत्र हो और उस दिन बादल आकाश में आच्छादित हों तो साधारण वर्षा आगामी वर्ष में समझनी चाहिए । उत्तरापादा नक्षत्र यदि इस दिन हो तो अच्छी वर्षा होने की सूचना जाननी चाहिए । आपादा शूण्य पक्ष में रोहिणी के चन्द्रमा योग हो और उस दिन आकाश में पूर्व दिशा की ओर मेघ सुन्दर, सौम्य आकृति में स्थित हों तो आगामी वर्ष में सभी दिशाएं शान्त रहती हैं, पर्यावरण या मृगगण मनोहर शब्द करते हुए आनन्द से निवास करते हैं, भूमि सुन्दर दिखलाई पड़ती है और धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती

1. गजः म० C. । 2. निप्रति म० C. । 3. मर्वदः म० C. । 4. गतः म० C.
5. सर्वमन्तः म० C. । 6. शूश्रावः म० B. C. ।

है। यदि आकाश में कहीं कृष्ण-श्वेत मिथित वर्ण के मेघ आच्छादित हों, कहीं श्वेत वर्ण के ही स्थित हों, कहीं कुण्डली आकार में स्थित हों, कहीं बिजली चमकती हुई मेघों में दिखलाई पड़ें, कहीं कुमकुम और टेसू के पुष्प के समान रंग के बादल सामने दिखलाई पड़ें, कहीं मेघों के इन्द्र-धनुष दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष में साधारणतः वर्षा होती है। आचार्यों ने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी से आपाह शुक्ल तक के मेघों का फल विशेष रूप से प्रतिपादित किया है।

विशेष फल—यदि ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को प्रातः निरञ्च आकाश हो और एकाएक मेघ भट्ट्याहुकाल में छा जायें तो पौष मास में वर्षा की सूचना देते हैं तथा इस प्रकार के मेघों से गुड़, चीनी आदि मधुर पदार्थों के महंगी होने की भी सूचना समझनी चाहिए। यदि इसी तिथि को रात्रि में गर्जन-तज्जन के साथ बूंदा-बूंदी हो और पूर्व दिशा में बिजली भी चमकेतो आगामी वर्ष में सामान्यतया अच्छी वर्षा होने की सूचना देते हैं। यदि उपर्युक्त स्थिति में दक्षिण दिशा में बिजली चमकती है तो दुर्भिक्ष सूचक समझना चाहिए। ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को उत्तर शास्त्रानुनी नक्षत्र हो और इस दिन उत्तर दिशा दूरी ओर से मेघ एकत्र होकर आकाश को आच्छादित करें तो बस्त्र और अन्न सस्ते होते हैं और आपाह ग्रीष्मिन तक अच्छी वर्षा होती है, सर्वप्र सुभिक्ष होने वी सूचना गिलती है। केवल यह योग चूहों, सर्पों और जंगली जानवरों के लिए अनिष्टप्रद है। उक्त तिथि को गुरुवार, शुक्रवार और मंगलवार में से कोई भी दिन हो और पूर्व या दक्षिण दिशा की ओर से बादलों का उभड़ना आरम्भ हो रहा हो तो निश्चयतः मानव, पशु, पक्षी और अन्य समस्त प्राणियों के लिए वर्षा अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को आकाश में मंडलाकाश मेघ संचित हों और उनका लाल या काला रंग हो तो आगामी वर्ष में वृष्टि का अभाव अवगत करना चाहिए। यदि इस दिन बुधवार और सप्ता नक्षत्र का योग हो तथा पूर्व या उत्तर से मेघ उठ रहे हों तो श्रावण और भाद्रपद में वर्षा अच्छी होती है, परन्तु अन्न का भाव महंगा रहता है। फल में कीड़े लगते हैं तथा सोना, चाँदी आदि खनिज धातुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है। यदि ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी रविवार को हो और इस दिन पुष्य नक्षत्र का योग हो तो मेघ का आकाश में छाना बहुत अच्छा होता है। आगामी वर्ष वृष्टि बहुत अच्छी होती है, धन-धान्य की उत्पत्ति भी ध्रेष्ठ होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी शनिवार को हो और इस दिन आश्लेषा नक्षत्र का भी योग हो तो आकाश में श्वेत रंग के बादलों का छा जाना उत्तम मात्रा गथा है। इस निमित्ता से देश की उन्नति की सूचना गिलती है। देश का व्यापारिक सम्बन्ध अन्य देशों से बढ़ता है तथा उसकी सीन्य और अर्थ जक्षित का पूर्ण विवाह होता

है। वर्षा भी समय पर होती है, जिससे कृषि बहुत ही उत्तम होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार और उत्तराहाल्यामी नक्षत्र का योग हो और दक्षिण से बादल गर्जना करते हुए एकत्र हों तो आगामी आश्विन मास में उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी साधारणतः अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को रविवार या गोमवार दिन हो और इस दिन पश्चिम की ओर पर्वताकृति बादल दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष के शुभ होने की सूचना देते हैं। पुष्य, मंशा और पूर्वी काल्यामी इन नक्षत्रों में से कोई भी नक्षत्र उस दिन हो तो लोहा, इस्पात तथा इवरे वनी समस्त वस्तुएँ महँगी होती हैं। जूट का बाजार भाव अस्थिर रहता है। तथा आगामी वर्ष में अन्न की उपज भी कम ही होती है। देश में गोधन और पशुधन का विनाश होता है। यदि उक्त नक्षत्रों के साथ गुरुवार का योग हो तो आगामी वर्ष गव प्रकार में गुखपूर्वक व्यतीत होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है। कृषक वर्ग को सभी प्रकार में शान्ति मिलती है।

ज्येष्ठ शुक्ला नवमी शनिवार को यदि आश्लेषा, विशाखा और अनुराधा में से कोई भी नक्षत्र हो तो इस दिन मेघों का आकाश में व्याप्त होना साधारण वर्षा का सूचक है। साथ ही इन मेघों से माघ मास में जल के वर्षने की भी सूचना मिलती है। औ, धान, चना, मूँग और बाजरा की उत्तर्णि अधिक होती है। मेहें का अभाव रहता है या दबला परियाण में उत्तरादग होता है। ज्येष्ठ शुक्ला दशमी को रविवार या मंगलवार हो और इस दिन ज्येष्ठ या अनुराधा नक्षत्र हो तो आगामी वर्ष में ज्येष्ठ फसल होने की सूचना समझनी चाहिए। तिल, तेल, ची और तिलहनों का भाव महँगा होता है तथा वृत में विशेष लाभ होता है। उक्त प्रकार का मेव व्यापारी वर्ग के लिए भयदायक है तथा आगामी वर्ष में उत्पातों की सूचना देता है।

ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी को उत्तर दिशा की ओर सिंह, व्याघ्र के आकाश में बादल छा जायें तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इय प्रकार की मेघस्थिति पौय या माघ मास में देश के किसी नेता की मृत्यु भी सूचित करती है। वर्षा और कृषि के लिए उक्त प्रकार की मेघस्थिति वर्त्यन्त अनिष्टकारक है। अन्न और जूट की फसल सामान्य रूप से बच्छी नहीं होती। कणांग और गन्ने की फसल अच्छी ही होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार हो तो इस प्रकार की मेघस्थिति द्विज लोगों में भव उत्पन्न करती है तथा देश में अध्यात्मिक वातावरण उपस्थित करने का वारण नहीं है।

ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी को वृथवार हो और उस दिन पंचम दिना में सुन्दर और मीम्य आकाश में बादल आकाश में छा जायें तो आगामी वर्ष में अच्छी वर्षा

होती है। यदि इस दिन ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में से कोई हो तो उक्त प्रकार की मेष की रिति से धन-धार्य का उत्पत्ति में डेढ़ मुनी वृद्धि हो जाती है। दैनिक उपयोग की रामस्त बस्तुएँ आगामी वर्ष में स्वस्ती होती हैं।

ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को गुरुवार हो और इस दिन पूर्व दिशा की ओर से बादल उमड़ते हुए गुकब हों तो उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं। अनुराधा नक्षत्र भी हो तो कृषि में वृद्धि होती है। ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी की रात्रि में वर्षा हो और आकाश मण्डलाकार रूप में मेघाच्छन्न हो तो आगामी वर्ष में खेती अच्छी होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को आकाश में सघन मेष आच्छादित हों और इस दिन गुरुवार हो तो आगामी वर्ष में मुभित्वा की सूचना समझनी चाहिए।

आपाहु कृष्णा प्रतिपदा को हाथी और अश्व के आकाश में कृष्ण वर्ण के बादल आकाश में अवस्थित हो जायें सथा पूर्व दिशा से बायु भी चलती हो और हल्की वर्षा हो रही हो तो आगामी वर्ष में दुर्काल की सूचना समझनी चाहिए। आपाहु कृष्णा प्रतिपदा के दिन आकाश में बादलों का आच्छादित होना तो उत्तम होता है, पर पाती का वरमता अत्यन्त अचिह्नित समस्त जाता है। इस दिन अनेक प्रकार के निमित्तों का विचार किया जाता है—यदि रात में उत्तर दिशा से शूगाल मन्द-मन्द शब्द करते हुए बोलें तो आश्विन मास में वर्षा का अभाव होता है तथा समृद्ध खाद्य पदार्थ महें महें होते हैं। तेज धूप का पड़ना श्रेष्ठ समझा जाता है और यह नक्षण मुभित्वा का द्योतक होता है। आपाहु कृष्णा द्वितीया को पर्वत, या समुद्र के आकाश में उमड़ते हुए बादल एकत्रित हों और गर्जना करें, पर वर्षा न हो तो गाधारणतः अच्छा समझा जाता है। आगामी श्रावण और भाद्रपद में वर्षा होती है। आपाहु कृष्णा द्वितीया को मुन्दर द्विपदाकार मेष आकाश में अवस्थित हों तो उत्तम समझा जाता है। वर्षा भी उत्तम होती है तथा आगामी वर्ष फसल भी अच्छी होती है। यदि आपाहु कृष्णा द्वितीया को सोमवार हो और इस दिन श्रवण नक्षत्र हो तो उक्त प्रकार के नेत्र का विशेष फल प्राप्त होता है। तिलहन की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण में होती है तथा पशु धन भी वृद्धि होती रहती है। इस तिथि को मेघाच्छन्न आकाश होने पर रात्रि में शूकर और जंगली जानवरों का कर्कश शब्द मुनाई पड़े तो जिस नगर के व्यक्ति इस शब्द को सुनते हैं, उसके चारों ओर दस-दस कोश की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल वातिक गाम में ही प्राप्त होता है, सारा नगर वातिक में धीरान हो जाता है। फसल भी कमज़ोर होती है और फसल की नाट करने वाले कीड़ों भी वृद्धि होती है। यदि उक्त तिथि को प्रातःकाल आकाश निरञ्च हो और सन्ध्या समय रंग-विरंग वर्ण के बादल पूर्व से परिचम की ओर गमन करते हुए दिखलाएँ पड़ें तो रात्रि दिन के उत्तरान्त वनधोर वर्षा होती है तथा श्रावण महीने में भी खूब वर्षा

होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को दिन भर मेषाच्छन्न आकाश रहे और सम्मांस समय निरन्त्र हो जाय तो आगामी महीने में साधारण जलवर्षी होती है तथा भाद्रपद में सूखा पड़ता है।

आगाह कृष्ण तृतीया को प्रातःकाल ही आकाश मेषाच्छन्न हो जाय तो आगामी दो महीने अच्छी वर्षा होती है तथा विश्व में सुभिक्ष होने की सूचना समझनी चाहिए। काले रंग के अनाज महंगे होते हैं और श्वेत रंग की सभी वस्तुएं सस्ती होती हैं। यदि उक्त तिथि को मंगलवार हो तो विशेष वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। धनिष्ठा नक्षत्र सम्मांस समय में स्थित हो और इस तिथि को मंगलवार मेष स्थित हों तो भाद्रपद मास में भी बारी की सूचना गमननी चाहिए।

आगाह कृष्ण चतुर्थी को मंगलवार या अनिवार हो, पूर्वांश्च, उत्तरापादा और श्रावण में से कोई भी एक नक्षत्र हो तो उक्त तिथि को प्रातःकाल ही मेषाच्छन्न होने से आगामी वर्ष अच्छी बारी की सूचना मिलती है। धन-धान्य की वृद्धि होती है। जूट की उपज के लिए उक्त मेषस्थिति अच्छी गमनी जाती है। आगाह कृष्ण पञ्चमी को गुरुव्य के आमार में सेवा आकाश में स्थित हों तो वर्षा और फसल उत्तम होती है। देश की आर्थिक स्थिति में वृद्धि होती है। विदेशों से भी देश का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है। गेहूं, गुड़ और लाल वस्त्र के व्यापार में विशेष लाभ होता है। सोती, सोना, गत्त और अन्य प्रकार के कहुमूल्य जवाहरात की महंगी होती है। आगाह कृष्ण पाली को निरन्त्र आकाश रहे और पूर्व दिशा से नेज बायू चले तथा गमन्या के समय पीत वर्ण के बादल आकाश में व्याप्त हो जायें तो श्रावण में वर्षा की कमी, भाद्रपद में सामान्य वर्षा और आश्विन में उत्तम बारी की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि रविवार, सोमवार और मंगलवार हों तो सामान्यतः वर्षा उलम होती है तथा तृण और खाल का मूल्य बढ़ता है। पश्चांत्रे के मूल्य में वृद्धि हो जाती है। यदि उक्त तिथि अश्विनी नक्षत्र हो तो वर्षा अच्छी होती है, फिल्हा फसल में कमी रहती है। बाह और अतिरूपित के कारण फसल नष्ट हो जाती है। गांव मास में भी वृद्धि की सूचना उक्त प्रकार के मेव वीं स्थिति से गिरती है। यदि आगाह कृष्ण चौथी को रात में एकाएक मेघ एकत्र हो जायें तथा वर्षा न हो तो वीत दिन के पश्चात अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को प्रातःकाल ही मेव एकत्रित हों तब उल्की बारी हो रही हो तो आगाह गांव में अच्छी वर्षा, श्रावण में कमी और भाद्रपद में वर्षा का अभाव तथा आश्विन मास में छिट-पुट वर्षा समझती चाहिए। यदि उक्त तिथि तो सोमवार पड़े तो सूर्य की मेषस्थिति जयंत्र में हाहाकार होने की सूचना देती है। अर्थात् सरुप्य

और पशु सभी प्राणी कष्ट पाते हैं। आश्विन मास में अनेक प्रकार की दीमारियाँ भी व्याप्त होती हैं। आषाढ़ कृष्ण अष्टमी को प्रातःकाल सूर्योदय ही न हो अर्थात् सूर्य मेघाच्छन्न हो और मध्याह्न में तेज धूप हो तो श्रावण मास में वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। भरपी नक्षत्र ही तो इस उत्तरार्द्ध वर्ष में अनिष्टकर होता है। फसल में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं तथा व्यापार में भी हानि होती है। आषाढ़ कृष्ण दशमी को पर्वताकार बादल दिखलाई पड़े तो शुभ, ध्वजा-घण्टापताका के आकार में बादल दिखलाई पड़े तो प्रचुर वर्षा और व्यापार में लाभ होता है। यदि इस दिन बादलों की आकृति मांसभक्षी पशुओं के समान हो तो राष्ट्र के लिए भय होता है तथा आन्तरिक गृह-कलह के साथ अन्य शत्रु-राष्ट्रों की ओर से भी भय होता है। यदि तलवार, त्रिजूल, भाला, बर्छी आदि अस्त्रों के रूप में बादलों की आकृति उक्त तिथि को दिखलाई पड़े तो युद्ध की सूचना समझनी चाहिए। यदि आषाढ़ कृष्ण दशमी को उत्थड़े हुए वृक्ष की आकृति के समान बादल दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव तथा राष्ट्र में नाना प्रकार के उपद्रवों की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ कृष्ण एकादशी को रुधिर वर्ण के बादल आकाश में आच्छादित हों तो आगामी वर्ष प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट होता है तथा खाद्य पदार्थों की कमी होती है। आषाढ़ कृष्ण द्वादशी और त्रयोदशी को पूर्व दिशा की ओर से बादलों वा एकत्र होना। दिखलाई पड़े तो फसल की क्षति तथा वर्षा का अभाव और चर्तुदशी को गर्जन-तर्जन के साथ बादल आकाश में व्याप्त हुए दिखलाई पड़े तो श्रावण में सूखा पड़ता है। अमावस्या को वर्षा होना शुभ है और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला प्रतिष्ठदा को मेघों का एकत्र होना शुभ, वर्षा होना तामान्य और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला द्वितीया और तृतीया को पूर्व में मेघों का एकत्रित होना शुभसूचक है।

सप्तमोऽध्यायः

अथात् सप्तप्रक्ष्यामि सन्ध्यानां लक्षणं ततः ॥ १ ॥
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथात्त्वं निबोधत ॥ २ ॥

सन्ध्यागों के लक्षण का निरूपण किया जाता है। ये सन्ध्याएँ दो प्रकार की होती हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त । निम्नलिखित शास्त्र के वृत्ति के अनुसार उनका फल अवगत करना चाहिए ॥1॥

उद्गच्छमाने चादित्ये^१ यदा सन्ध्या विराजते ।

नागराणां जयं विन्द्यादस्तं गच्छति यायिनाम्^२ ॥२॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या नानरों को और सूर्यास्त के समय की सन्ध्या यांगी के लिए जय देने वाली होती है ॥२॥

उद्गच्छमाने चादित्ये^३ शुक्ला सन्ध्या यदा भवेत् ।

उत्तरेण गता^४ सौम्या ब्रह्मणानां जयं विदुः ॥३॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि श्वेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा में हो तथा सौम्य हो तो ब्राह्मणों के लिए जयदायक होती है ॥३॥

उद्गच्छमाने चादित्ये रक्ता सन्ध्या यदा भवेत् ।

पूर्वेण च गता सौम्या अतिव्राणां जयावहा ॥४॥

सूर्योदय के समय लाल वर्ण की सन्ध्या हो और वह पूर्व दिशा में स्थित हो तथा सौम्य हो तो विविधों को जय देने वाली होती है ॥४॥

उद्गच्छमाने चादित्ये पीता सन्ध्या यदा भवेत् ।

दक्षिणेन गता सौम्या वैश्यानां सा^५ जयावहा ॥५॥

सूर्योदय के समय पीत वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह दक्षिण दिशा का अधिकरण करे तथा सौम्य हो तो वैश्यों के लिए जयदायकी होती है ॥५॥

उद्गच्छमाने चादित्ये कृष्णासुर्या यदा भवेत् ।

आपरेण गता सौम्या शूद्राणां च जयावहा ॥६॥

सूर्योदय के समय कृष्ण वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह पश्चिम दिशा का अधिकरण करे तथा सौम्य हो तो शूद्रों के लिए जयकारक होती है ॥६॥

सन्ध्योत्तरा जये राजा लतः कुर्यात् वराजयम्^६ ।

पूर्वा श्रेष्ठं सुभिलं च पश्चिमा च^७ भयंकरा ॥७॥

1. चादित्य गु । 2. नानराणां गु ॥ C. । 3. चादित्य गु ॥ 4. गता गु । 5. गता गु ॥ C. । 6. वयावहा गु ॥ B. ग्रन्थान्तरम् ॥ C. । 7. वयावहा गु ॥ B. जयकरा गु ॥ C. । 8. कुर्यात् वराजयम् लता ग्रन्थान्तरम् ॥ C. । 9. लता गु ॥

उत्तर दिशा की सन्ध्या राजा के लिए जयसूचक है और दक्षिण दिशा की सन्ध्या पराजयसूचक होती है। पूर्व दिशा की सन्ध्या क्षेमकुशलसूचक और पश्चिम दिशा की सन्ध्या भयंकर होती है ॥7॥

आग्नेयो अग्निमास्याति नैऋती राष्ट्रनाशिनी ।
वायव्या प्रावृष्टं हन्यात् ईशानी च शुभावहा ॥8॥

अग्निकोण की सन्ध्या अग्निभय कारक, नैऋत्य दिशा की सन्ध्या देश का नाश करने वाली, वायु कोण की सन्ध्या वर्ण की हानिकारक एवं ईशान कोण की सन्ध्या शुभ होती है ॥8॥

एवं सम्पत्कराद्येषु^१ नक्षत्रेष्वपि निर्दिशेत् ।
जयं सा कुरुते सन्ध्या साधकेषु समुत्थिता ॥9॥

इसी प्रकार मम्पति का लाभ आदि करने वाले नक्षत्रों में भी निर्देश करना चाहिए, इस प्रकार की सन्ध्या साधक वो जयप्रदा होती है। तात्पर्य यह है कि साधक पूरुष को नक्षत्रों में भी शुभ सन्ध्या का दिवाई देना जयप्रद होता है ॥9॥

उदयास्तमनेऽर्कस्य यान्यभ्राण्यतो भवेत् ।
सम्प्रभाणि सरश्मीनि तानि सन्ध्या विनिर्दिशेत् ॥10॥

सूर्य के उदयास्त के समय बादलों पर जो सूर्य की प्रभा पड़ती है, उस प्रभा से बादलों में नाना प्रकार के वर्ण उत्पन्न हो जाते हैं, उसी का नाम सन्ध्या है ॥10॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सौम्यानि विकृतानि^२ च ।
सर्वाणि तानि सन्ध्यायां^३ तथैव प्रतिवारयेत् ॥11॥

अभ्र अध्याय में जो उनके अच्छे और बुरे फल निरूपित किये गये हैं, उस ग्रन्थको इस सन्ध्या अध्याय में भी लागू कर लेता चाहिए ॥11॥

एवमस्तमने काले या सन्ध्या सर्वं उच्यते ।
लक्षणं यत्^४ तु^५ सन्ध्यानां^६ शुभं^७ वा यदि^८ वाशुभम् ॥12॥

उपर्युक्त सूर्योदय की सन्ध्या के लक्षण और शुभाशुभ फलानुसार अस्तकाल

1. वर्णां न० । 2. नियमा ग्रन्थम् ग्र. C. 1 3. विग्रहम् ग्र. C. 1 4. ला ग्रन्थम् ग्र. C. 1 5. प्रतिवारयेत् प० । 6.-7.-8 उपर्युक्त सूर्योदय ग्र. C. 1 9. रविवाराणां शुभाशुभम् ग्र. C. 1 10. च म० ।

की सन्ध्या का भी शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥ 12 ॥

स्निग्धबर्णस्तो सन्ध्या वर्षदा सर्वशो भवेत् ।

'सर्व बोधिगता वाऽपि सुनक्षत्रा' विशेषतः ॥ 13 ॥

स्निग्ध वर्ण की सन्ध्या वर्षा देने वाली होती है; बोधियों में प्राप्त और विशेष कर शुभ नक्षत्रों वाली सन्ध्या वर्षा को करती है ॥ 13 ॥

'पूर्वरात्रपरिवेषा' 'सदिद्युत्परिखायुता ।

सरश्मी^१ सर्वतः^२ सन्ध्या^३ सद्यो वर्षे प्रयच्छति ॥ 14 ॥

पूर्व रात्रि... दिल्ली वाली हुई शाविको परिवेष हो और परिखायुक्त विजली हो तथा सब और रक्षित सन्ध्या हो तो तत्काल वर्षा होती है ॥ 14 ॥

प्रतिसूर्यागमस्तत्र 'शक्रब्रापरजस्तथा ।

सन्ध्याथां यदि दृश्यन्ते सद्यो वर्षे प्रयच्छति ॥ 15 ॥

प्रतिसूर्य आगमन हो, वहां पर इन्द्रधनुष रजोयुक्त सन्ध्या में दिल्लाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥ 15 ॥

सन्ध्यायामेकरशिमस्तु यदा सृजति भास्करः ।

उदितोऽस्तमितो चार्ष्य विन्द्याद् वर्षेसुपरिथतम् ॥ 16 ॥

सन्ध्या में गूर्व उदय या अस्त के गमय में एक रक्षित वाला दिल्लाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥ 16 ॥

आदित्यपरिवर्षतु सन्ध्यायां यदि दृश्यते ।

वर्षे महद् विजानोयाद् भयं चार्थं प्रवर्षणं ॥ 17 ॥

सन्ध्या में सूर्य के परिवर्ष दिल्लाई दे तो भारी वर्षा होती है जबकि भय होता है। तात्पर्य यह है कि सन्ध्या काल में सूर्य का परिवर्ष दिल्लाई देना शुभ नहीं भावा जाता है। इस रक्षितादित्रि वर्षा नहीं होता तथा वर्षा भी होती है तो विक्षिप्त होती है जिससे मनुष्य और पशुओं को काट ही होता है ॥ 17 ॥

त्रिमण्डलपरिधितो धृद वा^४ पञ्चमण्डलः ।

सन्ध्यायां दृश्यते सूर्यो महावर्षस्य सम्भवः ॥ 18 ॥

1. गृह वा ८ । २. वर्षादित्रि वर्षा । ३. वर्षादित्रि वर्षा । ४. वर्षादित्रि वर्षा ।
5. वर्षादित्रि वर्षा । ६. वर्षादित्रि वर्षा । ७. वर्षादित्रि वर्षा । ८. वर्षादित्रि वर्षा ।
9. सप्तर्ष वर्षा । 10-11. वर्षादित्रि वर्षा । 12. वर्षादित्रि वर्षा ।

यदि सूर्य सन्ध्या में लैन मंडल अथवा पाँच मंडल से घिरा हुआ दिखलाई दे तो महावर्षा का होना संभव होता है ॥18॥

द्योतयन्ती दिशा सर्वा यदा सन्ध्या प्रदृश्यते ।

१महामेधास्तदा विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥19॥

सब दिशाओं में प्रकाशमान झलझलाहट युक्त सन्ध्या दिखलाई दे तो भारी वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु का बचन है ॥19॥

सरस्तडागप्रतिमाकूप्तकुम्भनिभा च या ।

यदा पश्यति^३ सुस्तिधा सा सन्ध्या वर्षदा स्मृता^४ ॥20॥

सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप और कुम्भ सदृश स्तिथि सन्ध्या यदि दिखलाई दे तो वर्षा होगी, ऐसा जानना चाहिए ॥20॥

धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा खण्डपापसमा यदा ।

या सन्ध्या दृश्यते नित्यं सा तु राजो भयंकरा ॥21॥

धूम्र वर्णवाली, छिद्रयुक्त, खण्डरूप सन्ध्या यदि नित्य दिखाई दे तो वह राजा को भयकारक है ॥21॥

द्विपदाश्चतुष्पदाः कूराः पक्षिणश्च^५ भयंकराः ।

सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते भयमाल्यान्त्युपस्थितम् ॥22॥

कूर स्वभाव वाले द्विपद, चतुष्पद और पक्षीगण के सदृश वादल यदि सन्ध्या काल में दिखलाई दें तो भय उपस्थित होता है ॥22॥

अनावृष्टिर्भयं रोमं दुर्भिक्षं राजविद्रवम् ।

रुक्षायां विकृतायां च 'सन्ध्यायामभिनिदिशेत् ॥23॥

सन्ध्या में वादल रुक्ष और विकृतिरूप दिखाई दें तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष और राजा का उपद्रव होता है ॥23॥

विशतिर्योजनानि स्युविद्युद्भाति च सुप्रभा ।

ततोऽधिकं तु लतनिते^६ अभ्रं यत्वैव दृश्यते ॥24॥

1. महावर्षा पृ० । 2. दुश्वर्षा पृ० । 3. शिवा पृ० C. । 4. पर्वतारु पृ० ।
5. सन्ध्यायां विनिदिशेत्, पृ० । 6. लतनितम् पृ० ।

विशेष नोट—युद्धित प्रनि में श्लोक-संख्या 22, 23 में अक्षिकम् मिलता है ।

**पंचयोजनिका सन्ध्या वायुवर्ष च दूरतः ।
त्रिरात्रं^१ सप्तरात्रं^२ च सद्यो वा पाकमादिशेत् ॥२५॥**

बिजली की प्रभा बीस योजन—अससी कोश पर से दिखाई दे तथा इससे भी अधिक दूरी से बादल दिखलाई दे तो यायु और वर्षा भी इतने ही योजन की दूरी तक दिखलाई देती हैं। यदि सन्ध्या पाँच योजन—बीस कोश से दिखलाई दे तो वायु और वर्षा भी इतनी ही दूरी से दिखलाई पड़ती है। उपर्युक्त चिह्नों का फल तीन या सात रात्रि में मिलता है। तात्पर्य यह है कि जब वीम कोस की दूरी से सन्ध्या और अससी कोश की दूरी से विश्वस्त्रभा और अध्र-बादल दिखलाई देते हैं, तब वर्षा भी उस स्थान के चारों ओर अससी कोश या वीम कोश की दूरी तक होती है। यह फलादेश तीन या सात दिनों में प्राप्त होता है ॥२४-२५॥

**उल्कावत् साधनं सर्वं सन्ध्यायामीभन्निदेशे ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघानां तत्त्वविधत् ॥२६॥**

उल्का अध्याय के समान सन्ध्या के गव लक्षण और फल समझना चाहिए। यिस प्रकार प्रभुभ और दुर्भाग्य आकृति वाली उल्काएँ देश, समाज, व्यक्ति जाति राष्ट्र के लिए हानिकारक समझी जाती हैं, उसी प्रकार सन्ध्याएँ भी। अब जागे मेघ का फल और लक्षण निरूपित किया जाता है, उसे अवगत करना चाहिए ॥२६॥

इति नैर्यन्थे भद्रबाहुके निपित्ते सन्ध्यालक्षणो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥२७॥

ब्रिवेचनं प्रतिदिन सूर्य के अधीस्त हो जाने के समय से जब तक आकाश में नक्षत्र भवीभीति दिखाई न दें तब तक सन्ध्या काल रहता है, जहाँ प्रकाश अधीर्दित सूर्य से पहले तारा दर्शन तक सन्ध्या काल माना जाता है।/सन्ध्या समय बार-बार ऊँचा भयंकर शब्द कारता हुआ मृग याम के नष्ट होने की सूचना करता है। सेना के दक्षिण भाग में स्थित मृग सूर्य के नमूल गृहान् शब्द करने से सेना का नाश समझना चाहिए। यदि सूर्य में प्रातः सन्ध्या के समय सूर्य की ओर गुजर करके मृग और दक्षिण के शब्द से युक्त सन्ध्या दिखलाई रहे तो देश के नाश की सूचना मिलती है। दक्षिण में स्थित भूग सूर्य की ओर भुव्य करने अद्य करने तो शत्रुओं द्वारा नगर का ग्रहण किया जाता है। मृह, वृक्ष, तोरण मथन और चूलि के साथ मिट्टी के हेलों को भी उधाने वाला गवन प्रबल बैग और गवांकर होने

1. नैर्यन्था मृह । 2. नाशना मृह ।

शब्द से पक्षियों को आक्रमत करे तो अग्रुभकारी सन्ध्या होती है। सन्ध्या काल में मन्द पवन के प्रवाह से हिलते हुए पलाश अथवा मधुर शब्द करते हुए बिहंग और भृग निनाद करते हों तो सन्ध्या पूज्य होती है। सन्ध्या काल में दण्ड, तडित्, मत्स्य, मंडल, परिवेष, इन्द्रधनुष, ऐरावत और सूर्य की किरणें इन सबका स्तिरध द्वारा शीघ्र ही वर्षा को लाता है। टूटी-फूटी, शीण, विश्वस्त, विकराल, कुटिल, वाई और को शुक्री हुई छोटी-छोटी और मलिन सूर्य-किरणें सन्ध्या काल में हों तो उपद्रव या युद्ध होने की सूचना समझनी चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्या वषविरोधक होती है। अन्धकारविहीन आकाश में सूर्य वी किरणों का निर्मल, प्रसन्न, सीधा और प्रदक्षिणा के आकार में भ्रमण करना संसार के मंगल का कारण है। यदि सूर्यरश्मियाँ आदि, मध्य और अन्तगामी होकर निकली, सरल, अखण्डित और श्वेत हों तो वर्षा होती है। कृष्ण, शीत, कणिक, रक्त, डुरित आदि विभिन्न वर्णों की किरणें आकाश में व्याप्त हो जाय तो जल्दी वर्षा होती है तथा एक रात्राह तक भय भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय गूर्धे की किरणें ताप्र रंग की हों तो सेनापति की मृत्यु, पीति और लाल रंग के समान हों तो सेनापति को दुःख, हरे रंग की होने से पशु और धान्य का नाश, धूम्र वर्ण वी होने से गायों का नाश, मंजीठ के समान आभा और रंगदार होने से शस्त्र व अग्निभय, शीत हों तो पवन के साथ वर्षा, भस्म के समान होने से अनावृटि और मिथित एवं कल्पाप रंग होने से वृष्टि का शीण भाव होता है। यन्ध्याकालीन धूल दुष्पहरिया के फूल और अंजन के चूर्ण के समान काली होकर जब सूर्य के सामने आती है, तब मनुष्य सीकड़ों प्रकार की गोंदों से पीड़ित होता है। यदि सन्ध्या काल में सूर्य की किरणें वेत रंग की हों तो मात्रव का अभ्युदय और उसी शान्ति सूचित होती है। यदि सूर्य की किरणें सन्ध्या समय जल और पवन से मिलकर दण्ड के समान हो जाये, तो यह दण्ड रहता रहता है। जब यह दण्ड विदिशाओं में रिघत होता है तो राजाओं के लिए और जब दिशाओं में स्थित होता है तो दिजातियों के लिए अनिष्टकारी है। दिन निकालने में पहले और मध्य सम्बिं में जो दण्ड दिखलाई दे तो शशवभय और रोग-भय वारने वाला होता है, गुरुआदि वर्ण का हो तो ग्राहणों को काटकारक, रथदायक और अर्थविनाश करने वाला होता है।

आकाश में सूर्य के टकने वाले दही के समान किमारेदार नीले मेघ को अच्छ लहू कहते हैं। यह नीले रंग का मेघ यदि तीक्ष्ण की ओर मुख किये हुए मालूम पड़े तो अधिक वर्षा वारता है। अप्रत्यक्ष शशु के ऊपर वावमण करने वाले राजा के पीछे-पीछे जलकर अकस्मात् शान्त हो जाय तो युवराज और मन्त्री का नाश होता है।

नील कमल, बैडूर्य और पश्चकेसर के समान कान्तियुवत, वायुरहित सन्ध्या सूर्य की किरणों को प्रकाशित करे तो वेर्षी होती है। इस प्रकार की सन्ध्या का फल तीन दिनों में प्राप्त हो जाता है। यदि सन्ध्या गमय गन्धर्वनगर, कुहाया और धूम छाये हुए दिखलाई पड़े तो वर्षी की कमी होती है। सन्ध्याकाल में गमय धारण किए हुए नर धृष्टधारी के समान भेष सूर्य के सम्मुख लिन्न-भिन्न हों तो शत्रुभय होता है। शुक्लवर्ण और अुरा किन्तु इन्हें भेष गमया गमय में उड़े तो आच्छादित करे तो वर्षी होने का योग गमज्ञना नाहिए। सूर्य के उदयकाल में शुक्लवर्ण की परिधि दिखलाई दे तो राजा को विषद् होती है, अवतरण होने सेना की और कनकवर्ण की हो तो वन और पुष्पाश्रम की वृद्धि होती है। प्रातः कालीन सन्ध्या के समय सूर्य के दोनों ओर वर्षी परिधि, यदि शरीर बाली हो जाय तो बहुत जल-वृण्डि होती है और सब परिधि दिशाओं को घेर ले तो जल का नाश भी नहीं बरतता। सन्ध्या काल में मेन, ध्वज, छंग, पर्वत, हम्मी और धोड़े का स्वप्न धारण करें तो जथ वा नाशण है और रक्त के समान नान हों तो युद्ध का काशण होते हैं। पलाल के धूपि के समान स्त्रियों में राजाओं के बल को बढ़ाते हैं। सन्ध्या काल में सूर्य का प्रकाश यदि तीक्ष्ण आकार हो या नीचे की ओर अुके आकार का हो तो मंगल होता है। सूर्य के सम्मुख होकर पश्ची, गोदड़ और मृग रात्र्याकाल में शब्द करें तो युभिक का नाश होता है, प्रजा में आपस में संघर्ष होता है और अनेक प्रकार से देश में कलह एवं उपद्रव होते हैं।

यदि सूर्योदय वाल में दिशाएँ पीत, हरित और चित्र-विचित्र वर्ण की मालूम हों तो सात दिन में प्रजा में भर्यकर सोग, नीचे वर्ण की मालूम हों तो समय पर वर्षी और कृष्ण वर्ण की मालूम हों तो बालकों में रोग पैदलता है। यदि गम-कालीन गम्या के गमय दक्षिण दिशा में भेष प्राप्त हुए दिशनाई पड़े तो अच्छे दिनों तक वर्षीभाव, पञ्चिम दिशा में आते हुए मालूम पड़े तो पांच दिनों का वर्षीभाव, उत्तर दिशा से आते हुए गान्धूम पड़े तो युद्ध वर्षी और एवं दिशा में आते हुए भेष भर्जन सहित दिखलाई पड़े तो अच्छे दिनों तक गम्या वर्षी होने की सूचना मिलती है। प्रातःकालीन और शार्वकालीन सन्ध्याओं का वर्ण एक समान हों तो एक महीने तक मग्निया और लिङ्गहन का भाव गमता, युवर्ण और चाँदी का भाव भर्हेगा तथा दण्ड गरिवर्णन हो तो सभी प्रकार की वस्त्रों का भाव नीचे गिर जाते हैं।

ज्येष्ठ कृष्ण प्रतियात्रा की प्रातःकालीन गम्या वर्ण की हो तो आगामी में ज्येष्ठ वर्षी, लग्न वर्ण वा द्वीपों ने आपात में वर्षी का अभाव और आपण मन्त्रालय वर्षी, पीत वर्ण से ही तो भी आपात में गमयोर्मिति वर्षी एवं विचित्र वर्ण से ही हो तो आगामी वर्षा अतुर्य सामाज्य रूप में जल्दा वर्षी होती है। इस लिये कि

साध्यकालीन सन्ध्या श्वेत या रक्त वर्ण की हो तो सात दिन के उपरात्म वर्षा एवं मिश्रित वर्ण की हो तो वर्षा क्रतु में अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया को प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्ण की हो तो वर्षा क्रतु में अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेतवर्ण की हो और पूर्व दिशा से बादल घुमड़कर एकत्र होते दिखलाई पड़े तो आगाह में वर्षा का अभाव और वर्षा क्रतु में भी अल्प वर्षा तथा साध्यकालीन सन्ध्या में बादलों की गर्जना सुनाई पड़े या बूँदा-बूँदी हो तो और दुर्भिक्ष का अनुमान करना चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्याएँ व्यापार में लाभ सूचित करती हैं। सट्टे के व्यापारियों के लिए उत्तम फल देती है। वस्तुओं के भाव प्रतिदिन लेने उठते जाते हैं। रामी चिकने पदार्थ और तिलहन आदि का भाव कुछ गत्ता होता है। उक्त सन्ध्या का फल एक महीने तक प्राप्त होता है। यह सन्ध्या जमता में रोगों की उत्पन्नकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण तृतीया का क्षय हो और इस दिन चतुर्थी पंचमी तिथि से विद्ध हो तो उक्त तिथि की प्रातःकालीन सन्ध्या अत्यन्त महसूर्यांश होती है। यदि इस प्रकार की सन्ध्या में अध्योदय के समय सूर्य के चारों ओर तीलवर्ण का मंडलाकार परिवेप दिखलाई पड़े तो भाष्य और फाल्गुन भास में भूषण होने की रुचना समझनी चाहिए। इन दोनों महीनों में भूकम्प के साथ और भी प्रकार की अनिष्ट घटनाएँ घटित होती हैं। अनेक स्थानों पर जमता में संवर्ष होता है, गोलियाँ बरसते हैं तथा दुर्घटना द्वारा किसी प्रगिद्ध व्यक्ति की मृत्यु होती है। एक बार राज्य में कान्ति होती है तथा ऐसा लगता है कि राज्य-परिवर्तन ही होने बाला है। चैत्र में जाकर जमता में आत्म-विश्वास उत्तेजन होता है तथा गर्भी लोग ग्रेम और थढ़ा के साथ काये करते हैं। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या का वर्ण रक्त चैत्र की रुचना देती है। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या को उत्तर दिशा में सुन्मेह पर्यंत के आकार के बाद उठें और वे भूयाने आच्छादित कर लें तो विश्व में जान्ति समझनी चाहिए। साध्यकालीन सन्ध्या यदि इरादिन हमसुन्न गालूम पड़े तो आगाढ़ में खूब वर्षा और रोली हुई मालूम पड़े तो वर्णभाव जानना चाहिए।

ज्येष्ठ कृष्ण पठ्ठी को आश्लेषा भक्तव ले और साध्यकालीन सन्ध्या रक्त-वर्ण भास्वर रूप हो तो आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। इस सन्ध्या के दर्शक मीन, कर्ण और मकर राशि वाले व्यक्तियों को जाट होता है और अवश्य राशि वाले व्यक्तियों का वर्ष आनन्दगूर्वक अस्तीत होता है। प्रातः-कालीन सन्ध्या इस तिथि की रक्त, रोल और गीतगां की उच्चम पाती वर्ष है और अवश्य वर्षों की सन्ध्या हानिकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण सातमी को उद्य-

कालीन सन्ध्या में सिंह की आकृति के बादल दिखलाई पड़े तो वर्णभाव और निरभ्र आकाश हो तो यथोचित वर्षी तथा श्रेष्ठ फसल उत्पन्न होती है। सायं सन्ध्या में अग्निकोण की ओर रक्त वर्ण के बादल तथा उत्तर दिशा में अवैत वर्ण के बादल सूर्य को आचछादित कर रहे हों तो इसका फल देश के पूर्व भाग में यथोचित जलवृष्टि और एविष्म भाग में वर्षा की कमी तथा सुवर्ण, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, पद्मराग, गोमेद आदि गत्तों की कीमत तीन दिनों के पश्चात् ही बढ़ती है। वस्त्र और खाद्यान्न का भाव कुछ नीचे गिरता है। ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी को भी प्रातः सन्ध्या निरभ्र और निर्मल हो तो आपाहु कृष्ण पथ में वर्षा होती है। यदि यह सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो वर्णभाव रहता है तथा आपाहु का भजीना ग्रायः सूखा निकल जाता है। उक्त तिथि को सायं सन्ध्या विधित वर्ण हो तो फसल उत्तम होती है तथा व्यापार में लाभ होता है। ज्येष्ठ कृष्ण नवमी वी प्रातः सन्ध्या रक्त के समान लाल वर्ण की हो तो वो दुर्भिक्ष की सूचक तथा गेना में विशेष करणे याली होती है। सायंकालीन सन्ध्या उक्त तिथि वो अवैत वर्ण नहीं हो तो सुभिक्ष और सुकाल की सूचना देती है। यदि उक्त तिथि वो विशेष्या या शत-गिरा नक्षत्र हो तथा इस तिथि का क्षय हो तो इस सन्ध्या की महत्ता फलादेश के लिए अधिक बढ़ जाती है। वर्षोऽपि इसके रूप, आकृति और रीम्य या गुर्भग द्वारा अनेक प्रकार के स्वभाव-गुणानुसार फलादेश निरूपित किये गए हैं। यदि ज्येष्ठ कृष्ण दशमी वी प्रातःकालीन सन्ध्या रवच्छ और निरभ्र हो तो आपाहु में खूब वर्षा एवं आवण में साधारण वर्ग होती है। सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो सुभिक्ष वी सूचना देती है। ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी को प्रातःसन्ध्या धूप्र वर्ण की मालूम हो तो भव, चिन्ता और अनेक प्रकार के रोगों की सूचना समझनी चाहिए। इस तिथि वी सायं सन्ध्या रवच्छ और निरभ्र हो तो आपाहु में वर्षी की सूचना समझ लेवी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशी की प्रातःसन्ध्या भास्वर हो और सायं सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो सुभिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्ण वयोदशी की प्रातः सन्ध्या निरभ्र हो तथा सायं सन्ध्या काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो आवण में वर्षा, भाद्रपद में जल वी कमी एवं वर्षा कृतु में खाद्यान्नों की महँगी समझ लेनी चाहिए। यदि ज्येष्ठ चतुर्दशी वी सन्ध्याएँ परिवृत्या परिवृत्य से युक्त हों तथा सूर्य का त्रिमंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट वी सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्ण अभास्वस्या और शुक्ला प्रतिपदा इन दोनों तिथियों की दोनों ही सन्ध्याएँ छिद्र युक्त विकृत आकृति वाली और परिवेष या परिवृत्य से युक्त दिखलाई दें तो वर्षी साधारण होती है और फसल भी साधारण ही होती है। इस प्रकार की सन्ध्या निवहन, गुड़ और धूत्र वी विशेष उपज की सूचना देती है। ज्येष्ठ मास की अवधिग तिथियों वी सन्ध्या के वर्ण-

आकृति के अनुसार फलादेश अवगत करना चाहिए। आपाढ़ मास में कृष्ण प्रतिपदा की सन्ध्या विशेष महत्वपूर्ण है। इस दिन दोनों ही सन्ध्या स्वच्छ, निरभ्र और सीम्य दिखलाई पड़े तो मुमिक्ष नियमत होता है। नागरिकोंमें शान्ति और मृत्यु व्याप्त होता है। यदि इस दिन की किसी भी सन्ध्या में इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो आगरी उपद्रवों की सूचना समझी जाहिए। आपाढ़ मास की अवशेष तिथियों की सन्ध्या का फल यूधोक्त प्रकार से ही समझना चाहिए। स्वच्छ, सीम्य और श्वेत, रक्त, पीत और नील वर्ण की सन्ध्या अच्छा फल सूचित करती है, और पलिम, विशुल आकृति तथा छिद्र युक्त सन्ध्या अनिष्ट फल सूचित करती है।

अष्टमोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघनामपि लक्षणम् ।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः ॥1॥

सन्ध्या का लक्षण और फल निरूपण करने के उपरान्त अब मेघों के लक्षण और फल का प्रतिपादन करते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त शुभ और अप्रशस्त—अशुभ ॥1॥

यदांजनिभो मेघः¹ शान्तायां दिशि दृश्यते ।
स्तिरधो मन्तगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥2॥

यदि अंजन के समान गहरे काले मेघ पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़े और ये चिकने तथा मन्द गति वाले हों तो भारी जल-बृहिं होती है ॥2॥

²वीतपुष्पनिभो यस्तु यदा मेघः समुत्थितः ।
शान्तायां यदि दृश्येत स्तिरधो वर्षं तदुच्यते ॥3॥

पीले पुष्प के समान स्तिरध मेघ पश्चिम दिशा में स्थित हों तो जल की बृहिं तत्काल कराते हैं। इस प्रकार के मेघ वर्ष के वारक माने जाते हैं ॥3॥

1 देवः ग ८ : 2 तीन और चार संख्या वाले श्लोक ग्रन्थिं प्राप्त में नहीं हैं।

**रक्तवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।
स्नाधो मन्त्रगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥४॥**

लाल वर्ण के तथा स्नाध और मन्त्र गति वाले मेघ पश्चिम दिशा में दिखलाई दें तो अच्छी जल-वृष्टि होती है ॥४॥

**शुक्लवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।
स्नाधो मन्त्रगतिश्चापि निवृत्तः^१ स जलावहः^२ ॥५॥**

श्वेत वर्ण के स्नाध और मन्त्र गति वाले पश्चिम दिशा में दिखलाई दें तो जिदा उन उनमें धूमा है उतनी तरी रुक्षके बे निरुग हो जाते हैं ॥५॥

**स्नाधाः सर्वेषु वर्णेषु स्वां दिशां संसृता यदा ।
३स्वर्णविजयं कुर्युदिक्षु शान्तासु ये स्थिताः ॥६॥**

यदि पश्चिम दिशा में स्थित मेघ मिथ्य हों तो यदि वर्णों की विजय करते हैं और आगे-अपगे वर्णों के अनुसार अपनी-अपनी दिशा में मिथ्य मध्य मिथ्य हों तो वर्णों के अनुसार जय करते हैं ॥६॥

जाति	प्रात्ययण	धात्रिय	तैत्य	गुरु
जातिवर्ण	श्वेत	श्वत	पीत	कृष्ण
जातिदिशा	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम

यथास्थितं शुभं ४मेघमनुपश्यन्ति ५पक्षिणः ।

जलाशयः जलधरास्तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥७॥

यदि शुभ मेघ पक्षिण और जलाशय रुग दिखलाई दें तो अच्छी वर्षा होती है और यह वर्षा फराल को अधिक लाभ पहुंचाती है ॥७॥

स्नाधवर्णश्च ते (ये) मेघा स्नाधाश्च ते (ये) सदा ।

मन्त्रगाः सुमुहूर्तश्च ये (ते) सर्वत जलावहाः ॥८॥

यदि स्नाध - शीम्य, मृदुल शब्द वाले, मन्त्र गति वाले और उत्तम गुरुत्व वाले मेघ दिखलाई पड़ें तो सर्वत वर्षा होती है ॥८॥

सुगन्धगन्धा ये मेघाः सुस्वराः^६ स्वादुसंस्थिताः ।

मधुरोदकाश्च^७ ये मेघाः^८ जलाय^९ जलदास्तथा ॥९॥

1. विजेयः म० C । 2. जलायहः म० C । 3. गवणः म० C । 4. अथ म० C ।
5. पश्यन्ति म० C । 6. दक्षिणा, गृह C । 7. विश्वम् गृह । 8. मधुरा म० A गोदावरी
नृ C । 9. सर्वतोयः म० C । 10. वंशा म० C । 11. जलदा गृह C ।

गुणवत्ता—केशर और कस्तूरी के ममान गन्ध वाले, मनोहर गर्जन वाले, खाद्य रस वाले, पीठे जल वाले एवं समृद्धि जल को वर्पा करते हैं ॥9॥

मेघाः यदाभिबर्षन्ति प्रयाणे पथिकीपतेः ।

मधुराः मधुरेणैवै तदा सत्थिर्विष्यति ॥10॥

राजा के आक्रमण के भवय मनोहर और मधुर जब वाले मेव वर्पा करें तो युद्ध न होकर परस्पर भक्षि हो जाती है ॥10॥

पृष्ठतो वर्षतः श्वेष्टः अश्वतो विजयकरम् ।

गेघाः कुर्वन्ति ये दूरे सगज्जित-सर्वद्युतः ॥11॥

राजा के प्रयाण के गमय यदि मेघ दुर्गी पर गर्जना और विजयी महित दूरी¹ तो जीर पृष्ठ भाग पर हों तो थोड जानना चाहिए और अग्र भाग पर हों तो विजयधर यमानना चाहिए ॥11॥

मेघशब्देन सहृता यदा निर्याति पाथिवः ।

पृष्ठतो गर्जमानेन तदा जयति दुर्जयम् ॥12॥

यदि राजा के प्रयाण के भवय पीछे के भावे में मेघ बड़ी गजेना करें तो दुर्जय गच्छ पर भी विजय गांगव हो जाती है ॥12॥

मेघशब्देन सहृता यदा तिर्यग् प्रधावति ।

न तत्र जायते सिद्धिरुभयोः परिसैन्ययोः ॥13॥

यदि आक्रमण कान में मेघ समृद्ध या पृष्ठ भाग में गर्जना न कर तिर्यग वाले या दूरी भाग गर्जना करें तो याथी और स्थायी इन दोनों ही गोताओं को गिरिधि नहीं होती अर्थात् दोनों ही गतात् परस्पर में मिडन्त करती हुई असफल रहती है ॥13॥

मेघ यत्राभिबर्षन्ति रक्तधावारः समन्ततः ।

सनाथकाः विद्रवते सा चमूनत्रि संशयः ॥14॥

मेघ जिस रथान पर गुसलाधार पानी करावें वहाँ पर नायक और मेना गोता ही रथतरंगित होते हैं, इसमें कुछ भी गन्देह नहीं है ॥14॥

1. मर्यादा ग्र. A. ; 2. भवताव. ; 3. लुकार्लेम. ; 4. शोष्ठ ग्र. A. गेघ गु. C. ;

5. गर्जनम् ग्र. A. नद्या. ; 6. यद्यगुभयो मू. ; 7. विरिन्य ग्र. मू. ; 8. लालिका म. A. ; 9. का वि ग्र. C. ; 10. दुर्जयप् ग्र. C. ; 11. चमू गु. C. ;

रुक्षा वाताः प्रकुर्वन्ति व्याधयो विष्टगन्धिताः ।

कुशद्वाशच विवणश्च मेघो वर्षं न कुर्वते ॥१५॥

रुक्ष वायु विष्टा गन्ध के समान गन्ध वाली बहती हो तो व्याधि उत्पन्न करती है। कुशद्वा अर्थात् कठोर शब्द और विकृत वर्ण वाली हो तो मेघ जल-वृष्टि नहीं करते ॥ ५॥

सिहा^१ शृगालमार्जरा व्याघ्रमेघाः २द्वन्ति ये^३ ।

महता भीम^४ शब्देन रुधिरं वर्षन्ति ते घनाः ॥ ६॥

जो मेघ सिह, सियार, विल्ली, चीता की आङृति वाले होकर वरसें और भारी कठोर वर्षा करें तो इस प्रकार के मेघों का फल रुधिर की वर्षा करना है ॥ ६॥

पक्षिणश्चापि ऋव्यादा वा पश्यन्ति५ समुत्थिताः ।

मेघास्तदाऽपि रुधिरं६ ७वर्षं वर्षन्ति ते घनाः ॥ ७॥

यदि मांसभक्षी पक्षियों—गृद्र आदि पक्षियों की आङृति वाले मेघ तथा उड़ते हुए पक्षियों की आङृति वाले मेघ दिशलाई पड़ें तो वे रुधिर की वर्षा करते हैं ॥ ७॥

अनावृष्टिभयं घोरं दुभिक्षं मरणं८ तथा ।

निवेदयन्ति ते मेघाये भवन्तीदृशा९ दिवि१० ॥ ८॥

उपर्युक्त अशुभ आङृतिवाले मेघ अनावृष्टि, घोरभय, दुभिक्ष, मृत्यु आदि कलों को करने वाले होते हैं। अर्थात् मांसभक्षी पशु और मांसभक्षी पक्षियों की आङृतिवाले मेघ अत्यन्त अशुभ सूचक होते हैं ॥ ८॥

तिथी११ मुहूर्तकरणे नक्षत्रे शकुने१२ शुभे१३ ।

सम्भवन्ति यदा मेघाः पापदास्ते भयंकराः ॥ ९॥

अशुभ तिथि, मुहूर्त, करण, नक्षत्र और शकुन में यदि मेघ आकाश में आच्छादित हों तो भयंकर पाप का फल देने वाले होते हैं ॥ ९॥

एवं लक्षणसंयुक्ताश्चमूँ वर्षन्ति ये घनाः ।

चमूं सनायकां सर्वा हन्तुमाल्यान्ति सर्वशः ॥ २०॥

1. गिरि मूँ A. | 2. रवन्ति मूँ A. | 3. वन् मूँ A. | 4. मेघ मूँ A. B. D. | 5. पश्यन्ते मूँ B. वास्यन्ते मूँ C. पाश्यन्ते मूँ D. | 6. रुधिरं मूँ B. | 7. वर्षन्ते तत्र दशने मूँ | 8. मारक मूँ A. | 9. भवन्ति दृशा मूँ B. D. | 10. भयि मूँ A. | 11. मूहूर्त मूँ A. D. | 12. करणे मूँ C. | 13. नक्षा मूँ A. |

यदि उपर्युक्त आकृति और लक्षणबाले मेघ युद्धस्थल में स्थित सेना पर बहुत वर्षा करें तो सेना और उसके नायक सभी मारे जाते हैं ॥२०॥

रक्तेः पांशुः सधूमं वा क्षौद्रं^१ केशाऽस्थिशर्कराः^२ ।

मेघाः वर्षन्ति विषये यस्य राज्ञो हतस्तु सः ॥२१॥

धूलि, धूध्र, मधु, केश, अस्थि और खांड के समान लाल वर्ण के मेघ वर्षा करें तो देश का राजा मारा जाता है ॥२१॥

क्षार वा कटुकं वाऽथ^३ "दुर्गन्धं "सस्यनाशनम् ।

यस्मिन् देशोऽभिवर्षन्ति मेघा देशो^४ विनश्यति" ॥२२॥

जिस देश में धात्य वो नाश करनेवाले क्षार—लवणयुक्त, कटुक—चर्परे रस और दुर्गन्धित रस की मेघ वर्षा करें तो उस देश का नाश होता है ॥२२॥

प्रयात^५ पार्थिवं यत्र मेघो वित्रास्य वर्षति ।

वित्रस्तो बध्यते राजा विपरीतस्तदाऽपरे ॥२३॥

राजा के प्रयात के समय त्रासयुक्त मेघ वर्षा से तो राजा का आसयुक्त वध होता है । यदि त्रासयुक्त वर्षा न हो तो ऐसा नहीं होता ॥२३॥

सर्वत्रैव प्रयाणेन नृपो येनाभिविच्यते ।

रुधिरादि^६-विशेषेण सर्वघाताय निदिशेत् ॥२४॥

राजा के आत्रमण के गमय वर्षा से देश का सिन्नन हो तो सबों के घात की सम्भावना समझनी चाहिए ॥२४॥

मेघाः सविद्युतश्चेव^७ सुगत्थाः सुस्वराश्च^८ ये ।

सुवेषाश्च^९ सुद्वाताश्च^{१०} सुधियाश्च सुभिक्षदाः ॥२५॥

विजली सहित, गुणन्धित, मधुर श्वर वाले, सुन्दर वर्ण और आकृति वाले, शुभ घोणा वाले और अमृत समान वर्षा करने वाले मेघों को सुभिक्ष का सूचक समझना चाहिए ॥२५॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सन्ध्यायामपि यानि च ।

मेघेषु^{११} तानि सर्वाणि समासव्यासतो विदुः ॥२६॥

1. केद्रं म० B. 2. रनकेद्रा म० B. 3. इरं म० B. 4. वस्ता म० A. 5. भेषधिष्ठे । 6. विनश्यन्ति म० C. 7. प्रयात्त म० । 8. नृप सरुधिराज्यं च म० A, B, D. । 9. सोवता म० C. । 10. गुरुमा म० C. । 11. अवेषा म० C. । 12. सुवेषा म० C. । 13. सुधी पाश्वं म० B. गधाया म० D. श्वस्या म० C. । 14. अमेषे म० C. ।

बादल, उल्का और सन्ध्या वा जैसा निरूपण किया गया है, उसी प्रकार का संक्षेप और विस्तार से मेघों वा भी समझना चाहिए ॥२६॥

उल्कावत् साधनं १ज्ञेयं मेघेष्वपि २तदादिशेत् ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि ३दातानामपि लक्षणम् ॥२७॥

इस मेघवर्णन अध्याय का भी उल्का की तरह ही फलादेश अवगत कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् अब आगे वायु-अध्याय का निरूपण किया जायगा ॥२७॥

इति नैर्गच्छे भद्रबाहुके निमित्ते मेघकाण्डे नामाष्टमोऽध्यायः ।

विवेचन—मेघों वी आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा प्रभृति के द्वारा शुभा-शुभ फल का निरूपण मेघ-अध्याय में किया गया है। यहाँ एक विशेष बात यह है कि मेघ जिस स्थान में दिखलाई पड़ते हैं उसी स्थान पर यह फल विशेष रूप से धृत होता है। इस अध्याय का प्रयोजन भी वर्षा, शुक्राव, फलाल की उत्पत्ति इत्यादि के सम्बन्ध में ही विशेष इस से पात्र बताया गया है। यों तो बहुले के जन्मादर्शों द्वारा भी वर्षा और शुभिक्ष भम्बन्धी फलादेश निरूपित किया गया है, पर इस अध्याय में भी यही फल प्रतिपादित है। मेघों की आकृतियाँ चारों वर्ण के व्यक्तियों के लिए भी शुभाशुभ बताती हैं। अतः सामाजिक और वैयक्तिक इन दोनों ही दृष्टिकोणों से मेघों के फलादेश का विवेचन किया जाएगा।

मेघों का विचार क्रहनु के क्रमानुसार करना चाहिए। वर्षा क्रहनु के मेघ के बल वर्षा की सूचना देते हैं। अग्रद क्रहनु के मेघ शुभाशुभ अंतर प्रकार का फल सूचित करते हैं। ग्रीष्म क्रहनु के मेघों से वर्षा की सूचना तो मिलती ही है, पर ये विजय, यात्रा, लाभ अलाभ, डाट, अनिष्ट, जीवन, मरण आदि को भी सूचित करते हैं। मेघों की भी भाषा होती है। जो व्यक्ति मेघों की भाषा—गर्जना को समझ लेते हैं वे कई प्रकार के भहत्त्वपूर्ण फलादेशों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पशु, पक्षी और मनुष्यों के समान मेघों भी भी भाषा होती है और गर्जन-तज्जन द्वारा अनेक प्रथाएँ वा शुभाशुभ प्रकट हो जाता है। यहाँ गर्वप्रधम ग्रीष्म क्रहनु के मेघों का निरूपण किया जाएगा। ग्रीष्म क्रहनु का समय पाल्युन से ज्येष्ठ तक माना जाता है। यदि फाल्गुन के भट्टीन में अंजन के समान काल-काले मेघ दिखलाई पड़े तो इनका फल वर्षाकों के लिए शुभ, यजप्रद और आथिक लाभ देने वाला होता है। जिस स्थान पर उक्त प्रकार के मेघ दिखलाई पड़ते हैं, उस स्थान पर अन्न का भाव सस्ता होता है, व्यापारिक वस्तुओं में हानि तथा भोगोपभोग की वस्तुएँ प्रचुर

परिमाण में उपलब्ध होती है। वस्त्र के भाव साधारण रूप से कुछ कंचे चढ़ते हैं। स्नानध, श्वेत और मनोहर आकृति वाले मेघ जनता में शान्ति, सुख, लाभ और हर्ष सूचक होते हैं। व्यापारियों को वस्तुओं में साधारणतया लाभ होता है। ग्रीष्म ऋतु के अवशेष महीनों में सजल मेघ जहाँ दिखलाई पड़े उस प्रदेश में दुष्प्रिय, अन्त की फसल की कमी, जनता वो आर्थिक कष्ट एवं अपराध में मनमुटाव उत्पन्न होता है। चैत्र मास के कृष्ण पक्ष के मेघ साधारणतया जनता में उल्लास, आगामी खेती का विकास और सुभिक्ष की सूचना देते हैं। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को वर्षा करने वाले मेघ जिस क्षेत्र में दिखलाई पड़े उस क्षेत्र में आर्थिक संकट रहता है। हैजा और चेत्तक की बीमारी विशेष रूप से फैलती है। यदि इस लिं उक्त वर्ष के मेघ आकाश में संघर्ष करते हुए दिखलाई पड़े तो वहाँ सामाजिक संघर्ष होता है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा वो भी मेघों की स्थिति का विचार किया जाता है। यदि इस दिन गर्जन-तर्जन करते हुए मेघ आकाश में बूँदा-बूँदी करें तो उस प्रदेश के लिए भवित्वायक समझना चाहिए। फसल की उत्पत्ति भी नहीं होती है। तथा जनता में परस्पर संघर्ष होता है। चैत्री पूर्णिमा को पीतवर्ण के मेघ आकाश में घूमते हुए दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष उस प्रदेश में फसल की क्षति होती है। तथा पन्द्रह दिनों तक अन्त का भाव महेषा रहता है। सोना और चाँदी के भाव में घटा-बढ़ी होती है।

शरद ऋतु के मेघ वर्षा और सुभिक्ष के साथ उस स्थान की आर्थिक और सामाजिक उन्नति-अवनति की भी सूचना देते हैं। यदि कार्तिक की पूर्णिमा को मेघ वर्षा करें तो उस प्रदेश की आर्थिक स्थिति दृढ़तर होती है, फसल भी उत्तम होती है तथा समाज में शान्ति रहती है। पशुधन की बृद्धि होती है, दूध और पी की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण में होती है। उस प्रदेश के व्यापारियों को भी अच्छा लाभ होता है। जो व्यक्ति कार्तिकी पूर्णिमा को नील रंग के वादलों को देखता है, उसके उदर में भयंकर पीड़ा तीन महीनों के भीतर होती है। पीत वर्ण के मेघ उक्त दिन को दिखलाई पड़े तो किसी स्थान विशेष से आर्थिक लाभ होता है। श्वेत वर्ण के मेघ के दर्शन से व्यक्ति को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मार्गशीर्ष मास की कृष्ण प्रतिपदा को प्रातःकाल वर्षा करने वाले मेघ गोद्यूम वर्ण के दिखलाई पड़े तो उस प्रदेश में महामारी की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस दिन कोई व्यक्ति स्नानध और सोम्य मेघों का दर्शन करे तो अपार लाभ, रुक्ष और विकृत वर्ण के मेघों का दर्शन करे तो आर्थिक क्षति होती है। उक्त प्रकार के मेघ वर्षा की भी सूचना देते हैं। आगामी वर्ष में उस प्रदेश में फसल अच्छी होती है। विशेषतः गन्ना, कपास, धान, गेहूँ, चना और तिलहन वी उपज अधिक होती है। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार के मेघ का दर्शन लाभप्रद होता है। मार्गशीर्ष

कुण्डा अमावस्या को छिद्र युक्त मेघ बूंदा-बूंदी के साथ प्रातःकाल से सन्ध्याकाल तक अवस्थित रहें तो उस प्रदेश में वर्तमान वर्ष में फसल अच्छी तथा आगामी वर्ष में अनिष्टकारक होती है। इस महीने की पूर्णिमा को सन्ध्या समय रक्त-पीत वर्ण के मेघ दिखलाई पड़े तथा गर्जन के साथ वर्षण भी करें तो निश्चय से उस प्रदेश में आगामी आपाह मास में सम्यक् वर्षा होती है तथा वहाँ के निवासियों को सन्तोष और शान्ति की ग्राहित होती है। यदि उक्त दिन प्रातःकाल आकाश निरभ्रहे तो आगामी वर्ष वर्षा साधारण होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है। जो व्यक्ति उक्त तिथि को अंजनवर्ण के समान मेघों का दर्शन प्राप्तकाल ही करता है, उसे राजसम्मान प्राप्त होता है, तथा किसी प्रकार की उपाधि भी उसे प्राप्त होती है। रक्त वर्ण के मेघ का दर्शन इस दिन व्यक्तिगत रूप से अनिष्टकारक माना गया है। यदि कांटि व्यक्ति उक्त तिथि को मध्य रात्रि में सछिद्र आकाश का दर्शन करे तथा दर्शन करने के बाद ही समय उपरान्त वर्षा होने लगे तो व्यक्तिमत रूप से इस प्रकार के मेघ का दर्शन बहुत उत्तम होता है। पृथ्वी से निधि प्राप्त होती है तथा धार्मिक कार्यों के करने में विशेष प्रवृत्ति बढ़ती है। संसार में जिन-जिन स्थानों पर उक्त तिथि को वर्षा करते हुए मन्त्र देखे जाते हैं, उन-उन स्थानों पर सुभिक्ष होता है तथा वर्तमान और आगामी दोनों ही वर्ष थ्रेष्ठ समझे जाते हैं। पीप मास की अमावस्या को आकाश में विजली चमकने के उपरान्त वर्षा करते हुए मेघ दिखलाई पड़े तो उत्तम फल होता है। इस दिन श्वेत वर्ण के मेघों का दर्शन बहुत शुभ माना जाता है। पीप मास की अमावस्या को यदि सोमवार, शुक्रवार और गुरुवार हों और इस दिन मेघ आकाश में घिरे हुए हों तो जल की वर्षा आगामी वर्ष अच्छी होती है। फसल भी उत्तम होती है और प्रजा भी सुखी रहती है। यदि यही तिथि शनिवार, रविवार और मंगलवार को हो तथा आकाश निरभ्रहे या सछिद्र विवृत वर्ण के मेघ आकाश में आच्छादित हों तो अनावृति होती है और अन्त महंगा होता है। डाक वाकि ने हिन्दी में पीपमास की तिथियों के मेघों का फलादेश निम्न प्रकार वर्तलाया है:—

पीप इजोडिया सप्तमी अष्टमी नवमी वाज ।
डाना जलद देखे प्रजा, पूरण सब विधि काज ॥

अथात्—पीप शुक्ला प्रतिपदा, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथि को यदि आकाश में बादल दिखलाई पड़े तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है। धन-धान्य की उत्पत्ति अधिक होती है और सर्वत्र सुभिक्ष दिखलाई पड़ता है। जो व्यक्ति उन तिथियों में प्रातःकाल या साथंकाल मध्यूर और हंसाकृति के मेघों का दर्शन करता है वह जीवन में सभी प्रकार की इच्छाओं को प्राप्त कर लेता है। उक्त

प्रकार के मेघ का दर्शन व्यक्ति और समाज दोनों के लिए मंगल करने वाला होता है।

पौषबदी सतमी तिथि माही, जिन जल बादल गर्जत आहीं ।
पूनो तिथि सावन के मास, अतिशय वर्षा राखो आस ॥
पौषबदी दशमी तिथि माही, जो वर्ष मेवा अधिकाहीं ।
तो सावन वदि दशमी दरसे, सो मेवा पुहुमी बहु बरसे ॥
रवि था रवि गुत औ अंगार, पुस अमावस कहत मोक्षार ।
अपन अपन घर चेतहु जाय, रत्नक मोल अन्न बिकाय ॥

पौषबदी सप्तमी को दिना जल बरसाये बादल गर्जना करें तो श्रावण पूर्णिमा को अत्यन्त वर्षा होती है। यदि पौषबदी दशमी तिथि वो अधिक वर्षा हो तो श्रावण बदी दशमी को इतना अधिक जल बरसता है कि पानी पृथ्वी पर नहीं रामाता। पौष अमावस्या, गनिवार और रविवार को मंगलवार होतो अन्न का भाव अत्यन्त मेहमा होता है। वर्षा की कमी रहती है। पांच मास में वर्षा होना और मेवों का छाया रहना अच्छा समझा जाता है। यदि इस महीने में आकाश निरप्रदिखलाई पड़े तो दुर्काल के लक्षण समझना चाहिए। पौष पूर्णिमा को प्रातःकाल श्वेत रंग के बादल आकाश में आच्छादित हों तो आपाढ़ और श्रावण मास में अच्छी वर्षा होती है और सभी वर्ष याले व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति होती है। यदि पौष शुक्ला चतुर्दशी को आकाश में गर्जना करते हुए बादल दिखलाई पड़ें तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा होती है। माव मास के मेवों का फल डाक ने निम्न प्रकार बतलाया है—

माघ बदी रातमी के ताई, जो विज्जु चमके नभ माई ।
मास वाग्हों धरसे मेह, यत सोचो चिन्ता तज देह ॥
भाध सुदी गडिबा के मध्य, दमके विज्जु गरजे बद ।
तेल आस सुरही दीनत भार, मँहगो होवे 'डाक' गोआर ॥
माघ बदी तिथि अष्टमी, दशमी पूस अन्हार ।
'डाक' मेघ देखी दिना, सावन जलद अपार ॥
माघ द्वितीया चन्द्रमा, वर्षा विजुली होय ।
'डाक' कहशि सुतह नृपति, अन्नक महँगी होय ॥
माघ तृतीया सूदि में, वर्षा विजुली देख ।
'डाक' कहशि जो गहँम अति, मेहम वर्ष दिन लेख ॥
माघ सुदी के चौथ में, जी लागं धन देख ।
मँहगो होवे नारियल, रहे न पानहि शेष ॥

माघ पंचमी चन्द्र तिथि, वह्य जो उत्तर वाय ।
 तो जानी भरि भाद्र में, जल विन पृथ्वी जाय ॥
 माघ सुदी पृष्ठी तिथि, यदि वर्षा न होय ।
 'हाक' कपास मंडगो मिले, राखें ता नहि कोय ॥

अर्थ—माघ बदी सप्तमी के दिन आकाश में विजली चमके और वरसते हुए मेघ दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल होती है और वर्षा भी उत्तम होती है । बारह महीनों ही वृष्टि होती रहती है, फसल उत्तम होती है । माघ सुदी प्रतिपदा के दिन आकाश में विजली चमके, बादल गर्जना करें तो तेल, धूत, गुड़ आदि पदार्थ मेहगे होते हैं । इस दिन का मेघदर्शन वस्तुओं की मौहगार्द सूचित करता है । माघ कृष्ण अष्टमी को वर्षा हो तो सुभिक्ष सूचक है । मेघ स्तिंश्च और सौभ्य आकृति के दिखलाई पड़े तो जनता के लिए सुखदारी होते हैं । माघ बदी अष्टमी और पौष बदी दशमी को आवाश में बादल हों तथा वर्षा भी हो तो आवण के महीने में अच्छी वर्षा होती है । माघ शुक्ला द्वितीया को वर्षा और विजली दिखलाई पड़े तो जी और गेहूँ अत्यन्त मौहगे होते हैं । व्यापारियों को उक्ता दीनों प्रकार के अनाज के संग्रह में विशेष लाभ होता है । यद्यपि सभी प्रकार के अनाज मौहगे होते हैं, फिर भी गेहूँ और जी वीं तेजी विशेष रूप से होती है । यदि माघ शुक्ला चतुर्थी के दिन आकाश में बादल और विजली दिखलाई पड़े तो नारियल विशेष रूप से मौहगा होता है । यदि माघ शुक्ला पंचमी के बायु के साथ मेघों का दर्शन हो तो भाद्रपद में जल के विना भूमि रहती है । माघ शुक्ला पाठी की आकाश में केवल मेघ दिखलाई पड़े और वर्षा न हो तो कपास मौहगा होता है । माघ शुक्ला अष्टमी और नवमी को विचित्र धण के मेघ आकाश में दिखलाई पड़े और हल्की सी वर्षा हो तो भाद्रपद मास में खूब वर्षा होती है ।

वर्षा क्रतु के मेघ स्तिंश्च और सौभ्य आकृति के हों तो खूब वर्षा होती है । आपाड़ कृष्णा प्रदिवादा के दिन मेघ गर्जन हो तो पृथ्वी पर अकाल पड़ता है और गुड़ होते हैं । आपाड़ कृष्णा एकादशी को आकाश में बायु, मेघ और विजली दिखलाई पड़े तो आवण आर भाद्रपद में अल्पवृष्टि होती है । आपाड़ शुक्ला तृतीया बृद्धवार को हो और इस दिन आकाश में मेघ दिखलाई पड़े तो अधिक वर्षा होती है । आवण शुक्ल सप्तमी के दिन आकाश मेशाच्छन्न हो तो देवोत्थान एकादशी पर्यन्त जल वरसता है । आवण कृष्ण चतुर्थी को जल वरसे तो उस दिन से 45 दिन तक खूब वर्षा होती है । उक्त तिथि को आकाश में केवल मेघ दिखलाई पड़े तो भी फगन अच्छा होती है । आवण बृद्धी पंचमी को वर्षा हो और आकाश में पैथ छाय रह तो चातुर्मास पर्यन्त वर्षा होती रहती है । आवण मास की अमावस्या सोमवार को हो और इस दिन आकाश में भन मेघ दिखलाई पड़े तो दुधाल समझना

चाहिए। इसका फल कहीं वर्षा, कहीं सूखा तथा कहीं पर महामारी और कहीं पर उपद्रव होना समझना चाहिए। भाद्रपद सुदी पंचमी स्वाती नक्षत्र में हो और इस दिन मेघ आकाश में सधन हों तथा वर्षा हो रही तो सर्वत्र सुख-शान्ति व्याप्त होती है और जगत् के सभी दुःख दूर हो जाते हैं तथा सर्वत्र मंगल होता है। इस महीने में भरणी नक्षत्र में वर्षा हो और मेघ आकाश में व्याप्त हों तो सर्वत्र सुभिक्ष होता है। गेहूं, चना, जौ, धान, गन्ना, कपास और तिलहन की फसल खूब उत्पन्न होती है। भाद्रपद मास की पूणिमा को जल वरसे तो जगत् में सुभिक्ष होता है। भाद्रपद मास में अजिबनी और रोहिणी नक्षत्र में आकाश में वादल व्याप्त हों, पर वर्षा न हो तो पशुओं में भयंकर रोग फैलता है। आद्री और पुष्य में रक्त वर्ष के मेघ संघर्षरत दिखलाई पड़ें तो विद्रोह और अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। यदि इन नक्षत्रों में वर्षा भी हो जाए तो शुभ फल होता है। थवण नक्षत्र की वर्षा उत्तम मानी गयी है। भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा को थवण नक्षत्र हो और आकाश में मेघ हों तो सुभिक्ष होता है।

नवमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वातलक्षणमुत्तमम्^१ ।

प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः^२ ॥1॥

अब मैं वायु का उत्तम लक्षण पूर्वाचार्यों के अनुसार बहुतेंगा। वायु के द्वारा निरूपित फलादेश के भी दो भेद किये जा सकते हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥1॥

वर्षे भयं तथा क्षेमं राज्ञो जय-पराजयम् ।

मारुतः कुरुते लोके जन्तुनां पुण्यपायज्ञम्^३ ॥2॥

वायु संसारी प्राणियों के पुण्य एवं पाप से उत्पन्न होने वाले वर्षण, भय, क्षेम और राजा के जय-पराजय को सूचित करती है ॥2॥

1. संक्रमम् मु० C. । 2. पूर्वतः मु० । 3. पापज्ञाम् मु० ।

^१आदानाच्चैव पाताच्च पचनाच्च विसर्जनात् ।

मारुतः सर्वशभीणां बलवान्नायकश्च सः ॥३॥

आदान, पातन, पचन और विसर्जन का कारण होने से मारुत बलवान् होता है और सब गर्भों का नायक बन जाता है ॥३॥

दक्षिणस्थां दिशि यदा वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।

^२समुद्रानुशयो^३ नाम स गर्भीणां तु सम्भवः ॥४॥

दक्षिण दिश का वायु जब दक्षिण दिश में बहता है, तब वह 'समुद्रानुशय' नाम का वायु कहलाता है और गर्भों को उत्पन्न करने वाला भी है ॥४॥

तेन सञ्जनितं गर्भं वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।

धारयेत् धारणे^५ मासे पात्रयेत् पात्रमेत्यथा ॥५॥

उस समुद्रानुशय वायु से उत्पन्न गर्भ को दक्षिण दिश का वायु धारण मास में धारण करता है तथा पात्रमेत्यथा मास में पकाता है ॥५॥

धारितं पात्रितं गर्भं वायुरुत्तरकाष्ठिकः ।

प्रमुचति यतस्तोयं वर्षं तन्मस्तुच्यते ॥६॥

उस धारण किये तथा पात्र को प्राप्त हुए मेघ गर्भ को चूंकि उत्तर दिश का वायु यत्तो नाम है अतएव वर्ष करने वाले उस वायु को 'महत्' कहते हैं ॥६॥

आषाढीपूर्णिमायां तु पूर्ववातो यदा भवेत् ।

प्रवाति दिवसं सर्वं सुवृष्टिः सुषमा^६ तदा ॥७॥

आषाढी पूर्णिमा के दिन पूर्व दिश का वायु यदि सारे दिन चर्न तो वर्ष काल में अच्छी वर्षा होती है और यह वर्ष अच्छा व्यतीत होता है ॥७॥

वाप्यानि सर्वजीवानि^७ जायन्ते निरूपद्रवम्^८ ।

शूद्राणामुपघाताय सोऽत्र लोके परत्र च ॥८॥

उक्त प्रकार के वायु में बोये गये सम्पूर्ण बीज उत्तम गीति से उत्पन्न होते हैं। परन्तु शूद्रों के लिए यह वायु इस लोक और परलोक में उपघात का कारण है ॥८॥

1. अवातं चेत् वातं च पात्रमश्च दिशेन्नः मु० A., D. । 2. धारयद्वागरणांसौ मु० A. । 3. विशेषो मु० B. । 4. मध्यम -०० C. । 5. वारणे भु० A. । 6. सुवृष्टिश्च तु तदा मा० मु० । 7. सर्वजीवानि भु० B. । 8. निरूपद्रवः मु० C. ।

आषाढोपूर्णिमायां तु पश्चिमे यदि मास्तः ।
मध्यमं वर्षणं सस्यं धान्यार्थो मध्यमस्तथा ॥14॥

आषाढी पूर्णिमा को यदि पश्चिम वायु चले तो मध्यम प्रकार की वर्षा होती है । तृण और अन्न का मूल्य भी मध्यम—न अधिक महंगा और न अधिक सस्ता रहता है ॥14॥

उद्दिजन्ति^१ च^२ राजानो^३ वैराणि च^४ प्रकुर्वते ।
परस्परोपघाताय^५ स्वराष्ट्रपरराष्ट्रयोः ॥15॥

उक्त प्रकार की वायु के चलने से राजा लोग उद्दिग्न हो उठते हैं और अपने तथा दूसरों के राष्ट्रों की परस्पर में घात करने के लिए वैराण्यावधारण करने लगते हैं । तात्पर्य यह है कि आषाढी पूर्णिमा को पश्चिम दिशा की वायु चले तो देश और राष्ट्र में उपद्रव होता है । प्रशासन और नेताओं में मतभेद बढ़ता है ॥15॥

आषाढोपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरो यदि^६ ।
वापयेत् सर्वबोजानि सस्यं ज्येष्ठं समद्ध्यति ॥16॥

आषाढी पूर्णिमा को उत्तर दिशा की वायु चले तो सभी प्रकार के बीजों को बोंदेना चाहिए; क्योंकि उक्त प्रकार के वायु में बोये गये बीज बहुतायत से उत्पन्न होते हैं ॥16॥

क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं प्रशान्ता^७ पाथिकास्तथा ।
बहूदकास्तदा^८ मेघा मही^९ धर्मोत्सवाकुला ॥17॥

उक्त प्रकार की वायु क्षेम, वृश्छल, जारोग्य की वृद्धि का सूचक है, राजा—प्रशासक परस्पर में शान्ति और प्रेम से निवास करते हैं, प्रजा के साथ प्रशासनों का व्यवहार उत्तम होता है । मेघ बहुत जल वरसात है और पृथ्वी धर्मोत्सवों से युक्त हो जाती है ॥17॥

आषाढोपूर्णिमायां तु वायुः स्यात् पूर्वदक्षिणः ।
राजमृत्यु^{१०} विजानोयाच्चित्रं सस्यं तथा जलम् ॥18॥

1. उद्गमदत्ते मु० A, B, D । 2-3. वैरा राजा मु० A, तथा राजी मु० B, यथा राजा मु० D । 4. उद्दिग्नते मु० C, प्रवर्त्ति मु० D । 5. राजानि प्रशासने मु० A, । 6. तथा मु० । 7. वर्षानो मु० A । 8. वैराण्यका मु० C । 9. महा मु० A, D, यथा मु० C । 10. राजी मु० A । 11. मुखं मु० ।

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पूर्व और पश्चिम के बीच—अग्निकोण का वायु चले तो प्रशासक अथवा राजा की मृत्यु होती है। शस्य तथा जल की स्थिति चित्र-विचित्र होती है ॥18॥

ववचिन्निष्पद्यते सस्यं ववचिच्छापि विषयाते ।

धान्यार्थे मध्यमे जेयः तदाऽनेश्च भयं नृणाम्¹ ॥19॥

धान्य की उत्पत्ति कहीं होती है और कहीं उस पर आपत्ति आ जाती है। मनुष्य की धान्य का लाभ मध्यम होता है और अग्निभय बना रहता है ॥19॥

आषाढ़ीपूर्णिमायां तु वायुः स्थाद् दक्षिणापरः ।

सस्यानामुपघाताय चोराणां तु विवृद्धये² ॥20॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा अर्थात् मैर्कृत्य कोण का वायु चले तो वह धान्यवातक और चोरों की वृद्धिकारक होती है ॥20॥

भस्मपांशुरजस्कोण्ठ यदा³ भर्वति मेदिनी ।

सर्वत्यागं तदा कृत्वा कर्त्तव्यो धान्यसंग्रहः ॥21॥

उस समय पृथ्वी भस्म, धूलि एवं रजकण से व्याप्त हो जाती है—अनावृष्टि के कारण पृथ्वी धूलि-मिट्ठी से व्याप्त हो जाती है। अतः समस्त वस्तुओं को त्याग कर धान्य का संग्रह करना चाहिए ॥21॥

विद्रवन्ति च राष्ट्राणि क्षेयन्ते नगराणि च ।

श्वेतास्थिर्मेदिनी जेया मांसशोणितकर्दमा ॥22॥

उक्त प्रकार की वायु चलन में राष्ट्रों में उपद्रव पैदा होते हैं और नगरों का क्षय होता है। पृथ्वी श्वेत हड्डियों में भर जाती है और मांस तथा खून की कीचड़ से सराबोर हो जाती है ॥22॥

आषाढ़ीपूर्णिमायां तु वायुः स्थादुत्तरापरः ।

मक्षिकादंशभशका जायन्ते प्रबलास्तदा ॥23॥

मध्यमं ववचिदुत्कृष्टं वर्षं सस्यं च जायते ।

नूनं च मध्यमं किञ्चिद् धान्यार्थं तत्र⁴ निदिशेत्⁵ ॥24॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि वायु उत्तर और पश्चिम के बीच के कोण—

1. अर्थात् आ० । 2. गस्यदूयः मू० A. । 3. यदा मू० A. । 4. काण्डम् मू० ।

5-6. नात्र संसयः मू० C. । 5चोराणां समुपद्वयम् मू० C. ।

वायव्य कोण की चले तो मक्खी, डॉस और मच्छर प्रवल हो उठते हैं। वर्षा और धान्योत्पत्ति कहीं मध्यम और कहीं उत्तम होती है और कुछ धान्यों का मूल्य अब लाभ निश्चित रूप से मध्यम समझना चाहिए ॥23-24॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः पूर्वोत्तरो यदा ।

वापयेत् सर्वबीजानि तदा चौराश्च घातयेत् ॥25॥

स्थलेष्वपि च यद्बीजमुप्यते तत् समृद्ध्यर्थत् ।

क्षेमं चैव सुभिक्षं च भद्रवाहुवचो यथा ॥26॥

बहुदका सस्यवती यज्ञोत्सवसमाकुला ।

प्रशान्तडिस्म-डमरा शुभा भवति मेदिनी ॥27॥

आषाढी पूर्णिमा को यदि पूर्व और उत्तर दिशा के बीच का—ईशान कोण का वायु चले तो उससे जोगों का घात होता है अर्थात् जोगों का उपदेव आम होता है। उस समय सभी प्रकार के बीज बोना शुभ होता है। रथलों पर अर्थात् कंकरीली, पथरीली जमीन से भी बोया हुआ बीज उगता तथा समृद्धि को प्राप्त होता है। सर्वत्र क्षेम और सुभिक्ष होता है, ऐसा भद्रवाहु स्वर्गों का वचन है। साथ ही पृथ्वी बहुजल और धान्य से सम्बन्ध होती है, पूजा-प्रतिष्ठादि महोत्सवों से परिपूर्ण होती है और सब विडम्बनाएँ दूर होकर प्रशान्त वातारण को लिये मंगलमय हो जाती हैं। नगर और देश में शान्ति व्याप्त हो जाती है ॥25-27॥

पूर्वोऽ वातः^१ स्मृतः श्रेष्ठः तथा चाप्युत्तरो भवेत् ।

उत्तमस्तु^२ तथेशानो मध्यमस्त्वपरोत्तरः ॥28॥

अपरस्तु तथा न्यूनः^३ शिष्टोऽ वातः^४ प्रकीर्तिः ।

पाये नक्षत्रकरणे मुहूर्ते च तथा भूशम् ॥29॥

पूर्व दिशा का वायु श्रेष्ठ होता है, इसी प्रकार उत्तर का वायु भी श्रेष्ठ कहा जाता है। ईशान दिशा का वायु उत्तम होता है। वायव्यकोण तथा ईश्विम का वायु मध्यम होता है। शेष दक्षिण दिशा, अग्निकोण और नैऋत्यकोण का वायु अधम कहा गया है, उस समय नक्षत्र, करण तथा मुहूर्त यदि अणुभ हों तो वायु भी अधिक अधम होता है ॥28-29॥

पूर्ववातं यदा हन्यादुदीर्णे दक्षिणोऽनिलः^५ ।

न तत्र वापयेद् धात्यं कुर्यात् सञ्चयमेव च ॥30॥

1-2. पूर्वोत्तर मूः C. । 3. उत्तर मूः A. B. D. । 4. परोत्तर मूः A. परोत्तर मूः C. । 5. न्यूनः P. A., न्यूनः मूः B. D. । 6-7. जट्ट वाता मूः A. शिष्टोऽव्यप्ति मूः C. शिष्टा वाता मूः D. । 8. दक्षिणात्तलः मूः A. दक्षिणोऽनिलः मूः B. ।

**दुर्भिक्षं चाप्यवृष्टिं च शस्त्रं रोगं जनक्षयम् ।
कुरुते सोऽनिलो घोरं आषाढाभ्यतरं परम् ॥३१॥**

आषाढ़ी पूणिमा के दिन पूर्व के चलते हुए वायु को यदि दक्षिण का उठा हुआ वायु परास्त करके नष्ट कर दे तो उस समय धान्य नहीं बोना चाहिए। बल्कि धान्यसंचय करना ज्यादा अच्छा होता है, क्योंकि वह वायु दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, शस्त्रसंचार और जनक्षय का कारण होता है ॥३०-३१॥

**पापघाते तु वातानां२ श्रेष्ठं३ सर्वत्र चादिशेत् ।
'श्रेष्ठानपि यदा हन्त्यः पापाः५ पापं६ तदाऽदिशेत् ॥३२॥**

श्रेष्ठ वायुओं में से किसी के द्वारा पापवायु का यदि घात हो तो उसका फल सर्वत्र श्रेष्ठ कहना ही चाहिए और पापवायुएँ श्रेष्ठ वायुओं का घात करें तो उसका फल अश्रुभ ही जानना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार के वायु की प्रधानता होती है, उसी प्रकार वा शुभाशुभ फल होता है ॥३२॥

**यदा तु वाताऽचत्वारो भृशं वान्त्यपसव्यतः७ ।
अल्पोदकं८ शस्त्राघातं९ भयं व्याधि च कुर्वते ॥३३॥**

यदि पूर्व, पञ्चम, दक्षिण और उत्तर के चारों पवन अपसव्य मार्ग में— दाहिनी ओर से तेजी के साथ चलें तो वे अत्यवर्षि, धान्यनाश और व्याधि उत्पन्न होने की सूचना देते हैं। उस वाते उम वर्ष घटित होती है ॥३३॥

**प्रदक्षिणं यदा वान्ति त एव सुखशीतलाः ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं १०राज्यवृद्धिर्जयस्तथा ॥३४॥**

वे ही चारों पवन यदि प्रदक्षिणा करते हुए चलते हैं तो सुख एवं शीतलता को प्रदान करने वाले होते हैं। तथा लोगों को क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, राजवृद्धि और विजय वी सूचना देनेवाले होते हैं ॥३४॥

**समन्ततो यदा वान्ति परस्परविघातिनः११ ।
शस्त्रं१२ जनक्षयं१३ रोगं सस्यघातं च कुर्वते ॥३५॥**

चारों पवन यदि सब ओर से एक दूसरे का परस्पर यात करते हुए चलें तो शस्त्रभ्य, प्रजानाश, रोग और धान्यघात करनेवाले होते हैं ॥३५॥

1. व्यातेषु मू० A. । 2. नागानां मू० A. । 3. श्रेष्ठः गु० A. D. । 4. श्रेष्ठानांगि मू० A. । 5-6. पतोत्युपग्र. मू० । 7. अपमर्वः मू० A. । 8. समन्तः मू० C. । 8. अल्पोदम् मू० । 9. सस्यसंधातं मू० । 10. राज्यवृद्धिर्जयस्तथा मू० । 11. परिविघातिलः मू० A. । 12. सत्वं मू० A. । 13. जनक्षयं मू० C. ।

एवं विज्ञाय वातानां¹ संयता भैक्षवतिनः ।

प्रशस्तं यत्र पश्यन्ति बसेयुस्तत्र निश्चितम्² ॥ 36॥

इस प्रकार पवनों और उनके शुभाशुभ फल को जानकर भिक्षावृत्तिवाले साधुओं को चाहिए, जिसे जहाँ बाधारहित प्रगरत स्थान देखें वहीं निश्चित रूप से निवास करें ॥36॥

आहारस्थितयः सर्वे जंगमस्थावरास्तथा ।

जलसम्भवं च सर्वं तस्यापि जनकोऽनिलः ॥37॥

जंगम—चल और स्थावर समस्त जीवों की स्थिति आहार पर निर्भर है— सबका आधार आहार है और खाद्यपदार्थ जल से उत्पन्न होते हैं तथा जल की उत्पत्ति वायु पर निर्भर है ॥37॥

सर्वकालं प्रवक्ष्यामि वातानां लक्षणं परम्³ ।

आषाढीवत् तत् साध्यं यत् पूर्वं सम्प्रकीर्तितम् ॥38॥

अब पवनों का सार्वकालिक उक्त लक्षण कहेंगा, उसे पूर्व में नहीं हुए आपाही पूर्णिमा के समान सिङ्ग गरना चाहिए ॥38॥

पूर्ववातो यदा तूर्णं सप्ताहं वाति कर्कशः ।

स्वस्थाने नाभिक्षेत् महदुत्पद्यते भयम् ॥39॥

प्राकारपरिखाणो च शस्त्राणां⁴ च समन्ततः ।

निवेदयति राष्ट्राणां विनाशं तादृशोऽनिलः ॥40॥

पूर्व दिशा का पवन यदि कर्कशरूप धारण करके अतिशीघ्र गति से चले तो वह स्वस्थान में वर्षी के न होने को सूचना देता है और उससे अत्यन्त भय उत्पन्न होता है, उस प्रकार का पवन कोट, खाइयों, शस्त्रों और राष्ट्रों का सब ओर से विनाश सूचित करता है ॥39-40॥

सप्तरात्रं दिनार्धं च यः कश्चिद् वाति मारुतः ।

महद्भयं च विज्ञेयं वर्षं वात्य महद् भवेत् ॥41॥

किसी भी दिशा का वायु यदि साक्षे यात दिन तक लगातार चले तो उगे

1. वातान्तु प० C । 2. लक्षणात्मिकम् प० C । 3. विनाश मू० C । 4. निश्चितम् मू० C । 5. जनमंधर्म म० B । 6. जनद ग० । 7-8. लक्षणात्मिकम् ग० A, B, D । 9. शस्त्रकोषभयं तन. म० C । 10. रिवात्मि म० A. विवा चार्ष म० B, दिवा चार्ष म० D ।

महान् भय का सूचक जानना चाहिए अथवा इस प्रकार का वायु अतिवृद्धि का सूचक होता है ॥41॥

पूर्वसन्ध्यां यदा वायुरपसव्यं प्रवर्तते ।
पुरावरोधं कुरुते यायिनां तु जयावहः ॥42॥

यदि वायु अपसव्य मार्ग से 'पूर्व सन्ध्या' को वातान्वित करता है तो वह पुरके अवरोध का घेरे में पड़ जाने का सूचक है। इस समय यायियों—आक्रमणकारियों की विजय होती है ॥42॥

पूर्वसन्ध्यां यदा वायुः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
तागराणां जयं^२ कुर्याद् सुभिक्षं यायिविद्वद्वम् ॥43॥

यदि वह वायु प्रदक्षिणा करता हुआ पूर्वसन्ध्या को व्याप्त करे तो उसे तागरियों की विजय होती है, सुभिक्षा होता है और चढ़कर आनेवाले आक्रमणकारियों को लेने के देने गड़ जाते हैं अर्थात् उन्हें भागना पड़ता है ॥43॥

मध्याह्ने वार्षरात्रे वा । तथा वाऽस्तमनोदये ।
वायुस्तूर्णं यदा वाति तदाऽवृष्टिभयं रुजाम् ॥44॥

यदि वायु मध्याह्न में, अर्षरात्रि में तथा सूर्य के अस्त और उदय के समय शीश गति से चले तो अनावृष्टि, भय और रोग उत्पन्न होते हैं ॥44॥

यदा राजः प्रयातस्य प्रतिलोभोऽनिलो भवेत् ।
अपसव्यो 'समार्गस्थस्तदा सेनावधः' विदुः ॥45॥

यदि राजा के प्रयाण के समय वायु प्रतिलोम—विपरीत वहे अर्थात् उस दिशा को न चलकर जिधर प्रयाण किया जा रहा है, उससे विपरीत जिधर से प्रयाण हो रहा है, जबे तो उसने आक्रमणकारी की सेना का वध समझना चाहिए ॥45॥

अनुलोभो यदा स्निग्धः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
४ तागराणां जयं कुर्यात् सुभिक्षं च प्रदीपयेत् ॥46॥

1. र्षरसन्ध्या द्रवत् पुरः मूँ A., पर्यान्ध्याद्रवत् पर्म् मूँ B. परमध्या प्रवासते मूँ D. 2. भयं मूँ D. 3. विद्वाम् मूँ A. 4. च मूँ S. रुजा मूँ । 6. समार्गस्थ मूँ । यिमार्गस्थो मूँ C. 7. भयं गूँ A. । 8. प्रदीपनस्त्वं चार्येशब्दश्च तदा क्षिप्रं जयावहः मूँ C. ।

यदि वायु स्तिष्ठ हो और प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोपरूप से चले—उसी दिशा की ओर चले जिधर प्रयाण हो रहा है, तो नगरवासियों की विजय होती है और सुभिक्ष की सूचना मिलती है ॥46॥

वशाहं द्वादशाहं वा पापवातो यदा भवेत् ।

अनुबन्धं तदा विन्द्याद् राजमृत्युं जनक्षयम् ॥47॥

यदि अशुभ वायु दस दिन या बारह दिन तक लगातार चले तो उससे सेनादिक का बन्धन, राजा की मृत्यु और मनुष्यों का क्षय होता है, ऐसा समझना चाहिए ॥47॥

यदा भ्रवर्जितो वाति वायुस्तूर्णमकालजः ।

पांशुभस्मसमाकीर्णः सस्यधातो भयावहः ॥48॥

जब अकाल में मेघरहित उत्पात वायु धूलि और भस्म से भरा हुआ चलता है, तब वह शस्त्रघातक एवं महाभयवार होता है ॥48॥

सविद्युत्सरजो वायुरुर्ध्वंगो वायुभिः सह ।

प्रवाति पक्षिशब्देन कूरेण स भयावहः ॥49॥

यदि विजली और धूल से गुक्त वायु अथ वायुओं के साथ ऊर्ध्वगामी हो और कूरणकी के समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयकर होता है ॥49॥

प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुहुर्मुहुः ।

यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते ॥50॥

यदि पवन सब ओर से बारबार शीघ्र गति से चले, तो वह जिया देश की ओर गमन करता है, उस देश को हानि पहुंचाता है ॥50॥

अनुलोपो यदाऽनीके सुगन्धो वाति मारुतः ।

अथत्नतस्ततो राजा जयमाप्नोति सर्वदा ॥51॥

यदि राजा की सेना में सुगन्धित अनुलोप प्रयाण की दिशा में प्रगतिशील एवं चले तो विना धूत के ही राजा सदा विजय को प्राप्त करता है ॥51॥

प्रतिलोपो यदाऽनीके दुर्गन्धो वाति मारुतः ।

तदा यत्नेन साध्यन्ते वीरकीर्तिसुलब्धयः ॥52॥

यदि राजा की सेना में दुर्गन्धित प्रतिलोप—प्रयाण की दिशा में विपरीत

1. मद्रित प्रति में श्लोकों का व्याप्तिक्रम है। आधा श्लोक पूर्व के श्लोक में है आद्या उत्तर उत्तर के श्लोक में। 2. आयतश्च एवो भूः।

दिशा में पवन चले तो उस समय बीर-नीति को उपलब्धिर्था बड़ी ही प्रयत्नसाम्राज्य होती है ॥52॥

यदा सपरिधा सन्ध्या पूर्वो वात्यनिलो भूशम् ।

पूर्वस्मिन्देव दिवभागे पश्चिमा वध्यते चमूः ॥53॥

यदि प्रातः अथवा सायंकाल की सन्ध्या परिधसहित हो—सूर्य को लांघती हुई मेषधो की पंक्ति से युक्त हो—और उस समय पूर्व का वायु अतिवेष से चलता हो तो पूर्व दिशा में ही पश्चिम दिशा की सेना का वध होता है ॥53॥

यदा सपरिधा सन्ध्या पश्चिमो वाति भारतः ।

अपरस्मिन् दिशो भागे पूर्वो स वध्यते चमूः ॥54॥

यदि सन्ध्या सपरिधा—सूर्य को लांघती हुई मेषपंक्ति से युक्त हो और उस समय पश्चिम पवन चले तो पूर्व दिशा में स्थित सेना का पश्चिम दिशा में वध होता होता है ॥54॥

यदा सपरिधा सन्ध्या दक्षिणो वाति भारतः ।

अपरस्मिन् दिशो भागे उत्तरा वध्यते चमूः ॥55॥

यदि सन्ध्या सपरिधा—सूर्य को लांघती हुई मेषपंक्ति से युक्त हो—और उस समय दक्षिण का वायु चलता हो तो उत्तर की सेना का पश्चिम में वध होता है ॥55॥

यदा सपरिधा सन्ध्या उत्तरो वाति भारतः ।

अपरस्मिन् दिशो भागे दक्षिणा वध्यते चमूः ॥56॥

यदि सन्ध्या सपरिधा—सूर्य को लांघती हुई मेषपंक्ति से युक्त हो और उस समय उत्तर वा पवन चले तो दक्षिण की सेना का उत्तर दिशा में वध होता है ॥56॥

प्रशस्तस्तु यदा वातः प्रतिलोमोऽनुपद्रवः ।

तदा यान् प्रार्थयेत् कामांस्तान् प्राप्नोति नराधिपः ॥57॥

जब प्रतिलोम वायु प्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़ता हो तो राजा जिन कार्यों को जाहृता है वे उसे प्राप्त होते हैं—राजा के अभीष्ट की सिद्धि होती है ॥57॥

अप्रशस्तो यदा वायुर्नाभिपश्यत्युपद्रवम् ।

प्रथातस्य नरेन्द्रस्य चमूहरिष्यते सदा ॥58॥

गी: यायु अप्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़े तो युद्ध

के लिए प्रश्नाण चारनेवाले राजा की सेना पदा पराजित होती है ॥58॥

तिथीनां करणानां च मुहूर्तनां च ज्योतिषाम् ।

मारुतो बलवान् नेता तस्माद् यत्रैव मारुतः ॥59॥

तिथियों, करणों, मुहूर्तों और ग्रह-नक्षत्रादियों का बलवान् नेता वायु है, अतः जहाँ वायु है, वही उनका बल समझना चाहिए ॥59॥

बायमानेऽनिले पूर्वे मेघास्तत्र समादिशेत् ।

उत्तरे बायमाने तु जलं तत्र समादिशेत् ॥60॥

यदि पूर्व दिशा में पवन चले तो उस दिशा में मेघों का होना कहना चाहिए और यदि उत्तर दिशा में पवन चले तो उस दिशा में जल का होना कहना चाहिए ॥60॥

ईशाने वर्षणे ज्येष्मानेये नैऋतेऽपि च ।

यात्ये च विष्रहं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥61॥

यदि ईशान कोण में पवन चले तो वर्षा का दोगा जानगा चाहिए और यदि नैऋत्य तथा पूर्व-दक्षिण दिशा में पवन चले तो शुद्ध का दोगा जानगा चाहिए ऐसा भ्रष्टवाहुम्बायी का वर्णन है ॥61॥

सुगन्धेषु प्रशान्तेषु स्तिर्धेषु मार्दवेषु च ।

बायमानेषु^१ वातेषु सुभिक्षं क्षेममेव च ॥62॥

यदि चलने वाले पवन सुगन्धित, प्रशान्त, गिरधू पूर्व कोमल हों तो सुभिक्ष और क्षेम का होना ही कहना चाहिए ॥62॥

महतोऽपि समुद्रभूतान् सतडित् साभिगजितान् ।

मेघान्निहनते वायुनैऋतो दक्षिणाग्निजः ॥63॥

नैऋत्यकोण, अग्निकोण तथा दक्षिण दिशा का पवन उन बड़े मेघों वो भी नष्ट कर देता है—यरगन नर्ती दया, जो चमकनी विभूति और भागी गर्जना में युक्त हों और ऐसे दिक्षार्द्द पढ़ते हों कि उभी वरमेंग ॥63॥

सर्वलक्षणसम्पन्ना मेघा मुख्या जलवहाः ।

मुहूर्ताद्वित्थितो वायुर्हन्त्यात् सर्वोऽपि नैऋतः ॥64॥

शभी शुभ लक्षणों के सम्पन्न जन को धारण करने वाले जो मुख्य मेष हैं, उन्हें भी नैऋत्य दिशा का उठा हुआ पूर्व पवन एक भूतने में नष्ट कर देता है ॥64॥

1. ग्रन्थ में श्लोकों की संख्या में व्यतियम होने से ग्रन्थमें श्लोक नहीं है।

सर्वथा बलवान् वायुः स्वचके निरभिग्रहः ।
करणादिभिः संयुक्तो विशेषण शुभाऽशुभः ॥६५॥

अभिग्रह से रहित वायु स्वचक में सर्वथा बलवान् होता है और करणादिक से संयुक्त हो तो विशेषरूप से शुभाशुभ होता है—शुभ करणादि से युक्त होने पर शुभफलसूचक और अशुभ करणादिक से युक्त होने पर अशुभसूचक होता है ॥६५॥

इति नैर्यन्थे भद्रबाहुके नैमित्ते वातलक्षणे नाम नवमोऽध्यायः ।

विवेचन—वायु के चलने पर अनेक वातों का फलादेश निर्भर है । वायु द्वारा यहाँ पर आचार्य से केवल वर्षा, कृषि और सेना, सेनापति, राजा तथा राष्ट्र के शुभाशुभत्व का निरूपण किया है । वायु विश्व के प्राणियों के पुण्य और पाप के उदय से शुभ और अशुभ रूप में चलता है । अतः निमित्तों द्वारा वायु जपत् के निवासी प्राणियों के पुण्य और पाप को अभिव्यक्त करता है । जो जानकार व्यक्ति है, वे वायु के द्वारा भावी फल को अवगत कर लेते हैं । आषाढ़ी प्रतिपदा और पूर्णिमा ये दो तिथियाँ इस प्रकार ही हैं, जिनके द्वारा वर्षा, कृषि, व्यापार, रोग, उपद्रव आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है । यहाँ पर प्रत्येक फलादेश का क्रमणः निरूपण किया जाता है ।

वर्षा सम्बन्धी फलादेश—आषाढ़ी प्रतिपदा के दिन सूर्यस्ति के समय पूर्व दिशा में वायु चले तो आश्विन महीने में अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार के वायु से अगले महीने में भी वर्षा का योग अवगत करना चाहिए । रात्रि के समय जब आकाश में मेघ छाये हुए हों और धीमी-धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व का वायु चले तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए । इस तिथि को यदि मेघ प्रातःकाल से ही आकाश में हों और वर्षा भी हो रही हो, तो पूर्व दिशा का वायु चतुर्मास में वर्षा का अभाव सूचित करता है । तीव्र धूप दिन भर फड़े और पूर्व दिशा का वायु दिन भर चलता रहे तो चतुर्मास में अच्छी वर्षा का योग होता है । आषाढ़ी प्रतिपदा का तपना उत्तम माना गया है, इससे चतुर्मास में उत्तम वर्षा होने का योग समझना चाहिए । उपर्युक्त तिथि का सूर्योदय काल में पूर्वीय वायु चले और साथ ही आकाश में मेघ हों पर वर्षा न होती हो तो आवण महीने में उत्तम वर्षा की सूचना समझनी चाहिए । उक्त तिथि को दक्षिण और पश्चिम दिशा का वायु चले तो वर्षा चतुर्मास में बहुत कम या उसका बिल्कुल अभाव होता है । पश्चिमी वायु चलने से वर्षा का अभाव नहीं होता, बल्कि आवण में घनधोर वर्षा, भाद्रपद में अभाव और आश्विन में अल्प वर्षा होती है । दक्षिण दिशा का वायु वर्षा का अवरोध करता है । उत्तर दिशा का वायु चलने से भी वर्षा का अच्छा योग रहता है । आरम्भ में कुछ कमी रहती है, पर अन्त तक समयानुकूल और आवश्यकतानुसार होतो जाती है । आषाढ़ी

पूर्णिमा को आधे दिन—दोपहर तक पूर्वीय बायु चलता रहे तो श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा होती है। पूरे दिन पूर्वीय पवन चलता रहे तो चातुर्मसि पर्यंत अच्छी वर्षा होती है और एक ग्रहर पूर्वीय पवन चले तो केवल श्रावण के महीने में अच्छी वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दोपहर के उपरान्त पूर्वीय पवन चले और आकाश में बादल भी हों तो भाद्रपद और आश्विन इन दोनों महीनों में उत्तम वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दिन भर गुगन्धित ब्रायु चलता रहे और थोड़ी-थोड़ी वर्षा भी होती रहे तो चातुर्मसि में अच्छी वर्षा होती है। माघ महीने का भी इस प्रकार का पवन वर्षा होने की सूचना देता है। यदि आपाही पूर्णिमा को दक्षिण दिशा का बायु चले तो वर्षा का अभाव सूचित होता है। यह पवन सूर्योदय से लेकर मध्याह्न तक चले तो आरम्भ में वर्षा का अभाव और मध्याह्नात्तर चले तब जान्तम गहीनों में वर्षा का अभाव समझा जाहिए। यदि आधे दिन दक्षिणी पवन और आधे दिन पूर्वीय या उत्तरीय पवन चले तो आरम्भ में वर्षाभाव, अनन्तर उत्तम वर्षा तथा आरम्भ में उत्तम वर्षा, अनन्तर वर्षाभाव अवगत करना जाहिए। वर्षा की स्थिति पूर्वाह्न और उत्तराह्न पर अवलम्बित समझनी जाहिए। यदि उक्त तिथि को पश्चिमीय पवन चले, आकाश में विजयी तड़के तथा भेंगों वीं गजेंगा भी हो तो साधारण अच्छी वर्षा होती है। इस प्रकार की स्थिति मध्यम वर्षा होने की सूचना देती है। पश्चिमीय पवन धौंडि सूर्योदय से लेकर दोपहर तक चलता है तो उत्तम वर्षा और दोपहर के उपरान्त चले तो मध्यम वर्षा होती है।

श्रावण आदि महीनों के पवन का 'प्रानदेज 'डाक' में निम्न प्रकार बताया है—

साँओन पछवा भाद्र फुरिया वार्षिन वह उसान।
कातिक कला लिकियोने डोले, कहा तक रखवह धान॥
साँओन पछवा वह दिन चारि, चूल्हीका पाली उपजे गारि॥
बरिसे रिमजिम निणिदिल बारि, कहियेल ववन 'डाक' परचारि॥
साँओन पुरिया भाद्र फछवा आसिन वह नैऋत॥
कातिक काना लिकियोने डोले, उपजे नहि भरियीत॥
साँओन पुरिया वह रविवार, बोदो मछुआक होय वहार॥
खोजत खेट नहि थोड़ी अहार, बहुत बैन वह 'डाक' गंवार॥
जो साँओन पुरवैआ वहै, शाली लागु करीन॥
भाद्र फछवा जो वहै लौहि गवाव नर दीन॥
साँओन वह जो बज्जुङ्गा, बीजा काटि कहै गं पासा॥
साँओन जो वह पुरवैया, बडद बेचिक कोन्हु गंया॥

अर्थ—यदि श्रावण मास में पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास में पूर्वीय हवा और आश्विन मास में ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा होती है तथा फसल भी बहुत उत्तम उत्पन्न होती है। श्रावण में यदि चार दिनों तक पश्चिमीय हवा चले तो रात-दिन पानी बरसता है तथा अन्न की उपज भी खूब होती है। यदि श्रावण में पूर्वीय, भाद्रपद में पश्चिमीय और आश्विन में नैऋत कोणीय हवा चले तो वर्षा नहीं होती है तथा फसल की उत्पत्ति भी नहीं होती। यदि श्रावण में पूर्वीय, भाद्रपद में पश्चिमीय हवा चले तथा इस महीने में रविवार के दिन पूर्वीय हवा चले तो अनाज उत्पन्न नहीं होता और वर्षा की भी कमी रहती है। श्रावण मास में पूर्वीय बायु का चलना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। अतः इस महीने में पश्चिमीय हवा का चलने से फसल अच्छी उत्पन्न होती है। श्रावण मास में यदि प्रतिपदा तिथि रविवार को हो, और उस दिन तेज पूर्वीय हवा चलती हो तो वर्षा का अभाव आश्विन मास में अवश्य रहता है; प्रतिपदा तिथि का रविवार और मंगलवार को पड़ना भी शुभ नहीं है। इससे वर्षा की कमी की और फसल को बरबादी की मूलना मिलती है। भाद्रपद मास में पश्चिमीय हवा का चलना अशुभ और पूर्वीय हवा का चलना अधिक शुभ माना गया है। यदि श्रावणी पूर्णिमा शनिवार को हो और इस दिन दक्षिणीय बायु चलता हो तो वर्षा की कमी आश्विन मास में रहती है। शनिवार के साथ शतभिषा नक्षत्र भी होता है और भी अधिक हानिकर होता है। भाद्रपद प्रतिपदा को ग्रातःकाल पश्चिमीय हवा चले और यह दिन भर चलती रह जाए, तो खूब वर्षा होती है। आश्विन मास के अतिरिक्त वातिक मास में भी जल बरसता है। गहूँ और धान दोनों की फसल के लिए यह उत्तम होता है। भाद्रपद कृष्णा पंचमी शनिवार या मंगलवार को हो और इस दिन पूर्वीय हवा चले तो साधारण वर्षा और साधारण ही फसल तथा दक्षिणीय हवा चले तो फसल का अभाव के साथ वर्षा का भी अभाव होता है। पंचमी तिथि को शरणी नक्षत्र हो और इस दिन दक्षिणीय हवा चले तो वर्षा का अभाव रहता है तथा फसल भी अच्छी नहीं होती। पंचमी तिथि को गुरुवार और अश्विनी नक्षत्र हो तो अच्छी फसल होती है। कृतिका नक्षत्र हो तो साधारण-तया वर्षा अच्छी होती है।

राष्ट्र, नगर सम्बन्धी फलादेश—आपादी पूर्णिमा वो पश्चिमीय बायु जिस प्रदेश में चलती है, उस प्रदेश में उपद्रव होता है, अनेक प्रकार के रोग पौलत हैं तथा उस थेवे के प्रशासकों में मतभद्र होता है। यदि पूर्णिमा शनिवार को हो तो उस प्रदेश के शिल्पी काट जाते हैं, रविवार जो हो तो चारों वर्षे के व्यक्तियों के लिए अनिष्टकर होता है। मंगलवार को पूर्णिमा तिथि हो और दिनभर पश्चिमीय बायु चलना रहता तथा प्रदेश में जो जल उपद्रव करता है तथा धारामाजा को ग्रनेक प्रकार के काट रहा है। गुरुवार और शुक्रवार को पूर्णिमा हो जाए तब इस दिन

सन्ध्या समय तीन घटे तक पश्चिमीय बायु चलता रहे तो निश्चयतः उस नगर, देश या राष्ट्र का विकास होता है। जनता में परस्पर प्रेम बढ़ता है, भूमि-धान्य की वृद्धि होती है और उस देश का प्रभाव अन्य देशों पर भी पड़ता है। व्यापारिक उन्नति होती है तथा जानित और सुख का अनुभव होता है। उक्त तिथि को दक्षिणी बायु चले तो उस क्षेत्र में अत्यन्त भय, उपद्रव, कलह और माहौलारी का प्रकोप होता है। आपसी कलह के चारण आन्तरिक अग्ने बहते जाते हैं और सुख-जानित दूर होती जाती है। भान्य नेताओं में मतभेद बढ़ता है, सैनिक शक्ति थीर्ण होती है। देश में नवे-नये कर्गों की वृद्धि होती है और गुप्त रोगों की उत्पत्ति भी होती है। यदि रविवार के दिन अपसब्द मार्ग से दक्षिणीय बायु चले तो और उपद्रवों की सूचना मिलती है। नगर में शोलला और हेजे का प्रकार होता है। जनता अवक प्रवार का चाम उठाती है, भयंकर भूकम्प होने की सूचना भी इसी प्रवार के बायु से समझनी चाहिए। यदि अर्धरात्रि में दक्षिणीय बायु शब्द करता हुआ वह तो इसका फलादेश समस्त राष्ट्र के लिए हानिकारक होता है। राष्ट्र की आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है तथा राष्ट्र के सम्मान का भी झास होता है। देश में किसी महान् व्यक्ति की मृत्यु से अपूरणीय खाति होती है। यदि यही बायु प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोम गति से प्रवाहित हो तो राष्ट्र की साधारण क्षति उठानी पड़ती है। खिंच, मन्द, मुग्ध दक्षिणीय बायु भी अच्छा होता है तथा राष्ट्र और देश के लिए चार महीनों तक अनिष्ट सूचक होता है। इस प्रकार के बायु से राष्ट्र को अनेक प्रकार के संकट राजन करने पड़ते हैं। अनेक रक्षाओं पर उपद्रव होते हैं, जिससे प्रशासकों को गढ़ती रक्षाओं का समग्रा करना पड़ता है। देश के खनिज पदार्थों की उपज कम होती है तथा वस्तु पर्याप्त बग जहाँ है, जिससे देश का धन भट्ट हो जाता है। अनिवार्यी आपादी पूर्णिमा की शक्तिपूर्ण बायु खले तो देश को अनेक प्रवार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। जिस प्रदेश में इस प्रकार का बायु चलता है उस प्रदेश के रो-सी कोश खारों और अम्ल-प्रकोप होता है। आपादी पूर्णिमा को पूर्वीय बायु चले तो देश में सुख-जानित होती है तथा सभी प्रकार की शक्ति बढ़ती है। बन, खनिज एवं धान-कारखाने आदि की उन्नति होने का भूम्दर अवसर आता है। सोमवार को यदि पूर्वीय हवा प्रातःकाल से मध्याह्नकाल तक लगातार खलती रहे और हवा में मै सुमन्धि आती हो तो देश का भवित्य उभयन होता है। यसी प्रकार ये देश की भूमिका होती है। नवे-नये नेताओं का नाम होता है, राजनीतिक प्रयुक्ति बढ़ता जाता है, गोपनिया अविना का भी विकास होता है। यदि ये ही बाएँ काम करा पायत तो उस नए देश में एक वर्षे तक आनन्दोत्सव होत रहता है, सभी प्रकार का अभ्युदय बढ़ता है। इसका

कला-कीशल की वृद्धि होती है और नैतिकता का विकास लागरिकों में पूर्णतया होता है। नेताओं में प्रेमभाव बढ़ता है जिससे वे देश या राष्ट्र के कार्यों को बड़े सुन्दर ढंग से सम्पादित करते हैं। गुरुवार को पूर्वीय वायु चले तो देश में विद्या का विकास, नये-नये अन्वेषण के कार्य, विज्ञान की उन्नति एवं नये-नये प्रकार की विद्याओं का प्रसार होता है। नगरों में सभी प्रकार का अमन चैन रहता है। शुक्रवार के पूर्वीय वायु विभिन्न वस्तुएँ हैं तो शान्ति, सुभिक्ष और उन्नति का सूचक है, इस प्रकार के वायु से देश की सर्वांगीण उन्नति होती है।

व्यापारिक फलादेश—आषाढ़ी पूर्णिमा को प्रातःकाल पूर्वीय हवा, मध्याह्न दक्षिणीय हवा, अपराह्न काल पश्चिमीय हवा और सन्ध्या समय उत्तरीय हवा चले तो एक महीने में स्वर्ण के व्यापार में सदाया लाभ, चाँदी के व्यापार में डेढ़ गुना तथा गुण के व्यापार में बहुत लाभ होता है। अन्न का भाव सस्ता होता है तथा काठे और सूत के व्यापार में तीन महीनों तक लाभ होता रहता है। यदि इस दिन प्रातःकाल से मूर्धास्त मध्य दक्षिणीय हवा ही चलती रहे तो सभी वस्तुएँ अन्द्रह दिन के बाद ही मैंहगी हो जाती हैं और यह मैंहगी का बाजार लगभग छः महीने तक चलता है। इस प्रकार वायु वा फल विशेषतः यह है कि अन्न का भाव बहुत मैंहगा होता है तथा अन्न की कमी भी हो जाती है। यदि आधे दिन दक्षिणीय वायु चले, उपरान्त पूर्वीय या उत्तरीय वायु चलने लगे तो व्यापारिक जगत् में विशेष हूलचल रहती है तथा वस्तुओं के भाव स्थिर नहीं रहते हैं। सहै के व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार का निमित्त विशेष लाभ सूचक है। यदि पूर्वीय भाग में उक्त तिथि की उत्तरीय वायु चले और उत्तरार्ध में अन्य किसी भी दिना वी वायु चलने लगे तो जिस प्रदेश में यह निमित्त देखा गया है, उस प्रदेश के दो-दो सौ कोश तक अनाज का भाव मरता रहा वस्त्र को छोड़ अवशेष सभी वस्तुओं का भाव भी सस्ता ही रहता है। किंवदं दो महीने तक वस्त्र तथा इवेत रंग के गदाथों के भाव ऊँचे चढ़ते हैं तथा इन वस्तुओं की कमी भी रहती है। सोना, चाँदी और अन्य प्रकार की खनिज आतुओं का मूल्य प्रायः सम रहता है। इस निमित्त के दो महीने के उपरान्त सांने के मूल्य में वृद्धि होती है, यद्यपि कुछ ही दिनों के पश्चात् पुनः उसका मूल्य गिर जाता है। पश्चुओं का मूल्य बहुत बढ़ जाता है। गाय, बैल और घोड़े के मूल्य में पहले से लगभग सदाया अन्तर आ जाता है। योद आषाढ़ी पूर्णिमा की रात में छीक बारह बजे के समय दक्षिणीय वायु चले तो उस प्रदेश में छः महीनों तक अनाज की कमी रहती है और अनाज का मूल्य भी बहुत बढ़ जाता है। यदि उक्त तिथि की मध्यरात्रि में उत्तरीय हवा चलने लगे तो पश्चात्, नारियल, गुणाढ़ी आदि ग्राम भाव ऊँचा उठता है, अनाज सस्ता होता है। सोना, चाँदी का भाव पूर्ववत् ही रहता है। योद वात्सु पुण्या प्रातःप्रातः का मूर्यदिव्य काल म पूर्वांग हवा, मध्याह्न उत्तरीय, अपराह्न म पश्चिमांग हवा और

सन्ध्या काल में उत्तरीय हवा चलने लगे तो लगभग एक वर्ष तक अनाज सस्ता रहता है, केवल आश्विन मास में अनाज मँहगा होता है, अबण्ये सभी महीनों में अनाज सस्ता ही रहता है। सोना, चाँदी और अच्छक का भाव आश्विन से माथ तक सस्ता तथा फालगुन से ज्येष्ठ तक मँहगा रहता है। व्यापारियों को कुछ लाभ ही रहता है। उक्त प्रकार के वायु निमित्त से व्यापारियों के लिए शुभ फलादेश ही समझा जाता है। यदि इस दिन सन्ध्या काल में बर्षा के साथ उत्तरीय हवा चले तो अगले दिन से ही अनाज मँहगा होने लगता है। उपयोग और विलास की सभी वस्तुओं के मूल में वृद्धि हो जाती है। विशेष रूप से आभूषणों के मूल्य भी बढ़ जाते हैं। जूट, सन, मूँज आदि का भाव भी बढ़ता है। रेशम की कीमत पहले से डेढ़ गुनी हो जाती है। काले रंग की प्रायः सभी वस्तुओं के भाव सम रहते हैं। हरे, लाल और धीले रंग की वस्तुओं का मूल्य वृद्धिगत होता है। एकत्र रंग के पदार्थों का मूल्य राम रहता है। यादि उक्त तिथि का थोक दोषहर के समय पश्चिमीय वायु चले तो सभी वस्तुओं का भाव राता रहता है; किर भी व्यापारियों के लिए यह निमित्त अशुभ गुचक नहीं; उन्हें लाभ होता है। यदि थावणी पूणिमा को प्रातःकाल बर्षा हो और दक्षिणीय वायु भी चले तो अगले दिन से ही सभी वस्तुओं की मँहगाई समझ लेनी चाहिए। इस प्रकार के निमित्त का प्रधान फलादेश खाद्य पदार्थों के मूल्य में वृद्धि होना है। खनिज धातुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है पर थोड़े दिनों के उपरान्त उनका भाव भी नीचे उत्तर आता है। यदि उक्त तिथि को यूरे दिन एक ही प्रकार की हवा चलती रहे तो वस्तुओं के भाव सस्ते और हवा बदलती रहे तो वस्तुओं के भाव ऊंचे उठते हैं। विशेषतः मध्याह्न और मध्यरात्रि में जिस प्रकार भी हथा हो, वैसा ही फल समझना चाहिए। पूर्वीय और उत्तरीय हवा से वस्तुएँ सस्ती और पश्चिमीय और दक्षिणीय हवा के चलने से वस्तुएँ मँहगी होती हैं।

दशमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रवर्षणं^१ निबोधत् ।
प्रशस्तमप्रशस्त च यथावदनुपूर्वतः^२ ॥ ॥

अब प्रवर्षण का वर्णन किया जाता है। यह यों पूर्व की तरह प्रयस्त— जुम

और अप्रशस्त—अशुभ इस प्रकार दो तरह का होता है ॥1॥

ज्येष्ठे^१ मूलमतिक्रम्य व्यतन्ति बिन्दवो यदा ।

प्रवर्षणं तदा^२ ज्ञेयं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥२॥

ज्येष्ठ मास में मूल नक्षत्र को वितावर यदि वर्षा हो तो उसके शुभाशुभ का विचार करना चाहिए ॥2॥

आषाढे शुक्लपूर्वासु ग्रीष्मे मासे तु पश्चिमे ।

'देवः प्रतिपदायां^३ तु यदा^४ कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥३॥

चतुर्षष्ठिमाष्टकान्ति तदा वर्षति वासवः^५ ।

निष्पत्न्ते च सस्थानि सर्वाणि निरुपद्रवम् ॥४॥

यीर्य ऋगु में शुक्ला प्रतिपदा वर्षा पूर्वासु नक्षत्र में पश्चिम दिश से बादल उठावर वर्षा हो तो ६४ आडक प्रमाण वर्षा होती है और निष्पत्न्ते—विना किसी वाधा के गर्भी प्रवार के अनाज उत्पन्न होते हैं ॥३-४॥

धर्मकाप्रार्थी^६ वर्तन्ते^७ परचक्रं प्रणश्यति^८ ।

क्षेमं सुभिक्ष^९ मारोभ्यं दशरात्रं^{१०} त्वपरहम् ॥५॥

उक्त प्रवार के प्रवर्षण में धर्म, काम और धन विद्यमान रहते हैं तथा क्षेम, सुभिज और आगेय की वृद्धि होती है और परचक्र—परशासन का भय दूर हो जाता है किन्तु दग दिन के बाद पराजय होती है……अशुभ फल घटित होता है ॥५॥

उत्तराभ्यासाषाढाभ्यां यदा देवः प्रवर्षति ।

विज्ञेया^{११} द्वादश द्वोणा अतो वर्षं सुभिक्षदम्^{१२} ॥६॥

तदा निम्नानि वातानि^{१३} मध्यमं वर्षणं भवेत् ।

सस्थानां चापि निष्पत्तिः सुभिक्षं क्षेममेव च ॥७॥

जब उत्तराषाढा नक्षत्र में वर्षा होती है, तब १२ द्वोण प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिज भी होता है । मन्द-मन्द वायु चलता है, मध्यम वर्षा होती है, अनाजों की उत्पत्ति होती है, सुभिक्ष और कल्याण-मंगल होते हैं ॥६-७॥

1. वर्षा पूर्व A, D । 2. वर्षा मूर्ति B, C, D । 3. वर्षा मूर्ति A, B, D ।
4. वर्षा मूर्ति C, D । 5. प्रतिपदायाः मूर्ति C । 6. यद, मूर्ति A, वर्षा मूर्ति D ।
7. वर्षा अवृत्ति । 8. वर्षावृत्तान्तानि वाता । 9. वर्षावृत्ति गुरु A, D । 10. प्रतिपदायाः गुरु C ।
11. वर्षा गुरु । 12. वर्षावृत्ति गुरु । 13. वर्षा गुरु C । 14. वर्षावृत्ति गुरु C ।
15. सुभिक्षदम् गुरु A । 16. वातावृत्ति गुरु B ।

श्रवणेन वारि विज्ञेयं श्रेष्ठं सस्यं च निदिशेत् ।
 चौराश्च प्रबला॑ ज्ञेया व्याधयोऽत्र पृथग्विधाः ॥८॥
 क्षेत्राण्यत्र प्ररोहन्ति दंडानां^२ नास्ति जीवितम् ।
 अष्टादशाहं जानीयादपग्रहं^३ न संशयः ॥९॥

यदि श्रवण नक्षत्र में जल की वर्षा हो तो अन्न की उपज अच्छी होती है, चोरों की शक्ति बढ़ती है और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। ऐसी में अन्न के अंकुर अच्छी तरह उत्पन्न होते हैं, दंडों—चूहों के लिए तथा डांस, मच्छरों के लिए यह वर्षा हानिकारक है, उतकी मृत्यु होती है। अठारह दिनों के पश्चात् अपग्रह-पराजय तथा अशुभ फल वी प्राप्ति होती है, इसमें शन्देह नहीं ॥८-९॥

आढकानि घनिठायां^४ सप्तपञ्चं समादिशेत् ।
 महो सर्यवतो ज्ञेया वाणिज्यं च विनश्यति ॥१०॥
 क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सप्तरात्रभयग्रहः ।
 प्रबला दंडिणो ज्ञेया मूषकाः शलभाः शुकाः ॥११॥

घनिठा नक्षत्र में वर्षा हो तो उस वर्ष 57 आठक वर्षा होती है, पृथ्वी पर फसल अच्छी उत्पन्न होती है और व्यापार गढ़बड़ा जाता है। इस प्रकार वी वर्षा से क्षेम-कल्याण, सुभिक्ष और आरोग्य होता है जिन्हें शात दिनों के उपरान्त अपग्रह—अशुभ का फल प्राप्त होता है। दन्तधारी प्राणी भूपक, पर्वग, तोता आदि प्रबल होते हैं अर्थात् उसके द्वारा फसल को हानि पहुँचती है ॥१०-११॥

खारीस्तु वारिणो विन्द्यात् सस्यानां चाप्युपद्रवम् ।
 चौरास्तु प्रबला ज्ञेया न च कर्शचदपग्रहः ॥१२॥

शतभिगा नक्षत्र में वर्षा हो तो फसल उत्पन्न होने में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। चोरों की शक्ति बढ़ती है, जिन्हें अशुभ किसी का नहीं होता ॥१२॥

पूर्वाभाद्रपदायां तु यदा मेघः प्रवर्षति ।
 चतुर्षष्टिसाढकानि तदा वर्षति सर्वशः ॥१३॥
 सर्वधान्यानि जायते बलवन्तश्च तस्कराः ।
 १०नाणकं द्युभ्यते॥ चापि दशरात्रमपग्रहः ॥१४॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में जब मेघ बरसता है तो उस समय सर्वे 64 आठक प्रभाग वर्षा होती है। सभी प्रकार के अनाज उत्पन्न होते हैं, चोरों की शक्ति

1. ग्रस्यां ज्ञात । 2. नावासा मू० C. । 3. जवयु; मू० C. । 4. वारिकाशाप्ति ज्ञात ।
 5. शतभिगाशाप्ति मू० C. । 6. नाव । 7. नावा मू० A. B. D. । 8. नावान्या
 मू० A. । 9. उपग्रहः मू० A. । 10. नावक मू० B. । 11. विषयते ज्ञात ।

बढ़ती है तथा मुद्रा का चक्र तेज हो जाता है। लेकिन दस दिन के बाद अनिष्ट या अशुभ होता है ॥13-14॥

नवतिराढकानि स्पुरुहत्तरायां समादिशेत् ।
स्थलेषु वापयेद् बीज सर्वसस्य¹ समृद्धयति ॥15॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं विशद्रात्रमपथ्रहः ।
दिवसानां विजानोयाद् भद्रबाहुवचो पथा ॥16॥

यदि प्रथम वर्षा उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में हो तो 90 आठक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल में बोया गया बीज भी समृद्धि को प्राप्त होता है, तथा सभी प्रकार के अनाज बढ़ते हैं। क्षेम, सुभिक्षम और आरोग्य की प्राप्ति होती है तथा 20 दिन के पश्चात् अप्यह—अशुभ होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥15-16॥

चतुर्षिष्ठिमाढकानीह रेवत्यामभिनिदिशेत् ।
सस्यानि च समृद्धयन्ते सर्वाण्येव यथाक्रमम् ॥17॥
उत्पद्यन्ते² च राजानः परस्पविरोधिनः³ ।
यान्त्युग्यानि शोभन्ते बलवद्विष्ठुवध्यनम् ॥18॥

यदि प्रथम वर्षा रेवती नक्षत्र में हो तो उस वर्ष 64 आठक प्रमाण जल-वृष्टि होती है और कम से रामी प्रकार के अनाज की समृद्धि होती है। राजाओं में परस्पर विरोध उत्पन्न होता है, सेना और दंष्ट्रधारी—कूहों की वृद्धि होती है ॥17-18॥

एकोनानि⁴ तु पंचाशदाढकानि समादिशेत् ।
अश्विन्यां कुरुते यत्र प्रवर्षणमसशयः ॥19॥
भवेतामुभये⁵ सस्ये पीड्यन्तं यवनाः शकाः ।
गात्धारिकाश्च काम्बोजाः पांचालाश्च चतुष्पदाः ॥20॥

यदि प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्र में हो तो 49 आठक जल की वर्षा होती है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। कात्तिकी और वैशाखी दोनों ही प्रकार की फसल होती है। यवन, शक, गात्धार, काम्बोज, पांचाल और चतुष्पद पीड़ित होते हैं अर्थात् उन्हें नाना प्रकार के कष्ट होते हैं ॥19-20॥

एकोनविशतिविन्द्यादाढकानि न संशयः ।
भरण्यां वासवश्चैव यदा कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥21॥

- 1. संवत्सर वर्षा । 2. विशालां पूर्व A, B, D, । 3. उद्दलम् पूर्व A, B, D, ।
- 4. परस्परनीरोपवतु यूर्वा A, परस्परनीरोपवतु यूर्वा C, । 5. वसवदाष्टुवध्यनम् ॥१॥
- 6. एकान्त्युग्यानि यूर्वा C, । 7. अप्यन् यूर्वा, यत् यूर्वा, D, अवतार् यूर्वा C, । 8. वायि यूर्वा C, ।
- 9. शकाम्बोजाः जा ॥ ।

व्यापारं तत्त्वीसूपाप्लौल अरणं^१ लवाच्छसो यज्ञः ।

सस्यं कनिष्ठं^२ विज्ञेयं प्रजाः सर्वाश्च दुखिताः ॥२२॥

जब प्रथम वर्षा का प्रारम्भ भरणी नक्षत्र में होता है, उस समय वर्षा भर में निसन्देह उन्नीस आठक प्रमाण जल की वर्षा होती है। राष्ट्र और सरीसूप—दुमुही, विभिन्न जातियों के सर्पादि, मरण, व्याधि, रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अनाज भी निम्न कोटि का उत्पन्न होता है और प्रजा को सभी प्रकार से कष्ट उठाने पड़ते हैं ॥२१-२२॥

आढकान्येकपञ्चाशत् कृत्तिकासु समादिशेत् ।

तदा त्वपग्रहो ज्येयः सप्तविंशतिरात्रकः ॥२३॥

द्वैमासिकस्तदा ^३देवशिच्चत्रं सस्यमुपद्रवम् ।

निम्नेषु वापयेद् बीजं भथमग्नेविनिदिशेत् ॥२४॥

यदि प्रथम वर्षा कृतिका नक्षत्र में हो तो ५१ आठक प्रमाण वर्षा समझनी चाहिए और २७ दिनों के बाद अनिष्ट समझना चाहिए। उस वर्षे मेघ दो महीने तक ही बरसते हैं, अनाज की उत्पत्ति में विघ्न आते हैं, अतः निम्न स्थानों में दीज बोना अच्छा होता है। इस वर्षे अग्नि-भय भी कहा है ॥२३-२४॥

आढकान्येकविश्वच्च^४ रोहिण्यामभिवर्षति^५ ।

अपग्रहं विजानीयात् सर्वं मेकादशाहिकाम् ॥२५॥

^६सुभिक्षं क्षममारोग्यं नैऋतीयं बहूदकम् ।

स्थलेषु वापयेद् बीजं राजो विजयमादिशेत् ॥२६॥

यदि प्रथम वर्षा रोहिणी नक्षत्र में हो तो ९१ आठक प्रमाण उस वर्षे जल बरसता है और ११ दिनों के बाद अपग्रह—अनिष्ट होता है। उस वर्षे क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य समझना चाहिए। नैऋत्य दिशा की ओर से बादल उठकर अधिक जल की वर्षा करते हैं। स्थल में दीज बोने पर भी अच्छी फसल उत्पन्न होती है तथा राजा की विजय की सूचना भी समझनी चाहिए ॥२५-२६॥

आढकान्येकनवतिः सौभ्ये प्रवर्षते यदा ।

अपग्रहं तदा विन्द्यात् सर्वमेकादशाहिकम् ॥२७॥

महामात्याश्च पीड्यन्ते ^७क्षुधा व्याधिश्च जायते ।

^८क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं दण्डिणः प्रबलास्तदा ॥२८॥

1. पृथ्युव्याधिनो विविष्टरुजः मू० A. 2. कनिष्ठकं ज्येयं । 3. मेघः मू० । 4. नवति मू० । 5. विनिदिशेत् मू० । 6. मुद्रित प्रति में 'क्षेमं गुभिक्षमारोग्यं' पाठ भिलता है । 7. मदाय्यपग्रहं विन्द्यात् वासर्वण चतुर्दश. मू० । 8. बहूव्याधि विनिदिशेत् । 9. गणित वै विजेयं दण्डिणः प्रबलास्तदा ।

यदि प्रथम वर्षा मृगशिरा नक्षत्र में हो तो 9। आढ़क प्रमाण उस वर्ष जल की दृष्टि समझ लेनी चाहिए और यारह (चौदह) दिन के उपरान्त अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। प्रधानमन्त्री को पीड़ा तथा अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। वैसे युभिध एवं चूहों का प्रकोप उस वर्ष में समझना चाहिए ॥27-28॥

आढ़कानि तु द्वार्त्रिशदाद्रियां चापि निर्दिशेत्^१ ।

दुर्भिक्षं व्याधिमरणं सस्यं घातमुपद्रवम् ॥२९॥

श्रावणे प्रथमे मासे ^२वर्षे वा न च वर्षति ।

प्रोष्ठपदं च वर्षित्वा शेषकालं न वर्षति ॥३०॥

यदि प्रथम वर्षा आद्री में हो तो 32 आढ़क प्रमाण उस वर्ष जल की वर्षा होती है। उस वर्ष दृभिध, नाना प्रकार की व्याधियाँ, मृत्यु और फसल की बाधा गहुंचाने वाले अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। श्रावण मास के प्रथम एक -कृष्ण पक्ष में अनेक बार वर्षा होती है, किन्तु भाद्रपद मास में एक बार जल वरसता है, फिर वर्षा नहीं होती ॥29-30॥

आढ़कान्येकमवर्ति विन्द्याच्चंद्र पुनर्वसौ ।

सस्यं निष्पद्यते क्षित्रे व्याधिश्च प्रबला^३ भवेत् ॥३१॥

यदि पुनर्वसु नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 9। आढ़क प्रमाण उस वर्ष जल-वृष्टि होती है, अनाज शीत्र ही उत्तान्त होता है। रोगों का जोर रहता है ॥31॥

चत्वारिंशच्च द्वे वाऽपि जानीयादाढ़कानि^४ च ।

पुष्येण मन्दवृष्टिश्च निम्ने बीजानि वापयेत् ॥३२॥

पक्षमश्वयुजे चापि पक्षं प्रोष्ठपदे तथा ।

अपग्रहं विजानीयात् बहुलेऽपि प्रवर्षति^५ ॥३३॥

पुष्य नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 42 आढ़क प्रमाण जल-वृष्टि होती है। वर्षा मन्द-मन्द धीरे-धीरे होती है, अतः निम्न स्थानों पर बीज बोने से अच्छी फसल उत्तान्त होती है। आश्विन और भाद्रपद मास में कृष्ण पक्ष में अपग्रह—अनिष्ट होता है तथा वर्षा भी इन्हीं पक्षों में होती है ॥32-33॥

चतुर्षष्टिमाढ़कानीहु तदा वर्षति वासवः ।

यदा इलेषाश्च कुरुते प्रथमे च प्रवर्षणम् ॥३४॥

1. अभिनिर्दिशेत् मू० । 2. वर्षित्वा न च वर्षति, वर्षं चंद्र एव वर्षति, वर्षं मू० C ।

3. बलवान् विदुः मू० । 4. -न्नथ मू० । 5. मासे मू० । 6. प्रवर्षणम् मू० । 7. मंगा 34 का ग्रन्थे गुटित प्रति में नहीं है ।

सस्यधातुं विजानीयाद् व्याधिभिश्चेदकेन तु ।
साधवो दुःखिता^१ ज्ञेया प्रोष्ठपदमपग्रहः ॥३५॥

यदि आश्लेषा नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो 64 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है । फसल में अनेक प्रकार के रोग लगते हैं, नाना प्रकार के रोगों से जनता में आतंक व्याप्त रहता है, साधुओं को अनेक प्रकार के कष्ट होने हैं तथा भाद्रपद मास में अपग्रह — अनिष्ट होता है ॥३४-३५॥

मधासु खारी विज्ञेया सस्यानान्तच समुद्भवः ।
कुक्षिव्याधिश्च बलवाननीतिश्च तु जायते ॥३६॥

यदि मधा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो खारी प्रमाण ... 16 द्वोण जल-वृष्टि उस वर्ष होती है और अनाज नी उत्पत्ति खूब होती है । गेट के माना प्रकार के रोग उत्पन्न होने हैं और अन्याय-नीति का प्रचार होता है ॥३६॥

फाल्गुनीषु च पूर्वासु यदा देवः प्रवर्षति ।
खारी तदाऽदिशेत् पूर्णा तदा स्तीर्णां सुखानि च^२ ॥३७॥
सस्यानि फलवन्ति स्युर्वर्णिज्यानि दिशन्ति च ।
अपग्रहश्चतुस्त्रिशङ्खावणे सप्तरात्रिकः ॥३८॥

यदि पूर्वफाल्गुनी नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उग वारी खारी प्रमाण ... 16 द्वोण जल की वर्षा होती है । स्त्रियों को अनेक प्रकार का सुख प्राप्त होता है । कृषि और वाणिज्य दोनों ही सफल होते हैं । 24 दिनों के पश्चात् अर्थात् आवण मास में 7 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह — अनिष्ट होता है ॥३७-३८॥

उत्तरायां तु फाल्गुन्यां षष्ठिसप्त च निर्दिशेत् ।
आढकानि सुभिक्षं च क्षेममारोग्यमेव च ॥३९॥
बहुजाः^३ दीना शीलाश्च धर्मशीलाश्च साधवः ।
अपग्रहं विजानीयात् कातिके द्वादशाहिकम् ॥४०॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष 67 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य नी प्राप्ति होती है । सभी मनुष्यों में दानशीलता और साधुओं के धर्मशीलता की वृद्धि होती है । कातिक मास में 12 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह — अनिष्ट होता है ॥३९-४०॥

पश्चाशीर्ति विजानीयात् हस्ते प्रवर्षणं यदा ।
तदा निम्नानि वर्ष्यानि पञ्चवर्णं च जायते ॥४१॥

१. निव्यात् मू० । २. च तत्त्वात्म० । ३. दानशीलाश्च मन्त्रा म० ।

संग्रामाश्चानुवर्धन्ते शिल्पकानां सुखोत्तमम् ।
श्रावणाश्वयुजे^१ मासि^२ तथा कार्तिकमेव च ॥४२॥
अपग्रहं विजानीयान्मासि^३ मासि दशाहिकम् ।
चौराश्च बलवन्तः स्युरुत्पद्यन्ते च पार्थिवाः ॥४३॥

हस्त नक्षत्र में जब प्रथम वर्षा होती है तो ४५ आठक प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। निम्न स्थानों की वापियाँ—वावडियाँ पंचवण्ठिमक हो जाती हैं। इस वर्ष में युद्ध की वृद्धि होती है, शिल्पयों को उत्तम सुख प्राप्त होता है। श्रावण, आश्विन और कार्तिक इन तीनों महीनों में से प्रत्येक महीने में १० दिन तक अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। चौर, मेना—योद्धा और नृपतियों की उत्पत्ति होती है अर्थात् उस वर्ष चोरों की, सैनिकों की और नृपतियों की कार्यसिद्धि होती है ॥४१-४३॥

द्वात्रिशमाढकानि स्युश्चित्रायां च^४ प्रवर्षणम् ।
चित्रं विन्यात् तदा सस्यं चित्रं वर्षं प्रवर्षति^५ ॥४४॥
निम्नेषु वापयेद् बीजं स्थलेषु परिवर्जयेत् ।
मध्यमं तं विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥४५॥

चित्रा नक्षत्र में जिस वर्ष प्रथम वर्षा होती है, उस वर्ष ३२ आठक प्रमाण जल की वर्षा होती है। अनाज की उत्पत्ति भी विचित्र रूप से होती है और यह वर्ष भी विचित्र ही होता है। इस वर्ष निम्न स्थानों—आर्द्ध स्थानों में बीज बोना चाहिए, ऊचे स्थलों में नहीं, क्योंकि यह वर्ष मध्यम होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥४४-४५॥

द्वात्रिशदाढकानि स्युः स्वातो स्याच्चेत् प्रवर्षणम् ।
“वायुरग्निरनावृष्टिः मासमेकं तु वर्षति ॥४६॥

स्वाति नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो ३२ आठक प्रमाण वृष्टि होती है। इस वर्ष में एक ही महीने तक जल की वर्षा होती है। वायु चलता है, अग्नि बरसती है तथा अनावृष्टि होती है ॥४६॥

विशाखासु विजानीयात् खारीमेका न^६ संशयः ।
सस्यं निष्पद्यते चापि वाणिज्यं पीड्यते तदा ॥४७॥

1. वृजी मू० । 2. मासी मू० । 3. मासे गासे मू० । 4. वर्षण यदा मू० । 5. विनिदिशेत् । 6. वायुवृष्टिरनावृग्निमासमेकं न वर्षनि मू० । 7. खारीश्वर ग गशयः मू० ।

अपग्रहं तु जानीयाद् दशाहं प्रौष्ठपादिकम् ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं तां समां¹ नात्र संशयः ॥48॥

विशेषा में प्रथम वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण 16 द्वेरण निस्सन्देह जल बरसता है। फसल बहुत अच्छी होती है तथा व्यापार भी निर्बाध रूप से चलता है। भाद्रपद मास में दश दिन जाने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है। यों इस वर्ष में निस्सन्देह क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य की स्थिति होती है ॥47-48॥

जानीयादनुराधायां खारीमेकां² प्रवर्षणम् ।
तदा सुभिक्षं सक्षेमं परचक्रं प्रशास्यति ॥49॥
दूरं प्रवासिका यान्ति धर्मशीलाश्च मानवाः ।
मैत्री च स्थावरा ज्ञेयः शाम्यन्ते चेतयस्तदा ॥50॥

यदि अनुराधा नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण---16 द्वेरण प्रमाण जल उस वर्षे बरसता है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य रहते हैं तथा परशासन भी शान्त रहता है। इस वर्षे दूर के प्रवासी भी वापस आते हैं, सभी व्यक्ति धर्मात्मा रहते हैं। मित्रता स्थिर होती है तथा भय और आतंक नष्ट होते जाते हैं ॥49-50॥

ज्येष्ठायामाढकानि स्युर्दशश्चाष्टो³ विनिर्दिशेत् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं तदा भूदाहविद्रवम्⁴ ॥51॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 18 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल में बीज बोने पर भी फसल उत्तम होती है; किन्तु भूकम्प, भूदाह, आदि उपद्रव भी होते हैं। तात्पर्य यह है कि ज्येष्ठा नक्षत्र की प्रथम वर्षा फसल के लिए उत्तम है ॥51॥

मूलेन खारी विज्ञेया सस्यं सर्वं समृद्ध्यति ।
एकमूलानि पीड्यन्ते वर्द्धन्ते तस्करा अपि ॥52॥

मूल नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो एक खारी प्रमाण जल बरसता है और सभी प्रकार के अनाजों की उत्पत्ति खूब होती है। सैनिक-- शोढ़ा शीढ़ा प्राप्त करते हैं तथा चोरों की वृद्धि होती है ॥52॥

1. सस्यं सम्बद्धेत् एव भागिज्य पीड्यते न हि मु० । 2. खारी प्रवर्षणं गदा मु० ।
3. क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं मु० । 4. चतुर्षष्टि मु० । 5. विद्रवः मु० । 6. विजनीयात् मु० ।
7. चोराश्च प्रवलाश्च ये मु० ।

एतद् व्यासेन कथितं १समासाच्छूयतां पुनः ।

भद्रबाहुवचः श्रुत्वा भतिमानवधारयेत् ॥५३॥

यह विस्तार से वर्णन किया है, संक्षेप में पुनः सुनिये । भद्रबाहु के बचनों को सुनकर बुद्धिमानों को उनका अवधारण करना चाहिए ॥५३॥

द्वात्रिशदाढकानि स्युः नक्रमासेषु निर्दिशेत् ।

समक्षेत्रे द्विगुणितं तत् २त्रिगुणं वाहिकेषु च ॥५४॥

नक्रमाण—शावण मास में ३२ आढक प्रमाण वर्षा हो तो समक्षेत्र में दुगुनी और निम्न स्थल—आर्द्ध स्थलों में तिगुनी फसल होती है ॥५४॥

उल्कावत् साधनं च इत्र वर्षणं च विनिर्दिशेत् ।

शुभाऽशुभं ३तदा वाच्यं सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि ॥५५॥

उल्का के समान वर्षण की सिलि भी कर लेनी चाहिए तथा सम्यक प्रकार जानकर के शुभाशुभ फल का निरूपण करना चाहिए ॥५५॥

इति भद्रबाहुके संहितायां महानैभितशास्त्रे रक्तमारसमुच्चयवर्षणो
नस्म दशमोऽध्यायः दरिसमाप्तः ।

विवेचन- वर्षा का विचार यद्यपि पूर्वोक्त अध्यायों में भी हो चुका है, फिर भी आचार्य विशेष महत्ता दिखलाने के लिए पुनः विचार करते हैं । प्रथम वर्षा जिस नक्षत्र में होती है, उसी के अनुसार वर्षा के प्रमाण का विचार किया गया है । आचार्य ऋषिगुरु ने निम्न प्रकार वर्षा का विचार किया है ।

यदि मार्गशीर्ष महीने में पानी बरसता है तो ज्येष्ठ के महीने में वर्षा का अभाव रहता है । यदि पौष मास में बिजली चमककर पानी बरसे तो आषाढ़ के महीने में अच्छी वर्षा होती है । माघ और फाल्गुन महीनों के शुक्लपक्ष में तीन दिनों तक पानी बरसता रहे तो छठे और नींवे महीने में अवश्य पानी बरसता है । यदि प्रत्येक महीने में आकाश में बादल आब्लादित रहें तो उस प्रदेश में अनेक प्रवाह की वीमारियाँ होती हैं । वर्ष के आरम्भ में यदि कृत्तिका नक्षत्र में पानी बरसे तो अनाज की हानि होती है और उस वर्ष में अतिवृष्टि या अनावृष्टि का भी योग रहता है । रोहिणी नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने पर भी देश की हानि होती है तथा असमय में वर्षा होती है, जिससे फसल अच्छी तरहीं उत्पन्न होती है । अनेक प्रकार की व्याधियाँ तथा अनाज की महँगाई भी इस नक्षत्र में पानी बरसने से होती है । परस्पर कलह और विसंवाद भी होते हैं । मृगशिर नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से अवश्य सुभित्ता होता है । फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है । यदि सूर्य नक्षत्र

1. समासेन गृनः श्रुणु । 2. त्रिगुणं आधितेषु च मृ० । 3. ततो मृ० । 4. क्रमम् मृ० ।

सूर्णशिर हो तो खण्डवृष्टि होती है तथा कृषि में अनेक प्रकार के रोग भी लगते हैं। इस नक्षत्र की वर्षा व्यापार के लिए भी उत्तम नहीं है। राजा या प्रशासक की भी कष्ट होते हैं। मन्त्री-पुत्र या निर्सी बड़े अधिकारी की मृत्यु भी दो महीने में होती है। आद्री नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो खण्डवृष्टि का योग रहता है, फसल साधारणतया आधी उत्पन्न होती है। चीनी, गुड़, और गधु का भाव तस्ता रहता है। एवेन रंग के लकड़ी में लुह जहाँगार अट्ठी है। पुनर्वसु नक्षत्र में प्रथम वर्षा होती हो तो एक महीने तक लगातार जल वरसता है। फसल अच्छी नहीं होती तथा बोया गया बीज भी मारा जाता है। आश्विन और कार्तिक में वर्षा का अभाव रहता है और सभी वस्तुएँ प्रायः मर्हंगी होती हैं, लोगों में धमचिरण की प्रवृत्ति होती है। रोग-व्याधियों के लिए उक्त प्रकार का वर्ष अत्यन्त अनिष्टकर होता है, सर्वत्र अशान्ति और असन्तोष दिखाता है। तो साधारण जनता का ध्यान धर्म-साधन की ओर अवश्य जाता है। पुष्य नक्षत्र में प्रथम जल वर्षा होने पर समयानुकूल जल की वर्षा एक वर्ष तक होती रहती है। कृषि बहुत उत्तम होती है, खाद्यान्नों के सिवाय फलों और मेवों की अधिक उत्पत्ति होती है। प्रायः समस्त वस्तुओं के भाव गिरते हैं। जनता में पूर्णतया शान्ति रहती है, प्रशासक वर्ग की रामृद्धि बढ़ती है। जनसाधारण में परस्पर विश्वास और सहयोग की भावना का विकास होता है। यदि आश्लेषा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्ष उत्तम नहीं होती, फसल की हानि होती है, जनता में असन्तोष और अशान्ति फैलती है। सर्वत्र अनाज की कमी होने से हाहाकार व्याप्त हो जाता है। अग्निभय और शस्त्रभय का आतङ्क उस प्रदेश में अधिक रहता है। चोरी और लूट का व्यापार अधिक बढ़ता है। दैन्य और निराशा का संचार होने से राष्ट्र में अनेक प्रकार के दोष प्रविष्ट होते हैं। यदि इस नक्षत्र में वर्षा के साथ औले भी गिरें तो जिस प्रदेश में इस प्रकार की वर्षा हुई है, उस प्रदेश के लिए अत्यन्त अधिकारक समझना चाहिए। उक्त प्रदेश में प्लेग, हैजा जैसी संक्रामक बीमारियाँ अधिक बढ़ती हैं, जनसंख्या घट जाती है। जनता सब तरह से कष्ट उठाती है। आश्लेषा नक्षत्र में तेज वायु के गाथ वर्षा हो तो एक वर्ष पर्यावर्त उक्त प्रदेश को कष्ट उठाना पड़ता है, धूम और कंकड़ पत्थरों के साथ वर्षा हो तथा चारों ओर बादल मण्डलाकार बन जाएँ, तो निश्चयतः उस प्रदेश में अकाल पड़ता है तथा पशुओं की भी हानि होती है और अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। प्रशासक वर्ग के लिए उक्त प्रकार की वर्षा भी कष्टकारक होती है।

यदि मधा और पूर्वा फाल्गुनी में प्रथम वर्षा हो तो समयानुकूल वर्षा होती है, फसल भी उत्तम होती है। जनता में सब प्रकार का अमन-चैन व्याप्त रहता है। कलाकार और शिलिष्यों के लिए उक्त नक्षत्रों की वर्षा कष्टप्रद है तथा

मनोरंजन के साधनों की कमी रहती है। राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से उक्त नक्षत्रों की वर्षा साधारण फल देती है। देश में सभी प्रकार की समृद्धि बढ़ती है और नागरिकों में अम्युदय की वृद्धि होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रों की वर्षा फसल की वृद्धि के लिए जुझ है, पर आन्तरिक शान्ति में बाधक होती है। भीतरी आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता और आन्तरिक अशान्ति बनी ही रह जाती है। उत्तरा फाल्गुनी और हुस्त नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से सुभिक्ष और आनन्द दोनों की ही प्राप्ति होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है, फसल की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। विशेषतः धान की फसल खूब होती है। पशु-पक्षियों को भी शान्ति और सुख मिलता है। तृण और धान्य दोनों की उपज अच्छी होती है। आर्थिक शान्ति के विकास के लिए उक्त नक्षत्रों में वर्षा होना अत्यन्त शुभ है। गुड़ की फसल बहुत अच्छी होती है तथा गुड़ का भाव भी सस्ता रहता है। जूट की फसल साधारण होती है, इसका भाव भी आरम्भ में सस्ता, पर आगे जाकर तेज हो जाता है। व्यापारियों के लिए भी उक्त नक्षत्रों की वर्षा सुखदायक होती है। साधारणतः व्यापार बहुत ही अच्छा चलता है। देश में कल-कारखानों का विकास भी अधिक होता है। चित्रा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्षा अत्यन्त कम होती है, परन्तु भाद्रपद और आश्विन में वर्षा का योग अच्छा रहता है। स्वती नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से मामूली वर्षा होती है। शावण मास में अच्छा पानी बरसता है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। वात्सीकी फसल साधारण ही रहती है, पर चैत्री फसल अच्छी हो जाती है; क्योंकि उक्त नक्षत्र की वर्षा आश्विन मास में भी जल की वर्षा का योग उत्पन्न करती है। यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो उस वर्ष खूब जल-वृष्टि होती है। तमाक और पोखरे प्रथम जल की वर्षा से ही भर जाते हैं। धान, गेहूँ, जूट और तिलहन की फसल विशेष रूप से उत्पन्न होती है। व्यापार के लिए यह वर्ष साधारणतया अच्छा होता है। अनुराधा में प्रथम वर्षा होने से गेहूँ में एक प्रकार का रोग लगता है जिससे गेहूँ की फसल मारी जाती है। यद्यपि गन्ना की फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है। व्यापार की दृष्टि से अनुराधा नक्षत्र की वर्षा बहुत उत्तम है। इस नक्षत्र में वर्षा होने से व्यापार में उन्नति होती है। देश का आर्थिक विकास होता है तथा कला-कौशल की भी उन्नति होती है। ज्येष्ठ नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से पानी बहुत कम बरसता है, पशुओं को कष्ट होता है। तृण की उत्पत्ति अनाज की अपेक्षा कम होती है, जिससे पालतू पशुओं को कष्ट उठाना गड़ता है। मवेशी का मूल्य सस्ता भी रहता है। दूध की उत्पत्ति भी कम होती है। उक्त प्रकार की वर्षा देश की आर्थिक क्षति की घोतिका है। धन-धान्य की कमी होती है, संक्रामक रोग बढ़ते हैं। चेचक का प्रकोप विशेष रूप से होता है। सम-शीतोष्ण वाले प्रदेशों को मौसम बदल जाने से यह वर्षा विशेष कष्ट की

सूचिका है। तिलहन् और तेल का भाव महेंगा रहता है, घृत की कमी रहती है तथा प्रशासक और बड़े धनिक व्यक्तियों को भी कष्ट उठाना पड़ता है। सेना में परस्पर विरोध और जनता में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। साधारण व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। आश्विन और भाद्रपद के महीनों में केवल सात दिन वर्षा होती है तथा उक्त प्रकार की वर्षा फाल्गुन मास में बनधोर वर्षा की सूचना देती है जिससे फसल और अधिक नष्ट होती है। चैत्र के महीनों में जल बरसता है तथा ज्येष्ठ में भयंकर गर्मी पड़ती है जिससे महान् कष्ट होता है।

यदि मूल नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष सभी महीनों में अच्छा पानी बरसता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेष रूप से भाद्रपद और आश्विन में समय पर उचित वर्षा होती है, जिससे दोनों ही प्रकार की फसलें बहुत अच्छी उत्पन्न होती हैं। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। खनिज पदार्थ और बनस्पति की वृद्धि के लिए उक्त प्रकार की वर्षा बहुत अच्छी होती है। मूल नक्षत्र की वर्षा यदि गर्जना के साथ हो तो माघ में भी जल की वर्षा होती है। बिजुली अधिक कड़के तो फसल में कमी रहती है शान्त और सुन्दर मन्द-मन्द वायु चलते हुए वर्षा हो तो सभी प्रकार की फसलें अत्युत्तम होती हैं। धान की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। गाय-बैल आदि मवेशी को भी चावल खाने को मिलते हैं। चावल का भाव भी सस्ता रहता है। गेहूँ, जौ और चना की फसल भी साधारणतः उत्तम होती है। चने का भाव अन्य अनाजों की अपेक्षा महेंगा रहता है तथा दाल वाले सभी अनाज महेंगे होते हैं। यद्यपि इन अनाजों की उत्पत्ति भी अधिक होती है किर भी इनका मूल्य वृद्धिगत होता है। उत्तराष्ट्राद् नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो अच्छी वर्षा होती है तथा हवा भी तेजी से चलती है। इस नक्षत्र में वर्षा होने से चैत्र वाली फसल बहुत अच्छी होती है, अगहनी धान भी अच्छा होता है; किन्तु कार्त्तिकी अनाज कम उत्पन्न होते हैं। नदियों में बाढ़ आती है, जिससे जनता को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। भाद्रपद और पौष में हवा चलती है, जिससे फसल को भी धूति होती है। श्रवण नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो कार्त्तिक मास में जल का अभाव और अवशेष महीनों में जल की वर्षा अच्छी होती है। भाद्रपद में अच्छा जल बरसता है, जिससे धान, मकई, ज्वार और बाजरा की फसलें भी अच्छी होती हैं। आश्विन में जल की वर्षा शुगल पक्ष में होती है जिसमें फसल अच्छी हो जाती है। गेहूँ में एक प्रकार का कीड़ा लगता है, जिससे इसकी फसल में धूति उठानी पड़ती है। उक्त प्रकार की वर्षा आश्विन, कार्त्तिक और चैत्र के महीनों में रेगों की सूचना देती है। छोटे बच्चों को अनेक प्रकार के रोग होते हैं। स्त्रियों के लिए यह वर्षा उत्तम है, उनका सम्मान बढ़ता है तथा वे सब प्रकार

से शान्ति प्राप्त करती है। धनिष्ठा नक्षत्र में जल की वर्षा होने पर पानी आवण, भाद्रपद, आश्विन, कात्तिक, माघ और वैशाख में खूब बरसता है। फसल कहीं-कहीं अतिवृष्टि के कारण नष्ट भी हो जाती है। आर्थिक दृष्टि से उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। देश के वैभव का भी विकास होता है। यदि गजेन-तजेन के साथ उक्त नक्षत्र में वर्षा हो तो उपर्युक्त फल का चतुर्थीश फल कम समझना चाहिए। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा मध्यम है। यद्यपि विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ता है तथा प्रत्येक वस्तु के व्यापार में लाभ होता है। धनिष्ठा नक्षत्र के आरम्भ में ही जल की वर्षा होती है तो फसल उत्तम और अन्तिम तीन घटियों में जल बरगे तो साधारण फल होता है और वर्षा भी मध्यम ही होती है। श्रुतभिष्ठा नक्षत्र में जल की प्रथम वर्षा हो तो बहुत पानी बरसता है। अगहनी फसल मध्यम होती है, पर चैती फसल अच्छी उपजती है। व्यापार में हानि उठानी पड़ती है, जूट और चीनी के व्यापार में साधारण लाभ होता है। पूर्वभाद्राद नक्षत्र के आरम्भ की पाँच घटियों में जल बरसे तो फसल मध्यम और वर्षा भी मध्यम होती है। नव गांश में वर्षा का अभाव होने से चैती फसल में कमी आती है। यद्यपि चातुर्मसि में जल खूब बरसता है, फिर भी फसल में न्यूनता रह जाती है। अन्तिम की घटियों में जल की वर्षा होने से अगहन में पानी की वर्षा होती है, परले भी अच्छी उत्पाद होती है। धान की फसल में रोग लग जाते हैं, फिर भी फसल मध्यम हो ही जाती है। यदि उक्त नक्षत्र के मध्य भाग में वर्षा हो तो अधिक जल की वर्षा होती है तथा आवश्यकतानुसार जल बरसने से फसल बहुत उन्नग होती है। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार की वर्षा हानि पहुंचाने वाली होती है। यदि उत्तराभाद्रपद विद्व पूर्वभाद्रपद में वर्षा आरम्भ हो तो शामकों के लिए अजुभकारक होती है तथा देश की समृद्धि में भी कमी आती है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो चातुर्मसि में अच्छी वर्षा होती है। वृत्तिक वृत्तिक के कारण कुछ विगड़ जाती है। वातिक माघ में आने वाली फसलों की होती है। चैती फसल अच्छी होती है। ज्वार और बाजरा की उत्पादि कहुत उम्म होती है। उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण में वर्षा आरम्भ होता बन्द हो जाय तो कात्तिक में पानी नहीं बरसता, अवशेष महीनों में वर्षा होती है। फसल भी उत्थ होती है। द्वितीय चरण में वर्षा होकर तृतीय चरण में अपाप्त हो तो वर्षा शमयानुकूल होती है और फसल भी उत्तम होती है। यदि उत्तराभाद्रा के तृतीय चरण में वर्षा हो तो चातुर्मसि में वर्षा होने के साथ मार्गशीर्ष और माघ मास में भी पर्याप्त वर्षा होती है। चतुर्थ चरण में वर्षा आरम्भ हो तो भाद्रपद मास में अस्थला पानी बरसता है। आश्विन मास में साधारण वर्षा होती है। माघ मास में वर्षा होने का कारण गहुः-क्ने की फसल बहुत अच्छी

होती है। रेवती नक्षत्र में वर्षा आरम्भ हो तो अनाज का भाव ऊँचा हो जाता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। श्रावण मास के शुक्लपक्ष में केवल पौर्णिमा दिन ही वर्षा होने का योग रहता है। भाद्रपद और आश्विन में यथेष्ट जल बरसता है। भाद्रपद मास में वस्त्र और अनाज पड़े होते हैं। आधिक मास के अन्त में भी जल की वर्षा होती है। रेवती नक्षत्र के प्रथम चरण में वर्षा होने पर चातुर्मसि में यथेष्ट वर्षा होती है तथा पौर्णिमा और माघ में भी वर्षा होने का योग रहता है। वस्तुओं के भाव अच्छे रहते हैं। गुड़ के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। देश में सुभिक्ष और सुख-शान्ति रहती है। यदि रेवती नक्षत्र लगते ही वर्षा आरम्भ हो जाय तो फसल के लिए मध्यम है; क्योंकि अतिवृष्टि के कारण फसल खराब हो जाती है। चौंती फसल उत्तम होती है, अगहनी में भी कमी नहीं आती; केवल कातिकीय फसल में कमी आती है। भोट अनाजों की उत्पत्ति कम होती है। श्रावण के महीने में प्रत्येक वस्तु महेंगी होती है। यदि रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण में वर्षा हो तो भाद्रपद मास सुखा जाता है; केवल हरकी वर्षा होकर रुक जाती है। आश्विन गास में अच्छी वर्षा होती है, जिससे फसल माध्यारणतः अच्छी हो जाती है। श्रावण से आश्विन मास तक सभी प्रकार का अनाज महेंगा रहता है। अन्य वस्तुओं में साधारण लाग होता है। भी का भाव इस वर्षे अधिक ऊँचा रहता है। मवेशी की भी कमी रहती है, मवेशी में एक प्रकार का रोग कैलता है, जिससे मवेशी की क्षति होती है। द्वितीय चरण के अन्त में वर्षा आरम्भ होने पर वर्षे के लिए अच्छा फलादेश होता है। गेहूँ, चना और गुड़ का भाव प्रायः सस्ता रहता है, केवल मूल्यवान् वस्तुओं का भाव ऊँचा उठता है। शनिज पदार्थों की उत्पत्ति इस वर्षे अधिक होती है तथा इन पदार्थों के व्यापार में भी लाभ रहता है। रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण में वर्षा हो तो प्रायः अग्रायन्ति का योग गमनना चाहिए। श्रावण का पांच दिन, भाद्रा में तीन और आश्विन में आठ दिन जल की वर्षा होती है। फसल निकुञ्ज शेणी की उत्पन्न होती है, वस्तुओं के भाव महेंगे रहते हैं। देश में अशान्ति और लुट-गाट अधिक होती है। चतुर्थ चरण में वर्षा होने से समयानुकूल पानी बरसता है, फसल भी अच्छी होती है। व्यापारियों के लिए भी यह वर्षा उत्तम होती है। यदि रेवती नक्षत्र का क्षय हो और अश्विनी में वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्षे अच्छी वर्षा होती है; पर मनुष्य और पशुओं को अधिक शीत षड़ने के कारण महान् कष्ट होता है। फसल को भी पाला मारता है। यदि अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण में वर्षा आरम्भ हो तो चतुर्मसि में अच्छी वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेषतः चौंती फसल बड़े जोर की उगजती है तथा मनुष्य और पशुओं को सुख-शान्ति प्राप्त होती है। यद्यपि इस वर्षे वायु और अग्नि का अधिक प्रकोप रहता है। किर मी किसी प्रकार की बड़ी क्षति नहीं होती है। ग्रीष्म ऋतु में लू अधिक

चलती है, तथा इस वर्ष गर्मी भी भीषण पड़ती है। देश के नेताओं में मतभेद एवं उपद्रव होते हैं। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार की वर्षा अधिक लाभदायक होती है। प्रथम चरण के लगते ही वर्षा का आरम्भ हो और समस्त नक्षत्र के अन्त तक वर्षा होती रहे तो वर्ष उत्तम नहीं रहता है। चातुर्मासि के उपरान्त जल नहीं बरसता, जिससे फसल अच्छी नहीं होती। तृतीय चरण में वर्षा होने पर पौष में वर्षा का अभाव तथा फालग्नुन में वर्षा होती है। इस चरण में वर्षा का आरम्भ होना साधारण होता है। वस्तुओं के भाव नीचे गिरते हैं। आश्विन मास से वस्तुओं के भावों में उन्नति होती है। व्यापारियों को अशान्ति रहती है, बाजार भाव प्रायः अस्थिर रहता है। चतुर्थ चरण में वर्षा आरम्भ होने पर इस वर्ष उत्तम वर्षा होती है। सभी प्रकार के अनाज अच्छी तादाद में उत्पन्न होते हैं। भरणी नक्षत्र में वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष प्रायः वर्षा का अभाव रहता है या अल्प वर्षा होती है। फसल के लिए भी उक्त नक्षत्र में जल की वर्षा होना अच्छा नहीं है। अनेक प्रकार की वीगारियाँ भी उक्त नक्षत्र में वर्षा होने पर फैलती हैं। यदि भरणी का ध्यय हो और कृतिका भरणी के स्थान पर चल रहा हो तो प्रथम वर्षा के लिए बहुत उत्तम है। भरणी के प्रथम और तृतीय चरण बहुत अच्छे हैं, इनके होते वर्षा होने पर फसल प्रायः अच्छी होती है, जनता में शान्ति रहती है। यद्यपि उक्त चरण में वर्षा होने पर भी जल की कमी ही रहती है, फिर भी फसल हो जाती है। द्वितीय और चतुर्थ चरण में वर्षा हो तो वर्षा के अभाव के साथ फसल का भी अभाव रहता है। प्रायः सभी वस्तुएँ महंगी हो जाती हैं, व्यापारियों को भी साधारण ही लाभ होता है। नाना प्रकार की व्याधियाँ भी फैलती हैं।

यहाँ वर्षा का आरम्भ शावण कृष्ण प्रतिपदा को मानना होगा तथा उसके बाद ही या उसी दिन जो नक्षत्र हो उसके अनुराग उपर्युक्त क्रम से फलाफल अवगत करना चाहिए। समस्त वर्षे का फल शावण कृष्ण प्रतिपदा से ही अवगत किया जाता है।

वर्षा का प्रमाण निकालने के विशेष विचार— जिस समय सूर्य रोहिणी नक्षत्र में प्रवेश करे, उस समय चार घड़ा सुन्दर स्वच्छ जल मंगाएँ और चतुष्कोण घर में गोब्रया भिट्ठी से लीपकर पवित्र चौक पर चारों घड़ों को उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम क्रम से स्थापित कर दें और उन जलपूरित घड़ों को उसी स्थान पर रोहिणी नक्षत्र पर्यन्त 15 दिन तक रखें, उन्हें तनिक भी अपने स्थान से इधर-उधर न उठाएँ। रोहिणी नक्षत्र के बीत जाने पर उत्तर दिशा वाले घड़े के जल का निरीक्षण करें। यदि उस घड़ा में पूर्णवार समस्त जल गिले तो शावण भर खूब वर्षा होगी। आधा खाली होके तो आधे महीने वृष्टि और चतुर्वर्षीय जल अवशेष हो तो चौथाई वर्षा एवं जल से शुभ्य घड़ा देखा जाय तो शावण में दोनों का अभाव समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उत्तर दिशा के घड़े के जलप्रमाण

से ही श्रावण में वर्षा का अनुमान लगाया जा सकता है। जितना कम जल घड़े में रहेगा, उतनी ही कम वर्षा होगी। इसी प्रकार पूर्व दिशा के घड़े से भाद्रपद मास की वर्षा, दक्षिण दिशा के घड़े से आश्विन मास की वर्षा, और पश्चिम के घड़े के जल से कार्तिक की वर्षा का अनुमान करना चाहिए। यह एक अनुभूत और सत्य वर्षा परिज्ञान का नियम है।

चित्र

1

उत्तर—श्रावण

पश्चिम—कार्तिक 4

वेदी या चतुष्कोण घर का भाग

पूर्व—भाद्रपद 2

3

दक्षिण—आश्विन

वर्षा का विचार रोहिणी-चक्र के अनुसार भी किया जाता है। 'वर्षप्रबोध' में मेवविजय गणि ने इस चक्र का उल्लेख निम्न प्रकार किया है :

राशिचक्रं लिखित्वादौ मेषसंकान्ति भाद्रिकम् ।
 अष्टाविंशतिकं तत्र लिखेन्तक्षत्रसंकुले ॥
 सन्धी द्वयं जलं दद्यादन्यत्रैकं कमेव च ।
 चत्वारः सामरास्तत्र सम्बद्धश्चाष्टसंख्यया ॥
 शृंगग्रणि तत्र चत्वारि तटान्यष्टौ स्मृतानि च ।
 रोहिणी पतिता यत्र ज्येष्ठं तत्र शुभाशुभम् ॥
 जाता जलप्रदस्येषा चन्द्रस्य परमग्रिया ।
 समुद्रेति भ्रातृवृष्टिस्तटे वृष्टिश्च शोभना ॥
 पर्वतं विन्दुमात्रा च छण्डवृष्टिश्च सन्धिषु ।
 सन्धी वणिग् मृहे वासः पर्वते कुम्भकृदगृहे ॥
 मालाकारगृहे सिन्धी रजकस्य गृहे तटे ।

अर्थात् सूर्य की मेष संकान्ति के समय जो चन्द्र नक्षत्र हो, उसको आदि कर

अट्टाईस नक्षत्रों को कम से स्थापित करना चाहिए। इनमें दो-दो शृंग में, एक एक नक्षत्र सन्धि हैं, और एकलएक तट में ल्यापित करें। यदि उक्त कम से रोहिणी समुद्र में पड़े तो अधिक वर्षा, शृंग में पड़े तो धोड़ी वर्षा, सन्धि में पड़े तो वर्षभाव और तट में पड़े तो अच्छी वर्षा होती है। यदि रोहिणी नक्षत्र सन्धि में हो तो वैश्य के घर, गर्वत पर हो तो कुम्हार के घर, सिन्धु में हो तो माली के घर और तट में हो तो धोड़ी के घर रोहिणी का वास समझना चाहिए। रोहिणी चक्र में अश्विनी नक्षत्र के स्थान पर मेघ सूर्य संक्रान्ति का नक्षत्र रखना होगा।

रोहिणी—चक्र

उत्तर भाद्रषद सन्धि		सन्धि रोहिणी	
धर्मस्त्रा तट	शृंग	शृंग	तट पुनर्देश
सिन्धु अभिजित अवता	<img alt="A square diagram divided into four quadrants by a cross. The top-left quadrant contains numbers 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62, 63, 64, 65, 66, 67, 68, 69, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 91, 92, 93, 94, 95, 96, 97, 98, 99, 100, 101, 102, 103, 104, 105, 106, 107, 108, 109, 110, 111, 112, 113, 114, 115, 116, 117, 118, 119, 120, 121, 122, 123, 124, 125, 126, 127, 128, 129, 130, 131, 132, 133, 134, 135, 136, 137, 138, 139, 140, 141, 142, 143, 144, 145, 146, 147, 148, 149, 150, 151, 152, 153, 154, 155, 156, 157, 158, 159, 160, 161, 162, 163, 164, 165, 166, 167, 168, 169, 170, 171, 172, 173, 174, 175, 176, 177, 178, 179, 180, 181, 182, 183, 184, 185, 186, 187, 188, 189, 190, 191, 192, 193, 194, 195, 196, 197, 198, 199, 200, 201, 202, 203, 204, 205, 206, 207, 208, 209, 210, 211, 212, 213, 214, 215, 216, 217, 218, 219, 220, 221, 222, 223, 224, 225, 226, 227, 228, 229, 230, 231, 232, 233, 234, 235, 236, 237, 238, 239, 240, 241, 242, 243, 244, 245, 246, 247, 248, 249, 250, 251, 252, 253, 254, 255, 256, 257, 258, 259, 259, 260, 261, 262, 263, 264, 265, 266, 267, 268, 269, 269, 270, 271, 272, 273, 274, 275, 276, 277, 278, 279, 279, 280, 281, 282, 283, 284, 285, 286, 287, 287, 288, 289, 289, 290, 290, 291, 291, 292, 292, 293, 293, 294, 294, 295, 295, 296, 296, 297, 297, 298, 298, 299, 299, 300, 300, 301, 301, 302, 302, 303, 303, 304, 304, 305, 305, 306, 306, 307, 307, 308, 308, 309, 309, 310, 310, 311, 311, 312, 312, 313, 313, 314, 314, 315, 315, 316, 316, 317, 317, 318, 318, 319, 319, 320, 320, 321, 321, 322, 322, 323, 323, 324, 324, 325, 325, 326, 326, 327, 327, 328, 328, 329, 329, 330, 330, 331, 331, 332, 332, 333, 333, 334, 334, 335, 335, 336, 336, 337, 337, 338, 338, 339, 339, 340, 340, 341, 341, 342, 342, 343, 343, 344, 344, 345, 345, 346, 346, 347, 347, 348, 348, 349, 349, 350, 350, 351, 351, 352, 352, 353, 353, 354, 354, 355, 355, 356, 356, 357, 357, 358, 358, 359, 359, 360, 360, 361, 361, 362, 362, 363, 363, 364, 364, 365, 365, 366, 366, 367, 367, 368, 368, 369, 369, 370, 370, 371, 371, 372, 372, 373, 373, 374, 374, 375, 375, 376, 376, 377, 377, 378, 378, 379, 379, 380, 380, 381, 381, 382, 382, 383, 383, 384, 384, 385, 385, 386, 386, 387, 387, 388, 388, 389, 389, 390, 390, 391, 391, 392, 392, 393, 393, 394, 394, 395, 395, 396, 396, 397, 397, 398, 398, 399, 399, 400, 400, 401, 401, 402, 402, 403, 403, 404, 404, 405, 405, 406, 406, 407, 407, 408, 408, 409, 409, 410, 410, 411, 411, 412, 412, 413, 413, 414, 414, 415, 415, 416, 416, 417, 417, 418, 418, 419, 419, 420, 420, 421, 421, 422, 422, 423, 423, 424, 424, 425, 425, 426, 426, 427, 427, 428, 428, 429, 429, 430, 430, 431, 431, 432, 432, 433, 433, 434, 434, 435, 435, 436, 436, 437, 437, 438, 438, 439, 439, 440, 440, 441, 441, 442, 442, 443, 443, 444, 444, 445, 445, 446, 446, 447, 447, 448, 448, 449, 449, 450, 450, 451, 451, 452, 452, 453, 453, 454, 454, 455, 455, 456, 456, 457, 457, 458, 458, 459, 459, 460, 460, 461, 461, 462, 462, 463, 463, 464, 464, 465, 465, 466, 466, 467, 467, 468, 468, 469, 469, 470, 470, 471, 471, 472, 472, 473, 473, 474, 474, 475, 475, 476, 476, 477, 477, 478, 478, 479, 479, 480, 480, 481, 481, 482, 482, 483, 483, 484, 484, 485, 485, 486, 486, 487, 487, 488, 488, 489, 489, 490, 490, 491, 491, 492, 492, 493, 493, 494, 494, 495, 495, 496, 496, 497, 497, 498, 498, 499, 499, 500, 500, 501, 501, 502, 502, 503, 503, 504, 504, 505, 505, 506, 506, 507, 507, 508, 508, 509, 509, 510, 510, 511, 511, 512, 512, 513, 513, 514, 514, 515, 515, 516, 516, 517, 517, 518, 518, 519, 519, 520, 520, 521, 521, 522, 522, 523, 523, 524, 524, 525, 525, 526, 526, 527, 527, 528, 528, 529, 529, 530, 530, 531, 531, 532, 532, 533, 533, 534, 534, 535, 535, 536, 536, 537, 537, 538, 538, 539, 539, 540, 540, 541, 541, 542, 542, 543, 543, 544, 544, 545, 545, 546, 546, 547, 547, 548, 548, 549, 549, 550, 550, 551, 551, 552, 552, 553, 553, 554, 554, 555, 555, 556, 556, 557, 557, 558, 558, 559, 559, 560, 560, 561, 561, 562, 562, 563, 563, 564, 564, 565, 565, 566, 566, 567, 567, 568, 568, 569, 569, 570, 570, 571, 571, 572, 572, 573, 573, 574, 574, 575, 575, 576, 576, 577, 577, 578, 578, 579, 579, 580, 580, 581, 581, 582, 582, 583, 583, 584, 584, 585, 585, 586, 586, 587, 587, 588, 588, 589, 589, 590, 590, 591, 591, 592, 592, 593, 593, 594, 594, 595, 595, 596, 596, 597, 597, 598, 598, 599, 599, 600, 600, 601, 601, 602, 602, 603, 603, 604, 604, 605, 605, 606, 606, 607, 607, 608, 608, 609, 609, 610, 610, 611, 611, 612, 612, 613, 613, 614, 614, 615, 615, 616, 616, 617, 617, 618, 618, 619, 619, 620, 620, 621, 621, 622, 622, 623, 623, 624, 624, 625, 625, 626, 626, 627, 627, 628, 628, 629, 629, 630, 630, 631, 631, 632, 632, 633, 633, 634, 634, 635, 635, 636, 636, 637, 637, 638, 638, 639, 639, 640, 640, 641, 641, 642, 642, 643, 643, 644, 644, 645, 645, 646, 646, 647, 647, 648, 648, 649, 649, 650, 650, 651, 651, 652, 652, 653, 653, 654, 654, 655, 655, 656, 656, 657, 657, 658, 658, 659, 659, 660, 660, 661, 661, 662, 662, 663, 663, 664, 664, 665, 665, 666, 666, 667, 667, 668, 668, 669, 669, 670, 670, 671, 671, 672, 672, 673, 673, 674, 674, 675, 675, 676, 676, 677, 677, 678, 678, 679, 679, 680, 680, 681, 681, 682, 682, 683, 683, 684, 684, 685, 685, 686, 686, 687, 687, 688, 688, 689, 689, 690, 690, 691, 691, 692, 692, 693, 693, 694, 694, 695, 695, 696, 696, 697, 697, 698, 698, 699, 699, 700, 700, 701, 701, 702, 702, 703, 703, 704, 704, 705, 705, 706, 706, 707, 707, 708, 708, 709, 709, 710, 710, 711, 711, 712, 712, 713, 713, 714, 714, 715, 715, 716, 716, 717, 717, 718, 718, 719, 719, 720, 720, 721, 721, 722, 722, 723, 723, 724, 724, 725, 725, 726, 726, 727, 727, 728, 728, 729, 729, 730, 730, 731, 731, 732, 732, 733, 733, 734, 734, 735, 735, 736, 736, 737, 737, 738, 738, 739, 739, 740, 740, 741, 741, 742, 742, 743, 743, 744, 744, 745, 745, 746, 746, 747, 747, 748, 748, 749, 749, 750, 750, 751, 751, 752, 752, 753, 753, 754, 754, 755, 755, 756, 756, 757, 757, 758, 758, 759, 759, 760, 760, 761, 761, 762, 762, 763, 763, 764, 764, 765, 765, 766, 766, 767, 767, 768, 768, 769, 769, 770, 770, 771, 771, 772, 772, 773, 773, 774, 774, 775, 775, 776, 776, 777, 777, 778, 778, 779, 779, 780, 780, 781, 781, 782, 782, 783, 783, 784, 784, 785, 785, 786, 786, 787, 787, 788, 788, 789, 789, 790, 790, 791, 791, 792, 792, 793, 793, 794, 794, 795, 795, 796, 796, 797, 797, 798, 798, 799, 799, 800, 800, 801, 801, 802, 802, 803, 803, 804, 804, 805, 805, 806, 806, 807, 807, 808, 808, 809, 809, 810, 810, 811, 811, 812, 812, 813, 813, 814, 814, 815, 815, 816, 816, 817, 817, 818, 818, 819, 819, 820, 820, 821, 821, 822, 822, 823, 823, 824, 824, 825, 825, 826, 826, 827, 827, 828, 828, 829, 829, 830, 830, 831, 831, 832, 832, 833, 833, 834, 834, 835, 835, 836, 836, 837, 837, 838, 838, 839, 839, 840, 840, 841, 841, 842, 842, 843, 843, 844, 844, 845, 845, 846, 846, 847, 847, 848, 848, 849, 849, 850, 850, 851, 851, 852, 852, 853, 853, 854, 854, 855, 855, 856, 856, 857, 857, 858, 858, 859, 859, 860, 860, 861, 861, 862, 862, 863, 863, 864, 864, 865, 865, 866, 866, 867, 867, 868, 868, 869, 869, 870, 870, 871, 871, 872, 872, 873, 873, 874, 874, 875, 875, 876, 876, 877, 877, 878, 878, 879, 879, 880, 880, 881, 881, 882, 882, 883, 883, 884, 884, 885, 885, 886, 886, 887, 887, 888, 888, 889, 889, 890, 890, 891, 891, 892, 892, 893, 893, 894, 894, 895, 895, 896, 896, 897, 897, 898, 898, 899, 899, 900, 900, 901, 901, 902, 902, 903, 903, 904, 904, 905, 905, 906, 906, 907, 907, 908, 908, 909, 909, 910, 910, 911, 911, 912, 912, 913, 913, 914, 914, 915, 915, 916, 916, 917, 917, 918, 918, 919, 919, 920, 920, 921, 921, 922, 922, 923, 923, 924, 924, 925, 925, 926, 926, 927, 927, 928, 928, 929, 929, 930, 930, 931, 931, 932, 932, 933, 933, 934, 934, 935, 935, 936, 936, 937, 937, 938, 938, 939, 939, 940, 940, 941, 941, 942, 942, 943, 943, 944, 944, 945, 945, 946, 946, 947, 947, 948, 948, 949, 949, 950, 950, 951, 951, 952, 952, 953, 953, 954, 954, 955, 955, 956, 956, 957, 957, 958, 958, 959, 959, 960, 960, 961, 961, 962, 962, 963, 963, 964, 964, 965, 965, 966, 966, 967, 967, 968, 968, 969, 969, 970, 970, 971, 971, 972, 972, 973, 973, 974, 974, 975, 975, 976, 976, 977, 977, 978, 978, 979, 979, 980, 980, 981, 981, 982, 982, 983, 983, 984, 984, 985, 985, 986, 986, 987, 987, 988, 988, 989, 989, 990, 990, 991, 991, 992, 992, 993, 993, 994, 994, 995, 995, 996, 996, 997, 997, 998, 998, 999, 999, 1000, 1000, 1001, 1001, 1002, 1002, 1003, 1003, 1004, 1004, 1005, 1005, 1006, 1006, 1007, 1007, 1008, 1008, 1009, 1009, 1010, 1010, 1011, 1011, 1012, 1012, 1013, 1013, 1014, 1014, 1015, 1015, 1016, 1016, 1017, 1017, 1018, 1018, 1019, 1019, 1020, 1020, 1021, 1021, 1022, 1022, 1023, 1023, 1024, 1024, 1025, 1025, 1026, 1026, 1027, 1027, 1028, 1028, 1029, 1029, 1030, 1030, 1031, 1031, 1032, 1032, 1033, 1033, 1034, 1034, 1035, 1035, 1036, 1036, 1037, 1037, 1038, 1038, 1039, 1039, 1040, 1040, 1041, 1041, 1042, 1042, 1043, 1043, 1044, 1044, 1045, 1045, 1046, 1046, 1047, 1047, 1048, 1048, 1049, 1049, 1050, 1050, 1051, 1051, 1052, 1052, 1053, 1053, 1054, 1054, 1055, 1055, 1056, 1056, 1057, 1057, 1058, 1058, 1059, 1059, 1060, 1060, 1061, 1061, 1062, 1062, 1063, 1063, 1064, 1064, 1065, 1065, 1066, 1066, 1067, 1067, 1068, 1068, 1069, 1069, 1070, 1070, 1071, 1071, 1072, 1072, 1073, 1073, 1074, 1074, 1075, 1075, 1076, 1076, 1077, 1077, 1078, 1078, 1079, 1079, 1080, 1080, 1081, 1081, 1082, 1082, 1083, 1083, 1084, 1084, 1085, 1085, 1086, 1086, 1087, 1087, 1088, 1088, 1089, 1089, 1090, 1090, 1091, 1091, 1092, 1092, 1093, 1093, 1094, 1094, 1095, 1095, 1096, 1096, 1097, 1097, 1098, 1098, 1099, 1099, 1100, 1100, 1101, 1101, 1102, 1102, 1103, 1103, 1104, 1104, 1105, 1105, 1106, 1106, 1107, 1107, 1108, 1108, 1109, 1109, 1110, 1110, 1111, 1111, 1112, 1112, 1113, 1113, 1114, 1114, 1115, 1115, 1116, 1116, 1117, 1117, 1118, 1118, 1119, 1119, 1120, 1120, 1121, 1121, 1122, 1122, 1123, 1123, 1124, 1124, 1125, 1125, 1126, 1126, 1127, 1127, 1128, 1128, 1129, 1129, 1130, 1130, 1131, 1131, 1132, 1132, 1133, 1133, 1134, 1134, 1135, 1135, 1136, 1136, 1137, 1137, 1138, 1138, 1139, 1139, 1140, 1140, 1141, 1141, 1142, 1142, 1143, 1143, 1144, 1144, 1145, 1145, 1146, 1146, 1147, 1147, 1148, 1148, 1149,		

वर्षा अधिक मनोरम होती है। चैत्र शुक्लपक्ष में आकाश में बादलों का छाया रहना शुभ समझा जाता है। यदि चैत्र शुक्ला पंचमी को रोहिणी नक्षत्र हो और इस दिन बादल आकाश में दिखलाई पड़े तो निश्चय से आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होती है। सुभिक्ष रहता है तथा प्रजा में गुण-आन्ति रहती है। सूर्य जिस समय या जिस दिन आद्री में प्रवेश करता है, उस समय या उस दिन के अनुसार भी वर्षा और सुभिक्ष का फल जात किया जाता है। आचार्य मेघ महोदय गार्ग ने लिखा है कि सूर्य रविवार के दिन आद्री नक्षत्र में प्रवेश करे तो वर्षा का अभाव या अल्पवृष्टि, देश में उपद्रव, पशुओं का नाश, फसल की कमी, अन्त का भाव महेंगा एवं देश में उपद्रव आदि फल बढ़ित होते हैं। सोमवार को आद्री में रवि का प्रवेश हो तो समयानुकूल योग्य वर्षा, सुभिक्ष, आन्ति, परस्पर मेघ-मिलाप की वृद्धि, सहयोग का विकास, देश की उन्नति, व्यापारियों को लाभ, तिलहन में विशेष लाभ, वस्त्र-व्यापार का विकास एवं वृत्त भस्ता होता है। मंगलवार को आद्री में रवि का प्रवेश हो तो देश में धन की हानि, अग्निभय, कलह-विसंवादों की वृद्धि, जनता में परस्पर संघर्ष, चोर-नुटेरों की उन्नति, साधारण वर्षा, फसल में कमी और बन एवं खनिज पदार्थों की उत्पत्ति में कमी होती है। शुधवार को आद्री में सूर्य का प्रवेश हो तो प्रच्छी वर्षा, सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, रस भाव महेंगा, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अधिक, भोजी-पाणिक्य की उत्पत्ति में वृद्धि, वृत्त की कमी, पशुओं में रोग और देश का आश्रिक विकास होता है। गुरुवार के दिन आद्री में सूर्य का प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अर्थ वृद्धि, देश में उपद्रव, महामारियों का प्रकोप, गुड़-गूड़ का भाव महेंगा तथा अन्य प्रकार के अनाजों का भाव सस्ता; शुक्रवार में प्रवेश हो तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा, पर माघ में वर्षा का अभाव तथा जातिक में भी वर्षा की कमी रहती है। उसके अतिरिक्त पाशल में साधारणतः रोग, पशुओं में व्याधि और अग्निभय एवं शनिवार को प्रवेश हो तो दुष्काल, वर्षीभाव या अल्पवृष्टि, असमय पर अधिक वर्षा, अनावृष्टि के कारण जनता में अशान्ति, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, धान्य का अभाव और व्यापार में भी हानि होती है। वर्षा का अविज्ञान रवि का आद्री में प्रवेश होने पर किया जा सकेगा। पर इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रवेश के समय चन्द्र नक्षत्र कीन-सा है? यदि चन्द्र नक्षत्र मृदु और जलसंज्ञक हो तो निश्चयतः अच्छी वर्षा होती है। उपर तथा अन्ति संज्ञक नक्षत्रों में जल की वर्षा नहीं होती। प्रातःकाल आद्री में प्रवेश होने पर सुभिक्ष और साधारण वर्षा, मध्याह्न काल में प्रवेश होने पर चातुर्मास के त्रायम् में वर्षा, मध्य में कमी और अन्त में अल्पवृष्टि एवं रस्त्या समय प्रवेश होने पर अतिवृष्टि या अनावृष्टि का योग रहता है। रात्रि में जब सूर्य आद्री में प्रवेश करता है, तो उस वर्षे वर्षा अच्छी होती है, फिल्हा फसल साधारण ही रहती है। अन्त का भाव निरन्तर ऊँचा-नीचा होता रहता है। सबसे

उत्तम समय ग्रन्थ रात्रि का है। इस समय रवि आर्द्ध में प्रवेश करता है तो अच्छी वर्षा और धान्य की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब सूर्य का आर्द्ध में प्रवेश हो उस समय चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण में प्रवेश करे अथवा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो ग्रन्थी धान्य से परिपूर्ण हो जाती है। जिस ग्रह के साथ सूर्य का इत्थशाल सम्बन्ध हो, उसके अनुसार भी फलादेश घटित होता है। भंगल, चन्द्रमा और शनि के साथ यदि सूर्य इत्थशाल कर रहा हो तो उस वर्ष घोर दुष्मिक्षा तथा अतिदृष्टि या अनावृट्टि का योग समझना चाहिए। गुरु के साथ यदि सूर्य का इत्थशाल हो तो यथेष्ट वर्षा, सुष्मिक्षा और जनता में शान्ति रहती है। व्यापार के लिए भी यह योग उत्तम है। देश का आर्थिक विकास होता है। बुध के साथ सूर्य का इत्थशाल हो तो पशुओं के व्यापार में विशेष लक्ष्य, समयानुकूल वर्षा, धान्य की दृढ़ि और सुख-शान्ति रहती है। शुक्र के साथ इत्थशाल होने पर चातुर्मास में कुल तीस दिन वर्षा होती है।

प्रश्नलग्नानुसार वर्षा का विचार—यदि प्रश्नलग्न के समय चौथे स्थान में राहु और शनि हों तो उस वर्ष घोर दुष्मिक्षा होता है तथा वर्षा का अभाव रहता है। यदि चौथे स्थान में भंगल हो तो उस वर्ष वर्षा साधारण ही होती है और फसल भी उत्तम नहीं होती। चौथे स्थान में गुरु और शुक्र के रहने से वर्षा उत्तम होती है। चन्द्रमा चौथे स्थान में हो तो श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा होती है; किन्तु कात्तिक में वर्षा का अभाव और आश्विन में कुल सात दिन वर्षा होती है। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल भी अच्छी नहीं हो पाती। यदि प्रश्नलग्न में गुरु हो और एक या दो ग्रह उच्च के चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव में स्थित हों तो वर्ष बहुत ही उत्तम होता है। ममगानुसार यथेष्ट वर्षा होती है, गेहौं, चना, धान, जी, तिलहन, पन्ना आदि की फसल बहुत अच्छी होती है। जूट का भाव ऊपर उठता है तथा इसकी फसल भी बहुत अच्छी रहती है। व्यापारियों के लिए वर्ष बहुत ही अच्छा रहता है। यदि प्रश्नलग्न में कन्या राशि हो तो अच्छी वर्षा, पूर्वीय हवा के साथ होती है। वर्ष में कुल 90 दिन वर्षा होती है, फसल भी अच्छी होती है। मनुष्य और पशुओं को सुख-शान्ति मिलती है। केन्द्र स्थानों में शुभ ग्रह हों तो सुष्मिक्षा और वर्षा होती है जिस दिशा में कूर ग्रह हो अथवा शनि देखें तो उस दिशा में अवश्य दुष्मिक्षा होता है। यदि वर्षा के सम्बन्ध में प्रश्न करने वाला पाँचों अंगुलियों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अलए वर्षा, फसल की अति एवं अँगूठे का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा होती है। यदि वर्षा के प्रश्न वाल में पृच्छक सिर का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो आश्विन में वर्षा भाव तथा अन्य महीनों में साधारण वर्षा; वान का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, पर भाद्रपद में कुल दस दिन की वर्षा; अँखों को मलता हुआ प्रश्न करे तो चातुर्मास के सिवा अन्य महीनों में वर्षा का

अभाव तथा चातुर्मासि में भी कुल सत्ताईस दिन वर्षा; घुटनों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सामान्यतया सभी महीनों में वर्षा, फसल उत्तम जनता का आर्थिक विकास, कला-जौशन की वृद्धि; पेट का सार्ण करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा, फसल साधारण, देश का आर्थिक विकास, अभिभव, जलभव, बाढ़ आने का भय; कमर स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो परिमित वर्षा, धान्य की सामान्य उत्पत्ति, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, बस्तुओं के भाव महेंगे; पर्वि का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो श्रावण में वर्षा की कमी, अन्य महीनों में अच्छी वर्षा, फसल की अच्छी उत्पत्ति, जो और गेहूँ की विशेष उपज एवं जंघा का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अनेक प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति, मध्यम वर्षा, देश में समृद्धि, उत्तम फसल और देश का सर्वांगीण विकास होता है। प्रश्न काल में यदि मन में उत्तेजना आये, या किसी कारण से क्रोधादि आ जाये तो वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति को प्रश्नकाल में रोते हुए देखें तो चातुर्मासि में अच्छी वर्षा होती है, किन्तु फसल में कमी रहती है। व्यापारियों के लिए भी यह वर्ष उत्तम नहीं होता। प्रश्नकाल में यदि काना व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित हो और वह अपने हाथ से दाहिने कान को खुजला रहा हो तो घोर दुष्कृति की सूचना समझनी चाहिए। विकृत अंग वाला किसी भी प्रकार का व्यक्ति वहाँ रहे तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए। फसल मी साधारण ही होती है। सीम्य और सुन्दर व्यक्तियों का वहाँ उपस्थित रहना उत्तम भाना जाता है।

एकादशोऽध्यायः ०

अथातः सम्प्रदक्ष्यामि गन्धर्वनगरं तथा ।

शुभाशुभार्थभूतानां निर्गन्धस्य च भाषितम् ॥ १ ॥

अब गन्धर्व नगर का फलादेश कहता है, जिस प्रकार पूर्वाचार्यों ने प्राणियों के शुभाशुभ का निरूपण किया है, उसी प्रकार वहाँ पर भी फल अवगत करना चाहिए ॥ १ ॥

१. निर्गन्धे निपुणे यथा मु० ।

पूर्वसूरे यदा घोरं गन्धर्वनगरं भवेत् ।
नागराणां वधं विन्द्यात् तदा घोरमसंजयम् ॥२॥

यदि सूर्योदय काल में पूर्व दिशा में गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो नागरिकों का वध होता है, इसमें मन्देह नहीं है ॥२॥

'अस्तमायाति दीप्तांशौ गन्धर्वनगरं भवेत् ।
यायिनां च तु भयं विन्द्याद् तदा घोरमुपस्थितम् ॥३॥

यदि सूर्य के अस्तकाल में गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो यायी - आक्रमणकारी के लिए घोर भय की उपस्थिति गुचित करता है ॥३॥

रक्तं गन्धर्वनगरं दिशं दीप्तां यदा 'भवेत् ।
शस्त्रोत्पातं तदा विन्द्याद् दाहणं समुद्यस्थितम् ॥४॥

यदि रक्त गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात - मार-काट का भय समझना चाहिए ॥४॥

पीतं गन्धर्वनगरं दिशं 'दीप्तां यदा 'भवेत् ।
ब्याधि तदा विजानीयात् प्राणिनां मृत्युसन्निभम् ॥५॥

यदि पीत—पीता गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्राणियों के लिए मृत्यु के तुल्य कान्ठदायक ब्याधि उत्पन्न होती है ॥५॥

कृष्णं गन्धर्वनगरमपरा⁷ 'दिशिभासृतम् ।
वधं तदा विजानीयाद् भयं वा शूद्रयोनिजम् ॥६॥

यदि कृष्ण वर्ण—काले रंग का गन्धर्वनगर पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़े तो वध -- मार-काट से उत्पन्न वध होता है तथा शूद्रों के लिए भयोत्पादक है ॥६॥

श्वेतं गन्धर्वनगरं दिशं सौभ्यां यदा भूशम् ।
राज्ञो विजयमाल्याति¹⁰ नगरश्च धनान्वितम् ॥७॥

यदि श्वेत गन्धर्वनगर उत्तर दिशा में दिखलाई पड़े तो राजा की विजय होती है और नगर धन-धान्य से अरिपूर्ण होता है ॥७॥

1. अस्तं याते वशाऽदित्ये मू० । 2. नदा मू० । 3. वधं मू० । 4. भूशम् मू० ।
5. पाम्बां मू० । 6. भूशम् मू० । 7. अपास्यां मू० । 8. मृतं दिजि मू० । 9. वर्ष मू०
A. B. D. । 10. वशाऽद्य मू०; नगर मू० C. ।

सर्वस्त्रियि यदा दिक्षु गन्धर्वनगरं भवेत् ।
सर्वे वर्णा विरुद्ध्यन्ते सर्वदिक्षु परस्परम् ॥४॥

यदि सभी दिशाओं में गन्धर्वनगर हो तो सभी दिशाओं में गभी वर्ण वाले परस्पर विरोध करते हैं—कलह करते हैं ॥४॥

कपिलं सस्यघाताय मांजिष्ठं हरिणं ^१गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते बलक्षोभं ^२न संशयः ॥५॥

कपिल वर्ण का गन्धर्वनगर धात्य शोतक, मञ्जिष्ठ वर्ण का गन्धर्वनगर हरिण, गौ आदि पशुओं का धातक और अव्यक्त वर्ण का गन्धर्वनगर गेता में क्षेत्र उत्पन्न करता है ॥५॥

गन्धर्वनगरं स्तिरधं सप्राकारं सतोरणम् ।
शान्तदिशि समाश्रित्य राजस्तद् विजयं ^३बदेत् ॥६॥

यदि स्तिरध, पश्चोटा और तोरण सहित गन्धर्वनगर नीरव दिशा में दिखलाई पड़े तो राजा के लिए विजय देने वाला होता है ॥६॥

गन्धर्वनगरं अप्योम्नि पश्चवं यदि दृश्यते ।
वाताशनिनिपातांस्तु तत् करोति सुदारुणम् ॥७॥

यदि आताश में पश्चव—कठोर गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वायु के चलने और विजली के घिरने का महान भय होता है ॥७॥

इन्द्रायुधसवर्णं च धूमाग्निसदृशं च यत् ।
तदाग्निभयमाल्याति गन्धर्वनगरं भृणाम् ॥८॥

यदि इन्द्रधनुष के रूपान वर्णमाला और धूमयुक्त अग्नि के रूपान गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो मनुष्यों को अग्नि-भय हो जाहै ॥८॥

खण्डं विज्ञीर्ण ^४सच्छिद्रं गन्धर्वनगरं यदा ।
तदा तस्करसंघानां ^५भयं सञ्जायते सदा ॥९॥

यदि खण्डत, विश्रुत्वलित और छिद्रयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो पृथ्वी पर चोरों का भय होता है ॥९॥

यदा गन्धर्वनगरं सप्राकारं सतोरणम् ।
दृश्यते तस्करान् हन्ति तदा ^६चानूपवासिनः ॥१०॥

1. यथा मू० । 2. समन्वयः मू० । 3. नैरम् मू० । 4. छिद्रं या मू० । 5. स भयं जायते भूति मू० । 6. यथान्तरवाचिनः मू० ।

यदि गन्धर्व नगर परकोटा और तीरणरहित दिखलाई पड़े तो बनवासी तस्करों - चोरों और अनूपदेश निवासियों का विनाश होता है ॥14॥

विशेषतापसव्यं तु गन्धर्वनगरं यदा ।

परतज्जेति सहजा नगरं त्राभिभूयते ॥15॥

यदि विशेष रूप से अपसव्य—दक्षिण की ओर गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो परशासन के द्वारा नगर का घेरा ढाला जाता है—परशासन का आक्रमण होता है ॥15॥

गन्धर्वनगरं शिंश्रुं जायते वाभिदक्षिणम् ।

स्वपक्षागमनं चैव जयं वृद्धि जलं वहेत् ॥16॥

यदि शीघ्रतापूर्वक दक्षिण की ओर गन्धर्वनगर यमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो स्वपक्ष की सिद्धि, जय, वृद्धि और बल—सामर्थ्य की प्राप्ति होती है ॥16॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रकटं तु दवाग्निवत् ।

दृश्यते पुररोधाय तद्भवेत्नान्व संशयः ॥17॥

जब गन्धर्वनगर दावाग्नि—बरण्य में लगी अग्नि के सभान दिखलाई पड़े तब नगर का अवरोध अवश्य होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥17॥

अपसव्यं विशीर्णं तु गन्धर्वनगरं यदा ।

तदा विलुप्यते राष्ट्रं बलक्षोभश्च जायते ॥18॥

अपसव्य—दक्षिण की ओर जर्जरित गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राष्ट्रों में विप्लव—उपद्रव और सेना में क्षोभ होता है ॥18॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रविशेच्चाभिदक्षिणम् ।

अपूर्वं लभते राजा तदा स्फीतां बसुन्धराम् ॥19॥

जब गन्धर्वनगर दक्षिण से प्रवेश करे—दक्षिण से चारों दिशाओं की ओर घूमता हुआ दिखलाई दे तब राजा अपूर्व विशाल भूमि प्राप्त करता है ॥19॥

सव्वजं सपताकं वा सुस्तिर्घं सुप्रतिष्ठितम् ।

शान्तां दिशं प्रपद्येत राजवृद्धिस्तथा भवेत् ॥20॥

जब जा और पताकाओं से युक्त स्तिर्घ तथा सुव्ववस्थित शान्त दिशा—

1. परिवार्यते मु० । 2. दक्षिणे जायते यदा । 3. विशीर्णेत् मु० C. । 4. नदाऽऽविज्ञेत् मु० ॥

वीरव दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजवृद्धि का फलादेश समझना चाहिए ॥20॥

यदा १चाभैर्धनैसिथं २सप्तनैः सबलाहकम् ।
३गन्धर्वनगरं ४सिंधं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥21॥

यदि शुभ मेघों से युक्त विद्युत् सहित सिंध गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की बाढ़ आती है—वर्षा अधिक होती है और नदियों में बाढ़ आती है; गर्वंश जल ही जल दिखलाई पड़ता है ॥21॥

१सध्वजं २सप्तताकं वा ३गन्धर्वनगरं ४भवेत् ।
५दीप्तां दिशं ६सप्तश्चित्य विष्टतं ७राजमृत्युदम् ॥22॥

यदि ध्वजा और उतावा गृहिणी गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो विष्मित रूप में राजा की मृत्यु होती है ॥22॥

विदिक्षु १चापि सवसु २गन्धर्वनगरं यदा ।
३संकरः ४लवंशर्णिनां तदा भवति दारणः ॥23॥

यदि सभी विदिशाओं में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सभी वर्णों का अत्यन्त संकर-सम्मिश्रण होता है ॥23॥

१द्विवर्णं वा २त्रिवर्णं वा ३गन्धर्वनगरं ४भवेत् ।
५त्रितुर्वर्णस्यं भेदं ६तदाऽज्ञापि विनिर्दिशेत् ॥24॥

यदि दो रंग, तीन रंग या चार रंग का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी उक्त प्रकार का ही कल घटित होता है ॥24॥

अनेकवर्णसंस्थानं १गन्धर्वनगरं २यदा ।
३क्षुभ्यन्ते तत्र राष्ट्राणि ४ग्रामाश्च नगराणि च ॥25॥
५सङ् ६ग्रामाश्चापि जायन्ते ७मांसशोणितकर्द्मसाः ।
८एते श्च ९लक्षणैर्युक्तं १०भद्रबाहुवचो ४यथा ॥26॥

यदि अनेक वर्ण आकार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर, ग्राम और राष्ट्र में शोण उत्सन होता है, शुद्ध होते हैं और स्थान मांस तथा रक्त ती धीचड़ से भर जाते हैं। उक्त प्रकार के निमित्त शे अनेक प्रकार का उत्पत्त होता है, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वक्तव्य है ॥25-26॥

1. शुद्धैः २. ग्रामिणैः ३. नगरा ४. भेदैः ५. ग्रामैः ६. भवेत् ७. श्रवन्तवर्णन्ते ८. ग्रामिण-लक्षणाणि-पात्रैः ९. यथा १०. वचोः

रक्तं गन्धर्वनगरं क्षत्रियाणां भयावहम् ।
पीतं वैश्यान् निहन्त्याशु कृष्णं शूद्रान् सितं द्विजान् ॥२७॥

लाल रंग का गन्धर्वनगर क्षत्रियों के लिए भयोत्पादक, पीतवर्ण का गन्धर्वनगर वैश्यों को, कृष्णवर्ण का गन्धर्वनगर शूद्रों को और श्वेत वर्ण का गन्धर्वनगर ब्राह्मणों को भयोत्पादक होने के साथ शीघ्र ही विनाश करता है ॥२७॥

अरण्यानि तु सर्वाणि गन्धर्वनगरं यदा ।

आरण्यं जायते ^१सर्वं ^२तद्राष्टुं नात्र संशयः ॥२८॥

यदि अरण्य में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही राष्ट्र उषड़कर अरण्य —जंगल बन जाता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२८॥

अम्बरेषूदकं विन्द्याद् भयं प्रहरणेषु च ।

अग्निजेषुपकरणेषु भयमन्तेः समादिशेत् ॥२९॥

यदि स्वच्छ आकाश में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की वृष्टि, अस्त्रों के बीच गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भय और अग्नि सम्बन्धी उपकरणों के मध्य गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है ॥२९॥

शुभाऽशुभं विजानीयाच्चातुर्वर्ण्य यथाक्रमम् ।

दिक्षु सर्वासु नियतं भद्रबाहुबचो यथा ॥३०॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों को क्रमानुसार पूर्वादि सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर के अनुसार भद्रबाहु स्वामी के वचनों से शुभाशुभत्व जगन्नामा चाहिए ॥३०॥

उल्कावत् साधनं दिक्षु जानीयात् पूर्वकीर्तितम् ।

गन्धर्वनगरं ^३सर्वं यथावदनुपूर्वशः ॥३१॥

उल्का के समान पूर्व वताये गये निमित्तों के अनुसार गन्धर्व नगरों के फलाफल को अवगत कर लेना चाहिए ॥३१॥

इति भद्रबाहुविरचिते निखिलनिमित्तोद्याधिकारद्वावशांगाद् — उद्घृत-
निमित्तशास्त्रे गन्धर्वनगरं एकादशमं लक्षणम् ।

विवेचन—वराहमिहिर ने उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशा के गन्धर्वनगर का फलादेश क्रमः पुरोहित, राजा, सेनापति और युवराज को विघ्नकारक बताया है। श्वेत, रथ, पीत और कृष्ण वर्ण के गन्धर्वनगर को ब्राह्मण,

अत्रिय, वैश्व और शूद्रों के नाश का कारण माना है। उत्तर दिशा में गन्धर्वनगर होतो राजाओं को जयदायी; इशान, अग्नि और वायुकोण में स्थित हो तो नीच शाति का नाश होता है। शान्त दिशा में तोरणयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो प्रशासकों की विजय होती है। यदि सभी दिशाओं में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा और राज्य के लिए समान रूप में भयदायक होता है। धूम, अनल और इन्द्रधनुष के समान हो तो चोर और बनवासियों को कट्ट देता है। कुछ पाडुरंग का गन्धर्वनगर हो तो वज्रपात होता है, भव्यकर पवन भी चलता है। दीप्त दिशा में गन्धर्वनगर हो तो राजा की मृत्यु, जाम दिशा में हो तो गच्छय और दक्षिण भाग में स्थित हो तो जय की प्राप्ति होती है। नाना रंग की पताका गंगुली युक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो रण में हाथी, मनुष्य और घोड़ों का अधिक रक्तपात होता है।

आषाढ़ शृंखिषुभ्र ने बतलाया है कि पूर्व दिशा में गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो पश्चिम दिशा का नाश अवश्य होता है। पश्चिम में अन और वम्ब की कमी रहती है। अनेक प्रकार के कट्ट पश्चिम निवासियों को गहन करने पड़ते हैं। दक्षिण दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा का नाश होता है, प्रशासक वर्ग में आपसी मनमुटाव भी रहता है, नेताओं में आरण्यिक कलह होती है, जिसमें आन्तरिक अशान्ति होती रहती है। पश्चिम दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व के वैभव का विनाश करता है। पूर्व में हैजा, प्लेग जैसी संक्रामक बीमारियाँ फैलती हैं और प्रबोधिया का प्रकोप भी अधिक रहेगा। उक्त दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा के निवासियों को अनेक प्रकार का कट्ट देता है। उत्तर दिशा का गन्धर्वनगर उत्तर निवासियों के लिए ही नाटकारक होता है। यह धन, गन और वैभव का विनाश करता है। हेमन्तकृत्तु के गन्धर्वनगर में गोमों का विशेष आतंक रहता है। वसन्त कृत्तु में दिखाई देनेवाला गन्धर्वनगर मुकाल करता है तथा जनता का पूर्णसूप से आधिक विकास होता है। ग्रीष्मकृत्तु में दिखाई देनेवाला गन्धर्वनगर नगर का विनाश करता है, नागरिकों में अनेक प्रकार के अशान्ति फैलाता है। अनाज की उपज भी कम होती है। वस्त्रामाल का कारण भी जनता में अशान्ति रहती है। अपस में भी झगड़े बढ़ते हैं, जिससे परिस्थिति उत्तरोत्तर विपरीत होती जाती है। वर्षा कृत्तु में दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर वर्ग का अभाव करता है। इस गन्धर्वनगर का फल दुष्काल भी है। व्यापारी और कृषक दोनों के लिए ही उग प्रकार के गन्धर्वनगर का फलादेश अजुब होता है। जिस वर्ष में उग प्रकार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ता है, उग वर्ष में गहौं और चावल की उपज भी बहुत कम होती है। शरदकृत्तु में गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो मनुष्यों की अनेक प्रकार की पीड़ा होती है। चोट लगना, शरीर में धाव लगना, जैवक निकलना एवं अनेक प्रकार के फोड़े होना आदि फल घटित होते हैं। अवशेष शृतओं में गन्धर्वनगर

दिखलाई दे तो नागरिकों को कष्ट होता है। साथ ही छः महीने तक उपद्रव होते रहते हैं। प्रकृति का प्रकोप होने से अनेक प्रकार की वीमारियाँ भी होती हैं। रात्रि में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो देश की आर्थिक हानि, बैदेशिक सम्मान का अभाव तथा देशेषासियों को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। यदि कुछ रात्रि जेष रहे तब गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चोर, नृपति, प्रबन्धक एवं पूजीपतियों के लिए हानिकारक होता है। रात्रि के अन्तिम प्रहर में—ब्रह्ममुहूर्त काल में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस प्रदेश में धन सपदा का अधिक विकास होता है। भूमि के नीचे से धन प्राप्त होता है। यह गन्धर्वनगर सुभिक्षकारक है। इसके द्वारा धन-धान्य की वृद्धि होती है। प्रशासक वर्ग का भी अभ्युदय होता है। कला-कौशल की वृद्धि के लिए भी इस समय का गन्धर्वनगर श्रेष्ठ माना गया है।

पैंचरंगा गन्धर्वनगर हो तो नागरिकों में भय और आतंक का संचार करता है, रोगभय भी इसके द्वारा होते हैं। हथा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल की भी क्षति पहुँचती है। श्वेत और रक्तवर्ण की वस्तुओं की भहंगाई विशेष रूप से रहती है। जनता में अशान्ति और आतंक फैलता है। श्वेतवर्ण का गन्धर्वनगर हो तो धी, तेल और दूध का नाश होता है। पशुओं की भी कमी होती है और अनेक प्रकार की व्याधियाँ भी व्याप्त हो जाती हैं। गाथ, बैल और घोड़ों की कीमत में अधिक वृद्धि होती है। तिलहन और तिल का भाव ऊँचा बढ़ता है। विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ होता है। काले रंग का गन्धर्वनगर वस्त्र नाश करता है, कणास की उत्पत्ति कम होती है तथा वस्त्र बनानेवाले मिलों में भी हड़ताल होती है, जिससे वस्त्र का भाव तेज हो जाता है। कागज तथा कागज के द्वारा निर्मित वस्तुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है। पुरानी वस्तुओं का भाव भी बढ़ जाता है तथा वस्तुओं की कमी होने के कारण बाजार तेज होता जाता है। लालरंग का गन्धर्वनगर अधिक अशुभ होता है, यह जितनी ज्यादा देर तक दिखलाई पड़ता रहता है, उतना ही हानिकारक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर का फल मार्णीठ, अगड़ा, उष्णद्रव, अस्त्र-शस्त्र का प्रहार एवं अन्य प्रकार से अगढ़े-टण्टों का होना आदि है। सभी प्रकार के रंगों में लालरंग का गन्धर्वनगर अशुभ कहा गया है। इसका फल रक्तपात निरिचित है। जिस रंग का गन्धर्वनगर जितने अधिक समय तक रहता है, उसका फल उतना ही अधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।

गन्धर्वनगर जिस स्थान या नगर में दिखलाई देता है, उसका फलादेश उसी स्थान और नगर में समझना चाहिए। जिस दिशा में दिखलाई दे उस दिशा में भी हानि या लाभ पहुँचता है। इसका फलादेश विश्वजनीत नहीं होता, केवल थोड़े से प्रदेश में ही होता है। जब गन्धर्वनगर आकाश के तारों की तरह बीच में

छाया हुआ दिखलाई दे तो भूष्य देश को अवश्य नाश करता है। यह जितनी दूर तक फैला हुआ दिखलाई दे तो समझ लेना चाहिए कि उत्तरी दूर तक देश का नाश होगा। रोग, मरण, दुभिक्ष आदि अनिष्टकारक फलादेशों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार का गन्धर्वनगर जनता, प्रशासक और उच्चबर्गों के लोगों के लिए भी भयदायक होता है। अवर्षण, सूखा आदि के कारण फसल भी भारी जाती है। यदि गन्धर्वनगर इन्द्रधनुपाकार या शांप के विल के आकार में दिखलाई पड़े तो देशनाश, दुभिक्ष, मरण, व्याघ्रि आदि अनेक प्रकार के अनिष्टकारक फल प्राप्त होते हैं। यदि चारदीवारी के सभात्म गन्धर्वनगर भी भी चाहारदीवारी दिखलाई पड़े और ऊपर के गुम्बज भी दिखलाई पड़े तो निष्चयत, प्रशासक या मन्त्री का विनाश होता है। नगर के मुखिया के लिए भी इस प्रकार का गन्धर्वनगर दुखदायक बताया गया है। जब गन्धर्वनगर का ऊपरी हिस्सा टूटा हुआ दिखलाई दे तो दस दिन के भीतर ही किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु सूचित करता है। ऊपर स्वर्ण की गुम्बज दिखलाई पड़े और ऊपर रवण-वालश भी दिखलाई देते हों तो निष्चयतः इस प्रदेश की जातिक हानि, किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु, वस्तुओं की महेनाई और रोगादि उपद्रव होती है। जब गन्धर्वनगर के धरों की स्थिति ऊंचे मन्दिरों के लम्बाज दिखलाई दे और उनके कलशों पर मालाएँ लटकती हुई दिखलाई पड़े तो दुभिक्ष, समयानुसार वर्षा, कृषि का विकास, अच्छी फसल और धन-धान्य भी समृद्ध होती है। टूटते-ढहते गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो उनका फल अच्छा नहीं होता। रोग और मानसिक आपत्तियों के साथ पारस्परिक कलह की भी सूखना समझनी चाहिए। जिस गन्धर्वनगर के हारापर सिंहाकृति दिखलाई दे, वह जनता में बल, पौश्य और शक्ति का विकास करता है। चृष्टभाकृतिवाला गन्धर्वनगर जनता को धर्म-मार्ग की ओर ने आनंदाला है। उस प्रदेश की जनता में शंथम और धर्म की भावनाएँ विशेष रूप से उत्पन्न होती हैं। जो व्यक्ति उक्त प्रदेश के गन्धर्वनगरों की स्वर्णकृति में देखता है, उसे उस क्षेत्र में शान्ति समझ लेनी चाहिए।

मात्र और वात्र के अनुसार गन्धर्वनगर का फलादेश - यदि रविवार की गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को काट, दुभिक्ष, अन्त का धाव गंगा, तृण की कमी, वृक्षजल-पापे आदि विषेने जनताओं की वृद्धि, व्यापार में लाभ, कृषि का विनाश और धन्य प्रकार के उपद्रव भी होते हैं। नेज वायु जनता है, आग्निक नारा में कुछ वर्षा होती है, जिससे ग्रामान्न स्वयं से खेती फसल हो जाती है। रविवार को सन्ध्या में गन्धर्वनगर देखने से भूकम्प का अप, मध्याह्न में गन्धर्वनगर देखने से जनता में अराजकता एवं प्रातःदात्र गूढ़ोदिय से भावि गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर में साधारणतः आन्ति रहती है। सन्ध्या काल का गन्धर्वनगर वहाँ अधिक बुरा समझा जाता है। वात में दिखलाई देने से कम कम छह दिन है।

मेघविजय मणि ने रविवार के गन्धर्वनगर को अधिक अशुभकारक बतलाया है। इस दिन का गन्धर्वनगर वर्षा का अभाव करता है तथा व्यापारिक दृष्टि से भी हानिकारक होता है। सोमवार को गन्धर्वनगर दीप्तियुक्त दिखलाई पड़े तो कलाकारों के लिए शुभफल, प्रशासक वर्ग और कृपकों के लिए भी शुभ-फलदायक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर के देशने से श्रावण और आषाढ़ मास में अच्छी वर्षा होती है। भाद्रपद और आश्विन में वर्षा की कमी रहती है। यदि इस प्रकार का गन्धर्वनगर ज्येष्ठ मास में रविवार को दिखलाई पड़े तो निष्चयतः दुष्मिक्ष होता है। आषाढ़ में रविवार को दिखलाई पड़े तो आश्विन में वर्षा, अवशेष प्रसादों में वर्षा का अभाव तथा साधारण फसल; श्रावण में दिखलाई पड़े तो भूकम्प का भय, मांगेशीर्ष में अल्प वर्षा, बन-बढ़ीचों की वृद्धि, खनिज पदार्थों की उपाज में कमी; भाद्रपद मास में रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आश्विन और कार्तिक में अनेक प्रकार के रोग, जनता में अग्नान्ति तथा उपद्रव होते हैं। आश्विन मास में रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण कट, माघ में ओरों की वर्षा, भयंकर शीत का प्रकोप और चैती फसल की हानि होती है। कानिक और अगहन मास में रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार के रोगों के साथ घृत, दूध, तैल आदि पदार्थों का अभाव होता है, गश्तों के लिए चारे की भी कमी रहती है। पौय और माघ मास में गन्धर्वनगर रविवार को दिखलाई पड़े तो छः महीनों तक जनता को आर्थिक कष्ट रहता है। निमोनिया और प्लीग दो महीने तक विशेष रूप से उत्पन्न होते हैं। होली के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष और दुष्मिक्ष पड़ता है। अन्त की अत्यन्त कमी रहती है, चोर और लुटेरों का भय-आतंक बढ़ता चला जाता है। फाल्गुन और चैत में रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन गन्धर्वनगर का दर्जन हो उससे आरह दिन के भीतर में भूकम्प या अन्य किसी भी प्रकार का महान् उत्पात होता है। वज्रपात होना या आकस्मिक घटनाओं का घटित होना आदि फलादेश समझना चाहिए। वैशाख महीने में रविवार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारणतः शुभ फल होता है। केवल उस प्रदेश के प्रशासनाधिकारी के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इसी प्रकार ज्येष्ठमास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता में साधारण शान्ति, आषाढ़ मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो श्रावण में वर्षा की कमी, धान्योत्पत्ति की साधारण कमी, वस्त्र के व्यापार में लाभ, धी, नमक और चीरी के व्यापार में अत्यधिक लाभ, सीना-चाँदी के व्यापार में साधारण हानि और अन्त के व्यापार में लाभ होता है। श्रावण मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा, श्रेष्ठ फसल और जनता में सुख-आनंद रहती है। व्यापारियों के लिए भी इस महीने का गन्धर्वनगर उत्तम मत्ता

गया है। भाद्रपद और आश्विनमास में सोमवार के दिन का गन्धर्वनगर अनिष्टकारक; लोहा, सोना, चाँदी आदि धातुओं के व्यापार में अत्यधिक लाभ, फसल साधारण एवं जनता में शान्ति रहती है। कार्त्तिकमास के सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शरद् कृत्तु में अत्यधिक हवा चलती है, जिससे शीत का प्रकोप बढ़ जाता है। अगहन मास में गन्धर्वनगर सोमवार को दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, शान्ति और आर्थिक विकास होता है। गांगतिक कार्यों की वृद्धि के लिए यह गन्धर्वनगर उत्तम माना गया है। गौप, माघ और काल्यन मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष सुभिक्ष, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, देश की समृद्धि और व्यापार में साधारण लाभ होता है। चैत्र मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, आर्थिक क्षति, अनेक प्रकार की व्याधियाँ और प्रशासकवर्ग का विनाश होता है। अन्य प्रदेशों से संबंध का भी भय रहता है। वैशाखमास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो जनता में धार्मिक रुचि उत्तम होती है, उस वर्ष अनेक धार्मिक महोत्सव होते हैं। राजा, प्रजा सभी में धर्मचरण का विकास होता है।

ज्येष्ठमास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस वर्ष आषाढ़ में साधारण वर्षा होती है, श्रावण और भाद्रपद में वर्षा की कमी रहती है तथा आश्विन मास में पुनः वर्षा हो जाती है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। व्यापारिक दृष्टि से वर्षा अच्छा नहीं रहता। लोहा, सोना और वस्त्र के व्यापार में हानि उठानी पड़ती है। पुराने पदार्थों के व्यापार में लाभ होता है। कागज के मूल्य में भी वृद्धि होती है। इसी महीने में बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अशान्ति, कष्ट, भूकम्प, वज्रायात, रोग, धनहानि आदि फल प्राप्त होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को लाभ, पारम्परिक प्रेम, शान्ति और सुभिक्ष होता है। शुक्रवार को इस महीने में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण व्यक्तियों को विशेष लाभ, धनी-मानियों को कष्ट, प्रशासक वर्ग की हानि, तत्प्रदेशीय किसी नेता की मृत्यु, इनाकारी को कष्ट और वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। फसल भी अच्छी होती है। इसी महीने में जनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा का प्रभाव, दुर्भिक्ष, जनता को कष्ट, तेज वायु या तृक्षानी का प्रकोप, अग्निभय, विषेश जन्मुओं का विकास तथा उसके प्रभाव से जनता में अधिक आनंद होता है।

आषाढ़ महीने में मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अन्न का भाव सहस्र, सोना, चाँदी के मूल्य में भी गिरावट, कलाकार और शिल्पियों की सुख-शान्ति, देश का आर्थिक विकास, व्यापारी समाज को सुख और प्रशासकों को भी शान्ति मिलती है। केवल लोह की वस्त्री वस्तुओं में हानि होती है। इसी महीने में बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता

पयोषणी, गोमती तथा विन्ध्य, महेन्द्र और मलयाचल की नदियाँ आदि हैं।

बुध के प्रदेश—सिन्धु और लोहित्य, गंगा, मंदीरका, रथा, सरयू और कौशिंही के प्रान्त के देश तथा चित्रकूट, हिमालय और गोमन्त पर्वत, सौरजट्ट देश और मथुरा का पूर्व भाग आदि हैं।

बृहस्पति के प्रदेश—गिन्धु का पूर्वांच्छ, मशुरा का पश्चिमांच्छ भाग तथा विराट् और शतद्रु नदी, मत्स्यदेश (धौतपुर, भरतपुर, जयपुर आदि) का आशा भाग, उदीच्छदेश, अर्जुनायन, सारस्वत, वारधान, रमट, अम्बण्ठ, पारत, सुध, सीवीर, भरत, सालव, वैगर्त, गौरव और योधेय हैं।

शुक्र के प्रदेश—वितस्ता, इरावती और चन्द्रभागा नदी, तथाशिला, गान्धार, पुष्कलावत, मालवा, दण्डीनर, वित्ति वर्षाल, शालिकावत, दण्णाण और कैकेय हैं।

शनि के प्रदेश—वेदस्मृति, विदिशा, कुरुक्षेत्र का समीषवर्ती देश, प्रभास क्षेत्र, पश्चिम देश, शौराष्ट्र, आभीर, शूद्रक देश तथा आनंद से पुष्कर प्रान्त तक के प्रदेश, आयू और रैवतक पर्वत हैं।

केतु के प्रदेश—मारवाड़, दुग्धिकादिक, अवगाण, श्वेत हृष्णदेश, पल्लव, चोल और चीलक हैं।

बृहिट्कारक अष्ट योग—सूर्य, गुरु और बुध का योग जल की वर्षा करता है। यदि इन्हीं के ग्रहों के साथ मंगल का योग हो जाये तो वायु के साथ जल की वर्षा होती है। गुरु और गूर्य, राहु और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, शनि और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, गुरु और बुध तथा शुक्र और चन्द्रमा इन ग्रहों के योग होने से जल की वर्षा होती है।

सुभिक्ष-दुभिक्ष का परिज्ञान—

प्रभवाद् द्विगुणं शृत्वा त्रिभिर्पूर्वं च कारयेत् ।

गत्तभिस्तु द्वैद्वभागं णेषं ज्ञेयं शुभाशुभम् ॥

एकं चत्वारि दुभिक्षं पञ्चद्वाभ्यां सुभिक्षकम् ।

त्रिपाले तु समं ज्ञेयं शून्ये पीडा न संशयः ॥

अर्थात् प्रभवादि कर्म गे वर्तमान ज्ञालू संवत् की संख्या को दुगुना कर उसमें से तीन शटा के सात का भाग देने से जो शेष रहे, उससे शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए। उदाहरण—साधारण नाम का संवत् चल रहा है। इसकी संख्या प्रभवादि से 44 आती है, अतः इसे दुगुना किया। $44 \times 2 = 88$, $88 - 3 = 85$, $85 : 7 = 12$ ल०, 1 शेष, इसका फल दुभिक्ष है। क्योंकि एक और ज्ञार शेष में दुभिक्ष, पर्वत और दो शेष में सुभिक्ष, तीन या छः शेष में साधारण और

शून्य शेष में पीड़ा समझनी चाहिए।

अन्य नियम—विक्रम संवत् की संख्या को तीन से गुणा कर पाँच जोड़ना चाहिए। योगफल में सात का भाग देने से शेष अमानुसार फल जानिना। 3 और 5 शेष में दुष्प्रिक्ष, शून्य में महाकाल और 1, 2, 4, 6 शेष में सुभिक्ष होता है।

उदाहरण—विक्रम संवत् 2048, इसे तीन से गुणा किया; $2048 \times 3 = 6144$, $6144 + 5 = 6149$, इसमें 7 का भाग दिया, $6149 \div 7 = 878$ लम्बि, शेष 3 रहा। इसका फल दुष्प्रिक्ष हुआ।

प्रभवादि संवत्सरबोधक चक्र

संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर
1	प्रभव	16	चित्रभानु	31	हेमलम्बी	46	परिधावी
2	विभव	17	सुभानु	32	विलम्बी	47	प्रमादी
3	शुल्क	18	तारण	33	विकारी	48	आनन्द
4	प्रमोद	19	पाथिव	34	शार्वरी	49	राखस
5	प्रजापति	20	व्यथ	35	प्लव	50	नल
6	अंगिरा	21	सर्वजित्	36	णुभकृत्	51	पियल
7	श्रीमुख	22	सर्वधारी	37	शोभन	52	मालयुक्त
8	भाव	23	विरोधी	38	कोधी	53	सिद्धार्थी
9	षुका	24	विकृति	39	विश्वावसु	54	रौद्र
10	धाता	25	स्वर	40	पराभव	55	दुर्मति
11	ईश्वर	26	नन्दन	41	प्लवंग	56	दुर्दुषि
12	बहुधाम्य	27	विजय	42	कीलक	57	रुधिरोदगारी
13	प्रमाथी	27	जय	43	सौम्य	58	रक्ताक्षी
14	विक्रम	29	मन्मथ	44	साधारण	59	कोधन
15	वृष	30	दुर्मुख	45	विरोधकृत	60	धय

संवत्सर निकालने की प्रक्रिया

संवत्कालो ग्रहयुतः कृत्वा शून्यरसीहृतः ।
शेषाः संवत्सरा ज्ञेयाः प्रभवाद्या बुधैः क्रमात् ॥

अर्थात्—विक्रम संवत् में 9 जोड़कर 60 का भाग देने में जो शेष रहे, वह प्रभवादि गत संवत्सर होता है, उससे आगे बाला वर्तमान होता है। उदाहरण— संवत् 2047, इसमें 9 जोड़ा तो $2047 + 9 = 2056 \div 60 = 34$ उपलब्धि शेष 16, अतः 16वीं संख्या चित्रभानु की थी, जो गत हो चुका है, वर्तमान में सुभानु संवत् है, जो आगे बदल जाएगा, और वर्षात्मि में तारण हो जाएगा।

प्रभवादि संवत्सर बोधक चक्र

पाँच वर्ष का एक युग होता है, इसी प्रमाण से 60 वर्ष के 12 युग और उनके 12 स्वामी हैं विष्णु, बृहस्पति, इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, शिव, पितर, विश्वेदेवा, चन्द्र, अग्नि, अश्विनीकुण्ठार और रूप्य।

भतान्तर में प्रथम बीस संवत्सरों के स्वामी ब्रह्मा, इसके आगे बीस संवत्सरों के स्वामी विष्णु और इसमें आगे बाले ब्रीह शंवत्सरों के स्वामी रुद्र शिव हैं।

द्रादशोऽद्यायः

अथातः सम्प्रवल्प्याभि गर्भनि सर्वान् सुखावहान् ।
भिक्षकाणां॑ विशेषेण परदत्तोपजीविनाम् ॥१॥

अब सभी प्राणियों को सुख देने वाले मेष के गर्भधारण का वर्णन करता हूँ। विशेष रूप से इस निमित्त वा फल दूसरों के द्वारा दिये गए भोजन को ग्रहण करने वाले गिरुओं के लिए प्रतिगादित करता हूँ। सात्पर्य यह है कि उक्त निमित्त द्वारा वर्षा और फसल वीं ज्ञानकारी सम्यक् प्रकार से प्राप्त की जाती है। जिस देश में युभिक्ष नहीं, उस देश में त्यागी, मुनियों का निवास करना कठिन है।

१. शिक्षाचरणा गु. A.

अतः मुनिजन इस निमित्तद्वारा पहले से ही सुकाल दुष्काल का ज्ञान कर विहार करते हैं ॥1॥

**ज्येष्ठा-मूलममावस्यां मार्गशीर्षं प्रपद्यते ।
मार्गशीर्षप्रतिपदि गमधितं प्रवर्तते ॥2॥**

मार्गशीर्ष—अगहन की अमावस्या को, जिस दिन चन्द्रमा ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं अथवा मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा को, जबकि चन्द्रमा पूर्वषाढ़ा नक्षत्र में होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं ॥2॥

***दिवा समुत्थिते गते रात्रौ विद्युते जलम् ।
रात्रौ समुत्थितश्चापि दिवा विसृजते जलम् ॥3॥**

दिन का गर्भ रात्रि में जल की बर्णी करता है और रात्रि का गर्भ दिन में जल की बर्णी करता है ॥3॥

**सप्तमे सप्तमे भासे सप्तमे सप्तमेऽहनि ।
गर्भः पाकं विगच्छन्ति यादृशं तादृशं फलम् ॥4॥**

सात-सात महीने और सात-सात दिन में गर्भ पूर्ण परिपाक अवस्था को प्राप्त होता है। जिस प्रकार का गर्भ होता है, उसी प्रकार का फल प्राप्त होता है। अभिप्राय यह है कि गर्भ के परिपवव होने का समय ग्रात यहीना और सात दिन है। बाराही संहिता में यद्यपि 196 दिन ही गर्भ परिपवव होने के लिए वताये गए हैं, किन्तु यहाँ आचार्य ने सात महीने और सात दिन कहे हैं। दोनों कथनों में अतिर कुछ भी नहीं है, यतः यहाँ भी नक्षत्र भास गृहीत है, एक नक्षत्र भास 27 दिन का होता है, अतः योग करने पर यहाँ भी 196 दिन आते हैं ॥4॥

**पूर्वसन्ध्या-समुत्पन्नः पश्चिमायां प्रयच्छति ।
पश्चिमायां समुत्पन्नः पूर्वयां तु^३ प्रयच्छति ॥5॥**

पूर्व सन्ध्या में धारण किया गया गर्भ पश्चिम सन्ध्या में वरसता है और पश्चिम में धारण किया गया गर्भ पूर्व सन्ध्या में वरसता है। अभिप्राय यह है कि प्रातः धारण किया गया गर्भ सन्ध्या समय वरसता है और सन्ध्या समय धारण किया गया गर्भ प्रातः वरसता है ॥5॥

**नक्षत्राणि मुहूर्ताश्च सर्वमेवं समादिशेत् ।
षष्ठ्यमासं समतिक्रम्य ततो देवः प्रवर्द्धति ॥6॥**

1. प्रवर्तते मु० C. । 2. विवरां दृ० A. । 3. च ग० । 4. पञ्चांशु मु० ।

नक्षत्र, मुहूर्त आदि सभी का निर्देश करना चाहिए। मेघ गर्भ धारण के छः महीने के पश्चात् वर्षा करते हैं ॥6॥

गर्भधिनादयो मासास्ते च मासा अवधारिणः ।

विषाक्तनक्षयश्चापि त्रयः कालाभिवर्षणाः ॥7॥

गर्भधिन, वर्षा आदि के महीनों का निश्चय करना चाहिए। तीन महीनों तक गर्भ की पक्व-क्रिया होती है और तीन महीने वर्षा के होते हैं ॥7॥

शीतवात्तश्च दिशुच्च गजितं परिवेषणम् ।

संवर्गभेषु शस्यन्ते निर्गन्थाः साधुदर्शिनः ॥8॥

सभी गर्भों में शीत वायु का बहना, विजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष की प्रशंसा सभी निर्गन्थ साधु करते हैं। अर्थात् मेघों के गर्भ धारण के समय शीतवायु का बहना, विजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष धारण करना अच्छा माना गया है। उक्त चिह्न फसल के लिए भी श्रेष्ठ होते हैं ॥8॥

गर्भस्तु विविधाज्ञेयाः शुभाऽशुभ यदा तदा ।

पापलिङ्गा निरुदका भयं दद्युर्न संशयः ॥9॥

उल्कापातोऽथ निर्धतिः दिग्बाहा³ पांशुवृष्टयः ।

गृहयुद्धं निवृत्तिश्च ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः ॥10॥

अहाणां चरितं चक्रं साधूनां⁴ कोपसम्भवम् ।

गर्भाणाऽशुभघाताय न ते ग्राह्या विचक्षणैः ॥11॥

मेघ-गर्भ अनेक प्रकार के होते हैं, पर इनमें दो मुख्य हैं—शुभ और अशुभ। पाप के कारणीभूत अशुभ मेघ गर्भ निस्सन्देह जल की वर्षा नहीं करते हैं तथा भय भी ग्रदान करते हैं। अशुभ गर्भ से उल्कापात, दिग्बाह, धूलि की वर्षा, गृहकलह घर से विरक्षित और चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण होते हैं। ग्रहों का युद्ध, साधुओं का कोवित होना, गर्भों का विभाश होता है, अतः बुद्धिमान व्यक्तियों को अशुभ गर्भ-मेघों का ग्रहण नहीं करना चाहिए ॥9-11॥

धूमं रजः पिशाचांश्च शस्त्रमुलकां सनागजः ।

तेलं धूते सुरामस्थि क्षारं⁵ लाक्षां वसां मधु ॥12॥

अंगारकान् नखान् केशान् मांसशोणितकूर्मान् ।

विषच्छस्याना भुज्जन्ति गर्भः पापभयावहाः ॥13॥

1. गर्जन मु० । 2. अंगानः मु० । 3. विशो दाहा मु० । 4. सधूम मु० B. ।

5. मिथितरुः मु० । 6. धोरं मु० A. ।

पापगर्भं पञ्चममात्र होने के उपरान्त धूप, रज—धूलि का वर्षण, पिशाच—भूत-पिशाचादि का भय, शस्त्रप्रहार, उल्कापतन, हाथियों का विनाश; तेल, धी, मद्य, हड्डी, क्षार—घातक तेज पदार्थ, लाख, लवी, मधु, अदिति के अंगार, गख, केळ, मांस, रक्त, कीचड़ आदि की वर्षा करते हैं ॥12-13॥

कात्तिकं १ चात्यं पौषं च चैत्र-बैशाखमेव च ।

श्रावणं चाश्विनं सोम्यं गर्भं विन्द्याद् बहूदकम् ॥14॥

कात्तिक, पौष, चैत्र, बैशाख, श्रावण, अश्विन मास में सोम्य अथवा शुभ गर्भ होता है और अधिक जल की वर्षा करता है। अर्थात् उक्त मासों में यदि मेघ गर्भ धारण करे तो अच्छी वर्षा होती है ॥14॥

ये तु पुष्येण दृश्यन्ते हस्तेभाभिजिता तथा ।

अश्विन्यां सम्भवन्तश्च ते पश्चात्त्वं शोभनाः ॥15॥

आद्र्द्धिश्लेषासु ज्येष्ठासु मूले वा सम्भवन्ति ये ।

***ये गर्भागमदक्षाश्च भतास्तेऽपि बहूदकाः^३ ॥16॥**

यदि पुष्य, हस्त, अभिजित, अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भ धारण हो तो शुभ है, इन नक्षत्रों के बाद शुभ नहीं। आद्र्द्धि, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रों में गर्भ धारण का कार्य हो तो उत्तम जल की वर्षा होती है ॥15-16॥

***उच्छ्रुतं चापि बैशाखात् कात्तिके स्वयते जलम् ।**

हिमागमेन गमिका तेऽपि मन्दोदकाः स्मृताः ॥17॥

बैशाख में गर्भ धारण करने पर कात्तिक मास में जल की वर्षा होती है। इस प्रकार के मेघ हिमागम के साथ जल की मन्दवृद्धि करने वाले होते हैं ॥17॥

स्वाती च मैत्रदेवे च वैष्णवे च सुवार्णे^१ ।

गर्भाः सुधारणा ज्ञेया ते स्वयन्ते^२ बहूदकम् ॥18॥

स्वाती, अनुराधा, श्रवण और शतभिया इन नक्षत्रों में मेघ गर्भ धारण करें तो अधिक जल की वर्षा होती है ॥18॥

पूर्वमुदोक्तीमशानीं ये गर्भा दिशमाभिताः ।

ते सम्यवन्तस्तोयाद्यास्ते गर्भस्तु सुपूजिताः ॥19॥

पूर्व, उत्तर और ईशान दोण में जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, वे जल की वर्षा

1. बात्य मू० । 2. गर्भागमनदक्षाश्च मू० । 3. वनेदवः मू० । 4. उत्तितं मू० ।
5. मन्दोदास्ते प्रकीर्तिः । 6. सुदार्णे मू० A, गदार्णे मू० D । 7. गंभन्तो बहूदकाः
मू० ।

करते हैं तथा फसल भी उत्तम होती है ॥19॥

^१वायव्यामय वार्ष्यां ये गर्भा स्वन्ति च ।

^२ते वर्ष मध्यमं दद्युः सस्यसम्पदमेव च ॥20॥

वायव्यकोण और पश्चिम दिशा में जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, उनसे मध्यम जल की वर्षा होती है और अनाज की फसल उत्तम होती है ॥20॥

शिष्टं सुभिक्षं विज्ञेयं जघन्या नात्र संशयः ।

मन्दगाश्च घना वा च सर्वतश्च सुपूजिताः ॥21॥

दक्षिण दिशा में मेघ गर्भ धारण करें तो सामान्यतः शिष्टता, सुभिक्ष समझना चाहिए, इसमें सन्देह नहीं है तथा इस प्रकार के मन्दगति वाले मेघ सर्वत्र पूजे भी जाते हैं ॥21॥

भारुतः तत्प्रभवाः गर्भा धूयन्ते मारुतेन च ।

वातो गर्भाश्च वर्षश्च करोत्यपकरोति च ॥22॥

वायु से उत्पन्न गर्भ वायु के द्वारा ही आन्दोलित किये जाते हैं तथा वायु चलता है, वर्षा करता है और गर्भ की क्षति भी होती है ॥22॥

कृष्णा नीलाश्च रक्ताश्च पीताः शुक्लाश्च सर्वतः ।

व्यामिश्राश्चापि ये गर्भाः स्तिरधाः सर्वत्र पूजिताः ॥23॥

कृष्ण, नील, रक्त, पीत, शुक्ल, मिश्रिवर्ण तथा स्तिरध गर्भ सभी जगह पूज्य होते हैं— शुभ होते हैं ॥23॥

अप्सराणां तु सदृशाः पश्चिमां जलचारिणाम् ।

वृक्षपर्वतसंस्थाना गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥24॥

देवांगभाष्मों के सदृश, जलचर पश्चिमों के समान, वृक्ष और पर्वत के आकार वाले गर्भ सर्वत्र पूज्य हैं— शुभ हैं ॥24॥

वापीकूपतडागाश्च^१ नद्यश्चापि मुहुर्मुहुः ।

पूर्णते तादूर्शं गर्भस्तोयविलन्ना नदीवह्नैः ॥25॥

इस प्रकार के गर्भ से वावडी, कुआ, तालाब, नदी आदि जल से लबालब भर जाते हैं तथा इस प्रकार जल कई बार बरसता है ॥25॥

1. वायव्यां (याया) गु. मू. । 2. मध्यां वर्षण वयः गु. । 3. गर्भांतु गर्भांश्च मू. ।

4. तदामान गु. । 5. धनावहैः गु. ।

नक्षत्रेषु तिथौ चापि मुहूर्ते करणे दिशि ।
यत्र यत्र समुत्पन्नाः गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥26॥

जिस-जिस नक्षत्र, तिथि, दिशा, मुहूर्त, करण में स्तिथि मेघ गर्भ धारण करते हैं वे उस-उस प्रकार के मेघ पूज्य होते हैं—शुभ होते हैं ॥26॥

सुसंस्थानाः सुवणश्च सुवेषाः स्वभ्रजा घनाः ।
सुविन्दवः स्थिता गर्भाः सर्वे सर्वत्र पूजिताः ॥27॥

सुन्दर आकार, सुन्दर वर्ण, सुन्दर वेष, सुन्दर वादलों से उत्पन्न, सुन्दर बिन्दुओं से युक्त मेघगर्भ सर्वत्र पूजित होते हैं—शुभ होते हैं ॥27॥

कृष्णा रुक्षाः सुखण्डाश्च विद्रवन्तः पुनः पुनः ।
विस्वरा रुक्षशब्दाश्च गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥28॥

कृष्ण, रुक्ष, खण्डत तथा विकृत-आकार वाले, भयंकर और रुक्ष शब्द करने वाले मेघगर्भ सर्वत्र निन्दित हैं ॥28॥

अन्धकारसमुत्पन्ना गर्भस्ते तु न पूजिताः ।
चित्राः स्ववन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥29॥

अन्धकार में समुत्पन्न गर्भ—कृष्णरुक्ष में उत्पन्न गर्भ पूज्य नहीं—शुभ नहीं होते हैं। चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न गर्भ भी निन्दित हैं ॥29॥

मन्दवृष्टिमनावृष्टिभ्यं राजपराजयम् ।
दुष्प्रिक्षं मरणं रोगं गर्भाः कुर्वन्ति तादृशम् ॥30॥

उक्त प्रकार का मेघगर्भ मन्दवृष्टि, अनावृष्टि, राजा वीर पराजय का भय, दुष्प्रिक्ष, मरण, रोग इत्यादि चातों को करता है ॥30॥

मार्गशीर्षे तु गर्भस्तु ज्येष्ठामूलं समादिशेत् ।
पौषमासस्य गर्भस्तु विन्द्यादाषाढिकां ब्रुधाः ॥31॥
माघजात् थवणे विन्द्यात् प्रोष्ठपदे च फाल्गुनात् ।
चेत्रामश्वयुजे विन्द्यादगर्भं जलविसर्जनम् ॥32॥

मार्गशीर्ष का गर्भ ज्येष्ठा या मूल में और पौष का गर्भ गूर्वाषाढ़ा में, माघ में उत्पन्न गर्भ थवण में, फाल्गुन में उत्पन्न धनिष्ठा नक्षत्र में, चेत्र में उत्पन्न गर्भ अश्विनी नक्षत्र में जल-वृष्टि करता है ॥31-32॥

1. स्तिथाः मु० । 2. इस श्लोक के गहरे B. C. 12. में यह प्रसोक्त पुनित है—
अत्युष्णाचानिशीर्णाश्च वृद्धका विमुग्नश्च य । निता व्यवन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र
निन्दिताः ॥ मु० ।

**मन्दोदाः प्रथमे मासे पश्चिमे ये च कीर्तिताः ।
शेषा बहूदका ज्ञेयाः प्रशस्ते लंकणं यदा ॥३३॥**

पहले दिन मेघगर्भों का निरूपण किया है, उनमें से उपर्युक्त मेघगर्भ पहले महोने में कम जल की वर्षा करते हैं, अवशेष प्रशस्त-शुभ लक्षणों के अनुसार अधिक जल की वर्षा करते हैं ॥३३॥

**यानि रूपाणि दूश्यन्ते गर्भाणां यत्र यत्र च ।
तानि सर्वानि ज्ञेयानि भिक्षूणां भैक्षवत्तिनाम् ॥३४॥**

मेघगर्भों का जहाँ-जहाँ जो-जो रूप दिखाई देता हो, मधुकरीवृत्ति करने वाले साधु को वहाँ-वहाँ उसका निरीक्षण करना चाहिए ॥३४॥

**सन्ध्यायां यानि रूपाणि मेघेष्वभ्रेषु यानि च ।
तानि गर्भेषु सर्वाणि १यथावदुपलक्षयेत् ॥३५॥**

मेघों का जो रूप सन्ध्या समय में हो, उनका गर्भकाल में अवस्था के अनुसार निरीक्षण करना चाहिए ॥३५॥

**ये केचिव् विपरीतानि पठ्यन्ते तानि सर्वशः ।
तिगानि तोयगर्भेषु भयदेषु भवेत् तदा ॥३६॥**

प्रतिपादित शुभ चिह्नों के विपरीत चिह्न यदि दिखलाई पड़ें तो उन चिह्नों वाला मेघगर्भ भय देने वाला होता है ॥३६॥

**गर्भा यत्र न दूश्यन्ते तत्र विद्यान्महृदभयम् ।
उत्पन्ना वा स्वर्वन्त्याशु भद्रबाहुवचो यथा ॥३७॥**

जहाँ मेघगर्भ दिखलाई नहीं पड़े, वहाँ अत्यन्त भय समझना चाहिए । उत्पन्न हुई फसल शीघ्र नष्ट हो जाती है, ऐसा भद्रबाहु रवामी का वचन है ॥३७॥

**निर्गन्धा यत्र गर्भश्च न पश्येयुः कदाचन ।
तं च देशं परित्यज्य सर्वं संशयेत् त्वरा ॥३८॥**

निर्गन्ध मुनि जिस देश में मेघगर्भ न देखें, उस देश को छोड़कर शीघ्र ही उन्हें मेघगर्भ वाले अन्य देश का आश्रय लेना चाहिए ॥३८॥

**इति श्रीभद्रबाहुके संहितायां सकलमुनिजनानन्द भद्रबाहुविरचिते महानैमित्त-
शास्त्रे गर्भवातस्तक्षणं द्वावशमं परिसमाप्तम् ।**

1. यथावस्थ निरीक्षयेत् मु० । 2. तं देशं पश्यमं त्वं त्वया सर्वं त्वं त्वयेत् श्रयेत् मु० ।

दिवेचन्न—मेघगर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। बराहमिहिर ने बतलाया है—“देवविदवहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति। तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिदेशे” ॥ अर्थात् जो देव का जानकार पुरुष रात-दिन गर्भलक्षण में मन लगाकर सावधान चित्त से रहता है, उसके वाक्य मुनियों के समान मेघगणित में कभी मिथ्या नहीं होते। अतः गर्भ की परीक्षा का परिज्ञान कर लेना आवश्यक है। आचार्य ने इस अध्याय में गर्भधारण का निरूपण किया है। मार्गशीर्ष मास में शुक्ल पक्ष की १५ तिपदा से जिस दिन चन्द्रमा पूर्वांशाढा नक्षत्र में होता है, उस दिन से ही सभी गर्भों का लक्षण जानना चाहिए। चन्द्रमा जिस नक्षत्र में रहता है, यदि उसी नक्षत्र में गर्भ धारण हो तो उस नक्षत्र से १९५ दिन के उपरान्त प्रसवकाल—वर्षा होने का समय होता है। शुक्लपक्ष का गर्भ कृष्णपक्ष में और कृष्णपक्ष का गर्भ शुक्लपक्ष में, दिन का गर्भ रात्रि में, रात का गर्भ दिन में, प्रातःकाल का गर्भ साढ़ा ३८८ दिन से वैर सन्दर्भ का गर्भ प्रातःकाल में जल की वर्षा करता है। मार्गशीर्ष के आदि में उत्पन्न गर्भ एवं पौष मास में उत्पन्न गर्भ मन्दफल युक्त हैं—अर्थात् कम वर्षा होती है। माघ मास का गर्भ श्रावण कृष्णपक्ष में प्रातःकाल को प्राप्त होता है। माघ के कृष्ण पक्ष द्वारा भाद्रपद मास का शुक्लपक्ष निश्चित है। फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष में उत्पन्न गर्भ भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष में जल की वर्षा करता है। फाल्गुन के कृष्ण पक्ष का गर्भ आश्विन के शुक्लपक्ष में जल की वृष्टि करता है।

‘पूर्व’ दिशा के मेघ जब पश्चिम की ओर उड़ते हैं और पश्चिम के मेघ पूर्व दिशा में उदित होते हैं, इसी प्रकार वारों दिशाओं के मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का गर्भकाल जानना नाहिए। जब उत्तर, ईशानकोण और पूर्व दिशा वायु में आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और पूर्य स्त्रिय, श्वेत और बहुत धेरेदार होते हैं, उस समय भी मेघों के गर्भधारण का समय रहता है। मेघों के गर्भधारण करने का समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन हैं। इन्हीं महीनों में मेघ गर्भधारण करते हैं। जो व्यक्ति गर्भधारण का काल पहचान लेता है, वह गणित द्वारा बड़ी ही सरलता से जान सकता है कि गर्भधारण के १९५ दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अगहन के महीने में जिस तिथि को मेघ गर्भ श्रावण करते हैं, उस तिथि में ठीक १९५वें दिन में अवश्व वर्षा होती है। अतः गर्भधारण की तिथि का ज्ञान लक्षणों के आधार पर ही किया जा सकता है। स्थूल और स्त्रिय मेघ जब आकाश में आच्छादित हों और आकाश का रंग काँक के अण्डे और मोर के पंख के समान हो तो मेघों का गर्भधारण समझना चाहिए। इन्द्रधनुष और गर्भीर गर्जनायुक्त, सूर्याभिमुख, विजली का प्रकाश करते वाले मेघ हों तो;

को साधारण कष्ट, अच्छी वर्षा, गुभिक्ष और व्यापार में साधारण लाभ होता है। बुधपात का योग अधिक रहता है। इस दिन गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनता को विशेष लाभ, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, श्रेष्ठ फसल, व्यापार में लाभ और सभी प्रकार का लम्बन-चैल रहता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, पर फसल अच्छी, वस्त्र के व्यापार में अधिक लाभ, मशीनों के कल-गुजरों में अधिक लाभ, गुड़, चीनी का भाव सस्ता एवं प्रतिदिन उपभोग में आनेवाली वस्तुएँ महँगी होती हैं। शनिवार को गन्धर्वनगर उक्त महीने में दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, फसल की कमी और व्यापारियों को कष्ट होता है।

आवण मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा की कमी, किन्तु भाद्रपद में अच्छी वर्षा, फसल साधारण, धन-धान्य की वृद्धि, व्यापारियों को लाभ, जनता को कष्ट, वस्त्र का अभाव, आपसी-कालह और उक्त प्रदेश में उपद्रव होते हैं। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्प वर्षा, साधारण फसल, भी वी महँगी, तैल की भी महँगी, वस्त्र का बाजार सस्ता, सोना-चांदी का बाजार भी सस्ता, शरद ऋतु में अधिक शीत, अन्न का भाव भी महँगा रहता है। साधारण जनता को तो कष्ट होता ही है, पर धनी-मानियों को भी अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, जनता में शान्ति और व्यापारियों को साधारण लाभ होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षाभाव, दुभिक्ष और जनता को आर्थिक कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो और दुभिक्ष और नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं।

भाद्रपद मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्प वर्षा, फसल की कमी, जनता को कष्ट एवं आर्थिक अति होती है। बुधवार को दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारी समाज को लाभ, मसाले के व्यापार में हानि एवं गश्तों में अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अतिवृष्टि, फसल की कमी, बाढ़, राजा की मृत्यु, नाथरियों में अशान्ति, घृत, तैल के व्यापार में लाभ और गुड़, चीनी का भाव घटता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, अनेक प्रकार के उपद्रव, व्यापार में हानि और आभिजात्य वर्ग के व्यक्तियों को कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा में रुकावट, फसल की कमी और धान्य का भाव महँगा होता है।

आश्विन मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्य वर्षा, माव में विशेष वर्षा और जील का प्रकोप, फसल साधारण, खनिज पदार्थों का विकास और देश की समृद्धि होती है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो

ईशान और पूर्व दिशा में गर्भधारण करते हैं। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियों का कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहन मास में जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुरक्त और मंडलाकार होते हैं, उसी तिथि को उमकी गर्भधारण की क्रिया समझनी चाहिए। अगहन मास में जिस तिथि को प्रबल वायु चले, लाल-लाल बादल आच्छादित हों, चन्द्र और सूर्य की किरणें तुषार के समान कलुषित और शीतल होते तो छिन्न-पिन्न गर्भ समाप्ति चाहिए। गर्भधारण के लग्नसूक्त चारों मासों के अतिरिक्त ज्येष्ठ मास भी माना गया है। ज्येष्ठ में शुक्ल पक्ष की अष्टमी से चार दिनों तक गर्भधारण की क्रिया होती है। यदि ये चारों दिन एक समान हों तो सुखदायी होते हैं, तथा गर्भधारण क्रिया बहुत उत्तम होती है। यदि इन दिनों में एक दिन जल बरसे, एक दिन पवन चले, एक दिन तेज धूप पड़े और एक दिन वाय्डी चले तो निश्चयतः गर्भ शुभ नहीं होता। ज्येष्ठमास का गर्भ मात्र 89 दिनों में बरसता है। अगहन का गर्भ दिन में वर्षा करता है; किन्तु वास्तविक गर्भ अगहन, पौष और माघ का ही होता है। अगहन के गर्भ द्वारा आषाढ़ में वर्षा, पौष के गर्भ से आवण में, माघ के गर्भ से भाद्रपद और फालगुन के गर्भ से आश्विन में जल-वृष्टि होती है।

फालगुन में तीक्ष्ण पवन चलने से, गिरन्ध बादलों के एकत्र होने से, सूर्य के अग्नि समान पिंगल और ताम्रवर्ण होने से गर्भ धीण होता है। चंत्र में सभी गर्भ पवन, मेघ, वर्षा और परिवेष पुक्त होने से शुभ होते हैं। बैशाख में मेघ, वायु, जल और विजली की चमक एवं कट्टकङ्गाहट के होने से गर्भ की पुष्टि होती है। उत्का, वज्ज, धूलि, दिरदाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, कीलक, केतु, श्रहयुद्ध, निधीत, परिष्ठ, उन्नधनुष, राहुदर्शन, रुधिरादिका वर्षण आदि के होने से गर्भ का नाश होता है। पूर्वभाद्रपदा, उत्तरामाद्रपदा, पूर्वांगाहा, उत्तरापाहा और रोहिणी नक्षत्र में धारण की गया गर्भ पुष्ट होता है। इन पाँच नक्षत्रों में गर्भधारण करना शुभ माना जाता है तथा मेघ प्रायः इन्हीं नक्षत्रों में गर्भधारण करते भी हैं। अगहन महीने में जब ये नक्षत्र हों, उन दिनों गर्भ काल का निरीक्षण करना चाहिए। पौष, माघ और फालगुन में भी इन्हीं नक्षत्रों का मेघगर्भ शुभ होता है, किन्तु शतभिषा, आश्विन, वार्षी और स्वाती नक्षत्र में भी गर्भधारण की क्रिया होती है। अगहन से वैशाख मास तक छः महीनों में गर्भधारण करने से 8, 6, 16, 24, 20 और 3 दिन तक निरन्तर वर्षा होती है। कूरग्रहयुक्त होने पर समस्त गर्भ में ओले, अशनि और मछली की वर्षा होती है। यदि गर्भ समय में अकारण ही घोर वर्षा हो तो गर्भ का स्फुलन हो जाता है।

गर्भ पाँच प्रकार के निमित्तों से पुष्ट होता है। जो पुष्टगर्भ है, वह सौ वोजन

तक फैल कर जल की वर्षा करता है। चतुनिमित्तक गुण्ट गर्भ 50 योजन, त्रिनिमित्तक 25 योजन, द्विनिमित्तक 12½ योजन और एकनिमित्तक 5 योजन तक जल की वर्षा करता है। पञ्चनिमित्तों में पवन, जल, विजयी, गर्जना और मेघ शामिल हैं। वर्षा का प्रभाव भी निमित्तों के अनुसार ही ज्ञात किया जाता है। पञ्चनिमित्त मेघगर्भ से एक द्रोण जल की वर्षा, चतुनिमित्तक से बारह आढक जल की वर्षा, त्रिनिमित्तक से 8 आढक जल की वर्षा, द्विनिमित्तक से 6 आढक और एक निमित्तक से 3 आढक जल की वर्षा होती है। यदि गर्भकाल में अधिक जल की वर्षा हो जाय तो प्रसवकाल के अनन्तर ही जल की वर्षा होती है।

मेघविजयगणि ने मेघगर्भ का विचार करते हुए लिखा है कि मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा के उपरान्त जब चन्द्रमा पूर्वांशाढ़ा नक्षत्र पर स्थित हो, उसी समय गर्भ के लक्षण अवगत करने चाहिए। जिस नक्षत्र में मेघ गर्भ धारण करते हैं, उससे 195 वें दिन जब वही नक्षत्र आता है तो जल-वृष्टि होती है। मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष का गर्भ तथा पौष कृष्णपक्ष का गर्भ अत्यत्य वर्षा करने वाला होता है। माघ शुक्लपक्ष का गर्भ आवण में और भाष्म कृष्ण का गर्भ भाद्रपद शुक्ल में जल की वृष्टि करता है। काल्युन शुक्ल का गर्भ भाद्रपद कृष्ण में, काल्युन कृष्ण का आश्विन शुक्ल में, चैत्र शुक्ल का गर्भ आश्विन कृष्ण में, चैत्र कृष्ण का गर्भ कार्तिक शुक्ल में जल की वर्षा करता है। सन्ध्या समय पूर्व में आकाश मेवाच्छादित हो और ये मेघ पर्वत या हाथी के समान हों तथा अनेक प्रकार के श्वेत हाथियों के समान दिखलाई पड़े तो पाँच या सात रात में अच्छी वर्षा होती है। सन्ध्या समय उत्तर में आकाश मेवाच्छादित हो और मेघ पर्वत या हाथी के समान मालूम पड़े तो तीन दिन में उत्तम वर्षा होती है। सन्ध्या समय पश्चिम दिशा में श्याम रंग के मेघ आच्छादित हों तो सूर्यस्त काल में ही जल की उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण और आग्नेय दिशा के मेघ, जिन्होंने पौप में गर्भ धारण किया है, अल्प वर्षा करते हैं। आवण मास में ऐसे मेघों द्वारा व्रेष्ठ वर्षा होने की सम्भावना रहती है। आग्नेय दिशा में अनेक प्रथातर के आवार वाले मेघ स्थित हों तो इति, सन्ताप के साथ समान्य वर्षा करते हैं। वायव्य और ईशान दिशा के बादल शीघ्र ही जल बरसाते हैं। जिन मेघों ने किसी भी महीने की चतुर्थी, पंचमी, पष्ठी और सातमी को गर्भ धारण किया है, वे मेघ शीघ्र ही जल-वृष्टि करते हैं। मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में मधा नक्षत्र में मेघ गर्भ धारण करे अथवा मार्गशीर्ष कृष्णा चतुर्दशी को मेघ और विजली दिखलाई पड़े तो आषाढ़ शुक्ल पक्ष में अवश्य ही जल-वृष्टि होती है।

मार्गशीर्ष कृष्ण चतुर्थी, पंचमी और पष्ठी इन तिथियों में आश्वेषा, मधा

और पूर्वाकालमुनी ये नक्षत्र हों और इन्हीं में गर्भ धारण की क्रिया हुई हो तो आषाढ़ में केवल तीन दिनों तक ही उत्तम वर्षा होती है। यदि मार्गशीर्ष में उत्तरा, हस्त और चित्रा ये नक्षत्र सप्तमी तिथि को पड़ते हों और इसी तिथि को गर्भ धारण करें तो आषाढ़ में केवल विजली चमकती है और मेघों की गर्जना होती है। अन्तिम दिनों में तीन दिन वर्षा होती है। आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को स्वाती नक्षत्र पड़े तो इस दिन महावृष्टि होने का योग रहता है। मार्गशीर्ष कृष्ण नक्षमी, एकादशी और द्वादशी और अमावस्या को चित्रा, स्वाती, विशाखा नक्षत्र हों और इन तिथियों में मेघों ने गर्भ धारण किया हो तो आषाढ़ी पूर्णिमा को बनघोर वर्षा होती है। जब गर्भ का प्रसवकाल आता है, उस समय पूर्व में ब्रादल धूमिल, सूर्यास्त में श्याम और मध्याह्न में विशेष गर्मी रहती है। यह नक्षण प्रसवकाल का है। आवण, भाद्रपद और आश्विन का गर्भ सात दिन या नों दिन में ही बरस जाता है। इन महीनों का गर्भ अधिक वर्षा करने वाला होता है। दक्षिण की प्रबल हवा के साथ पश्चिम की बायु भी साथ ही चले तो शीघ्र ही वर्षा होती है। यदि पूर्व पवन चले और सभी दिशाएँ धूम्रबर्ण हो जायें तो चार प्रहर के भीतर मेघ बरसता है। यदि उदयकाल में सूर्य पिघलाये गये स्वर्ण के समान या वेदूर्य मणि के समान उज्ज्वल हो तो शीघ्र ही वर्षा करता है। गर्भकाल में साधारणतः आकाश में बादलों का छाया रहना शुभ माना गया है। उल्कापात, विद्युत्पात, धूलि, वर्षा, भूकम्प, दिग्दाह, गन्धर्वनगर, निर्घाति शब्द आदि का होना मेघगर्भ काल में अशुभ माना गया है। पञ्चनक्षत्र—पूर्वांगाड़ा, उत्तरांगाड़ा, रोहिणी, पूर्वामाद्रपद और उत्तराभाद्रपद में धारण किया गया गर्भ सभी ऋतुओं में वर्षा का गरण होता है। शतभिष्या, अश्लेषा, आर्द्धा, स्वाती, मध्या इन नक्षत्रों में धारण किया गया गर्भ भी शुभ होता है। अच्छी वर्षा के साथ सुभिक्ष, ज्ञान्ति, व्यापार में साम और जनता में सन्तोष रहता है। पूर्वांगाड़ा नक्षत्र का गर्भ पशुओं के लिए लाभदायक होता है। उस गर्भ का नियमित नर और मादा पशुओं की उन्नति का कारण होता है। पशुओं के शोष आदि नष्ट हो जाते हैं और उन्हें अनेक प्रकार से लोग अपने कार्यों में लाते हैं। पशुओं की कीमत भी बढ़ जाती है। देश में कृषि का विकास पूर्णरूप से होता है तथा कृषि के सम्बन्ध में नये-नये अन्वेषण होते हैं। पूर्वांगाड़ा में गर्भ धारण करने से चातुर्मास में उत्तम वर्षा होती है और माप के महीने में भी वर्षा होती है, जिससे फसल भी उत्पत्ति अच्छी होती है। पूर्वांगाड़ा का गर्भ देश के नियामियों के आर्थिक विकास का भी कारण बनता है। यदि इस नक्षत्र के मध्य में गर्भ धारण का कार्य होता है, तो प्रशासक के लिए हानि होती है तथा राजसीतिक दृष्टि से उक्त प्रदेश का सम्भाव गिर जाता है। उत्तरांगाड़ा में गर्भ धारण की क्रिया होती है तो भाद्रपद के महीने में अल्प वर्षा होती है, अवरोध महीनों में खब वर्षा होती है। कलाकार और जिलियों के

लिए उक्त प्रकार का गर्भ अच्छा होता है। देश में कला-कीशल की भी वृद्धि होती है। यदि उक्त नक्षत्र में सन्ध्या समय गर्भधारण की क्रिया हो तो व्यापारियों के लिए अशुभ होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है। विद्युत्पात अधिक होता है, तथा देश के किसी बड़े नेता की मृत्यु की भी सूचक होती है। उत्तराषाढ़ा के प्रथम चरण में गर्भधारण की क्रिया हो तो साधारण वर्षा आश्विन मास में होती है, द्वितीय चरण में गर्भधारण की क्रिया हो तो भाद्रपद मास में अल्प वर्षा होती है और यदि तृतीय चरण में गर्भधारण की क्रिया हो तो पशुओं को कष्ट होता है। अतिवृष्टि के कारण बाढ़ अधिक आती है तथा सभस्त बड़ी नदियाँ जल से आप्लावित हो जाती हैं। दिग्दाह और भूकम्प होने का योग भी आश्विन और माघ मास में रहता है। कृषि के लिए उक्त प्रकार की जलवृष्टि हानिकारक ही होती है। उत्तराषाढ़ा के चतुर्थ चरण में गर्भधारण होने पर उसम् वर्षा होती है और फसल के लिए यह वर्षा अमृत के समान गुणकारी गिर्द होती है।

पूर्वी भाद्रपद में गर्भधारण हो तो चातुर्मास के अलावा गौप में भी वर्षा होती है और फसल में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं, जिससे फसल की क्षति होती है। यदि इस नक्षत्र के प्रथम चरण में गर्भधारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में हो तो गर्भधारण के 193 दिन बाद उत्तम वर्षा होती है और आषाढ़ के महीने में आठ दिन वर्षा होती है। प्रथम चरण की आरम्भ वाली तीन घटियों में गर्भधारण हो तो पाँच आठक जल आषाढ़ में, सात आठक श्रावण में, छः आठक भाद्रपद और चार आठक आश्विन में बरसता है। गर्भधारण के दिन से ठीक 193वें दिन में निश्चयतः जल बरस जाता है। यदि द्वितीय चरण में गर्भधारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में हो तो 192 दिन के पश्चात् या 192वें दिन ही जल वृष्टि हो जाती है। आषाढ़ कृष्ण पक्ष में उत्तम जल बरसता है, शुक्ल पक्ष में केवल दो दिन अच्छी वर्षा और तीन दिन साधारण वर्षा होती है। द्वितीय चरण का गर्भ चार सौ वेदों की दूरी में जल बरसता है। यदि इसी नक्षत्र के इसी चरण में मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में गर्भधारण की क्रिया हो तो आषाढ़ में प्रायः वर्षा का अभाव रहता है। श्रावण मास में पानी बरसता आरम्भ होता है, भाद्रपद में भी अल्प ही वर्षा होनी है। यद्यपि उक्त नक्षत्र के उक्त चरण में गर्भधारण करने का फल वर्ष में एक खारी जल बरसता है; किन्तु यह जल इस प्रकार बरसता है, जिससे इसका सदुपयोग पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। यदि पूर्वीभाद्रपद के तृतीय चरण में भेद भार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में गर्भधारण करें तो 190वें दिन वर्षा होती है। वर्षा का आषाढ़ आपाह कृष्ण सप्तमी से हो जाता है तथा आषाढ़ में ग्यारह दिनों तक वर्षा होती रहती है। श्रावण में कुल आठ दिन, भाद्रपद में चौदह दिन और आश्विन में नौ दिन वर्षा होती है। कात्तिक मास में कृष्णपक्ष की त्रयोदशी से शुक्लपक्ष की पञ्चमी

तक वर्षा होती है। इस चरण का गर्भधारण फसल के लिए भी उत्तम होता है तथा सभी प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब नक्षत्र के चतुर्थ चरण में गर्भ धारण की किया हो तो 196वें दिन घोर वर्षा होती है। सुभित्ता, शान्ति और देश के आर्थिक विकास के लिए उक्त गर्भ धारण का योग उत्तम है। वर्ष में कुल 84 दिन वर्षा होती है। आपाढ़ में 16 दिन, शावण में 19 दिन, भाद्रपद में 14 दिन, आश्विन में 19 दिन, कात्तिक में 10 दिन, मार्गशीर्ष में 3 दिन और माघ में 3 दिन पानी बरसता है। अन्न का भाव सहता रहता है। गुड़, चीनी, शी, तैल, तिलहन का भाव कुछ तेज रहता है।

उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण में मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में गर्भधारण होती है तो गर्भधारण के 188वें दिन वर्षा होती है। वर्षा का आरम्भ आपाढ़ शुक्ल तृतीया से होता है। वर्ष में 73 दिन वर्षा होती है। आपाढ़ में 6 दिन, शावण में 18 दिन, भाद्रपद में 18, आश्विन में 14 दिन, कात्तिक में 10 दिन, मार्गशीर्ष में 5 दिन और पींग में 2 दिन वर्षा होती है। द्वितीय चरण में गर्भ धारण होने पर 185वें दिन वर्षा आरम्भ होती है तथा वर्ष में कुल 66 दिन जल बरसता है। तृतीय चरण में गर्भ धारण होने पर 183वें दिन ही जल की वर्षा होने लगती है। यदि दसी नक्षत्र में आपाढ़ या शावण में मेघ गर्भ धारण करे तो 7 वें दिन ही वर्षा हो जाती है। चतुर्थ चरण में गर्भ धारण करने पर 178वें दिन वर्षा आरम्भ हो जाती है तथा फसल भी अच्छी होती है। उथेठ में उक्त नक्षत्र के उक्त चरण में गर्भ धारण हो तो 11वें दिन वर्षा, आपाढ़ में गर्भधारण होतो छठे दिन वर्षा, और शावण में गर्भधारण होतो तीसरे दिन वर्षा आरम्भ होती है। रोहिणी नक्षत्र में गर्भधारण होने पर अच्छी वर्षा होती है तथा वर्ष में कुल 8। दिन जल बरसता है। आपाढ़ में 12 दिन, शावण में 16 दिन, भाद्रपद में 18 दिन, आश्विन में 14, कात्तिक में 5 दिन, मार्गशीर्ष में 7 दिन, पौष में 3 दिन और माघ में 6 दिन पानी बरसता है। फसल उत्तम होती है। गेहूँ की उत्पत्ति विशेष रूप से होती है।

त्रयोदशोऽध्यायः

**अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यात्रा १मुख्यां जयावहाम् ।
२निर्गच्छदर्शनं तथ्यं पार्थिवानां जयेषिणाम् ॥१॥**

अब निर्गच्छ आत्मायों के द्वारा प्रतिभादित एवं राजाओं को विजय और सुख देने वाली यात्रा का वर्णन वरता है ॥१॥

**आस्तिकाय विनीताय श्रद्धानाय धीमते ।
कृतज्ञाय सुभक्ताय यात्रा सिद्ध्यति श्रीमते ॥२॥**

आस्तिक—लोक, परलोक, धर्म, कर्म, पुण्य, पाप पर आस्था रखने वाले, विनीत, श्रद्धालु, बुद्धिमान्, कृतज्ञ, भक्त और श्रीमान् की यात्रा सफल होती है ॥२॥

**अहंकृतं नृपं कूरं नास्तिकं पिशुनं शिशम् ।
कृतद्वनं चपलं भीरुं श्रीर्जहात्यवुधं शठम् ॥३॥**

अहंकारी, कूर, नास्तिक, चृगलघोर, बालक, कृतद्वी, चपल, डरपोक और शठ नृप की यात्रा असफल होती है—यात्रा में सफलता रुपी नक्षमी की प्राप्ति उपर्युक्त लक्षण विशिष्ट व्यक्ति को नहीं होती ॥३॥

**वृद्धान् साधून् समागम्य दैवज्ञांश्च विपश्चितान् ।
ततो यात्राविधि कुर्यान् ३नृपस्तान् पूज्य बुद्धिमान् ॥४॥**

वृद्ध, साधु, दैवज्ञ—ज्योतिषी, विद्वान् का यथाविधि मम्मान नर बुद्धिमान् राजा को यात्रा करनी चाहिए ॥४॥

**राजा बहुश्रुतेनापि प्रष्टव्या ज्ञाननिश्चिताः ।
अहंकारं परित्यज्य तेभ्यो गृह्णीत निश्चयम् ॥५॥**

अनेक शास्त्रों के ज्ञाता नृपति की भी अहंकार का त्याग कर निमित्तज से यात्रा का मुद्दत्त प्रहण करना चाहिए—ज्योतिषी या यात्रा का मुद्दत्त एवं यात्रा के शक्तियों का विचार कर ही यात्रा करनी चाहिए ॥५॥

**प्रहनक्षत्रतिथ्यो मुहूर्तं^१ करणं स्वराः ।
लक्षणं वर्यजनोत्पातं^२ निमित्तं साधुमंगलम् ॥६॥**

प्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, वर्यजन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तों का विचार यात्राकाल में करना आवश्यक है ॥६॥

1. यात्रामन्त्रमुखान्तहाम् मू० । 2. निर्गच्छदर्शनां तथ्यां पार्थिवानां जिर्णपिण्डम् ।
3. नृपस्तं मू० । 4. मुहूर्तः मू० । 5. उत्पातः मू० ।

यस्मादेवासुरे युद्धे निमित्तं दैवतैरपि ।
कृतं प्रमाणं तस्माद्वै विविधं दैवतं मतम् ॥7॥

देवासुर संग्राम में देवताओं ने भी निमित्तों का विचार किया था, अतः राजाओं को सर्वदा निश्चयपूर्वक निमित्तों की पूजा करनी चाहिए—निमित्तों के शुभा-शुभ के अनुसार यात्रा करनी चाहिए ॥7॥

हस्त्यश्वरथपादातं बलं खलु चतुर्विधम् ।
निमित्ते तु तथा ज्ञेयं ३यत्र तत्र शुभाशुभम् ॥8॥

हाथी, घोड़ा, रथ और पेदल इस प्रकार चार तरह की चतुरंग सेना होती है । यात्रा कालीन निमित्तों के अनुसार उक्त प्रकार की सेना का शुभाशुभत्व अवगत करना चाहिए ॥8॥

३शनैश्चरणता एव हीयन्ते हस्तिनो यदा ।
अहोरात्रान्यमाक्रोद्यः तत्प्रधानवधस्मृतः ॥9॥

यदि कोई राजा सर्वेन्य शनिश्चर को यात्रा करे तो हाथियों का विनाश होता है । अहनिश यमराज का प्रकोप रहता है तथा प्रधान सेना नायक का वध होता है ॥9॥

यावच्छायाकृतिरवर्हीयन्ते वाजिनो यदा ।
विगतस्का विगतयः ३त्प्रधानवधः स्मृतः ॥10॥

यदि घोड़ों की छाया, आकृति और हिनहिनाने की ध्वनि—आवाज हीयमान हो तथा वे अन्यमन्तरकः और अस्त-व्यस्त चलते हों तो सेनापति का वध होता है ॥10॥

३मेघशंखस्वराभास्तु हेमरत्नविभूषितः ।
३छायाहीनाः प्रकुर्वन्ति तत्प्रधानवधस्तथा⁹ ॥11॥

यदि स्वर्ण आभूषणों से युक्त घोड़े मेघ के समान आकृति और शंख ध्वनि के समान शब्द करते हुए छायाहीन दिखलाई गङ्गे तो प्रधान सेनापति के वध की सूचना देते हैं ॥11॥

1. पूर्वं त पूजिनः अते निमित्तं गृणतेरपि । २. रणादै पूजनीयाश्च निमित्तः सततं गृणेते ॥7॥ २. एव मु० । ३. भवित्वाऽमर्दानः मु० । ४. यथा मु० । ५. वधस्यामा मु० । ६. प्रधानस्य वधस्यामा मु० । ७. मेघशंखस्वराभास्तु मु० । ८. छायाप्रहीणा कुर्वन्ति मु० । ९. वदा मु० ।

शीर्षशस्त्रबलोपेता विलयाताश्च पदातयः ।
परस्परेण भिद्यन्ते तत्प्रधानवधस्तदा ॥12॥

यदि यात्रा काल में प्रसिद्ध पैदल सेना शीर्ष, शस्त्र और शक्ति से सम्पन्न होकर आपस में ही झगड़ जाये तो प्रधान सेनापति के बध की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥12॥

निमित्ते लक्षयेवेतां चतुरंगां तु वाहिनीम् ।
^१नैमित्तः स्थपतिर्वेदः पुरोधाश्च ततो विदुः ॥13॥

चतुरंग सेना के गमन समय के निमित्तों का अवलोकन करता चाहिए । नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित इन चारों के लक्षणों को निम्न प्रकार ज्ञात करता चाहिए ॥13॥

चतुर्विधोऽयं विष्कम्भस्तरथ विष्वा: प्रकोर्तिताः ।
स्तिरधो जीमूतसंकाशः ^२सुस्वप्नः चापविच्छुभः ॥14॥

नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित यह चार प्रकार का विष्कम्भ है, इसके विष्व—पर्याय स्तिरध, जीमूतसंकाश मेंधों का सान्निध्य, सुस्वप्न और घनुपज है ॥14॥

^३नैमित्तः साधुसम्पन्नो राजः कार्यहिताय सः ।
संघाता पार्थिवेनोक्ताः सभानस्याप्यकोविदः ॥15॥

स्कन्धावारनिदेशेषु कुशलः ^४स्थापको मतः ।
कायशल्यशलाकासु विधोन्मादज्वरेषु च ॥16॥

चिकित्सानिपुणः कार्यः राजा वैद्यस्तु यात्रिकः ।
जानवानल्पवावीमान् ^५कांक्षामुक्तो ^६यशः प्रियः ॥17॥

मानोन्मानप्रभाषुकतो पुरोधा गुणवान्छितः ।
हितधो गम्भीरधोषश्च ^७सुमनाश्चाशुगान् बुधः ॥18॥

छायालक्षणपुष्टश्च सुवर्णः पुष्टकः सुवाक् ।
सवलः पुरुषो ^८विद्वान् ऋधश्च यतिः शुचिः ॥19॥

1. एवमेव जर्य कुषुर्विगर्वः । 2. गंधव , आ० । 2. गंधव , म० । 3. वह श्लोक हस्तनिवित प्रति वे नहीं है । 4. स्थापको मू० । 5. यामी च म० । 6. यात्रिको म० । 7. सम म० । 8. सम वर्षकाल म० । 9. विद्वान् ऋधश्च यतिः शुचिः म० ।

हिल्लो त्रिवर्णः पिंगो वा नीरोभा 'छिद्रवजितः ।
रक्तशमथुः पिगनेत्रो गौरस्ताम्रः पुरोहितः ॥20॥

शुभ लक्षणों में युक्त, राजा के हित कार्य में संलग्न, राजा के द्वारा प्रतिषंदित योजनाओं को घटित करने वाला, समताभाव स्थापित करने वाला और निमित्तों का ब्राता नैगिनि क होता है ।

छावनी—मैत्य-शिविर बनाने में निपुण, युद्ध-संचालक और समयज स्थपति राजा होता है ।

शरीरसास्त्र, निदानशास्त्र, शत्यवार्म—आंगरेण, सूचीकर्म—दन्तेक्षण, मृद्धी, ज्वर आदि वर्गों में प्रथीण और चिकित्सा कार्य में दक्ष वैद्य को ही राजा द्वारा गाँवा वाल में वैद्य निर्वाचित किया जाना चाहिए ।

जानी, ग्रन्थ भागण करने वाला अर्थात् मित्रभाषी, बुद्धिमान्, सांसारिक आकर्षणाओं से रहित, यज्ञ की कामना रखने वाला, गुणवान्, मानोन्मान प्रभायुक्त

संग्राम कुद वाला, रितर्घ और गम्भीर स्वर—कोमल और स्निग्ध स्वर वाला, श्रेष्ठ चिन वाला, बुद्धिमान्, गृष्ट शरीर वाला, सुन्दर दर्ण वाला, सुन्दर आङृति वाला, सुन्दर बचने वाला, बलवान्, विद्वान्, अक्रोधी—शान्तचित्, जितेन्द्रिय, पवित्र, त्रिवर्ण—ठिज, हिंगक, दिगदर्ण, लोभरहित, छिद्र—चेचक के दाग रहित, लाज मूँछ, पिंगल नेत्र, गौरवर्ण, ताम्र-कांचन देह पुरोहित होता है ॥15-20॥

नित्योद्विग्नो 'नूपहिते युक्तः प्राजः सदाहितः ।

एवमेतान् यथोद्विष्टान् सत्कर्मेषु च योजयेत् ॥21॥

नित्य ही चिन्तित, राजा के हित कार्य गे संलग्न, बुद्धिमान्, सर्वदा हित खाहने वाला गुरोहित नैगिन होता है । राजा को चाहिए कि वहपूर्वोक्त गुण वाले नैमित्त, वैद्य और पुरोहित नो ही कार्य में लगाये ॥21॥

इतरेतरयोगेन न सिद्धयन्ति कदाचन ।

अशान्तौ शान्तकारो यो शान्तिपुष्टिशरीरिणाम् ॥22॥

इतरेतर योग—उपर्युक्त लक्षणों से रहित व्यवितयों को कार्य में लगा देने पर संग्राम सम्बन्धी गाँवा सफल नहीं होती । ऐसे ही व्यवित को नियुक्त करना चाहिए, जो अशान्त को शान्त कर सके और प्रजा में शान्ति और पुष्टि—समृद्धि स्थापित कर सके ॥22॥

1. नित्योद्विग्न । 2. नैगिनो युक्तः म० । 3. अशान्तः शान्तकारणः शान्तिपुष्टिशरीरिणःग् म० ।

यद्देवाऽसुरयुद्धे च निमित्तं दैवतैरपि ।
कृतप्रमाणं च तस्माद्द्वि द्विविधं दैवतं मतम् ॥23॥

देवासुर संग्राम में देवताओं ने निमित्तों वो देखा था और उन्हें प्रमाणभूत स्वीकार किया था। अतएव निमित्त दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥23॥

ज्ञानविज्ञानैयुक्तोऽपि लक्षणैर्यैविवजितः ।
न कार्यसाधको ज्ञेयो यथा चक्रो रथस्तथा ॥24॥

ज्ञान-विज्ञान गे सहित होने पर भी यदि नैमित्त, पुरोहितादि उपर्युक्त लक्षणों से रहिया हों तो वे कार्य-साधक नहीं हो सकते हैं। जिस प्रकार वक्ररथ—देवा रथ अच्छी तरफ़ से यमन करते में असमर्थ है, उसी प्रकार उपर्युक्त लक्षणों से हीत व्यक्तियों गे युवन होने पर राजा अपने कार्य के सम्मादन में असमर्थ रहता है ॥24॥

यस्तु लक्षणसम्पन्नो ज्ञानेन च समायतः ।
स कार्यसाधनो ज्ञेयो यथा सर्वांगिको रथः ॥25॥

जो नृप उपर्युक्त लक्षणों से युक्त, ज्ञान-विज्ञान से सहित व्यक्तियों को नियुक्त करता है, उसके कार्य सफल हो जाते हैं। जिस प्रकार सर्वांगीण रथ द्वारा मार्ग तथ करने में सुविधा होती है, उसी प्रकार उक्त लक्षणों से सहित व्यक्तियों के नियुक्त करने पर कार्य साधने में सफलता प्राप्त होती है ॥25॥

अल्पेनापि तु ज्ञानेन कर्मज्ञो लक्षणान्वितः ।
तद् विन्द्यात् सर्वपतिमान् राजकर्मसु ऽसिद्धये ॥26॥

कार्यकुण्डल, भले ही अल्पज्ञानी हो, किन्तु उपर्युक्त लक्षणों से युक्त बुद्धिमान् व्यक्ति को ही राजकार्यों की सिद्धि के लिए नियुक्त करना चाहिए ॥26॥

अपि लक्षणवान् भुख्यः कंचिदर्थं प्रसाधयेत् ।
त च लक्षणहीनस्तु विद्वानपि न साधयेत् ॥27॥

उपर्युक्त लक्षणवाला व्यक्ति अल्पज्ञानी होने पर भी कार्य की सिद्धि कर सकता है। किन्तु लक्षण रहित विद्वान् व्यक्ति भी कार्य को सिद्ध नहीं कर सकता है ॥27॥

1. यस्मात् यद्युनां दैवतैरपि मू० । 2. सूतोऽपि मू० । 3. तं साधुकार्येणो मू० ।
4. भूत्यकार्येणो मू० । 5. सिद्ध्यति मू० । 6. ज्ञानेन वल्हीनस्तु मू० । 7. वेदवाचपि मू० ।

अच्छी वर्षा, सामान्य औंत, माघ में धूमपात, अन्त का भाव महेश और व्यापारी की या घोबी, कुम्हार, नाई आदि के लिए फाल्गुन, चैत्र और वैशाख में कष्ट होता है। मुख्यार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन इसका दर्शन होता है, उस दिन के आठ दिन पश्चात् ही घोबी वर्षा होती है। इस वर्षा से नदियों में बाढ़ आने की भी संभावना नहीं है। व्यापारी बर्ग के लिए यह दर्शन उत्तम माना गया है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को आनन्द, सुभिक्ष, परस्पर में सहयोग की भावना का विकास, धन-जन की बृद्धि एवं नागरिकों को सुख-शान्ति मिलती है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण जनता को भी कष्ट होता है। वर्षा अच्छी होती है, पर असामिक वर्षा होने के कारण जनता के साथ पशु बर्ग को भी कष्ट उठाना पड़ता है।

कार्त्तिक मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्नि का प्रकोप होता है, अनेक स्थानों पर आग लगने की घटनाएँ घुनाई पड़ती हैं। व्यापार में घाटा होता है। देश में कुछ अज्ञानि रहती है। पशुओं के लिए चारे का व्यभाव रहता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीत का प्रकोप होता है। शहरों में भी ओले बरनते हैं। शु और शनुषों को आगर कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को आगर कष्ट होता है। यद्यपि आर्थिक विकास के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ना उत्तम होता है। शुक्र की गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो गान्ति रहती है। जनता में सहयोग बढ़ता है। औद्योगिक विकास के लिए उत्तम स्रोत है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सिंह, व्याघ्र आदि हिस्से पशुओं द्वारा जनता को कष्ट होता है। व्यापार के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर का दिखलाई पड़ना शुभ नहीं है।

मार्गशीर्ष मास में मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, आगामी वर्ष उत्तम वर्षा, फसल अच्छी और यह पूर्णीपतियों को कष्ट होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जी जनता को कष्ट होता है। मुख्यार को गन्धर्वनगर का दिखलाई पहुंचा अच्छा होता है, देश का सर्वोत्तम विकास होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर का देखा जाना लाभ, गुम्ब, आरोग्य और शनिवार को देखने से हानि होती है। शनिवार की आग की यदि पश्चिम दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो गदर होता है। कोई निसी की गूछता नहीं, मारकाट और लूटपाट की स्थिति उत्तम ही जाती है।

पोषणमास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्रजा को कष्ट, गोग और अग्निभय; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो पूर्ण शुभेत, धात्य का भाव सम्भव, सोना-चाँदी का भाव महेंगा; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष उत्तमधार

यथान्धः पथिको भ्रष्टः पथि विलश्यत्यनाथकः ।
अनैमित्तस्तथा राजा नष्टे श्रेष्ठसि विलश्यति ॥28॥

जिस प्रकार अन्धा यातागीर ले जाने वाले के न रहने से च्युत हो जाने से कष्ट उठाता है उसी प्रकार नैमित्तिक के बिना राजा भी कल्याण के नष्ट होने से कष्ट उठाता है ॥28॥

यथा तमसि चक्षुष्मान् रूपं साधु पश्यति ।
अनैमित्तस्तथा राजा न श्रेष्ठः साधु श्राप्यति ॥29॥

जिस प्रकार नेत्र वाला व्यक्ति भी अन्धकार में अच्छी तरह रूप को नहीं देख सकता है, उसी प्रकार नैमित्तिक से हीन राजा भी अच्छी तरह कल्याण को नहीं प्राप्त कर सकता है ॥29॥

यथा वक्ते रथो गन्ता चित्रं पथति यथा च्युतम्^२ ।
अनैमित्तस्तथा राजा न ^३साधुकलमीहते ॥30॥

जिस प्रकार वक्त—ऐडे-मेडे रथ द्वारा गार्ग पर चलने वाला व्यक्ति गार्ग से च्युत हो जाता है और अभीष्ट स्थान पर नहीं पहुँच पाता; उसी प्रकार नैमित्तिक से रहित राजा भी कल्याणगार्ग नहीं प्राप्त कर पाता है ॥30॥

चतुर्गद्वितो युद्धं कुलाले वतिनं यथा ।
अविनष्टं न गृह्णाति वर्जितं सूक्ष्मात्मुना ॥31॥

जिस प्रकार कुम्हार अर्तन बनाते गमय मृतिका, चाक, दण्ड आदि उपकरणों के रहने पर भी, वर्तन निकालने वाले धार्ग के बिना बर्तन बनाने का कार्य सम्भव प्रकार नहीं कर सकता है, उसी प्रकार चतुर्ग सेना से सहित होने पर भी राजा नैमित्तिक के बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है ॥31॥

चतुर्गद्वलोपेतस्तथा राजा न शक्नुयात् ।
अविनष्टफलं भोक्तुं नैमित्तेन विवर्जितः ॥32॥

चतुर्ग गेगा ये युक्त होने पर भी राजा नैमित्तिक से रहित होने पर युद्ध के समरफल प्राप्त नहीं कर सकता है ॥32॥

तस्माद्राजा निमित्तज्ञं अष्टांगकुशलं वरम् ।
विशृण्यात् प्रथमं प्रीत्याऽभ्यर्थयेत् सर्वसिद्धये ॥33॥

अतएव राजा गम्भी प्रकार की सिद्धि प्राप्त करने के अष्टांग निमित्त के जाता,

1. वाय शू । 2. वचन भू । 3. लेना- मू ।

चतुर् श्रेष्ठ नैमित्तिक को प्रार्थना पूर्वक अपने यहाँ नियुक्त करें ॥33॥

आरोग्यं जीवितं लाभं सुखं मित्राणि सम्पदः ।
धर्मर्थकामसोक्षाय तदा यात्रा नृपस्य हि ॥34॥

आरोग्य, जीवन, लाभ, सुख, सम्पत्ति, मित्र-मिलाण, धर्म, अर्थ, काम और
मोक्ष की प्राप्ति जिस समय होने का योग हो, उसी समय राजा को यात्रा करनी
चाहिए ॥34॥

शश्याऽसनं यानयुग्मं हस्त्यश्वं स्त्री-नरं स्थितम् ।
वस्त्रान्तस्वप्नयोधांश्च यथास्थानं स योक्ष्यति ॥35॥

शुभ-यात्रा से ही शश्या, आसन, सवारी, हाथी, घोड़ा, स्त्री, पुरुष, वस्त्र,
पोद्दारा आदि यथासमय प्राप्त होते हैं । अर्थात् शुभग्रन्थ में इनका करने से अच्छी
पस्तुएँ भी नष्ट हो जाती हैं । अतः समय का प्रभाव सभी वस्तुओं पर पड़ता
है ॥35॥

भृत्यामात्यास्त्रियः पूज्या राजा स्थाप्यहः सुलक्षणाः ।
ऐभिस्तु लक्षणैः राजा लक्षणोऽप्यदर्शदत्ति ॥36॥

भृत्य, अमात्य—प्रधानमन्त्री और स्त्रियों का यथोचित् सम्मान करके इन्हें
राज्य भलाने के लिए राजधानी में स्थापित करना चाहिए । इन उपर्युक्त लक्षणों
से युक्त राजा ही लक्ष्य को प्राप्त करता है ॥36॥

तस्माद् देशे च काले च सर्वज्ञानवतां वरम् ।
सुमनाः पूजयेद् राजा नैमित्तं दिव्यचक्षुषम् ॥37॥

अतएव देश और काल में सभी प्रकार के ज्ञानियों में श्रेष्ठ दिव्य चक्षुधारी
नैमित्तिक का सम्मान राजा को प्रसन्न चित्त से करना चाहिए ॥37॥

न वेदा नापि चांगन्ति न विद्याश्च पृथक् पृथक् ।
प्रसाधयन्ति तान्तर्थान्तिमित्तं यत् सुभाषितम् ॥38॥

नैमित्तों के द्वारा जितने प्रकार के और जैसे कार्य गम्भीर हो सकते हैं, उस
प्रकार के उन कार्यों को न वेद से सिद्ध किया जा सकता है, न वदांग से और न
अन्य किसी भी प्रकार की विद्या से ॥38॥

अतीतं वर्तमानं च भविष्यद्यच्च रिक्तचन ।
सर्वं विज्ञायते येन तज्ज्ञानं नेतरं मतम् ॥39॥

अतीत—भूत, वर्तमान और भविष्यत् का परिज्ञान निमित्तों के द्वारा ही विद्या जा सकता है, अन्य किसी शास्त्र या विद्या के द्वारा नहीं ॥39॥

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहुः सौख्यं धर्मविदो जनाः ।

तस्मात् प्रीतिः सखा ज्ञेया सर्वस्थ जगतः सदा ॥40॥

धर्म के जानकार व्यक्तियों ने प्रेम का फल स्वर्ग और सुख बतलाया है। अतएव समस्त संसार के प्रेम को गित जानना चाहिए ॥40॥

स्वर्गेण तादृशा प्रीतिविषयैर्वपि मानुषेः ।

१यदेष्टः स्यान्तिर्मित्तेन सतां प्रीतिस्तु जायते ॥41॥

मनुष्यों की स्वर्ग गं जैसी प्रीति होती है अथवा विपयों में—भोगों में जैसी प्रीति होती है, इस प्रकार निमित्तों से सञ्जनाओं की प्रीति होती है अर्थात् शुभशूभ को जात करने के लिए निमित्तों की परम आवश्यकता है, अतः निमित्तों से प्रीति करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है ॥41॥

तस्मात् स्वर्गस्पदं पुण्यं निमित्तं जिनभाषितम् ।

पावनं परम² श्रीमत् कामदं च³ प्रमोदकम् ॥42॥

अतएव जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा निरूपित निमित्त स्वर्ग के लुल्य पुण्यास्त्र, परम पवित्र, इच्छाओं को पूर्ण करने वाले और प्रमोद को देने वाले हैं ॥42॥

रागद्वेष्टौ च मोहं च वर्जयित्वा निमित्तवित् ।

देवेन्द्रमपि निर्भीको यथाशास्त्रं समादिशेत् ॥43॥

निमित्तज्ञ को राग, द्वेष और मोह का लाग कर निर्भय होकर शास्त्र के अनुसार इन्द्र को भी यथार्थ बात कह देनी चाहिए ॥43॥

सर्वाण्यपि निमित्तानि अनिमित्तानि सर्वशः ।

“नैमित्ते पृच्छतो याति निमित्तर्णि भवन्ति च” ॥44॥

सभी निमित्त और सभी अनिमित्त नैमित्तिक से पूछने पर निमित्त हो जाते हैं। अर्थात् नैमित्तिक व्यक्ति अनिमित्तकों को निमित्त मानकर फलाफल का निर्देश करता है ॥44॥

यथान्तरिक्षात् पतितं यथा भूमी च तिष्ठति ।

तथांगजनिता चेष्टं निमित्तं फलमात्मकम् ॥45॥

1. गणि शास्त्र। निमित्तेन गृ ॥ 2. प्रत्य गृ ॥ 3. वा भू ॥ 4. प्राप्तवा गृ ॥
5. निमित्तान्वयि गृ ॥ 6. निमित्तं गृ ॥ 7. लु गृ ॥

निमित्त तीन प्रकार के हैं—आकाश से पतित, भूगि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाएँ ॥45॥

१८५३ वसेन्निम्ने यशाप्यमभो लेतुवन्धे च तिष्ठति ।

१८५४ चेतो निम्ने तथा तत्त्वं तद्विद्यादफलात्मकम् ॥46॥

जिस प्रकार जल नीचे की ओर जाता है, पर पुल बाँध देने पर रुक जाता है, उसी प्रकार मानव का मन भी निम्न बातों की ओर जाता है, किन्तु इन बातों को अफलात्मक ---फल रहित जानना चाहिए ॥46॥

१८५५ बहिरंगाश्च जायन्ते अन्तरंगाच्च चिन्तितम् ।

१८५६ तज्ज्ञः शुभाशुभं ब्रूयात्निमित्तज्ञानकोविदः ॥47॥

अन्तरंग में विचार करने पर ही बहिरंग में विकृति आती है। अतः निमित्त ज्ञान में प्रबोध व्यक्ति को शुभाशुभ निमित्त का वर्णन करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि बाह्य प्रकृति में विचार अन्तरंग कारणों से ही होता है, अतः याहू निमित्तों में किया वर्णन सत्य शिद्ध होता है ॥47॥

१८५७ सुनिमित्तेन संयुक्तस्तप्तपरः साधुवृत्तयः ।

१८५८ अदीनमनसंकल्पो भव्यादि लक्षणेद् बुधः ॥48॥

सुनिमित्तों को जानकर, साधु आचरण वाला व्यक्ति, मन को दृढ़ करता हुआ, शुभाशुभ फल वा निरूपण वारे ॥48॥

१८५९ कुञ्जरस्तु तदा नदेत् ज्वलमाने हुताशने ।

१८६० स्तिघ्नदेशे संसाध्नान्तो राजां विजयमावहेत् ॥49॥

स्तिघ्न देश में यकायक अग्नि प्रज्वलित हो और हाथी गजेना करे तो गजा की विजय होती है ॥49॥

१८६१ एवं हयवृषाश्चाऽपि सिंहव्याघ्राश्च सस्वराः ।

१८६२ नदेष्वन्ति तु संन्यानि तदा राजा प्रमदेति ॥50॥

इसी प्रकार बोड़ा, बैल, सिंह, व्याघ्र स्वरपूर्वक गुन्दर नाद या गजेन करे तो राजा सेना को कुचलता है ॥50॥

१. तथेष्वान्तो यथा निम्ने लेतुवन्धे च तिष्ठति पूर्व । २. नदेत् मूर्ति । ३. नदेष्वन्ति पूर्व ।
४. विन्द्यात् बन्धाफलात्मकम् भूर् । ५. यद्विनादिविषयमन्तरराज्ञ निमित्तात् पूर्व ।
६. विधिम् मूर्ति । ७. नदेदधूमाने मूर्ति । ८. गिरघृष्णन्ति च तिष्ठति राजा पूर्व ।
९. गुस्थाः मूर्ति । १०. भोग्यानि भूर्ति ।

स्त्रियोऽल्पघोषो धूमोऽथ गौरवणो महान् जुः ।
प्रदक्षिणोऽप्यवच्छिन्नः सेनानी विजयावहः ॥५१॥

यदि गमन काल में स्त्रिया, मन्द घनि, धूमग्रुहता, गौरवणी, गीधी वडी शिखावाली अग्नि दाहिनी और से चारों ओर की प्रदक्षिणा करती हुई भी अविच्छिन्न! दिखलाई पड़े तो सेनानी की विजय होती है ॥५१॥

कृष्णो वा विकृतो रुक्षो वासावर्तो हुताशनः ।
हीनार्चिचधूमबहुलः स ब्रह्माने भयावहः ॥५२॥

यदि गमन समय में कृष्ण शिखावाली, रुक्ष विकृति-विकार वाली, अधिक धूम वाली अग्नि सेना की बाधी और दिखलाई पड़े तो भयप्रद होती है ॥५२॥

सेनाये हृष्मानस्य यदि पीता शिखा भवेत् ।
श्यामाऽथवा यदा रक्ता पराजयति सा चमूः ॥५३॥

यदि गमनकाल में रोना के आगे गीतवर्ण भी अग्नि की ज्वाला धू-धू करती हुई दिखलाई पड़े, रक्त वर्ण भी अथवा कृष्ण वर्ण की शिखा उपर्युक्त प्रकार की ही दिखलाई पड़े तो रोना की पराजय होती है ॥५३॥

यदि होतुः पथे शीघ्रं १ज्वलत्सफुलिलगमग्रतः ।
पार्श्वतः पृष्ठतो वाऽपि तदेवं कलमादिशेत् ॥५४॥

यदि गमन समय गार्मि में होता अर्थात् हवन करने वाले के आगे अग्निकण शीघ्रता से उड़ते हुए दिखलाई पड़े, अथवा गीछे या बगल की ओर अग्निकण दिखलाई पड़े तो भी रोना की पराजय होती है ॥५४॥

यदि धूमाभिभूता स्याद् वातो भस्म निपातयेत् ।

आहृतः कस्ते वाऽज्ञ्ये न ता यात्रा विधीयते ॥५५॥

यदि अग्नि धूमग्रुहत हो और वायु के द्वारा इसकी भरम... राख इधर-उधर उड़ रही हो अथवा अग्नि में आहृति रुप दिखा गया वी कम्पित हो रहा हो तो याका नहीं करती चाहिए ॥५५॥

राजा परिजनो वाऽपि कुप्यते भन्वशासने ।

हेतुराज्यविलोपे च तस्यैव वधमादिशेत् ॥५६॥

राजा या परिजन गन्धी के अनुशासन रो लोधित हों और हवन करने वाले होता का वी नट हो जाये तो उसकी वध वी गूचना समझनी चाहिए ॥५६॥

यद्याज्यभाजने केशा भस्मास्थीनि पुनः पुनः ।
सेनाग्रे हृषमानस्य मरणं तत्र निर्दिशेत् ॥५७॥

यदि सेना के समक्ष हवन के घृतपात्र में केश, भस्म, हड्डी पुनः-पुनः गिरती हों तो सेना के मरण का निर्देश करना चाहिए ॥५७॥

आपो होतुः पतेद्दस्तात् पूर्णपात्राणि वा भूवि ।
कालेन स्याद्वधस्तत्र सेनाया नात्र संशयः ॥५८॥

यदि होता के हाथ रो जल गिर जाये अथवा पूर्ण पात्र पृथ्वी पर गिर जाये तो कुछ समय में सेना का वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥५८॥

यदा होता तु सेनायाः प्रस्थाने स्खलते मुहुः ।
बाधयेद् ब्राह्मणान् भूमौ तदा स्ववधमादिशेत् ॥५९॥

जब सेना के प्रस्थान में होता बार-बार स्खलित हो और पृथ्वी पर ब्राह्मणों को बाधा पहुँचाता हो तो अपने वध का निर्देश करता है ॥५९॥

धूमः १कुणिपगन्धो वा पीतको वा यदा भवेत् ।
सेनाग्रे हृषमानस्य तदा सेना यराजयः ॥६०॥

यदि आमन्त्रित सेना के आगे हवन की अग्नि का धूम मुर्दा जैसी गत्वा वाला हो अथवा धूम पीति वर्ण का हो तो गता के पराजय की गूचना समझनी चाहिए ॥६०॥

मूषको नकुलस्थाने वराहो २गच्छतोऽन्तरा ।
३धामावर्तः पतंगो वा राजो त्यसनमादिशेत् ॥६१॥

न्यौला, मूषक और शूकर यदि पीछे की ओर आगे हुए दिखलाई पड़े अथवा बायीं और पतंग - चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो राजा की विपत्ति की गूचना समझनी चाहिए ॥६१॥

मक्षिका वा पतंगो वा यद्वाऽऽयन्यः सरीसृपः ।
सेनाग्रे निपतेत् किञ्चद्युषमाने वधं वदेत् ॥६२॥

मधुमक्षी, पतंग, सरीसृप—रेंगवार, चतुर्वेद वाला गत्वा, सर्पादि आमन्त्रित सेना के आगे गिरे तो वध होने की गूचना समझनी चाहिए ॥६२॥

शुष्कं प्रदह्यते यदा वृष्टिश्चाप्यपवर्षति ।
जवाला धूमाभिभूता तु ततः सैन्यो निवर्तते ॥६३॥

1. कुणिप गु ० । 2. गच्छतेवरात् मु ० । 3. वर्या- मु ० ।

शुष्क ॥—सूखे काष्ठादि जलने लगें, कुछ-कुछ वर्षा भी हो और अग्नि की ली
धूमयुक्त हो तो सेना लौट आती है ॥63॥

¹जुहूतो दक्षिण देशं यदि गच्छन्ति चार्चिषः ।
राजो विजयमाचष्टे वामतस्तु पराजयम् ॥64॥

यदि राजा के गमन समय में दक्षिण ओर हवन करती हुई अग्नि दिखलाई
पड़े तो विजय और वायी ओर उक्त प्रकार की अग्नि दिखलाई पड़े तो पराजय
होती है ॥64॥

जुहूत्यनुपसर्पणस्थान² तु यत् पुरोहितः ।
जित्वा शत्रून् रणे सर्वान् राजा तुष्टो निवर्तते ॥65॥

यदि पुरोहित ढालू स्थान पर यज्ञ करता हो अथवा जिधर राजा गमन कर
रहा हो, उधर पुरोहित यज्ञ करता हो तो समरत शत्रुओं को जीत कर प्रसन्न होता
हुआ राजा लौटता है ॥65॥

यस्य वा सम्प्रयातस्य ³सम्मुखो पृष्ठतोऽपि वा ।
पतत्युल्का सनिवत्ता वधं तस्य निवेदयेत् ॥66॥

प्रयाण करने वाले जिस राजा के सम्मुख या पीछे अर्पण करती हुई उल्का
गिरे तो उस राजा का वध होता है ॥66॥

सेनां यान्ति प्रयातां यां ऋच्यादाशच जुगुप्सिताः ।
अभीक्षणं विस्वरा धोराः सा सेना वध्यते परैः ॥67॥

घृणित मासग्रन्थी जन्म— ग्रे, व्याघ्र, गृद्ध आदि जन्म वार्ष्यार विकृत
और भयंकर शब्द करते हुए प्रयाण करने वाली सेना का अनुगमन करे तो सेना
शत्रुओं द्वारा वध के प्राप्त होती है ॥67॥

प्रयाणे निपतेदुल्का प्रतिलोमा यदा चमूः ।
निवर्तयति मासेन तत्र यात्रा न शिद्ध्यति ॥68॥

जब सेना के प्रयाण के समय विग्रीत दिशा में उल्काग्रात होता है, तद सेना
एक महीने में लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥68॥

छिना भिना प्रदृश्येत तदा सम्प्रस्थिता चमूः ।
निवर्तयेत सा शोद्ध्रे न सा सिद्ध्यति कुत्रचित् ॥69॥

1. गुड पदांश्च गृह्य ददि वक्ष्यात् ना दिशम् भूः । 2. साप-नश्चान् गुरुः । 3. अभ्यु-
भूः । 4. गिरध्वर मूरुः ।

यदि सेना के प्रयाण के समय उल्का छिन्न-मिन्न दिखलाई पड़े तो शीत्र ही सेना लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥69॥

यस्याः प्रयाणे सेनायाः सनिधर्ता मही चलेत् ।
न तया सम्प्रयातव्यं साऽपि वध्येत् सर्वशः ॥70॥

जिस सेना के प्रयाण के समय धर्षण करती हुई पूर्वी चल—भूकम्प हो तो उस सेना के साथ नहीं जाना चाहिए; क्योंकि उसका भी वध होता है ॥70॥

अग्रतस्तु सपाष्टाणं तोर्ये वर्षति बासवः ।
सङ्ग्रामं घोरमत्यन्तं जयं राजश्च शंसति ॥71॥

यदि सेना के आगे भेष औनों सहित वर्पा कर रहा हो तो भर्यकर मुढ़ होता है और राजा के जय लाभ में सन्देह समझना चाहिए ॥71॥

प्रतिलोमो यदा वायुः सपाष्टाणो रजस्करः ।
निवर्त्यति प्रस्थाने परस्परजयावहः ॥72॥

कंकड़-पत्थर और धूलि को लिये हुए यदि विगरीत दिशा का वायु चलता हो तो प्रस्थान करने वाले राजा को लौटना पड़ता है तथा परस्पर विजय लाभ होता है—दोनों को—पथ-विधियों की जयलाभ होता है ॥72॥

मारुतो दक्षिणो वापि यदा हन्ति परां चमूम् ।
प्रस्थितानां प्रमुखतः विन्द्यात् तत्र पराजयम् ॥73॥

यदि भेना के प्रयाण के समय दक्षिणी वायु अब रहा हो और यह सेना का धात कर रहा हो तो प्रस्थान करने वाले राजा नी पराजय होती है ॥73॥

^२यदा तु तत्परां सेनां समागम्य महाघनाः ।
तस्य विजयमाल्याति भद्रबाहुबचो यथा ॥74॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के चारों ओर वादव एवं च हो जायें तो भद्रबाहु स्वामी के वचनानुसार उस सेना की विजय होती है ॥74॥

हीनांगा जटिला बद्धा व्याधिताः । पापचेतसः ।
षण्डाः पापस्वरा ये च प्रयाणं ते तु तिन्दिताः ॥75॥

प्रस्थान काल में ही हीनांग व्यक्ति, बैड़ी आदि में बद्र व्यक्ति, रोगी, पाप दुष्कृति, नपुंसक, पाप स्वर—विकृत स्वर—तोतकी बोलने वाला, हक्कलाने

1. प्रतिलोमो प्रमुख नाम्य मु० । 2. यदा हन्ति परा सेनां समागम्य महाजनः मु० ।

3. महाजनः मु० । 4. पापवांशवः मु० ।

वाला आदि व्यक्ति यदि मिळ जातें तो राजा की विविधता समझना चाहिए ॥75॥

**नगरं प्रवृजितं १दृष्ट्वा मंगलं मंगलाथिनः ।
कुर्यादिमंगलं यस्तु तस्य सोऽपि न मंगलम् ॥76॥**

नगर, दीक्षित मुनि आदि साधुओं का दर्शन मंगलार्थी के लिए मंगलमय होता है। जिसको साधु-मुनि का दर्शन अमंगल रूप होता है, उसके लिए वह भी मंगल रूप नहीं है ॥76॥

**पीडितोऽपचयं कुर्यादिकुष्टो वधवन्धनम् ।
ताडितो मरणं दद्याद् त्रासितो रुदितं तथा ॥77॥**

यदि प्रयाण काल में पीडित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो हानि, चीखता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-वन्धन, ताडित दिखलाई पड़े तो मरण और रुदित दिखलाई पड़े तो त्रासित होना पड़ता है ॥77॥

**पूजितः असानुरागेण लाभं राज्ञः समादिशेत् ।
तस्मात् मंगलं कुर्यात् प्रशस्तं साधुदर्शनम् ॥78॥**

अनुराग पूर्वक पूजित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो राजा को लाभ होता है, अतएव आनन्द मंगल करना चाहिए। यात्रा काल में साधु वा दर्शन शुभ होता है ॥78॥

**दैवतं तु यदा बाह्यं राजा सत्कृत्य स्वं पुरम् ।
प्रवेशयति तद्वाजा बाह्यस्तु लभते पुरम् ॥79॥**

जब राजा बाह्य देवता के मन्दिर की अचंका कर अपने नगर में प्रवेश करता है तो बाह्य से ही नगर को प्राप्त कर लेता है ॥79॥

**वैजयन्त्यो विवणस्तु ३ 'बाह्य' राजो यदाग्रतः ।
पराजयं समाख्याति तस्मात् तां परिवर्जयेत् ॥80॥**

यदि राजा के आगे बहिर्भाग की पताका विशुद्ध रंग बदरंगी दिखलाई पड़े तो राजा की पराजय होती है, अतः उसका त्याग कर देना चाहिए ॥80॥

**सर्वर्थेषु प्रभृतश्च यो भवेत् पृथिवीपतिः ।
हितं न शृण्वतश्चापि तस्य विन्द्यात् पराजयम् ॥81॥**

जो राजा समस्त कार्यों में प्रभाव करता है और हितकारी वचनों को नहीं शुनता है, उसकी पराजय होती है ॥81॥

1. इष्टा मु० । 2. सोत्तरांश्च मु० । 3. श्व. मु० । 4. राजो बाह्यो यदा ग्रहः मु० ।

अभिद्रवन्ति यां सेनां विस्वरं मृगपक्षिणः ।
इवमानुषश्रुगाला वा सा सेना बध्यते परैः ॥८२॥

जिस सेना पर विकृत स्वर में आवाज करते हुए पशु-पक्षी आक्रमण करें अथवा कुत्ता, मनुष्य और श्रुगाल सेना का पीछा करें तो यह सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥८२॥

भग्नं दध्नं च शक्टं यस्य राज्ञः प्रयाणिणः ।
देवोपसर्ष्टं जानीयान्न तत्र गमनं शिवम् ॥८३॥

प्रस्थान करने वाले जिस राजा की गाड़ी—रथ, या अन्य वाहन अथवात् भग्न या दध्न हो जाय तो उसे यह देविक उपर्युग समझना चाहिए और उसका गमन करना बल्याणकारी नहीं है ॥८३॥

उल्का वा विद्युतोऽभ्रं वा कनकाः सूर्यरश्मयः ।
स्तनितं यदि वा छिद्रं सा सेना बध्यते परैः ॥८४॥

यदि प्रयाण काल में उल्का, विद्युत्, अभ्र और सूर्य की रवर्ण किरणे स्तनित कड़कती हुई अथवा सछिद्र दिखाई पड़ें तो सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥८४॥

प्रयातायास्तु सेनाया यदि कश्चन्निवर्तते ।
चतुष्पदो द्विपदो वा न सा यात्रा विशिष्यते ॥८५॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना से कोई चतुष्पद—हाथी, घोड़े आदि पशु (या द्विपद—मनुष्य (या पक्षी) लौटने लगें तो उस यात्रा को जिप्ट-शुभकारी नहीं समझना चाहिए ॥८५॥

प्रयातो यदि वा राजा निपतेद् ब्रह्मरात् व्वचित् ।
अन्यो वाऽपि गजाऽश्वो वा साऽपि यात्रा जुगूप्सिता ॥८६॥

यदि प्रयाण करता हुआ राजा यक्षायक सवारी न गिर जाये अथवा अन्य हाथी, घोड़े गिर जायें तो यात्रा को निन्दित समझना चाहिए ॥८६॥

ऋब्यादाः पक्षिणो यद्व निलीयन्ते ध्वजादिषु ।
निवेदयन्ति ते राजस्तस्य घोरं चमूवधम् ॥८७॥

जिस राजा की सेना की ध्वजा पर मांसभक्षी पक्षी बैठ जायें तो उस राजा की सेना का भयंकर वध होता है ॥८७॥

मुहुर्मुहुर्यदा राजा निवर्तन्तो निभित्ततः ।
प्रयातः परचक्रेण सोऽपि वध्येत् संयुगे ॥८८॥

वर्षा, आर्थिक कष्ट, आवास की समस्या और अन्न कष्ट, एवं शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजा और प्रजा दोनों को अपार कष्ट होता है।

माघ मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चंती फसल बहुत उत्तम, लोहा के व्यापार में पूर्ण लाभ, रबर या गोद के व्यापार में हानि, राजनीतिक उपद्रव और अशान्ति; बुधवार को दिखलाई पड़े तो उत्तम वर्षा; सुभिक्ष, आर्थिक विकास और शान्ति; गुरुवार को दिखलाई पड़े तो सुख, सुभिक्ष और प्रसन्नता; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो शान्ति, लाभ और आजन्द एवं शनिवार को दिखलाई पड़े तो अपार कष्ट होता है। प्रातःकाल शनिवार को इस महीने में गन्धर्वनगर का देखना शुभ होता है। उस प्रदेश में सुभिक्ष, सुख और शान्ति रहती है।

फाल्गुन मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आपाह से आप्तिवन तक अच्छी वर्षा होती है, गहन, धान, ज्वार, जौ, गन्ना के भाव में पहुँची रहती है। यद्यपि कार्तिक के पश्चात् ये पदार्थ भी सस्ते हो जाते हैं। व्यापारियों, कलावारों और राजनीतिज्ञों के लिए वर्ष उत्तम रहता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई देने में फसल में कमी, राजा या अधिकारी भावक का विकाश, पंचायत में मतभेद एवं सोना-चांदी के बापाह से लाभ; गुरुवार को दिखलाई दे तो पीले रंग की वस्तुओं का भाव सस्ता, भाल रंग की वस्तुओं का भाव महंगा और तिल, तिलहन आदि का भाव समर्थ, शुक्र को दिखलाई पड़े तो पत्थर, चूने के व्यापार में विशेष लाभ, जूट में बाटा और वर्षा समयानुसार; एवं शनिवार को दिखलाई पड़े तो वर्षा अच्छी और फसल सामान्यतया अच्छी ही होती है।

चैत्र मास में मंगलवार को सन्ध्या समय गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर में अभिन का प्रकोप, पञ्जुओं में रोग, नागरिकों में कलह और अर्थहानि; बुधवार को मध्याह्न में दिखलाई पड़े तो अर्थविनाश, नागरिकों में असन्तोष, रसादि पदार्थों का अभाव और पशुओं के लिए चारे की कमी; गुरुवार को रात्रि में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को अत्यन्त कष्ट, व्यसनों का प्रचार, अधार्मिक जीवन एवं अर्थक्षति, शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो चातुर्मसि में अच्छी वर्षा, उत्तर फसल, अनाज का भाव सस्ता, घी, दूध की अधिक उत्पत्ति, व्यापारियों को लान चुन शनिवार की भूष्यरात्रि या मध्य दिन में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता में थोर संवर्ध, मारकाट एवं अशान्ति होती है। अराजकता सर्वथा फैल जाती है।

बैशाख मास में मंगलवार को प्रातःकाल या अपराह्न कमल में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मसि में अच्छी वर्षा और सुभिक्ष, बुधवार को दिखलाई पड़े सो व्यापारियों में मतभेद, जास भेद अगढ़ा और आर्थिक क्षति; गुरुवार को

जब किसी निमित्त—कार्य के लिए राजा प्रयाण करने वाली सेना से लौट करके जाए तो शत्रु राजा के द्वारा वह गुड़ में मारा जाता है ॥88॥

यदा राजः प्रयातस्य रथश्च पथि भज्यते ।

१भग्नानि चोपकरणानि तस्य राजो वधं दिशेत् ॥89॥

जब यात्रा करने वाले राजा का रथ भार्ग में भग्न हो जाये तथा उस राजा के धन, चमर आदि उपकरण भग्न हो जायें तो उसका वध समझना चाहिए ॥89॥

प्रयाणे पुरुषा वाऽपि यदि नश्यन्ति सर्वशः ।

सेनाया बहुशश्चाऽपि हता दैवेन सर्वशः ॥90॥

यदि प्रस्थान में - यात्रा में अनेक व्यक्तियों नीं मृत्यु हो तो भाष्यवश सेना में भी अनेक प्रकार की हानि होती है ॥90॥

यदा राजः प्रयातस्य दानं न कुरुते जनः ।

हिरण्यव्यवहारेषु साऽपि यात्रा न सिद्ध्यति ॥91॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा का व्यक्ति प्रयाण काल में श्वर्णादिक दान न करें तो यात्रा गफल नहीं होती है ॥91॥

प्रवरं धातयेत् भृत्यं प्रयाणे यस्य³ पार्थिवः ।

अभिषिञ्चेत् सुतं चापि चमूरुतस्यापि वध्यते ॥92॥

प्रयाणकाल में जिस राजा के प्रधान भृत्य का घात हो और नृप उसके पुत्र को अभिषिक्त करे तो उसकी सेना का वध होता है ॥92॥

विपरीतं यदा कुर्यात् सर्वकार्यं महर्मुहुः ।

तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥93॥

यदि प्रयाण वाल में नृप वार-वार विपरीत कार्य करे तो सेना उससे परित्रस्त होकर लौट आती है ॥93॥

परिवर्तेद् यदा वातः सेनाभद्ये वदा-यदा ।

तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥94॥

सेना में जब वायु वार-वार सेना को अभिषातित और परिवर्तित करे तो सेना उसके द्वारा बरत होकर लौट आती है ॥94॥

1. युक्ति चोपकरण मृ० । 2. शिद्धम् मृ० । 3. यदि मृ० ।

**विशाखारोहिणीभानु^१ नक्षत्रैरुत्तरैश्च या ।
पूर्वाह्ने च प्रयाता वा सा सेना परिवतंते ॥१५॥**

विशाखा और रोहिणी सूर्य के नक्षत्र तथा उत्तराश्रय सूर्य नक्षत्रों के पूर्वाह्न में प्रयाण करने पर गेना लौट आती है ॥१५॥

**पुष्ट्येण मैत्रयोगेन योऽशिवन्यां च नराधिपः ।
पूर्वाह्ने विनयर्ति वाञ्छितं स समाप्नुयात् ॥१६॥**

पुष्ट्य, अनुराधा और अश्विनी नक्षत्र में अपराह्नकाल में जो राजा प्रयाण करता है, वह इच्छित कार्य को पूरा कर लेता है अर्थात् उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है ॥१६॥

**दिवा हस्ते तु रेवत्यां वैष्णवे च न शोभनम् ।
प्रयाणं सर्वभूतानां विशेषेण महोपते: ॥१७॥**

हस्त नक्षत्र में दिन में तथा रेवती और श्रवण नक्षत्र में प्रयाण करना गभी को अच्छा होता है, किन्तु, राजाओं का प्रयाण विशेष रूप में अच्छा होता है ॥१७॥

**हीने मुहूर्ते नक्षत्रे तिथौ च करणे तथा ।
पाथिवो योऽभिनियर्ति अच्चिरात् सोऽपि वध्यते ॥१८॥**

हीन मुहूर्त, नक्षत्र, तिथि और करण में जो राजा अभिनियकमण करता है, वह शीघ्र ही वध को प्राप्त होता है ॥१८॥

**यदाध्ययुक्ते मात्रात्यधिको मास्तस्तदा ।
परस्तद्वध्यते संन्यं यदि वा न निवर्तते ॥१९॥**

यदि यात्राकाल में वायु परिमाण गे अधिक चम्पे तो गेना की नीट आना चाहिए । यदि ऐसी स्थिति में गेना नहीं चम्पी हो तो गेना अनुभाव के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥१९॥

विहारानुत्सवांश्चापि कारयेत् पथि पाथिवः ।

स सिद्धार्थो निवर्तेत भद्रबाहुवचो यथा ॥२०॥

यदि राजा मार्ग में विहार और उत्सव करे तो गफल मनोरथ होकर नीटता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का बचन है ॥२०॥

— १. यां तु नश्वरैरुत्तरैश्च एत् गु० । २. प्रजातम्या हृषीक्षो निवर्तते मु० । ३. यथा-
मधुविन वा राजा गात्रामधिःसूप्ते गु० । तथा गर्वन्यो यदेव यदि नैव निवर्तते मु० ।

वसुधा वारि वा यस्य यानेषु प्रतिहीयते ।

वज्रादयो निष्पतन्ते ससंन्यो वध्यते नृपः ॥101॥

यदि प्रयाण काल में गृथ्वी जल से युक्त हो अथवा यान —रथ, घोड़ा, हाथी आदि की सवारी में हीनता हो— सवारियों के चलने में किसी तरह की कठिनाई आ रही हो अथवा बिजली आदि गिरे तो राजा का सेना सहित विनाश होता है ॥101॥

सर्वेषां शकुनस्तां च प्रशस्तानां स्वरः शुभः ।

^१पूर्ण विजयामाल्याति प्रशस्तानां च दर्शनम् ॥102॥

गर्भी शुभ शकुनों में स्वर शुभ शकुन होता है। श्रेष्ठ शुभ वस्तुओं का दर्शन पूर्ण विजय देता है ॥102॥

फलं वा यदि वा पुष्पं ददते यस्य पादपः ।

अकालजं प्रयातस्य न ला यात्रा विधीयते ॥103॥

प्रयाण काल में जिग नृप को असमय में ही वृक्ष फल या पुष्प दे, तो उस समय यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥103॥

येषां ^२निदर्शने किञ्चित् विपरीतं मुहुर्मुहुः ।

स्थालिका पिठरो चाऽपि तस्य तद्वधमीहते ॥104॥

प्रयाण काल में जिन वस्तुओं के दर्शन में कुछ विपरीतता दिखलाई पड़े अथवा बटलोई, मथानी आदि वस्तुओं के दर्शन हों तो उस राजा की सेना का वध होता है ॥104॥

^३अचिरेण्यवाकालेन तद् विनाशाय कल्पते ।

निवर्त्यन्ति ये केञ्चित् प्रयाता बहुशो नराः ॥105॥

यदि गमन करने वाले अधिक व्यवित औट कर बापस जाने लगें तो शीघ्र ही असमय में सेना या विद्वंस होता है ॥105॥

यात्रामुपस्थितेष्करणं तेषां च स्याद् ध्रुवं वधः ।

पववानां विरसं दग्धं ^४सपिभाष्टो विभिद्यते ॥106॥

तस्य व्याधिभयं चाऽपि मरणं वा पराजयम् ।

^५रथानां प्रहरणानां च ध्वजानामय यो नृपः ॥107॥

1. पुर्ण मू० । 2. निर्दर्शन मू० । 3. अःतामय नवेन्द्रियो मू० । 4. दग्धमपिषु मीहते मू० । 5. रथप्रहरणं चेत् ध्वजाध्वानं वो नृपः मू० ।

'चिह्नं कुरुते वै चिन्तनीलं अन्तिरणा सह बध्यते ।
म्रियते पुरोहितो वाऽस्थ छत्रं वा पथि भज्यते ॥108॥

जिनको यात्राकाल में उपकरण -अस्त्र-शस्त्रों का दर्शन हो, उनका बध होता है। पक्षवान् नीरस और जला हुआ तथा धृत का बर्तन फूटा हुआ दिखलाई फै तो व्याधि, भय, मरण और पराजय होता है। रथ, अस्व-शस्त्र और ध्वजा में जो राजा नील चिह्नं अंकित करता है, वह मन्त्री सहित वध को प्राप्त होता है। यदि सार्गं में राजा का छत्र भंग हो तो पुरोहित का मरण होता है ॥106-108॥

जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिनाम् ।
अनग्निज्वलनं वा स्थात् सोऽपि राजा विनश्यति ॥109॥

प्रयाण करने वालों के सैन्य-शिविर में यदि नेत्र रोग उत्पन्न हो अथवा विना अग्नि जनाये ही आय जल जाये तो प्रयाण करने वाले राजा का विनाश होता है ॥109॥

द्विपदश्चतुःपदो वाऽपि सकृम्भुञ्चति विस्वरः ।
बहुशो व्याधितार्ता वा सा सेना विद्ववं वजेत् ॥110॥

यदि द्विपद—मनुष्यादि, चतुःपद—चौपाये आदि एक साथ विकृत शब्द करें तो अधिक व्याधि से पीड़ित होकर सेना उपद्रव को प्राप्त होती है ॥110॥

सेनायास्तु प्रयाताया कलहो यदि जायते ।
द्विधा त्रिधा वा सा सेना विनश्यति न संशयः ॥111॥

यदि सेना के प्रयाण के समय कलह हो और सेना दो या तीन भागों में बैट जाये तो निस्सन्देह उसका विनाश होता है ॥111॥

जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिणाम् ।
अचिरेणैव कालैन साऽग्निना दह्यते चमूः ॥112॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना की ओर भी में शिविर में ही पीड़ा उत्पन्न हो तो शीघ्र ही अग्नि के द्वारा वह सेना विनाश को प्राप्त होती है ॥112॥

व्याधयश्च प्रयातानामतिशोतं सिष्यर्ययेत् ।
अत्युष्णं चातिरुक्षं च राज्ञे यात्रा न सिद्ध्यति ॥113॥

1. चिह्नं मृ० । 2. स च मध्यी म० । 3. अयते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिणां, यह पर्वत मुद्रा। प्रति में नहीं है ।

यदि प्रयाण करने वालों के लिए यथाधियाँ उत्पन्न हो जायें तथा अति शीत विषरीत—अति उष्ण या अति रुक्ष में परिणत हो जाये तो राजा की यत्रा सफल नहीं होती है ॥ 13 ॥

निविष्टो यदि सेनाग्निः क्षिप्रमेव प्रशाम्यति ।

उपवहृ १ नदन्तश्च भज्यते सोऽपि बध्यते ॥ 14 ॥

यदि सेना की प्रज्वलित अग्नि शीत्र ही शान्त हो जाये—दुःख जाये तो बाहर में स्थित आमन्दित भागने वाले व्यक्ति भी बध को प्राप्त होते हैं ॥ 14 ॥

२ देवो वा यत्र नो वर्षेत् क्षीराणां ३ कल्पना तथा ।

विद्यान्महद्भयं घोरं शान्तिं तत्र तु कारयेत् ॥ 15 ॥

जहाँ वर्षा न हो और जल जहाँ केवल कल्पना की कस्तु ही रहे, वहाँ अत्यन्त घोर भय होता है, अतः शान्ति का उपाय करना चाहिए ॥ 15 ॥

दैवतं दीक्षितान् वृद्धान् पूजयेत् ब्रह्मचारिणः ।

ततस्तेषां तपोभिश्च पापं राजां प्रशाम्यति ॥ 16 ॥

राजा को देवताओं, यतियों, वृद्धों और ब्रह्मचारियों की पूजा करनी चाहिए; क्योंकि इनके तप के द्वारा ही राजा का पाप शान्त होता है ॥ 16 ॥

४ उत्पाताश्चापि जायन्ते हस्त्यश्वरथपत्तिषु ।

भोजनेष्वप्नीकेषु राजबन्धश्चमूवधः ॥ 17 ॥

यदि हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेना में उत्पात हो तथा सेना के भोजन में भी उत्पात—कोई अद्भुत बात दिखलाई पड़े तो राजा को कैद और सेना का बध होता है ॥ 17 ॥

उत्पाता विकृताश्चापि दृश्यन्ते ये प्रयायिणाम् ।

सेनायां चतुरज्ञायां तेषामौत्पातिकं फलम् ॥ 18 ॥

प्रयाण करने वालों को जो उत्पात और विकार दिखलाई पड़ते हैं, चतुर्ज्ञ सेना में उनका औत्पातिक फल अवगत करना चाहिए ॥ 18 ॥

भेरीशंखमृदंगाश्च प्रयाणे ये यथोचिताः ।

निबध्यन्ते प्रयातानां विस्वरा वाहनाश्च ये ॥ 19 ॥

भेरी, शंख, मृदंग का अव्युप्रयाण-वाल में यथोचित हो—न अधिक और न

1. सर्वान् गु ॥ 2. देवताश्वरथपत्तिः यामि मृ ॥ 3. कल्पना गु ॥ 4. उत्पाताश्वरथपत्तिः मृ ॥

5. यथोचित जनने का मृ ॥

कम तथा सैनिकों के बाहर भी विकृत शब्द न करें तो शुभ फल होता है ॥ 19॥

पद्मग्रतस्तु प्रयायेत् काकसैन्यं प्रयायिणाम् ।

विस्वरं निभूतं वाऽपि येषां विद्यांच्चमूवधम् ॥ 20॥

यदि प्रयाण करने वालों के आगे काकगेना—कौआं की पंक्ति गमन करे अथवा विकृत स्वर करती हुई काकपंक्ति लौटे तो सेना का वध होता है ॥ 20॥

राजो यदि प्रयातस्य गायत्ते ग्रामिकाः पुरे ।

चण्डानिलो नदीं शुष्येत् सोऽपि बध्येत् पाथिवः ॥ 21॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा के आगे ग्रामदासी नारियों गाना (रदन करती) गाती हों और प्रचण्ड वायु नदी को सुखा दे तो राजा का वध नी गूजना समझनी चाहिए ॥ 21॥

देवताऽतिथिभूत्येभ्योऽदत्वा तु भूजते यदा ।

यदा भक्ष्याणि भोज्यानि तदा राजा विनश्यति ॥ 22॥

देवता की पूजा, अतिथि का सत्तार और भूत्यों को विता दिये जो भोजन करता है, वह राजा विनाश को प्राप्त होता है ॥ 22॥

द्विपदाश्चतुःपदा वाऽपि यदाऽभीक्ष्णं ऽर्दन्ति वै ।

परस्परं सुसम्बद्धा सा सेना बध्यते परः ॥ 23॥

द्विपद—मनुष्यादि अथवा चतुष्पद—यजु आदि धीपाये परस्पर में सुपर्गठित होकर आवाज करते हैं। गर्जना करते हैं, तो सेना अवृआं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥ 23॥

ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि नभन्ते निष्क्रमन्ति वा ।

सेनायाः शस्त्रकोशेभ्यः साऽपि सेना विनश्यति ॥ 24॥

यदि प्रयाण के समय सेना के अस्त्र-शस्त्र ज्वलन्त होने लम्हे अपने आप छुकने लम्हे अथवा शस्त्रकोश से बाहर निकलने लम्हे तो भी सेना का विनाश होता है ॥ 24॥

नर्दन्ति द्विपदा यद्र पक्षिणो वा चतुष्पदाः ।

ऋब्यादास्तु दिशेषेण तत्र संग्रामसादिशेत् ॥ 25॥

द्विपद पक्षी अथवा चतुष्पद चीपाये गर्जना करते हों अथवा विशेष रूप से मांसभक्षी पशु-पक्षी गर्जना करते हों तो संग्राम की सूचना समझनी

चाहिए ॥ 125 ॥

विलोमषु च वातेषु १प्रतीष्टे वाहनेऽपि च ।

शकुनेषु च दीप्तेषु युध्यतां तु पराजयः ॥ 126 ॥

उलटी हवा चलती हो, वाहन - सवारियाँ प्रदीप्त मालूम पड़े और शकुन भी दीप्त हों तो युद्ध करने वाले की पराजय होती है ॥ 126 ॥

युद्धप्रियेषु हृष्टेषु नर्वत्सु वृषभेषु च ।

रवतेषु चाम्रजालेषु सन्ध्यायां युद्धमादिशेत् । 127 ॥

प्रयाण-काल में तगड़े, हट्टे-कट्टे एवं युद्धप्रिय (लड़ाकू) साँड़ों, बैलों आदि के गज़ना करने पर और सन्ध्याकाल में बादलों के लाल होने पर युद्ध की सूचना सागड़नी चाहिए ॥ 127 ॥

अभ्रेषु च विवर्णेषु युद्धोपकरणेषु च ।

दृश्यमानेषु सन्ध्यायां सद्यः संग्राममादिशेत् ॥ 128 ॥

युद्ध की उपाधि - अभ्र-शम्भादि एवं भृत्यालाल में बादलों के विवर्ण दिखलाई देने पर शीघ्र ही युद्ध का निर्देश समझना चाहिए ॥ 128 ॥

कपिले रक्तपीते वा हरिते च तले चमूः ।

स सद्यः परसैन्येन द्वध्यते नाइत्र संशयः ॥ 129 ॥

यदि प्रयाण-काल में सेना कपिल वर्ण, हरित, रक्त और पीत वर्ण के बादलों के नीचे गमन करे तो सेना निरुपन्देह शीघ्र ही शवुगेना के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥ 129 ॥

काका गृध्राः शृगालाश्च कंका ये चामिषप्रियाः ।

एश्यन्ति यदि सेनायां प्रयातायां भयं भवेत् ॥ 130 ॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के समक्ष काक, गृद्ध, शृगाल और भासप्रिय अन्य चिह्नियाँ दिखलाई पड़े तो सेना को भय होता है ॥ 130 ॥

उलूका वा विडाला वा मूषका वा यदा भृशम् ।

वासन्ते यदि सेनायां २निश्चितः स्वामिनो वधः ॥ 131 ॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में उलू, विडाल या मूषक अधिक संख्या में निवास करें तो निश्चित रूप से स्वामी का वध होता है ॥ 131 ॥

1. दिनेषु चाहिनेपु मु० । 2. नियतं सोऽस्मि का वधः मु० ।

ग्राम्यर वा यदि बात्रम्या विवा वसन्ति निर्भपम् ।
सेनायां संप्रथातायां १स्वामिनोऽत्र भयं भवेत् ॥132॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में शहरी या ग्रामीण कोए निर्भय होकर निवास करें तो स्वामी को भय होता है ॥132॥

मैथुनेन विष्यसि यदा कुमुर्विजातयः ।
रात्रौ दिवा च सेनायां २स्वामिनो वधमादिशेत् ॥133॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में रात्रि या दिन में विजाति के प्राणी—गाय के साथ घोड़ा या गधा मैथुन में विष्यसि— उल्टी क्रिया करें, पुरुष का कार्य स्त्री और स्त्री का कार्य पुरुष करें तो स्वामी का वध होता है ॥133॥

चतुःपदानां मनुजा यदा कुर्वन्ति ३वाशितम् ।
मृगा वा पुरुषाणां तु तत्रापि ४स्वामिनो वधः ॥134॥

यदि चतुष्पद की आवाज मनुष्य करें अथवा पुरुषों की आवाज मृग... पशु करें तो स्वामी का वध होता है ॥134॥

एकपादस्त्रिपादो वा विश्वृंगो यदि वाऽधिकः ।
प्रसूयते पशुर्यक्षं यत्रापि सीपितको वधः ॥135॥

जहाँ एक पैर या तीन पैर वाला अथवा तीन सींग या ३सो अधिक वाला पशु उत्पन्न हो तो स्वामी का वध होता है ॥135॥

अशुपूर्णमुखादीनां शेरते च यदा भूशम् ।
पदान्विलिखमानास्तु हया यत्थ स वध्यते ॥136॥

जिस गेना के घोड़े अत्यन्त अंगुष्ठी में गुब्ब भरे होकर जयन करें अथवा अपनी ढाप रो जमीन को खोदें तो उनके राजा का वध होता है ॥136॥

निष्कुट्यन्ति पदेवा भूमौ बालान् किरन्ति च ।
प्रहृष्टाश्च प्रपश्यन्ति तत्र संप्राममादिशेत् ॥137॥

जब घोड़े पैरों से धरती को कूटते हों अथवा भूमि में बनी वालों की गिरते हों और प्रसन्नन्मे दिखलाई पड़ते हों तो संग्राम की शूचना समझनी चाहिए ॥137॥

न चरन्ति यदा यसं न च पात्रं पिबन्ति वै ।
इवसन्ति वाऽपि धावन्ति विन्द्यादम्लभवं तदा ॥138॥

1. सोऽस्त्रिका । मू० । 2. सीपितका मू० । 3. वामिन् ग् मू० । 4. गोऽस्त्रिका मू० ।

जब थोड़े धास न खायें, जल न पीयें, हाँफते हों या दौड़ते हों तो गमिभय समझना चाहिए ॥ 38॥

क्षीरशस्त्ररेण लिङ्गदेव मधुरेण पुनः पुनः ।
हेषन्ते गवितास्तुष्टास्तदा राजो जयावहाः ॥ 139॥

जब कौच पक्षी स्तिरध और मधुर स्वर से बार-बार प्रसन्न और गवित होता हुआ शब्द करे तो राजा के लिए जय देने वाला समझना चाहिए ॥ 39॥

प्रहेषन्ते प्रथातेषु यदा वादितनिःस्वनैः ।
लक्ष्यन्ते बहवो हृष्टास्तस्य राजो ध्रुवं जयः ॥ 140॥

जिस राजा के प्रयाण करने पर बाजे शब्द करते हुए दिखलाई पड़े तथा अधिकांश व्यक्ति प्रसन्न दिखलाई पड़े, उस राजा की निश्चयतः जय होती है ॥ 140॥

यदा मधुरशब्देन हेषन्ति खलु वाजिनः ।
कुर्यादिभ्युत्थितं संयं तदा तस्य पराज्यम् ॥ 141॥

जब मधुर शब्द करते हुए थोड़े ही सने वी आवाज करे तो प्रयाण करने वाली रेना की पराजय होती है ॥ 141॥

अभ्युत्थितायां सेनायां लक्ष्यते यच्छुभाऽशुभम् ।
वाहने प्रहरणे वा तत् तत् फलं समीहते ॥ 142॥

प्रयाण करने वाली भेना के वाहन— सवारी और प्रहरण—अस्त्र-शस्त्र सेना में जितने शुभाशुभ शुभ दिखलाई पड़े उन्हीं के अनुसार फल प्राप्त होता है ॥ 142॥

सन्नाहिको यदा युक्तो नष्टसैन्यो बहिर्वजेत् ।
तदा राज्यप्रणाशस्तु अचिरेण भविष्यति ॥ 143॥

जब वक्तव्य से युक्त भेना के नष्ट होने पर बाहर चला जाता है तो शीघ्र ही राज्य का विनाश हो जाता है ॥ 143॥

‘सोम्य बाह्यं नरेन्द्रस्य हयमारुहते हयः ।
सेनायामन्यराजानां तदा मार्गन्ति नाशराः ॥ 144॥

यदि राजा के उत्तर में घोड़ा घोड़े पर चढ़े तो उस समय नागरिक अन्य राजा की सेना में प्रवेश करते हैं—शरण ग्रहण करते हैं ॥144॥

अद्वृत्ताः¹ प्रधावन्ति वाजिनस्तु युयुत्सवः ।

हेषमानाः प्रमुदितास्तदा ज्ञेयो जयो ध्रुवम् ॥145॥

प्रसन्न हींसते हुए युद्धोन्मुख घोड़े अद्वृत्ताकार में जब दीड़ते हुए दिखलाई पड़े तो निश्चय से जय समझना चाहिए ॥145॥

पादं पादेन मुक्तानि निःक्रमन्ति यदा हयाः ।

पृथग् पृथग् संस्पृश्यन्ते तदा विद्यादभयावहम् ॥146॥

जब घोड़े पैर को पैर से मुक्त करके चलें और पैरों का पृथक्-पृथक् स्पर्श हो तो उस समय भय समझना चाहिए ॥146॥

यदा राजः प्रयत्नस्य लक्षितं रात्रेभरुम् ।

पथि च म्रियते यस्मिन्नचिरात्मा नो भविष्यति ॥147॥

जब प्रयाण करने वाले राजा के घोड़ों को सन्नद्ध करने वाला सर्दियां गांग में मृत्यु को प्राप्त हो जाये तो राजा वी शीत्र ही मृत्यु होती है ॥147॥

शिरस्यास्ये च दृश्यन्ते यदा हृष्टास्तु वाजिनः ।

तदा राजो ज्यं विद्यान्नचिरात् समुपस्थितम् ॥148॥

जब घोड़ों के सिर और मुख प्रसन्न दिखलाई पड़े तो शीत्र ही राजा की विजय समझनी चाहिए ॥148॥

“हयानां ज्वलिते चामिः पुच्छे पाणी पदेषु वा ।

जघने च नितम्बे च तदा विद्यान्महदभयम् ॥149॥

यदि प्रयाण काल में घोड़ों वी पूँछ, पाँव, गिछले पैर, जघन और नितम्ब—चूतड़ों में अग्नि प्रज्वलित दिखलाई पड़े तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥149॥

हेषमानस्य दीप्तासु नियतन्त्यर्चिषो मुखात् ।

अश्वस्य विजयं श्रेष्ठमूर्ध्वदृष्टिश्च शंसते ॥150॥

यदि हींसते हुए घोड़े के मुख में प्रदीप्त अग्नि निकलती हुई दिखलाई पड़े तो

1. अप्यूक्तः पृ० 1. 2. हयानां जघने वाणी पूँछे पादेषु वा शीत्र । कुर्णीर्मानःथा घूमाइदात् ॥

दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार के लाभ और मुख, शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो समय पर वर्षा, धान्य की अधिक उत्पत्ति और वस्त्र-व्यापार में लाभ एवं शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्यतया अच्छी फसल होती है।

गन्धर्वनगर सम्बन्धी फलादेश अवगत करते समय उनकी आकृति, रंग और सौभ्यता या कुरुपता का भी छाल करना पड़ेगा। जो गन्धर्वनगर स्वच्छ होगा उसका फल उतना ही अच्छा और पूर्ण तथा कुरुप और अस्पष्ट गन्धर्वनगर का फलादेश अत्यल्प होता है।

तत्काल वर्षा होने के निमित्त—वर्षा अहतु में जिस दिन सूर्य अत्यन्त जोशीला, दुस्सह और घृत के रंग के समान प्रभावशाली हो उस दिन अवश्य वर्षा होती है। वर्षा काल में जिस दिन उदय के समय का सूर्य अत्यन्त प्रकाश के कारण देखा न जाय, पिघले हुए स्वर्ण के समान हो, इन रध वैदूर्य मणि की-सी प्रभावशाली हो और अत्यन्त तीव्र होकर तथा रहा हो अथवा आकाश में बहुत ऊँचा चढ़ गया हो तो उस दिन खूब अच्छी वर्षा होती है। उदय या अस्ति के समय सूर्य अथवा चन्द्रमा फीका होकर शहद के रंग के समान दिखलाई पड़े तथा प्रचण्ड वायु चले तो अतिवृष्टि होती है। सूर्य की अमोघ किरणें सच्चाया के समय निरुली रहें और बादल पृथ्वी पर झूके रहें तो ये महावृष्टि के लक्षण समझने चाहिए। सूर्यपिण्ड से एक प्रकार की जो सीधी रेखा कभी-कभी दिखलाई देती है, वह अमोघ किरण कहलाती है। चन्द्रमा यदि कवृत्तर और तोते की आँखों के सदृश हो अथवा शहद के रंग का हो और आकाश में चन्द्रमा का दूसरा किम्ब दिखलाई देतो शीघ्र ही वर्षा होती है। चन्द्रमा के परिवेश चक्रवाक की आँखों के समान हों तो वे वृष्टि के सूचक होते हैं और यदि आकाश तीतर के पंखों के समान बादलों से आच्छादित हो तो वृष्टि होती है। चन्द्रमा के परिवेश हो, तारागण में तीव्र प्रकाश हो, तो वे वृष्टि के सूचक होते हैं। दिशाएँ निर्मल हों और आकाश काक के अण्डे की कान्तिवाला हो, वायु का गमन रुककर होता हो एवं आकाश गोनेत्र की-सी कान्तिवाला हो तो यह भी वृष्टि के आगमन का लक्षण है। रात में तारे चमकते हों, प्रातःकाल लाल वर्ण का सूर्य उदय हो और विना वर्षा के इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो तत्काल वृष्टि समझनी चाहिए। प्रातःकाल इन्द्रधनुष पश्चिम दिशा में दिखलाई देता हो तो शीत्र वर्षा होती है। नील रंग बाले बादलों में सूर्य के चारों ओर कुण्डलता हो और दिन में ईणान कोण के अन्दर विजली चमकती हो तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण महीने में प्रातःकाल गर्जना हो और जल पर मछली का ऋम हो तो अठारह प्रहर के भीतर पृथ्वी जल से पूरित हो जाती है। श्रावण में एक बार ही दक्षिण की प्रचण्ड हवा चले तो हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वापाङ्गा, थवण, पूर्वाभाद्रपाद, रेवती, भरणी, उत्तरारात्रालगुनी, उत्तरापाङ्गा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रों के आने पर वर्षा होती है। रात में गर्जना

विजय होती है । घोड़े का ऊपर को मुख किये रहना भी अच्छा समझा जाता है ॥150॥

श्वेतस्य कृष्णं दृश्येत् पूर्वकाये तु वज्जिन् ।

हस्यात् तं स्वामिनं क्षिप्रं विपरीते १धनागमम् ॥151॥

यदि घोड़े का पूर्व भाग श्वेत या कृष्ण दिखलाई पड़े तो स्वामी की मृत्यु शीघ्र कराता है । विपरीत परभाग—श्वेत का कृष्ण और कृष्ण का श्वेत दिखलाई पड़े तो स्वामी नो धन की प्राप्ति होती है ॥151॥

२वाहकस्य वधं विन्द्याद् यदा स्कन्धे हयो ज्वलेत् ।

पृष्ठतो ज्वलमाने तु भयं सेनापतेभवेत् ॥152॥

जब घोड़े का स्कन्ध—विन्द्या जलता हुआ दिखलाई पड़े तो सवार का वध और पृष्ठ भाग ज्वलित दिखलाई पड़े तो सेनापति का वध समझा चाहिए ॥152॥

तस्थैव तु यदा धूमो निर्धावति प्रहेषतः ।

पुरस्यापि तदा नाशं निर्दिशेत् प्रत्युषस्थितम् ॥153॥

यदि हीसते हुए घोड़े का धूआँ पीछा करे तो उस नगर का भी नाश उपस्थित हुआ समझना चाहिए ॥153॥

सेनापतिवधं विन्द्याद् वालस्थानं यदा ज्वलेत् ।

त्रीणि वषन्यनावृष्टिस्तदा तद्विषये भवेत् ॥154॥

यदि घोड़े के वालस्थान—कर्लवारस्थान जलने लगे तो सेनापति का वध समझना चाहिए । और उस देश में तीन वर्ष तक अनावृष्टि समझनी चाहिए ॥154॥

अन्तःपुरविनाशाय मेढ़ुं प्रज्वलते यदा ।

उदरं ज्वलमानं च कोशनाशाय वा ज्वलेत् ॥155॥

यदि घोड़े का मेढ़ुं अण्डकोश स्थान जलने लगे तो अन्तःपुर का विनाश और उदर के जलने से कोशनाश होता है ॥155॥

शेरते दक्षिणे पाश्वं हयो जयपुरस्कृतः ।

स्वबन्धशार्यिनश्चाहुर्जयमाश्चर्यसाधकः ॥156॥

हो और दिन में दण्डाकार विजली चमकती हो और प्राचीरे दिशा में शीतल हवा चलती हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। पूर्व दिशा में धूम्रवर्ण बादल यदि सूर्यास्त होने पर काला हो जाय और उत्तर में मेघमाला हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। प्रातःकाल सभी दिशाएँ निर्मल हों और मध्याह्न के समय गर्भी पड़ती हो तो अर्द्धरात्रि के समय प्रजा के सन्तोष के लायक अच्छी वर्षा होती है। अत्यन्त वायु का चलना, सर्वथा वायु का न चलना, अत्यन्त गर्भी पड़ना, अत्यन्त बादलों का होना और सर्वथा ही बादलों का न होना इन प्रकार के मेघ के लक्षण बतलाये गये हैं। वायु का न चलना, बहुत वायु चलना, अत्यन्त गर्भी पड़ना वर्षा होने के लक्षण हैं। वर्षा काल के आरम्भ में दक्षिण दिशा में यदि वायु बहे, बादल या चमकती हुई विजली दिखलाई पड़े तो अवश्य वर्षा होती है। शुक्रवार के निकले हुए बादल यदि जनिवार तक उहरे रहें तो वे बिना वर्षा किए भी नष्ट नहीं होते। उत्तर में बादलों का घटाटोप हो रहा हो और पूर्व से वायु चलता हो तो अवश्य वर्षा होती है। सायंकाल में अनेक तह बाले बादल यदि सोर, धनुष, लाल पुणा और तोते के तुल्य हों अथवा जल-जन्मतु, लहरों एवं पहाड़ों के तुल्य दिखाई दें तो शीघ्र ही वर्षा होती है। तीसरे के पंखों की-सी आभा बाले विचित्र वर्ण के मेव यदि उदय और अस्त के समय अथवा रात-दिन दिखलाई दें तो शीघ्र ही बहुत वर्षा होती है। थोटे सहस्रों बादलों से जब आकाश ढका हुआ हो और हवा चारों ओर से रुकी हुई हो तो शीघ्र ही अधिक वर्षा होती है।

घड़े में रखा हुआ जन गर्म हो जाय, सभी जलाओं का गुम्ब ऊँचा हो जाय, कुमुख का-सा तंज चारों ओर निकलता हो, पक्षी स्नान करते हों, गीदड़ सायंकाल में निल्लिपि हों, सात दिन तक आकाश मेघाच्छन्न रहे, रात्रि में जुगनू जल के स्थान के समीप जाते हों तो तदस्तव वृष्टि होती है। गोबर में कीटों का होना, अत्यन्त कठिन परिसाप जा होना, तक—छाल का खट्टा हो जाना, जल का स्वाद रहित हो जाना, मश्लियों का भूमि भी और कूदना, विल्ली का पृथ्वी की खोदना, लोह की जंग से दुर्गम्भ निकलना, पर्वत का काजल के समान वर्ण का हो जाना, कन्दराओं से भाव का निकलना, गिरगिट, शूक्रमास आदि का वृक्ष भी चोटी पर बढ़कर आकाश को स्थिर होकर देखना, शायों का गूँथ को देखना, पशु-पक्षी और कुत्तों का पंथों और खूरों द्वारा कान का छुजलाना, मवान वीं छत पर स्थित होकर तुते का आकाश को स्थिर होकर देखना, बगुलों का पंख फेलाकर स्थिरता से बैठना, वृक्ष पर चढ़े हुए सर्पों का चीतकार शब्द होना, मेड़कों की जोर की आवाज आना, चिड़ियों का मिट्टी में स्नान करना, टिटिहरी का जल में स्नान करना, जातक का जोर से शब्द करना, छोटे-छोटे सर्पों का वृक्ष पर चढ़ना, बकरी का अधिक समय तक पर्वत वीं गति की ओर मुँह करके खड़ा

रहना, छोटे पेड़ों की कलियों का जल जाना, बड़े पेड़ों में कलियों का निकल जाना, बड़े की शाखाओं में खोखलों का हो जाना, दाढ़ी-मूँछों का चिकना और नरम हो जाना, अत्यधिक गर्भ से प्राणियों का व्याकुल होना, पोर के पंखों में भन-भन शब्द का होना, गिरगिट का लाल आभायुक्त हो जाना, चातक-मोर-सियार आदि का रोना, आषी रात में मुग्हों का रोना, मक्खियों का अधिक घूमना, भ्रमरों का अधिक घूमना और उनका गोबर की गोलियों को ले जाना, कसि के बर्तन में जंग लग जाना, वृक्षतुल्य लता आदि का स्तनध, छिद्र रहित दिखलाई पड़ना, पित्त प्रकृति के व्यवित का गाढ़ निद्रा में शयन करना, कागज पर लिखने से स्याही का न सूखना, एवं बातप्रधान व्यक्ति के सिर का घूमना तत्काल वर्षा का सूचक है।

वर्षा जान के लिए अत्युपथोगी सप्तनाड़ी चक्र—शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा—इनकी क्रम से चण्डा, समीरा, दहना, सौम्या, नीरा, जला और अमृता—ये सात नाड़ियाँ होती हैं।

कृतिका से आरम्भ कर अभिजित् सहित 28 नक्षत्रों को उपयुक्त सात नाड़ियों में चार बार घुमाकर विभक्त कर देना चाहिए। इस चक्र में नक्षत्रों का क्रम इस प्रकार होगा कि कृतिका से अनुराधा तक सरल क्रम से और मधा से धनिष्ठा तक विपरीत क्रम से नक्षत्रों को लिखें। सात नाड़ियों के मध्य में सौम्य नाड़ी रहेगी और इसके आगे-पीछे तीन-तीन नाड़ियाँ। दक्षिण दिशा में गई हुई नाड़ियाँ क्रूर कहलायेंगी और उत्तर दिशा में गई हुई नाड़ियाँ सौम्य कहलायेंगी। मध्य में रहनेवाली नाड़ी मध्यनाड़ी कही जायेगी। ये नाड़ियाँ ग्रहयोग के अनुसार फल देती हैं।

दिशा	दक्षिण में निर्जन नाड़ी				मध्य	उत्तर में संगल नाड़ी		
नाड़ी के नाम	चण्डा	समीरा	दहना	सौम्या	नीरा	जला	अमृता	
स्थानी	शनि	गुरु या सूर्य	मंगल	सूर्य या गुरु	शुक्र	बुध	चन्द्रमा	
नक्षत्र	कृतिका विशाखा अनुराधा भर्गी	धैरिणी स्नानी वैष्णा अधिकनी	भृगुशि चित्रा मूल वैदुरी	आदा कृष्ण पूर्वाश्वा उत्तरभाद्राद	पूर्वसु उत्तराभाल्युनी उत्तराश्वा पूर्वाभाद्रगद	पृथ्वी पूर्वाभाल्युनी अर्भितन शत्रोमणा	अधर्णीप मधा श्वरण पूर्णस्त्रा	

सप्तनाड़ी चक्र द्वारा वर्षाज्ञान करने की विधि—जिस ग्राम में वर्षा का ज्ञान करना हो, उस ग्राम के नामानुसार नक्षत्र का परिज्ञान कर लेना चाहिए। अब

इष्टग्राम के नक्षत्र को उपर्युक्त चक्र में देखना चाहिए कि वह किस नाड़ी का है। यदि ग्राम-नक्षत्र की सौम्या नाड़ी—आद्रा, हस्त, पूर्वपिंडा और पूर्वभाद्रपद हों और उस पर चन्द्रमा शुक्र के साथ हो अथवा ग्राम-नक्षत्र, चन्द्रमा और शुक्र ऐतीनों सौम्या नाड़ी के हों तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि या संयोग नहीं हो तो अच्छी वर्षा होती है। पापयोग दृष्टि वाधक होती है। इस विचार के अनुसार चण्डा, समीरा और दहना नाड़ियाँ अजुब हैं, शेष सौम्या, नीरा, जला और अमृता शुभ हैं।

चक्र का विशेष फल - चण्डा नाड़ी में दो-तीन से अधिक स्थित हुए ग्रह प्रत्येक हवा चलाते हैं। समीरा नाड़ी में स्थित होने पर वायु और दहना नाड़ी पर स्थित होने से ऊँचा पैदा करते हैं। सौम्या नाड़ी में स्थित होने से समता करते हैं। नीरा नाड़ी में स्थित होने पर मेघों का संचय करते हैं, जला नाड़ी में प्रविष्ट होने से वर्षा करते हैं तथा वे ही दो-तीन में अधिक एकत्रित ग्रह अमृता नाड़ी में स्थित होने पर अतिवृष्टि करते हैं। अपनी नाड़ी में स्थित हुआ एक भी ग्रह उस नाड़ी का फल देता है। फिल्तु मंगल सभी नाड़ियों में स्थित नाड़ी के अनुसार ही फल देता है। पूर्णहों गुरु, मंगल और सूर्य के योग से घुआँ, स्त्री—चन्द्रमा और शुक्र और पूर्णहों के योग में वर्षा तथा केवल स्त्री ग्रहों के योग से छाया होती है, जिस नाड़ी में कूर और सौम्यग्रह मिले हुए स्थित हों उसमें जिस दिन चन्द्रमा का गमन हो, उस दिन अच्छी वर्षा होती है। यदि एक नक्षत्र में ग्रहों का योग हो तो उस कान में महावृष्टि होती है। जब चन्द्रमा पापग्रहों से या केवल सौम्यग्रहों से विद्ध हो तब राधारण वर्षा होती है तथा उसका भी राधारण ही होती है।

चन्द्रमा जिस ग्रह की नाड़ी में स्थित हो, उस ग्रह से यदि यह मुक्त हो जाये तथा शीण न दिखलायी देता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। तात्पर्य यह है कि शुक्रवर्षा की पाड़ी से उप्पण पक्ष की तथामी तक का चन्द्रमा जिस नाड़ी में हो और ताड़ी का स्वामी चन्द्रमा के साथ थेड़ा हो या उसे देखता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। चन्द्रमा सौम्य एवं कूर ग्रहों के साथ यदि अमृत नाड़ी में हो तो एक, तीन या सात दिन में दो, पाँच या सात बार वर्षा होती है। इसी प्रकार चन्द्रमा कूर और सौम्य ग्रहों से युक्त हो और जला नाड़ी में स्थित हो तो इस योग से आधा दिन, एक गहर या तीन दिन तक वर्षा होती है। यदि सभी ग्रह अमृत नाड़ी में स्थित हों तो 18 दिन, जला नाड़ी में हों तो 12 दिन और नीरा नाड़ी में हों तो 6 दिन तक वर्षा होती है। मध्य नाड़ी में गये हुए सभी ग्रह तीन दिन तक वर्षा करते हैं। योग नाड़ियों में गग हुए सभी ग्रह महावायु और दुष्ट वृष्टि करते हैं। अधिक शूरग्रहों के भोग से निर्जला नाड़ियाँ भी जलदायिनी तथा कूर ग्रहों के भोग से निर्जल नाड़ियाँ भी निर्जल बन आती हैं। दक्षिण की तीनों नाड़ियों में गये हुए ग्रह अनावृष्टि की शून्यगा देते हैं। और ये ही कूरग्रह शुभ-ग्रहों से युक्त हों और

उत्तर की तीन नाड़ियों में स्थित हों तो कुछ वर्षा कर देते हैं। जलनाड़ी में स्थित चन्द्र और शुक्र यदि क्रूर ग्रहों से युक्त हो जायें तो वे इस क्रूर योग से अल्पवृष्टि करते हैं। जलनाड़ी में स्थित हुए बुध, शुक्र और बृहस्पति ये चन्द्रमा से युक्त होने पर उत्तम वर्षा करते हैं। जलनाड़ी में चन्द्रमा और मंगल आमृष्ट हों तो वे चन्द्रमा से समागम होने पर अच्छी वर्षा करते हैं। जलनाड़ी में चन्द्रमा और मंगल शनि द्वारा दृष्ट हों तो वर्षा की कमी होती है। गमनकाल, संयोगकाल, व्रक्षयति-काल, मार्गयति-काल, अस्त या उदयकाल में इन सभी दण्डाओं में जलनाड़ी में प्राप्त हुए सभी ग्रह महावृष्टि करने वाले होते हैं।

अक्षर श्रमानुसार ग्रामनक्षत्र निकालने का नियम—नू चे चो ला = अधिवनी, ली लू ले लो = भरणी, अ ई उ प = कृतिका, ओ वा वी यू = रोद्धिणी, वे वो का की = मूर्गिण, कू घ ठ छ = आर्द्धा के को हा ही = पुनर्वंश, ह है हो झा = पुत्त्य, ही ढू डे टो = आण्णेषा, मा भी मू मे = मघा, मो टा टी टू = पूर्वफिलग्नुनी, टे टो पा पी = उत्तराराफालग्नुनी, पू प ण ठ = हस्त, पे पो ग री = चिक्रा, रु रे री ता = स्याती, ती तू ते तो = विशाखा, ना नी नू ने = अनुराधा, नो या यी यू = ज्येष्ठा, ये यो भा भी = मूर्ख, भू धा फा ढा = पूर्वापादा, भे भो जा जी = उत्तराराषाढ़ा, खी खू ले खो = धवण, गा गी गू गे = धनिष्ठा, गो सा सी सू = शतभिषा, से सो दा दी = पूर्वभाद्रपद, दू थ झ ब्र = उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची = रेष्टी।

वर्षा के सम्बन्ध में एक आवश्यक बात यह भी जान लेनी चाहिए कि भारत में तीन प्रकार के प्राकृतिक प्रदेश हैं—अनूप, जोगल और मिथ। जिस प्रदेश में अधिक वर्षा होती है, वह अनूप; कम वर्षा वाला जोगल और अल्प जल वाला मिथ कहलाता है। मारवाड़ में मामूली भी अणुभ योग वर्षा को नष्ट कर देता है और अनूप देश में प्रबल अणुभ योग भी अल्प वर्षा कर ही देता है। जिस ग्रह के जो प्रदेश बतलाये गये हैं, वह ग्रह अपने ही प्रदेशों में वर्षा का अधाव या मद्भाव करता है।

ग्रहों के प्रदेश—**सूर्य के प्रदेश**—द्रविड़ देश का पूर्वार्द्ध, नर्मदा और सोन नदी का पूर्वार्द्ध, यमुना के दक्षिण का भाग, इक्षुमती नदी, श्री शैल और चिन्ध्याचल के देश, चम्प, मुण्डू, चेदीदेश, कोशाम्बी, मगध, औण्ड, गुड्यम, वंग, वनिय, प्रागज्योतिष, शवर, किरात, मेकल, चीन, वाल्लीक, यवन, काम्बोज और शक हैं।

चन्द्रमा के प्रदेश—दुर्ग, आर्द्ध, द्वीप, समुद्र, जलाशय, तुपार, शोभ, स्त्रीराज, मरुकच्छ और कोशल हैं।

मंगल के प्रदेश—नासिक, दण्डक, अश्मक, केरल, कुन्तल, कोकण, आन्ध्र, कान्ति, उत्तर पाण्ड्य, द्रविड़, नर्मदा, सोन नदी और भीमरधी का पश्चिम अधं भाग, निविन्ध्या, किप्रा, वेत्रवती, वेणा, गोदावरी, मदाकिनी, तापी, महानदी,

यदि दक्षिण—दाहिनी, पाश्व—ओर से धोड़ा शयन करे तो जय देने वाला और पेट की ओर से शयन करे तो आश्चर्यपूर्वक जय देता है ॥156॥

**वामार्धशायिनश्चैव तुरङ्गा नित्यमेव च ।
राजे यस्य न सन्देहस्तस्य मृत्युं समादिशेत् ॥157॥**

यदि नित्य बायी आधी करवट से धोड़ा शयन करे तो नि-सन्देह उस राजा की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए ॥157॥

**सौसुप्प्यते यदा नागः पश्चिमश्चरणस्तथा ।
सेनापतिवधं बिद्याद् यदाऽन्नं च न भुञ्जते ॥158॥**

यदि हाथी पश्चिम की ओर पैर करके शयन करे तथा कोई अन्न नहीं खाये तो सेनापति का वध समझना चाहिए ॥158॥

**'यदाऽन्नं पादवारीं वा नाभिनन्दन्ति हस्तिनः ।
यस्यां तस्यां तु सेनायामचिराद्वधमादिशेत् ॥159॥**

जिस सेना में हाथी अन्न, जल और तृण नहीं खाते हों—त्याग कर चुके हों, उस सेना में शीघ्र ही वध होता है ॥159॥

**निष्ठतन्यग्रतो यद्वै लस्यन्ति वा रुदन्ति वा ।
निष्पदन्ते समुद्दिनां यस्य तस्य वधं वदेत् ॥160॥**

जिस राजा के प्रशाण काल में उसके आगे आकर दुखी या रुदन करता हुआ व्यक्ति गिरता हो अथवा उद्दिन होकर आता हो तो उस राजा का वध होता है ॥160॥

**कूरं नदन्ति विषमं विस्वरं निशि हस्तिनः ।
दीप्यमानास्तु केचित्तु तदा सेनावधं ध्रुवम् ॥161॥**

यदि रात्रि में हाथी कूर, विषम, घोर और विस्वर विकृत रुद्र वाली आवाज करे अथवा दीप्त—ताप में जनते हुए दिखलाइ पड़े तो सेना का शीघ्र वध होता है ॥161॥

**गो-नागवाजिनां स्त्रोणां मुखाच्छोणितविन्दवः ।
द्रवन्ति बहुशो पत्र तस्य राजः पराजयः ॥162॥**

जिस राजा को प्रशाण-काल में गाय, हाथी, धोड़ा, और स्त्रियों के मुख पर

1. सदलाः पादवारी या नाभिनन्दन्ति हृषि इन ।

खत की बूँदें विश्वलाई पड़े उस राजा की पराजय होती है ॥162॥

नरा यस्य विष्वन्ते प्रयाणे वारणः पथि ।

कपालं गृह्य धावन्ति दीनास्तस्य पराजयः ॥163॥

जिस राजा के प्रयाण-काल में मार्ग में उसके हाथियों के द्वारा मनुष्य पीड़ित हों और वे मनुष्य अपना सिर पकड़कर दीन होकर भागे तो उस राजा की पराजय होती है ॥163॥

यदा धुनन्ति सीदन्ति निपतन्ति किरन्ति च ।

खादमानास्तु खिञ्चन्ते तदाऽस्त्वयाति पराजयम् ॥164॥

जिसके प्रयाण काल में धोड़े पूँछ का संचालन अधिक करते हों, खिन्न होते हों, गिरते हों, दुश्मी होते हों, अधिक लोट करते हों और धास खाते समय खिन्न होते हों तो वे उसकी पराजय की मूलना देते हैं ॥164॥

हेषत्यभोक्षणयश्वास्तु विलिखन्ति खुरेष्वराम् ।

नदन्ति च यदा नागास्तदा विन्द्याद् ध्रुवं जयम् ॥165॥

धोड़े वार-वार हीमते हों, खुरों में जगीन को खोकने हों और हाथी प्रसन्नता की निमधाइ करते हों तो उसकी निहित जय गमननी चाहिए ॥165॥

पुष्टाणि पीतरक्तानि शुक्लानि च यदा गजः ।

अभ्यन्तरग्रदन्तेषु दर्शयन्त यदा जयम् ॥166॥

यदि हाथी पीत, गाह और श्वेत रक्त के पुष्टों वा भीतगी दंतों के अग्रभाग में दिखलाने हुए गालूम हों तो जय गमनना चाहिए ॥166॥

यदा मुचन्ति शुष्टाभितर्गा नादे पुनः पुनः ।

परसैन्योपघाताय तदा विन्द्याद् ध्रुवम् जयम् ॥167॥

जब हाथी गुड़ में वार-वार नाद करते हों तो गर्गेना-गर्गेना के विनाश के लिए प्रयाण करते वारे राजा वही जय होती है ॥167॥

पादैः पादान् विकर्षन्ति तलैर्वा विलिखन्ति च ।

गजास्तु यस्य सेनायाः निरुद्यन्ते ध्रुवं परः ॥168॥

गिर्गेना को हाथी पीतों द्वारा पीतों को खीचें अथवा तल के द्वारा धर्गी को खोदें तो शकुं द्वारा गेना का निरोध होता है ॥168॥

मत्ता यत्र विपद्यन्ते न मात्रन्ते च योजिताः ।

नागास्तत्र बधो राजो महामात्यस्य वा भवेत् ॥ ६९॥

जहाँ मदोन्मत्त हाथी विपत्ति को प्राप्त हों अथवा भत्त हाथियों की योजना करने पर भी वे मद को प्राप्त न हों तो उस समय वहाँ गजा या महामात्य—महामन्त्री का वध होता है ॥ ६९॥

यदा राजा निवेशेत भूमौ कण्टकसंकुले ।

विषमे सिकत्ताकीर्णे सेनापतिबधो ध्रुवम् ॥ ७०॥

जब राजा कंटकाकीर्ण, विषम, बालुकायुक्त भूमि में सेना का निवास करावे—सैन्य शिविर स्थापित करे तो सेनापति के वध का निर्देश समझना चाहिए ॥ ७०॥

शमशानाशिशरजःकीर्णे पञ्चप्रख्यवद्दण्डतो ।

शुष्कवृक्षसमाकीर्णे निविष्टो वधमोयते ॥ ७१॥

शमशान भूमि की हृदिङ्गयाँ जहाँ हों, धूलि युक्त, दग्ध बगरपति और शुष्क वृक्ष वाली भूमि में सैन्य शिविर की स्थापना की जाये तो वध होता है ॥ ७१॥

कोविदारसमाकीर्णे इलेष्मान्तकमहाद्रुमे ।

पिलू-कालनिविष्टस्थ प्राप्नुयाच्च चिराद् वधम् ॥ ७२॥

लाल कचनार वृक्ष से युक्त तथा गोद वाले वडे वृक्षों भे युक्त और गीलू के वृक्ष के स्थान में सैन्य शिविर स्थापित किया जाये तो विषम्य से वध होता है ॥ ७२॥

असारवृक्षभूयिष्ठे पाषाणतृणकुत्सिते ।

देवतायतनाक्रान्ते निविष्टो वधमाप्नुयात् ॥ ७३॥

रेढी के अधिक वृक्ष वाले व्यान में अथवा पाषाण-पत्थर और तिमके वाले स्थान में, कुत्सित--ऊँची-नीची खराव भूमि में, अथवा देवमन्दिर की भूमि में यदि सैन्य शिविर हो तो वध प्राप्त होता है ॥ ७३॥

अमनोज्ञैः फलैः पुष्पैः पापपक्षिसमविते ।

अधोमार्यैः निविष्टश्च युद्धमिच्छति पाथिवः ॥ ७४॥

कुरुप फल, पुष्प से युक्त तथा पापी --मासाहारी पक्षियों से युक्त वृक्षों के

नीचे सैन्य पड़ाव करने वाला राजा युद्ध की इच्छा करता है ॥1/4॥

नीचेनिविष्टभूपस्य¹ नीचेभ्यो भयमादिशेत् ।

यथा दृष्टेषु देशेषु तज्जेभ्यः प्राप्नुयाद् वधम् ॥175॥

नीचे स्थानों में स्थित रहने वाले राजा को नीचों से भय होता है । तथा नुसार देखे गये देशों में उनसे वध प्राप्त होता है ॥175॥

यत् किञ्चित् परिहीनं स्यात् तत् पराजयलक्षणम् ।

परिवृद्धं च यद् किञ्चिद् दृश्यते विजयावहम् ॥176॥

जो कुछ भी कमी दिखलाई पड़े वह पराजय की सूचिका है और जो अधिकता दिखलाई पड़े वह विजय की रूचिका होती है ॥176॥

दुर्वर्णश्च दुर्गन्धाश्च कुवेषा व्याधिनस्तथा ।

सेनाया ये नराश्च स्युः शस्त्रवध्या भवन्त्यथ ॥177॥

बुरे रंग वाले, दुर्गन्धित, कुवेषधारी और रोगी सेना के व्यक्ति शस्त्र के द्वारा वध्य होते हैं ॥177॥

यथाज्ञानप्रलेण राजो जयपराजयः ।

विजेयः सम्प्रथातस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥178॥

इस प्रकार मे भद्रबाहु स्वामी के वज्ञनानुसार प्रयाण करने वाले राजा की जगन्पराजय अवगत कर निर्भी चाहिए ॥178॥

परस्य विषयं लब्ध्वा अग्निदग्धा न लोपयेत् ।

परदारां न हिस्पेत् पश्नु वा पक्षिणस्तथा ॥179॥

शत्रु के देश को प्राप्त करके भी उस अग्नि से नहीं जलाना चाहिए और उस देश का नोप ही करना चाहिए । परस्यी, पशु और पक्षियों की भी हिसा नहीं करनी चाहिए ॥179॥

वसीकृतेषु मत्येषु न च शस्त्रं निपातयेत्² ।

निरपराधचित्तानि नाददीत कदाचन ॥180॥

अधीन हुए देशों में शत्रुपात प्रयोग नहीं करना चाहिए । निरपराधी व्यक्तियों को कभी भी कट नहीं देना चाहिए ॥180॥

देवतान् पूजयेत् वृद्धान् १लिगिनो ब्राह्मणान् गुरुन् ।
परिहारेण^२ नृपती राज्यं मोदति सर्वतः ॥181॥

जो राजा देवता, वृद्ध, गुरु, ब्राह्मण, गुरु की पूजा करता है और समस्त उग्रदृशोंको दूर करता है, वह सर्व प्रकार से आनन्दपूर्वक राज्य करता है ॥181॥

राजवंशं न वोचिल्लिद्यात् बालवृद्धांश्च पण्डितान् ।

३न्यायेनार्थान् समाप्ताद्य सार्थो राजा विवर्द्धते ॥182॥

किसी राज्य पर अधिकार करने पर भी उस राजवंश का उच्छ्रेद— बिनाश नहीं करना चाहिए तथा बाल, वृद्ध और पण्डितों का भी बिनाश नहीं करना चाहिए । न्यायपूर्वक जो धनादि को प्राप्त करता है, वही राजा वृद्धिगत होता है ॥182॥

धर्मोत्सवान् विवाहांश्च ४सुतानां कारयेद् बुधः ।

न चिरं धारयेद् कन्यां तथा धर्मेण वर्हते ॥183॥

अधिकार किये गये राज्य में धर्मोत्सव करे, अधिकृत राजा की कन्याओं का विवाह कराये शीर उसकी कन्याओं को अधिक गमय तक न रों, क्योंकि धर्म-पूर्वक ही राज्य की वृद्धि होती है ॥183॥

कार्याणि धर्मतः कुर्यात् पक्षपात विसर्जयेत् ।

व्यसनैविप्रयुक्तश्च ५तस्य राज्यं विवर्द्धते ॥184॥

धर्मपूर्वक ही पक्षपात छोड़कर वार्य करे और सभी प्रकार के व्यसन— जुआ सेलना, मांस खाना, चोरी करना, परस्त्रीसेवन न करना, शिकार सेलना, पेशा गमन करना और भवषान करना। इन व्यसनों से अलग रहे, उसका राज्य बढ़ता है ॥184॥

यथोचितानि सर्वाणि यथा न्यायेन पश्यति ।

राजा कांति समाप्तोति ६परव्रेह च मोदते ॥185॥

यथोचित सभी वो जो न्यायपूर्वक देखता है, वही राजकीति-यश प्राप्त करता है और इह लोक और परलोक में आनन्द को प्राप्त होता है ॥185॥

1. लिप्त्याग् । 2. परिहारं नृपतिर्दद्यद्वामाग्निजनाम् गुरुः । 3. न्यायेनार्थाः सम् व्याप्ति तथा राज्येन वर्धते । 4. सुतानां मु० । 5. वर्तोत्प्रियक-मुखावदः मु० । 6. तदा प्रताय-शेषे मु० ।

इमं यात्राविधि कृत्स्नं योऽभिजानाति तत्त्वतः ।

न्यायतश्च प्रयुज्जीत् प्राण्युयात् स महत् पदम् ॥186॥

जो राजा इस यात्रा विधि को वास्तविक और सम्पूर्ण रूप से जानता है और न्यायपूर्वक व्यवहार करता है, वह गृहान् पद प्राप्त करता है ॥ 86॥

इति सहस्रनीश्वरसकलान्दयहासुनिभद्रबाहुविरचिते
महानिमित्तशास्त्रे राजधात्राध्यायः समाप्तः ।

विवेचन— प्रग्नुत यात्रा प्रकरण में राजा महाराजाओं की यात्रा का विस्तृण आचार्य ने किया है। चूंकि अब गणतन्त्र भारत में राजाओं की परम्परा ही समाप्त हो चुकी है। अतः यहाँ पर सर्वे सामान्य के लिए यात्रा सम्बन्ध की उपयोगी बातों पर प्रकाश डाला जायगा। सर्वप्रथम यात्रा के मुहूर्त के सम्बन्ध में कुछ लिखा जाता है। क्योंकि समय के शुभाशुभत्व का प्रभाव प्रत्येक जड़ या चेतना गदार्थ पर पड़ता है। यात्रा के मुहूर्त के लिए शुभ नक्षत्र, शुभ तिथि, शुभ वार और चन्द्रवास के विचार के अतिरिक्त वारशूल, नक्षत्र शूल, समय शूल, योगिनी और राणि के कथ का विचार भी करना चाहिए।

यात्रा के लिए नक्षत्र-विचार

अधिवनी, पुनर्वसु, अग्नुराधा, मूर्गशिरा, पुष्य, रेवती, इस्त, श्रवण और धनिर्ठा नक्षत्र यात्रा के लिए उनमें गोहिणी, उत्तराफालगुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफालगुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिष्णु ये नक्षत्र मध्यम एवं भरणी, कृत्तिका, आद्री, आश्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति, विशाखा ये नक्षत्र यात्रा के लिए निश्चय हैं।

तिथियों में द्वितीया, पंचमी, शाश्वती, दणमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ बताई यई हैं ।

दिवशूल और नक्षत्रशूल तथा प्रत्येक दिशा के शुभ दिन

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवार को पूर्व में, पूर्वभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण में; गोहिणी नक्षत्र और शुक्रवार को पश्चिम एवं मंगल तथा बुधवार को उत्तराफालगुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा में यात्रा करना वर्जित है। पूर्व दिशा में रविवार, मंगलवार और गुरुवार; पश्चिम में शनिवार, सोमवार, बुधवार और शुक्रवार; उत्तर दिशा में गुरुवार, रविवार, सोमवार और शुक्रवार एवं दक्षिण दिशा में बुधवार, मंगलवार, सोमवार, रविवार और शुक्रवार को गमन करना शुभ होता है। जो नक्षत्र का विचार नहीं कर सकते हैं वे उक्त

शुभवारों में यात्रा कर रहा है। पूर्व दिशा में उपा काल में यात्रा वजित है। पश्चिम दिशा में गोधूलिकी यात्रा वजित है। उत्तर दिशा में अर्द्धरात्रि और दक्षिण दिशा में दोपहर की यात्रा वजित है।

योगनीवास-विचार

नवभूम्यः शिववल्लयोऽक्षविश्वेऽक्षकृताः शक्ररथास्तुरंगा तिथ्यः ।

द्विदशोमा वगश्च पूर्वतः स्युः तिथ्यः गम्युषवामगा च अस्ताः ॥

अर्थ—प्रतिपदा और नवमी को पूर्व दिशा में; एकादशी और तृतीया को अग्निकोण, पंचमी और चतुर्दशी को दक्षिण दिशा में, चतुर्थी और द्वादशी को नैऋत्य कोण में, पाष्ठी और चतुर्दशी को पश्चिम दिशा में, सप्तमी और षुष्मिमा को वायव्यकोण में; द्वितीया और दशमी को उत्तर दिशा में एवं अमावस्या और अष्टमी को ईणान बोण में योगिनी का वास होता है। गम्युष और वायें तरफ अग्रुभ एवं पीछे और दाहिनी ओर योगिनी शूभ होती है।

चन्द्रमा का निवास

चन्द्रश्चरति पूर्वोदौ क्रमान्त्रिदिवचतुष्टये ।

मेषादिष्वेष यात्रायां सम्मुखस्त्वतिशोभनः ॥

अर्थात् मैय, यह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व में; वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में; तुला, मिथुन और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में एवं कर्क, वृश्चिक और भीम राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में वास करता है।

चन्द्रमा का फल

सम्मुखीनोऽर्थलाभाय दक्षिणः सर्वसम्पदे ।

पश्चिमः कुरुते मृत्युं वामश्चन्द्रो धनक्षयम् ॥

अर्थ—सम्मुख चन्द्रमा धन लाभ दरने वाला; दक्षिण चन्द्रमा गुण-सम्पादन देने वाला; पृष्ठ चन्द्रमा शोष-सन्ताप देने वाला और वाम चन्द्रमा धन-हानि दरने वाला होता है।

राहु विचार

अष्टासु प्रथमाद्येषु प्रहरार्धेष्वहनिष्म् ।

पूर्वस्यां वामतो राहुरत्यर्थी तुर्यो व्रजेददिष्म् ॥

अर्थ—राहु प्रथम अर्धमास में पूर्व दिशा में, द्वितीय अर्धमास में वायव्य-Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कोण में, तृतीय अर्धमास में दक्षिण दिशा में, चतुर्थ अर्धमास में ईशानकोण में, पश्चम अर्धमास में पश्चिम दिशा में, एवं अर्द्धमास में आनंदी दिशा में, सद्यम अर्धमास में उत्तर दिशा में और अट्टम अर्धमास में नैऋत्यकोण में राहु का वास रहता है।

यात्रा के लिए राहु आदि का विचार

जयाय दक्षिणो राह योगिनी वासतः स्थिता ।

पृष्ठतो द्रव्यमयेतच्चन्द्रभाः सम्मुखः पृतः ॥

अर्थ—दिग्गजाणून का बायीं और रहना, राहु का दाहिनी ओर या पीछे की ओर रहना, योगिनी का बायीं ओर या पीछे की ओर रहना एवं चन्द्रमा का सम्मुख रहना यात्रा में शुभ होता है। द्वादश महीनों में पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के क्रम से प्रतिपादा ये पूर्णिमा तक क्रम से सौख्य, क्लेश, भीति, अर्थांगम, शून्य, निःस्वत्व, मित्रपाल, द्रव्य-क्लेश, दुःख, इष्टाप्ति, अर्थलाभ, लाभ, सौख्य, मंगल, विजयलाभ, लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सौख्य, भीति, लाभ, मृत्यु, अर्थांगम, लाभ, कष्ट, द्रव्यलाभ, कष्ट, सौख्य, क्लेश, मुख, सौख्य, लाभ, कार्यरिद्धि, कष्ट, क्लेश, वर्ष, धन-लाभ, मृत्यु, लाभ, द्रव्यलाभ, शून्य, शून्य, सौख्य, मृत्यु, अत्यन्त कष्ट फल होता है। 13, 14 और 15 तिथि का फल 3, 4 और 5 तिथि के फल समान जानना चाहिए।

तिथि चक्र प्रकार

पात्रामुहूर्तं चक्र

	अश्विनुः पुनरुः अनुभूः पुरुः रेहूः श्रवणुः धूः ये उत्तम हैं।
नक्षत्र	रोहिणी उफाला उभाला पूफाला पूर्णा वृषभ ये मध्यम हैं।
	भूला कुला आला आश्ले भूला चित्रा स्वाला विद्युला ये किन्त्य हैं।
तिथि	2, 3, 5, 7, 10, 11, 12

चतुर्दशास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृषभ	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समयशूल चक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायंकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अद्युरात्रि

दिवशूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चूर्णशूल	बूर्णशूल	गुरुशूल	मंगलशूल

योगिनी चक्र

पूर्व	आरो	दूरो	नैरो	पूर्वो	वारो	उत्तरो	दूरो	दिवांगी
9, 1	3, 11	13, 5	12, 4	14, 6	15, 7	10, 2	30, 8	तिथि

यात्रा के शुभाशुभत्व का गणित द्वारा ज्ञान

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से लेकर तिथि, बार, नक्षत्र इनके योग को तीन स्थान में स्थापित करें और क्रमशः सात, आठ और तीन का भाग देने से यदि प्रथम स्थान में शून्य शेष रहे तो यात्रा करनेवाला दुःखी होता है। द्वितीय स्थान में शून्य बचने भे धन नाश होता है और तृतीय स्थान में शून्य शेष रहने से मृत्यु होती है। उदाहरण—कृष्णपक्ष की एकादशी रविवार और विशाखा नक्षत्र में भुवनमोहनराय को यात्रा करनी है। अतः शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से कृष्ण पक्ष की द्वादशी तिथि तक गणना की तो 27 संख्या आई; रविवार की संख्या एक ही हुई और अश्वनी से विशाखा तक गणना की तो 16 संख्या हुई। इन तीनों अंक का योग किया तो $27 + 1 + 16 = 44$ हुआ। इसे तीन स्थानों पर रखकर 7, 8 और 3 का भाग दिया। $44 \div 7 = 6$ लब्ध और 2 शेष; $44 \div 8 = 5$ लब्ध और 4 शेष; $44 \div 3 = 14$ लब्ध और 2 शेष। यहाँ एक भी स्थान पर शून्य शेष नहीं आया है। अतः फलादेश उत्तम है, यात्रा करना शुभ है।

घातक चन्द्र विचार

मेषराशि वालों को जन्म का, वृषराशि वालों को पांचवाँ, मिथुन राशि वालों को नीवाँ, कक्ष राशि वालों को दूसरा, सिंह राशि वालों को छठा, कन्या राशि वालों को दशवाँ, तुला राशि वालों को तीसरा, वृश्चिक राशि वालों को सातवाँ, धनराशि वालों को चौथा, मकर राशि वालों को आठवाँ, कुम्भ राशि वालों को ष्यारहवाँ और मीन राशि वालों को बारहवाँ चन्द्र घातक होता है। यात्रा में घातक चन्द्र त्यक्त है।

घातक नक्षत्र

कृतिका, चित्रा, शतभिषा, मधा, घनिष्ठा, आद्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वी-भाद्रपद, यजा, मूल और पूर्वभाद्रपद ये नक्षत्र मेपादि बारह राशिवाले व्यक्तियों के लिए घातक हैं। किसी-किसी आचार्य का मत है कि मेष राशि वालों को कृतिका का प्रथम चरण, वृषराशि वालों को चित्रा का दूसरा चरण, मिथुन राशि वालों को शतभिषा का तीसरा चरण, वृश्चिक राशि वालों को मधा का तीसरा चरण, सिंहराशि वालों को धनिष्ठा का प्रथम चरण, कन्या राशि वालों को आद्रा का तीसरा चरण, तुला राशि वालों को मूल का दूसरा चरण, वृश्चिक राशि वालों को रोहिणी का चौथा चरण, धनराशि वालों को पूर्वभाद्रपद का चौथा चरण, मकर राशि वालों को मधा का चौथा चरण, कुम्भ राशि वालों को मूल का चौथा चरण और मीन राशि वालों को पूर्वभाद्रपद का तीसरा चरण त्याज्य है।

घाततिथि विचार

वृष, कन्या और मीन राशि वालों को पंचमी, दण्डमी और पूर्णिमा घाततिथि हैं। मिथुन और कर्क राशि वाले व्यक्तियों को द्वितीया, द्वादशी और सातमी घाततिथियाँ हैं। वृश्चिक और मेष राशिवालों को प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी घात तिथि हैं। मकर और तुला राशि वालों को चतुर्थी, चतुर्दशी और नवमी घाततिथियाँ एवं धन, कुम्भ और सिंह राशिवाले व्यक्तियों के लिए तृतीया, त्रयोदशी और अष्टमी घात तिथियाँ हैं। इनका यात्रा में त्याग परम आवश्यक है।

घातवार

मकर राशि वाले व्यक्तियों को शनिवार घातक है; वृष, सिंह और कन्या राशि वालों को शनिवार; मिथुन राशि वाले व्यक्ति के लिए सोमवार, मेष राशिवालों को रविवार, कर्क राशिवालों को बुधवार; धनु, मीन और वृश्चिक को शुक्रवार एवं कुम्भ और तुला राशिवालों को गुरुवार घातक है। इन घातक वारों में यात्रा करना वर्जित है।

घातक लग्न

मेष, वृष आदि द्वादश राशिवालों को क्रमशः मेष, वृष, कर्क, तुला, मकर, मीन, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मिथुन और सिंह लग्न घातक हैं। अतः यात्रा में वर्जित हैं।

राशि ज्ञात करने की विधि

चू, चे, चोना, ली, लू, ले लो और आ इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम के आदि का हो तो मेष राशि; ई, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे और वो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो मिथुन राशि; ही, हू, हे, हो, वा, डी, डू, डे और डो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो कर्क राशि; मा, मी, पू, मे, मो, टा, टी, टू और टे इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो सिंह राशि; टो, पा, पी, पू, प, ण, ठ, पे और पो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कन्या राशि; रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू और ते इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो तुला राशि; तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी और यू इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो वृश्चिक राशि; ये, यो, आ, भी, भू, धा, फा, ढा और ये इन अक्षरों में से कोई भी

अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो धनु राशि; भो, जा, जी, खी, खू, ले खो, गा और गी इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो पक्कर राशि; गू, गे, गो, गा, गी, गू, से, सो और दा इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कुम्भ राशि एवं दी, दू, था, झ, अ, दे, दो, चा और ची इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो मीन राशि होती है।

संक्षिप्त विधि

आला = मेष, उबा = वृष्ट, काला = मिथुन, डाहा = वार्ष, माटा = सिंह, गाठा = कर्णा, राता = तुला, नौया वृश्चिक, मूर्धा फा ढ, = मकर, गोसा = कुम्भ, दा चा = मीन।

उपर्युक्त अक्षर विधि पर में अपनी राशि लिकाल एवं शातहित्रि, शातहक्षत्रि, शातवार और शातलम्न का विचार करना चाहिए।

यात्राकालीन शकुन—क्षाम्बण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसों, कमल, वस्त्र, वेण्या, वाजा, गोर, पर्याया, नेवला, बंधा हुआ पशु, रौसि, श्रेष्ठ वात्रा, फूल, ऊस, भरा कलश, छाता, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगड़ी, बिना बंधा सफेद बैल, मदिरा, पुत्रवती स्त्री, जयती हुई अभिन और मछली आदि पदार्थ यात्रा के लिए गमन करते हुए दिव्यलाई पड़ें तो शुभ शकुन समझना चाहिए। सीसा, वाजल, धूला वस्त्र, अथवा धोये हुए वस्त्र लिये हुए धोबी, मछली, घृत, सिंहासन, रोदन रहित मुर्दा, छवजा, शहद, मेदा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, गालकी, वेदध्वनि, श्रेष्ठ स्तोत्र पाठ की ध्वनि, मांगलिक गायन और अंकुश ये पदार्थ यात्रा के समय सम्मुख आवें और बिना जल का घड़ा लिये हुए आदमी रीछे जाता हो तो अत्युत्तम है।

बाँझ स्त्री, चमड़ा, धान की भूसी, हाड़, सर्प, लवण, अंगार, इन्धन, हिजड़ा, वेष्ठा लिये पुरुष, तैल, पागल व्यक्ति, चर्वी, शीष्य, शत्रु, जटावाला व्यक्ति, गंत्यासी, तृण, रोगी, मुनि और बालक के अतिरिक्त अन्य नंगा व्यक्ति, तेल नगाकर बिना स्नान किये हुए, छूटे केज, जाति में पतित, कान-नाक कटा व्यक्ति, गूँथा, रधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, निज घर का जलना, बिलाबों का लड़ना और सम्मुख लोक यात्रा में अशुभ है। गेहू से रंगा कपड़ा, या इस प्रकार के वस्त्रों को धारण करने वाला व्यक्ति, गुड़, छाँछ, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा व्यक्ति, रड़ाई, गरीर में वस्त्र गिर जाना, भैंसों की लड़ाई, काला अन्न, रुई, वमन, गहिनी और गर्दंभ शब्द, अतिक्रोश, गर्भवती, शिरमुण्डा, गीले वस्त्र वाला, दुष्ट जिन बोलने वाला, अन्धा और बहरा ये सब यात्रा समय में सम्मुख आयें तो अति निदित हैं।

गोहा, जाहा, शूकर, सर्प और खरगोश का शब्द शुभ होता है। निज या पर के मुख से इनका नाम लेना शुभ है, परन्तु इनका शब्द या वर्णन शुभ नहीं है। रीछ और बानर का नाम लेना और सुनना अशुभ है, पर शब्द सुनना शुभ होता है। नदी का तैरना, अथकार्य, गृहप्रदेश और नष्ट लक्ष्य का देखना अशुभ है। कोयल, छिपकली, पोतकी, शूकरी, रता, पिंगला, छछुन्दरि, सियारिन, कपोत, बंजन, तीतर इत्यादि पक्षी यदि यात्रा के समय वाम भाग में हों तो शुभ है। छिकर, परीहा, श्रीकण्ठ, बानर और रुलमूग यात्रा समय दक्षिण भाग में हों तो शुभ है। बाहिनी और आये हुए मृग और पक्षी यात्रा में शुभ होते हैं। विषम संख्यक मृग अर्थात् तीन, पाँच, सात, नौ, चारह, तेरह, पन्द्रह, सत्रह, उन्नीस, इक्कीस आदि संख्या में मृगों का झुण्ड चलते हुए साथ दें तो शुभ है। यात्रा समय वायों और गदहे का शब्द शुभ है। यदि सिर के ऊपर दही की हण्डी रखे हुए कोई खालिन जा रही हो और दही के कण गिरते हुए दिखलाई पड़े तो यह शकुन यात्रा के लिए अत्यन्त शुभ है। यदि दही की हण्डी काले रंग की हो और वह काले रंग के बस्त्र से आच्छादित हो तो यात्रा में आवी सफलता मिलती है। श्वेत रंग की हण्डी श्वेत बस्त्र से आच्छादित हो तो पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि रक्त बस्त्र से आच्छादित हो तो यश प्राप्त होता है, पर यात्रा में कठिनाइयाँ अवश्य सहन करनी पड़ती है। पीतवर्ण के बस्त्र से आच्छादित होने पर धन लाभ होता है तथा यात्रा भी सफलतापूर्वक निविद्या हो जाता है। हरे रंग का बस्त्र विजय की धूकरा देता है तथा यात्रा करने काले की मनोकामना सिद्ध होने की ओर संकेत करता है। यदि यात्रा करने के समय कोई व्यक्ति खाली घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल भरकर साथ-साथ वापस चले तो यह शकुन यात्रा की सिद्धि के लिए अत्यन्त शुभकारा है। यदि कोई व्यक्ति भगा घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल पानी पिराकर खाली घड़ा नेकर चले तो यह शकुन अशुभ है, यात्रा की कठिनाइयों के साथ प्रनहारिन की सूचना देता है।

यात्रा समय में काक का विचार यदि यात्रा के समय यात्रा वाणी बोलता हुआ वाम भाग में गमन करे तो भी प्रकार के मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि काक मार्य में प्रदक्षिणा करता हुआ वायें हाथ आ जायें तो कार्य की सिद्धि, दोष, कुशल तथा मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि पीठ पीछे काक मन्द रूप में पधुर शब्द करता हुआ गमन करे अथवा शब्द करता हुआ उसी ओर मार्य में आगे बढ़े, जिधर यात्रा के निए जाता है, अथवा शब्द करता हुआ काम आगे हरे वृध की हरी ढाली पर रित्यत हो और अपने पैर से गरतक को बुजला रहा हो तो यात्रा में अभीष्ट काल की सिद्धि होती है। यदि गमन काल में काक हाथी के ऊपर बैठा दिखलाई पड़े या हाथी पर बजते हुए याजों पर बैठा हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा में सफलता मिलती है, साथ ही धनधान्य, गवारी, भूमि आदि का

लाभ होता है। यदि काक घोड़े के ऊपर स्थित दिखलाई पड़े तो भूमिलाभ, मित्र-
लाभ एवं धनलाभ करता है। देवमन्दिर, धर्मजा, ऊचे महल, धान्य की राशि,
अन्न के ढेर एवं उन्नत भूमि पर बैठा हुआ काक मुँह में गूँधी खास लेकर चढ़ा
रहा हो तो निश्चय यात्रा में अर्थ लाभ होता है। इस प्रकार वीं यात्रा में सभी
प्रकार के सुख साधन प्रस्तुत रहते हैं। यह यात्रा अत्यन्त सुखकर मानी जाती है।
आगे-पीछे काक गोवर के ढेर पर बैठा हो या दूध बाले—वट, पीपल आदि पर
स्थित होकर बोट कर रहा हो अथवा मुँह में अन्न, फल, मूल, पुष्प आदि हों तो
अनायास ही यात्रा की सिद्धि होती है। यदि कोई स्त्री जल का भरा हुआ कलश
लेकर आये और उस पर काक स्थित होकर शब्द करने लगे तथा जल के भरे हुए
घड़े पर स्थित हो काक शब्द करे तो स्त्री और धन की प्राप्ति होती है। यदि
शश्या के ऊपर स्थित होकर काक शब्द करे तो आप्तजनों की प्राप्ति होती है।
गाय की पीठ पर बैठकर या दूर्वा पर बैठकर अथवा गायर पर बैठकर काक चांच
धिसता हो तो अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। धान्य, दूध,
दहो, मनोहर अंकुर, पत्र, पुण्य, फल, हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर काक बोलता
जाय तो सभी प्रकार के इच्छित कायं सिद्ध होते हैं। वृक्षों के ऊपर स्थित होकर
काक शान्त शब्द बोले तो स्त्रीप्रसंग हो, धन-धान्य पर स्थित होकर शान्त शब्द
करे तो धन-धान्य का लाभ हो एवं गाय की पीठ पर स्थित होकर शब्द करे तो
स्त्री, धन, यश और उत्तम भोजन की प्राप्ति होती है। ऊंट की पीठ पर स्थित
होकर शान्त शब्द करे, गदहे की पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-
लाभ और सुख नी प्राप्ति होती है। यदि शूकर, बैल, खाली घड़ा, मुर्दा मनुष्य
या मुर्दा पशु, पापाण और सूखे वृक्ष की डाली पर स्थित होकर वनक शब्द करे
तो यात्रा में ज्वर, अर्थहानि, चारी द्वारा धन का अपहरण एवं यात्रा में अनेक
प्रकार के कष्ट होता है। यदि काक दक्षिण वीं ओर गमन करे और दक्षिण की ओर
ही शब्द करे, पीछे से तम्मुख आये, बोलाहज करता हो और प्रतिलोम गति करके
पीठ पीछे की ओर चला जाय तो यात्रा में चोट लगती है, रक्तांश तो होता है तथा
और भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। बलिभोजन करता हुआ काक बायीं ओर
शब्द करता हो और वहाँ से दक्षिण की ओर चला आये एवं याम प्रदेश में प्रति-
लोम गमन करता हो तो यात्रा में अनेक प्रकार के विघ्न होते हैं। आर्थिक हानि
भी होती है। यदि गमनकाल में काक दक्षिण बोलकर पीठ पीछे की ओर चला
जाय तो किसी की हत्या सुनाई पड़ती है। गाय वीं पूँछ था सर्व के बिल पर बैठा
हुआ काक दिखलाई पड़े तो मांग में सर्वदर्शन, नाना तरह के संघर्ष और भय
होत है। यदि काक आग वाठोर शब्द करता हुआ स्थित हो तो हानि, रोग; पीठ
पीछे स्थित हो रठोर शब्द करे तो मृत्यु एवं खाली बैठकर शब्द कर रहा हो
तो यात्रा सदा निन्दित है। सूखे काठ के टूक को तोड़कर चोच के अग्रभाग में

खाकर रखा हो और वायें भाग में स्थित हो तो मृत्यु या नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। यदि चोंच में काक हड्डी दबाये हो तो अशुभ फल होता है। वाम भाग में सूखे वृक्ष पर काक स्थित हो तो अतिरोम, खाली या तीखे वृक्ष पर बैठा हो तो यात्रा में कलह और कार्यनाश एवं कटिदार वृक्ष पर स्थित होकर रखा शब्द करे तो यात्रा में मृत्यु होती है।

मानशरण के वृक्ष पर स्थित काक कठोर शब्द करता हो तो यात्रा में धनक्षय, कुटुम्बी भरण एवं नाना तरह से अशुभ होता है। यदि छत पर बैठकर काक बोलता हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए। इस शकुन के होने पर यात्रा करने से वज्रपात—विजली गिरती है। यदि कूड़े के ढेर पर या राख—भस्म के ढेर पर स्थित होकर काक शब्द करे तो कार्य का नाश होता है। अपयश, धनक्षय एवं नाना तरह के कष्ट यात्रा में उठाने पड़ते हैं। जता, रसी, केण, मूखी लकड़ी, चमड़ा, हड्डी, फटे-पुराने चिथड़े, वृक्षों की छाल, रुधिरयुक्त वस्तु, जलती लकड़ी एवं कीचड़ काक की चोंच में दिखलाई पड़े तो यात्रा में गापयुक्त कार्य करने पड़ते हैं। यात्रा में कष्ट होता है, धनक्षय या धन की चोरी, अचानक दुर्घटनाएं आदि घटित होती हैं। आयुध, छत, धड़ा, हड्डी, वाहन, काठ एवं पाषाण चोंच में रखे हुए काक दिखलाई पड़े तो यात्रा करने वाले वे मृत्यु होती हैं। एक पाँव समेटकर, चंचल चित्त होकर जोर-जोर से कठोर शब्द करता हो तो काक युद्ध, झगड़े, मार-पीट आदि की सूचना देता है। यदि यात्रा करते समय काक अपनी बीट यात्रा करने वाले के मस्तक पर गिरा दे तो यात्रा में विपत्ति आती है। नदी तट या मार्ग में काक तीव्र स्वर बोलि तो अत्यन्त विपत्ति की सूचना समझ लेनी चाहिए। यात्रा के समय में यदि काक रथ, हाथी, घोड़ा और मनुष्य के मस्तक पर बैठा दीख पड़े तो पराजय, काठ, चोरी और झगड़े की सूचना समझनी चाहिए। शास्त्र, ध्वजा, छत पर स्थित होकर काक आकाश की ओर देख रहा हो तो यात्रा में मफलता मिलती चाहिए।

यात्रा में उल्लू का विचार—यदि यात्रा काल में उल्लू वायीं और दिखलाई पड़े तथा उल्लू अपना भोजन भी गाथ में लिये हों तो यात्रा मफल होती है। यदि उल्लू वृक्ष पर स्थित होकर अपना भोजन संचय करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा करने वाला इस यात्रा में अवश्य धन लाभ कर लीटता है। यदि गमन करने वाले पुरुष के बाग भाग में उल्लू का प्रणाल्तभय शब्द हो वे दक्षिण भाग में असम शब्द हो तो यात्रा में मफलता मिलती है। किसी भी प्रवार की बाधा नहीं आती है। यदि यात्रा कर्ता के बाग भाग में उल्लू शब्द करता हुआ दिखलाई पड़े अथवा वायीं और में उल्लू का शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा प्रशस्त होती है। यदि पृथ्वी पर स्थित होकर उल्लू शब्द कर रहा हो तो धनहानि; आकाश में स्थित होकर शब्द कर रहा हो तो कलह; दक्षिण भाग में स्थित होकर शब्द कर रहा

हो तो कलह या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। यदि उल्लू का शब्द तैजस और पवन-युक्त हो तो नियचयतः यात्रा करने वाले की मृत्यु होती है। यदि उल्लू पहले बायी और शब्द करे, पश्चात् दक्षिण की ओर शब्द करे तो यात्रा में पहले समृद्धि, सुख और शान्ति; पश्चात् कष्ट होता है। इस प्रकार के शकुन में यात्रा करने से कभी-कभी मृत्यु तुल्य कष्ट भी भोगना पड़ता है।

नीलकण्ठ विचार- यदि यात्रा काल में नीलकण्ठ स्वस्तिक गति में भव्य पदार्थों को ग्रहण कर प्रदक्षिणा करता हुआ दिखलाई पड़े तो सभी प्रकार के मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि दक्षिण—दाहिनी ओर नीलकण्ठ गमन समय में दिखलाई पड़े तो विजय, धन, यश और पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि नीलकण्ठ काक को पराजय करता हुआ सामने दिखलाई पड़े तो निविद्ध यात्रा की सिद्धि करता है। यदि वन मध्य में रुदन करता हुआ नीलकण्ठ सामने आये अथवा भव्यकर शब्द करता हुआ या धब्डाकर शब्द करता हुआ आये आये तो यात्रा में विघ्न आते हैं। धन चोरी चला जाता है और जिस कार्य की सिद्धि के लिए यात्रा की जाती है वह सफल नहीं होता। यदि यात्राकाल में नीलकण्ठ मयूर के समान शब्द करतो यशप्राप्ति, धनलाभ, विजय एवं निविद्ध यात्रा सिद्ध होती है। गमन करने वाले व्यक्तित के आगे-आगे कुछ दूर तक नीलकण्ठ के दर्शन हो तो यात्रा सफल होती है। धन, विजय और यश प्राप्त होता है। शत्रु भी यात्रा में भिन्न वन जाते हैं तथा वे भी सभी तरह की सहायता करते हैं।

खंजन विचार- यदि यात्राकाल में खंजन पक्षी हरे पत्र, पुष्प और फल युक्त वृक्ष पर स्थित दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है; मिठों से मिलन, शुभ कार्यों की सिद्धि एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। हाथों, धोड़ा के बैधने के स्थान में, उपवन, घर के रामोग, देवमन्दिर, राजमहल आदि के शिखर पर खंजन बैठा हुआ राश्वर दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। दही, दूध, धूत आदि को मुख में लिये हुए खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो नियमतः लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यात्रा में इस प्रकार के शुभ शकुन मिलते हैं, जिनसे चिल प्रसन्न रहता है तथा विना किसी प्रकार के कष्ट के यात्रा सिद्ध हो जाती है। सहस्रों व्यक्ति सहायक मिल जाते हैं। छाया शहित, सुन्दर, फल-पुष्प युक्त वृक्ष पर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो लक्ष्मी की प्राप्ति के साथ विजय, यश और अधिकारों की प्राप्ति होती है। खंजन का दर्शन यात्रा काल में बहुत ही उत्तम माना जाता है। गधा, ऊट, श्वान की पीठ पर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े अथवा अणुनि और मन्दे स्थानों पर बैठा हुआ खंजन दिखलाई पड़े तो यात्रा में बाधाएं जाती हैं, धनहानि होती है और पराजय भी होती है।

तीता विचार- यदि गमन समय में दाहिनी ओर या सम्मुख तीता दिखलाई

पड़े तथा वह मध्य ग्रन्थ तुरु रुद्रादि भूनिध्म आदि वहाँ मध्ये विद्या आदि शक्ति शक्ति

से सफलता प्राप्त होती है। यदि तोता मुख में कल दबाये और बायें पैर से अपनी गद्दन खुजला रहा है तो यात्रा में धन-धान्य की प्राप्ति होती है। इसित कल, पुष्प और पत्तों से युक्त वृक्ष के ऊरर तोता स्थित हो तो यात्रा में विजय, सफलता, धन और यश की प्राप्ति समझनी चाहिए। किसी विशेष व्यक्ति से मिलने के लिए यदि यात्रा की जाय और यात्रा के आरम्भ में तोता जयनाद करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा पूर्ण सफल होती है। यदि गमन काल में तोता बायी और से दायी और चला आये और प्रदक्षिणा करता हुआ-सा प्रतीत हो तो यात्रा में सभी प्रकार की सफलता समझनी चाहिए। यदि तोता शरीर को कॉपाता हुआ इधर से उधर पूमता जाय अथवा निन्दित, दूषित और घृणित स्थलों पर जाकर स्थित हो जाय तो यात्रा की सिद्धि में कठिनाई होती है। मुक्त विचरण करने वाला तोता यदि सामने कल या पुष्प को कुरेदता हुआ दिखलाई पड़े तो धनप्राप्ति का योग समझना चाहिए। यदि तोता रुदन करता हुआ या किसी प्रकार के शब्द को करता हुआ सामने आये तो यात्रा अत्यन्त अशुभ होती है। इस प्रकार के शकुन में यात्रा करने से प्राणघात का भी भय रहता है।

चिडिया विचार—यदि छोटी लाल मुजैया सामने दिखलाई पड़े तो विजय, पीठ पीछे शब्द करने तो कष्ट, दाहिनी ओर शब्द करती हुई दिखलाई पड़े तो हर्ष एवं बायी ओर धन क्षय, रोग या अनेक प्रकार की आपत्तियों की सूचना देती है। जिस चिडिया के सिर पर कलंगी हो, यदि वह सामने या दाहिनी ओर दिखलाई पड़े तो शुभ, बायी ओर तथा पीठ पीछे उसका रहना अशुभ होता है। मुह में चारा लिये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रा में सभी प्रकार की सिद्धि, धन-धान्य की प्राप्ति, सांसारिक सुखों का लाभ एवं अभीष्ट मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि किसी भी प्रकार की चिडियाँ आपस में लड़ती हुई सामने गिर जायें तो यात्रा में कलह, विवाद, झगड़ा के राश मृत्यु भी प्राप्त होती है। चिडिया के गर्भों का दूदकर सामने गिरना यात्राकर्ता को विपत्ति की गूचना देता है। चिडिया या लैंगड़ावार बलना और धूल में स्नान करना यात्रा में कष्टों की गूचना देता है।

मयूर विचार—यात्रा में मयूर का नृत्य करते हुए देखना अत्यन्त शुभ होता है। मधुर शब्द एवं नृत्य करता हुआ मयूर यदि यात्रा करने समय दिखलाई पड़े तो यह शकुन अत्यन्त उत्तम है, इसके हारा धन-धान्य की प्राप्ति, विजय-प्राप्ति, मुख एवं सभी प्रकार के अभीष्ट मनोरथों की सिद्धि गमग नेती चाहिए। मयूर का एक ही झटके में उड़कर सूखे वृक्ष पर बैठ जाना यात्रा में विपत्ति की सूचना देता है।

हाथी विचार—यदि प्रस्थान काल में हाथी सुड़ को ऊपर लिये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रा में इच्छाओं की पुति होती है। यदि यात्रा करने समय हाथी का दर्ता ही टूटा हुआ दिखलाई पड़े तो भय, कष्ट और मृत्यु होती है। गर्जना करता

हुआ मदोन्मत्त हाथी यदि सामने आता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। जो हाथी पीलबान को गिराकर आगे दौड़ता हुआ आये तो यात्रा में कष्ट, पराजय, आधिक क्षति आदि फलों की प्राप्ति होती है।

अश्व विचार—यदि प्रस्थान काल में घोड़ा हिनहिनाता हुआ दाहिने पैर से पृथ्वी को खोद रहा हो और दाहिने अंग को खुजला रहा हो तो वह यात्रा में पूर्ण सफलता दिलाता है तथा पद-वृद्धि की सूचना देता है। घोड़े का दाहिनी ओर हिनहिनाते हुए निकल जाना, पूँछ को फटकारते हुए चलना एवं दाना खाते हुए दिखलाई पड़ना शुभ है। घोड़े का लेटे हुए दिखलाई पड़ना, कानों को फटफटाना, मल-मूत्र त्याग करते हुए दिखलाई पड़ना यात्रा के लिए अशुभ होता है।

गर्दभ विचार—यद्यपि यात्रा में स्थिरता वर्तमान वर्तिदीर्घ शब्द वार्ता हुआ यात्रा में शुभ होता है। आगे या पीछे स्थित होकर गर्दभ शब्द करे तो भी यात्रा की रिद्धि होती है। यदि प्रयाण काल में गर्दभ अपने दाँतों से अपने कन्धे को खुजलाता हो तो धन की प्राप्ति, सफल मनोरथ और यात्रा में किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता है। यदि संभोग करता हुआ गर्दभ दिखलाई पड़े तो स्त्रीलाभ, युद्ध करता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-वंधन एवं देह या कान को फटफटाता हुआ दिखलाई पड़े तो कार्य नाश होता है। खच्चर का विचार भी गर्दभ के विचार के समान ही है।

वृथभ विचार—प्रयाण काल में वृथभ बायीं और शब्द करे तो हानि, दाहिनी और शब्द करे और सींगों से पृथ्वी को खोदे तो शुभ; और शब्द करता हुआ साथ-साथ चले तो विजय एवं दक्षिण की ओर गमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो मनोरथ सिद्धि होती है। बैल या सौँड़ बायीं और आकर बायीं सींग से पृथ्वी को खोदे, बायीं करवट लेटा हुआ दिखलाई पड़े तो अशुभ होता है। यात्रा काल में बैल या सौँड़ का बायीं और आना भी अशुभ कहा गया है।

महिष विचार—दो महिष सामने लड़ते हुए दिखलाई पड़े तो अशुभ, विदाद कलह और युद्ध की सूचना देते हैं। महिष का दाहिनी ओर रहना, दाहिने सींग से या दाहिनी ओर स्थित होकर दोनों सींगों से भिट्ठी का बोदना यात्रा में विजय कारक है। बैल और महिंग दोनों की छींक यात्रा के लिए वजित है।

गाय विचार—गम्भिणी गाय, गम्भिणी भैस और गम्भिणी बकरी का यात्रा काल में सम्मुख या दाहिनी ओर आना शुभ है। रंभाती हुई गाय सामने आये और बच्चे को दूध पिला रही हो तो यात्रा काल में अत्यधिक शुभ माना जाता है। जिस गाय का दूध दुहा जा रहा हो, वह भी यात्रा काल में शुभ होती है। रंभाती हुई, बच्चे को देखने के लिए उत्तम, हर्षयुक्त गाय का प्रयाण काल में दिखलाई पड़ना शुभ होता है।

बिडाल विचार—यात्रा काल में बिल्ली रोती हुई, लड़ती हुई, छींकती हुई

दिखलाई पड़े तो यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। बिल्ली का रास्ता काटना भी यात्रा में संकट पैदा करता है। यदि अकस्मात् बिल्ली दाहिनी ओर से बायी ओर आये तो किञ्चित् शुभ और बायी ओर से दाहिनी ओर आये तो अत्यन्त अशुभ होता है। इस प्रकार का बिल्ली का आना यात्रा में संकटों की सूचना देता है। यदि बिल्ली जूहे को मुख में दबाये सामने आ जाय तो कष्ट, रोटी का टुकड़ा दबाकर सामने आये तो यात्रा में लाभ एवं दही या दूध पीकर सामने आये तो साधारणतः यात्रा सफल होती है। बिल्ली का रुदन यात्रा काल में अत्यन्त वर्जित है, इसमें यात्रा में मृत्यु या तत्त्वत्य कष्ट होता है।

कुत्ता विचार—यात्रा काल में कुत्ता दक्षिण भाग से वाम भाग में गमन करे तो शुभ और कुत्तिया वर्षम भाग से दक्षिण भाग वरी ओर आये तो शुभ; युन्दर वस्तु को मुख में लेकर यदि कुत्ता सामने दिखलाई पड़े तो यात्रा में लाभ होता है। व्यापार के निमित्त की गयी यात्रा अत्यन्त सफल होती है। यदि कुत्ता घोड़ी-सी दूर आगे चलकर, पुनः पीछे की ओर लौट आये तो यात्रा करने वाले को शुभ; प्रसन्न कीड़ा करता हुआ कुत्ता सम्मुख आने के उपरान्त पीछे की ओर लौट जाय तो यात्रा करने वाले को धन-धान्य की प्राप्ति होती है। इस प्रकार के शकुन से यात्रा में विजय, सुख और शान्ति रहती है। यदि श्वान ऊँचे स्थान से उतरकर नीचे भाग में आ जाय तथा यह दाहिनी ओर आ जाये तो शुभकारक होता है। निविधन यात्रा की सिद्धि तो होती ही है, साथ ही यात्रा करने वाले को अत्यधिक सम्मान की प्राप्ति होती है। हाथी के बेधने के स्थान, घोड़ा के स्थान, जंगल, बासन, हरी बास, छत, छवजा, उत्तम वृक्ष, घड़ा, इटों के ढेर, चमर, ऊँची भूमि आदि स्थानों पर मूत्र वारके कुत्ता यदि मनुष्य के आगे गमन करे तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि हो जाती है। यात्रा सभी प्रकार से सफल होती है। सन्तुष्ट, पुष्ट, प्रसन्न, रोग-रहित, आनन्दयुक्त, लीला सहित एवं घोड़ा सहित कुत्ता सम्मुख आये तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। नबीन अन्न, घृत, विठ्ठल, गोवर इनको मुख में धारण कर दाहिनी ओर और बायी ओर देखता हुआ श्वान सामने आये तो भभी प्रवाहर में यात्रा सफल होती है। यदि श्वान आगे पृथ्वी को खोदता हुआ यात्रा करने वाले को देखे तो निस्सन्देह इस यात्रा से धन लाभ होता है। यदि कुत्ता गमन करने वाले को आकर सूंधे, अनुलोभ गति में आगे बढ़े, पैर से मरतक तो मुजलापि तो यात्रा सफल होती है। श्वान गमनकर्ता के साथ-साथ बायी ओर चले तो युन्दर रमणी, धन और यश की प्राप्ति कारात है। श्वान जूता मुँह में लेकर सामने आये या साथ-साथ चले; हड्डी लेकर सामने आये या गाथि-साथ चले; कण, वल्कल, पापाण, जीर्णवस्त्र, अगार, भस्म, उंधन, ठीकरा इन पदार्थों की मुँह में लेकर श्वान सामने आये तो यात्रा में रोग, कष्ट, मरण, धन हानि जादि फल प्राप्त होते।

कान और शरीर को यात्रा करने वाले के सामने हिलावे तो यात्रा में धन हरण, कष्ट एवं रोग आदि होते हैं। यदि यात्रा करने वाला व्यक्ति किसी कुसानी के जल, वृक्ष की लकड़ी, अग्नि, भूमि, केश, हड्डी, काष्ठ, सींग, शमशान, भूसा, अंगार, शूल, पाषाण, विष्ठा, चमड़ा आदि पर मूँच करते हुए देखे तो यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं।

शृगाल विचार—जिस दिशा में यात्रा की जा रही हो, उसी दिशा में शृगाल या शृगाली का शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा में सफलता प्राप्त होती है। यदि पूर्व दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के समक्ष शृगाल या शृगाली आ जाय और वह शब्द भी कर रही हो तो यात्रा करने वाले को महान् संकट की सूचना देती है। यदि सूर्य सम्मुख देखती हुई शृगाली बायीं और बोले तो अथ, दाहिनी ओर बोले तो कार्य हानि फल होता है। दक्षिण दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के दायीं और शृगाली शब्द करे तो यात्रा में सफलता की सूचना देती है। इसी दिशा के यात्री के आगे सूर्य की ओर मुँह कर शृगाली बोले तो मृत्यु की प्राप्ति होती है। पश्चिम दिशा को गमन करने वाले के सम्मुख शृगाली बोले तो चिन्ता, हानि और सूर्य की ओर मुँह करके बोले तो अत्यन्त संकट की सूचना देती है। यदि पश्चिम दिशा के यात्री के पीठ के पीछे शृगाली सूर्य की ओर मुँह कर बोले तो अर्थनाश, बायीं और शब्द करे तो अर्थात् होता है। उत्तर दिशा को गमन करने वाले व्यक्ति के पीठ पीछे शृगाली सूर्य की ओर मुँह कर बोले तो यात्रा में अर्थहानि और मरण होता है। यदि यात्रा-काल में शृगाली दाहिनी ओर से निकलकर बाईं ओर चली जाय और वहीं पर शब्द करे तो यात्रा में सफलता की सूचना समझनी चाहिए। शृगाली शब्द की कर्मिता और मधुरता के अनुसार फल में भी हीनाधिकता हो जाती है।

यात्रा में छींक विचार—छींक होने पर सभी प्रकार के कार्यों को बन्द कर देना चाहिए। गमन काल में छींक होने से प्राणों की हानि होती है। सामने छींक होने पर कार्य का नाश, दाहिने नेत्र के पास छींक हो तो कार्य का निषेध, दाहिने कान के पास छींक हो तो धन का अथ, दक्षिण कान के पृष्ठ भाग में छींक हो तो शयुओं की वृद्धि, बायें कान के पास छींक हो तो जय, बायें कान के पृष्ठ भाग की ओर छींक हो तो भोगों की प्राप्ति, बायें नेत्र के आगे छींक हो तो धन लाभ होता है। प्रयाण काल में सम्मुख की छींक अत्यन्त अशुभकारक है और दाहिनी छींक धन नाश करने वाली है। अपनी छींक अत्यन्त अशुभकारक होती है। ऊँचे स्थान की छींक मृत्युभय है, पीठ पीछे की छींक भी शुभ होती है। छींक का विचार 'डाक' से दस प्रवार किया है—

दक्षिण छींके धन लै दीजे, नैरित कोन सिहासन दीजे ॥
 पश्चिम छींके मिठ भोजना, गेलो पलटै वायब कोना ॥
 उत्तर छींके मान समान, सर्वं सिद्ध लै कोन ईशान ॥
 पूरब छिका मृत्यु हंकार, अग्निकोन मैं दुःख के भार ॥
 सबके छिका कहिगेल 'डाक' आगे छिका नहि करा काज ॥
 आकाश छिकके जे नद खाय, पर्ति अन्त झंदिर नहि खाय ।

अर्थात्—दक्षिण दिशा से होने वाली छींक धन हानि करती है, नैऋत्यकोण की छींक सिहासन दिलाती है, पश्चिम दिशा की छींक मीठा भोजन और वायब्य आठों दिशाओं में प्रहरानुसार छींकफल बोधकचक्र

दिशान	पूर्व	आग्नेय
1. हर्ष	1. लाभ	1. लाभ
2. नाश	2. धनलाभ	2. पित्रदर्शन
3. व्याधि	3. मित्रलाभ	3. शुभवार्ता
4. मित्रसंगम	4. अग्निभय	4. अग्निभय
उत्तर		दक्षिण
1. शत्रुभय		1. लाभ
2. रिपुसंग	यात्रा	2. मृत्युभय
3. लाभ		3. नाश
4. भोजन		4. काल
वायव्यकोण	पश्चिम	नैऋत्य
1. स्वीकार	1. दूरगमन	1. लाभ
2. लाभ	2. हर्ष	2. मित्रभेट
3. मित्रलाभ	3. कालह	3. शुभवार्ता
4. दूरगमन	4. चौर	4. लाभ

कोण की छींक द्वारा गया हुआ व्यक्ति सकुशल लौट आता है। उत्तर की छींक मान-सम्मान दिलाती है, ईशान कोण की छींक समस्त मनोरथों की सिद्धि करती है। पूर्व की छींक भृत्यु और अग्निकोण की दुःख देती है। यह अन्य लोगों की छींक का फल है। अपनी छींक तो सभी कार्यों को नष्ट करने वाली होती है। अतः अपनी छींक का सदा त्याग करना चाहिए। ऊंच स्थान की छींक में जो व्यक्ति यात्रा के लिए जाता है, वह पुनः वापस नहीं लौटता है। नीचे स्थान की छींक विजय देती है।

'वसन्तराज शाकुन' में दशों दिशाओं की अपेक्षा छींक के दस भेद बतलाये हैं। पूर्व दिशा में छींक होने से मृत्यु, अग्निकोण में शोक, दक्षिण में हानि, नैऋत्य में प्रियसंगम, पश्चिम में भिष्ट आहार, बायव्य में श्रीसम्पदा, उत्तर में कलह, ईशान में धनागम, ऊपर की छींक में संहार और नीचे की छींक में सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। आठों दिशाओं में प्रहर-प्रहर के अनुसार छींक का शुभाशुभत्व दिखलाया गया है। छींक कल-बोधक चक्र में देखें।

चतुर्दशोऽध्यायः

अथात् सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वकर्मविपाकजम् ।

शुभाशुभत्थोत्पातं राजो जनपदस्य च ॥१॥

अब राजा और जनपद के पूर्वोत्पात शुभाशुभ कार्यों के फल से होने वाले उत्पातों का निरूपण करता हूँ ॥१॥

प्रकृतेयो विषयसः २० चोत्पातः प्रकीर्तिः ॥
१ दिव्याऽन्तरिक्षभौमाश्च व्यासमेषां निबोधत ॥२॥

प्रकृति के विषयसि—विषयीत कार्य के होने को उत्पात कहते हैं। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। इनका विस्तार में वर्णन अवयत करना चाहिए ॥२॥

यदात्युष्णं भवेच्छीते शीतमुष्णे तथा ऋतौ ।
तदा तु नवमे मासे दशमे वा भयं भवेत् ॥३॥

यदि शीत ऋतु में अधिक गर्मी पड़े और श्रीम ऋतु में कड़ाक की सर्दी पड़े तो उक्त घटना के नी महीने या दग महीने के उपरात्र महान् भय होता है ॥३॥

सप्ताहमष्टरात्रं वा नवरात्रं दशात्क्रिकम् ।
यदा निष्पतते वर्षं प्रधानस्य बधाय तत् ॥४॥

यदि वर्षा सात दिन और आठ रात अथवा नी रात्रि और दश दिन तक हो तो प्रधान—राजा या मन्त्री का बध होता है । तात्पर्य यह है कि वर्षा लगातार सात दिन और आठ रात अर्थात् दिन में आरण्य होकर आठवीं रात में समाप्त हो तो नी रात और दश दिन अर्थात् रात में आरण्य होकर दशवें दिन समाप्त हो तो प्रधान का बध होता है ॥४॥

पक्षिणश्च यदा मत्ताः पश्चवश्च पृथग्विधाः ।
विपर्ययेण संसकता विन्द्याऽजनपदे भयम् ॥५॥

यदि पक्षी मत्त—पागल और पशु भिन्न स्वभाव के हो जायें तथा विपर्यय—विपरीत जाति, गुण, धर्म वालों का संयोग हो अर्थात् पशु-पक्षियों से मिलें, पक्षी पशुओं से अथवा गाय आदि पशु भी भिन्न स्वभाव वालों गे संयोग करें तो शब्द में भय—आतंक व्याप्त हो जाता है ॥५॥

आरण्या याममायान्ति वने गच्छन्ति नागराः ।
रुदन्ति चाथ जल्पन्ति तदापायाय¹ कल्पते ॥६॥
अष्टादशसु भासेषु तथा सप्तदशसु च ।
राजा च म्रियते तत्र भयं रोगश्च जायते ॥७॥

जंगली पशु गांव में आयें और प्रामीण एशु जंगल को जायें, रुदन करें और शब्द करें को जनपद के पाप का उदय समझना चाहिए । इस पाप के फल में अठारह महीनों में या सबह महीनों में राजा वा भरण होता है और उस जनपद में भय एवं रोग आदि उत्पन्न होते हैं । अर्थात् उस जनपद में सभी प्रकार का कष्ट व्याप्त हो जाता है ॥६-७॥

स्थिराणां कम्पसरणे चलानां १भयने तथा ।

६ भूयात् तत्र वधं राजः षण्मासात् पुत्रमन्त्रणः ॥८॥

स्थिर पदार्थ—जड़-चेतनात्मक स्थिर पदार्थ कीपने लगे—चंचल हो जायें
और चंचल पदार्थों की गति रुक जाय—स्थिर हो जायें तो इस घटना के ४
महीने के उपरान्त राजा एवं मंत्री पुत्र का वध होता है ॥८॥

२क्षणे हमरे वृत्ति ३वृद्धने युद्धसम्भवे ।

स्थावराणां वधं विन्द्यात्तिरमासं ४ नाश संशयः ॥९॥

युद्धकाल में अकारण छलने, हृणने और रोने-कलाने से तीन महीने के
उपरान्त स्थावर—वहाँ के निवासियों का निस्सन्देह वध होता है ॥९॥

५क्षणः पञ्चवो मर्त्यः प्रसूयन्ति ६विष्वर्यात् ।

७यदा तदा तु षण्मासाद् ८भूयात् राजवधो ध्रुवम् ॥१०॥

यदि पक्षी, पशु और मनुष्य विष्वर्य—विपरीत सन्तान उत्पन्न करें अथवा
पक्षियों के पशु या गनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो, पशुओं के पक्षी या
मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो और मनुष्यों के पशु या पक्षी की आकृति
की सन्तान उत्पन्न हो तो इस घटना के ४ महीने उपरान्त राजा का वध होता
है और उस जनपद में भय—आतंक व्याप्त हो जाता है ॥१०॥

९विकृतैः पाणिपादाद्यैः यूनैश्चाप्यधिकैस्तथा ।

१०यदा त्वेते प्रसूयन्ते क्षुद्रभयानि तदादिग्रेत् ॥११॥

विकृत हाथ, पैर वाली भ्रष्टवा त्युन या अधिक हाथ, पैर, सिर, और खाली
सन्तान पशु-पक्षी और मनुष्यों के उत्पन्न हो तो धुधा की पीड़ा और भय—आतंक
आदि होने की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥११॥

११षण्मासं द्विगुणं चापि परं वाथ चतुर्गुणम् ।

१२राजा च स्त्रियते तत्र भयानि च न संशयः ॥१२॥

जहाँ उक्त प्रकार की घटना घटित होती है, वहाँ ४ महीने, एक वर्ष और
दो वर्ष के उपरान्त राजा की मृत्यु एवं निस्यन्देह भय होता है ॥१२॥

१३सद्यानि रुधिराऽस्थीनि धान्यजंगारवसास्तथा ।

१४मध्वान् वर्षते यत्र तत्र विन्द्यात् महद्भयम् ॥१३॥

जहाँ मेघ मध्य, रथिर, हड्डी, अग्नि त्रिनगरियाँ और चर्वी की वर्षा करते हैं
वहाँ चार प्रकार का भय होता है ॥ 3॥

१सरीसूपा जलचराः पक्षिणो द्विपदास्तथा ।

२बंधमाणा जलधरात् तदाख्यान्ति महाभयम् ॥ 4॥

जहाँ सेधों से सरीसूप—रीढ़ बालि मण्डिजन्तु, जलचर—मंडक, मछली
आदि एवं द्विपद पक्षियों की वर्षा हो, वहाँ धोर भय की सूचना समझनी
चाहिए ॥ 4॥

निरिन्धनो यदा चाग्निरीक्ष्यते सततं पुरे ।

स राजा नश्यते देशाच्छासात् परतस्तदा ॥ 5॥

यदि राजा नगर में निरन्धन किना उंधन के अग्नि को प्रज्वलित होते हुए देखे
तो वह राजा छः महीने के उपरान्त उक्त घटना के छः गहीने पश्चात् विनाश
को प्राप्त हो जाता है ॥ 5॥

दीप्यन्ते यत्र शङ्क्राणि वस्त्राण्यश्वा तरा गजाः ।

बर्षं च स्रियते राजा देशस्य च महदभयम् ॥ 6॥

जहाँ शङ्क्र, वस्त्र, अश्व औड़ा, मनुष्य और हाथी आदि जलते हुए दिखलाई
पड़े वहाँ इस घटना के पश्चात् एक बारे में राजा का मरण हो जाता है और देश
के लिए महान् भय होता है ॥ 6॥

चैत्यवृक्षा रसान् यद्वत् प्रस्त्रवन्ति विषय्यात् ।

समस्ता यदि वा व्यस्तास्तदा देशे भयं वदेत् ॥ 7॥

यदि चैत्यवृक्ष गूलर के वृक्षों से विषय रस टपके अथवा चैत्यालय के
समक्ष स्थित वृक्षों में से शभी भेद्या पृथक्-पृथक् वृक्ष से विषरीत रस टपके अथवा
जिस वृक्ष में जिम्प्रकार का रस निकलता है, उसमें भिन्न प्रकार का रस निकले
तो जनपद के लिए भय का आगमन समझना चाहिए ॥ 7॥

दधि क्षीदं धृतं तोषं दुधं रेतविष्मितिम् ।

प्रस्त्रवन्ति यदा वृक्षास्तदा व्याधिभयं भवेत् ॥ 8॥

जब वृक्षों में दही, शहद, थी, जल, दूध और बीर्ग मिथित रस निकले तब

1. इसवंति मृ० । 2. वर्षमाणो भल हलाद गवमस्यात् दाणम् मृ० । 3. दीप्यते C
मृ० । 4. वृक्षम् मृ० । 5. प्रस्त्रवन्ति मृ० । 6. विषयादभ्यागमम् मृ० । 7. विषवन्ति
मृ० । 8. विदुः ग० ।

जनपद के लिए क्याधि और भय समझना चाहिए ॥ १८ ॥

रक्ते 'पुत्रभयं विन्द्यात् नीले श्रेष्ठभयं तथा ।

अन्येष्वेषु विचित्रेषु वृक्षेषु तु भयं विदुः ॥ १९ ॥

यदि लाल रंग का रस निकले तो पुत्र को भय, नील रंग का रस निकले तो गंठों को भय, और अन्य विचित्र प्रकार का रस निकले तो जनपद को भय होता है ॥ १९ ॥

विस्वरं रक्तमानस्तु चैत्यवृक्षो 'यदा पतेत् ।

'सततं भयमाल्याति देशजं पञ्चमासिकम् ॥ २० ॥

यदि चैत्य वृक्ष—चैत्यालय के ममक रिथन वृक्ष अथवा गूलर का वृक्ष विकृत आवाज करता हुआ गिरे तो देश-निवासियों को पञ्चमासिक—पाँच महीनों के लिए भय होता है ॥ २० ॥

नानावस्त्रैः समाच्छन्ना दृश्यन्ते चैव यद् द्रुमाः ।

राष्ट्रजं तद्भय विन्द्याद् विलेषेण तदा विषे ॥ २१ ॥

यदि नाना प्राणार के वस्त्रों से युक्त वृक्ष दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के निवासियों को भय होता है तथा विंशत रुग्ण से देश के लिए भय समझना चाहिए ॥ २१ ॥

युक्तवस्त्रो हिजान् हन्ति रक्तः क्षत्रं तदाश्रयम् ।

पीतवस्त्रो यदा क्याधि तदा च वैश्यघातकः ॥ २२ ॥

यदि वृक्षस्वेत धन्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो ब्राह्मणों का विनाश, रक्त वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो शवियों का विनाश और पीत वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो व्याधि उत्ताना होती है और वैश्यों के लिए विनाशक है ॥ २२ ॥

नीलवरत्वेस्तथा श्रेणीन् कपिलैस्लेच्छमण्डलम् ।

धूम्रेनिहन्ति श्वपचान् चाण्डालानश्यसंशयम् ॥ २३ ॥

नील वर्ण के वस्त्र ने युक्त वृक्ष दिखलाई पड़े तो अश्रेणी—शूद्रादि निधन वर्ग के व्यक्तियों का विनाश, कपिल वर्ण के वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो स्लेच्छ—गवनादिका विनाश, धूम्र वर्ण के वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो श्वपच—चाण्डाल डोमादि का विनाश होता है ॥ २३ ॥

1. शत्रु गु । 2. वक्षे मू । 3. विदुः मू । 4. गतः मू । 5. तदा भयं समाल्याति मू । 6. यदा द्रुश्यन्ते वै द्रुमाः मू । 7. नीलवस्त्रो निहन्त्याशु शूद्रांश्च प्रभूनिन्नरान् । पश्चात्प्रिययं चित्र विधिः सर्वामयंकरः मू ३ ।

**सधरा: क्षीरवृक्षाश्च श्वेतपुष्पफलाश्च ये ।
सोम्यायां दिशि यज्ञार्थं जानीयात् प्रतिपुद्गलाः ॥२४॥**

जो मधुर, धीर, श्वेत पुष्प और फलों से युक्त वृक्ष उत्तर दिशा में होते हैं, वे यज्ञ के लिए उत्पात के फल की सूचना होते हैं। अर्थात्, उत्तर दिशा में मधुर, श्वेत पुष्प और फलों से युक्त धीर वृक्ष श्राद्धणों के लिए उत्पात की सूचना होते हैं ॥२४॥

**कषायमधुरस्तिवता उष्णदीर्घविलासिनः ।
रक्तपुष्पफलाः प्राच्यां सुदीर्घनृपक्षक्रियोः ॥२५॥**

कषाय, मधुर, तिवत, उष्णदीर्घ, विलासी, आत पुष्प और फल वाले वृक्ष पूर्व दिशा में बलवान् राजा और श्रवियों के लिए प्रतिपुद्गल—उत्पातसूचक हैं ॥२५॥

**अम्लाः सत्त्वणाः स्तिर्धाः पीतपुष्पफलाश्च ये ।
दक्षिण दिशि विजेया वैश्यानां प्रतिपुद्गलाः ॥२६॥**

आम्ल, लवणयुक्त, स्तिर्ध, पीत पुष्प और फल वाले वृक्ष दक्षिण दिशा में वैश्यों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥२६॥

**कटुकण्टकिनो रुक्षाः कृष्णपुष्पफलाश्च ये ।
बाहुण्यां दिशि वृक्षाः स्युः शूद्राणां प्रतिपुद्गलाः ॥२७॥**

कटु, कटों वाले, रुक्ष, काले रंग के कूल-फल वाले वृक्ष पश्चिम दिशा में जूदों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥२७॥

***महारतश्चतुरस्त्राश्च गाहाश्चापि विशेषिणः ।
वत्सध्य स्थिताः सरतः स्थावराः प्रतिपुद्गलाः ॥२८॥**

महान् चीकार, और विशेष लग गे याहूँ गजवृत और वन के मध्य में स्थित वृक्ष स्थावरों वहाँ के निवाभियों के लिए उत्पात सूचक होते हैं ॥२८॥

**ज्ञास्वाश्च तत्को येऽन्यं अन्ये जाता वनस्थ च ।
अचिरोदभवकारा यं याधितां प्रतिपुद्गलाः ॥२९॥**

छोटे वृक्ष और जो अन्य वृक्ष वन के अन्त में उत्पन्न हुए हैं ऐसे जीव ही उत्पन्न हुए गीधों जैसा जिनका आकार है अर्थात् जो छोटे-छोटे हैं, वे यादी—आक्रमण करने वालों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥२९॥

ये विदिक्षु विमिश्राश्च 'विकर्मस्था विजातिषु ।

"प्रतिपुद्गलाश्च येषां तेषामुत्पातजं फलम् ॥१०॥

जो विदिक्षाओं में अनुग्र-अनुग्र हों तथा विजाति—भिन्न-भिन्न जाति के वृक्षों में विकर्मस्थ—जिसके कार्य पृथक्-पृथक् हों वे जनपद के लिए उत्पात सूचक होने हैं। प्रति पुद्गल का तात्पर्य उत्पात से होने वाले फल वी सूचना देता है ॥१०॥

श्वेतो रसो द्विजान् हृत्ति रक्तः क्षत्रवृपान् वदेत् ।

पीतो वैश्यविनाशाय कृष्णः शूद्रनिष्ठूदये ॥३१॥

यदि वृक्षों से उक्त रस का अरण हो तो द्विज—ब्राह्मणों का विनाश, लाल रस अस्ति हो तो धनिय और राजाओं वा विनाश, पीता रस अस्ति हो तो वैश्यों का विनाश और कृष्ण का सामा रस अस्ति हो तो शूद्रों का विनाश होता है ॥३१॥

परचक्रं लृपभयं भुधाव्याधिधनक्षयम् ।

एवं लक्षणसंयुक्ताः आवाः कुरुर्महद्भयम् ॥३२॥

यदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का पिण्डित रस अस्ति हो तो परेशासन और लृपति का भय, भुधा, रोग, धन का नाश और महान् भय होता है ॥३२॥

कोटदण्डस्य वृक्षस्य व्याधितस्य च यो रसः ।

विवरणः लक्षणं भन्धं न दोषाय स कल्पते ॥३३॥

यदि कीड़ी द्वारा खाये गये शोणी वृक्ष का विकृत और दुर्गम्भित रस अस्ति होता है, तो उसका दोष नहीं माना जाता। अर्थात् शोणी वृक्ष के रस अरण का विचार नहीं किया जाता ॥३३॥

वृद्धो द्रुमा 'खवत्याशु मरणे पर्युपस्थिताः ।

अवर्दीः शुष्का भवत्यते तस्मात् तांलक्षण्येद् बुधः ॥३४॥

मरण के लिए उपरिधर—जर्जरित टूटकर गिरने वाले पुराने वृक्ष ही रस का अरण करते हैं। ऊर की ओर ये सूखे होते हैं। अतएव दुष्मान् व्यक्तियों को इनका लक्षण करना चाहिए ॥३४॥

यथा वृद्धो नरः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ।

तथा वृद्धो द्रुमः कर्कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ॥३५॥

1. विक्रमेशु गु० । 2. पृदगलाश्च तु ये येषां न लेपां प्रतिपुद्गलाः ग० । 3. गजा मु० ।
4. निदृत्याशु गु० ।

जैसे कोई वृद्ध पुरुष किसी निमित्त के मिलते ही भरण को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुराना वृक्ष भी किसी निमित्त को प्राप्त होने ही विनाश को प्राप्त हो जाता है ॥35॥

**इतरेतरथोगास्तु वृक्षादिवर्णनः समिक्षः ।
वृद्धावलोगमूलाश्च चलच्छेयौश्च साधयेत् ॥36॥**

वृद्ध पुरुष और पुराने वृक्ष का परस्पर में इतरेतर—अन्योन्याध्य सम्बन्ध है। अतः पुराने वृक्ष के उत्पातों से वृद्ध का फल तथा वर्कीन युवा वृक्षों से युवक और शिशुओं का उत्पात निमित्तक फल आत करना चाहिए तथा उल्कापात आदि के द्वारा भी निमित्तों का परिज्ञान करना चाहिए ॥36॥

**हसने रोदने नृत्ये देवतानां प्रसर्पणे ।
महदभयं विजानीयात् ॑षम्मासाद्द्विगुणात्परम् ॥37॥**

देवताओं के हँसने, रोने, नृत्य करने और चलने से छह गृहीने से नेत्रग एक वर्ष तक जनपद के लिए भद्रान् भय अवगत करना चाहिए ॥37॥

**चित्राश्चर्यसुलिङ्गानि निश्चीलन्ति बदन्ति वा ।
ज्वलन्ति च विगच्छीनं भयं राजवधोद्भवम् ॥38॥**

विचित्र, आशनवां गार्य चित्र चुक्त हो या प्रकट हों और हृगुट वृक्ष सहसा जलने लगे तो जनपद के लिए भय और राजा का भरण होता है ॥38॥

**॒तोयावहानि सहसा रुदन्ति च हसन्ति च ।
मार्जरिवच्च वासन्ति तत्र विन्वाद् महदभयम् ॥39॥**

तोयावहानि नदियाँ यहसा गोती और हैंथनी हुड़े दिल्लाटे पड़े तथा मार्जरि विल्ली के गमान गम्य आती हों तो महान् भय समाजा चाहिए ॥39॥

**वादित्रशब्दाः थूपते देशे यस्मिन्न मानुषेः ।
स देशो राजदण्डेन पीड़यते नाव संशयः ॥40॥**

जिस देश में मनुष्य विना किसी के बजाय भी वाजनी भावात् गुनते हैं, वह देश राजदण्ड में पीड़ित होता है, इसमें गन्दह नहीं है ॥40॥

**तोयावहानि॑ सर्वाणि वहन्ति रुधिरं यदा ।
षष्ठे भासे समुद्रभूते सङ्ग्रामः शोणिताकुलः ॥41॥**

जिस देश में नदियाँ में गन्त नी-सी धारा प्रवाहित होती है, उन देश में इन

1. पाण्डित्रिवयुणा अर्थ । 2. विन्वादाश्चान् अर्थ । 3. तोयावहानि अर्थ ।

घटना के छठे महीने में संग्राम होता है और पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है ॥41॥

चिरस्थायीनि तोषानि । पूर्वं प्रान्ति पद्मक्षयम् ।
गच्छन्ति वा प्रतिक्रोतः परचकागमस्तदा ॥42॥

चिरस्थायी नदियों का जल जब पूर्ण धय हो जाय—सूख जाय अथवा विपरीत धारा प्रवाहित होने लगे तो परशासन का आगमन होता है ॥42॥

वर्धन्ते चापि शीर्घन्ते चलन्ति वा तदाश्रयात् ।
सशोणितरनि दृश्यन्ते यत्र तत्र महद्भयम् ॥43॥

जहाँ नदियाँ बढ़ती हों, विशीर्ण होती हों अथवा चलती हों और उत्तुके दिलचलाई पड़ती हों, वहाँ गत्रान् भग सप्तशता चाहिए ॥43॥

शस्त्रकोषात् प्रधावन्ते नदन्ति विचरन्ति वा ।
यदा रुदन्ति दीप्यन्ते संग्रामस्तेषु निर्दिशेत् ॥44॥

जहाँ अस्त्र अपने कोश में बाहर निकलते हों, शब्द करते हों, विचरण करते हों, रोते हों और दीप्त—चमकते हों, वहाँ संग्राम की सूचना सप्तशती चाहिए ॥44॥

यानानि वृक्षबेशमानि धूमायन्ति उवलन्ति वा ।
अकालजं फलं पुष्पं तत्र मुख्यो विनश्यति ॥45॥

जहाँ सवारी, वृक्ष और घर धूमायमान—धुआँ शुक्त या जलते हुए दिलचलाई पड़े अथवा वृक्षों में अगमय में फल, पुष्प उत्पन्न हों, मुख्य—प्रधान वा नाश होता है ॥45॥

भवने यदि शून्यन्ते गीतवादित्वनिस्वनाः ।
यस्य तद्भवनं तरय शारीरं जायते भयम् ॥46॥

जिसके पर में विना किसी व्यवित के हारा गाये-बजाये जाने पर भी गीत, शारीर का शब्द लूनार्द पड़ता हो, उसके शारीरिक भय होता है ॥46॥

पुष्पं पुष्पे निवध्येत फलेन च यदा फलम् ।
वितर्थं च तदा विद्यात् महजजनपदक्षयम् ॥47॥

1. तूण मू० । 2. पुष्प पुष्प फले गुण फल वा विफल यदा । वध्यते विनाश विद्यात्तथा जननार्द भवन् ॥ पुष्प ॥

जब पुण में पृथि निवद्ध हो अर्थात् पुण में पृथि की-सी उत्तरति हो अथवा फल में फल निवद्ध हो अर्थात् फल में फल की उत्तरति हुई हो तो रात्रिव विताडाबाद का प्रचार एवं जनपद का महान् विनाश होता है ॥47॥

**चतुःपदानां सर्वेषां मनुजानां यदाऽस्मरे ।
श्रूयते व्याहृतं घोरं तदा मुख्यो विषद्यते ॥48॥**

जब आकाश में समस्त पणुओं और मनुष्यों का अवहार किया गया घोर शब्द सुनाई पड़े तो मुखिया भी मृत्यु होती है अथवा मुखिया शिष्टि को प्राप्त होता है ॥48॥

**निवर्ति कम्पने सूमोऽशुष्कवृक्षप्ररोहणे ।
देशवीहारं विज्ञानोपानमुद्यक्षत्तात् न जीवति ॥49॥**

भूग के अकारण निवर्तित और कम्पित होने तथा मृत्यु वृक्ष के पुनः होने ही जाने से देश को पीड़ा समझनी चाहिए तथा वहाँ के मुखिया की मृत्यु होती है ॥49॥

**यदा भूधरशृंगाणि निष्पतन्ति महीतले ।
तदा राष्ट्रभयं विन्द्यात् भद्रवाहुवचो यथा ॥50॥**

जब अकारण ही एवंतों भी चीटियों पृथ्वीतल पर अङ्कर गिर जायें तब राष्ट्र भय समझना चाहिए ऐसा भद्रवाहु स्वामी का वक्तव्य है ॥50॥

**वत्मीकरणाशु जनने मनुजस्य निवेशने ।
अरण्यं विशतश्चैव तत्र विद्यानभहृभयम् ॥51॥**

मनुष्यों के निवासस्थान में चीटियों जल्दी ही अपना विल बनायें और नगरों से निकलकर जंगल में प्रवेश करें तो राष्ट्र के लिए सहान् भय जामना चाहिए ॥51॥

**महापिपीलिकावृन्दं सन्द्रकाभृत्यविष्टुतम् ।
तत्र तत्र च सर्वं तद्राष्ट्रभङ्गस्य चादिशेत् ॥52॥**

जहाँ-जहाँ भृत्यधिक चीटियों एवं नित होता राष्ट्र-क-जृष्ण बगाकर भाग रही हों वहाँ-वहाँ सर्वथ राष्ट्र भय का निर्देश समझना चाहिए ॥52॥

1. शून्य पृ. 2. लिखा गया विवरण वह गढ़वा वज्रा । विषद्यते । च भृत्याणि भय विद्यान् प्रदद्यते ॥ पृ. 3.

प्रथमे मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति च ।
मध्यमा सत्पनिष्पत्ते^१ भैरव्यम् वष्टमुच्यते ॥ 14॥

यदि प्रथमे मण्डल में शुक्र अस्त हो या उदित हो—भरणी, कृतिका, रोहिणी और मृगशिंश नक्षत्र में शुक्र अस्त हो था। उदित हो तो उस वर्ष मध्यम वर्ष होती है और फसल भी मध्यम ही होती है ॥ 14॥

भोजान् कलिगानुगांश्च काश्मीरान् दम्युमालवान् ।
यवनान् सौरसेनांश्च गोद्विजान् शबरान् बधेत् ॥ 15॥

भोज, कलिग, उंग, काश्मीर, शबन, मालव, सौरसेन, गो, द्विज और शबरों का उत्त प्रकार के शुक्र के अस्त और उदय से वध होता है ॥ 15॥

पूर्वतः^२ शोरकालिगान् मागधो जयते नृपः ।
३सुभक्षं क्षेममारोग्यं मध्यदेशोषु जायते ॥ 16॥

पूर्व में शोर और कलिग को मागध नृप जीतता है तथा मध्य देश में गुरुष्टि, शोम और आरोग्य रहता है ॥ 16॥

यदा चात्ये तिरोहन्ति तत्रस्थभार्गवं ग्रहाः ।
४कुण्डानि अंगा बधयः क्षत्रियाः लभ्बशाकुनाः ॥ 17॥
५धार्मिकाः शूरसेनाश्च, किराताः मांससेवकाः ।
६यवना भिल्लदेशाश्च प्राचीनाश्चीनदेशजाः ॥ 18॥

यदि शुक्र को अन्य ग्रह आलक्षादित याने हों तो विद्यम और अंग देश के क्षत्रिय, नवादि पक्षियों का वध होता है । धार्मिक गृहणन देशवासी, पत्रपाहारी, किरात, यवन, भिल्ल और चीन देशवासियों को शुक्र की पीड़ा होने में गोड़ित होना पड़ता है ॥ 17-18॥

द्वितीयमण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा ।
७शारदस्थोपघाताय विषमां वृष्टिमादिशोत् ॥ 19॥

यदि द्वितीय मण्डल में शुक्र अस्त हो या उदित हो तो शरद ऋतु में होनेवाली घटन का उपचात होता है और वर्ष हीनाधिक होती है ॥ 19॥

अहिच्छलक्रं च कच्छुं च सूर्यावतं च पीडयेत् ।
८ततोत्पातनिवासानां देशानां क्षयमादिशेत् ॥ 20॥

1. यह न मण्डल नामम् मू० । 2. नह मू० । 3. गुरुष्टि गू० । 4. विविरिष्टे मू० ।

5. कुण्डा निकाल मू० । 6. धर्मिक गृहणनाश्च मत्स्यकीया अनेकण । 7. किरात गृहिष्ठाश्चेत् मू० । 8. शूरपांडिते मू० । 9. यह पवित मूद्रित प्रति में नहीं है ।

अहिच्छत्र, कच्छ और सूयवित्त को पीड़ा होती है। उत्पात वाले देशों का विनाश होता है ॥२०॥

यदा वाऽन्ये तिरोहन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।

निषादाः । पाण्डवा म्लेष्ठाः संकुलस्थाश्च साध्यवः ॥२१॥

^१कीष्ठिजाः पुरुषादाश्च शिलिपनो वर्बराः शकाः ।

वाहीका यवनाश्चैव मण्डूकाः केकरास्तथा ॥२२॥

पाञ्चालाः कुरवश्चैव पीड्यन्ते ^३सयुगन्धराः ।

एकमण्डलसंयुक्ते भार्गवं पीडिते फलम् ॥२३॥

यदि द्वितीय मण्डल स्थित शुक्र को अन्य ग्रह आच्छादित करें तो नियाद, पाण्डव, मैत्रेय, साधु, व्यापारी, कीष्ठिय, पुरुषार्थी, शिली, वर्बर, शक, वाहीक, यवन, मण्डूक, केकर, पाञ्चाल, कीरब और गान्धार आदि को पीड़ा होती है। यह एक मण्डल में स्थित शुक्र के पीड़न का फल है ॥२१-२३॥

तृतीये मण्डले शुक्रो यदास्तं अस्त्युदेति वा ।

तदा धान्यं सनिचयं पीड्यन्ते ^१व्यूहकेतवः ॥२४॥

वाटधानाः कुनाटाश्च कालकूटश्च पर्वतः ।

ऋषयः कुरुपाञ्चालाश्चातुर्वर्णश्च पीड्यते ॥२५॥

वाणिजश्चैव ^२कालजः पण्या ^३वासास्तथाश्मकाः ।

अवन्तीश्चपरान्ताश्च सप्तल्याः सचराचराः ॥२६॥

पीड्यन्ते ^४भयेनाथ क्षुधारोगेण चार्दिताः ।

^५महान्तश्चराश्चैव पारसीकास्यावनाः ॥२७॥

यदि तृतीय मण्डल में शुक्र उदय या अरति को प्राप्त हो तो धान्य और उसका समूह विनाश को प्राप्त होता है। मूर्ख श्रीर धूने पीडित होते हैं। वाटधान, कुनाट, कालकूट पर्वत, कृषि, कुह, पाञ्चाल और चातुर्वर्ण वो पीड़ा होती है। व्यापारी, कुलीन, ज्योतिषी, दुर्गानादार, असवासी-ऋषि-मुनि, दक्षिणी प्रदेश, अवन्तिरिवासी, उपरान्तक, गोपीनाथी शब्दादि, पारमीन, यवनादिक भयभीत और ग्रन्थ के द्वारा पीडित होते हैं तथा क्षुधा की पीड़ा भी उठानी पड़ती है। शुक्र के स्नेह, संस्थान और व्रण के द्वारा नूपरीड़न का भी विचार करना चाहिए ॥२४-२७॥

१. गारिदिकम् गृहः । २. गंडिका गृहः । ३. शुक्रस्थानः मूर्त्तिः । ४. मूर्लोन्नतः मूर्त्तिः ।
५. कृष्णः मूर्त्तिः । ६. वनवार्ती वशः मूर्त्तिः । ७. भयणस्वर्णिया क्षुधारोगेण चार्दिता मूर्त्तिः ।
८. गतहस्तयमवर्गेन्द्रिय विचारे नूपरीड़नम् मूर्त्तिः ।

चतुर्थे मण्डले शुक्रे कुर्यादिस्तमनोदयम् ।
 तदा सस्यानि जायन्ते महामेघाः सुभिक्षदाः ॥२८॥
 पुण्यशीलो जनो राजा ^१प्रजानां मधुरोहितः ।
 बहुधान्यां महीं विद्यादुत्तमं देववर्षणम् ॥२९॥
^२अन्तवश्चादवन्तश्च शूलकाः कास्यपास्तथा ।
 बाह्यो ^३वृद्धोऽर्थवन्तश्च पीड्यन्ते सर्वपास्तथा ॥३०॥
 यदा चान्ये ग्रहा यान्ति ^४रौरवा म्लेच्छसंकुलाः ।
 टकणाश्च पुलित्वाश्च किराताः ^५सौरकर्णजाः ॥३१॥
 पीड्यन्ते पूर्ववत्सर्वे दुष्मिक्षेण भयेन च ।
 ऐश्वाको मिथ्यते राजा शेषाणां क्षेममादिशेत् ॥३२॥

यदि चतुर्वर्ष मण्डल में शुक्र का उदय या अरत हो तो वर्षा भृग्ली होती है, मेव जल की अधिक वर्षा नहीं है, युभिक्ष और फसल उत्तम उत्पन्न होती है। राजा, प्रजा और पुरीहित धनं का आचरण करने वाली होती है। पृथ्वी में अनाज खूब उत्पन्न होते हैं तथा वर्षा भी उत्तम होती है। अन्तधा, अवन्ती, मूलिका, शामिका और गर्वत्र पीड़ा होती है। यदि शुक्र अन्य ग्रहों द्वारा आश्चादित हो तो म्लेच्छ, शिलती, पुलित्व, किरात, सौरकर्णज और पूर्ववत् अन्य सभी भय और दुष्मिक्ष से रीढ़ित होती हैं। इश्वाकुवंशी राजा की मृत्यु होती है, किन्तु अवशेष सभी राजाओं की क्षेम-कुशल बनी रहती है ॥२८-३२॥

यदा ^६तु पञ्चमे शुक्रः कुर्यादिस्तमनोदयौ ।
 अनावृहितभ्यं धोरं दुष्मिक्षं जनयेत् लदा ॥३३॥
 सर्वं इवेतं तदा धान्यं क्रेत्रव्यं सिद्धिमिल्लता ।
 त्थाज्या देशास्तथा चेमे निर्ग्रन्थैः साधुवृत्तिभिः ॥३४॥
 स्त्रीराज्य ताम्रकर्णश्च कण्ठाः कमनोत्कटाः ।
 बाह्योकाश्च विद्महिश्च भत्यकाशोसतस्कराः ॥३५॥
 लक्षीताश्च रामदेशाश्च सूरसेनास्तथैव च ।
 जाप्यन्ते वत्सराजाश्च परं यदि ^७तथा हृताः ॥३६॥

1. प्रगात्त.गि पृथीहाः मु० । 2. ल. धार्षत्वाधिवन्तश्च पूर्विका श्यामकार तथा । गु० ।

3. किञ्चन द्वाशन मु० । 4. गोरिया मु० । 5. सौरकर्णजिका, गु० । 6. वा गु० । 7. लदा

क्षुधामरणरोगेभ्यश्चतुर्भागे भविष्यति ।
एषु देशेषु चान्येषु भद्रबाहुवचो यथा ॥३७॥

यदि पंचम मण्डल में शुक्र का उदय या अस्ति हो तो अनाधृति, दुर्भिक्ष और प्रथ उत्पन्न करता है। धन-धान्य की वृद्धि चाहने वालों को सभी श्वेत पदार्थ और अनाज खरीद लेना चाहिए और निर्गन्ध साधुओं को इन देशों का त्याग कर देना चाहिए। स्त्री राज्य, ताम्रकर्ण, कण्ठाटक, आमाम, बाह्लीक, विदर्भ, मत्स्य, काशी, स्फीत देश, रामदेश, गुरुगेन, वत्सराज इत्यादि देशों में क्षुधा, मरण, रोग, दुर्भिक्ष आदि का कष्ट होगा, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥३३-३७॥

यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।

‘सौराष्ट्राः सिन्धुसौवीराः मन्तिसाराश्च साधवः ॥३८॥

‘अनार्याः कच्छुयोवेषाः सांदृष्टार्जुनतायकाः ।

पीड्यन्ते लेषु देशेषु म्लेच्छो वै ग्रियते नृपः ॥३९॥

यदि पंचम मण्डल में शुक्र अन्य ग्रहों के द्वारा अभिभूत हो तो सौराष्ट्र, सिन्धु देश, सौवीर देश, मन्तिसार देश, गाधुजन, अनार्य (या आगत) देश, कच्छ देश, सन्धि के योग्य हैं। पूर्व दिशा के स्वामी भी सन्धि करने के योग्य हैं। इन देशों से पीड़ा होती है तथा म्लेच्छ नृप का मरण होता है ॥३८-३९॥

यदा तु मण्डले षष्ठे कुर्यादस्तमथोदयम् ।

शुक्रस्तदा प्रकुर्वीत भयानि तत्र क्षुद्रभयम् ॥४०॥

‘रसाः थाञ्चालबाह्लीका गन्धाराश्च गवोलकः ।

विदर्भश्च दशाणर्श्च पीड्यन्ते नान्न संशयः ॥४१॥

हिंगुणं धान्यसर्घेण नोत्तरं वर्षयेत् तदा ।

क्षतेः शस्त्रं च व्याधिं च मूर्च्छयेत् तादृशेन यत् ॥४२॥

यदि शुक्र षष्ठे मण्डल में अस्ति या उदय को प्राप्त हो तो साधारण भयों को उत्पन्न करता है तथा यहाँ क्षुधा का भय होता है। वत्स, पांचाल, बाह्लीक, गान्धार, गवोलक, विदर्भ, दशाण निस्सन्देह पीड़ा को प्राप्त होते हैं। अनाज का भाव दूना महेंगा हो जाता है तथा उत्तराधि चानुमास में वर्षा भी नहीं होती है। शस्त्र, घात और मूर्च्छा इस प्रकार के शुक्र में होती है ॥४०-४२॥

1. सुराष्ट्राः सु० । 2. अनार्यकच्छन्तेर्येषाः गाम्यार्थचार्जुना जनाः । सु० ।
3. म्लेच्छान्ते ग० । 4. वत्सः । 5. गवोलिका, सु० ।

१ यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्र स्थं भार्यवं ग्रहाः ।
 हिरण्योषधधयश्चैव शोणिडका दूतलेखकाः ॥४३॥
 काशमीरा बर्वरा: पौष्ट्रा भृगुकच्छा अनुप्रजाः ।
 पीड्यन्तेऽबन्तिमर्त्यै त्रियते च गृष्णास्तथः ॥४४॥

यदि अन्य ग्रह इस छठे मंडल में स्थित शुक्र के साथ संयोग करें तो हिरण्य, औषधि, शोणिडक, दूतलेखका, काशमीर, बर्वर, पौष्ट्र, भृगुक, अनुप्रजिक पीड़ित होते हैं और नृप का मरण होता है ॥४३-४४॥

नागवीथीति विज्ञेया भरणो कृत्स्निकाऽश्विनी ।
 २ रोहिण्याद्र्दी मृगशिरगजवीथीति निदिशेत् ॥४५॥
 एरावणपथं विन्द्यात् पुष्याऽश्लेषा पुनर्वंसुः ।
 फालमृग्नी च मघा चैव वृषवीथीति संज्ञिता ॥४६॥
 गोवीथी रेवती चैव द्वे च प्रोष्ठपदे तथा ।
 जरद् गवपथं ३ विन्द्याच्छ्रवणे वसुवाहणे ॥४७॥
 अजवीथी विशाखा च चित्रा स्वातिः करस्तथा ।
 उपेष्ठा मूलाऽनुराधासु मृगवीथीति संज्ञिता ॥४८॥
 अभिजिद् द्वे तथापाढे वैश्वानरपथः स्मृतः ।
 शुक्रस्याप्रगताद्वर्णति संस्थानाश्च फलं वदेत् ॥४९॥

अश्विनी, भरणी और कृत्स्निका की संज्ञा नागवीथि; रोहिणी, मृगशिरा और आद्री की गजवीथि; पुनर्वंगु, पुष्य और आश्लेषा की संज्ञा एरावतवीथि; पूर्वी-फालमृग्नी, उत्तराश्रवणी और मघा की संज्ञा वृषवीथि; पूर्वाभिग्रहपद, उत्तराभिग्रहपद और रेवती की गोवीथि; अवण, अनिष्ठा और अतिभिपा की जरदगववीथि; हस्त, विशाखा और चित्रा की अजवीथि; उपेष्ठा, मूल और अनुराधा की मृगवीथि एवं पूर्वापाढा, उत्तरापाढा और स्वातिया अभिजित् नी वैश्वानरवीथि हैं। शुक्र के अप्रगत वर्ण और आकार में फल का निष्पत्ति करना चाहिए ॥४५-४९॥

तज्जातप्रतिरूपेण जघन्योत्तममध्यमम् ।
 स्नेहादिषु शुभं ब्रूयाद् त्रृक्षादिषु च च संशयः ॥५०॥

तीन-सौन नक्षत्रों की एक-एक वीथि बतायी गयी है। इन नक्षत्रों में शुक्र के

1. गदाप्रवाणी मूँ । 2. नन्दनी रोहिणी चार्दी, अजवीथीति निदिशेत् । मूँ ।
 3. चहुत्या दग्धवाणी ग० । 4. भवं वरेत् मूँ ।

गमन करने में जश्वन्य, उत्तम और प्रथम फल होता है। अतएव हनुमान द्वारा ऐसे निस्सन्देह शुभाशुभ फल का प्रतिपादन करना चाहिए ॥50॥

**तिष्ठो ज्येष्ठा तथाऽऽश्लेषा १हरिणो मूलमेव च ।
हस्तं चित्रा मध्याऽषाढ़े शुक्रो दक्षिणतो वज्रेत् ॥51॥**

पूज्य, आण्डेषा, ज्येष्ठा, मूल, हस्त, चित्रा, मध्या, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रों में शुक्र दक्षिण से गमन करता है ॥51॥

**शुच्यन्ते तोषधान्यानि राजानः क्षत्रियास्तथा ।
उग्रभोगाश्च पीड्यन्ते धननाशो २विनायकः ॥52॥**

दक्षिण मार्ग में जब शुक्र गमन करता है तो जन और अनाज के पौधे मूल जाते हैं तथा राजा, क्षत्रिय त्रौप महाजन भी डिल होते हैं एवं धन का नाश होता है ॥52॥

**वैश्वानरपथो नामा यदा हेमन्तग्रीष्मयोः ।
प्रारुताऽस्मिन्भव्यं ३कुर्यात् ४वारों च चतुःषट्काम् ॥53॥**

जब हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में वैश्वानरवीथि में शुक्र गमन करता है तो वायु और अग्नि भय, मृद्यु आदि फल घटित होते हैं तथा एक आढ़क प्रमाण जन दरमाता है ॥53॥

**एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः ।
विषमं ५वर्षमाल्याति ६स्यले बीजानि वापयेत् ॥54॥**

जब शुक्र इनके मध्य में गमन करता है तो सभी वाने त्रिपम हो जाती हैं प्रथम वर्ष निकृष्ट होता है। उस वर्ष बीज स्थल में बोना चाहिए ॥54॥

खारी द्वाक्षिणिका ज्ञेया मृगवीथीति संज्ञिता ।

७व्याधयः विषु विज्ञेयास्तथा^८ चरति भार्गवे ॥55॥

जब शुक्र मृगवीथि में विचरण करता है तब वायु 32 खारी प्रमाण उत्तरत होते हैं और देहिक, देविक तथा भौतिक तीनों प्रकार की व्याधियाँ वरगत करनी चाहिए ॥55॥

एतेषां तु यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरस्तथा ।

विषमं वर्षमाल्याति ९निन्दे बीजानि वापयेत् ॥56॥

1. मन्धानः १ प० । 2. विगाशक ५० । 3. गुणः ३० । 4. खारी ५० । 5. सर्वे ५० ।
6. बीजानि तु स्थले वर्षे ५० । 7. वापश्वस्य ५० । 8. यजा ५० । 9. गुणं तिम्ने वर्णता
म् ।

जब शुक्र उत्तर की ओर जाता है तो सभी वस्तुओं को विषम समझता चाहिए तथा निम्न स्थान में बीज बोना चाहिए ॥56॥

कोद्रवाणां च बीजानां खारी षोडशिका वदेत् ।

अजवीथीति विज्ञेया पुनरेषा न संशयः ॥57॥

यदि शुक्र अजवीथि में गमन करे तो निस्मन्देह कोद्रव शीज सालह खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं ॥57॥

कृत्तिका रोहिणी आद्रा मघा मैत्रं पुनर्वंसुः ।

स्वातिस्तथा विशाखासु फालगुच्छोरभयोस्तथा ॥58॥

दक्षिणेन यदा शुक्रो ब्रजत्येतर्यदा समम् ।

मध्यमं वर्षमात्याति समे बीजानि वापयेत् ॥59॥

निष्पद्यते च शस्याति मध्यमेनापि वारिणा ।

जरदगवपथश्चैव खारी द्वात्रिशिकां भवेत् ॥60॥

कृत्तिका, रोहिणी, आद्रा, मघा, मैत्र, पुनर्वंसु, स्वाति, विशाखा, पूर्वफालगुनी और उत्तराफालगुनी इन नक्षत्रों के साथ जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है, तो मध्यम वर्ष होता है तथा समभूमि में बीज बोने से अच्छी फसल होती है। कम वर्षा होने पर भी फसल उत्तप्त होती है तथा जरदगववीथि से शुक्र का गमन होने पर द्वादश खारी प्रमाण धान्य की उत्पत्ति होती है ॥58-60॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः ।

तदापि मध्यमं वर्षं भीषत् पूर्वा विशिष्यते ॥61॥

उपर्युक्त नक्षत्रों के मध्य से जब शुक्र गमन करे तो मध्यम वर्ष होता है तथा पूर्वोक्त वर्ष की अपेक्षा बुद्ध उत्पन्न रहता है ॥61॥

सर्वं निष्पद्यते धान्यं न व्याधिर्विपि चेतयः ।

खारी तदाऽष्टिका ज्ञेया गोवीथीति च संज्ञिता ॥62॥

सभी प्रकार के धान्य उत्पन्न होते हैं, किसी भी प्रकार की महामारी और व्याधियाँ नहीं होतीं। इस गोवीथि में शुक्र के गमन से आठ खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥62॥

एतेषामेव यदा शुक्रो ब्रजत्युत्तरतस्तदा ।

मध्यमं सर्वमात्यष्टे वेतयो नापि व्याधयः ॥63॥

1. निष्पद्यते नाश शर्वं मन्देनाप्यथ वारिणा म् ॥ 2. गोवी द्वात्रिशिका ए० । 3. गोवीथी यानगंडिला ।

जब उपर्युक्त नक्षत्रों में शुक्र उत्तर की ओर से गमन करता है तो मध्यम वर्ष होता है तथा महामारी और व्याधियों का अभाव होता है ॥63॥

निष्पत्तिः सर्वधान्यानां भयं चात्र न भूच्छ्रुति ।

खारीचतुष्का विजेया वृषब्दीथीति संज्ञिता ॥64॥

जब वृषब्दीथि में शुक्र गमन करता है तो सभी प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति होती है, भय और आतंक का अभाव रहता है तथा चार खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥65॥

अभिजिच्छुवणं चापि धनिष्ठावारुणे तथा ।

रेवती भरणी चैव तथा भाद्रपदाऽश्विनी ॥65॥

निर्विद्यास्तदा विपद्यन्ते खारी विन्द्याच्च पठिचका ।

ऐरावणपथो ज्येष्ठोऽश्वेष्ठ एव प्रकोपितः ॥66॥

अभिजित्, थवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, भरणी, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और अश्विनी इन नक्षत्रों में शुक्र का गमन करना ऐरावणपथ माना जाता है। इस मार्ग में गमन करने से सभुदायों को विपत्ति होती है और पाँच खारी प्रमाण उत्पन्न होता है ॥65-66॥

‘एषां यदा दक्षिणतो भार्गवः प्रतिपद्यते ।

बहूदकं तदा विन्द्यात् महाधान्यानि वापयेत् ॥67॥

उपर्युक्त नक्षत्रों में यदि शुक्र दक्षिण मार्ग से गमन करे तो अत्यधिक वर्ष होती है तथा स्थल में बीज बोने पर भी धान्य की उत्पत्ति होती है ॥67॥

जलजानि तु शोभन्ते ये च जीवन्ति वारिणा ।

खारी तदाष्टिका ज्येया गजबीथीति संज्ञिता ॥68॥

जलजर जन्तु शोभित और आनन्दित होते हैं तथा इसमें आठ खारी प्रमाण धान्य और इसकी संज्ञा गजबीथि है ॥68॥

एतेषामेव तु मध्येन यदा याति तु भार्गवः ।

‘स्थलेष्वप्तबीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् ॥69॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रों के मध्य से गमन करता है तो स्थल में बोये गये बीज भी निर्विघ्न होते हैं ॥69॥

1. एतेषां मु० । 2. महाधान्य स्थले बोये गये त. मु० । 3. स्थलेष्वप्तबीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् मु० ।

निचयाश्च विनश्यन्ति खारी ह्लादेशिका भवेत् ।
दानशीला नरा¹ हृष्टा नागवीथोति संज्ञिता ॥70॥

नागवीथि में शुक्र के गमन करने से समुदायों की हानि होती है तथा ह्लादेशिका प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है और मनुष्य दानशील होते हैं ॥70॥

२एवमेव यदा शुक्रो ब्रजत्युत्तरतस्तदा ।
स्थले धान्यानि जायन्ते शोभन्ते जलजानि वा ॥71॥

जब शुक्र उत्तरार्धुक्त नक्षत्रों में उत्तर की ओर से गमन करता है तो स्थल में भी फराल उत्पन्न होती है और जलज जीव शोभित होते हैं ॥71॥

सर्वोत्तरा नागवीथो सर्वदक्षिणतोऽग्निजा ।
गोवीथो मध्यमा ज्ञेया मागशिवेवं त्रयः समूताः ॥72॥

नागवीथि गवणे उत्तर, वैश्वानर वीथि दक्षिण और गोवीथि मध्यमा होती है, इस प्रकार तीन प्रकार के मार्ग बताये गये हैं ॥72॥

उत्तरेणोत्तरं विद्यान्मध्यमे मध्यमं फलम् ।
दक्षिणे तु जघन्यं स्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥73॥

उत्तरवीथि में गमन करने पर उत्तरम् फल, मध्यवीथि में गमन करने पर मध्यम् फल और दक्षिण में गमन करने पर जघन्यम् फल होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥73॥

यत्रोदितश्च विच्चरेत्तक्षत्रं भार्गवस्तथा ।
नृपं पुरं धनं मुख्यं पशुं हन्याद् विलम्बकः ॥74॥

निम्न प्रकार प्रतिगादित रविवारादि क्रूर वारों में उत्तर नक्षत्रों गे जब शुक्र गमन करता है तो राजा, नगर, धान्य, धन और मुख्य पशुओं का अविनाश नाश होता है अर्थात् थेठ वारों में उत्तर फल और क्रूर वारों में गमन करने पर निरुट फल प्राप्त होता है ॥74॥

आदित्ये विच्चरेद् रेणं मार्गेऽसुल्यासयं भयम् ।
गर्भोपघातं कुरुते ज्वलनेनाविलम्बितम् ॥75॥
३ईतिव्याधिभयं चौरान् कुरुतेऽन्तःप्रकोपेनम् ।
प्रविशन् भार्गवः सूर्ये जिह्वे नाथ विलम्बिना ॥76॥

1. हृष्टा मृ० । 2. प्रगाढ़ मृ० । 3. ईतिव्याधि-इत्यादि यह गतिः हस्तालिखित प्रति में अधिक विवरी है ।

शुक्र के सूर्य में विचरण करने पर रोग, अत्यधिक भय, शीघ्र ही अस्ति के द्वारा गम्भीरशात् आदि फल घटित होते हैं, शुक्र के सूर्य में प्रवेश करने पर व्याधि, भय, दाढ़ण प्रकोप आदि फल होते हैं ॥75-76॥

प्रथमे मण्डले शुक्रो विलम्बी डमरायते ।

पूर्वपिरा दिशो हन्यात् पृष्ठे तेन विलम्बिना ॥77॥

यदि प्रथम मण्डल में शुक्र लम्बायमान होकर अधिक समय तक रहे तो पूर्व और पश्चिम दिशा में शात् करता है ॥77॥

द्वितीयमण्डले शुक्रश्चिरगो मण्डलेरितः ।

हन्यादेशान् धनं तोयं सकलेन विलम्बिना ॥78॥

यदि द्वितीय मण्डल में शुक्र सूर्य से प्रेरित होकर अधिक समय तक रहे तो देश के धन, जल एवं धान्य ना विनाश करता है ॥78॥

तृतीये चिरगो व्याधि मृत्युं सृजति भार्गवः ।

चलितेन विलम्बेन मण्डलोकताइच या दिशः ॥79॥

यदि तृतीय मण्डल में शुक्र अधिक समय तक विचरण करे तो व्याधि और मृत्यु मण्डल की दिशा होती है अर्थात् तृतीय मण्डल की जिस दिशा में अधिक समय तक शुक्र गमन करता है उस दिशा में व्याधि और मृत्यु फल घटित होते हैं ॥79॥

चतुर्थे विचरन् शुक्रो शयी हन्यात् सुयानकान् ।

शस्यशेषं च सृजते निन्दितेन विलम्बिना ॥80॥

चतुर्थ मण्डल में शयनावस्थायत् शुक्र के रहने में अच्छेद वाहनों का विनाश होता है तथा निन्दित विलम्बी शुक्र धान्य का विनाश करता है ॥80॥

पञ्चमे विचरन् शुक्रो दुभिको जनयेत् तदा ।

हन्यात्त्वं मण्डलं देशं क्षोणेनाथ विलम्बिना ॥81॥

क्षीण और विलम्बी शुक्र यदि पंचम मण्डल में विचरण करे तो दुष्मित्य उत्पन्न होता है तथा उस मण्डल और देश का विनाश होता है ॥81॥

यदा तु मण्डले पृष्ठे भार्गवश्चिरगो भवेत् ।

तदा तं मण्डलं देशं हन्ति लम्बेन पाशिना ॥82॥

जब पठ मण्डल में शुक्र अधिक समय तक गमन करता है तो लम्बायमान

पाश के द्वारा उस मण्डल और देश का विनाश करता है ॥८२॥

हीने चारे जनपदान्तिरिक्ते नूपं वधेत् ।

समे तु समतां विन्द्याद्विषमे विषमं वदेत् ॥८३॥

हीनचार—हीन गतिवाला शुक्र जनपद का विनाश, अतिरिक्त—अधिक गतिवाला शुक्र नूप का वध, समगतिवाला शुक्र समता और विषमगति वाला शुक्र विषमता करता है । अर्थात् शुक्र अपनी गति के अनुसार शुभाशुभ फल होता है ॥८३॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां भैत्रमिक्रं तथैव च ।

वर्षसु दक्षिणाद्याषु यदा चरति भार्गवः ॥८४॥

व्याधिश्वेतिश्च दृवृष्टितदा धान्यं विनाशयेत् ।

महार्घ जनमारिश्च जायते नात्र संशयः ॥८५॥

कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, अनुग्राधा, विशाखा, इन नक्षत्रों में, दक्षिणादिदिशाओं में, वर्षाकाल में जब शुक्र गमन करता है, तब निम्न फल घटित होते हैं । उक्त प्रकार के शुक्र में व्याधि, ईति, महामारी, अनावृष्टि या अतिवृष्टि, महंगाई, जनमारी एवं धान्य का नाश विस्तर घटता है । तात्पर्य यह है कि उक्त नक्षत्रों में जब शुक्र शीघ्र गति से गमन करता है या अधिक मन्दगति से गमन करता है, तब उपर्युक्त अशुभ फल घटता है ॥८४-८५॥

ऐतेषामेव मध्येन मध्यमं फलमादिशेत् ।

उत्तरेणोत्तरं विन्द्यात् सुभिक्षं क्षेष्मेव च ॥८६॥

जब उपर्युक्त नक्षत्रों में शुक्र मध्यम गति से गमन करता है, तो मध्यम फल घटता है । उत्तर दिशा में शुक्र के गमन करने से सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥८६॥

मध्यायां च विशाखायां वर्षसु मध्यमस्थितः ।

तदा सम्पद्यते सस्यं समर्घं च सुखं शिवम् ॥८७॥

वर्षाकाल में जब शुक्र मध्यम और विशाखा में मध्यम गति से स्थित रहता है तो धान्य की खूब उत्पत्ति होने के साथ वस्तुओं के भाव में समता, गुण और कल्याण होता है ॥८७॥

पुनर्वसुमाषाढां च याति मध्येन भार्गवः ।

तदा सुवृष्टिञ्च विन्द्यात् व्याधिश्च समुदीर्यते ॥८८॥

1. भैत्रमेंद्र मु० । 2. यह पंक्ति हस्तलिखित प्रणि में नहीं है ।

यदि पुनर्वंशु और पूर्वापादा में शुक्र मध्यम गति से गमन करे तो व्याधि और वर्षा सर्वथा होती है ॥८८॥

आषाढां श्रवणं चैव यदि मध्येन गच्छति ।

कुमारं इच्चैव पीड्येताऽनार्यश्चास्त्रवासिनः ॥८९॥

उत्तरापादा और श्रवण में जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो कुमार, अनार्य और अन्त्यजों को पीड़ा होती है ॥८९॥

प्रजापत्यमाषाढां च यदा मध्येन गच्छति ।

तदा व्याधिश्च चौराश्च पीड्यन्ते दण्डिजस्तथा ॥९०॥

रोहिणी और उत्तरापादा में जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो आपारी, रोगी और चोरों को पीड़ा होती है ॥९०॥

चित्रामेव विशाखां च याम्यमाद्र्दां च रेवतीम् ।

भैत्रे भद्रपदां चैव याति वर्षति भार्गवः ॥९१॥

चित्रा, विशाखा, भरणी, आद्रा, रेवती, अनुराधा और पूर्वभाद्रपद में जब शुक्र गमन करता है तो क्या होता है ॥९१॥

फलगुन्यथ भरण्यां च चित्रवर्णस्तु भार्गवः ।

तदा तु तिष्ठेद् गच्छेद् तु^१ वक्त भाद्रपदं जलम् ॥९२॥

जब विचित्र वर्ण का शुक्र पूर्वाकालगुनी और भरणी में गमन करता है या स्थित रहता है तो भाद्रपद मास में निश्चय से वर्षा होती है ॥९२॥

प्रत्यूषे पूर्वतः शुक्रः पृष्ठतश्च वृहस्पतिः ।

यदाऽन्योऽन्यं न पश्येत् तदा चक्रं परिवर्तते ॥९३॥

धर्मार्थकामा लुप्यन्ते सम्भ्रमो वर्णसंकरः ।

नृपाणां च समुद्घोगो यतः शुक्रसततो जयः ॥९४॥

अवृहिश्च भयं धोरं दुर्भिक्षं च तदा भवेत् ।

आढकेन तु धात्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥९५॥

प्रातःकाल में पूर्व में शुक्र हो और उसके पीछे, वृहस्पति हो और परस्पर में एक-दूसरे को तदेवत हों तो शासनचक्र में परिवर्तन होता है; भर्म, अयं, काम लुप्त हो जाते हैं, वर्णसंकरों में आकुलता व्याप्त हो जाती है और राजाओं की

1. ग्रा० ग०० । 2. वा ध्रुव भाद्रपदं जलम् ग०० । 3. स म०० । 4. प्रथते म०० ।

उद्योग में प्रवृत्ति होती है। क्योंकि जिस ओर शुक्र रहता है, उसी ओर जय होती है। तात्पर्य यह है कि जो नृप शुक्र के सम्मुख रहता है, उसे विजय लाभ होता है। अनावृष्टि, धोर दुष्क्षिण तथा एक आढ़क प्रमाण जल की वर्षा होने से धात्य ग्राहकों के लिए प्रिय हो जाते हैं अर्थात् अनाज का भाव महंगा होता है ॥93-95॥

यदा च पृष्ठतः शुक्रः पुरस्ताच्च बृहस्पतिः ।
यदा लोकयतेऽन्योन्यं तदेव हि फलं तदा ॥96॥

जब शुक्र पीछे हो और बृहस्पति आगे हो और परस्पर दृष्टि भी हो तो भी उपर्युक्त फल वीर्य प्राप्ति होती है ॥96॥

कृत्तिकायां यदा शुक्रः विकृत्य १प्रतिपद्यते ।
एरावणयथे यद्वत् तद्वद् ब्रूयात् फलं तदा ॥97॥

यदि शुक्र कृत्तिका नक्षत्र में खिचा हुआ-सा दिखलायी पड़े तो जो फलादेश शुक्र वा ऐरावणवीथि में शुक्र के गमन करने का है, वही यहाँ पर भी समझना चाहिए ॥97॥

रोहिणीशकटं शुक्रो यदा समभिरोहति ।
चक्रारुढाः प्रजा ज्ञेया महद्भयं विनिर्दिशेत् ॥98॥
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च २चेद्याश्च ३करनाटकाः ।
४चेरा विकल्पकाश्चैव पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥99॥

यदि शुक्र अकटाकार रोहिणी म आगोहण करे तो प्रजा शारान में आरुढ़ रहती है और महान् भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चोल, कर्नाटक, चेदि, चेर और विदर्भ आदि प्रदेश पीड़ा की प्राप्ति होते हैं ॥98-99॥

प्रदक्षिणं यदा याति तदा हिस्ति स प्रजाः ॥
उपघातं बहुविधं वा शुक्रः कुरुते भुवि ॥100॥

जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है तो प्रजा का विनाश एवं पृथ्वी पर नाना प्रकार के उद्ग्रव, उत्पात आदि करता है ॥100॥

संव्यानमूपसेवानो १भवेयं सोमशर्मणः ।
सोमं च सोमजं चैव सोमपाश्वं च हिस्ति ॥101॥

1. प्रविदुश्यते मूः । 2. अर्धाश्च मूः । 3. कर्नाटका मूः । 4. चोल मूः ।

बायीं और भी शुक गमन करे तो शोष और शार्दूलाधारियों के लिए कल्याणप्रद होता है। सोम, सोग से उत्तम और सोमपाश्व की हिसा करता है ॥101॥

वत्सा विदेहजिह्वाश्च १ बसा **२ सद्रास्तथोरथा** ।

३ पीड्यन्ते थे च तद्भवत्ता ४ **५ सन्ध्यानमारोहेत् यथा** ॥102॥

वत्स, विदेह, कुन्तल, बसा, मद्रा, उरण्युर आदि प्रदेश शुक के बायीं और जाने पर पीड़ित होते हैं ॥102॥

अलंकारोपघाताय यदा दक्षिणतो व्रजेत् ।

१ सौभ्ये सुराष्ट्रे च तदा वामगः परिहिसति ॥103॥

जब शुक दक्षिण की ओर से गमन करता है तो अलंकारों का विनाश होता है तथा बायीं ओर से गमन करने पर सुन्दर सुराष्ट्र का घात करता है ॥103॥

आद्री हत्वा निवर्त्तत यदि शुकः कदाचन् ।

२ संग्रामास्तत्र जायन्ते मांसशोणितकर्द्माः ॥104॥

यदि शुक आद्री का घात कर परिवर्तित हो तो युद्ध होने है तथा पृथ्वी में रक्त और मास की वीचड़ हो जाती है ॥104॥

तैलिका: १ सारिकाश्चान्तं चामुष्डामांसिकास्तथा ।

२ आषण्डाः क्रूरकमणिः पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥105॥

उबत प्रकार के शुक के होने गे तेली, भैनिक, ऊंट, भैंग तथा कुची आदि से कठोर क्रूर कार्य करने वाले पीड़ित होते हैं ॥105॥

दक्षिणेन यदा गच्छेद् द्रोणमेघं तदा दिशेत् ।

३ वामगो रुद्रकमणिः भार्गवः परिहिसति ॥106॥

यदि आद्री का घात कर दक्षिण की ओर शुक गमन करे तो एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायीं और शुक गमन करे तो रीढ़कामं—क्रूर कर्मों का विनाश होता है ॥106॥

पुनर्वसुं यदा रोहेद् गाश्च गोजीविनस्तथा ।

४ हासं प्रहासं राष्ट्रे च विद्मर्ति दासकास्तथा ॥107॥

जब शुक पुनर्वसु नक्षत्र में आरोहण करता है तो गाय और गोपाल आदि में

1. जिह्वाश्च मृ० । 2. भीमासा मृ० । 3. गंधाने मास्ते यथा मृ० । 4. गोगिकाश्चान्गा उष्ट्रा माहिषकाश्चान्या । मृ० । 5. ईमिताः मृ० ।

हास-परिहास, आमोद-प्रमोद होता है। विदर्भ और दासों को भी प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद प्राप्त होता है ॥107॥

शम्बुरान् १पुलिन्दकाश्च इवानषण्डांश्च वल्कलान् ।
पीडयेच्च २महासण्डान् शुक्रस्तादृशेन यत् ॥108॥

उक्त प्रकार का शुक्र भील, पुलिन्द, श्वान, नपुसक, वल्कलधारी और अत्यन्त नपुसकों को अत्यन्त पीड़ित करता है ॥108॥

प्रदक्षिणे प्रथाणे तु द्रोणमेकं तदा दिशेत् ।
बामयाने तदा पोडां लूयात्तसर्वकर्मणाम् ॥109॥

पुनर्बंसु का घातकर शुक्र के दाहिनी ओर से प्रथाण करने पर एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा कहनी चाहिए और वायों ओर से प्रथाण करने पर सभी कायों का घात कहना चाहिए ॥109॥

पुष्यं प्राप्तो द्विजान् हन्ति ३पुनर्बंसावपि शिल्पिनः ।
४पुरुषान् धर्मिणश्चापि पीड्यन्ते चोत्तरायणः ॥110॥

पुष्य नक्षत्र को प्राप्त होने वाला उत्तरायण शुक्र द्विज, प्रजावान् और धनुष के शिल्पी और धार्मिक व्यक्तियों को पीड़ित करता है ॥110॥

दङ्गा उत्कल'-वाण्डालाः पार्वतेयाश्च ये नराः ।
इक्षुमन्त्याश्च पीड्यन्ते आद्रीमारोहणं यथा ॥111॥

जब शुक्र आद्री में आरोहण करता है तो वंगवासी, उत्कलवासी चाण्डाल, पहाड़ी व्यक्ति और इक्षुमती नदी के किनारे के निवासी व्यक्तियों को पीड़ा होती है ॥111॥

५मत्स्यभागीरथीनां तु शुक्रोऽश्लेषां यदाऽऽरुहेत् ।
बामगः ६सृजते व्याधि दक्षिणे ७हिसते प्रजाः ॥112॥

जब शुक्र वायें जाता हुआ आश्लेषा में आरोहण करता है तो मत्स्यदेश और भागीरथी के तटनिवासियों को व्याधि होती है और दक्षिण से गमन करता हुआ आरोहण करता है तो प्रजा की हिसाहोती है ॥112॥

मघानां दक्षिणं पाश्वं भिनत्ति यदि भार्गवः ।
आढकेन तदा धान्यं प्रियं विन्यादसंशयम् ॥113॥

1. मांगवधारश्च मू० । 2. भहामू० मू० । 3. प्राज्ञाश्च धनुश्चालिनः गू० । 4. महाला मू० ।

5. दुर्गू- मू० । 6. यदा मू० । 7. पाणीभीमरथीनां मू० । 8. सुबति मू० । 9. हिर्गिन ।

यदि शुक्र मधा नक्षत्र के दक्षिण भाग का भेदन करे तो आठक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य महेगा होता है ॥113॥

**विलम्बेन यदा तिष्ठेन् मध्ये भित्त्वा यदा मधाम् ।
आठकेन हि धान्यस्थ प्रियो भवति ग्राहकः ॥114॥**

जब मधा के मध्य का भेदन कर शुक्र अधिक समय तक रहता है तो आठक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य प्रिय होता—महेगा होता है ॥114॥

मधानामुत्तरं पाश्वं भिनत्ति यदि भार्गवः ।

कोष्ठागाराणि पीड्यन्ते तदा 'धान्यमुष्टिहसन्ति ॥115॥

यदि मधा के उत्तर भाग का शुक्र भेदन करे तो धान्य के लिए हिंसा होती है और कोष्ठागार—खजांची लोग पीड़ित होते हैं ॥115॥

प्राक्षा महान्तः पीड्यन्ते ताम्रवर्णोऽयदा भृणः ।

प्रदक्षिणे विलम्बश्च महदुत्पादयेज्जलम् ॥116॥

जब शुक्र ताम्रवर्ण का होता है तो विद्वान् मनीषी व्यक्ति पीड़ित होते हैं और प्रदक्षिणा में शुक्र विलम्ब करे तो अत्यधिक वर्षा होती है ॥116॥

पूर्वफालगुनीं सेवेत गणिका रूपजीविनीः ।

पीड्येद् वामगः कन्यामुष्टकमर्णि दक्षिणः ॥117॥

पूर्वफालगुनी में शुक्र का बायी ओर से आरोहण हो तो रूप से आजीविका करने वाली गणिकाएँ पीड़ित होती हैं और दाहिनी ओर से आरोहण हो तो उष्मकार्य करने वाले गाड़ित होते हैं ॥117॥

शब्दरान् प्रतिलिङ्गानि पीड्येदुत्तरां श्रितः ।

वामगः स्थविरान् हन्ति दक्षिणः स्त्रीनिषीड्येत् ॥118॥

उत्तरफालगुनी नक्षत्र में बायी ओर से शुक्र आरोहण करे तो शब्दर, व्रह्मचारी, स्थविर—निवासी राजा को पीड़ा होती है तथा दाहिनी ओर से आरोहण करने पर स्त्रियों को पीड़ा होती है ॥118॥

काशांश्च रेवतोहस्ते पीड्येत् भार्गवः स्थितः ।

दक्षिणे चोरघाताद्य वामश्चोरजयावहः ॥119॥

दाहिनी ओर से रेवती ओर हस्त नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो काश और चोरों का बात करता है और बायी ओर से स्थित होने पर चोरों को जय-लाभ देता है ॥119॥

1. धान्यमुष्टिहसन्ति मु० । 2. लादा नूपा० मु० । 3. महान् मु० । 4. गन्तु० ।

चित्रस्थः पीड्येत् सर्वे विचित्रं गणितं लिपिम् ।
कोशलान् मेखलान् शिल्पं द्यूतं कनकवाणिजान् ॥120॥

चित्रा नक्षत्र स्थित शुक्र गणित, लिपि, साहित्य आदि सभी का बात करता है। कला-कौशल, द्यूत, स्वर्ण का व्यापार आदि को पीड़ित करता है ॥120॥

आरूढपत्त्वान् हन्ति १मारीचोदारकोशलान् ।
मार्जारिनकुलांशचैव कक्षमार्गं च पीड्यते ॥121॥

चित्रा नक्षत्र पर आरूढ़ शुक्र पत्त्वा, सौराष्ट्र, कौशल का विनाश करता है और कक्षमार्ग में स्थित होने पर मार्जार-बिल्ली और तेवलों को पीड़ित करता है ॥121॥

२चित्रमूलाश्च त्रिपुरां वातत्वतस्थापि च ।

वामगः सूजते व्याधि दक्षिणो वर्णिकान् वधेत् ॥122॥

यदि वाम भाग से गमन करता हुआ शुक्र चित्रा के अन्तिम चरण में कुछ समय तक अपना विस्तार करे तो व्याधि की उत्पत्ति एवं दक्षिण ओर से गमन करता हुआ अन्तिम चरण में स्थित हो तो व्यापारियों का विनाश करता है ॥122॥

स्वातौ दशाणीश्चेति सुराष्ट्रं चोपहिसति ।

आरूढो नायकं हन्ति वामो १वामं तु दक्षिणः ॥123॥

स्वाति नक्षत्र में शुक्र गमन करे तो दशाणी और सौराष्ट्र की हिस्सा करता है तथा वायीं और से आरूढ़ होने वाला शुक्र वायीं और के नायक और दाहिनी और से आरूढ़ होने वाला शुक्र दाहिनी और के नायक का वध करता है ॥123॥

विशाखायां समारूढो १वरसामन्त जायते ।

अथ विन्द्यात् महापीडां २उशना रुद्धते यदि ॥124॥

यदि विशाखा नक्षत्र में शुक्र आरूढ़ हो तो श्रेष्ठ सामन्त उत्पन्न होते हैं और शुक्र आदि लक्षण करे -च्युत हो तो महा पीड़ा होती है ॥124॥

दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति ३पश्चिमो पाक्षिणान् यथा ।

अग्निकमर्णि वामस्थो हन्ति सर्वाणि भार्गवः ॥125॥

दक्षिणस्थ शुक्र मृगो—पशुओं का विनाश करता है, पश्चिमस्थ पक्षियों का विनाश और वामस्थ समस्त अग्नि कार्यों का विनाश करता है ॥125॥

1. वाणिगप् मु० । 2. शितोष्प लक्षकोशलान् मु० । 3. चित्रचूलां निवृपूर्णि मु० ।
4. अणिजां मु० । 5. वातेऽस्तु मु० । 6. वामसारी अवेनमः मु० । 7. पीड्यंदुश्यमासार्या मु० । 8. पक्षिणश्चलितो वतः मु० ।

मध्येन प्रज्वलन् गच्छन् विशाखामश्वजे नृपम् ।

उत्तरोऽवन्तिज्ञान् हन्ति स्त्रीराज्यस्थांश्च दक्षिणः ॥126॥

यदि शुक्र प्रज्वलित होता हुआ उत्तर में विशाखा और अश्विनी नक्षत्र के मध्य से गमन करता है तो अवन्ति देश में उत्पन्न व्यक्तियों का धात एवं दक्षिण से गमन करता है तो स्त्री राज्य के व्यक्तियों का विनाश करता है ॥126॥

अनुराधास्थितो शुक्रो यायिनः प्रस्थितान् वधेत् ।

मर्दते च मिथो भेदं दक्षिणे न तु वामगः ॥127॥

अनुराधा स्थित शुक्र यायी - आकर्षण करने के लिए प्रस्थान करने वालों के ब्रह्म का संकेत करता है । यदि अनुराधा नक्षत्र का शुक्र मर्दन करे तो परस्पर में प्रतमेद होता है । यह फल दक्षिण की ओर का है, वायीं ओर का नहीं ॥127॥

मध्यदेशं तु दुर्भिक्षं जयं विनाशादुत्थे ततः ।

फलं प्राप्यन्ति चारेण भद्रबाहुवचो यथा ॥128॥

यदि अनुराधा नक्षत्र में शुक्र का उदय हो तो मध्य देश में दुर्भिक्ष और जय होती है । भद्रबाहु द्वामी का ऐसा वचन है कि शुक्र का फल उसके विचरण के अनुसार प्राप्त होता है ॥128॥

ज्येष्ठास्थः पीडयेऽज्येष्ठान् इदवाकून् गन्धमादज्ञान् ।

मर्दनारोहणं व्याधि मध्यदेशे ततो वधेत् ॥129॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में स्थित शुक्र इदवाकुवंश तथा गन्धमादग वर्यत पर स्थित वडे व्यक्तियों को पीड़ित करता है । भद्रन और आरोहण करने वाला शुक्र विनाश करता है तथा मध्य देश के भत-मतान्तरों का निराकरण करता है ॥129॥

दक्षिणः क्षेमकृज्जेयो वामगस्तु भयंकरः ।

प्रसन्नवर्णो विमलः स विज्ञेयो सुखंकरः ॥130॥

दक्षिण वीर और ज्येष्ठा नक्षत्र में गमन करने वाला शुक्र क्षेम करने वाला होता है और वायीं ओर से गमन करने वाला शुक्र भयंकर होता है तथा निर्मल श्रेष्ठवर्ण का शुक्र गुणवत्ता द्वारा द्वारा होता है ॥130॥

हन्ति मूलफलं मूले कन्दानि च वनस्पतिम् ।

औषध्योर्मलयं चाऽपि माल्यकाष्ठोपजीविनः ॥131॥

मूल नक्षत्र में स्थित शुक्र वनस्पति के फल, मूल, कन्द, औषधि, चन्दन एवं

1. वीरज्ञान मु० । 2. इदवाकुवंशान्तरादिग्रन्थ मु० । 3. हन्ति मु० । 4. माल्य

वधेत मु० । 5. प्रशस्ता मु० । 6. गुणवत्ता मु० । 7. कन्दानय मु० ।

चंदन-लकड़ी आदि के द्वारा आजीविका करने वालों का विनाश करता है ॥131॥

यदाऽरुहेत् प्रमदेत् कुटुम्बा भूश्च दुःखिताः ।

कन्दमूलं फलं हन्ति दक्षिणो वामगो जलम् ॥132॥

दक्षिण की ओर से गमन करता हुआ शुक्र जब मूल नक्षत्र का आरोहण या प्रमदेन करे तो कुटुम्ब, भूमि आदि दुःखित होती है, कन्द, मूल, फल का विनाश होता है और बायीं ओर से गमन करता हुआ जल का विनाश करता है ॥132॥

'वामभूमिजलेचारं आषाढस्यः प्रपीडयेत् ।

‘शान्तिकरश्च भैघश्च तालोरारोह-मर्दने ॥133॥

५ अषाढ़ा नक्षत्र में स्थित शुक्र सभी भूमि और जलचर आदि को पीड़ा देता है और शुक्र के आरोहण और मर्दन करने से शान्तिकर जल नी वर्षा होती है ॥133॥

दक्षिणः स्थविरान् हन्ति वामगो भयमावहेत् ।

सुवर्णो मध्यमः स्निग्धो भार्गवः सुखमावहेत् ॥134॥

दक्षिण की ओर से गमन कर पूर्वायाढ़ा नक्षत्र में विचरण करने वाला शुक्र स्थावरों—निवासी राजाओं का घात करता है और बायीं ओर गमन करने वाला शुक्र भय उत्पन्न करता है तथा गुन्दर, स्निग्ध मध्यम से गमन करने वाला शुक्र सुख उत्पन्न करता है ॥134॥

यद्युत्तरासु तिष्ठेच्च पाञ्चालान् सालवत्रयान् ।

पीडयेत्सद्येद्द्वौहाद्विश्वासाद्भेदकृत्या ॥135॥

यदि उत्तरायाढ़ा नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो पाञ्चाल तथा तीनों मालवों की पीड़ित, गर्दित, द्रोहित एवं विश्वास के कारण भेद उत्पन्न करता है ॥135॥

अभिजित्स्थः कुरुत् हन्ति कौरव्यान् क्षत्रियांस्तथा ।

‘पश्वः साधवश्चापि पीडयन्ते रोह-मर्दने ॥136॥

अभिजित् नक्षत्र पर जब शुक्र स्थित रहता है तो कौरवों तथा क्षत्रियों का मर्दन करता है तथा अभिजित् नक्षत्र में आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पशु और साधुओं को पीड़ित करता है ॥136॥

यदा प्रदक्षिणं गच्छेत् पञ्चत्वं कुरुमादिशेत् ।

वामतो गच्छमानस्तु ब्रह्मणानां भयंकरः ॥137॥

इस नक्षत्र के लिए दक्षिण की ओर से जब शुक्र गमन करता है तो कुरुवंशी

1. भूमिजलवशान् यु० । 2. वातकेषांश्च भर्तीश्च यु० । 3. नद्यश्च यु० ।

क्षत्रियों के लिए मृत्यु एवं बायीं और से जब गमन करता है तो आहुणों के लिए भयंकर होता है ॥137॥

**सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च श्रवणस्थः प्रपीडयेत् ।
वंगांगमगधान् हन्यादारोहणप्रमर्दने ॥138॥**

यदि शुक्र श्रवण नक्षत्र में स्थित हो तो सौरसेन और मत्स्य देश को पीड़ित करता है । श्रवण नक्षत्र में आरोहण और प्रमर्दन करने से शुक्र वंग, अंग और मगध का विनाश करता है ॥138॥

**दक्षिणः श्रवणं गच्छेद् द्रोणभेदं निवेदयेत् ।
वामगस्तूपघाताय नृणां च प्राणिनां तथा ॥139॥**

यदि दक्षिण की ओर से शुक्र श्रवण नक्षत्र में जाय तो एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायीं और से गमन नारे तो मनुष्य और पशुओं के लिए प्राप्तक होता है ॥139॥

**धनिष्ठास्थो धनं हन्ति समृद्धांश्च कुटुम्बिनः ।
पाञ्चालान् सूरसेनांश्च मत्स्यानारोहमर्दने ॥140॥**

यदि धनिष्ठा नक्षत्र में शुक्र गमन करे तो समृद्धशाली, धनिक कुटुम्बियों के घन का अपहरण करता है । धनिष्ठा नक्षत्र के आरोहण और पर्दन करने पर शुक्र पाञ्चाल, सूरसेन और मत्स्य देश का विनाश करता है ॥140॥

**दक्षिणो धनिनो हन्ति वामगो व्याधिकूद् भवेत् ।
मध्यगः सुप्रसन्नश्च सम्प्रशस्यति भार्गवः ॥141॥**

दक्षिण की ओर गमन करने वाला शुक्र धनिकों का विनाश और बायीं और से गमन करने वाला शुक्र व्याधि करने वाला होता है । मध्य से गमन करने वाला शुक्र उत्तम होता है तथा सुख और शान्ति की वृद्धि करता है ॥141॥

**शलाकिनः शिलाकूतान् वाहणस्थः प्रहिसति ।
कालकूटान् कुनाटांश्च हन्यादारोहमर्दने ॥142॥**

शतभिषा नक्षत्र में स्थित शुक्र शलाकी और शिलाकूतों की हिंसा करता है । इस नक्षत्र में आरोहण और पर्दन करने वाला शुक्र कालकूट और कुनाटों की हिंसा करता है ॥142॥

**दक्षिणो नीचकर्मणि हिसते नीचकर्मणः ।
वामगो वाहणं व्याधि ततः सूजति भार्गवः ॥143॥**

दक्षिण से गमन करने वाला शुक्र नीच कार्य और नीच कार्य करने वालों का

हन्यादशिवनीप्राप्तः सिन्धुसौबीरमेव च ।
मत्स्यांश्च कुनटान् रुढौ मर्दमानश्च हिसति ॥150॥

अश्विनी नक्षत्र में स्थित शुक्र सिन्धु और सौबीर देश का विनाश करता है। इस नक्षत्र का आरोहण और मर्दन करने से शुक्र मत्स्य और कुनटों का घात करता है ॥150॥

अश्वपष्ठोपजीविनो दक्षिणो हन्ति भार्गवः ।
तेषां व्याधि तथा मृत्युं सूजत्यथ तु वामगः ।

दक्षिणस्थ भार्गव—शुक्र अश्व-घोड़ों के व्यापारी और दुकूनदारों का घात करता है और वामग शुक्र उनके लिए व्याधि और मृत्यु करता है ॥151॥

भूत्यकरान् यदनांश्च भरणीस्थः प्रपीडयेत् ।
किरातान् मद्रदेशानामाभीरान्मर्द-रोहणे ॥152॥

भरणी स्थित शुक्र भूत्यकर्म करने वालों एवं यदनों—मुसलमानों को पीड़ा करता है। इस नक्षत्र का मर्दन और रोहण करने वाला शुक्र किरात, मद्र और आभीर देश का घात करता है ॥152॥

प्रदक्षिणं प्रयातश्च द्रोणं मेघं निवेदयेत् ।
वामगः संम्प्रथातस्य रुद्रकमणि हिसति ॥153॥

इस नक्षत्र में दक्षिण की ओर गया शुक्र एक द्रोण प्रमाण मेघों की वर्षा करता है और वामगी ओर गया शुक्र रुद्र कायों का विनाश करता है ॥153॥

एवमेतत् फलं कुर्यादिनुचारं तु भार्गवः ।
पूर्वतः पृष्ठतश्चापि समाचारो भवेत्तद्धुः ॥154॥

इस प्रकार शुक्र आगे विचरण का फल देता है। पूर्व से और पीछे से शुक्र के गमन का मंधिष्ठ फल बहा गया है ॥154॥

उदये च प्रवासे च ग्रहाणो कारणं रविः ।
प्रवासं छादयन्कुर्यात् मुञ्चमानस्तथोदयम् ॥155॥

ग्रहों के उदय और प्रवास में कारण सूर्य है। यहाँ प्रवास का अभिप्राय ग्रहों के अस्त होने भे है। जब सूर्य ग्रहों को अच्छादित करता है तो यह उनका अस्त कहा जाता है और जब छोड़ता है तो उदय माना जाता है ॥155॥

1. भार्गवः मू० । 2. समाचारं तु यत्तद्धुः मू० ।

**प्रवासाः पञ्च शुक्रस्य पुरस्तात् पञ्च पृष्ठतः ।
मार्गे तु मार्गसन्ध्याश्च वक्ते वीथीसु निदिशेत् ॥156॥**

शुक्र के सम्मुख और पीछे पाँच-पाँच प्रकार के अस्त हैं। 'मार्गे' होने पर सन्ध्या होती है तथा वक्ती का कथन भी वीथियों में अवगत करना चाहिए ॥156॥

**क्रैमासिकः प्रवासः स्यात् पुरस्तात् दक्षिणे पथि ।
पञ्चसप्ततिर्मध्ये स्यात् पञ्चाशीतिस्तथोत्तरे ॥157॥**

**चतुर्विशत्यहानि स्युः पृष्ठतो दक्षिणे पथि ।
मध्ये पञ्चदशाहानि षड्हान्युत्तरे पथि ॥158॥**

दक्षिण मार्ग में शुक्र का सम्मुख क्रैमासिक अस्त है, मध्य में 75 दिनों का और उत्तर में 85 दिनों का अस्त होता है। दक्षिण मार्ग में पीछे की ओर 24 दिनों का, मध्य में पन्द्रह दिनों का और उत्तर मार्ग में 6 दिनों का अस्त होता है ॥157-158॥

**ज्येष्ठानुराधयोश्चैव द्वी मासौ पूर्वतो विदुः ।
अत्तरेषाधारात् तु जौ च मध्ये दक्षते बुधैः ॥159॥**

ज्येष्ठा और अनुराधा में पूर्व की ओर से द्विमास—दो महीनों की ओर पश्चिम से आठ रात्रि की सन्ध्या विदानों द्वारा प्रतिपादित की जाती है ॥159॥

**मूलादिदक्षिणो मार्गः फालगुन्यादिषु मध्यमः ।
उत्तरश्च भरण्यादिर्जघन्यो मध्यमोऽन्तिमौ ॥160॥**

मूलादि नक्षत्र में दक्षिण मार्ग, पूर्वफालगुनी आदि नक्षत्रों में मध्यम और अन्ती आदि नक्षत्र में उत्तर मार्ग होता है। इनमें प्रथम मार्ग जबन्ध है और अन्तिम दोनों मध्यम हैं ॥160॥

**वामो वदेत् यदा खारी विशकां त्रिशकामपि ।
करोति नागवीथीस्थो भार्गदश्चारभार्गः ॥161॥**

नागवीथि में विचरण करने वाला वामगत शुक्र दण, बीस और तीस खारी अन्त का भाव करता है ॥161॥

**विशका त्रिशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा ।
वामे शुक्रे तु विज्ञेया गजवीथीसुपागते ॥162॥**

1. द्विमास मू० । 2. वामोऽपि दशवां मू० । 3. ऋग्यंतः मू० ।

गजबीथि में विचरण करने वाला वाम शुक्र बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥162॥

ऐरावणपथे त्रिशत्त्वारिशदथापि वा ।

पंचाशीतिका ज्ञेया खारी तुल्या तु भार्गवः ॥163॥

ऐरावणबीथि में विचरण करने वाला शुक्र तीस, चालीस और पचासी खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥163॥

त्रिशका त्रिशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा ।

१ब्योमगो वौथिमागम्य करत्यर्थेण भार्गवः ॥164॥

बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव ब्योमबीथि में गमन करने वाला शुक्र करता है ॥164॥

चत्वारिंशत् पंचाशद् वा षष्ठि वाऽथ समादिशेत् ।

जरदग्वपथं प्राप्ते भार्गवे खारिसंजया ॥165॥

जरदग्व बीथि को प्राप्त होने वाला शुक्र चालीग, पचास और साठ खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥165॥

सप्ततिं चाथ वाऽशीति नवति वा तथा दिशेत् ।

अजबोधीगते शुक्रे भद्रवाहुवचो यथा ॥166॥

अजबोधि को प्राप्त होने वाला शुक्र सन् २, अस्सी अथवा नव्ये खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है, ऐसा भद्रवाहु स्वामी का वचन है ॥166॥

अंविशत्यशीतिकां खारि शतिकामप्यथा दिशेत् ।

मृगबोधोमुपागम्य विवर्णे भार्गवो यदा ॥167॥

जब शुक्र विवर्ण होकर मृगबीथि को प्राप्त करता है तो वीस, अस्सी अथवा सो खारी प्रमाण अन्न का भाव होता है ॥167॥

विच्छिन्नविघमृणालं न च पुष्पं कलं यदा ।

वैश्वानरपथं प्राप्तो यदा वामस्तु भार्गवः ॥168॥

जब वामस्थ शुक्र वैश्वानर बीथि में गमन करता है तब कमल का डण्डल, विसपत्र, पुष्प और फल उल्लं नहीं होते हैं ॥168॥

1. शामगो मृ० । 2. नवोत्तरं न भायं व मृ० । 3. शतिका दिशेत् खारी, त्रिशता वा ददा भवेत् मृ० ।

**अनुलोमो विजयं शूते प्रतिलोमः पराजयम् ।
उदयास्तमने शुक्रो बुधश्च कुरुते तथा ॥169॥**

शुक्र और बुध अनुलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर विजय करते हैं और प्रतिलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर पराजय ॥169॥

**मार्गमेकं समाश्चित्य सुभिक्षेमदस्तथा ।
उशना दिशतितरां सानुलोमो न संशयः ॥170॥**

शुक्र रोधी दिश में एक-मा ही गमन करता है तो निस्सन्देह सुभिक्ष और कल्याण देता है ॥170॥

**यस्य देशस्य नक्षत्रं शुक्रो हन्याद्विकारगः ।
तस्मात् भयं परं विन्यात्वतुमासि न चापरम् ॥171॥**

विशु द्वाकर शुक्र जिस देश के नक्षत्र का धात करता है, उस देश को, उस धातित होने वाले दिन से चार गहनीं तक भय होता है, अन्य कोई दुर्घटना नहीं होती है ॥171॥

**शुक्रोदये ग्रहो याति प्रवासं यदि कश्चन ।
क्षेमं सुभिक्षभाच्छ्टे² सर्ववर्षसमस्तदा ॥172॥**

शुक्र के उदय होने पर यदि कोई ग्रह अस्त हो जाय तो सुभिक्ष, कल्याण और गमयानुकूल यथाट वर्षा होती है तथा वर्ष भर एक-मा आनन्द रहता है ॥172॥

**बलक्षोभो भवेच्छ्यामे पृथ्युः कपिलकृष्णयोः ।
नौले गवां च मरणं रुक्षे वृष्टिक्षयः क्षुधा ॥173॥**

यदि शुक्र श्यामवर्ण का हो तो वस शुद्ध होता है । पिंगल और वृग्ण वर्ण का शुक्र हो तो मृत्यु, नीलवर्ण का होने पर गायों का मरण और रुक्ष होने पर वर्षा का नाश तथा क्षुधा की वेदना का मूचक होता है ॥173॥

**बाताक्षिरोगो मात्तिज्ञेष्ठं पीते शुक्रे उवरो भवेत् ।
कृष्णे विचित्रे वर्णं च क्षयं लोकस्य निदिङ्गेत् ॥174॥**

शुक्र के मंजिष्ठ वर्ण होने पर बात और अक्षिरोग, पीतवर्ण होने पर उवर और विचित्र कृष्ण वर्ण होने पर लोक का क्षय होता है ॥174॥

1. तेऽपि विष्णुमाल्याणि पृ० । 2. मात्त्वानि पृ० । 3. गहन्तरं च नन्दा पृ० ।

3. तु पृ० ।

समल्लूतीयभूर्णे च आरहेत् त्वरिती यजा ।

नक्षत्राणि च चत्वारि १प्रवासमाहृश्चरेत् ॥175॥

जब शुक्र शीत्र ही आकाश के तृतीय भाग का आरोहण करता है तब चार नक्षत्रों में प्रवास--- अस्त होता है ॥175॥

एकोनविंशदृक्षाणि मासानष्टी च भार्गवः ।

चत्वारि पृष्ठतश्चारं प्रवासं कुरुते ततः ॥176॥

जब शुक्र आठ महीनों में उन्नीस नक्षत्रों का भोग करता है, उग मध्य पीछे के चार नक्षत्रों में प्रवास करता है ॥176॥

द्वादशोकोनविंशद्वा दशाहं स्वैव भार्गवः ।

एकैकस्मिन्श्च नक्षत्रे चरमाणोऽवतिष्ठति ॥177॥

शुक्र एक नक्षत्र पर बारह दिन, दग दिन और उन्नीण दिन तक विचरण करता है ॥177॥

वक्तं याते द्वादशाहं समक्षेत्रे दशाह्निकम् ।

अषेषु पृष्ठतो विन्द्यात् एकविंशभौर्निशम् ॥178॥

वक्त मासे में - उर्वरा होने पर शुक्र को बारह दिन और राम श्वेत्र में दस दिन एक नक्षत्र के भोग में वर्गीत हैं। पीछे की ओर गमन करने में उन्नीस दिन एक नक्षत्र के भोग में व्यतीत होते हैं ॥178॥

पूर्वतः समचारेण पञ्च पक्षेण भार्गवः ।

तदा करोति कौशल्यं भद्रबाहुवचो यथा ॥179॥

पूर्व में गमन करता हुआ शुक्र गाँव पथ अर्थात् ७५ दिनों में कांणव करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वार्गी का वचन है ॥179॥

ततः पंचदशक्षर्णिणि १सञ्चरत्युशना पुनः ।

२डभिस्मीस्तती ज्ञेयः प्रवासं पूर्वतः ३परम् ॥180॥

इसके पश्चात् शुक्र पन्द्रह नक्षत्र त्वरिता है और हटता है। उग प्रकार छः महीनों में पुनः प्रवास को ग्राहत हो जाता है ॥180॥

द्वाशीर्ति चतुराशीर्ति ४डशीर्ति च भार्गवः ।

अबते समेषु भागेषु प्रवासं कुरुते समम् ॥181॥

1. वायाम्याणः २०३८ दृढः । 2. द्वितीय गृहः । 3. द्वात्रांश्याणः १६८ मूः । 4. पनाह हीति कृष्णाणि, मूः । 5. ग्रहयम्यान्युष्मद्वृत्त मूः । 6. यजः गृहः ।

82, 84 और 86 दिनों में समान भाग देने पर शुक्र का समान प्रवास आजाता है ॥181॥

द्वादशाहुं च विशाहुं दशपञ्च च भार्गवः ।
नक्षत्रे तिष्ठते त्वेवं समचारेण पूर्वतः ॥182॥

बारह दिन, बीस दिन और पन्द्रह दिन शुक्र एक नक्षत्र पर पूर्व दिशा से वितरण करने पर निवास करता है ॥182॥

पाणु वातं रजो धूमं शीतोष्णं वा प्रवर्षणम् ।
विद्युदुल्काश्च कुरुते भार्गवोऽस्तमनोदये ॥183॥

शुक्र का अग्नि होना धूनि, वर्षा, धूम, गर्मी और ठाढ़क का पड़ना, विद्युत्पात और उल्कापात आदि फलों को करता है ॥183॥

सितकुसुमनिभस्तु भार्गवः प्रचलति वीथीषु¹ सर्वशो यदा वै ।
घटगूहजलपोतस्थितोऽभूद् बहुजलकृच्च ततः सुखदशचारु ॥184॥

श्वेत पुण्यों के समान वर्ण वाला शुक्र वीथियों में गमन करता है, तो निश्चय से गभी और खूब जलवृष्टि होती है तथा वर्ष सुख देने वाला और आनन्ददायी व्यतीत होता है ॥184॥

अत ऊद्धवं प्रवक्ष्यामि वक्रं चारं निबोधत ।
भार्गवस्य समासेन तथ्यं निर्गन्धभाषितम् ॥185॥

इसके पश्चात् शुक्र के वक्रार या निर्गण्ड संक्षेप में किया जाता है, जैसा कि निर्गन्ध मुनियों ने वर्णन किया है ॥185॥

पूर्वेण विशकृक्षाणि 'पश्चिमेकोनविशतिः ।
चरेत् प्रकृतिचारेण समं 'सीमानिरीक्षयोः ॥186॥

गीमा निरोक्षण में स्वाभाविक गति गे शुक्र पूर्व में बीस नक्षत्र और पश्चिम में उन्मीग नक्षत्र गमन करता है ॥186॥

एकविशं यदा गत्वा याति विशतिमं पुनः ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं विकृतं भवेत् ॥187॥

अस्त काल में इक्कीसवें नक्षत्र तक पहुँचकर शुक्र एक बीसवें नक्षत्र पर आता है, इसी लोटने नी गति को उम्मा विशुद्ध वक्र कहा जाता है ॥187॥

1. गर्विंशतिकदः, १० ; 2. पश्चिमे म० ; 3. ईनानिरीक्षयोः म० ।

विशति तु यदा गत्वा पुनरेकोनविशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले वायव्यं वक्षमुच्यते ॥194॥

जब शुक्र अस्तकाल में दीप्तिवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे वायव्यवक कहते हैं ॥194॥

वायुवेगसमां विन्द्यान्महीं वातसमाकुलाम् ।
१विलष्टामत्वेन जलेन जनेनान्येन सर्वशः ॥195॥

उक्त प्रकार के वायव्यवक में पृथ्वी वायु से परिपूर्ण हो जाती है तथा वायु का जोर अत्यधिक रहता है, अल्प बर्षा होने से पृथ्वी जल से परिपूर्ण हो जाती है तथा अन्य राष्ट्र के द्वारा प्रदेश आकाश हो जाता है ॥195॥

एकविशति यदा गत्वा पुनरेकोनविशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले भस्म तद् वक्षमुच्यते ॥196॥

अस्तकाल में यदि शुक्र इक्कीसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे भस्मवक कहते हैं ॥196॥

ग्रामाणां नगराणां च प्रजानां च दिशो दिशम् ।
नरेन्द्राणां च चत्वारि भस्मभूतानि निदिशेत् ॥197॥

इस प्रकार के वक्त में ग्राम, नगर, प्रजा और राजा ये चारों भस्मभूत हो जाते हैं अर्थात् वह वक्त आने नामानुसार फल देता है ॥197॥

एतानि पञ्च वक्ताणि कुरुते यानि भार्गवः ।
अतिचारं प्रवक्ष्याभि फलं यच्चास्य किञ्चन ॥198॥

इस प्रकार शुक्र के पाँच-पाँच वक्तों का विस्तार किया गया है। अब अतिचार के किंचित् फलादेश के साथ वर्णन किया जाता है ॥198॥

यदाऽतिक्रमते चारमुशना दारुणं फलम् ।
तदा सूजति लोकस्य दुःखवलेशभयावहम् ॥199॥

यदि शुक्र अपनी गति वा अतिक्रमण करे तो यह उसका अतिचार कहलाता है, इसका फल संसार को दुःख, क्लेश, भय आदि होता है ॥199॥

तदाऽन्योन्यं तु राजानो ग्रामाश्च नगराणि च ।
समयुक्तानि बाधन्ते नष्टव्यम-जयाथिनः ॥200॥

1. विलष्टा मात्वाद्यन ग्रामिन प० । 2. धार्घनि प० । 3. नष्टव्यम् प० ।

शुक्र के अतिचार में राजा ग्राम और नगर धर्म से च्युत होकर जय की अभिलाषा से परस्पर में दीड़ लगाते हैं अर्थात् परस्पर में संवर्पनत होते हैं ॥200॥

धर्मर्थकामा लुप्यन्ते जायते वर्णसंकरः ।

शस्त्रेण संक्षयं विन्द्यान्महाजनगतं तदा ॥201॥

राष्ट्र में धर्म, अर्थ और काम लुप्त हो जाते हैं और सभी धर्म अस्त होकर वर्णसंकर हो जाते हैं तथा शस्त्र द्वारा अत्र-विनाश होता है ॥201॥

मित्राणि स्वजनाः पुत्रा गुरुद्वेष्या जनास्तथा ।

जहृति प्राणदण्डश्च कुरुते तादृशेन यत् ॥202॥

शुक्र के अतिचार में लोगों की प्रवृत्ति इस प्रकार की हो जाती है जिसमें वे आपस में हेष-भाव करने लगते हैं तथा मिथ, कुटूम्बी, पुत्र, भाई, गुरु आदि भी द्वेष में रत रहते हैं । उगका परिणाम यह होता है कि अगते वर्ण—जाति मर्यादा एवं प्राणों का त्याग कर देते हैं । तात्पर्य यह है कि दुराचार की प्रवृत्ति वढ़ जाने से जाति-मर्यादा का लोप हो जाता है ॥202॥

विलीयन्ते च राष्ट्राणि दुर्भिक्षेण भयेन च ।

चक्रं प्रवर्तते दुर्ग भार्गवस्यातिचारतः ॥203॥

शुक्र के अतिचार में दुर्भिक्ष और भय गे गान्त्र विलीन हो जाते हैं और दुर्ग के ऊपर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा होती है तथा यह अन्य चक्र शायन के अधीन हो जाता है ॥203॥

ततः श्मशानभूतास्थिकृष्णभूता भही तदा ।

वसा-रुधिरसंकुला काकगृध्रसमाकुला ॥204॥

पृथ्वी श्मशान भूमि बन जाती है, गुरुद्वारों की भग्न गे कृष्ण द्वी जाती है तथा माम, रुधिर और चर्वी गे युक्त होने के कारण काक, शृगाल और गृद्धों गे युक्त हो जाती है ॥204॥

वक्राण्युक्तानि सर्वाणि फलं यच्चातिचारकम् ।

वक्रचारं प्रवक्ष्यामि पुनरस्तमनोदयात् ॥205॥

जो फल सभी प्रकार के वक्रों का कहा गया है, वह अतिचार में भी घटित होता है । अब अस्तकाल में पूनः वक्रचार का निरूपण करते हैं ॥205॥

**वैश्वानरपथं प्राप्तः पूर्वतः प्रविशेद यदा ।
षडशीति तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥206॥**

जब शुक्र वैश्वानरपथ में पूर्व नी ओर से प्रवेश करता है तो 86 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥206॥

**मृगवीथी १फ़लः प्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
चतुरशीति तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥207॥**

यदि शुक्र मृगवीथि को दुवारा प्राप्त होकर अस्त हो तो 84 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥207॥

**अजवीथिसनुप्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
अशोति षडहानि तु गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥208॥**

यदि शुक्र अजवीथि को पुनः प्राप्त कर अस्त हो तो 86 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥208॥

**जरदगवपथप्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
सप्तति पञ्च वाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥209॥**

यदि शुक्र जरदगवपथ को प्राप्त होकर प्रवास कर तो 75 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥209॥

**गोवीथी समनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
सप्तति तु तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥210॥**

गोवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 70 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥210॥

**वृषवीथिसनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
पञ्चषष्ठि तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥211॥**

वृषवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 65 दिनों के पश्चात् धीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥211॥

**एरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
षष्ठि तु स तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥212॥**

एरावणवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 60 दिनों के पश्चात् धीछे

की ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१२॥

गजबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

पंचाशीति तदाऽहानि गत्वा दृश्येत् पूष्ठतः ॥२१३॥

गजबीथि को पुनः प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ४० दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१३॥

नागबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

पंचपञ्चाशलदाऽहानि गत्वा दृश्येत् पूष्ठतः ॥२१४॥

नागबीथि को पुनः प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ५५ दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१४॥

वैश्वानरपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

चतुर्विशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत् पूर्वतः ॥२१५॥

वैश्वानर पथ को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो २४ दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१५॥

मृगबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

द्वार्दिष्टिति तदाऽहानि गत्वा दृश्येत् पूर्वतः ॥२१६॥

शुक्र जब मृगबीथि को पुनः प्राप्त होकर अस्त हो तो २२ दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१६॥

अजबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

तदा विश्विराक्षेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥२१७॥

शुक्र जब अजबीथि को पुनः प्राप्त होकर अस्त हो तो २० दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥२१७॥

जरदगवपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

तदा सप्तदशाहानि गत्वा दृश्येत् पूर्वतः ॥२१८॥

जब शुक्र जरदगवपथ को प्राप्त होकर अस्त होता है तो १७ दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥२१८॥

गोवीथीं समनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

चतुर्दशदशाहानि गत्वा दृश्येत् पूर्वतः ॥२१९॥

गोवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो चौदश दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥२१९॥

वृषबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

तदा द्वादशरात्रेण गत्वा दृश्येत् पूर्वतः ॥220॥

वृषबीयि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 12 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥220॥

ऐरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

तदा स दशरात्रेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥221॥

ऐरावणबीयि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 10 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥221॥

गजबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

अष्टरात्रं तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥222॥

गजबीयि को प्राप्त होकर यदि शुक्र अस्त हो तो अष्ट रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥222॥

नागबीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।

षडहं तु तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥223॥

जब नागबीयि को पुनः प्राप्त होकर शुक्र अस्त हो तो 6 दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥223॥

एते प्रवासाः शुक्रस्य पूर्वतः पृष्ठस्तस्था ।

यथाशास्त्रं समुद्दिष्टा वर्ण-पाकी निवेदित ॥224॥

शुक्र के ये प्रवास—अस्त पूर्व और पृष्ठ से यथाशास्त्र प्रतिपादित किये गये हैं। इसके वर्ण का फल निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥224॥

शुक्रे नोलश्च कृष्णश्च पीतश्च हरितस्तथा ।

कपिलश्चाग्निवर्णश्च विजेयः स्यात् कदाचन ॥225॥

शुक्र के नील, कृष्ण, पीत, हरित, कपिल—ग्निवर्ण और अग्नि वर्ण होते हैं ॥225॥

हेमन्ते शिशिरे रक्तः शुक्रः सूर्यप्रभानुगः ।

पीतो वसन्त-ग्रीष्मे च शुक्लः स्यान्नित्यसूर्यतः ॥226॥

हेमन्त और शिशिर ऋतु में शुक्र का सम वर्ण सूर्य की कान्ति के अनुसार होता है तथा वसन्त और श्रीष्म में पीत वर्ण एवं नित्य सूर्य की कान्ति से शुक्र का शुल्क वर्ण होता है ॥226॥

अतोऽस्य येऽन्यथाभावा विषरीता भयावहा ।
शुक्रस्य भयदो । लोके कृष्णे नक्षत्रमण्डले ॥227॥

उपर्युक्त प्रतिपादित वर्णों में यदि विषरीत वर्ण शुक्र का दिखलाई पड़े तो भय-प्रद होता है । शुक्र वा कृष्णनक्षत्र मण्डल में प्रवेश करना अत्यन्त भयप्रद है । अर्थात् जिस शृणु में शुक्र का जो वर्ण दिखलाया गया है, उससे विषरीत वर्ण का दिखलाई पड़ना अनुभ फल-मूलक होता है ॥227॥

पूर्वोदये फलं यत् तु पच्यते वरतस्तु तत् ।
शुक्रस्यापरतो यत्तु पच्यते पूर्वतः फलम् ॥228॥

शुक्र के पूर्वोदय का जो फल है वही पश्चिमोदय में धटित होता है तथा शुक्र के पश्चिमोदय का जो फल है, वही पूर्वोदय में भी धटित होता है ॥228॥

एवमेवं विजानीयात् फल-पाकी समाहितः ।
कालातीतं यदा कुर्यात् तदा घोरं समादितेत् ॥229॥

इस प्रथम शुक्र के फलोदय को गण्ड निवाचाहिए । जब शुक्र के उदय में कालातीत हो—विनाम्ब हो तो अत्यन्त काट होता है ॥229॥

सबकचारं यो वेत्ति शुक्रचारं स बुद्धिमान् ।
थवणः स सुखं याति क्षिप्रं देशमपीडितम् ॥230॥

जो अथवा—मुनि शुक्र के चार, बक, उदय, अतिचार आदि को जानता है, वह बुद्धिमान् अधीरित देश में विहार कर शीघ्र ही शुख प्राप्त करता है ॥230॥

यदाऽग्निवर्णो रविसंस्थितो वा वैश्वानरं मरणसमाधितश्च ।
तदा भयशंसति ॥सोऽग्निं जातं तज्जातजं साधयितव्यमन्थतः ॥231॥

जब शुक्र अग्निवर्ण हो अथवा मूर्ख के अंश—कलापर स्थित हो अथवा वैश्वानर वीथि में स्थित हो तो अग्नि का गय रहता है तथा अग्नि से उत्पन्न अन्य प्रकार के उपद्रवों की भी गम्भावना रहती है ॥231॥

इति सकलमुनिजन्मातन्दरुतेदयमहामुनिश्रीभद्रवाहुविरचिते महानिमित्त-
शरणे भगवन्विज्ञेयगुरुरेः शुक्रस्य चारः समाप्तः ॥ १५॥

विवेचन—शुक्रोदय विचार—शुक्र का अग्निवर्णी, मृगशिर, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वनु, अनुराधा, थवण और स्वाति नक्षत्र में उदय होने से सिन्धु, गुर्जर,

कर्वट प्रदेशों में लेती का नाश, महामारी एवं राजनीतिक संघर्ष होता है। शुक्र का उक्त नक्षत्रों में उदय होना नेताओं, महापुण्यों एवं राजनीतिक व्यक्तियों के लिए शुभ नहीं है। पूर्वफाल्गुनी, पूर्वपिंडा, पूर्वभिंद्राद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरपिंडा, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होने से, जानवर और सौराष्ट्र में दुष्क्षिण, विप्रह-मंगर्ष एवं कालिग, स्त्रीराज्य और मरुदेश में मध्यम वर्षा और मध्यम फसल उत्पन्न होती है। जी और धान्य का भाव सम्पूर्ण देश में कुछ अद्यता होता है। शृंगिका, मथा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चिता, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र का उदय हो तो गुर्जर देश में पुद्गल का भय, दुष्क्षिण और द्रव्यहीनता; सिंधु देश में उत्पात, मात्वद में संघर्ष; आसाम, विहार और बंग प्रदेश में भय, उत्पात, वृषभाव एवं महाराष्ट्र, द्रविड़ देश में गुमिधा, समय पर वर्षा होती है। शुक्र का उक्त नक्षत्रों में उदय होना अच्छा गता जाता है। गम्भीर देश के भविष्य की दृष्टि में आज्ञेया, भरणी, विशाखा, पूर्वभिंद्राद और उत्तरभाद्रपद इन नक्षत्रों का उदय अजुब, दुष्क्षिण, हाति एवं अशान्ति का बोला है। अवशेष सभी नक्षत्रों का उदय शुभ एवं मंगल देने वाला है।

शुक्रास्त विचार—अग्निनी, मूर्गशिर, हस्त, रेवती, पृथ्य, गुनर्वमु, अनुराधा, श्वरण और स्वाति नक्षत्र में शुक्र का अस्त हो तो इटली, रोम, जापान में भूकम्भ का भय; वर्षा, श्वाम, चीन, अमेरिका में मुख्य-शान्ति; लूह, भारत में साधारण शान्ति रहती है। देश के अन्तर्गत भौतिक, लाट और रिक्ष प्रदेश में अत्यं वर्षा, सामान्य धान्य की उत्पत्ति, उत्तर प्रदेश में अत्यन्य वर्षा, अकाल, द्रविड़ प्रदेश में विप्रह, गुर्जर देश में गुमिधा, बंगाल में अकाल, विहार और आसाम में साधारण वर्षा, मध्यम विती उपजती है। शुक्रास्त के उत्पात एक गर्हीना वक अन्न महंवा विकला है, फलान् कुछ भस्ता हो जाता है। धी, नेता, जूट आदि पदाश्रे सरस्त होते हैं। प्रजा को नुस्ख की प्राप्ति होती है। सभी लोग अभन-चैन के माथ निवास करते हैं। शृंगिका, मथा, आश्लेषा, विशाखा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, चिता, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र अस्त हो तो हिम्बुलतान में विप्रह, मुसलिम राष्ट्रों में शान्ति एवं उत्तरी उन्नति, इंगलैण्ड और अमेरिका में सप्ता, चीन में मुष्क्षिण, वर्षा भूमि उत्तर प्रदेश एवं हिम्बुलतान गंगा धारण फसल होती है। मिथ देश के लिए इस प्रकार का शुक्रास्त भयोत्पादक होता है। अन्न का अभाव होने गं जनता की अत्यधिक कष्ट होता है। मक्कल और मिथ देश में साधारणतया दुष्क्षिण होता है। मित्र राष्ट्रों के लिए उत्तर प्रकार का शुक्रास्त अनिष्टकर है। भारत के लिए सामान्यतया अच्छा है। वर्षाभाव होने के कारण देश में आन्तरिक अशान्ति रहती है तथा देश में वन्य-जारखानों की उन्नति होती है। मथा में शुक्रास्त होकर विशाखा में उदय को प्राप्त करे तो देश के लिए सभी तरह से भयोत्पादक होता

है। तीनों पूर्वा—पूर्वभाद्रपद, पूर्वफाल्गुनी और पूर्वषाढ़ा, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद—रोहिणी और भरणी नक्षत्रों में शुक्रका अस्त हो तो पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेश के लिए मुभिक्षदायक, किन्तु इन प्रदेशों में राजनीतिक संवर्प, धान्य भाव सहता तथा उक्त प्रदेशों में रोग उत्पन्न होते हैं। बंगाल, आसाम और बिहार, उड़ीसा के लिए उक्त प्रकार का शुक्रास्त शुभकारक है। इन प्रदेशों में धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। धन-धान्य की जनित वृद्धियत होती है। अन्त का भाव सरता होता है। शुक्र का भरणी नक्षत्र पर अस्त होना पशुओं के लिए अशुभकारक है। पशुओं में नाना प्रकार के रोग कीलते हैं तथा धान्य और तृण दोनों का भाव महंगा होता है। जनता को बाट होता है, राजनीति में परिवर्तन होता है। शुक्र का मध्यरात्रि में अस्त होना तथा आश्लेषाविठ मध्य नक्षत्र में शुक्र का उदय और अस्त दोनों ही अशुभ होते हैं। इस प्रकार की स्थिति में जनराधारण को भी काट होता है।

शुक्र के यमन की नी वीथियाँ हैं—नाग, गज, ऐशवत, वृषभ, गो, जग्नदग्ध, मृग, अज और दहन—वैश्यानर, ये वीथियाँ अज्ञिनी आदि तीन-तीन नक्षत्रों की मानी जाती हैं। किंगी-विश्वी के मन से स्वाति, भरणी और काल्पिका नक्षत्र में नागवीथि होती है। गज, ऐशवत और वृषभ नामक वीथियों में रोहिणी से उत्तरफाल्गुनी नक्षत्र तक तीन-तीन वीथियाँ हुआ करती हैं तथा अज्ञिनी, रेवती, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में गोवीथि है। ध्वण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में जग्नदग्ध वीथि; अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में मृगवीथि; हृत, विश्वामित्र और चित्रा नक्षत्र में अजवीथि। वे पूर्वषाढ़ा और उत्तरषाढ़ा में दहन वीथि होती है। शुक्र का भरणी नक्षत्र से उत्तरमार्ग, पूर्वफाल्गुनी से मध्यमार्ग और पूर्वागाढ़ा से दक्षिणमार्ग माना जाता है। जब उत्तरवीथि में शुक्र अस्त या उदय को प्राप्त होता है, तो प्राणियों के सुख सम्पत्ति और धन-धान्य की वृद्धि करता है। मध्यम वीथि में रहने से शुक्र मध्यम फल देता है और जघन्य या दक्षिण वीथि में विद्यमान शुक्र काटप्रद होता है। आद्रा नक्षत्र में आरम्भ करके मृगशिर तक जो नी वीथियाँ हैं, उनमें शुक्र का उदय या अस्त होने से यथावत से अत्युत्तम, उत्तम, ऊन, सम, मध्यम, च्यून, अधम, कष्ट और कष्टतम फल उत्पन्न होता है। भरणी नक्षत्र से लेकर चार नक्षत्रों में जो मण्डल—वीथि हो, उसकी प्रथम वीथि में शुक्र का अस्त या उदय होने से मुभिक्ष होता है, किन्तु अंग, बंग, कलिंग और बाल्कीन देश में भय होता है। आद्रा से लेकर चार नक्षत्रों—आद्रा, पुनर्वंसु, पुष्य और आश्लेषा इन चार नक्षत्रों के मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो अधिक जल की वर्षा होती है, धन-धान्य सम्पत्ति वृद्धियत होती है। प्रत्येक प्रदेश में शान्ति रहती है, जनता में सौहार्द और प्रेम का संचार होता है। यह द्वितीय मण्डल उत्तम माना गया है। अर्थात् शुक्र का भरणी से मृगशिरा नक्षत्र तक प्रथम

विनाश करता है तथा वाम ओर से गमन करने वाला शुक्र भवंकर रोग उत्पन्न करता है ॥143॥

यदा भाद्रपदां सेवेत् धूतनि॑ दूतारचं हिसति ।
मलयान्मालवान् हन्ति॒ मर्दनारोहणे तथा ॥144॥

पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में स्थित शुक्र धूर्तं और दूतों की हिसा करता है तथा मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र मलय और मालवानों की हिसा करता है ॥144॥

दूतोपजीविनो वैद्यान् दक्षिणस्थः प्रहिसति ।
वामगः स्थविरान् हन्ति॒ भद्रबाहुवचो यथा ॥145॥

दक्षिणस्थ शुक्र दीत्य कार्य द्वारा धार्जीविका करने वालों और वैद्यों का घात करता है तथा वामस्थ शुक्र स्थविरों की हिसा करता है, पेणा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥145॥

उत्तरां तु यदा सेवेजजलजान् हिसते सदा ।
वत्सान् वाह्नीकगान्धारानारोहणप्रमर्दने ॥146॥

उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में स्थित शुक्र जलज—जलनिवासी और जल में उत्पन्न प्राणियों का घात करता है। इस नक्षत्र में आरोहण और प्रमर्दन करने वाला शुक्र वत्स्य, वाह्नीक और गान्धार देवों वा विनाश करता है ॥146॥

दक्षिणे स्थावरान् हन्ति॒ वामगः स्याद् भयंकरः ।
मध्यगः सूप्रसन्नश्च भाग्वतः सुखमावहेत् ॥147॥

दक्षिणस्थ शुक्र स्थावरों का विनाश करना है और वामग शुक्र भयंकर होता है। मध्यग शुक्र प्रसन्नता और सुख प्रदान करता है ॥147॥

भयान्तिकं नागराणां नागरांश्चेष्टहिसति ।
भाग्वतो रेवतीप्राप्तो दुःप्रभश्च कृशो यदा ॥148॥

रेवती नक्षत्र को प्राप्त होने वाला शुक्र नागरिक और नगरों के लिए भय और आतंक करने वाला है ॥148॥

मर्दनारोहणे हन्ति॒ नाविकानथ नागरान् ।
दक्षिणे गोपकान् हन्ति॒ चोत्तरोऽभूषणानि तु ॥149॥

रेवती नक्षत्र को मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र नाविक और नागरिकों की हिसा करता है। दक्षिणस्थ शुक्र गोपों का घात करता है और उत्तरस्थ भूषणों का विनाश करता है ॥149॥

महापिपीलिकाराशिवस्फुरन्तो विषयते ।

उह्यानुत्तिष्ठते यत्र तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥५३॥

जहाँ अत्यधिक चीटियों का स्मूह विस्फुरित—कांपते हुए मृत्यु को प्राप्त हो और उह्य—क्षत-विक्षत—घायल होकर स्थित हो, वहाँ महान् भय होता है ॥५३॥

श्वश्वपिपीलिकावृन्दं निम्नमूर्धं विसर्पति ।

वर्षे तत्र विजानीयाद्भद्रबाहुवच्चो यथा ॥५४॥

जहाँ चीटियाँ रुप बदल कर—पंख बाली होकर नीचे से ऊपर को जाती हैं वहाँ वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥५४॥

राजोपकरणे भग्ने चलिते पतितेऽपि वा ।

क्रव्यादसेवने चैव राजपीडां समादितेत् ॥५५॥

राजा के उपकरण—छत्र, चमर, मुङ्गड आदि के भग्न होने, चलित होने या गिरने से तथा मांसाहारी के हारा सेवा करने से राजा पीड़ा को प्राप्त होता है ॥५५॥

वाजिवारणयानानां भरणे छेदने द्रुते ।

परचक्राणमात् विन्द्यादुत्पातज्ञो जितेन्द्रियः ॥५६॥

शोषा, हाथी आदि सबारियों के अचानक मरण, घायल या छेदन होने से जितेन्द्रिय उत्थात शास्त्र के जानने वाले को परशासन का आगमन जानना चाहिए ॥५६॥

क्षत्रियाः पुष्पितेऽश्वत्थे ब्राह्मणाश्चाप्युद्गम्बरे ।

वैश्याः एलक्षोऽथ पीड्यन्ते व्ययोर्धे शूद्रदस्यवः ॥५७॥

असमय में पीपल के पीड़ के उपित्त होने से ब्राह्मणों को, उद्गम्बर के वृक्ष के पुष्पित होने से अवियों को, पाकर वृक्ष के पुष्पित होने से वैश्यों को और बट वृक्ष के पुष्पित होने से शूद्रों को पीड़ा होती है ॥५७॥

इन्द्रायुधं निशिश्वेतं विप्रान् रक्तं च क्षत्रियान् ।

निहन्ति पीतकं वैश्यान् कृष्णं शूद्रभयंकरम् ॥५८॥

रात्रि में इन्द्रधनुप यदि श्वेत रंग का हो तो ब्राह्मणों को, भाल रंग का हो तो अवियों को, गीले रंग का हो तो वैश्यों को और चारबीं रंग का हो तो शूद्रों को भयदायक होता है ॥५८॥

भज्यते नश्यते तत्तु कम्पते शीर्यते जलम् ।
चतुर्मासं परं राजा म्रियते भज्यते तदा ॥५९॥

यदि इन्द्रधनुष भग्न होता हो, नष्ट होता हो, कांपना हो और जल की वर्षा करता हो तो राजा चार महीने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त होता है, या आधात को प्राप्त होता है ॥५९॥

'पितामहर्षयः सर्वे सोमं च धतसंयुतम् ।
त्रैमासिकं विजानीयादुत्पातं ब्राह्मणेषु ३वै ॥६०॥

पिता, महर्षि तथा चन्द्रमा यदि अत-विद्यत दिखलाई पड़े तो निश्चय से ब्राह्मणों में त्रैमासिक उत्पात होता है ॥६०॥

रुक्षा विवर्णा विकृता यदा सन्ध्या भवानका ।
मारीं कुर्युः सुविकृतां पक्षत्रिपक्षकं भवम् ॥६१॥

यदि सन्ध्या रुक्ष, विकृत और विवर्ण होती है ताना प्रकार के विकार और मरण को करने वाली होती है तथा एक पथ या तीन पक्ष में भय की प्राप्ति भी होती है ॥६१॥

३यदि वैश्ववणे कश्चिद्दुत्पातं समुदीरयेत् ।
राजनश्च सच्चिवाश्च पञ्चमासात् स पौडयेत् ॥६२॥

यदि गमन समय में -राजा को युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो राजा और मन्त्री को गाँच महीने तक कष्ट होता है ॥६२॥

यदेत्पातोऽधमेकशिद् दृश्यते विकृतः क्वचित् ।
तदा व्याधिश्च मारी च चतुर्मासात् परं भवेत् ॥६३॥

यदि कहीं कोई विकृत उत्पात दिखलाई पड़े तो इस उत्पात-दर्शन के चार महीने के उपरान्त व्याधि और मरण होता है ॥६३॥

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिद्दुदीर्यते ।
मारकः सिंधु-सौवीर-सुराष्ट्र-वत्सभूमिषु ॥६४॥
भोजनेषु^१ यथं विन्ध्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः ।
पञ्चमासात् परं विन्ध्याद् भयं घोरभुपरिथतम् ॥६५॥

1. विन्ध्यामहापु च वर्णू छमंगलदद्वा गतम् । 2. अ. मृ. । 3. यदा वैश्ववणे गमने कश्चिद्दुत्पातः समुदीर्यते । 4. भाग्नेषु च मृ. ।

यदि चन्द्रमा या वरुण में कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो सिन्धु देश, सौवीर देश, सीराप्ट्र—गुजरात और वत्सभूमि में मरण होता है। भोजन सामग्री में भय रहता है और राजा का मरण पूर्व में ही हो जाता है। पाँच महीने के उपरान्त वहाँ घोर भय का संचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है ॥64-65॥

रुद्रे च वरुणे कश्चिद्गुत्पातः समुदीर्षते ।

सप्तपक्षं भयं विन्द्याद् ब्राह्मणान्तां न संशयः ॥66॥

शिवजी और वरुणदेव की प्रतिमा में यदि किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो वहाँ ब्राह्मणों के लिए सात पल अर्थात् तीन महीना पञ्चह दिन का भय समझना चाहिए, इसमें किसी भी प्रकार का सम्बंह नहीं है ॥66॥

इन्द्रस्य प्रतिमायां तु यद्युत्पातः प्रदृश्यते ।

संग्रामे त्रिषु मासेषु राज्ञः सेनारतेवंधः ॥67॥

यदि इन्द्र की प्रतिमा में कोई भी उत्पात दिखलाई पड़े तो तीन महीने में संग्राम होता है और राजा या सेनापति का वध होता है ॥67॥

यद्युत्पातो बलन्देवे तस्योपकरणेषु च ।

महाराष्ट्रान् महायोद्धान् सप्तमासान् प्रणीडयेत् ॥68॥

यदि बलदेव की प्रतिमा या उसके उपकरणों—छत्र, चमर आदि में किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो सात महीनों तक महाराष्ट्र के महान् योद्धाओं को पीड़ा होती है ॥68॥

वासुदेवे यद्युत्पातस्तस्योपकरणेषु च ।

चक्रारुढाः प्रजा ज्ञेयाश्चतुमर्सान् वधो नृपे ॥69॥

वासुदेव की प्रतिमा उसके उपकरणों में किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो प्रजा चक्रारुढ़—पद्यन्त्र में तत्कीन रहती है और चार महीनों में राजा का वध होता है ॥69॥

प्रद्युम्ने व्रात्थ उत्पातो मणिकानां भयावहः ।

कुशीलानां च द्रष्टव्यं भयं चेद्वाऽल्टमासिकम् ॥70॥

प्रद्युम्न की मूर्ति में किसी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो वेश्याओं के लिए अत्यन्त भय कारण होता है और कुशील व्यवित के लिए आठ महीनों तक भय बना रहता है ॥70॥

**यदार्थप्रतिषयाणां तु किञ्चिन्दुत्पातजं भवेत् ।
चौरा मासा त्रिपक्षाद्वा विलीयन्ते 'हदन्ति वा ॥७१॥**

यदि मूर्ख की प्रतिषय में कुछ उत्पात हो तो एक महीने या तीन पक्ष — डेह महीने में चौर विलीन हो जाति— तष्ट हो जाते हैं या विलाप करते हुए दुख को प्राप्त होते हैं ॥७१॥

**यद्युत्पातः श्रियाः कश्चित् त्रिमासात् कुरुते फलम् ।
वणिजाणां पुष्पबीजानां वनितालेख्यजीविनाम् ॥७२॥**

यदि लक्ष्मी की मूर्ति में उत्पात हो तो उस उत्पात का फल तीन महीने में प्राप्त होता है और वैश्य— ब्यापारी वर्ग, पुण, बीज और लिङ्गादर आजीविका करने वालों वीर स्त्रियों को कष्ट होता है ॥७२॥

**बीरस्थाने शमशाने च यद्युत्पातः समीर्यते ।
चतुमासान् क्षुधामारी पौड्यस्ते च अस्तस्ततः ॥७३॥**

बीरभूमि या शमशानभूमि में यदि उत्पात दिश्वलाई पड़े तो नार महीने तक क्षुधामारी— भुखमरी से उधर-उधर की गमत जनता पीड़ित होती है ॥७३॥

**यद्युत्पाताः प्रदृश्यन्ते विश्वकर्मणमाश्रिताः ।
पीड्यस्ते शिलिष्यतः सर्वे पञ्चमासात्परं भयम् ॥७४॥**

यदि विश्वकर्मा में किसी भी प्रकार का उत्पात दिश्वलाई पड़े तो सभी शिलिष्यों वो पीड़ा होती है और इस उत्पात के पाँच महीने के उपरान्त गम होता है ॥७४॥

**²भद्रकाली विकुर्वन्ती स्त्रियो हन्तीह सुक्रतः ।
आत्मानं वृत्तिनो ये च पञ्चमासात् पीड्येत् प्रजाम् ॥७५॥**

यदि भद्रकाली की प्रतिषय में विश्वकर्मा उत्पात हो तो युथग स्त्रियों या नाश होता है और इस उत्पात के छः महीने पञ्चमासात् प्रजा वो पीड़ा होती है ॥७५॥

**इन्द्राण्याः समुत्पातः कुमार्यः परिषीड्येत् ।
त्रिपक्षादक्षिररेण कुक्षिकण्ठशिरोज्वरैः ॥७६॥**

यदि इन्द्राणी की मूर्ति में उत्पात हो तो कुमारियों को तीन पक्ष— डेह महीने के उपरान्त नेवरोग, कुदिगीर, नर्णरोग, निररोग और उधर की पीड़ा से पीड़ित होना पड़ता है— कष्ट होता है ॥७६॥

1. रजना मूः । 2. ब्रह्मनिश्चय मूः । 3. भद्रकाली मूः ।

धन्वन्तरे समुत्पातो वैद्याजां स भयंकरः ।

जाप्तासिकविकारांश्च रोगजान् जनयेन्तुषाम् ॥77॥

धन्वन्तरि की प्रतिमा में उत्पात हो लो वैद्य को अत्यन्त भयंकर उत्पात होता है और छः महीने तक मनुष्यों को विकार और रोग उत्पन्न होते हैं ॥77॥

जापदग्न्ये यदा रामे विकारः कश्चिद्दीर्घते ।

तापसांश्च तपाद्यांश्च विषक्षेण जिधांसति ॥78॥

परशुराम या राम-शब्द की प्रतिमा में विकार दिखलाई पड़े तो तपस्वी और तप आरम्भ करने वालों का तीन पक्ष में विनाश होता है ॥78॥

पञ्चविश्वतिराक्षेण कवन्धं यदि दृश्यते ।

सन्ध्यायां भयमाल्याति महापुरुषविद्रवम् ॥79॥

यदि गन्ध्या कान में कवन्ध धड़ दिखलाई पड़े तो गच्छीस राशियों तक भय रहता है तथा किसी महापुरुष का विद्रवण-विनाश होता है ॥79॥

सुलसाथां यदोत्पातः षष्ठ्यासं सर्पजीविनः ।

पीडयेद् गरुडे यस्य वासुकास्तिकभवितछु ॥80॥

यदि सुलसा की मूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो सर्पजीवियों—सपहरों आदि के छः महीनों ताप पीड़ा होती है और गरुड़ की गूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो वासुकी में थदाभाव और भक्षित करने वालों को शाष्ट होता है ॥80॥

भूतेषु यः समुत्पातः 'सदैव परिचारिकः ।

मासेन पीडयेत्तूर्णि निर्यन्थवचनं यथा ॥81॥

भूतीं की मूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो परिचारिकाओं -दासियों को यदा पीड़ा होती है और इस उत्पात-दर्शन के एक महीने तक अधिक पीड़ा रहती है, ऐसा निर्यन्थ गुणों का वचन है ॥81॥

अहंत्सु वरुणे रुद्रे ग्रहे शुक्रे नूपे भद्रेत् ।

पञ्चालगुरुशुक्रद्वये पावकेषु पुराहिते ॥82॥

वातेऽग्नो वासुभद्रे च विश्वकर्मप्रजापतो ।

सर्वस्य तद् विजानोयात् वक्ष्ये सामान्यजं फलम् ॥83॥

अहंत प्रतिमा, वरुणप्रतिमा, रुद्रप्रतिमा, गुरुशुक्रहो की प्रतिमाओं, शुक्रप्रतिमा, द्रोणप्रतिमा, इन्द्रप्रतिमा, ब्रह्मपुरोहित, वायु, अग्नि, सपुद्र, विश्वकर्मा,

प्रजापति की प्रतिमाओं के विकार उत्पात वा फल सामान्य ही अवगत करना चाहिए ॥८२-८३॥

चन्द्रस्य वरुणस्यापि रुद्रस्य च वधूषु च ।

^१समाहुरे यदोत्पातो राजाग्रमहिषीभयम् ॥८४॥

चन्द्रमा, वरुण, शिव और पार्वती की प्रतिमाओं में उत्पात हो तो राजा को पटुरानी को भय होता है ॥८४॥

काषजस्य^२ यदा भार्या या वास्याः केवलाः स्त्रियः ।

कुर्वन्ति किञ्चिद् विकृतं प्रधानस्त्रीषु तद्भयम् ॥८५॥

यदि राक्षदेव की स्त्री रति वी प्रतिमा अथवा किसी भी स्त्री की प्रतिमा में उत्पात दिखलाई गई तो प्रधान रिक्षियों में भय ना रांचार होता है ॥८५॥

एवं देशे च जाती च कुले पाञ्चष्टभिक्षुषु ।

तज्जातिप्रतिरूपेण स्वैः स्वदेवैः शुभं बदेत् ॥८६॥

इस प्रकार जाति, देश कुल और धर्म की उपासना आदि के अनुसार अपने-अपने आराध्य देव की प्रतिमा के विकार-उत्पात में अपना-उपना शुभाशुभ फल जात करना चाहिए ॥८६॥

उद्गच्छसानः सविता पूर्वतो विकृतो यदा ।

स्थावरस्य विनाशाय पृष्ठतो यायिनाशनः ॥८७॥

यदि उदय होता हुआ गूर्यं पूर्व दिशा में -- सम्मुख विकृत उत्पात युक्त दिखलाई गई तो स्थावर—निधामी राजा के श्रीम दीछ की ओर विकृत दिखलाई गई तो याथी —आक्रमक राजा के विनाश इस गुच्छ क होता है ॥८७॥

हेमवर्णः सुतोयाय मधुवर्णो भयंकरः ।

शुक्ले च सूर्यवर्णःस्थिन् सुभिक्षं क्षमसेव च ॥८८॥

यदि उदयकालीन गूर्यं स्वर्ण वर्ण का हो तो जल वी वर्ण, मधु वर्ण का हो तो लालप्रद और शुक्ल वर्ण का हो तो गुम्बिक्ष और कल्याण की सूचना देता है ॥८८॥

हेमन्ते शिशिरे रक्ततः परितो ग्रीष्मवसन्तयोः ।

बर्षासु शरदि शुक्लो विपरीतो भयंकरः ॥८९॥

हेमन्त और शिशिर ऋतु में लाल वर्ण, ग्रीष्म और वसन्त ऋतु में गील एवं

1. न महाराजमूलानां राजाग्रमहिषीप् च । 2. एका ग्रन्थ पृ० ।

वर्गा और शरद में शुक्ल वर्ण का सूर्य शुभप्रद है, इन वर्णों से विपरीत वर्ण हो तो अध्यप्रद है ॥८९॥

दक्षिणे चन्द्रशृंगे तु यदा तिष्ठति भार्गवः ।

^१अभ्युदगतं तदा राजा बलं हन्यात् सपाथिवम् ॥९०॥

यदि चन्द्रमा के उदय काल में चन्द्रमा के दक्षिण शृंग पर शुक्र हो तो संस्कृत राजा का विजात होता है ॥९०॥

चन्द्रशृंगे यदा भौमो^२ विकृतस्तिष्ठते तराम् ।

^३भूशं प्रजा विपद्यन्ते कुरुवः पाथिवाश्चलाः ॥९१॥

यदि चन्द्रशृंग पर विकृत मंगल स्थित हो तो पंजा को अत्यन्त काट होता है और पुरोहित एवं राजा चंचल हो जाते हैं ॥९१॥

शनैश्चरो यदा सौम्यशृंगे पर्युपतिष्ठति ।

तदा वृष्टिभयं घोरं दुष्मिक्षं प्रकरोति च ॥९२॥

यदि चन्द्रशृंग पर शनैश्चर हो तो वर्ण का भय होता है और भयंकर दुष्मिक्ष होता है ॥९२॥

भिनस्ति सोमं मध्येन ग्रहेष्वन्यतमो यदा ।

तदा राजभयं विन्द्यात् प्रजाक्षोभं च दाहणम् ॥९३॥

जब कोई भी यह चन्द्रमा के भग्न भे भवन कारता है तो राजभय होता है और प्रजा को दाहण धोम होता है ॥९३॥

राहणा गृह्णते चन्द्रो यस्य नक्षत्रजन्मनि ।

रोगं मृत्युभयं वाऽपि तस्य कुर्यान्ति संशयः ॥९४॥

जिस व्यवित के जन्म नक्षत्रान् राहु चन्द्रमा का प्रहण करे—चन्द्रग्रहण हो तो गोग और मृत्यु भय निर्गमन्देह होता है ॥९४॥

कूरप्रहयुतश्चन्द्रो गृह्णने दृश्यतेऽपि वा ।

यदा क्षुभ्यन्ति लामन्ता राजा राट्टुं च पीड्यते ॥९५॥

कूरप्रह युत चन्द्रमा राहु के लाग प्रदीन या दूर हो तो राजा और सामन्त शुक्र होते हैं और राट्टु को पीड़ा होती है ॥९५॥

1. अभ्युक्तम् पू० । 2. भौमोऽप्त्वा विकृतं भूषम् पू० । 3. प्रजास्तत्र मु० ।

लिखेत् सोमः 'शूरेन भौमं शुक' गुरुं पथा ।

शनैश्चरं वापिकृतं षड्भायाति तदा दिशेत् ॥96॥

चन्द्रशूरं के हारा पांगन, शुक और गुरु का स्थान हो तथा शनैश्चर आधीन किया जा रहा हो तो शुक के भव होते हैं ॥96॥

यदा बृहस्पतिः शुकं भिद्येदथ विशेषतः ।

पुरोहितास्तदाऽमात्याः प्राप्नुवन्ति महद्भयम् ॥97॥

यदि बृहस्पति—गुरु, शुक का शेदन करे तो विशेष रूप से पुरोहित और मन्त्री महान् भग को प्राप्त होते हैं ॥97॥

गहा: परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा ।

तत्र शस्त्रवाणिज्यानि विन्द्यादर्थविपर्ययम् ॥98॥

यदि यह परस्पर में भेदन करे अथवा प्रवेश को प्राप्त हो तो शस्त्र का अर्थ-विपर्यय—विपरीत हो जाता है वर्तात् वहाँ गुरु होते हैं ॥98॥

स्वतो गृहमन्यं श्वेतं प्रविशेत् लिखेत् तदा ।

ब्राह्मणानां मिथो भेदं मिथः पीडां विनिर्दिशेत् ॥99॥

यदि श्वेत वर्ण का गृह—ब्रह्मा, शुक श्वेत वर्ण के ग्रहों का स्थान और प्रवेश करे तो ब्राह्मणों में परमार धत्तभेद होता है तथा परमार में पीडा को भी प्राप्त होते हैं ॥99॥

एवं शेषेषु वर्णेषु स्ववर्णश्चारथेद् गहः ।

वर्णतः स्वभयानि स्युस्तद्युतान्युपलक्षयेत् ॥100॥

इसी प्रमार अवत वर्ण के गृह रक्त वर्ण ग्रहों का स्थान और प्रवेश करे तो श्वेतियों को, पीड वर्ण के गृह पीड वर्ण के ग्रहों का स्थान और प्रवेश करे तो वैश्यों को एवं कृष्ण वर्ण के गृह कृष्ण वर्ण के ग्रहों का स्थान और प्रवेश करे तो शूद्रों को भय, पीडा वा उनमें परमार धत्तभेद होता है। ज्योतिर्गणाऽत्र में मूर्य वरे रक्तवर्ण, चन्द्रपा को उनेतवर्ण, मंगल वरे रक्तवर्ण, तुधु वो श्यामवर्ण, गुरु को पीडवर्ण, शुक्र को श्यामगौर वर्ण, जगि वो कृष्णवर्ण, राहु को कृष्णवर्ण और केतु को कृष्णवर्ण माना गया है ॥100॥

श्वेतो ग्रहो यदा पीतो रक्तकृष्णोऽथवा भवेत् ।

सर्ववर्णविजयं कुर्यात् यथास्वं वर्णसंकरम् ॥101॥

यदि श्वेतग्रह पीत, रक्त अथवा कृष्ण हो तो जाति के बर्णनुसार विजय प्राप्त कराता है अर्थात् रक्त होने पर क्षत्रियों की, पीत होने पर वैश्यों की और कृष्ण-वर्ण होने पर शूद्रों की विजय होती है। मिथितवर्ण होने से वर्णसंकरों की विजय होती है ॥101॥

उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽधाताश्च दारणः ।

उत्तराः सर्वभूतानां दक्षिणा १मृगपक्षिणाम् ॥102॥

अनेक प्रशार के उत्तात होती हैं, इनमें ग्रहात -ग्रहयुद्ध उत्पात अत्यन्त दारण हैं। उत्तर दिशा का ग्रहात गमन प्राणियों को कटप्रद होता है और दक्षिण का ग्रहात केवल पशु-पक्षियों को कट पेता है ॥102॥

करंकं शोणितं यांसं विद्युतश्च भयं बदेत् ।

दुभिक्षं जनमार्दिं च शीघ्रमाख्यात्युपस्थितम् ॥103॥

अस्थिपंजर, रक्त, मांस और विजली का उत्पात भय की सूचना देता है तथा जहाँ यह उत्पात हो वहाँ दुभिक्ष और जनमारी शीघ्र ही केल जाती है ॥103॥

शब्देन महता भृमिर्यदा रसति कम्पते ।

सेनापतिरमात्यश्च राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥104॥

अकारण भयंकर शब्द के द्वारा जब पृथ्वी काँपने लगे तथा सर्वत्र शेर-गुल व्याप्त हो जाय तो मेनापति, मन्त्री, राजा और राष्ट्र को पीड़ा होती है ॥104॥

फले फलं यदा किञ्चित् पुष्पे पुष्पं च दृश्यते ।

गर्भः पतन्ति नारीणां पुवराजा च वध्यते ॥105॥

यदि फल में फल और पुण में पुण दिवलाई पड़े तो स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं तथा युवराज का वध होता है ॥105॥

नर्तनं जल्पनं हासमुल्कीलननिमीलने ।

देवाः यत्र प्रकुर्वन्ति तत्र विन्द्यात्महद्भयम् ॥106॥

जहाँ देवों द्वारा नाचना, बोलना, हँसना, कीलना और पलक झपकना आदि कियाएं की जायें, वहाँ अत्यन्त भय होता है ॥106॥

पिशाचा यत्र दृश्यन्ते देशेषु नगरेषु च ।

अन्यराजो भवेत्तत्र प्रजानां च महद्भयम् ॥107॥

1. मृगपक्षिणाम् मू० । 2. दिवा मू० ।

जहाँ देश और नगरों में पिण्डाच दिखलाई पड़े वहाँ अत्य व्यक्ति राजा होता है तथा प्रजा को अत्यन्त भय होता है ॥ ०७॥

भूमिर्यत्र नभो याति विशति वसुधाजलम् ।
दृश्यन्ते वाऽङ्गवरे देवास्तना राजवध्ये अनुनस्त् ॥ ०८॥

जहाँ पृथ्वी आकाश की ओर जाती हुई मालूम हो अथवा पाताल में प्रविष्ट होती हुई दिखलाई पड़े और आकाश में देव दिखलाई पड़े तो वहाँ राजा का वध निश्चयतः होता है ॥ ०८॥

धूमज्वालां रजो भस्म यदा मुञ्चन्ति देवताः ।
तता तु प्रियते राजा सूलतस्तु जनक्षयः ॥ ०९॥

यदि देव धूम, ज्वाला, धूमि और भस्म — राजा की बर्पा करें तो राजा का मरण होता है तथा मूलरूप में मनुष्यों का भी विनाश होता है ॥ ०९॥

अस्थिर्मासैः पशुनां च भस्मनां निच्छ्रैरपि ।
जनक्षयाः प्रभूतारतु विकृते वा नृपवधः ॥ १०॥

यदि पशुओं की हड्डियाँ और भासि तथा भस्म का समूह आकाश से बरसे तो अधिक मनुष्यों का विनाश होता है । अथवा उन्नत वस्तुओं में विकार— उत्पात होने पर राजा का वध होता है ॥ १०॥

विकृताकृति-संस्थाना जायन्ते यत्र मानवाः ।
तत्र राजवधो ज्ञेयो विकृतेन मुकेन वा ॥ ११॥

जहाँ मनुष्य विकृत आकार बाले और विचित्र दिखलाई पड़े वहाँ राजा का वध होता है अथवा विकृत दिखलाई पड़ने गे मुख क्षीण होता है ॥ ११॥

वधः सेनापतेश्चापि भयं दुर्भिक्षमेव च ।
अम्नेवा हृथवा वृष्टिस्तदा स्यान्नात्र संशयः ॥ १२॥

यदि आकाश में अग्नि की बर्पा हो तो सेनापति या वध, भय और दुर्भिक्ष आदि फल श्रित होते हैं, इसमें गन्देह नहीं है ॥ १२॥

द्वारे शस्त्रगृहं वेष्म राजो देवगृहं तथा ।
धूमाप्यन्ते यदा राजस्तदा मरणनादिशेत् ॥ १३॥

देवमहिमा या राजा के महल के द्वार, शस्त्रागार, दानान या वर्यमदे में धूमाँ दिखलाई पड़े तो राजा या मरण होता है ॥ १३॥

१. मूलाभिग्रहनां च नाम्ये उल्लेखने पर्यन्ते नहीं ।

परिघार्जला कपाट द्वारं रुधन्ति वा स्वयम् ।
पुररोधस्तदा विन्द्यान्नेगमानां महदभयम् ॥ 14॥

यदि स्वयं ही विना मिशी के बन्द किये बैठा, सौकल और द्वार के किवाड़ बन्द हो जाये तो पुरोहित और वेद के व्याख्याताओं को महान् भय होता है ॥ 14॥

यदा द्वारेण नगरं शिवा प्रविशते दिवा ।
वास्यमाना विकृता वा तदा राजवधो छुवम् ॥ 15॥

यदि दिन में मिशारित ---गीदड़ी नगर के द्वार से विकृत या सिक्त होकर प्रविशत हो तो गजा वा वध होता है ॥ 15॥

अन्तःपुरेषु द्वारेषु विष्णुमिक्रे तथा पुरे ।
अट्टालकेऽथ हट्टेषु मधु लीनं विनाशप्रेत् ॥ 16॥

यदि मिशारित अन्तःपुर, द्वार, नगर, तीर्थ, अट्टालिका और बाजार में प्रवेश करे तो मृग का विनाश करती है ॥ 16॥

धूमकेतुहृतं मार्गं शुक्रश्चरति वै यदा ।
तदा तु सात्वर्बाणि महान्तमनयं बदेत् ॥ 17॥

यदि शूक्र धूमकेतु द्वारा आक्रमित मार्ग में गमन करे तो सात वर्षों तक महान् अन्याय-अकल्याण होता रहता है ॥ 17॥

गुरुणा प्रहृतं मार्गं यदा भौमः प्रपद्यते ।
भयं तु सर्वजनिकं करोति बहुधा नृणाम् ॥ 18॥

यदि बृहस्पति के द्वारा प्रताडित मार्ग में मंगल गमन करे तो सार्वजनिक भय होता है तथा अविहात र मनुष्यों को भय होता है ॥ 18॥

भौमेत्तापि हृतं मार्गं यदा सीरि: प्रपद्यते ।
तदाऽपि शूद्रचौराणामनयं कुरुते नृणाम् ॥ 19॥

मंगल के द्वारा प्रताडित मार्ग में गतेष्वचर गमन करे तो शूद्र और नोरों का अकल्याण होता है ॥ 19॥

सीरेण तु हृतं मार्गं 'वाचस्पतिः प्रपद्यते ।
भयं सर्वजनानां तु करोति बहुधा तदा ॥ 20॥

यदि जनैष्वर के द्वारा प्रताडित मार्ग में बृहस्पति गमन करे तो सभी मनुष्यों को भय होता है ॥120॥

राजदीपो निष्पतते भ्रश्यतेऽधः कदाचन ।

षष्ठ्मासात् पञ्चमासाद्वा नृपमन्यं निवेदयेत् ॥121॥

यदि राजा का दीपक अकारण भीचे गिर जाय तो छः महीने वा पाँच महीने में अन्य गजा होने का निर्देश समझना चाहिए ॥121॥

‘हसन्ति यत्र निर्जीवाः धावन्ति प्रवदन्ति च ।

जातमात्रस्य तु शिशोः सुमहद्भयमादिशंत ॥122॥

जहाँ निर्जीव—जड़ पदार्थ हैंगने हों, दीड़ते हों और बातें करने हों वहाँ उत्तम हुए समझत बच्चों को महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥122॥

निवर्तते यदा छाया परितो वा ‘जलाशयान् ।

प्रदृश्यते च देत्यानां सुमहद्भयमादिशेत् ॥123॥

यदि जलाशय—जलाक, नदी आदि के चारों ओर से छाया लौटती हुई दिखलाई गड़े तो देत्यों के महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥123॥

अद्वारे द्वारकरणं कृतस्य च विनाशनम् ।

हस्तस्य ग्रहणं वाऽपि तदा ह्युत्पातलक्षणम् ॥124॥

अद्वार में जहाँ द्वार करने योग्य न हो वहाँ द्वार करना, किये हुए कार्य का विनाश करना और नष्ट वस्तु को ग्रहण करना उत्पात वा लक्षण है ॥124॥

‘यजनोच्छेदनं यस्य उत्तिर्गमथाऽपि वा ।

स्पन्दते वा स्थिरं किञ्चित् कुलहानि तदाऽदिशेत् ॥125॥

यदि किसी के यजन—पूजा, प्रतिष्ठा, यज्ञादि का स्वयंसेव उच्छ्रुद—विनाश हो अथवा अंग प्रज्वलित होते हों अथवा स्थिर वस्तु में चंचलता उत्पन्न हो जाय तो कुलहानि समझनी चाहिए ॥125॥

दैवज्ञा भिक्षवः प्राज्ञाः साधवश्च पूर्थग्रिधाः ।

परित्यजन्ति तं देशं ग्रुदमन्यत्र शोभनम् ॥126॥

दैवज्ञ—ज्योतिषियों, भिक्षुओं, गनीपियों और साधुओं को विभिन्न प्रकार के उत्तात होने वाले देश को छोड़ते अन्यत्र निवाग करना श्री शेष होता है ॥126॥

1. निर्विवलादणं हुये जन्मस्थि प्रशासन ग. 2. परिग्रन्थ मृ. 3. जलाशयम् मृ. 4. लक्षणम् ग. 5. यजने छाये गमन मृ.

युद्धानि कलहा बाधा विरोधाऽरिविवृद्धयः ।
अभीक्षणं यत्र वर्तन्ते देशं परिवर्जयेत् ॥127॥

युद्ध, कलह, बाधा, विरोध एवं शत्रुओं की वृद्धि जिस देश में निरन्तर हो उस देश का स्थाग नहर देना चाहिए ॥127॥

विपरीता यदा छाया दृश्यन्ते वृक्ष-बेशमनि ।
यदा यामे पुरे वाऽपि प्रथानवधमादिशेत् ॥128॥

ग्राम और नगर में जब वृक्ष और शर की छाया विपरीत-- जिस समय पूर्व में छाया रहती हो, उस समय पश्चिम में और जब पश्चिम में रहती हो तब पूर्व में हो तो प्रथान का वध होता है ॥128॥

महावृक्षो यदा शाखासुत्करां मुञ्चते द्रुतम् ।
भोजकस्य वधं विन्द्यात् सपणिं वधमादिशेत् ॥129॥

५/ महावृक्ष जब अकाश ही अपनी शाखा को शीश ही गिराता है तो भोजक सपेणों का वध होता है तब नपों का भी वध होता है ॥129॥

पांशुवृष्टिस्तथोत्का च निर्घताश्च सृदारुणः ।
यदा पतित युग्मद् अन्ति राष्ट्रं जनायकम् ॥130॥

५/ धूलि की वर्षी, उद्यानात, भयंकर कड़क -विद्युत्पात एक साथ हों तो राष्ट्रनायक का विनाश होता है ॥130॥

रसाश्च विरसा यत्र नायकस्य च दूषणम् ।
तुलासानस्य हसनं राष्ट्रनाशाय तद्भवेत् ॥131॥

जब अकाश ही रस-विना विकृत रस धाले हों तो नायक में दोष लगता है तथा तराजू के हँगने य शारू का नाश होता है ॥131॥

शवलग्नतिष्ठि चन्द्रे समं भवति मण्डलम् ।
भयंकर तदा तस्य नृपस्थाय न संशयः ॥132॥

यदि शूल गतिपदा को चन्द्रमा के दोनों शुरुंग समान दिखलाई पड़े-- समान मण्डल हो तो निष्पन्नदेह राजा के निए भय करने वाला होता है ॥132॥

सलाभ्यां यदि शूर्णाभ्यां यदा दश्येत चन्द्रमाः ।
धान्यं भवेत् तदा न्यूनं मन्दवृष्टिं विनिदिशेत् ॥133॥

यदि इसी दिन दोनों शुरुंग समान दिखलाई पड़े तो अन्त वी उपर्युक्त होती है और वृष्टि भी कम होती है । यहाँ विण्णाता यह है कि आपाह शुक्ला प्रतिपदा

को चन्द्रमा के शूरेंगों का अवलोकन करना चाहिए ॥ 133 ॥

वामशूरेंगं यदा वा स्यादुन्नतं¹ दृश्यते भृशम् ।

तदा सूजति लोकस्थ दारूणत्वं न संशयः ॥ 134 ॥

यदि चन्द्रमा का वायां शूरेंग उभयन मालूम हो तो लोक में दारूण भय का संचार दूता है, इसमें संजय नहीं है ॥ 134 ॥

ऊर्ध्वरिथतं नूणां पापं तिर्यक्स्थं राजमन्त्रिणाम् ।

अधोगतं च वसुधार्मं सर्वं हन्यादसंशयम् ॥ 135 ॥

ऊर्ध्वस्थित चन्द्रमा बनुआओं के पाप का, तिर्यक्स्थ गजा और मन्त्री के पाप का, अधोगत समस्त पृथ्वी के पाप तथा निर्मात्रेह विनाश करता है ॥ 135 ॥

शरवं रक्ते भयं पीते धूमे दुर्भक्षावद्ववे ।

चन्द्रे तदोदिते जेयं भद्रबाहुवचो यथा ॥ 136 ॥

चन्द्रमा यदि वसुवर्ण का उदित हो तो शम्भ का भय, पीतवर्ण का हो तो दुर्भक्ष का भय और धूमवर्ण होने पर आगक का गूचक होता है, पूरा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥ 136 ॥

दक्षिणात्परतो दृष्टः चोरदूतभयंकरः ।

अपरे तोयजोवानां वायव्ये हन्ति वै नदम् ॥ 137 ॥

यदि दक्षिण की ओर शूरेंग पा रसवर्णादि दिवलाई पड़े तो चोर और दूत को भयकारी होता है, पूर्व की ओर दिवलाई पड़े तो जव-जनुओं का और वायव्य दिशा की ओर दिवलाई पड़े तो शौर तथा विनाश होता है ॥ 137 ॥

२विवदत्सु च लिमेषु यातेषु प्रवदत्सु च ।

वाहनेषु च हृषेषु विन्यादभयमुपस्थितम् ॥ 138 ॥

गिवलिगों में विवाद होने पर, गवाचियों में शतानिय होने पर और वाहनों में प्रसन्नता दिवलाई पड़त पर महान भय होता है ॥ 138 ॥

उत्तरं वृषो वदा नदेत् तदा स्यात्च भयंकरः ।

ककुदं चलते वापि तदाऽपि स भयंकरः ॥ 139 ॥

यदि चैत—साँड लपर को मुहूर कर गर्जना करे तो उत्तरन भयंकर होता है और वह घनत ककुद (कुब्र) को खंभला करे तो भी भयंकर समझता चाहिए ॥ 139 ॥

व्याधयः प्रबला यत्र माल्यगन्धं न वायते ।

आहूतिपूर्णकुम्भाश्च विनश्यन्ति भयं वदेत् ॥140॥

जहाँ व्याधियाँ प्रबल हों, माल्यगन्ध न मालूम पड़ती हो और आहूतिपूर्ण कलश—मंगल-कलश विनाश को प्राप्त होते हों, वहाँ भय होता है ॥140॥

तत्त्वदस्त्रं प्रसंगेन ज्वलते मधुरा गिरा ।

अरुन्धतीं न पश्येत स्वदेहं यदि दर्पणे ॥141॥

यदि नवीन वस्त्र अकारण यत्र आद और मधुर वचन मुँह में निकले, अरुन्धती तारा दिखलाए न पाएं तो महान् भय अवगत करना चाहिए अर्थात् मूल्यु की सूचना गमननी चाहिए ॥141॥

न पश्यति स्वकार्याणि परकार्यविशारदः ।

मैथुने यो तिरक्तश्च न च सेवति मैथुनम् ॥142॥

न मित्रचित्तो भूतेषु स्त्रीं वृद्धं हिसते शिशुम् ।

विपरीतश्च सर्वक्रं सर्वदा स भयावहः ॥143॥

जो पर्याय में तो रहत हो, उस स्व कार्य का सेवन न करता हो, मैथुन में संलग्न रहने पर भी मैथुन का भेवन न करता हो, गित्र में जिग्याया चिन आसक्त नहीं हो और जो स्त्री, वृद्ध और जिशुओं की हिंसा करता हो तथा स्वभाव और प्रकृति से विचारीन जितने भी कार्य है, सब गयप्रद हैं ॥142-143॥

अभीष्मं चापि सुप्तस्य निरुत्साहाविलम्बिनः ।

***अलक्ष्मीपूर्णक्षितस्य प्राप्तोति स महद्भयम् ॥144॥**

जो निरन्तर गोचर वाला है, निरुत्साही है और इन गे रहित है, उस महान् भय की प्राप्ति होती है ॥144॥

कद्यादा शकुना यत्र बहुशो विकृतस्वनाः ।

तत्रेन्द्रियार्थविगुणाः श्रिया हीनाश्च मानदाः ॥145॥

जहाँ पांगमधीं पक्षी अत्यधिक विकृत स्वर वाले हों वहाँ मनुष्य इन्द्रियों के अर्थों को गढ़ण करने की शक्ति नहीं रखती है और नक्षमी गे रहित होते हैं। अर्थात् वहाँ प्रशान्तता और निर्धनता जिव म करती है ॥145॥

निपत्तिं द्रूमश्छत्को रस्वप्नेश्वरभयलक्षणम् ।

रत्नानि यस्य नश्यन्ति बहुशः प्रज्वलन्ति वा ॥146॥

जो व्यक्ति स्वाज्ञ में निर्भय होकर कटे हुए पेड़ को गिरते देखता है, उसके ललन नष्ट हो जाते हैं अथवा बहुमूल्य पदार्थ अग्नि लगने से जल जाते हैं ॥१४६॥

क्षीयते वा म्रियते वा पञ्चमासात् परं नृपः ।

गजस्यारोहणे यस्य यदा दन्तः प्रोभद्यते ॥१४७॥

जब हाथी पर सवारी करते गमय, हाथी के दाँत टूट जाएँ तो सवारी करने वाला राजा पाँच महीने के उपरान्त क्षय या मरण को प्राप्त हो जाता है ॥१४७॥

दक्षिणे राजपीडा स्यात्सेनायास्तु बधं वदेत् ।

मूलभंगस्तु यातारं करिकानं नृपं वदेत् ॥१४८॥

^१मध्यमंसे गजाध्यक्षमग्रजे स पुरोहितम् ।

विडाल-नकुलोलूक-काक-कंकसमप्रभः ॥१४९॥

यदा भंगो भवत्येषां तदा ब्रूयादसत्फलम् ।

शिरो नासाग्रकण्ठेन सानुस्वारं निशंसनैः ॥१५०॥

^२भक्षितं संचितं यच्च न तद् ग्राहन्तु वाजिनाम् ।

नाभ्यंगतो महोरस्कः कण्ठे वृत्तो ^३यदेरितः ॥१५१॥

^४पाश्वे तदा भयं ब्रूयात् प्रजानामशुभकरम् ।

अन्योन्ये समुदीक्षःते हेष्यस्थानगता हयाः ॥१५२॥

यदि दाहिना दाँत टूटे तो राजपीडा और मेना का बध तथा मूल दाँतों का भंग होना गमन धर्मने वाले राजाओं के लिए बुरीच और भय देने वाला है ॥१४८॥

मध्य में टूटने पर गजाध्यक्ष और पुरोहित को भय होता है ।

विडाल, नकुल, उलूक, काक और बगुला दन्त का भंग हो तो अस्त् फल होता है ॥१४९॥

घोड़ों के गिर, नासाग्र भाग और कण्ठ के द्वारा सानुस्वार शब्द होने से संचित घोजन भी ग्राह्य नहीं होता ।

जब छाती तानकर घोड़ा नाभि में कण्ठ तक अकाङ्क्षा हुआ शब्द करे तब वह समीपस्थ प्रजा को अशुभवारी और भयप्रद होता है ॥१५॥

यदि घोड़ा हीमते हुए आगम में देखे तो प्रजा को भय होता है ॥१५२॥

1. मध्यमंसे गजाध्यक्षमग्रजे ग्रुः । 2. गाक्षार्थी ग्रुः । 3. युर्यागः । 4. ग पाश्वे

हेष्यस्थानगता ना गच्छने हि ग्रुः । ग्रुः ।

शयनासने परीक्षा ग्राममारी ददेत् ततः ।

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां यदा सेनामुखा ह्याः ॥153॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े सेना के सम्मुख हीसते हों अथवा शयन और आसन की परीक्षा करके अशुभ होते हों तो ग्राममारी का निर्देश करना चाहिए ॥153॥

त्रासयन्तो विभेषन्तो घोरात् पादसमुद्धृताः ।

दिवसं यदि वा रात्रि हेषन्ति सहसा ह्याः ॥154॥

यदि घोड़े पौरों से मिट्टी उखाड़ते हुए डराते हों या स्वयं डरकर छिप रहे हों तो भय समझना चाहिए । दिन अथवा रात्रि में घोड़ों का अकस्मात् हीसना भी भय का निर्देशक है ॥154॥

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां तदा विन्द्यात् पराजयम् ।

'उत्सुखा रुदन्तो वा दीनं दीनं समन्ततः ॥155॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े लगर को मूँह किये हुए रोते हों या दीन होकर नारी और भगण करते हों तो पराजय समझना चाहिए ॥155॥

³ह्या यत्र तदोत्पातं निर्दिशोद्वाजमृत्यवे ।

विच्छिन्नमाता हेषन्ते यदा रुक्षस्वरं ह्याः ॥156॥

जब घोड़े रुक्ष स्वर और दूटी-फूटी जावाज में हीसते हों तो वे अगले इस उत्पात द्वारा राजा की मृत्यु की सूचना देते हैं ॥156॥

³द्वरवदभीमनादेन तदा विन्द्यात् पराजयम् ।

उत्तिष्ठन्ति निष्ठोदन्ति विश्वसन्ति भ्रमन्ति च ॥157॥

जब घोड़े गधों के सामान तीव्र स्वर में रेंगे और उठें-बैठें तथा भ्रमण करें तो पराजय समझना चाहिए ॥157॥

रोगात्ति इव हेषन्ते तदा विन्द्यात् पराजयम् ।

अर्द्धमुखां विलोकन्ते विन्द्याजजनयदे भयम् ॥158॥

यदि शोग गो पीड़ित हुए के गमान हीसते हों तो पराजय समझना चाहिए और अर्द्धमुख रेंगे तो जनपद ना भय होता है ॥158॥

शास्ता प्रहृष्टा धर्मात्ति विचरन्ति यदा ह्याः ।

वालानां बोध्यमाणाते न ते प्राह्या विपरिचते ॥159॥

1. अन्यस्त अन्त वा यान दीन समान । २५. अन्ती कल्प गुद्रा । पांच । वही ३.

2. 156 वा गाढ़ गांड़ । में गढ़ है । ३. अन्त का पूर्वांश गुद्रा प्राण में गढ़ है ।

जब घोड़े शास्त्र, प्रसन्न और काम से पीड़ित होकर विचरण करें और स्त्रियों के द्वारा देखे जाते हों तो विद्वानों की उनका शुभाशुभत्व नहीं लेना चाहिए ॥ ५९ ॥

मूर्वं पुरीषं बहुशो विलुप्ताङ्गा प्रकुर्वतः ।
हेषत्वे दीननिद्रास्तस्तदा कुर्वन्ति ते जयम् ॥ ६० ॥

यदि घोड़े विलुप्तांग होकर अधिक मूर्व और लीद करें और निद्रा से पीड़ित होकर हींसे तो जय की सूचना देते हैं ॥ ६० ॥

स्तम्भयन्तोऽथ लांगूलं हेषत्वे दुर्मतो हयाः ।
मुहुर्दुहुरात् जृम्पत्वे तदा परम्भयं देत् ॥ ६१ ॥

पूँछ को स्तम्भतं करते हुए खिन्न होकर घोड़े हींसे और बार-बार ज़ैभार्ड लें तो परम्भय कहना चाहिए ॥ ६१ ॥

यदा विरुद्धं हेषत्वे स्वल्पं विकृतिकारणम् ।
तदोपसर्गं व्याधिर्वा सद्यो भवति राजिः ॥ ६२ ॥

यदि घोड़े विकृत कारणों के होने पर विपरीत हींसते हों तो राजि में उतान्न होने वाली व्याधि या उपसर्ग शीत्र ही होते हैं ॥ ६२ ॥

भूम्यां ग्रसित्वा शासं तु हेषत्वे प्राण्मुखा यदा ।
अश्वारोधाश्च बद्धाश्च तदा विलश्यति धूद्भयम् ॥ ६३ ॥

पृथ्वी में भे णकार्य को? शास खाकर यदि पूर्व की ओर गुम्बाहर घोड़े हींसे तो धूधा के निश और भय की सूचना देते हैं ॥ ६३ ॥

शरीरं केसरं पुच्छं यदा उक्तलति वाजिनः ।
परचक्रं प्रथातं च देशभंगं च निदिशेत् ॥ ६४ ॥

यदि घोड़ों के शरीर, पूँछ और नम्बाहर जनने लगे तो परमाणुन का आयपन और देशभंग की सूचना गमननी चाहिए ॥ ६४ ॥

यदा बाला प्रक्षरत्वे पुच्छं चटपटायते ।
वाजिनः सम्फुलिगा वा तदा विद्यामहद्भयम् ॥ ६५ ॥

यदि अपारण घोड़ों के बाल टूटाहर गिरने लगे, पूँछ चट-चट करने लगे और उनके शरीर में मूँहिय गिरने लगे तो जल्यधि, भय गमनना चाहिए ॥ ६५ ॥

हेषत्वे सु तदा राजः पूर्वल्ले नाश-वाजिनः ।
तदा सूर्यग्रहं विन्द्यादपराह्ले तु चन्द्रजस् ॥ ६६ ॥

यदि दोपहर में पहले राजा के हाथी, घोड़े हींसने लगे तो सूर्यग्रह और दोपहर

के बाद हींसने लगे तो चन्द्रग्रह समझना चाहिए ॥ १६६ ॥

शुक्रं काष्ठं तृणं वाऽपि यदा संदेशते हयः ।
हेषन्ते सूर्यमुद्घीश्य तदाऽग्निभयमादिशेत् ॥ १६७ ॥

सूर्य काठ, तिनके आदि खाते हुए घोड़े सूर्य की ओर मुंहकर हींसने लगे तो अग्निभय समझना चाहिए ॥ १६७ ॥

यदा शेवालजले वाऽपि भग्नं कृत्वा मुखं हयाः ।
हेषन्ते विकृता यत्र तदाप्यग्निभयं भवेत् ॥ १६८ ॥

जब घोड़े शेवाल युक्त जल में मुंह ढुबाकर हींसे तो उस समय भी अग्निभय समझना चाहिए ॥ १६८ ॥

उल्कासमाना हेषन्ते संदृश्य दशनान् हयाः ।
संग्रामे विजयं क्षेमं भतुः पुष्टि विनिदिशेत् ॥ १६९ ॥

जब उल्का के समान दाँत निशालते हुए घोड़े हीमें तो स्वामी के लिए संग्राम में विजय, क्षेम और पुष्टि का निर्देश करते हैं ॥ १६९ ॥

प्रसारयित्वा ग्रीवां च स्तम्भयित्वा च वाजिनाम् ।
हेषन्ते विजयं ब्रूयात्संग्रामे नात्र संशयः ॥ १७० ॥

गदन को जरा-गा झुकाकर टेढ़ी करके मिथ्र रूप गे खड़े होकर जब घोड़े हींसे तो संग्राम में निसमन्देह विजय की प्राप्ति होती है ॥ १७० ॥

अमणा ब्राह्मणा वृद्धा न पूज्यन्ते यथा पुरा ।
सप्तमासात् परं यत्र भयमाल्यात्युर्यस्थतम् ॥ १७१ ॥

जिस नगर में अमण, ब्राह्मण और वृद्धों की पूजा नहीं की जाती है उस नगर में सात महीने के उपरान्त भय उपरिथित होता है ॥ १७१ ॥

अनाहतानि तूर्याणि नर्दन्ति विकृतं यदा ।
षष्ठे मासे नृपो वध्यः भयानि च तदाऽदिशेत् ॥ १७२ ॥

जब वार्षि विना वजाये ही विकृतबोर अच्छ करें तो छठे महीने में राजा का वध होता है और वहीं भय भी होता है ॥ १७२ ॥

कृत्तिकासु यदोत्पातो दीप्तायां दिशि दृश्यते ।
आग्नेयो वा समाश्रित्य क्रिपक्षादग्नितो भयम् ॥ १७३ ॥

यदि पूर्व दिना में कृत्तिका नक्षत्र में उत्पात दिशलाई पड़े अथवा आग्नेय

कोण में उत्पात दिखलाई पड़े तो तीन पक्ष—डेढ़ महीने में अग्नि का भय होता है ॥ १७३ ॥

**रोहिण्यां तु यदा घोषो जिवतिर्यदि दृश्यते ।
सर्वाः प्रजाः प्रपीड्यन्ते षष्ठ्मासात्परतस्तदा ॥ १७४ ॥**

यदि रोहिणी नक्षत्र में शिंशा वायु के अव्य सुनाई पड़े तो इस उत्पात के छः महीने पश्चात् सारी प्रजा को पीड़ा होती है ॥ १७४ ॥

**उल्कापातः सनिधितः सवातो यदि दृश्यते ।
रोहिण्यां पञ्चमासेन कुर्याद् घोरं महद्भयम् ॥ १७५ ॥**

यदि रोहिणी नक्षत्र में घर्षण और वायु महित उल्कापात हो तो पाँच महीने में घोर भय होता है ॥ १७५ ॥

**एवं नक्षत्रशेषेषु यद्युत्पाताः पृथस्विधाः ।
देवतार्जनलीनं च प्रसाध्यं भिक्षुणा सदा ॥ १७६ ॥**

इसी प्रकार अन्य नक्षत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो भिक्षुओं को देवमूर्जा द्वारा उस उत्पात के अनिष्ट फल को दूर बाजा चाहिए। अर्थात् उत्पात की शान्ति पूजा-पाठ द्वारा करनी चाहिए ॥ १७६ ॥

**बाहनं महिषीं पुत्रं व्रजं सेनापतिं पुरम् ।
पुरोहितं तृपं वित्तं इन्द्र्युत्पाताः समुच्छ्रृताः ॥ १७७ ॥**

उल्पन्न द्वारा विभिन्न प्रकार के उत्पात मवारी, मेना, रानी, पुत्र, सेनापति, पुरोहित, अभाल्य, राजा और धन आदि का विनाश करते हैं ॥ १७७ ॥

**एषामन्यतरं हित्वा निर्वृतिं यान्ति ते सदा ।
परं द्वादशरात्रेण सद्यो नाशयिता पिता ॥ १७८ ॥**

जो व्यक्ति इन उत्पातों में गिरी भी उत्पात की अवधेलना करते हैं, वे बारह गणिथों में ही कष्ट को प्राप्त करने हैं तथा उनके गुटाग्व में गिरा या अन्य कोई मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ १७८ ॥

**यत्रोत्पाताः न दृश्यन्ते यथाकालमुपस्थिताः ।
तेन सञ्चयदोषेण राजा देशश्च नश्यति ॥ १७९ ॥**

जहाँ यथा समय उपस्थित द्वारा उत्पातों को नहीं देखा जाता है, वहाँ उत्पातों के द्वारा संचित दोष से राजा और देश दोनों का नाश होता है ॥ १७९ ॥

**देवान् प्रवृजितान् विप्रांस्तस्माद्ब्राजाऽभिपूजयेत् ।
तदा शास्यति तत् पापं यथा साधुभिरीरितम् ॥180॥**

उत्पात से उत्पन्न हुए दोष की शान्ति के लिए देव, दीक्षित भूनि और ब्राह्मण—प्रती व्यक्तियों की पूजा करनी चाहिए। इससे जिस पाप से उत्पात उत्पन्न होते हैं, वह गुनियों के हारा उपदिष्ट होकर शान्त हो जाता है ॥180॥

**यत्र देशे समुत्पाता दृश्यन्ते भिक्षुभिः वच्चित् ।
ततो देशादतिक्रम्य वज्रेषु रन्यतस्तदा ॥181॥**

गुनियों को जिस देश में कहीं भी उत्पात दिखलाई पड़े उस देश को छोड़कर अन्य देश में चला जाना चाहिए ॥181॥

सचित्ते ^१सुभिञ्चे देशे विरुद्धाते प्रियातिथी ।

विहरन्ति सुखं तत्र भिक्षवो धर्मकारिणः ॥182॥

धन-धान्य से परिपूर्ण, ग्रभिक्ष युवत, निरपद्रव और अतिथि-सत्कार करने वाले देश में धर्मचिरण करने वाले साधु सुखपूर्वक विहार करते हैं ॥182॥

**इति सकलमुनिजगानन्दमहामूनीश्वरभद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रे
सकलशमाऽशुभव्याख्यानविधानकथने वलुर्दशः परिच्छेदः समाप्तः ॥14॥**

विवेचन—स्वभाव के विपरीत होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भूमि। देव-प्रतिमाओं द्वारा जिग उत्पातों की नूचना प्रियाती है, वे दिव्य कहलाते हैं। ग्रन्थों का विचार, उत्तम निर्धाति, एवं विद्युत्पात, ग्रन्थवैषुर एवं इन्द्रभण्डादि अन्तरिक्ष उत्पात हैं। इन भूनि पर चल एवं स्थार प्रदार्थों का विचार सा गे दिग्नकाशी प्रकृता भीम उत्पात है। आचार्य ऋषिपूत्र ने दिव्य उत्पातों का वर्णन करके हुए बताया है कि तीर्थकर प्रतिमा का छवि भीं होना, हाथ-गाँव, पस्तक, भाषणाङ्क का भंग होना अशुभमूचक है। जिग देश या नगर से प्रतिमाओं के विरुद्ध या चक्रित भंग हो जाये तो उस देश या नगर में अशुभ होता है। छवि भंग होने से प्रश्नारक या ग्रन्थ किसी लेता की मृत्यु, रथ दूटने से राजा वा परण तथा जिग नगर से रथ दूटता है, उस नगर में छग्नीों के गवायाए अशुभ कल की प्राप्ति होती है। नगर में लहापारी, चोरी, दक्षती या ग्रन्थ अशुभ कार्य छग्नीों के भीतर होता है। भाषणाङ्क के भंग होने से लीमरे या पांचवें महीने में व्राण्डि आती है। उन प्रदेश के शासक या शासन प्रतिवार में चिसी की मृत्यु होती है। नगर में धन-जन की हतनि होती है। प्रतिमा

के हाथ भंग होने से तीसरे बड़ीले में कष्ट और तीव्र भंग होने से सातवें महीने में कष्ट होता है। हाथ और पाँव के भंग होने का फल नगर के साथ नगर के प्रशासक, मुखिया एवं पंचायत के प्रमुख को भी घोगना पड़ता है। प्रतिमा का अचानक भंग होना अन्यन्त अजुब है। यदि रखी हुई प्रतिमा स्वयमेव ही मध्याह्न या प्रातः-काल में भंग हो जाय तो उस नगर में तीन महीने के उपरान्त महा रोग या संक्रामक रोग फैलते हैं। विशेष रूप से हैजा, जिन एवं इनप्रयुएंजा की उत्पत्ति होती है। पशुओं में भी ऐसे इत्यन्त होता है।

यदि स्थिर प्रतिमा अपने स्थान से हटाकर दूरगति जगह पहुँच जाय या चलती हुई पालूम पड़े तो तीमरे गहने अचानक विपत्ति आती है। उस नगर या प्रदेश के प्रमुख अधिकारी वो मृत्यु तुच्छ करण गोपना पड़ता है। जगसाधारण वो भी आधि-व्याधिजन्य काट उठता पड़ता है। यदि प्रतिमा गिहामन में नीचे उत्तर ओर अथवा मिहामन में नीचे गिर जाए तो उस प्रदेश के प्रमुख वो मृत्यु होती है। उस प्रदेश में अकाल, महामारी और वर्षायाव रहता है। यदि उत्तरांत उत्तरात व्यापार सात दिन या अन्दर इन तक हों तो निश्चयत प्रतिमादित गल की प्राप्ति होती है। यदि उत्तर दिन उत्तरात होने राजन्त हो गया तो पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता है। यदि प्रतिमा जीभ निकालकर कई दिनों तक रोती हुई दिखलाई पड़े तो नगर में यह घटना घटती है, उस नगर में प्रत्यक्ष उपद्रव होता है। प्रशामक और प्रशाम्यों में झागड़ा होता है। धन-धान्य की क्षति होती है। और और डाकुओं का उपद्रव अधिक बढ़ता है। मंसाग, मारकाट एवं मंथरी की स्थिति बढ़ती जाती है। प्रतिमा का रोता राजा, अन्यीं या किसी महान् जीता की मृत्यु का मूलक; हैमना पारम्पारिक विद्रेष, यंत्रण एवं कलह वा यूनक; चलना और काँपना वीरानी, नंथर्प, कलह, विपाद, आधी पृष्ठ एवं गोला। चक्कर काटना धय, विद्रेष, गम्भान हानि तथा देश वी धन-जन-हानि का गूचक है। प्रतिमा का हिंगना तथा गंग बदलना अनिष्टसूच। एवं तीन महीनों में नाना प्रकार के काटों का मूलक उवगत करना चाहिए। प्रतिमा का पर्याजना अग्निशय, चोरशय एवं महामारी वज्र गूचक है। भुजीं साहत प्रतिमा ये परीना निकले तो जिस प्रदेश में यह घटना घटित होती है, उसके सौ कोण की दूसी शह वारी बोग प्रत-जन की धति होती है। अतिवृद्धि या अवाकृष्टि के रागण जनता को महान् कष्ट होता है।

तीर्थकर की प्रतिमा ये परीना निकलना धार्मिक विद्रेष एवं संयर्ण की गूचना देता है। गुनि और शावक दोनों पर किसी प्रकार वी विपत्ति आती है तथा दोनों को विद्यमियों द्वारा उपराग महत करना पड़ता है। अकाल और अवर्षण की स्थिति भी उत्तरान हो जाती है। यदि शिष्ट वी प्रतिमा ये परीना निकले तो ग्राहणों को करण, गुबेर की प्रतिमा ये परीना निकले तो वैश्यों को करण, कामदेव

की प्रतिगा से पसीना निकले तो अगम की हानि, कृष्ण की प्रतिमा से पसीना निकले तो सभी जातियों को कष्ट; सिंह और बौद्ध प्रतिमाओं से धूआँ सहित पसीना निकले तो उम प्रदेश के ऊपर महान् कष्ट, चण्डिका देवी की प्रतिमा से पसीना निकले तो हाथियों का घर्षण; नागिन दंवी की प्रतिमा से धूआँ सहित पसीना निकले तो गर्भनाश; राम की प्रतिमा से पसीना निकले तो देश में महान् उपद्रव, खूट-पाट, धननाश; सीता या पार्वती की प्रतिमा से पसीना निकले तो नारी-ममाज को महान् कष्ट एवं सूर्य की प्रतिगा से पसीना निकले तो संसार को अत्यधिक कष्ट और उपद्रव गहन करने पड़ते हैं। यदि तीर्थकर ती प्रतिमा भग्न हो और उसमें अग्नि की अपट या रक्त कीधारा भिजलती हुई दिखलायी गई तो संसार में मार-काट निश्चय होती है। आपमें मार-काट हुए बिना किसी को जागित नहीं मिलती है। किसी भी देव ती प्रतिमा का भंग होता, फूटना वा हँसना चलना आदि अजुभरारक है। उक्त कियाएँ एक मप्ताह तक लगातार होती हों तो निश्चय ही तीन महीने के भीतर अनिष्टकारक फल मिलता है। प्रहों की प्रतिमाएँ, जीवीस जागनदेवों एवं शासनदेवियों की प्रतिमाएँ, शेत्रगाल—और दिवसालों की प्रतिमाएँ इनमें उक्त प्रकार की विकृति होने से व्याधि, धनहानि, भरण एवं अनेक प्रकार वी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देवकुमार, देवकुमारी, देववनिका एवं देवदूतों के जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे गमाज में अनेक प्रकार की हानि पहुंचाते हैं। देवों के प्रसाद, भवन, चैत्यालय, वेदिका तोरण, केतु आदि के जलने वा विजली द्वारा अग्नि प्राप्त होने से उम देश में अत्यन्त अनिष्टकर कियाएँ होती हैं। उक्त कियाओं का फल छः महीने में प्राप्त होता है। भवनदासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवों के प्रकृति विषयों से लोगों को नाना प्रशार के कष्टों का सामना करना पड़ता है।

आकाश में असमय में इन्द्रधनुष दिखलायी गई तो प्रजा को कष्ट, वार्षिभाव और धनहानि होती है। इन्द्रधनुष का वर्षा ऋतु में होना ही शुभगूचक माना जाता है, अत्य ऋतु में अजुभमूचक कहा गया है। आकाश से रुधिर, मांस, अस्त्र और चर्वी की वर्षा होने से संग्राम, अनता शो गथ, गहामारी एवं प्रशारावों में मत्तभेद होता है। धन्त्य, मृदर्ण, बल्काल, पुष्य और फल की वर्षा हो तो उम नगर का विनाश होता है, जिसमें गह भटना घटती है। जिग नगर में वोथले और धूलि की वर्षा होती है, उम नगर का गर्वनाश होता है। बिना बादल के आकाश से ओरों का गिरना, विजली वा तड़कना तथा बिना गर्जन के अवस्थात् विजली वा गिरना उस प्रदेश के बिए गयोल्यादक है तथा नाना प्रकार की हानियाँ होती हैं। किसी भी व्यक्ति को जानित नहीं मिल सकती है। निर्मल सूर्य में छाया दिखलायी न दे अथवा विकृत छाया दिखलायी दे तो देश में भहाभय होता है। जब दिन या

रात में मंधहीन आकाश में पूर्व या पश्चिम दिशा में इन्द्रधनुष दिखलाई देता है, तब उस प्रदेश में योर दृग्भिन्न पड़ता है। अब आकाश में प्रतिष्ठित हो, तृण-तुर्हाई की छान सुनाई दे पर्व आकाश में पर्गता, गालर का शब्द सुनाई पड़े तो दो महीने तक महाध्वनि में प्रजा गीहित रहती है। आकाश में किसी भी प्रकार का अन्य उत्पात दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, व्याधि, मृत्यु एवं संघर्षजन्य दुःख उठाना पड़ता है।

दिन में धूलि का यरसगम, गत्रि के सप्तय मेघविहीन आकाश में नक्षत्रों का नाश या दिन में नक्षत्रों का दर्जन होना संघर्ष, मरण, भय और धन-धान्य का विनाश मूलक है। आकाश का बिना बादलों के रंग-विरंग होना, क्रिकृत आकृति और संस्थान का होना भी अश्रभमूलक है। जहाँ छः महीनों तक लयातार हर महीने उल्का दिखलाई देती रहे, वहाँ मनुष्य का मरण होना है। गफेद और घूघर रंग की उहराएं पुण्यात्मा कहे जाने वाले व्यक्तियों को कष्ट गहूँचाती है। पंचरंगी उल्का महामारी और इथर-उधर टकराकर नष्ट होने वाली उत्पात देश में उपद्रव उत्पन्न करती है। अन्तर्गित नियमों का विचार करते समय पूर्वोक्त विद्युत्पात, उल्कापात आदि का विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

भूमि पर प्रकृति विश्वर्यय- उत्पात दिखलाई पड़े तो अनिष्ट समझना चाहिए। ये उत्पात जिग स्थान में दिखलाई देते हैं, अनिष्ट फल उभी जगह घटित होता है अस्त्र-णस्त्रों का जलना, उनके शब्द होना, जलते समय अग्नि से शब्द होना तथा इधन के बिना जलाये अग्नि का जल आमा अनिष्टमूलक है। इस प्रकार के उत्पात में किर्मा आत्मीय की मृत्यु होती है। अगमय में वृक्षों में फल-फूल का आना, वृक्षों का हमेना, रोना, दृश्य निकलना आदि उत्पात धनकथय, शिशुओं में रोग तथा जाप्या में झायड़ा होने वी सूचना देते हैं। वृक्षों ग मत्त निकलने तो बाहरी का नाश, स्थिर नियन्त्रण से संप्राप्त, शहद नियन्त्रण से रोग, तेल नियन्त्रण से भय और दृग्निति पदार्थ नियन्त्रण से पञ्जुधय होता है। अंगुर सूख जाने से वीर्य और अस्त्र का नाश, वीयहीन वृक्ष अकारण मूख जार्य तो सेना का विनाश और अन्तर्धय, आग ही वृक्ष खड़ा होकर ढड़ देठे तो देव का गय, कुसमय में कल फूलों का आना प्रशास्त्र और नेत्राओं का बिनाश, वृक्षों ग ज्वाला और धूओं निकलने तो मनुष्यों का शय होता है। वृक्षों ग गनुष्य के जैसा शब्द निकलता हुआ सुनाई पड़े तो अत्यन्त अजुमावारी होता है। इसमें मनुष्यों में अनेक प्रकार की वीपारियाँ फैलती हैं, जलना भी अनेक प्रकार से अशान्ति आती है।

क्रमंज आदि के एक काल में दो या तीन फल की उत्पन्नि हो अथवा दो फूल या फल दिखायी पड़े तो जिस जगह यह घटना घटित होती है, वहाँ के प्रशासक का मरण होता है। जिस विमान के खेत में यह नियम दिखलाई पड़ता है, उसकी भी मृत्यु होती है; जिस गाँव में यह उत्पात दिखलाई पड़ता है, उस गाँव में

धन-धान्य के विनाश के साथ अनेक प्रकार का उत्पन्न होता है। फल-फूलों में विकार का दिखलाई पड़ता, प्रकृति विश्व फल-फूलों का दृष्टिगोचर होना ही उम स्थान वी शान्ति को नष्ट करने वाला तथा आपस में संघर्ष उत्पन्न करने वाला है। शीत और ग्रीष्म में परिवर्तन हो जाने से अर्थात् शीत ऋतु में गर्मी और ग्रीष्म ऋतु में शीत पड़ने से अथवा सभी ऋतुओं में परस्पर परिवर्तन हो जाने से दैवभय, राजभय, रोगभय और नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। यदिज्ञदियों नगर के निकटवर्ती स्थानों पर छोड़कर दूर हटकर बहने लगें तो उन नगरों की आवादी घट जाती है, वहाँ अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। यदि नदियों का जल विकृत हो जाय, वह रुद्धिर, तैल, धी, गहड़ आदि भी गम्भीर आकृति के समान बहता हुआ दिखलाई पड़े तो भय, अग्नाग्नि और धनभय होता है। कुओं से धूम निकलता हुआ दिखलाई पड़े, कुओं का जल स्वर्ण ही खीलने लगे, रोमे और गाने का शब्द जय से खिलने लो महामारी फैलती है। जल का रूप, रभ, गम्भीर और स्पर्श में परिवर्तन हो जाय तो भी महामारी नी भूचना समझनी चाहिए।

सिवियों का प्रथम विकार होना, उनके एक साथ तीन-चार वर्षों का पैदा होना। उत्पन्न हुए वर्षों की आकृति वशुओं और पक्षियों के समान हो तो जिस कुल में यह घटना घटित होती है, उस कुल का विनाश। उस गाँवि या नगर में महामारी, श्वर्षण और अज्ञानि रहती है। उस प्रकार के उत्पात का फल छह महीने में लेकर एक वर्ष तक प्राप्त होता है। छोड़ी, लैटनी, भैंश, गाय और हविनी एक साथ दो वर्षों पैदा करें तो उन्हीं मृत्यु हो जाती है तथा उस नगर में मारकाट होती है। परन्तु जानि का गम्भीर जाति के पशु के साथ मैथुन करें तो अमंगल होता है। दो वैन परस्पर में स्तनपान करें तथा कुत्ता गाय के बछड़े का स्तनपान करें तो गहान् अमंगल होता है। पशुओं के विषरीत जान्चरण से भी अनिष्ट की आणंका समझनी चाहिए। यदि दो स्त्री जाति के श्राणी आपस में मूर्शुन करें तो भय, स्तनपान अकारण करें तो हानि, दुर्भिक्ष एवं धन-विनाश होता है।

रथ, मोटर, यहूली आदि भी सवारी बिना चलाये चलने लगे और विना किसी खगड़ी के चलाने पर भी न लगे तथा सवारियाँ चलाने पर भूमि में गड़ जायें तो अशुभ होता है। विना बजाये तुरही का शब्द होने लगे और इनाने पर विना किसी प्रकार की खगड़ी के तुरही शब्द न लगे तो इनमें परन्तु का आगमन होता है अथवा शामक का परिवर्तन होता है। गेताओं में मतभद होता है और वे आपस में लगड़ते हैं। यदि एवन स्वर्ण श्री गांधी-सांघ की विकृत धर्मि वारता हुआ चले तथा एवन से शोर दुर्गम्भ आती हो तो भय होता है, प्रजा का विनाश होता है तथा दुर्भिक्ष भी होता है। घर के पालनू पक्षिगण वनसें जायें और वनसें पक्षी निर्भय होकर पुर में प्रवेश करें, दिन में चरने वाले शाशि में अथवा रात्रि के चरने वाले दिन में प्रवेश करें तथा दोनों सांध्याओं में मृग और पक्षी मण्डल बौधकर एकत्र

हीं तो भय, परण, महामारी एवं धान्य का विनाश होता है। सूर्य की ओर भूह कर गीदड़ रोयें, कबूतर या उल्लू दिन में राजमहल में प्रवेश करे, प्रदोष के समय मुर्गी शब्द करे, हेमन्त आदि कहनु श्रोतों में कोयल बोले, आकाश में बाज आदि पक्षियों का प्रतिलोम मण्डल विचरण करे तो भयदायी होता है। वर, चैत्यालय और द्वार गर अकारण ही पक्षियों का झुण्ड गिरे तो उग घर या चैत्यालय का विनाश होता है। यदि कुत्ता हड्डी लेकर घर में प्रवेश करे तो रोग उत्पन्न होने की सूचना देता है। पशुओं की आवाज मनुष्यों के समान भालूम पड़ती हो तथा वे पशु मनुष्यों के समान आचरण भी करें तो उस स्थान पर घोर संकट उपस्थित होता है। रात में पश्चिम दिशा की ओर कुन्ना शब्द करते हों और उसके उत्तर में शृगाल शब्द करें अर्थात् 'फहले कुत्ता बोलें, पश्चात् शृगाल अनन्तर पूर्ण कुला, तत्त्वात् शृगाल इस प्रकार शब्द करें तो उस नगर का विनाश हो गयता है और तीन वर्षों तक उस नगर पर आभ्यन्ति आती रहती है। भूकम्भ हुए विना पृथ्वी फट जाए, विना अग्नि के धुआं दिखलाई पड़े और धानक गण मार-पीट का खेल खेलते हुए कहें—मार डालो, पीटो, डाका विगाश कर दो तो उस प्रदेश में भूकम्भ होने की सूचना समझनी चाहिए। विगा बनाये फिसी अवित के घर की दीवारों पर गेरू के लाल चिन्ह या कोयने भे काले चित्र बन जायें तो उस घर का पाँच महीने में विनाश हो जाता है। जिस घर में अधिक मनुष्यों जाल बनाती है उस घर में कलह होती है। गाँव या नगर के बाहर दिन में शृगाल और उल्लू शब्द करें तो उस गाँव के विनाश की सूचना समझनी चाहिए। वर्षा कान में पृथ्वी का कौपना, भूकम्भ होना, बादलों की आकृति या बदल जाना, पर्वत और घरों का चलायमान होना, भूंकट शब्दों का चारों दिशाओं में सुनाई पड़ना, सूख हुए बृक्षों में अंकुर का निकल आना, इन्द्रधनुष का काले रूप में दिखलाई पड़ना एवं श्यामवर्ण की विद्युत का मिरना भय, मूल्य और अनावृष्टि या सूचक है। जब वर्षा-कहनु में अधिक वर्षा होने पर भी पृथ्वी सूखी दिखलाई पड़े, तो उस वर्षे दुष्मिका की स्थिति समझनी चाहिए। ग्रीष्मकहनु में आकाश में बादल दिखलाई पड़े, विजली कड़क और चारों ओर वर्षा कहनु की बहार दिललाई पड़े तो भय तथा महामारी होती है। वर्षा कहनु में तेज हवा चले और त्रिकोण या चीकोर ओंनि गिरे तो उग वर्षे अकाल की आज्ञानी समझनी चाहिए। यदि भाग, बारी, धोड़ी, हथिनी और स्त्री के विपरीत गर्भ की स्थिति हो तथा विवरीत सत्त्वान प्रसव जरे तो राजा और प्रजा दोनों के लिए अत्यन्त कष्ट होता है। कहनुओं में प्रसवाग्निः विकार दिखलाई पड़े तो जगत् में पीड़ा, भय, संवर्ष आदि होते हैं। यदि आकाश में धूलि, अग्नि और धुआं की अधिकता दिखलाई पड़े तो दुष्मिका, चोरों का उपद्रव एवं जनता में अशान्ति होती है।

रोग-सूचक-उत्पात—चन्द्रमा कृष्ण वर्ण का दिखलाई दे तथा तारणे

विभिन्न वर्ण की टूटती हुई मालूम पड़े तथा भूर्य उदयकाल में कई दिनों तक लगतार काला और रोना हुआ दिखलाई पड़े तो दो महीने उपरान्त महामारी का प्रकोप होता है। विलीनी तीन बार शोकर चुप हो जाय तथा नगर के भीतर आकर शृणाल—सियार तीन बार शोकर चुप हो जाय तो उस नगर में भयंकर हैजा फैलता है। उल्कागात हरे वर्ण का हो, चढ़मा भी हरे वर्ण का दिखलाई पड़े तो सामूहिक रूप में ज्वर का प्रकोप होता है। यदि सूखे वृक्ष अचानक हरे हो जाएं तो उस नगर में सात महीने के भीतर महामारी फैलती है। चूहों का समूह सेनी-बनाकर नगर के बाहर जाता हुआ दिखलाई पड़े तो ऐसे का प्रकोप समझना चाहिए। पीपल वृक्ष और बट वृक्ष में असमय में पुष्प फल आवें तो नगर या गाँव में पांच महीनों के भीतर खंकामक रोग फैलता है, जिसमें सभी प्राणियों को कष्ट होता है। मोधा-मेहर और मोर गति में असमय करें तथा इवेत काक एवं गृद्ध घरों में घुस आयें तो उस नगर या गाँव में तीन महीने के भीतर दीमारी फैलती है। काक मैथुन देखने से छः मास में मृत्यु होती है।

धन-धान्य नाशसूचक उत्पात - वर्षा ज्यनु में लगातार सात दिनों तक जिस प्रदेश में श्रोनि वर्षा होती है, उस प्रदेश के धन-धान्य का नाश हो जाता है। रात्रि या दिन उल्लू किसी के घर में प्रविष्ट होए बोलने लगे तो उस व्यक्ति की सम्पत्ति छः महीने में विलीन हो जाती है। घर के द्वार पर स्थित वृक्ष रोने लगे तो उस घर की सम्पत्ति विलीन होती है, घर में रोग एवं कष्ट फैलते हैं। अचानक घर की छत के ऊपर मिथ्यत होकर इवेत काक गाँव वार जोर-जोर से काँव-काँव करे, पुनः चुप होकर तीन बार धीरेन्धीरे काँव-काँव करे तो उस घर की सम्पत्ति एक वर्ष में विलीन हो जाती है। यदि यह घटना नगर के बाहर पश्चिमी द्वार पर घटित हो तो नगर की गम्भीर विलीन हो जाती है। नगर के मध्य में किसी व्यक्ति व्यन्तर की बाधा या व्यन्तर का दर्शन लगातार कई दिनों तक हो तो भी नगर की श्री विलीन हो जाती है। यदि ग्रामांश में दिन भर धूल बरगती रहे, तेज वायु चले और दिन अर्थक गालूम हो तो उस नगर की गम्भीर वाट होती है, जिस नगर में यह घटना घटती है। जंगल में गयी हुई गायें भव्याल्ल में ही रंभाती हुई लौट आयें और वे अपने बछड़ों को दूध न पिलायें तो विलापि का विनाश समझना चाहिए। किसी भी नगर में कई दिनों तक संघर्ष होता रहे, वहाँ के निवासियों में मेल-मिलाप न हो नो गाँव महीनों में गम्भीर गम्भीरता का विनाश हो जाता है। वर्षण नक्षत्र का चेतु दक्षिण में उदय हो तो भी सम्पत्ति का विनाश गम्भीर चाहिए। यदि लगातार तीन दिनों तक प्रातः सन्ध्या काली, सध्याल्ल सन्ध्या नीली और साथं सन्ध्या मिथिल वर्ण की दिखलाई पड़े तो भय, आतंक के साथ द्रव्य विनाश की भी सूचना फैलती है। रात को निरञ्च आकाश में ताराओं का अभाव दिखलाई पड़े या ताराएँ टूटती हुई मालूम हों तो गीग और धनताण दोनों फल प्राप्त होते

है। यदि ताराओं का रंग भस्म के समान मालूम हो, दक्षिण दिशा रुदन करती हुई और उत्तर दिशा हँगती हुई-सी दिखलाई पड़े तो धन-धान्य का विनाश होता है। पशुओं की बाणीं यदि मनुष्य के समान मालूम हो तो धन धान्य के विनाश के साथ संप्राप्ति की सूचना भी मिलती है। कबूतर अपने पंखों को बटकता हुआ जिस घर में उल्टा गिरता है और अकारण ही मृत जैसा हो जाता है, उस घर की सम्पत्ति का विनाश हो जाता है। यदि गाँव या नगर के धीम-गच्छीस नगे बच्चे घूलि में खेल रहे हों, और वे अकस्मात् 'नष्ट हो गया' 'नष्ट हो गया' इन शब्दों का व्यवहार करें तो उस नगर से समाजि रुठकर चली जाती है। रथ, मोटर, इक्का, रिक्षा, साइकिल आदि की मवारी पर चढ़ते ही कोई व्यक्ति पानी गिराते हुए दिखलाई पड़े तो भी धननाश होता है। दक्षिण दिशा-नदी और में शूगाल का रेते हुए नगर में प्रवेश करना धनहानि का मूलक है।

वर्षभाव सूचक उत्पात—ग्रीष्म ऋतु में आकाश में इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े, माघ मास में गर्भी पड़े तो उस वर्ष वर्षा नहीं होती है। वर्षा ऋतु के आगमन पर कुहासा छा जाये तो उस वर्ष वर्षा का अभाव जानना चाहिए। आपाह महीने के ग्राम्य में इन्द्रधनुष का दिखलाई पड़ना भी वर्षभाव मूलक है। मध्य की छोड़कर अन्य जाति के प्राणी सान्तान का भक्षण करें तो वर्षभाव और धोर दृष्टिका की सूचना समझनी नाहिए। यदि चूहे लड़ते हुए दिखलाई पड़ें, रात के समय श्वेत धनुष दिखलाई दे, सूर्य में छेद मालूम पड़े, चन्द्रमा दूरा हुआ-गा दिखलाई पड़े, घूलि में चिड़ियाँ स्नान करें और सूर्य के अस्त होते समय सूर्य के पास ही दूसरा उत्तोतवाला सूर्य दिखाई दे तो वर्षभाव होता है तथा प्रजा को काट उठाना पड़ता है।

अग्निभव सूचक उत्पात—मूर्ख काठ, तिनका, धान आदि का भक्षण कर घोड़े सूर्य की ओर मुँह कर हीमने लगें तो तीन महीने में नगर में अग्नि या प्रकोप होता है। घोड़ों का जल में हीसना गायों का अग्नि चाटना, या धाना, सूखे वृक्षों का स्वयं जल उठना, पृथक आम या लड्डी में से स्वयं धुओं निवासना, तड़कों का आग से छेल करना, या खेलते-खेलते बच्चे पर गे आग ले जायें, पक्षी आकाश में उड़ते हुए अकरुमात् गिर जायें तो उस गर्व या नगर में गाँच दिन रो लेकर तीन महीने तक अग्नि या प्रकोप होता है।

राजनीतिक उपद्रव सूचक—जिस रथाचरण मनुष्य गाना गा रहे हों, वही गाना सुनने के लिए यदि ब्राह्मी, हरिनी, कुनियाँ एकत्र हों तो राजनीतिक उपद्रव होते हैं। जहाँ बच्चे खेलते-खेलते आपम में लड़ाई करें, कोध से झगड़ा आगम्भ करें वहाँ मुळ अवश्य होता है तथा राजनीति के मुखियों में आपम में कूट पड़ जाने से दंश की हानि भी होती है। बिना बैलों का हल यदि आप से आग खड़ा होकर जांचने लगे तो गरचक - जिस पार्टी का शामन है, उसमें विपरीत पार्टी का शामन होता।

है। शासन प्राप्त पार्टी या दल को पराजित होना पड़ता है। शहर के मध्य में कुत्ते ऊंचे मुँह कर लगातार आठ दिन तक भूकते दिखलाई पड़े तो भी राजनीतिक झगड़े उत्पन्न होते हैं। जिस नगर या गाँव में गीदड़, कुत्ते और चूहा बिल्ली को मार लगायें, उस नगर या गाँव में राजनीति को लेकर उपद्रव होते हैं। उसमें अशान्ति इस घटना के बाद दस महीने तक रहती है। जिस नगर या गाँव में मूखा वृक्ष स्थान ही उखड़ता हुआ दिखलाई पड़े, उस नगर या गाँव में पार्टीबन्दी होती है। नेताओं और मुखियों में परस्पर वैष्णवस्थ हो जाता है, जिससे अत्यधिक हानि होती है। जनता में भी फूट हो जाने से राजनीति की स्थिति और भी विषय हो जाती है। जिभ देण में बहुत मनुष्यों की आवाज मुनाई पड़े, पर बोलने वाला कोई नहीं दिखलाई दे उस देण या नगर में पांच महीनों तक अशान्ति रहती है। रोग-बीमारी का प्राप्ती भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय गीदड़, लोमड़ी किसी नगर या ग्राम के चारों ओर घटन करें तो भी राजनीतिक झंझट रहता है।

वैयक्तिक हानि-लाभ सूचक उत्पात - यदि कोई व्यक्ति याजों के न बजाने पर भी लगातार सात दिनों तक बाजों न्यौ इतनि जुने तो चार महीने में उसकी मृत्यु तथा धनहानि होती है। जो अपनी नाक को अग्रभाग पर मक्खी के न रहने पर भी मक्खी बैठी हुई देखता है, उसे व्यापार में चार महीने तक हानि होती है। यदि प्रातःकाल जागने पर हाथों की हथेतियों पर दृष्टि पड़े जाए तथा हाथ में कलश, छवजा और लंत्र यों ही दिखलाई पड़े तो उसे सात महीने तक धन का लाभ होता है, तथा भावी उन्नति भी होती है। कहीं मध्य के साधन न रहने पर भी सुगन्ध मालूम पड़े तो भिजों में मिनार, शान्ति एवं व्यापार में लाभ तथा सुख की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति स्थिर चीजों को बनायमान और चड्ढ़ाल वस्तुओं को स्थिर देखता है, उसे आधि, माणभय एवं धननाश के कारण कष्ट होता है। प्रातःकाल यदि आशाश बाला दिखलाई पड़े और सूर्य में अनेक प्रशार के दाग दिखलाई दें तो उस व्यक्ति को तीन गहीने के भीतर रोग होता है।

सुख-दुःख को जानकारी के लिए अन्य फलादेश

नेत्रस्फरण - आँख फड़कने का विशेष फलादेश दाहिनी आँख का नीचे का कान के पास का हिस्सा फड़कने से हानि, नीचे का मध्य वा हिस्सा फड़कने से भय और नाक के पास वाला नीचे का हिस्सा फड़कने से धनहानि, वात्मीय को कष्ट या मृत्यु, धय आदि फल होते हैं। इसी आँख का ऊपरी भाग अर्थात् बरीनी का कान के निकट बाला हिस्सा। फड़कने से सुख, मध्य का भाग फकड़ने से धनलाभ और ऊपर ही नाक के पास बाला भाग फड़कने से हानि होती है। बायीं आँख का नीचे बाला भाग नाक के पास का फड़कने से सुख, मध्य का हिस्सा फड़कने से भय और कान के पास बाला नीचे का हिस्सा फड़कने से सम्पत्ति-लाभ होता है। बरीनी

अंगस्फुरण फल—अंग फड़कने का फल

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
पहलक स्फुरण तलाट स्फुरण कथा स्फुरण शूमध्य स्फुरण शूयम स्फुरण कपाल स्फुरण नेत्र स्फुरण नेत्रकोण स्फुरण नेत्रसमीप नेत्रयथा स्फुरण नेत्रयक्ष पलक स्फुरण नेत्रकोषाङ्ग देश स्फुरण नासिका स्फुरण हृत स्फुरण	पृथ्वी लाभ स्थान लाभ भोग समृद्धि सुख प्राप्ति महान् सुख शुभ ददा लाति लक्ष्मी लाभ ध्रिय सम्भागम साकलता, शांगसम्मान मुकद्दमे में विजय कलत्र लाभ	वक्षःस्फुरण हृदय स्फुरण कटिपाश्वर्व स्फु. नाभि स्फुरण आंत्रक स्फुरण आग स्फुरण कुक्षि स्फुरण उदर स्फुरण लिंग स्फुरण गुदा स्फुरण वृषण स्फुरण ओष्ठ स्फुरण हृन् स्फुरण	विजय वांछित सिद्धि प्रमोदवन प्रीति स्त्रीनाश कीशवृद्धि पर्वि लाप्ति सुप्रीति लाभ क्षेत्र प्राप्ति स्त्रीलाभ याहन प्राप्ति पूत्र प्राप्ति प्रियवरद्ध लाभ भृत्य	कण्ठ स्फुरण ग्रीवा स्फुरण पृष्ठ स्फुरण कम्पेल स्फुरण वाह स्फुरण वाह स्फुरण वाहुप्रसा स्फुरण वरितेश स्फुरण उदःस्फुरण जान् स्फुरण जंघा स्फुरण पादशेषि स्फुरण पादतल स्फुरण पाद स्फुरण	पैशवर्य लाभ रिपु भृय युद्ध पराजय वसंगना प्राप्ति पित्र प्राप्ति मधुर भोजन धनायम अभ्युदय वस्ता लाभ शत्रु वृद्धि स्वामि प्राप्ति स्थान-लाभ नृपत्व अलाभ

पल्लीपतन और गिरगिट आरोहण फलबोधक चक्र

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
हिर नासिक बामभुजा जानुद्यु कठिपाण गुल्फ	लाभ यमधि राजभय शूभागम सवारी बन्धन	तलाट टाक्षण कं. कंठ जंघा दक्षिण- सवान	वन्मुदर्शन आयुर्वृद्धि शून्याश शूण कट, घन मरण	धृपथ्य वामकर्ण स्तनदय हस्तदय वामर्मणि- धंध	रुज्यसंवय वृहुत्तम दुर्भाग्य वर्षलाप वामर्मणि- धंध	उत्तरारु नेत्र र दृढ़ा स्कन्ध हृषि गमन	वननाश धनप्राप्ति भृप्त्यनाश विजय वननाश वाश	अद्यग्राम द. भृय पृष्ठदेश प्राप्ति नामिता भृत्य	नवतृत्याम वृद्धिमात्र वहृष्णन- प्राप्ति विजयन भोजन स्त्रीनाश मृणा

का नाक के पास बाला भाग फड़कने से भय, मध्य का हिस्सा फड़कने से चोरी या धनहानि और कान के पास बाला हिस्सा फड़कने से कट, मृत्यु अपनी या किसी आत्मीय की अथवा अन्य किसी भी प्रकार की अशुभ सूचना समझना चाहिए। साधारणतया स्त्री की वायें अंख का फड़कना और पुरुष की दाहिनी अंख का फड़कना शुभ माना जाता है, पर विशेष जानने के लिए दोनों ही नेत्रों के पृथक्-पृथक् भागों के फड़कने का विचार करना चाहिए।

पैर, जंघा, घुटने, गुदा और कमर पर छिपकली गिरने से बुरा फल होता है, अन्यत्र प्रायः शुभ फल होता है। पुरुषों के वायें अंग का जो फल बतलाया गया है, उसे स्त्रियों के दाहिने भाग तथा पुरुषों के दाहिने अंग के फलादेश की स्त्रियों के वायें भाग का फल जानना चाहिए। छिपकली के गिरने में और गिरगिट के ऊपर चढ़ने में बराबर ही फल होता है। संकेष में बतलाया गया है कि—

यदि प्रतिति च पल्ली दक्षिणांगं नरणां, स्वजनजनविशेषो वामभागे च लाभम् ।
उदरशिरमि कण्ठे पृष्ठभागे च मृत्युः; वारचरणहृदिस्थे सर्वशीर्षं मनुष्यः ॥

अर्थात् दाहिने अंग पर पल्ली पतन हो तो आत्मीय लोगों में विरोध होता है और वाम अंग पर पल्ली के गिरने से लाभ होता है। पेट, तिर, कण्ठ, पीठ पर पल्ली के गिरने से मृत्यु तथा हाथ, पाँच और छाती पर गिरने से सब सुख प्राप्त होते हैं।

मणित द्वारा पल्ली पतन के प्रश्न का उत्तर

‘तिथिप्रहरसंयुक्ता तार्कावारमिश्रिता ।
नवमिस्तु हरेद भार्ग शेषं ज्येषं फलाफलम् ॥
थातं नाशं तथा लाभं कल्याणं जयमंगलं ।
उत्साहहानी मृत्युञ्च छिकका पल्ली च जाम्युकः ॥’

अर्थात् जिस दिन जिस प्रहर में पल्लीपतन हुआ हो—छिपकली गिरी हो उस दिन की तिथि शुक्ल प्रतिपदा में गिनकर लेना, प्रातःकाल से प्रहर और अश्विनी में पतन के नक्षत्र तक लेना अर्थात् तिथि संख्या, नक्षत्र संख्या और प्रहर संख्या को योग कर देना, इस योग में नीं का भाग देने पर एक शेष में धात, दो में नाश, तीन में लाभ, चार में कल्याण, पाँच में जय, छः में मंगल, सात में उत्साह, आठ में हानि और नीं शेष में मृत्यु फल कहना चाहिए। उदाहरण— रामलाल के ऊपर नैऋत्य कुप्ति द्वादशी को अनुराधा नक्षत्र में दिन में 10 बजे छिपकली गिरी है। इसका फल मणित द्वारा विचार करना है, अतः तिथि संख्या 27 (फाल्गुन शुक्ला 1 में नैऋत्य कुप्ति द्वादशी तक), नक्षत्र संख्या 17 (अश्विनी में अनुराधा तक), प्रहर संख्या 2 (प्रातःकाल सूर्योदय से तीन-तीन घण्टे का एक-एक

प्रहर लेना चाहिए) अतः $27 - 1 \cdot 17 + 2 = 46 - 9 = 5$ ल० और शेष । आया । यहाँ उदाहरण में एक शेष रहा है, अतः इसका फल धात होता है । अर्थात् किसी दुष्टेटन का शिखार यह व्यक्ति होगा ।

पल्ली-पतन का फलादेश इस प्रकार का भी मिलता है कि प्रातःकाल से नेकर मध्याह्न काल तक पल्लीपतन होने से विशेष अनिष्ट, मध्याह्न से मायकाल तक पल्लीपतन होने से साधारण अनिष्ट और सन्ध्याकाल के उपरान्त पल्ली-पतन होने से फलाभाव होता है । किसी-निसी का यह भी भत है कि तीनों कालों की सन्ध्याओं में पल्ली-पतन होने से अधिक अनिष्ट होता है । इसका फल विसी-न-किसी प्रकार की अशुभ घटना का घटित होता है । दिन में भोजवार की पल्ली-पतन होने से साधारण फल, भंगलवार को पल्ली-पतन का विशेष फल, बुधवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की वृद्धि तथा अशुभ फल की हानि, गुरुवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की अधिक प्रभाव तथा अशुभ पत्न गाधारण, शुक्रवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की हानि एवं रविवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की वृद्धि और शुभ फल की हानि एवं रविवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल भी अशुभ फल के रूप में परिणत हो जाता है । पल्ली-पतन का अनिष्ट फल तभी विशेष होता है, जब शनि या रविवार की भूमि या आग्नेया नक्षत्र में चतुर्थी या नवमी तिथि को मन्ध्याकाल में पल्ली-छिपकली गिरती है । इसका फल मृत्यु की सूचना या विसी अत्मीय की मृत्यु-सूचना अथवा किसी मुकद्दमे की एराजय की सूचना समझनी चाहिए ।

पञ्चदशीङ्ग्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहचारं जिनोदितम् ।

तत्रादितः प्रवक्ष्यामि शुक्रचारं निबोधत ॥११॥

अब जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा प्रतिषादित ग्रहचार का निवापन करता है । इसमें सबसे पहले शुक्रचार का वर्णन किया जा रहा है ॥११॥

भूतं भव्यं भवद्वृष्टिमवृष्टि भयमग्नजम् ।

जयाऽजयोरुजं चापि सर्वान् सृजति भार्गवः ॥२॥

भूत-भविष्य फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोण, जय, पराजय, रोग, धन-सम्पत्ति आदि समस्त फल का शुक्र तिर्देशक है ॥२॥

स्थिष्यन्ते वा प्रजास्तत्र वसुधा वा प्रकल्पते ।

दिवि मध्ये यदा मच्छेदर्धरात्रेण भार्गवः ॥३॥

जब अध्यरात्रि के समय शुक्र आकाश में गमन करता है, तब प्रजा की मृत्यु होती है और पृथ्वी कमित होती है ॥३॥

दिवि मध्ये यदा दृश्येच्छुकः सूर्यपथास्थितः ।

सर्वभूतभयं कृर्यादिशेषाद्वर्णसंकरम् ॥४॥

सूर्य पथ में स्थिर होकर सूर्य के साथ रहकर शुक्र यदि आकाश के मध्य में दिखलाएँ पड़े तो समस्त प्राणियों की भय करता है तथा विशेष रूप से वर्णसंकरों के लिए भयप्रद है ॥४॥

अकाले उदितः शुक्रः "प्रस्थितो वा यदा भवेत् ।

तदा विसांवत्सरिकं ग्रीष्मे वयेत्सरसु वा ॥५॥

यदि असगय में शुक्र उदित या अस्त हो तीन बर्षों तक ग्रीष्म और शरद क्रतु में ईति - प्लेग या अस्य महामारी होती ॥५॥

गुरुभार्गवचन्द्राणां रश्मयस्तु यदा हताः ।

एकाहुमपि दीप्यन्ते तदा विन्द्यादभयं खलु ॥६॥

यदि वृहस्पति, शुक्र और नन्दमा नी किरणें वातित होकर एक दिन भी दीप्त हों तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥६॥

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि ।

षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत् ॥७॥

भरणी नक्षत्र को आदि कर चार-चार नक्षत्रों के छ. मण्डल होते हैं, जिनके नाम निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥७॥

सर्वभूतहितं रक्तं परुषं रोचनं तथा ।

ऊर्ध्वं ऊण्डं च तीक्ष्णं च "निरुक्तानि निवोष्टत ॥८॥

1. वर्याश्व गु । 2. च । गु । 3. निरुक्ति या तदा यदा । विसांवत्सरिकं ग्रीष्म शारद नीनिरुक्तयेत् ॥ गु । 4. निरुक्त नानि नाधयेत् मु ।

सप्तस्त प्राणियों का कल्याण करने वाले रक्त, पूरुष, दीप्तिमान्, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण ये छः मण्डल हैं। नाम के अनुसार उसका अर्थ अवगत करना चाहिए ॥8॥

१चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च ।

२पञ्चकं षट्कविज्ञेयो भरण्यादी तु भार्गवः ॥९॥

भरणी से चार नक्षत्र—भरणी, कुत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा का प्रथम मण्डल; आर्द्ध से चार नक्षत्र—आर्द्धा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा का द्वितीय मण्डल; पष्ठा से पाँच नक्षत्र—पष्ठा, पूर्वाफालगुनी, उत्तराफालगुनी, हस्त और चित्रा का तृतीय मण्डल; स्वाति से तीन नक्षत्र—स्वाति, विशाखा और अनुराधा का चतुर्थ मण्डल; ज्येष्ठा से पाँच नक्षत्र—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वापाढ़ा, उत्तरापाढ़ा और अवण का पंचम मण्डल एवं धनिष्ठा से छः नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और इक्ष्याका पाठ मण्डल होता है। इन मण्डलों के नाम क्रमशः रक्त, पूरुष, रोचन, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण हैं ॥9॥

३प्रथमं च द्वितीयं च मध्यमे शुक्रमण्डले ।

४तृतीयं पञ्चमं चैव मण्डले साधुनिन्दिते ॥१०॥

शुक्र के प्रथम और द्वितीय मण्डल मध्यम हैं तथा तृतीय और पंचम साधुओं के द्वारा निन्दित हैं ॥10॥

५चतुर्थं चैव षष्ठं च मण्डले प्रवरे स्मृते ।

६आये ह्ये मध्यमे विश्वानिन्दिते त्रिकष्टकमें ॥११॥

चतुर्थ और पाठ मण्डल उत्तम हैं। आदि के दो प्रथम और द्वितीय मध्यम हैं तथा तृतीय और पंचम निन्दित हैं ॥11॥

७शेषे चतुर्थषष्ठे च मण्डले भार्गवस्य ४हि ।

८शुक्लषक्षे ४प्रशस्येत् सर्वेष्वस्तमनोदये ॥१२॥

शुक्ल पक्ष में अनुदित—अस्त शुक्र के चारी ओर छठे मण्डल की प्रशंसा की गयी है ॥12॥

९अथ गोमूलगतिमान् भार्गवो नाभिवर्णति ।

१०विकृतानि च वर्तन्ते सर्वमण्डलदुर्गतौ ॥१३॥

यदि वक्षणि शुक्र हो तो वर्ण नहीं होती है। चारी ओर पाठ के अतिरिक्त अन्य सभी मण्डलों में रहने वाला शुक्र विकृत—उत्पातकारक होता है ॥13॥

मण्डल, आद्रा से आश्लेषा तक द्वितीय मण्डल और मध्य से चित्रा नक्षत्र तक तृतीय मण्डल होता है। तृतीय मण्डल में शुक्र का उदय और अस्त हो तो वृक्षों का विनाश, शवर-शूद्र, पुण्ड्र, द्रविड़, शूद्र, बनवासी, शूलिक का विनाश तथा इनको अपार कष्ट होता है। शुक्र का चौथा मण्डल स्वाति, विश्वामीर्वा और अनुराधा इन नक्षत्रों में होता है। इस चतुर्थ मण्डल में शुक्र के गमन करने से ब्राह्मणादि वर्गों को विपुल धन लाभ, यज्ञ लाभ और धन-जन वी प्राप्ति होती है। चौथे मण्डल में शुक्र का अस्त होना या उदय होना सभी प्राणियों के लिए सुखदायक है। यदि चौथे मण्डल में किसी कूर ग्रह द्वारा आकान्त हो तो इक्षवाकुवंशी, आवन्ती के नामग्रिक, शूरभेन देश के वासी लोगों को अपार कष्ट होता है। यदि इस मण्डल में ग्रहों का युद्ध हो, शुक्र कूर ग्रहों द्वारा परास्त हो जाय तो विश्व में भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। अनेक प्रकार की महामारियाँ, जनता में लोभ, असन्तोष एवं अनेक प्रकार के संघर्ष होते हैं। ज्येष्ठा, मूल, पूर्वपिंडा उत्तराधारा और श्वेत इन पाँच नक्षत्रों का पाँचवाँ मण्डल होता है। इस पंचम मण्डल में शुक्र के गमन करने से अद्या, चोर, रोग, आदि की वाधाएं होती हैं। यदि कूर ग्रहों द्वारा पंचम मण्डल आकान्त हो तो काशगीर, अश्यक, मत्स्य, चारुदेवी और अवन्ती देश वाले व्यक्तियों के साथ आभीर जाति, द्रविड़, अस्त्रद्वात्, विश्वार्ता, लोपाध्य, हिन्दू और सौनीर देशवासियों का विनाश होता है। कूरग्रान्त या कूरग्रहाविष्ट शुक्र इस पंचम मण्डल में रहने से जनता में असन्तोष, घृणा, मात्सर्य और नाना प्रेकार के कष्ट उत्पन्न करता है। धनिष्ठा, अत्मिषा, पूर्वभिषाद्रपद, उत्तराधारपद, रेती और अधिकनी इन छः नक्षत्रों का छठा मण्डल है। यदि वूर ग्रह इस मण्डल में नियास करता हो और उसके साथ शुक्र भी संगम करे तो प्रजा को आश्विक कष्ट रहता है। छठे मण्डल में शुक्र का युद्ध यदि निसी शुभ ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य की समृद्धि; कूर ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य का अभाव तथा एवं शुभ ग्रह और एवं कूर ग्रह हो तो जनता एवं साधान-जनतया खुख प्राप्त होता है। वर्षा सभयानुसार होती है, जिससे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। ग्रन्तवात और चौर-धात का कष्ट होता है। छठे मण्डल में शुक्र शुभ ग्रह का सहयोगी होकर अस्त हो तो प्रजा में जाति और मुख का भंचार होता है।

इन छः मण्डलों में शुक्र-गमन का निष्पाण किया गया है। याति और ज्येष्ठा नक्षत्र वाले मण्डल पञ्चम दिशा में होने से शुभफल होता है। मध्यादि नक्षत्र वाला मण्डल पूर्व दिशा में हो तो अद्यन्त भय होता है। त्रितीया नक्षत्रवाली का भेद कर शुक्र गमन करे तो नटियों में बाढ़ आती है, जिससे नर्वाग्रहवासियों की गहान कष्ट होता है। गोहिणी नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो महामारी पड़ती है। मृग-जिंग नक्षत्र का भेदन करे तो जल या धान्य का नाश, आद्रा नक्षत्र का भेदन करने से कीजल और कलिग का विनाश होता है, परं वृष्टि अत्यधिक होती है और

फसल भी उत्तम उत्पन्न होती है। पुनर्बंसु नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो अश्मक और विद्यम् प्रदेश के रहने वालों वो अनीति से कष्ट होता है, अवशेष प्रदेशों के निवासियों को कष्ट होता है। पुण्य नक्षत्र का भेदन करने से सुभिक्ष और जनता में सुख-शान्ति रहती है। आश्लेषा नक्षत्र में शुक्र का गमन हो तो सर्पभय, रोगों की उत्पत्ति एवं दैन्यभाव की वृद्धि होती है। मथा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो सभी देशों में जान्ति और सुभिक्ष होते हैं। पूर्वाफालगुनी नक्षत्र का शुक्र भेदन कर आमे चक्रे तो श्वर और पुलिन्द जाति के लिए सुखकारक होता है तथा कुरुजायिल देश के निवासियों के लिए वाटप्रद होता है। शुक्र का इस नक्षत्र को भेदन करना बंग, आसाम, विहार, उत्तरप्रदेश के निवासियों के लिए शुभ है। शुक्र की उक्त स्थिति में धन-धान्य की गमूद्धि होती है। यदि हस्त नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो कलाकारों को कष्ट होता है। नित्रा नक्षत्र का भेदन होने से जगत् में शान्ति, आर्थिक विकास एवं पशु-सम्पत्ति की वृद्धि होती है। इस नक्षत्र का शुक्र सहयोगी ग्रहों के साथ भेदन करता हुआ आगे गमन करे तो कलिग, बंग और अंग प्रदेश में जनता को मधुर वस्तुओं का कष्ट होता है। जिन देशों में गन्ना की खेती अधिक होती है, उन देशों में गन्ना की फसल मारी जाती है। स्वाति नक्षत्र में शुक्र के आने से वर्षा अच्छी होती है। देश की स्थिति पर-साप्टनीति की दृष्टि से अच्छी नहीं होती। विदेशों के साथ संवर्प करना होता है तथा छोटी-छोटी वातों को लेकर आपस में मतभेद हो जाता है और संघित तथा मित्रता की बातें फिलड़ जाती हैं। व्यापारियों के लिए भी शुक्र की उक्त स्थिति अच्छी नहीं मानी जाती। लोहा, गुड़, अनाज, धी और मणसे के व्यापारियों को शुक्र की उक्त स्थिति में घाटा उठाना पड़ता है। तेल, तिलहन एवं सोना-चाँदी के व्यापारियों को अधिक लाभ होता है। विशाखा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र आने की ओर बढ़े सो मुवृष्टि होती है, पर चोर-डाकुओं का प्रकोप दिनों-दिन बढ़ता जाता है। प्रजा में अशान्ति रहती है। यद्यपि धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है, फिर भी नागरिकों की गान्ति भंग होने की आशंका बनी रह जाती है।

अनुराधा का भेदन कर शुक्र गमन करे तो अक्षियों को कष्ट, व्यापारियों को लाभ, कृषकों तो गाधारण कष्ट एवं कलाकारों वो सम्पाद की प्राप्ति होती है। ज्येष्ठा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र का गमन करने से सन्तान, प्रशासनों में भत्तभद, धन-धान्य की गमूद्धि एवं आर्थिक विकास होता है। गुल नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से वैद्यों को पीड़ा, डॉक्टरों को कष्ट एवं वैज्ञानिकों को अपने प्रयोगों में असफलता प्राप्त होती। पूर्वोषाढ़ा का भेदन कर शुक्र के गमन करने से जल-जन्तुओं को कष्ट, नाव और स्टीमरों के ढूबने का भय, मदियों में बाढ़ एवं जन-साधारण में आतंक व्याप्त होता है। उत्तरोषाढ़ा नक्षत्र का भेदन करने से व्याधि, महामारी, दूषित ज्वर का प्रकोप, हैजा जैसी संक्रामक

व्याधियों का प्रसार, चेचक का प्रवोप एवं अन्य संक्रामक दूषित बीमारियों का प्रसार होता है। श्रवण नक्षत्र का भेदन कर शुक्र अपने मार्ग में गमन करे तो कण सम्बन्धी रोगों का अधिक प्रसार और धनिरात्रा नक्षत्र वर्ष भेदन कर आगे चले तो आँख की बीमारियाँ अधिक होती हैं। शुक्र की उक्त प्रकार की स्थिति में साधारण जनता को भी कष्ट होता है। व्यापारी वर्ग और कृपक वर्ग को जानित और सत्तोष की प्राप्ति होती है। वर्षा गमयानुसार होनी जाती है, जिसमें कृषक वर्ग को गरम जानित मिलती है। राजनीतिक उथल-नुश्चल होती है, जिसमें साधारण जनता में भी आतंक व्याप्त रहता है। जलभित्र नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो कूर वर्ग करने वाले व्यक्तियों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र का भेदन शुभ ग्रह के साथ होने से शुभ फल और कूर ग्रह के साथ होने में अशुभ फल होता है। पूर्वभाद्राद का भेदन करने से जुधा सेवने वालों को कष्ट, उच्च राष्ट्राद का भेदन वार्षने से फल-पूष्यों की वृद्धि और रेखती का भेदन करने से मेना का विनाश होता है। अग्निती नक्षत्र में भेदन करने से शुक्र कूर ग्रह के साथ संयोग भरे तो अनन्ता को कष्ट और शम प्रह का संयोग करे तो लाभ, शुभिक्ष और आनन्द की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्र का भेदन करने से जनता को गाधारण कष्ट होता है।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, अमावस्या, आटभी तिथि को शुक्र का उदय या अस्त हो तो पृथ्वी पर अस्यधिक जन की वर्गा होती है। अनाज की उत्पत्ति खूब होती है। यदि गुरु और शुक्र पूर्व-पश्चिम में परस्पर यात्री राशि में स्थित हों तो रोग और भव से प्रज्ञा पीड़ित रहती है, वृद्धि नहीं होती। गुण, दुध, मंगल और शनि ये ग्रह यदि शुक्र के आगे के मार्ग में चले तो वायु का प्रकोप, मनुष्यों में संघर्ष, अनीति और दशाचार की प्रवृत्ति, उम्कापास और विद्युत्पात से जनता में कष्ट तथा अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि होती है। यदि शनि शुक्र से आगे गमन करे तो जनता को कष्ट, व्यापार और दुर्भिक्ष होता है। यदि मंगल शुक्र में आगे गमन करता हो तो भी जनता में विरोध, विवाद, जस्त्रभव, अग्निभव, चोरभव होने से नाना प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। जनता में गमी प्रकार की अशान्ति रहती है। शुक्र के आगे मार्ग में वृहस्पति गमन करता हो तो समस्त मधुर पदार्थ स्फुले होते हैं। शुक्र के उदय या अस्तकाल में शुक्र के आगे जव दुध रहता है तब चर्षी और रोग रहते हैं। पित से उत्पन्न रोग तथा काष-कामलादि रोग उत्पन्न होते हैं। संत्यागी, अग्निहोत्री, वैद्य, नृत्य से आजीविका करने वाले, अश्व, गो, बाहन, पीले वर्ण के पदार्थ विनाश को प्राप्त होते हैं। जिथ समय अग्नि के समान शुक्र का वर्ण हो तब अग्निभव, रक्तवर्ण हो तो शस्त्रगोप, कांचन के समान वर्ण हो तो गौरव वर्ण के व्यक्तियों को व्याधि उत्पन्न होती है। यदि शुक्र हरित और कपिल वर्ण हो तो दमा और ख्रीसी का रोग अधिक उत्पन्न होता है।

भूम के समान रुक्ष वर्ष का शुक्र देश को सभी प्रकार की विपत्ति देने वाला होता है। स्वच्छ, स्त्रिध, मधुर और मुन्दर कान्तिवाला शुक्र मुभिक्ष, शान्ति, नीरोगता आदि फलों को देने वाला है। शुक्र का अस्त रविवार को हो तथा उदय शनिवार को हो तो देश में विनाश, संघर्ष, चेचक वा विशेष प्रकोप, महामारी, घात्य का भाव रहेगा, जनता में क्षोभ, आतंक एवं घृत और गुड़ का भाव सस्ता होता है।

शुक्रवार को शुक्र अस्त होकर शनिवार को उदय को प्राप्त हो तो गुभिक्ष, शान्ति, आर्थिक विकास, पणु सम्पत्ति का विवाह, समय पर वर्षा, कला-कौशल की वृद्धि एवं चैत्र के महीने में वीपारी पड़ती है। थावण में भंगलवार को शुक्रास्त हो और इसी महीने में शनिवार को उदय हो तो जनता में परस्पर संघर्ष, भेताओं में मतभेद, फसल वी क्षति, खून-खूराया, जहाँ-तहाँ उपद्रव एवं वर्षा भी साधारण होती है। भाद्रपद मास में गुरुवार को शुक्र अस्त हो और गुरुवार को ही शुक्र का उदय आश्विन मास में हो तो जनता में संकामक गोग कीवत है। आश्विन मास में शुक्र बुधवार को अस्त होकर सोमवार वा उदय को प्राप्त हो तो सुभिक्ष, धन-धान्य वी वृद्धि, जनता में साहस एवं कल-कारखानों की वृद्धि होती है। विहार, वंगाल, आसाम, उत्कल आदि पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा यथेष्ट होती है। दक्षिण भारत में फसल अच्छी नहीं होती, बेती में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं, जिससे उत्तम फसल नहीं होती। कान्तिक मास में शुक्रास्त होकर पौष में उदय को प्राप्त हो तो जनता को साधारण कट, यात्र में कठोर जाड़ा तथा पाला पड़ने के कारण फसल नष्ट हो जाती है। मार्गशीर्ष में शुक्र का अस्त होना अशुभ सूचक है।

पौष मास में शुक्रास्त होना अच्छा होता है, धन-धान्य की समृद्धि होती है। माघ मास में शुक्र अस्त होकर फाल्गुन में उदय को प्राप्त हो तो फसल आगमी वर्ष अच्छी नहीं होती। फाल्गुन और चैत्र मास में शुक्र का अस्त होना प्रध्यम है। वैषाख में शुक्रास्त होकर आपाह में उदय हो तो दुर्भिक्ष, महामारी एवं सारे देश में उथल-गुथल रहती है। राजनीतिक उलट-फेर भी होने रहते हैं। ज्येष्ठ और आपाह के शुक्र का अस्त होना अनाज की कमी वा गुचक है।

षोडशोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभविचेष्टितम् ।

यच्छ्रुत्वाऽवहितः प्राज्ञो भवेन्नित्यमत्मितः ॥१॥

अब शुक्रचार के पश्चात् जनि-चार के अन्तर्गत शनि की शुभाशुभ चेष्टाओं का वर्णन किया जाता है, जिसको सुनकर ब्रिद्धान् मुखी हो जाते हैं ॥१॥

प्रवासमुदयं वक्रं गति वर्णं फलं तथा ।

शनैश्चरस्य वक्ष्यामि 'शुभाशुभविचेष्टितम् ॥२॥

पूर्वचारों के मतानुसार जनि के अस्त, उदय, वक्र, गति और वर्ण के शुभ-शुभ फल का वर्णन करता है ॥२॥

प्रवासं दक्षिणे मार्गं मासिकं मध्यमे पुनः ।

दिवसाः पञ्चविंशतिस्त्रयोविशतिरुत्तरे ॥३॥

दक्षिण मार्ग में जनि का अस्त एवं महीने का उत्तरांश और मध्यम पञ्चवीस दिन का होता है और उत्तर में तृतीय दिन का ॥३॥

चारं गतश्च यो भूयः सन्तिष्ठते महाग्रहः ।

'एकान्तरेण वक्रेण भौमवत् कुरुते फलम् ॥४॥

जब जनि पुनः चार—गमन करता हुआ रिश्वर होता है और एकान्तर वक्र को प्राप्त करता है तो भीम—मंगल के समान फलादेश उत्पन्न होता है ॥४॥

संवत्सरमुपस्थाय नक्षत्रं विप्रमुञ्चति ।

सूर्यपुत्रस्ततश्चैव 'द्योतभानः शनैश्चरः ॥५॥

जनि प्रज्ञाहित की कामना से संवत्सर की स्थापना के लिए नक्षत्र का त्याग करता है ॥५॥

द्वे नक्षत्रे यदा सीरिव्येष्ण चरते यदा ।

राजामन्योऽन्यगेदश्च शस्त्रकोपञ्च जायते ॥६॥

जब जनि एक वर्ष में दो नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो राजाओं में परस्पर मतभेद होता है और शस्त्रवोग होता है ॥६॥

द्वुर्गे भवति संवासो मर्यादा च विनश्यति ।

दृष्टिश्च विषभा ज्येया व्याधिकोपश्च जायते ॥७॥

उपर्युक्त प्रकार के जनि की स्थिति में शत्रु के भय और आतंक के कारण

दुर्ग में निवास करना होता है। मर्यादा नष्ट हो जाती है। वर्षा विषमा—हीनाधिक होती है और रोगादि फैलते हैं ॥7॥

यदा तु त्रीणि चत्वारि नक्षत्राणि शनैश्चरः ।

मन्दवृष्टिं च सुभिक्षं शस्त्रं व्याधि च निर्दिशेत् ॥8॥

जब शनि एक वर्ष में तीन या चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो मन्दवृष्टि, सुभिक्ष, शस्त्रारोड़ा और रोगादि होते हैं ॥8॥

चत्वारि वा यदा गच्छेनक्षत्राणि महाशुतिः ।

तदा पुगान्तं जानीयात् यान्ति मृत्युमुखं प्रज्ञाः ॥9॥

यदि शनि एक वर्ष में चार नक्षत्रों का अतिक्रमण करे तो पुगान्त समझना चाहिए तथा प्रजा मृत्यु के मुख में चन्दी जाती है ॥9॥

उत्तरे पतितो मार्गे यथेषो नीलतां व्रजेत् ।

स्निग्धं तदा फलं ज्येष्ठं नागरं जायते तदा ॥10॥

रतिप्रधाना मोदमिति राजानस्तुष्टभमयः ।

क्षमां सेषवतीं विन्द्यात् सर्वब्रीजप्ररोहिणीम् ॥11॥

उत्तर मार्ग में गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण और स्निग्ध हो तो उसका फल अच्छा होता है। गरागी व्यनित आमोद-प्रमोद करते हैं, राजा रात्मुष्ट होते हैं और पृथ्वी पर सभी प्रकार के बीजों को उत्पन्न करने वाली वर्षा होती है ॥10-11॥

मध्यमे तु यदा मार्गे कुर्यादिस्तमनोदयौ ।

मध्यमं वर्षणं सस्यं सुभिक्षं क्षेष्यमेव च ॥12॥

यदि शनि मध्यम मार्ग में अस्त और उदय को प्राप्त हो तो मध्यम वर्षा, सुभिक्ष, धान्य की उत्पन्नि एवं कल्याण होता है ॥12॥

दक्षिणे तु यदा मार्गे यदि स नीलतां व्रजेत् ।

नागरा प्रायिनश्चापि पीड्यन्ते च भट्टगणाः ॥13॥

यदि दक्षिण मार्ग में गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण को प्राप्त हो तो नागरिक और यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले—दोनों ही योद्धागण पीड़ा को शप्त होते हैं ॥13॥

**गोपालं वर्जयेत् तत्र दुर्गाणि च समाश्रयेत् ।
कारयेत् सर्वशस्त्राणि बीजानि च न वापयेत् ॥ 14॥**

उक्त प्रकार की शनि की स्थिति में गोपाल - गोपुर, नगर को छोड़कर दूरी का आश्रय ग्रहण करता चाहिए, शस्त्रों की संभाल एवं नवीन शस्त्रों का निर्माण करना चाहिए और बीज बोने का कार्य नहीं करना चाहिए ॥ 14॥

**प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य यस्य याति शनैश्चरः ।
स च राजा विवर्धेत् सुभिक्षं क्षेममेव च ॥ 15॥**

शनि जिस नक्षत्र की प्रदक्षिणा करता है, उस नक्षत्र में जन्म लेने वाला राजा वृद्धिगत होता है। सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥ 15॥

**अपसब्यं नक्षत्रस्य यस्य याति शनैश्चरः ।
स च राजा विषद्येत् दुर्भिक्षं भयमेव च ॥ 16॥**

शनि जिस नक्षत्र के अपसब्य —दाहिनी ओर गमन करता है, उस नक्षत्र में उत्तरन्त हुआ राजा विषति को प्राप्त होता है तथा दुर्भिक्ष और विनाश भी होता है ॥ 16॥

**चन्द्रः सौरि यदा प्राप्तः परिवेषे¹ रुद्धति ।
अवरोधं विजानीयान्तररस्य सहीपते ॥ 17॥**

जब चन्द्रमा शनि को प्राप्त हो और परिवेष के द्वारा अवरुद्ध हो तो नगर और राजा का अवरोध होता है अर्थात् किसी अन्य राजा के द्वारा डेरा ढाला जाता है ॥ 17॥

**चन्द्रः शनैश्चरं प्राप्तो मण्डलं वाऽनुरोहति ।
यवनां सराष्ट्रां² सौवीरां³ वारुणं भजते दिशम् ॥ 18॥**

चन्द्रमा शनि को प्राप्त होकर मण्डल पर आरोहण करे तो यवन, सौराष्ट्र, सौवीर उत्तर दिशा को प्राप्त होते हैं ॥ 18॥

**आनर्त्तः सौरसेनाश्च दशार्णा द्वारिकास्तथा ।
आवन्त्या अवरान्ताश्च यायिनश्च तदा नृपाः ॥ 19॥**

उपर्युक्त स्थिति में आनर्त्त, सौरसेन, दशार्ण, द्वारिका और अवन्ति के निवासी राजा यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले होते हैं ॥ 19॥

1. रुद्धते मू० । 2. सौरेणां मू० । 3. वारुणां च मजेद्वाग् मू० ।

यदा वा युगपद् युक्तः सौरिमध्येन नामरे ।
तदा भैरवं विजानीयान्तागराणां परस्परम् ॥20॥

महात्मानश्च ये सन्तो महायोगापरिग्रहाः ।
उपसर्गं च गच्छन्ति धन-धान्यं च वध्यते ॥21॥

जब चन्द्रमा और शनि दोनों एक साथ हों तो शनिरिकों तेर दर्शपर मतभेद होता है। जो महात्मा, मुनि और साधु अपरिग्रही विचरण करते हैं, वे उपसर्ग को प्राप्त होते हैं तथा धन-धान्य की हानि होती है ॥20-21॥

देशा महान्तो योधाश्च तथा लगरदासिनः ।
ते सर्वत्रोपतप्तप्तन्ते बेधे सौरस्य तादृशे ॥22॥

शनि के उक्त प्रकार के वेध होने पर देश, बड़े-बड़े योद्धा तथा लगरनिवासी सर्वत्र सन्तप्त होते हैं ॥22॥

आहूमि सौम्या प्रतीची च वायव्या च दिशो यदा ।
वाहिनीं यो जयेत्तासु नृपो दैवहृतस्तदा ॥23॥

पूर्व, उत्तर, पश्चिम और वायव्य दिशा की भेत्ता को जो नृप जीतता है, वह भी भाग्य द्वारा आहृत होता है ॥23॥

कृत्तिकासु च यद्याकिञ्चिशाखासु बृहस्पतिः ।
सभस्तं दारुणं विद्यात् ३मेघश्चात्र प्रवर्षति ॥24॥

जब कृत्तिका नक्षत्र पर शनि और विश्वामी पर बृहस्पति रहता है तो चारों क्षेत्र भीषण भय होता है और वहाँ वर्षा होती है ॥24॥

कीटाः पतंगाः शलभाः वृश्चिका मूषका शुकाः¹ ।
अग्निश्चौरा डलीयांसस्तस्मिन् वर्षं न संशयः ॥25॥

इस प्रकार की स्थिति वाले वर्ष में कीट, पतंग, शलभ, विच्छू, चूह, अग्नि, शुक्र और नोर निःसन्देह वलवान होते हैं अर्थात् इनका प्रकोप वड़ता है ॥25॥

इदेते सुभिकां जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम् ।
पीतो जनयते व्याधि शस्त्रकोपञ्च दारुणम् ॥26॥

शनि के श्वेत रंग का होने से सुभिक, पाण्डु और लोहित रंग का होने पर यह एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयकर शस्त्रकोप होता है ॥26॥

1. अग्निश्चौरा भिद जानीयात् मृ० । 2. ग्रामनात् मृ० । 3. वेष मृ० । 4. शत्रा मृ० ।

कुरुणे शुद्ध्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति ।

स्नेहवान्तत्र गृह्णाति रुक्षः शोषयते प्रजाः ॥२७॥

गणि के कुरुणवर्ण होने पर नदियाँ गूँख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होने पर प्रजा में सहयोग और रुक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है ॥२७॥

सिंहलानां किरातानां मद्राणां मालवैः सह ।

द्रविडानां च भोजानां कोंकणानां तथैव च ॥२८॥

'उत्कलानां पुलिन्दानां पलहवानां शकैः सह ।

यवनानां च पौराणां स्थावराणां तथैव च ॥२९॥

'अंगानां च कुरुणां च दृश्यानां च शनैश्चरः ।

एषां विनाशं कुरुते यदि युध्येत् संयुगे ॥३०॥

यदि शनि का युद्ध हो तो सिंहल, किरात, मद्र, मालव, द्रविड़, भोज, कोंकण उत्कल, पुलिन्द, पलहव, शक, यवन, अंग, कुरु, दृश्यपुर के नागरिकों और राजाओं का विनाश करता है ॥२८-३०॥

यस्मिन् यस्मिस्तु नक्षत्रे कुर्यादिस्तमनोदयौ ।

तस्मिन् देशान्तरं द्रव्यं 'हस्यात् चाश्च विनाशयेत् ॥३१॥

जिस-जिस नक्षत्र पर शनि अस्त या उदय को प्राप्त होता है, उस-उस नक्षत्र वाले द्रव्य देश एवं देशवासियों ने विनाश करता है ॥३१॥

शनैश्चरं चारमिदं च भूयो यो वेत्ति विद्वान् निभृतो यथावत्
स पूजनीयो भुवि लब्धकीर्तिः सदा महात्मेब हि दिव्यदृष्टिः ॥३२॥

जो विद्वान् यथार्थ रूप से इस शनैश्चर चार (गति) को जानता है, वह अत्यन्त पूजनीय है, संसार में कीर्ति का धारी होता है और महान् दिव्यदृष्टि को प्राप्त कर सभी प्रकार के फलादेशों में पारंगत होता है ॥३२॥

^६इति सकलम् निजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्चीभद्रबाहुविरक्तिं महात्ममित्तिकशास्त्रे
शनैश्चरचारः षोडशोऽध्यायः परिसमाप्तः ॥१६॥

दिव्येचन—गणि के भेषजाणि पर होने से धान्यनाश, तेलंग, द्राविड़ और वंश

1. भुविगानां युः । 2. पुरुषानां युः । 3. अकेशानां मुग्धाणां च दस्युनां च, युः
4. दत्यव वांगनश्च मे युः । 5. मृगानां युः । 6. अग्नि सहस्रगुणिजनायन्दकादीदृष्टिः युग्मि । यानि मे नहीं हैं ।

देश में विघ्रह; पाताल, नागलोक, दिग्गा-विदिषा में विद्रोह, मनुष्यों में क्लेश, वैर, धन का नाश, अन्न की महंगाई, पशुओं का नाश, एवं जनता में भय-आतंक रहता है। मेषराशि के शनि आधिन्याधि उत्पन्न करता है। पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा अधिक और पश्चिम के देशों में वर्षा कम होती है। उत्तर दिशा में फसल अच्छी होती है। दक्षिण के प्रदेशों में आपसी विद्रोह होता है। बृप्त राशि पर शनि के होने से, गास, लोहा, लवण, तिल, गुड महंगे होते हैं तथा हाथी, घोड़ा, सोना, चाँदी सस्ते रहते हैं। पृथ्वी मण्डल पर शनिन्ति का साम्राज्य छाया रहता है। मिथुन के भित्तुन राशि के शनि का फल सभी प्रकार के मुखों की प्राप्ति है। मिथुन के शनि में वर्षा अधिक होती है। कर्कराशि के शनि में रोग, तिरस्कार, धननाश, कायं में हानि, मनुष्यों में विरोध, प्रवासकों में ढन्द, पशुओं में महामारी एवं देश के पूर्वोत्तर भाग में वर्षा की भी कमी रहती है। सिंह राशि के शनि में चतुष्पद, हाथी बोडे आदि का विनाश, युद्ध, दुमिथ, रोगों का आतंक, समुद्र के तटबर्ती प्रदेशों में क्लेश, म्लेच्छों में संघर्ष, प्रजा को सन्तान, धान्य का अभाव एवं नाना प्रकार से जनता को अज्ञान्ति रहती है। कन्या के शनि में काश्मीर देश का नाश, हाथी और घोड़ों में रोग, सोना-चाँदी-रत्न का भाव सस्ता, अन्न की अच्छी उपज एवं घृतादि पदार्थ भी प्रचुर परिमाण में उत्पन्न होते हैं। तुला के शनि में धान्य भाव लेज, पृथ्वी में व्याकुलता, पश्चिमीय देशों में क्लेश, मुनियों को शारीरिक कष्ट, नगर और ग्रामों में रोगोत्पत्ति, बनों वा विनाश, अल्प वर्षा, गवन का प्रकोप, चोर-डाकुओं का अत्यधिक भय एवं धनाभाव होते हैं। तुला का शनि जनता को कष्ट उत्पन्न करता है, इसमें धान्य की उत्पत्ति अच्छी नहीं होती।

वृश्चक राशि के शनि में राजकोप, पक्षियों में युद्ध, भूकम्प, खेड़ों का विनाश, मनुष्यों में कलह, धार्यों का विनाश, शत्रुओं को क्लेश एवं नाना प्रकार की व्याधियों उत्पन्न होती है। वृश्चक के शनि में चंचक, हैजा और धय रोग का अधिक प्ररार होता है। काम-श्वास की वीमारी भी वृद्धिगत होती है। धनराशि के शनि में धन-धान्य की समृद्ध समयानुकूल वर्षा, प्रजा में शान्ति, धर्मवृद्धि, विद्या का प्रचार, बलाकारों का सम्मान, देश में कला-कीशल की उन्नति एवं जनता में प्रसन्नता का प्रगार होता है। प्रजा को सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं, जनता में हर्ष और आनन्द की लहर व्याप्त रहती है। मकर के शनि में सोना, चाँदी, ताँवा, हाथी, घोड़ा, बैल, युत, कपास आदि पदार्थों का भाव महंगा होता है। खेती का भी विनाश होता है, जिससे अन्न की उपज भी अच्छी नहीं होती है। रोग के कारण प्रजा का विनाश होता है तथा जनता में एक प्रकार की अग्नि का भय व्याप्त रहता है, जिसमें अग्नान्ति दिखलाई पड़ती है। कुम्भ राशि के शनि में धन-धान्य की उत्पत्ति कूद होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण में और गमयानुकूल होती है। विवाहादि उत्तम भांगलिः कायं पृथ्वी पर होते हैं, जिसमें जनता

में हर्ष आया रहता है। धर्म का प्रचार और प्रसार सर्वत्र होता है। सभी लोग सन्तुष्ट और प्रसन्न दिखलाई पड़ते हैं। मीन के शनि में खेती का अभाव, नाना प्रकार के भयानक रोगों की उत्पत्ति, वर्षा का अभाव, वृक्षों का भी अभाव, पवन का प्रचण्ड होना, तूफान और भूकम्पों का आना, भयंकर महामारियों का पड़ना, सब प्रकार से जनता का नाश और आतंकित होना एवं धन का नाश होना आदि फल घटित होते हैं।

सभी राशियों में तुला और मीन के शनि को अनिष्टकर माना गया है। मीन का शनि धन-जन की हानि करता है और फसल को चौपट करने वाला माना जाता है। यदि मीन के शनि के साथ कई राशि का मंगल हो तथा इन दोनों के पीछे सूर्य गमन कर रहा हो तो निश्चय ही भयंकर अकाल पड़ता है। इस अकाल में धन-जन की हानि होती है, देश में अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न हो जाने से भी जनता को कष्ट होता है। वस्तुएँ भी मर्हगी होती हैं। व्यापारी वर्ग को भी मीन के शनि में लाभ नहीं होता। व्यापारी वर्ग भी अनेक प्रकार से कष्ट उठाता है। अन्नाभाव के कारण जनता में ब्राह्मि-त्राहि उत्पन्न हो जाती है।

शनि का उदय विचार—मेष में शनि उदय हो तो जलवृष्टि, मनुष्यों में सुख, प्रजा में शान्ति, धार्मिक विचार, समर्थता, उत्तम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यधिक, सेवा की भावना, सहयोग और सहकारिता के आधार पर देश का विकास, विरोधियों की पराजय, एवं सर्वसाधारण में सुख उत्पन्न होता है। वृष राशि में शनि के उदय होने से तृण-काष्ठ का अभाव, घोड़ों में रोग, अन्य पशुओं में भी अनेक प्रकार के रोग एवं साधारण वर्षा होती है। मिथुन में उदय होने से प्रचुर परिमाण में वर्षा, उत्तम फसल, धान्य-माल सस्ता एवं प्रजा सुखी होती है।

कई राशि में शनि के उदय होने से वर्षा का अभाव, रसों की उत्पत्ति में कमी, वनों का अभाव, धी-दूध-चीनी की उत्पत्ति में कमी, अधर्म का विकास एवं प्रशासकों में पारस्परिक अशान्ति उत्पन्न होती है। कथ्या में शनि का उदय हो तो धान्य नाश, अल्प वर्षा, व्यापार में लाभ और उत्तम वर्गों के व्यक्तियों को अनेक प्रकार का कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि में शनि का उदय हो तो महावृष्टि, धन का विनाश, चोरों का उपद्रव, उत्तम खेती, नदियों में बाढ़, नदी या समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों के निवासियों को कष्ट एवं गेहूँ की फसल का अभाव या कमी रहती है। धनु राशि में शनि का उदय हो तो मनुष्यों में वस्त्रस्थता, रोग, स्त्री और बालवर्गों में नाना प्रदार की बीमारी, धान्य का नाश और जनसाधारण में अनेक प्रकार के अन्धविश्वासों का विकास होने से सभी को कष्ट उठाना पड़ता है। मकर में शनि का उदय हो तो प्रशासकों में संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, चौपायों को कष्ट, तृण की कमी, वर्षा साधारण रूप में होना एवं लोहे का भाव मर्हगा होता है। कुम्भ राशि में शनि का उदय हो तो

अच्छी वर्षा, साधारणतया धान्य की उत्पत्ति, व्यापार में लाभ, बृहक और व्यापारी वर्ग में सन्तोष रहता है। देश का आर्थिक विकास होता है। नयी-नयी योजनाएं बनायी जाती हैं और सभी कार्यरूप में परिणत करायी जाती हैं। मीन राशि में शनि का उदय होना अल्प वर्षा कारक, अल्प धान्य की उत्पत्ति का सूचक एवं चोर, डाकुओं की वृद्धि की सूचना देता है। शनि का कर्क, तुला, मकर और मीन राशि में उदय होना अधिक खराब है। अन्य राशि में शनि के उदय होने से अन्न की उत्पत्ति अच्छी होती है। देश का व्यापार विकसित होता है और देश-वासियों को साधारण कष्ट के सिवा विशेष कष्ट नहीं होता है। रोग-महामारी का प्रसार होता है, जिसमें सर्व साधारण को कष्ट होता है।

शनि अस्ति का विचार —मेष में शनि अस्त हो तो धान्य का भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता में असन्तोष, परस्पर कृट, मुकदमों की वृद्धि और व्यापार में लाभ होता है। वृप राशि में शनि अस्त हो तो पशुओं को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश, पशुओं में अनेक प्रकार के रोग, मनुष्यों में संक्रामक रोगों की वृद्धि एवं धान्य की उत्पत्ति साधारण होती है। मिथुन राशि में शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी विदेष, धन-धान्य का विनाश, चंच के महीने में महामारी एवं प्रजा में अशान्ति रहती है। कर्क राशि में शनि अस्त हो तो वापास, सूत, गुड़, चींदी, घी अत्यन्त महंगे, वर्षा की कमी, देश में अशान्ति लथा भाजा प्रसार के धान्य की महंगाई और कलिंग, बंग, अंग, विदेश, विदेह, कामरूप, आसाम आदि प्रदेशों में वर्षा साधारण होती है। कन्या राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, मध्यम फसल, अन्न का भाव महंगा, धातु का भाव भी महंगा और चीनी-गुड़ की उत्पत्ति मध्यम होती है। तुला राशि में शनि का उदय हो तो अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, जनता में सन्तोष और सभी प्रदेशों के व्यक्ति गुणी होते हैं। व्यापक रूप से वर्षा होती है। वृश्चक राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, फसल में रोग, टिड्डी-शलभादि का विशेष प्रकोण, धन की वृद्धि, जनता में साधारणतया शान्ति और मुख होता है। धनु राशि में शनि के अस्त होने से स्त्री-वृच्छों को कष्ट, उत्तम वर्षा, उत्तम फसल, उत्तम व्यापार और जनसाधारण में सब प्रकार के शान्ति व्याप्त रहती है। मकर राशि में शनि के अस्त होने से गुण, प्रचण्ड पवन, अच्छी वर्षा, अच्छी फसल, व्यापार में कमी, राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन एवं पशुधन की वृद्धि होती है। कुम्भ राशि में शनि के अस्त होने से शीत प्रकोण, पशुओं की हानि एवं मध्यम फसल होती है। मीन राशि में शनि के उत्पन्न होने से अर्थर्म का प्रचार, फसल का अभाव एवं प्रजा को कष्ट होता है।

नक्षत्रानुसार शनिफल—थवण, स्वाति, हस्त, आद्रि, भरणी और पूर्वा-

समर्थता—वस्तुओं के भाव में समता और प्रजा का विकास होता है। उक्त नक्षत्रों का शनि मनोहर वर्ण का होते रे और अधिक शान्ति देता है तथा पूर्वी प्रदेशों के निवासियों को अर्थलाभ होता है। पश्चिम प्रदेशों के नामरिकों के लिए उक्त नक्षत्रों का शनि भयावह होता है। चौर, डाकुओं और गुण्डों का उपद्रव बढ़ जाता है। आश्लेषा, शतभिषा और ज्येष्ठा नक्षत्रों में स्थित शनि सुभिक्ष, सुर्मगल और समयानुकूल वर्षा करता है। इन नक्षत्रों में शनि के स्थित रहने से वर्षा प्रचुर गरिमाण में नहीं होती। समस्त देश में अल्प ही वृष्टि होती है। मूलनक्षत्र में शनि के विचरण करने से धुधाभय, शत्रुभय, अनावृष्टि, परस्पर संश्रष्ट, भत्तेद, राजनीतिक उलट-फेर, नेताओं में झगड़ा, व्यापारी वर्ग को कष्ट एवं स्त्रियों को व्याघ्र होती है।

अश्विनी नक्षत्र में शनि के विचरण करने से अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियों को हानि उठानी पड़ती है। उक्त नक्षत्र का शनि बंगाल में सुभिक्ष, शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि, जनता में उत्साह, विद्या का प्रचार एवं व्यापार की उत्पत्ति, करने वाला है। आसाम और विहार के लिए साधारणतः सुखदायी, अल्प वृष्टिकारक एवं नेताओं में भत्तेद उत्पन्न करने वाला, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और महाराष्ट्र के लिए गुणितकारक, बाढ़ के कारण जनता को साधारण कष्ट, आर्थिक विकास एवं धान्य की उत्पत्ति का सूचक है। मद्रास, कोचीन, राजस्थान, हिमाचल, दिल्ली, पंजाब और विन्ध्य प्रदेश के लिए साधारण वृष्टिकारक, सुभिक्षोत्तादक और आर्थिक विकास करने वाला है। अवशेष प्रदेश के लिए सुखोत्पादक और सुभिक्षकारक है। अश्विनी नक्षत्र के शनि में इंग्लैण्ड, अमेरिका और रूस में आन्तरिक अस्त्रान्ति रहती है। जापान में अधिक भूकम्घ आते हैं तथा अनाज की कमी रहती है। खाद्य पदार्थों का अभाव मुद्रुर पश्चिम के राष्ट्रों में रहता है। भरणी नक्षण का शनि विशेष रूप से जल-घासा करने वालों को हानि पहुँचाता है। नर्तक, गाने-बजाने वाले एवं छोटी-छोटी नावों द्वारा आजीविका करने वालों यो कष्ट देता है। शृंतिका नक्षत्र का शनि अग्नि से आजीविका करने वाले, धात्रिय, मैनिक और प्रशासक वर्ग के लिए अनिष्टकर होता है।

रोहिणी नक्षण में रहने वाला शनि उत्तरप्रदेश और पंजाब के व्यक्तियों को कष्ट देता है। गूर्ज और दक्षिण के निवासियों के लिए गुरु-शान्ति देता है। जनता में ब्रान्ति उत्पन्न करता है। समस्त देश में नशी-नयी बातों की गाँग की जाती है। शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्र में उन्नति होती है। मृगशिर नक्षत्र में शनि के विचरण कारने से याजक, यजमान, धर्मानुष्ठा और शान्तिप्रिय लोगों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से रोगों की उत्पत्ति अधिक होती है तथा अग्निभय और परस्परभय व्यावर बना रहता है। आद्रा नक्षत्र पर शनि के रहने से तेली, धोबी, रंगरेज और चोरों को अत्यन्त कष्ट होता है, देश के सभी भागों में

सुभिक्ष होता है। वर्षा उत्तम होती है, व्यापार भी बढ़ता है, विदेशों से सम्पर्क स्थापित होता है। गुरुवर्षु नक्षत्र में शनि के रहने से पंजाब, सीराट्ट, रिन्धु और सौवीर देश में अत्यन्त पीड़ा होती है। इन प्रदेशों में वर्षा भी अल्प होती है तथा महाराजा के कारण जगत को कष्ट होता है। पूर्व नक्षत्र में शनि के रहने से देश में सुकाल, उत्तम वर्षा, आपसी मतभेद, नेताओं में संघर्ष एवं निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को कष्ट होता है। पूर्व प्रदेशों के लिए उक्त नक्षत्र का शनि शान्ति देने वाला, दक्षिण प्रदेशों में सुभिक्ष करने वाला, उत्तर प्रदेशों में धन-धान्य की बृद्धि करने वाला एवं पश्चिम प्रदेशों के व्यक्तियों के लिए अशान्तिकारक होता है। उक्त नक्षत्र का शनि गम्भीर सुस्लिग राष्ट्रों में अशान्ति उत्पन्न करता है तथा अमेरिका में आन्तरिक कलह होता है। रूस की राजनीतिक स्थिति में भी परिवर्तन आता है। आञ्जेना नक्षत्र का शनि यथों को कष्ट देता है तथा सर्वोदारा आजीविका करने वालों को भी कष्ट ही देता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से जापान, वर्षा, दक्षिण भारत और युगोस्लाविया में भूकम्प अधिक आते हैं। इन गूरुओं द्वारा धन-जन की पर्याप्त हानि होती है। भारत के लिए उक्त नक्षत्र का शनि उत्तम नहीं है। देश में समयानुकूल वर्षा भी नहीं होती है, जिससे फसल उत्तम नहीं होती।

उत्तराफाल्युमी नक्षत्र का शनि गुड़, लबण, जल एवं फलों के लिए हानिकारक होता है। उक्त शनि में महाराष्ट्र, मद्रास, दक्षिणी भारत के प्रदेश और बम्बई झेंड्र के लिए नाश होता है। इन राज्यों का धार्मिक विकास होता है, कला-काश्मीर वी बृद्धि होती है। हस्त नक्षत्र में शनि शिवत हो तो शिलियों को कष्ट होता है। कुटीर उच्चोर्मों के विवास में उक्त नक्षत्र के शनि से अनेक प्रकार की शाधाएं आती हैं। चित्रा नक्षत्र में शनि हो तो मिथ्यों, लक्षित कला के कलाकारों एवं अन्य कोगन प्रकृति वालों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र में शनि के रहने से नमस्त भारत में वर्षा अच्छी होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। दक्षिण के प्रदेशों में आपसी मतभेद होने से कुछ अशान्ति होती है। स्वाति नक्षत्र में शनि हो तो, जर्तक, सारथी, द्वाद्यम, जहाज मंचालक, दूत एवं स्टीमरों के चालकों को शाधियों उत्पन्न होती है। देश में शान्ति और सुभिक्ष उत्पन्न होते हैं। विष्णुवा नक्षत्र का शनि रंगों के व्यापारियों के लिए उत्तम है। लोहा, अम्रक तथा अन्य प्रकार के खनिज गदायों के व्यापारियों के लिए अच्छा होता है। अनुराधा नक्षत्र का शनि काश्मीर के लिए अरिष्टकारक और ज्ञान भारत के लिए मध्यम है। इस नक्षत्र के शनि में खेती अच्छी होती है और वर्षा भी अच्छी ही होती है। इस नक्षत्र के शनि में वर्तन बनाने का कार्य करने वाले, धारड़े का कार्य करने वाले यन्त्रों में विश्व उत्पन्न होता है। जूट और चीमी के व्यापारियों के लिए यह बहुत अच्छा होता है। ज्येष्ठा नक्षत्र का शनि श्रेणी वर्ग और पुरोहित वर्ग के लिए

उत्तम नहीं होता है। अवशेष सभी श्रेणी के व्यक्तियों के लिए उत्तम होता है। मूल नक्षत्र का शनि काशी, अगोद्ध्या और आगरा में अशान्ति उत्पन्न करता है। यहाँ संघर्ष होते हैं तथा उक्त नगरों में अग्नि का भी भय रहता है। अवशेष सभी प्रदेशों के लिए उत्तम होता है। पूर्वांधादा में शनि के रहने से विहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्यभारत के लिए भयकारक, अल्प वर्षा सूचक और व्यापार में हानि पहुँचाने वाला होता है। उत्तरांधादा नक्षत्र में शनि विचरण करता हो तो यवन, गधर, मिळ्ठ आदि पहाड़ी जातियों को हानि करता है। इन जातियों में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं तथा आगरा में भी संघर्ष होता है। अवण नक्षत्र में विचरण करने से शनि राज्यपाल, राष्ट्रपति, मुख्यमन्त्री एवं प्रधानमन्त्री के लिए हानिकारक होता है। देश के अन्य वर्गों के व्यक्तियों के लिए कल्याण करने वाला होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में विचरण करने वाला शनि धनियों, श्रीमन्तों और ऊंचे दर्जे के व्यापारियों के लिए हानि पहुँचाता है। इन लोगों को व्यापार में वादा होता है। जनभिया और पूर्वाभाद्रपद में शनि के रहने से पर्यजीवी व्यक्तियों को विघ्न होता है। उक्त नक्षत्र के शनि में बड़े-बड़े व्यापारियों को अल्पा लाभ होता है। उत्तराभाद्रपद में शनि के रहने से कसल का नाश, दुर्भिक्ष, जनता की कष्ट, अस्वास्थ्य, अग्निभय एवं देश के सभी प्रदेशों में अशान्ति होती है। रेती नक्षत्र में शनि के विचरण कार्यों में कसल का अभाव, अलावर्ण, रोगों की भरमार, जनता में विद्वेष-ईर्ष्या एवं नागरिकों में असह्योग की भावना उत्पन्न होती है। राजाओं में विरोध उत्पन्न होता है।

गुरु के विशाला नक्षत्र में रहने पर शनि यदि कृतिका नक्षत्र में स्थित हो तो प्रजा को अत्यन्त धीड़ा दुर्भिक्ष और नागरिकों में भय पैदा होता है। अनेक वर्ण का शनि देश को कष्ट देता है, देश के विकास में विघ्न करता है। श्वेत वर्ण का शनि होने पर भारत के सभी प्रदेशों में शान्ति, धन-धार्य की वृद्धि एवं देश का सर्वांगीण विकास होता है।

सप्तदशोऽध्यायः

वर्णं गतिं च संस्थानं मार्गमस्तमनोदयौ ।

१वक्रं फलं प्रवक्ष्यामि गौतमस्य निबोधत ॥१॥

बृहस्पति के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, अस्त, उदय, वक आदि का फलदिश भगवान् गौतम स्वामी हारा प्रतिपादित आधार पर निरुपित किया जाता है ॥१॥

मेचकः कपिलः श्यामः पीतः २मण्डल-नीलवान् ।

रवतश्च धूम्रवर्णश्च च प्रथस्तोऽधिरासतदा ॥२॥

बृहस्पति का मेचक, कपिल—पिंगल, श्याम, पीत, नील, रवत और धूम्र वर्ण का मण्डल शुभ नहीं है ॥२॥

मेचकश्चेन्मतं सर्वं वसु पाण्डुविनाशयेत् ।

पीतो व्याधि भयं शिष्टे ध्रूम्राभः ३सृजते जलम् ॥३॥

यदि बृहस्पति का मण्डल मेचक वर्ण ना हो तो मृत्यु, पाण्डु वर्ण का हो तो धन-नाश, पीतवर्ण का हो तो व्याधि और धूम्र वर्ण का होने पर जल-वृष्टि होती है ॥३॥

उपसर्पति मित्रादि पुरतः स्त्री प्रपद्यते ।

त्रि-चतुर्भिश्च नक्षत्रस्त्रिभिरस्तमनं व्रजेत् ॥४॥

जब बृहस्पति तीन-चार नक्षत्रों के बीच गमन करता है या तीन नक्षत्रों में अस्त को प्राप्त होता है तो स्त्री-पुत्र और मित्रादि वी प्राप्ति होती है ॥४॥

कृत्तिकादि भगवतश्च मार्गः स्थादुत्तरः स्मृतः ॥

अर्यमादिरपात्यन्तो मध्यमो मार्ग उच्यते ॥५॥

कृत्तिका से पूर्वीकाल्युनी तक— कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आद्री, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मधा और पूर्वीकाल्युनी इन नी नक्षत्रों में बृहस्पति का उत्तर मार्ग तथा उत्तरायणाल्युनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विजाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वीपात्रा इन नी नक्षत्रों में उत्तरा मध्यम मार्ग होता है ॥५॥

विश्वादित्प्रमथान्तश्च दक्षिणो मार्ग उच्यते ।

एते बृहस्पतेर्मार्गा नद नक्षत्रजात्ययः ॥६॥

1. गौतमस्य प्रवक्ष्यामि यथावदगुपूर्वसः मू० । 2. पाण्डु स मू० । 3. धूम्राभश्च सृजेज्जलम् मू० ।

उत्तरापादा से भरणी तक—उत्तरापादा, श्रवण, धनिष्ठा, जतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, रेखजी, अश्विनी और भरणी इन दो नक्षत्रों में बृहस्पति का दक्षिण मार्ग होता है। इस प्रकार बृहस्पति के नो-नी नक्षत्रों के तीन मार्ग बतलाये गये हैं ॥6॥

मूलमुक्तरतो याति स्वाति दक्षिणतो ब्रजेत् ।
नक्षत्राणि तु शेषाणि सम्मतादक्षिणोत्तरे ॥7॥

उत्तर में मूल को और दक्षिण में स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तथा दक्षिणोत्तर में शेष नक्षत्रों को प्राप्त करता है ॥7॥

मूलके तु यदा हृस्को मूलं दक्षिणतो ब्रजेत् ।
दक्षिणतस्तदा विन्द्यादनयोर्दक्षिणे पथि ॥8॥

जब केन्द्र लघु होकर दक्षिण से मूल नक्षत्र की ओर जाता है तो बृहस्पति और केन्द्र दोनों ही दक्षिण मार्ग बाले कहे जाते हैं ॥8॥

अनावृष्टिहता देशा 'बुमुक्षाज्वरनाशितः ।
चक्रारुद्धा प्रजास्तत्र ब्रह्मन्ते जातौत्सकराः ॥9॥

इन दोनों के दक्षिण मार्ग में रहने से अनावृष्टि—वर्षा का अभाव होता है, जिसमें देश गीर्वित होते हैं। नेत्र ज्युर में अनेक व्यक्तियों की मृत्यु होती है प्रजा आसन में आहु रहती है और वर्णसंकरों का वध होता है ॥9॥

यदा चोत्तरतः स्वाति दीप्तो याति बृहस्पतिः ।
उत्तरेण तदा विन्द्याद् दारुणं भयमादिशेत् ॥10॥

जब बृहस्पति दीप्त होकर उत्तर की ओर में स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तो उस समय उत्तर देश में दारुण भय होता है ॥10॥

लुप्यन्ते च क्रियाः सर्वा नक्षत्रे गुरुपीडिते ।
दस्यवः प्रबला जेया न च बीजं प्ररोहति ॥11॥

गुरु के द्वारा नक्षत्र के गीर्वित होने पर सभी क्रियाओं का लोप होता है, चोरों की शक्ति घटती है और बीज उत्तरन्त महीं होता है ॥11॥

दक्षिणेन तु वक्रेण पञ्चमे पञ्च मुच्यते ।
उत्तरे पञ्चके पञ्च मार्गे चरति गीतमः ॥12॥

बृहस्पति के दक्षिण के पाँच मार्गों में पञ्चम मार्ग वक्र गति द्वारा पूर्ण किया जाता है और उत्तर के पाँच मार्गों में पञ्चम मार्ग मार्ग गति द्वारा पूर्ण किया जाता है ॥12॥

हस्ते भवति दुभिक्षं निष्प्रभे व्याधिं भयम् ।
विवर्णं पापसंस्थाने मन्दपुष्प-फलं भवेत् ॥13॥

गुह के हस्त मार्ग में गमन करने पर दुभिक्ष, निष्प्रभ में गमन करने पर व्याधि और भय, तथा विवर्ण और पाप संस्थान गार्ग में गमन करने पर अल्प फल और पुष्प उत्पन्न होते हैं ॥13॥

प्रतिलोमोऽनुलोमो वा पञ्च संवत्सरो यदा ।
नक्षत्राण्युपसर्पेण तदा सृजति दुस्समाम् ॥14॥

बृहस्पति अपने पाँच संवत्सरों में नक्षत्रों का प्रतिलोम और अनुलोम होने में गमन करता है तो दृष्टिकोण की उत्पत्ति होती है अर्थात् प्रजा को राष्ट्र होता है ॥14॥

सस्य नाशो अनावृष्टिम् त्युस्तीक्राश्च व्याधयः ।
शस्त्रकोपोऽग्निं मूच्छा च षड्विधं मूच्छने भयम् ॥15॥

बृहस्पति की उक्त प्रकार की स्थिति में धान्य नाश, अनावृष्टि, तीव्र कोष, रोग, शस्त्रकोण एवं मूच्छा आदि भय उत्पन्न होते हैं ॥15॥

सप्तार्धं यदि वाऽङ्गार्धं षड्विधं निष्प्रभोदितः ।
पञ्चार्धं चाथवार्धं च यदा संवत्सरं चरेत् ॥16॥

सङ्ग्रामा रोरवास्तव्ल निर्जलाश्च बलाहकाः ।
श्वेतास्थी पृथिवी त्रिवर्ता भ्रान्ताक्षुस्नेहवार्ताभिः ॥17॥

जब बृहस्पति संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्रत्सर इन पाँच संवत्सरों में संवत्सर नाम के बर्षे में विचरण कर रहा हो, तथा साथे तीन नक्षत्र, चार नअव, तीन नक्षत्र, ढाई नक्षत्र और आधे नक्षत्र पर निष्प्रभ उदित हो तो संग्राम, निर्गदर, मेघों वा निर्जल होता, पृथिवी का श्वेत हड्डियों से शुक्त होता, शूधा, रोग और कृवायु तूफान के द्वारा त्रस्त होता आदि फल प्राप्त होते हैं ॥16-17॥

1. मन्मूर् । 2. निर्दागाश्च मेषाश्च सीहुर्मुर्वा । मूर् । 3. भ्रान्तः शूधा गोगः शुक्वायुगिः,

पुष्पो 'यदि द्विनक्षत्रे सप्रभश्चरते समः ।
 षड् भयानि तदा हत्वा विपरीतं सुखं सृजेत् ॥18॥
 नृपाश्च विषमच्छायाश्चतुर्षु वर्तते हितम् ।
 सुखं प्रजाः प्रमोदन्ते स्वर्गवत् साधुवत्सलाः ॥19॥

जब बृहस्पति पुष्पादि दो नक्षत्रों में गमन करता है, तब छः प्रकार के भयों का शिनाश कर सुख उत्पन्न करता है। राजा भी आपस में प्रेम-भाव से निवास करते हैं, प्रजा सुख और आनन्द प्राप्त करती है तथा पृथ्वी स्वर्ग के समान साधु-वत्सल हो जाती है ॥18-19॥

विशाखा कृत्तिका चैव मधा रेवतिरेव च ।
 अश्विनी श्रवणश्चैव तथा भाद्रपदा भवेत् ॥20॥
 बहूदकानि जानीयात् तिष्ठयोगसमप्रभे ।
 फलगुन्येव च चित्रा च वैश्वदेवश्च मध्यमः ॥21॥

जब बृहस्पति विशाखा, कृत्तिका, मधा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, पूर्वांभाद्रपद इन नक्षत्रों से गमन करता है तो गुरु-पुष्प योग के समान ही अत्यधिक जल की वर्षा समझनी चाहिए। पूर्वांभाद्रपदा इन नक्षत्रों में बृहस्पति के गगन करने पर मध्यम फल जानता चाहिए ॥20-21॥

ज्येष्ठा मूलं च सौम्यं च जघन्या सोमसम्पदा ।
 कृत्तिका रोहिणी मूल्लिराशलेषा हृदयं गुरुः ॥22॥
 आप्य ब्राह्मणं च वैश्वं च नाभिः पुष्प-मधा स्मृताः ।
 एतेषु च विरुद्धेषु ध्रुवस्य फलमादिशेत् ॥23॥

ज्येष्ठा, मूल और पूर्वांभाद्रा नक्षत्रों में बृहस्पति गमन करे तो जपन्य गुरु-सम्पदनि की प्राप्ति होती है। कृत्तिका तथा रोहिणी, मूल्लि और ब्राशलेषा, बृहस्पति का हृदय है। पूर्वांभाद्रा, अभिजित्, उत्तरांभाद्रा, पुष्प और मधा उसकी नाभि मानी गयी हैं। इन नक्षत्रों में तथा इनसे विपरीत नक्षत्रों में फल का निरूपण करता चाहिए ॥22-23॥

द्विनक्षत्रस्य चारस्य यत् पूर्वं परिकीर्तितम् ।
 एवसेवं तु जानीयात् षड् भयानि समादिशेत् ॥24॥

दो-दो नक्षत्रों का गमन जो पहले कहा गया है, उन्हीं के अनुसार छः प्रकार के भयों का परिज्ञान करना चाहिए ॥24॥

इमरनि यानि बीजानि विशेषेण विचक्षणः ।

व्याधयो मूर्तिघातेन हृद्रोगो हृदये 'महत् ॥25॥

जो बीजभूत नक्षत्र है, उनके द्वारा मनीषियों को फलादेश जात करना चाहिए। यदि वृहस्पति के मूर्ति नक्षत्रों—कृतिका और रोहिणी—का घात हो तो व्याधियाँ—नाना प्रकार की बीमारियाँ और हृदय नक्षत्र का घात हो तो हृदय रोग उत्पन्न होते हैं ॥25॥

पुष्ये हृते हृतं पुष्यं फलानि कुसुमानि च ।

आग्नेया मूषकाः सर्पा दाघश्च शलभाः शुकाः ॥26॥

ईतिवश्च लहूधारन्ते जलाने न लहूधा स्मृताः ।

स्वचक्रमोत्थश्चैव परचक्रं निरम्बु च ॥27॥

पुष्य नक्षत्र का घात होने पर पुष्य, फल और पल्लवों का विनाश, अग्नि, मूषक—चूहे, सर्प, जलन, शलभ (टिड़ी), शुक का उपद्रव, ईति—महामारी, धान्यघात, स्वशासन में मित्रता, और परशासन में जलाभाव आदि फल घटित होते हैं ॥26-27॥

अत्यम्बु च विशाखायां सोमे संवत्सरे विदुः ।

शेषं संवत्सरे ज्येष्ठं शारदे तत्र नैतरम् ॥28॥

अगहन या सीम्य नाम के संवत्सर में जब विशाखा नक्षत्र पर वृहस्पति गमन करता है, तो अत्यधिक जल की वर्षा होती है। शेष संवत्सरों में केवल पौष संवत्सर में ही अल्प जल की वर्षा समझनी चाहिए, अन्य वर्षों में वह भी नहीं ॥28॥

माघमल्पोदकं विन्द्यात् फालगुने दुर्भगाः स्त्रियः ।

चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपाः ॥29॥

बृहस्पति जिस मास के जिस नक्षत्र में उदय हो, उस नक्षत्र के अनुसार ही महीने के नाम के समान वर्ष का भी नाम होता है। माघ नाम के वर्ष में अला वर्षा होती है, फालगुन नाम के वर्ष में स्त्रियों का दुर्भाग्य बढ़ता है। चैत्र नाम के वर्ष में श्रान्य, जल की वर्षा विचित्र रूप में होती है तथा सरीसृपों की वृद्धि होती है ॥29॥

वैशाखे तृप्तमेदश्च पूर्वतोयं विनिर्विशेत् ।

ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् सित्र-मेदश्च जायते ॥३०॥

वैशाख नामक वर्ष में राजाओं में मतभेद होता है और जल की वर्षा अच्छी होती है । ज्येष्ठा नामक वर्ष में—जो कि ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र के मासिक होने पर आता है, अच्छी वर्षा, गिरों ने नरभेद और वर्ष का अनुरूप होता है ॥३०॥

आषाढे तोषसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम् ।

श्रावणे दंडिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबलाः समृद्धाः ॥३१॥

आषाढ़ नामक वर्ष में जल की कमी होती है, पर कहीं-कहीं अच्छी वर्षा होती है और सरीसृपों की वृद्धि होती है । श्रावण नामक वर्ष में दाँत वाले जन्तु, चौर, सर्प आदि प्रबल होते हैं ॥३१॥

संवत्सरे भाद्रपदे शस्त्रकोपाग्निमूर्च्छनम् ।

सरीसृपाश्चाश्वयुजि बहुधा वा भयं विदुः ॥३२॥

भाद्रपद नामक वर्ष में शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सर में सरीसृपों का अनेक प्रकार का भय होता है ॥३२॥

(कालिक संवत्सर में गक्ट द्वारा आजीविका करने वाले, अस्त्र-एस्त्रों का निर्माण एवं क्रय-विक्रय करने वालों को कष्ट होता है ।)

एते संवत्सराश्चोषताः पुष्यस्य परतोऽपि वा ।

'रोहिण्याद्रस्तथाश्लेषा हस्तः स्वातिः पुनर्वसुः ॥३३॥

बृहस्पति के इन वर्षों का फल कहा गया है; रोहिणी के अभियात से प्रजा सभी प्रकार से दुःखित होती है ॥३३॥

अभिजिञ्चानुराधा च मूलो वासववाहणाः ।

रेवती भरणो चैव विज्ञेयानि बृहस्पतेः ॥३४॥

अभिजित्, अनुराधा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती और भरणी ये नक्षत्र बृहस्पति के हैं अर्थात् इन नक्षत्रों में बृहस्पति के रहने से शुभ फल होता है ॥३४॥

कृत्तिकायां गतो नित्यमारोहण-प्रमर्दने ।

रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिताः ॥३५॥

कृत्तिका नक्षत्र में स्थित बृहस्पति जब आरोहण और प्रमर्दन करता है और रोहिणी में स्थित होकर अभियात करता है तो प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट

1. रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिताः म० ।

होता है ॥35॥

शस्त्रघातस्तथाऽद्विधामाश्लेषायां विषादभयम् ।

मन्दहस्तपुनर्वसोस्तोयं चौराश्च दारणाः ॥36॥

आर्द्ध के घातित होने पर बृहस्पति शस्त्रघात, आश्लेषा में स्थित होने पर विषादभय तथा हस्त और पुनर्वसु में घातित होने पर मन्द वर्षा और भीगण चौर्यभय उत्पन्न करता है ॥36॥

वायव्ये वायवो दृष्टा रोगदं वाज्ञिनां भयम् ।

अनुराधानुधाते च ^१स्त्रीसिद्धिश्च प्रहीयते ॥37॥

स्वाति नक्षत्र में स्थित बृहस्पति के घातित होने पर वायव्य दिशा में रोग उत्पन्न करता है, वोडों को अनेक प्रकार का भय होता है, अनुराधा नक्षत्र के घातित होने पर स्त्री-प्रेग में कमी आती है ॥37॥

तथा मूलाभिघातेन दुष्यन्ते मण्डलानि च ।

वायव्यस्याभिघातेन पीड्यन्ते धनिनो नराः ॥38॥

मूल नक्षत्र के घातित होने पर मण्डल — प्रदेशों को कष्ट होता है, दोष लगता है और विशाखा नक्षत्र के अभिघातित होने पर धनिक व्यक्तियों को पीड़ा होती है ॥38॥

वारुणे जलजं तोयं फलं पुष्पं च शुष्यति ।

अकारान्नाविकास्तोयं पीडयेद्रेवती हता ॥39॥

शतभिषा के अभिघातित होने पर कगल, जल, फल, पुष्प इत्यादि गूँध जाते हैं। उत्तरा भाद्रपद के अभिघातित होने पर नाविक और जल-जल्तुओं को पीड़ा तथा जल का अभाव और रेवती नक्षत्र के अभिघातित होने पर पीड़ा होती है ॥39॥

वासं करोति नक्षत्रं यस्य दीप्तो बृहस्पतिः ।

लघ्वाऽपि सोऽर्थं विषुलं न भुञ्जीत कदाचन ॥40॥

अहनस्ति बीजं तोथञ्च मृत्युदा भरणी यथा ।

अपि हस्तगतं द्रव्यं सर्वथैव विनश्यति ॥41॥

दीप्त बृहस्पति जिस व्यक्ति के द्वायी और नक्षत्र को अभिघातित करता है; वह व्यक्ति विषुल समाति को प्राप्त करके भी उसका भोग नहीं कर सकता है,

1. मैत्री-मृ० । 2. यह श्लोक मृदिन शनि में नहीं है ।

तथा वीज और जल का विनाश करता है और यम के समान मृत्युप्रद होता है। हाथ पर रखा हुआ धन भी विनाश को प्राप्त होता है ॥40-41॥

प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं यस्य कुर्यात् बृहस्पतिः ।

यायिनां विजयं विन्द्यात् नागरणां पराजयम् ॥42॥

बृहस्पति जिस व्यक्ति के दाहिनी ओर नक्षत्र को अभिधातित करता है, वह व्यक्ति यदि यायी हो तो विजय और नागरिक हो तो पराजय पाता है ॥42॥

प्रदक्षिणं तु कुर्वति सोमं यदि बृहस्पतिः ।

नागरणां जयं विन्द्याद् यायिनां च पराजयम् ॥43॥

यदि बृहस्पति चन्द्रमा की प्रदक्षिणा करे तो नागरिकों की विजय और यायियों की पराजय होती है ॥43॥

उपघातेन चक्रेण मध्यगन्ता बृहस्पतिः ।

निहन्याद् यदि नक्षत्रं यस्य तस्य पराजयम् ॥44॥

उपघात चक्र के मध्य में स्थित होकर बृहस्पति जिस व्यक्ति के नक्षत्र का आत बारता है, उसी का पराजय होता है ॥44॥

बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो रूपं संछादयेत् भृशम् ।

स्थावरणां वधं कुर्यात् पुररोधं च दारुणम् ॥45॥

जब बृहस्पति के रूप वा चन्द्रमा अच्छादन करे तो स्थावरों का वध होता है और नगर का भग्नार अवरोध होता है, जिससे अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं ॥45॥

स्त्रिरध्यप्रसन्नो विमलोऽभिरूपो महाप्रमाणो द्युतिमान् स पीतः ।

गुरुर्यदा शोत्तरमार्गचारी तदा प्रशस्तः १प्रतिबद्धहन्ता ॥46॥

यदि बृहस्पति स्त्रिरध्य, प्रसन्न, निर्मल, सुन्दर, कान्तिमान, पीतवर्ण, पूर्ण आङृति वाला और युवावस्था वाला उत्तरमार्ग में विचरण करता है तो शुभ होता है और प्रतिपक्षियों का विनाश करता है ॥46॥

इति श्रीसकलमृत्तिजनानन्दमहाभूनिभद्रबाहुविरचिते परमनैमित्तिकशास्त्रे

बृहस्पतिचारः सप्तदशः परिसमाप्तः ॥17॥

विवेचन— मास के अनुसार गुरु के राशि-परिवर्तन का फल ---यदि कान्तिक मास में गुरु राशि परिवर्तन करे तो वर्षों को कष्ट, शस्त्र-अस्त्रों का अधिक निर्माण, अग्निभय, साधारण वर्षा, समर्थता, मालिकों को कष्ट, द्रविड़ देशवासियों को शान्ति, सीराष्ट्र के निवासियों को साधारण कष्ट, उत्तरप्रदेश वासियों को सुख एवं धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। अगहन में गुरु के राशि परिवर्तन होने से अल्प वर्षा, कृषि की हानि, परस्पर में युद्ध, आन्तरिक संघर्ष, देश के विकास में अनेक रुकावटें एवं नाना प्रवार के संकट आते हैं। बिहार, बंगाल, आसाम आदि पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा अच्छी होती है तथा इन प्रदेशों में कृषि भी अच्छी होती है। उत्तरप्रदेश, पंजाब और सिन्ध में वर्षा की कमी रहती है, फसल भी अच्छी नहीं होती है। इन प्रदेशों में अनेक प्रकार के संघर्ष होते हैं, जनता में अनेक प्रकार की गाटियाँ तैयार होती हैं तथा इन प्रदेशों में महामारी भी फैलती है। चचक का प्रकोप उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, और राजस्थान में होता है। पाप मास में बृहस्पति के राशि-परिवर्तन से गुभिक, आवश्यकतानुसार अच्छी वर्षा, धर्म की वृद्धि, क्षेत्र, आरोग्य और गुरु का विकास होता है। भारतवर्ष के सभी राज्यों के लिए यह बृहस्पति उत्तम माना जाता है। पहाड़ी प्रदेशों की उन्नति और अधिक रूप में होती है। माघ मास में गुरु के राशि-परिवर्तन से सभी प्राणियों को सुख-शांति, सुभिक, आरोग्य और समयानुकूल व्यंग्य वर्षा एवं सभी प्रकार से कृषि का विकास होता है। ऊपर भूमि में भी अनाज उत्पन्न होता है। पश्चिमों का विकास और उन्नति होती है। कालगुण मास में गुरु के राशि-परिवर्तन होने से स्थिरों को भय, विध्वाओं की संख्या की वृद्धि, वर्षा का अभाव अथवा अल्प वर्षा, ईति-भीति, फसल की कमी एवं हैंजे का प्रकोप व्यापक रूप से होता है। बंगाल, राजस्थान और गुजरात में अभाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। चैत्र में गुरु का राशि-परिवर्तन होने में नारियों को भन्तान-आप्ति, गुभिक, उत्तम वर्षा, नाना व्याधियों की आशंका एवं लंगार में राजनीतिक परिवर्तन होते हैं। जापान, जर्मन, अमेरिका, इंग्लैण्ड, रूस, चीन, च्याम, बर्मा, आन्द्रेलिया, मलाया आदि में मनमुटाव होता है। शाष्ट्रों में भद्रनीति तायं करती है। गुटवन्दी का वर्ष आरम्भ हो जाने से परिवर्तन के चिह्न स्नाष्ट-दूषितगोचर होने लगते हैं। वैशाख मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से धर्म की वृद्धि, गुभिक, अच्छी वर्षा, व्यापारिक उन्नति, देश का आधिक विकास, द्रुष्ट-गुण्डे-बोर आदि का दमन, सज्जनों को पुरस्कार एवं नाना नाना का भाव नस्ता होता है। धी, मुड़, धीर्जा आदि का भाव भी सस्ता रहता है। उत्त प्रकार के गुरु में फलों की फसल में कमी आती है। समयानुकूल व्यंग्य वर्षा होती है। जूट, तम्बाकू और जोहू का उत्पादन अधिक होता है। प्रिदेशों से भारत का मैथी सम्बन्ध बढ़ता है तथा सभी शाष्ट्र मैथी सम्बन्धों में आगे बढ़ना चाहता है। चंगुल पाणि में गुद के राशि-परिवर्तन होने से धर्मात्माजीनों को कष्ट,

धर्मस्थानों पर विपत्ति, सतिक्या का अभाव, वर्षा की कमी, धान्य की उत्पत्ति में कमी एवं प्रजा में अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्य में सूखा पड़ता है, जिससे इन राज्यों की प्रजा को अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। उक्त मास में युरु का राशि-परिवर्तन कलाकारों के लिए मध्यम और योद्धाओं के लिए श्रेष्ठ होता है। आषाढ़ मास में बृहस्पति का राशि-परिवर्तन हो तो राज्य द्वारों को बलेश, मुख्य मन्त्रियों को शारीरिक कष्ट, ईति-भीति, वर्षा का अवरोध, फसल की क्षति, नये प्रकार की कान्ति एवं पूर्वोत्तर प्रदेशों में उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण के प्रदेशों में भी उत्तम वर्षा होती है। मलवार में फराल में कुछ कमी रह जाती है। गेहूँ, धान, जौ और मक्का की उपज सामान्यतया अच्छी होती है। श्रावण मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, देश का आर्थिक विकास, फल-फूलों की वृद्धि, नागरिकों में उत्तेजना, क्षेम और आरोग्य फैलता है। भाद्रपद और आश्विन मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से क्षेम, श्री, आयु, आरोग्य एवं धन-धान्य की वृद्धि होती है। समयानुकूल अच्छी वर्षा होती है। जनता को आर्थिक लाभ होता है तथा सभी मिलकर देश के विकास में योगदान करते हैं।

द्वादश राशि स्थित गुरुफल—मंप राशि में बृहस्पति के होने से चैत्र संक्रत्सर कहलाता है। इसमें खूब वर्षा होती है, गुभिक्ष होता है। वस्त्र, गुड़, तंबा, कपास, मूँगा आदि पदार्थ मस्ते होते हैं। घोड़ों को पीड़ा, महामारी, द्राह्यणों को कष्ट, तीन महीनों तक जनसाधारण को भी कष्ट होता है। भाद्रपद मास में गेहूँ, चावल, उड़द, धी, सस्ते होते हैं, दक्षिण और उत्तर में खण्डवृष्टि होती है। दक्षिणोत्तर प्रदेशों में दुभिक्ष, दो महीने के पश्चात् वर्षा होती है। कातिक और मार्गशीर्ष मास में कपास, अन्न, गुड़ महेंगा होता है, धी का भाव सस्ता होता है, जूट, पाट का भाव महेंगा होता है। पीय मास में रसों का भाव महेंगा, अन्न का भाव सस्ता, गुड़-धी तथा भाव कुछ महेंगा होता है। एक वर्ष में यदि बृहस्पति तीन राशियों का स्पर्श करे तो अत्यन्त अनिष्ट होता है।

दृष्ट राशि में गुरु के होने से वैशाख में वर्ष माना जाता है। इस वर्ष में वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। गेहूँ, चावल, मूँग, उड़द, तिल के व्यापार में अधिक लाभ होता है। श्रावण और ज्येष्ठ इन दो महीनों में सभी वस्तुएं जामप्रद होती हैं। इन दोनों महीनों में वस्तुएं खरीदकर रखने से अधिक लाभ होता है। कातिक, माघ और वैशाख में धी का भाव तेज होता है। आषाढ़, श्रावण और आश्विन में अच्छी वर्षा होती है, भाद्रों के महीने में वर्षा का अभाव रहता है। रोग उत्पत्ति इस वर्ष में अधिक होती है। पूर्व प्रदेशों में भलेरिया, चंचक, निमोनिया, हैजा आदि रोग सामूहिक रूप से फैलते हैं। परिचम के प्रदेशों में सूखा होने से बुखार का अधिक प्रमाण होता है। आषाढ़ मास में बीजबाले अनाज महेंगे

और अवशेष सभी अनाज सस्ते होने हैं। गुड़ का भाव फालगुन से महेंगा होता है और अगले वर्ष तक चला जाता है। धी का भाव घटता-वढ़ता रहता है। चीपायों को कट अधिक होता है। श्रावण और भाद्रपद दोनों महीनों में पशुओं में महामारी पड़ती है, जिससे मवेशियों का नाश होता है।

मिथुन राशि पर वृहस्पति के आने से ज्येष्ठ नामक संवत्सर होता है। इसमें बालकों और घोड़ों को रोग होता है, वायु-वर्षा होती है। पाप, अत्याचार और अनीति की वृद्धि होती है। चोरभय, शस्त्रभय एवं आतंक व्याप्त रहता है। सोना, चाँदी का बाजार एक वर्ष तक अस्थिर रहता है, व्यापारियों को इन दोनों के व्यापार में लाभ होता है। अनाज का भाव वर्ष के आरंभ में महेंगा, पश्चात् सख्त होता है। नूड, सोंह, मिर्च, धीपल, सरसों का भाव कुछ तेज होता है। कक राशि पर गुह के रहने से आपादारुय संवत्सर होता है। इस वर्ष में कातिक और फालगुन में सभी प्रकार के अनाज तेज होते हैं, अल्प वर्षा, दुमिथ, अशान्ति और रोग फैलते हैं। सोना, चाँदी, रेशम, तीवा, मूँगा, मोती, माणिक्य, अन्न आदि का भाव कुछ तेज होता है; पर अनाज, गुड़ और धी का भाव अधिक तेज होता है। शीतकाल की सचित वर्षी गयी वस्तुओं की वर्षा काल में बेचने से अधिक लाभ होता है। सिह राशि का वृहस्पति श्रावण संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। धी, दूध और रसों की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। फल-गुण्यों की उपज अच्छी होने में विश्व में शान्ति और पुख दिखलाई पड़ता है। धान्य वर्षी उत्पत्ति अच्छी होती है। नये नेताओं की उत्पत्ति होने गे देश का नेतृत्व नये व्यक्तियों के हाथ में जाता है, जिसमें देश की प्रगति ही होती है। व्यापारियों के लिए यह वर्ष उत्तम होता है। सभी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है। सिह के गुह में होने पर चीपाये महेंगे होते हैं। सोना, चाँदी, धी, तेल, गेहूँ, चावल भी महेंगा ही रहता है। चातुर्मास में वर्षा अच्छी होती है। कातिक और पीप में अनाज महेंगा होता है, अवशेष गहीनों में अनाज वा भाव सख्त रहता है। सोना-चाँदी आदि धातुएँ कातिक में माव तक महेंगी रहती हैं, अवशेष महीनों में कुछ भाव नीचे गिर जाते हैं। यों सोने के व्यापारियों के लिए यह वर्ष बहुत अच्छा है। गुड़, चीनी के व्यापार में घाटा होता है। वैशाख भाग से श्रावण मास तक गुड़ का भाव कुछ तेज रहता है, अवशेष महीनों में समर्थता रहती है। स्त्रियों के लिए यह वृहस्पति अच्छा नहीं है, स्त्रीधर्म मन्त्रवन्धी अनेक वीमारियाँ उत्पन्न होती हैं तथा कन्याओं नों नेचक अधिक निकलती हैं। सर्वमाधारण में आनन्द, उत्साह और हृषि की लहर दिखलाई पड़ती है।

कन्या राशि के मुरु में शाद्रसंवत्सर होता है। इसमें कातिक से वैशाख तक सुभिक्ष होता है। इस संवत्सर में संग्रह किया गया अनाज वैशाख में दूना लाभ देता है। वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही रहती है। तुला राशि

के बृहस्पति में आश्विन वर्ष होता है। इसमें धी, तेल सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष और पौष में धान्य का संग्रह करना उचित है। मार्गशीर्ष से लेकर चैत्र तक पौष्टि महीनों में लाभ होता है। विश्रह—लडाई और संघर्ष देश में होने का योग अवगत करना चाहिए। इस संग्रह करने वालों को अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि का बृहस्पति होने पर कात्तिक संवत्सर होता है। इसमें खण्डवृष्टि, धान्य की फसल अल्प होती है। घरों में परस्पर बंमनस्य आठ महीनों तक होता है। भाद्रपद, आश्विन और कात्तिक महीनों में महेंगाई हो जाती है। सोना, चांदी, काँसा, ताँबा, तिल, धी, श्रीफल, कपास, नमक, शंख वस्त्र महेंगे विकले हैं। देश के विभिन्न प्रदेशों में संघर्ष होते हैं, स्त्रियों को नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। धनु राशि के बृहस्पति में मार्गशीर्ष संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अधिक होती है। सोना, चांदी, अनाज, कपास, लोहा, काँसा आदि सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष से ज्येष्ठ तक धी कुछ महेंगा रहता है। चीपायों से अधिक लाभ होता है, इनका मूल्य अधिक बढ़ जाता है। भक्त के गुरु में पौष संवत्सर होता है, इसमें व्याधाव और दुमिक होता है। उत्तर और पार्श्वमें खण्ड वृष्टि होती है तथा पूर्व और दक्षिण म दुमिक। धान्य का भाव महेंगा रहता है। कुम्भ के गुरु में माघ संवत्सर होता है। इसमें मुमिक, पर्याप्त वर्षा, धार्मिक प्रचार, धातु और अनाज सस्त होत है। माव-फाल्गुन में पदार्थ सस्ते रहते हैं। वंशाख में वस्तुओं के भव्य कुछ तेज हो जाते हैं। मौन के गुरु में फाल्गुन संवत्सर होता है। इसमें अनेक प्रकार के रोगों का प्रसार, साधारण वर्षा, गुम्भड, गेहूँ, चीनी, तिल, तील और युड़ का भाव तेज होता है। पौष मास में कष्ट होता है। फाल्गुन और चैत्र के महीने में धीमारियों फैलती हैं। दक्षिण भारत और राजस्थान के लिए यह वर्ष मध्यम है। पूर्व के लिए वर्ष उत्तम है, पश्चिम के प्रदेशों के लिए वर्ष साधारण है।

बृहस्पति के वक्री होने का विचार—भ्रष्ट राशि का बृहस्पति वक्री होकर भीन राशि का हो जाय तो आषाढ़, आवण में धाय, महिष, गधे और ऊट तेज हो जाते हैं। चन्दन, सुगन्धित तेल तथा अन्य सुगन्धित वस्तुएँ महेंगी होती हैं। वृष राशि का गुरु पौच महीने वक्री हो जाय तो धाय-बैल आदि चीपाये, वर्तन आदि तेज होते हैं। सभी प्रकार के धान्य का संग्रह करना उचित है। मध्येषी में अधिक लाभ होता है। मिथुन राशि का गुरु वक्री हो तो आठ महीने तक चीपाये नेज रहते हैं। मार्गशीर्ष आदि भहीनों में मुमिक, सब लोग स्वस्थ लेकिन उत्तर प्रदेश और पंजाब में दुष्प्राप्ति की स्थिति आती है। कर्क राशि का गुरु यदि वक्री हो तो धोर दुमिक, गृहयुद्ध, जनता में संघर्ष, राज्यों की सीमा में परिवर्तन तथा धी, तील, चीनी, कपास के व्यापार में लाभ एवं धान्य भाव भी महेंगा होता है। सिंह राशि के गुरु के वक्री होने से गुम्भड, आरोग्य और सब लोगों में प्रसन्नता होती है। धान्य के संग्रहों में भी लाभ होता है। कन्या राशि के गुरु के वक्री होने से अल्प लाभ,

मुभिक्ष, अधिक वर्षा और प्रजा आभोद-प्रमोद में लीन रहती है। तुला राशि के गुरु के बक्की होने से बर्तन, सुगन्धित वस्तुएं, कपास आदि पदार्थ महेंगे होते हैं। वृश्चिक राशि का गुरु बक्की हो तो अन्न और धान्य का संग्रह करना उचित होता है। गेहूं, चना आदि महेंगे होते हैं। बनु राशि का गुरु बक्की हो तो सभी प्रकार के अनाज सस्ते होते हैं। मकर राशि के गुरु के बक्की होने से धान्य सस्ता होता है और आरोग्यता की वृद्धि होती है। यदि कुम्भ राशि का गुरु बक्की हो तो मुभिक्ष, कल्याण, उचित वर्षा एवं धान्य भाव सम रहता है। वर्षान्ति में वस्तुओं के भाव कुछ महेंगे होते हैं। मीन राशि का गुरु बक्की हो तो धनक्षय, चोरों से भय, प्रशासन में अनवन, धान्य और रसा पदार्थ महेंगे होते हैं। लबण, कपास, घी और तेल में चौगुना लाभ होता है। मीन के गुरु का बक्की होना धातुओं के भावों में भी तेजी लाता है तथा सुवर्णादि सभी धातुएं महेंगी होती हैं।

गुरु का नक्षत्र भोग विचार—जब गुरु कृत्तिका, रोहिणी नक्षत्र में स्थित हो उस समय मध्यम वृष्टि और मध्यम धान्य उपजता है। मृगशिरा और वार्षी में गुरु के रहने में यथेष्ट वर्षा, मुभिक्ष और धन-धान्य की वृद्धि होती है। पुनर्वसु, पुष्य और आश्वेषा में गुरु हो तो अनावृष्टि, घोरधम, दुभिक्ष, लूट-पाट, संधर्ष और अनेक प्रकार के रोग होते हैं। भूषा और पूर्वाफाल्युनी में गुरु के होने से गुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य होते हैं। उत्तराफाल्युनी और हस्ता में गुरु स्थित हो तो वर्षा अच्छी, जनता को मुख एवं सर्वत्र क्षेम-आरोग्य व्याप्त रहता है। चित्रा और स्वाती नक्षत्र में गुरु हो तो थेष्ठ धान्य, उत्तम वर्षा तथा जनता में आभोद-प्रमोद होते हैं। विश्वामित्रा और अनुराधा में गुरु के होने से मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है। ज्येष्ठा और मूल में गुरु हो तो दो महीने के उपरान्त खण्डवृष्टि होती है। पूर्वापाहा और उत्तरापाहा में गुरु हो तो तीन महीनों तक नगतार अच्छी वर्षा, क्षेम, आरोग्य और पृथ्वी पर सुभित्ति होता है। थवण, धनिष्ठा, शतभिष्ठा नक्षत्र में गुरु हो तो सुभित्ति के गाथ धान्य महेंगा होता है। पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद में गुरु का होना अनावृष्टि का सूचक है। रेतती, भरणी और अश्विनी नक्षत्र में गुरु के होने से मुभिक्ष, धान्य की अधिक उत्पत्ति एवं शान्ति रहती है। मृगशिरा में गाँच नक्षत्रों में गुरु जुझ होता है। गुरुतीक्ष्ण गति हो और शनि वक्ती हो तो विश्व में हाहाकार होने लगता है।

गुरु के उदय का फलादेश—मेष राशि में गुरु का उदय हो तो दुभिक्ष, पर्ण, संपद, ब्राह्मरिमक दुर्घटनाएं होती हैं। वृष्णि में उदय होने गे मुभिक्ष, मणि-रसन महेंगे होती हैं। मिथुन में उदय होने से वैश्याओं को करण, कलाकार और व्यापारियों को भी शीढ़ा होती है। कक्ष में उदय होने से अलावृष्टि, मृत्यु एवं धान्य भाव तेज होता है। गिह में उदय होने से समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, मुभिक्ष एवं नदियों की बाढ़ से जन-साधारण में कष्ट होता है। कन्या राशि में गुरु के उदय होने गे

बालकों को कष्ट, साधारण वर्षा और फसल भी अच्छी होती है। तुलाराशि में गुरु के उदय होने से काश्मीरी चन्दन, फल-पुष्प एवं सुगन्धित पदार्थ महेंगे होते हैं। वृश्चिक राशि में गुरु के उदय होने से दुमिक्ष, धन-विनाश, पीड़ा, एवं अल्प वर्षा होती है।

धनु राशि और मकर राशि में गुरु का उदय होने से रोग, उत्तम धात्य, अच्छी वर्षा एवं द्विजातियों को कष्ट होता है। कुम्भ राशि में गुरु के उदय होने से अतिवृष्टि, अनाज का भाव महेंगा एवं मीन राशि में गुरु के उदय होने से युद्ध, संघर्ष और अग्नान्ति होती है। कातिक मास में गुरु के उदय होने से थोड़ी वर्षा, रोग, पीड़ा; मार्गशीर्ष में उदय होने से सुभिक्ष, उत्तम वर्षा; पौष में उदय होने से नीरोगता और धात्य की प्राप्ति; माघ-फालगुन में उदय होने से खण्डवृष्टि, चैत्र में उदय होने से विचित्र स्थिति, वैशाख-ज्येष्ठ में उदय होने से वर्षा का निरोग; आगाह में उदय हो तो आगस में मतभेद, अन्त का भाव तेज; श्रावण में उदय हो तो आरोग्य, सुख-आनंद, वर्षा; भाद्रपद मास में उदय होने से धात्यनाश एवं अश्विन में उदय होने से सभी प्रकार से सुख की प्राप्ति होती है।

गुरु के अस्त का विचार—मेष में गुरु अस्त हो तो थोड़ी वर्षा; विहार, बंगाल, आसाम में सुभिक्ष; राजस्थान, पंजाब में दुष्काल; वृष्टि में अस्त हो तो दुमिक्ष; दक्षिण भारत में अच्छी फसल, उत्तर भारत में खण्डवृष्टि; मिथुन में अस्त हो तो धूत, तेज, लवण आदि पदार्थ महेंगे, महामारी के कारण सामूहिक मृत्यु, अला वृष्टि, कर्क में हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण, क्षेम; सिंह में अस्त हो तो गुद्ध, संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, धन का नाश; कन्या में अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य; तुला में पीड़ा, द्विजों को विशेष कष्ट, धात्य महेंगा; वृश्चिक में अस्त हो तो नेत्ररोग, धनहानि, आरोग्य, शस्त्रभय; धनु राशि में अस्त हो तो भय, आतंक, रोगादि; मकर राशि में अस्त हो तो उड़द, तिल, मूँग आदि धात्य महेंगे; कुम्भ में अस्त हो तो प्रजा को कष्ट, गर्भवती नारियों को रोग एवं मीन राशि में अस्त हो तो सुभिक्ष, साधारण वर्षा, धात्य भाव सस्ता होता है।

गुरु का कूर प्रहों के साथ अस्त या उदय होना अशुभ होता है। शुभ प्रहों के साथ अस्त या उदय होने से गुरु का शुभ फल प्राप्त होता है। गुरु के साथ आन्ति और संगम के रहने से प्राप्त सभी वस्तुओं की कमी होती है और भाव भी उनके महेंग होते हैं। जब गुरु के साथ जनि की दृष्टि गुरु पर रहती है, तब वर्षा कम होती है और फसल भी अल्प परिमाण में उपजती है।

अष्टादशोऽध्यायः

गति प्रवासमुदयं वर्णं ग्रहसमागमम् ।
बुधस्य सम्प्रवक्ष्यते मि कलानि च निबोधत ॥१॥

बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग का वर्णन करता है, उनका कल निम्न प्रकार अवस्था करना चाहिए ॥१॥

सौम्या विमिश्राः संक्षिप्तास्तीवा घोरास्तथैव च ।
दुर्गाविगतयो ज्ञेया बुधस्य च विचक्षणः ॥२॥

सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीवा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकार की बुध की गतियाँ विद्वानों ने बतलायी हैं ॥२॥

सौम्यां गति समुत्थाय १त्रिपक्षाद् दृश्यते बुधः ।
विमिश्रायां गती पक्षे संक्षिप्तायां षड्गुनके ॥३॥
तीक्ष्णायां दशरात्रेण घोरायां तु षडाह्निके ।
पापिकायां त्रिरात्रेण दुर्गायां सम्यगक्षये ॥४॥

सौम्या गति में बुध तीन पक्ष अर्थात् 45 दिन तक देखा जाता है । विमिश्रा गति में दो पक्ष अर्थात् तीस दिन, संक्षिप्ता गति में चौबीस दिन, तीक्ष्णा गति में दस रात, घोरा में छः दिन, पापा गति में तीन रात और दुर्गा में भी दिन तक बुध दिखलाई पड़ता है । तात्पर्य यह है कि बुध की सौम्यगति 45 दिन, विमिश्रा 30 दिन, संक्षिप्ता 24 दिन, तीक्ष्णा या तीवा 10 दिन, घोरा 6 दिन, पापा 3 दिन और दुर्गा 9 दिन तक रहती है ॥३-४॥

सौम्याः विमिश्राः संक्षिप्ता बुधस्य गतयो हिताः ।
ज्ञेयाः पापाः समाख्याता विजेषेणोत्तरोत्तराः ॥५॥

बुध की सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं, शेष सभी गतियाँ पाप गति कहलाती हैं तथा विशेष रूप से उत्तर-उत्तर की गतियाँ पाप हैं ॥५॥

नक्षत्रं शकवाहेन जहाति समचारताम्^२ ।
एषोऽपि नियतश्चारो भयं कुर्यादितोऽन्यथा ॥६॥

यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शक वाहन के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का त्वाग न हो तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है ॥६॥

1. विपक्ष मूः । 2. समाचारन् मूः ।

नक्षत्राणि चरेत्पञ्च पुरस्तादुत्थितो बुधः ।
ततश्चास्तमितः षष्ठे सप्तमे दृश्यते परः ॥7॥

सम्भुव उदय होकर बुध पाँच नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, छठे नक्षत्र पर अस्त होता है और सातवें पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥7॥

उदितः पृष्ठतः सोम्यश्चत्वारि चरति ध्रुवम् ।
पञ्चमेऽस्तमितः षष्ठे दृश्यते पूर्वतः पुनः ॥8॥

पृष्ठतः उदित होकर बुध चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, पाँचवें नक्षत्र पर अस्त होता है और छठे पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥8॥

चत्वारि षट् तथाष्टौ च कुर्यादिस्तम्यनोदयौ ।
सोम्यायां तु विमिश्रायां संक्षिप्तायां यथाक्रमम् ॥9॥

सोम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गति में क्रमशः चार, छः और आठ नक्षत्रों पर अस्त और उदय को बुध प्राप्त होता है ॥9॥

नक्षत्रमस्य चिह्नानि गतिभिस्त्रिलक्ष्मभयंदा ।
पूर्वाभिः पूर्णस्तस्यानां तदा सम्पत्तिरुत्तमा ॥10॥

उन्हीं तीनों गतियों में जब बुध नक्षत्रों को पुनः प्रहण करता है तो पूर्ण रूप से धार्य की उत्तमि होती है और उत्तम सम्पत्ति रहती है ॥10॥

बुधो यदोत्तरे मार्गे सुवर्णः पूजितस्तदा ।
मध्यमे मध्यमो ज्येया जघन्यो दक्षिणे पथि ॥11॥

पूर्वोत्तरमार्गे में बुध अन्तर्वर्ण वर्ण वालों द्वारा पूजित होता है अर्थात् उत्तम फल-दायक होता है। गधा में मध्यम और दक्षिण मार्ग में जघन्य माना जाता है ॥11॥

बसु कुर्यादितिस्थूलो ताप्त्रः शस्त्रप्रकोपनः ।
अतश्चारुणवर्णश्च बुधः सर्वत्र पूजितः ॥12॥

अति रुद्र दुध धन वीं बृद्धि करता है, ताप्त्र का बुध शस्त्र कोप करता है, गुरुम और अरुण वर्ण का दुध भवेत् पूजित—उत्तम होता है ॥12॥

पृष्ठतः पुरलम्भाय पुरस्तादर्थवृद्धये ।
स्तिरधो रुद्रो बुधो ज्येयः सदा सर्वत्रगो बुधः ॥13॥

बुध वा पीछे रहना नगर-प्राप्ति के लिए, सामने रहना अथ-बृद्धि के लिए और रिनग्य और रुद्र दुध गदा वर्ण गर्जन जरने वाला होता है ॥13॥

गुरोः शुक्रस्य भौमस्य वीथीं विन्द्याद् यथा बुधः ।
दीप्तोऽतिरूक्षः सङ् ग्रामं तदा घोरं निवेदयेत् ॥14॥

जब बुध ग्रह गुरु, शुक्र और मंगल की वीथि को प्राप्त होता है तब अत्यन्त स्कं और दीप्त होता है, अतः घोर संग्राम होता है ॥14॥

भार्गवस्योत्तरां वीथीं चन्द्रशृङ्गं च दक्षिणम् ।
बुधो यदा निहन्यात्तानुभयोर्दक्षिणापथे ॥15॥
राजां चक्रधरणां च सेनानां शस्त्रजीविनाम् ।
पौर-जनपदानां च क्रिया काचिन्न सिद्ध्यति ॥16॥

यदि शुक्र उत्तरा-वीथि में हो और चन्द्रशृङ्ग दक्षिण की ओर हो तथा उनको दक्षिण मार्ग में बुध धातित करे तो राजा, चक्रधर—शासक, सेना, शस्त्र से आजीविका करने वाले, पुरवासी और नागरिकों की कोई भी क्रिया सिद्ध नहीं होती है ॥15-16॥

शुक्रस्य दक्षिणां वीथीं चन्द्रशृङ्गमधोत्तरम् ।
भिन्द्यातिलेत् तदा सौम्यस्ततो राज्याग्निं भयम् ॥17॥

शुक्र यदि दक्षिण वीथि में हो और चन्द्रशृङ्ग नीचे की ओर उत्तर तरफ हो तथा बुध इनका भेदन कर स्पर्श करे तो उस समय राज्य और अग्नि का भय होता है ॥17॥

यदा बुधोऽरुणः स्याददुर्भगो वा निरीक्ष्यते ।
तदा स स्थावरान् हन्ति ब्रह्म-क्षत्रं च पीडयेत् ॥18॥

जब बुध अरुण कान्ति वाला हो अथवा दुर्भग कुरुण दिखलाई पड़ता हो तो स्थावर—नागरिकों का विनाश करता है और ब्राह्मण और अतियों को पीड़ित करता है ॥18॥

चान्द्रस्य दक्षिणां वीथीं भिन्ना तिष्ठेद् यो ग्रहः ।
रुक्षः स करलसंकाशस्तदा चित्रविनाशनम् ॥19॥
चित्रमूर्त्तिश्च चित्रांश्च शिलिप्नः कुशलांस्तथा ।
तेषां च बन्धनं कुर्यात् भरणाय समीहते ॥20॥

जब कोई ग्रह बुध की दक्षिण वीथि वा भेदन करे तथा वह रुक्ष दिखलाई

1. श्वोत्तरां मु० । 2. -जान० मु० । 3. शुक्रल्तु मु० । 4. रोगाग्निं भयम् मु० ।
5. स्यादुच्चवगी वा मु० ।

पड़े तो शिल्पकला एवं चित्रकला का विनाश होता है। चित्र, मूर्ति, कुशल मूर्ति-कार और चित्रकारों का बन्धन और विनाश होता है। अर्थात् उक्त प्रकार की स्थिति में ललित कलाओं और ललितकलाओं के निष्पत्तिभों का विनाश एवं मरण होता है ॥19-20॥

भित्त्वा यदोत्तरां वीथीं दारुकाशोऽबलोकयेत् ।
सोमस्य चोत्तरं शृंगं लिखेद् भद्रपदां वधेत् ॥21॥
शिलिपनां दारुजीवीनां तदा षाण्मासिको¹ भयः ।
अकर्मसिद्धिः कलहो मित्रभेदः पराजयः ॥22॥

यदि बुध उत्तरा वीथि का भेदन कर काष्ठ-तृण का अबलोकन करे एवं चन्द्रमा के उत्तर शृंग का स्पर्श करे तथा पूर्वी भाद्रपद का वेध करे तो काष्ठजीवी शिलिपियों को छः महीने में भय होता है। अकार्य की सिद्धि होती है। कलह, मित्र-भेद और पराजय आदि फल घटित होते हैं ॥21-22॥

पीतो यदोत्तरां वीथीं गुरुं भित्त्वा प्रलीयते ।
तदा चतुष्पदं गर्भं कोशधान्यं बुधो वधेत् ॥23॥
वैश्यश्च² शिलिपनश्चापि गर्भं मासञ्च सारथिः ।
सो नयेद्भजते मासं भाद्रवाहुवचो यथा ॥24॥

पीत वर्ण का बुध उत्तरा वीथि में बृहस्पति का भेदन कर अस्त हो जाय तो चौपाये, गर्भ, खजाना, धान्य आदि का विनाश करता है। उक्त प्रकार की बुध की स्थिति से वैश्य और शिलिपियों को दारुण भय होता है। यह भय एक महीने तक रहता है, ऐसा भद्रवाहु स्वामी का वचन है ॥23-24॥

विभ्राजमानो रक्तो वा बुधो दृश्येत कञ्चन ।
नागराणां स्थिराणां च दीक्षितानां च तद्भयम् ॥25॥

यदि कभी शोभित होने वाला रक्त वर्ण का बुध दिखलाई पड़े तो नागरिक, स्थिर और दीक्षित—साधु-मुनियों को भय होता है ॥25॥

कृत्तिकास्वग्निदो रक्तो रोहिण्यां स क्षयंकरः ।
सीम्ये रोद्वे तथाऽदित्ये पुष्ये सर्वे बुधः स्मृतः ॥26॥
पितृदैवं तथाऽश्लेषां कलुशो यदि³ दृश्यते ।
पितृस्तान् विहंगांश्च सस्यं स भजते भयः ॥27॥

1. बघः मु० । 2. शिलिपनां चापि भयं भवनि दारुणम् मु० । 3. सेवते मु० ।

कृतिका में लाल वर्ण का बुध हो तो अग्नि प्रकोप करने वाला, रोहिणी में हो तो क्षय करने वाला होता है। और यदि मृगशिरा, आद्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मधा इन नक्षत्रों में कलुषित बुध हो तो पितर और विहंगमों तथा धान्य को लाभ होता है ॥26-27॥

बुधो विवर्णो मध्येन विशाखां यदि गच्छति ।

ब्रह्म-शुक्रविनाशात् तदा जेतो न शुण्यः ॥28॥

यदि विवर्ण बुध विशाखा के मध्य से गमन करे तो ब्राह्मण और अश्रियों का विनाश होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥28॥

मासोदितोऽनुराधायां यदा सौम्यो निषेवते ।

पशुधनचरान् धान्यं तदा पीडयते भृशम् ॥29॥

जब मासोदित बुध अनुराधा में रहता है तो पशुधन को अत्यधिक कट देता है और धान्य की हानि होती है ॥29॥

श्रवणे राज्यविभ्रंशो ब्राह्मे ब्राह्मणपीडनम् ।

धनिष्ठायां च वैदर्ण्यं धनं हन्ति धनेश्वरम् ॥30॥

विकृत वर्ण वाला बुध यदि श्रवण नक्षत्र में हो तो राज्य श्रष्ट होता है, अभिजित् में हो तो ब्राह्मणों को पीड़ा होती है और धनिष्ठा में हो तो धनिकों का और धन का विनाशक होता है ॥30॥

उत्तराणि च पूर्वाणि याम्यायां दिशि हिसति ।

धातुवादविदो हन्यात्तज्जांश्च परिपीडयेत् ॥31॥

यदि बुध दक्षिण मार्ग में तीनों उत्तरा—उत्तरा फालगुनी, उत्तरापादा और उत्तराभाद्रपद तथा तीनों पूर्वा—पूर्वा फालगुनी, पूर्वापादा और पूर्वाभाद्रपद का घात करे तो धातुवाद के ज्ञाताओं को पीड़ा होती है ॥31॥

ज्येष्ठायामनुपूर्वेण स्वातीं च यदि तिष्ठति ।

बुधस्य चरितं धोरं महादुःखदमुच्यते ॥32॥

यदि ज्येष्ठा और स्वाति में बुध रहे तो उसका यह धोर चरित अत्यन्त कष्ट देने वाला होता है ॥32॥

उत्तरे त्वन्योः सौम्यो यदा दृश्येत् पृष्ठतः ।

पितृदेवमनुप्राप्तस्तदा मासपुफग्हः ॥33॥

1. मूकात्थ्रवधिशंश्चेव मु० । 2. यदि मु० । 3. महाजनिक मु० ।

जब सौम्य बुध उत्तर में इन दोनों नक्षत्रों में—ज्येष्ठा और स्वाति में पृष्ठतः—शीले से दिखलाई पड़े तथा मधा को प्राप्त हो तो एक महीने के लिए उपग्रह अर्थात् कष्ट होता है ॥33॥

पुरस्तात् सह शुक्रेण यदि तिष्ठति सुप्रभः ।
बुधो 'मध्यगतो चापि तदा मेघा बहूदकाः ॥34॥

समुच्छ शुक्र के साथ अर्थ कार्य पाता बुध रहे तो उस समय अधिक जल की वर्षा होती है ॥34॥

दक्षिणेन तु पाश्वेण यदा गच्छति दुष्प्रभः ।
तदा सृजति लोकस्य महाशोकं महद्भयम् ॥35॥

यदि बुधी कान्ति वाला बुध दक्षिण की ओर से गमन करे तो लोक के लिए अत्यन्त भय और शोक उत्पन्न होता है ॥35॥

धनिष्ठायां जलं हन्ति वारुणे जलदं वधेत् ।
वर्णहीनो यदा याति बुधो दक्षिणतस्तदा ॥36॥

यदि वर्णहीन बुध दक्षिण की ओर से धनिष्ठा नक्षत्र में गमन करे तो जल का विनाश और पूर्वांश्चांश्च में गमन करे तो मेघ को रोकता है ॥36॥

तनुः समार्गो यदि सुप्रभोऽजितः समप्रसन्नो गतिमागतोऽन्तिम् ।
यदा न रुक्षो न च दूरगो बुधस्तदा प्रजानां सुखमूर्जितं सृजेत् ॥37॥

हरव, मार्ग, मुकान्ति वाला, समाकार, प्रसन्न गति को प्राप्त बुध जब न रुक्ष होता है और न दूर रहता है, उस समय ब्रजा को सुख-शान्ति देता है ॥37॥

इति नैर्गन्थो भद्रबाहुके निभितं बुधचारो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥18॥

बिवेचन बुध का उदय होने से अन्न का भाव महेंगा होता है । जब बुध उदित होता है उस समय अतिवृष्टि, अग्नि प्रकोप एवं तूफान आदि आते हैं । श्रद्धण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तरांशांश्च नक्षत्र को मर्दित करके बुध के विचरण करने से रोग, भय, अनावृष्टि होती है । अर्द्ध से लेकर मधा तक जिस नक्षत्र में बुध रहता है, उसमें ही शस्त्रपात, भूख, भय, रोग, अनावृष्टि और सन्ताप से जनता को पीड़ित करता है । हस्त से लेकर ज्येष्ठा तक छः नक्षत्रों में बुध विचरण करे तो गवेशी को कष्ट, सुमिक्ष, पूर्ण वर्षा, तेल और तिलहन का भाव महेंगा

1. विमुजते काले मू० । 2. शोकं महद्व्यर्थकरः मू० ।

होता है। बंगाल, आसाम, बिहार, बम्बई, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, में सुभिक्ष, काश्मीर में अन्न कष्ट, राजस्थान में दुष्काल, वर्षा का अभाव एवं राजनीतिक उथल-पुथल समस्त देश में होती है। जापान में चावल की कमी हो जाती है। इस और अमेरिका में खाद्यान्न की प्रचुरता रहने पर भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। उत्तर फाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद और भरणी नक्षत्र में बुध का उदय हो या बुध विचरण कर रहा हो तो प्राणियों को अनेक प्रकार की सुख-नुविधाओं की प्राप्ति के साथ, धान्य भाव सस्ता, उचित परिमाण में वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारियों को लाभ, चोरों का अधिक उग्रबद्ध एवं विदेशों के साथ सहानुभूति-पूर्ण सम्पर्क स्थापित होता है। पंजाब, दिल्ली और राजस्थान राज्यों की सरकारों में परिवर्तन भी उक्त बुध की स्थिति में होता है। धी, गुह, सुवर्ण, चाँदी तथा अन्य खनिज पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में बुध का विचरण करना देश के सभी वर्गों और हिस्सों के लिए सुभिक्षप्रद होता है। द्विजों को अनेक प्रकार के लाभ और सम्मान प्राप्त होते हैं। निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को भी अधिकार पिन्ते हैं तथा सारी जनता सुख-शान्ति के साथ निवास करती है। यदि बुध अग्निनी, शतभिषा, मूल और रेवती नक्षत्र का भेदन करे तो जल-जन्तु, जल से अजीविका करने वाले, बैंध-डॉक्टर एवं जल से उत्पन्न पदार्थों में नाना प्रकार के उग्रबद्ध होते हैं। पूर्वायाहा और पूर्वाभाद्रपद इन तीन नक्षत्रों में से किमी एक में शुक्र विचरण करे तो संसार को अन्न की कमी होती है। रोग, तेलकर, ग्रस्त्र, अग्नि आदि का भय और आतंक व्याप्त रहता है। विज्ञान नवे-नये पदार्थों की शोध और खोज करता है, जिससे अनेक प्रकार की नयी बातों पर प्रकाश पड़ता है। पूर्वायाहा नक्षत्र में बुध का उदय होने से अनेक राष्ट्रों में संतर्प्त होता है तथा वैग्ननस्य उत्तरन्त हो जाने से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति परिवर्तित हो जाती है। उक्त नक्षत्र में बुध का उदय और विचरण करना दोनों ही राजस्थान, मध्य-भारत और सौराष्ट्र के लिए हानिकारक है। इन प्रदेशों में बृहिं का अवरोध होता है। भाद्रपद और आश्विन मास में साधारण वर्षा होती है। कात्तिक मास के आरम्भ में गुजरात और बम्बई क्षेत्र में वर्षा अच्छी होती है। राजस्थान के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन भी उक्त ग्रह स्थिति के कारण होता है।

पराशर के मतानुसार बुध का फलादेश—पराशर ने बुध की सात प्रकार की गतियाँ बताई हैं—प्रातुत, विमिश, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगान्त, घोर और पाप। स्वाति, भरणी, रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्र में बुध स्थित हो तो इस गति को प्राप्ति पड़ती है। बुध की यह गति 40 दिन तक रहती है, इसमें आरोग्य, वृष्टि, धान्य की वृद्धि और मंगल होता है। प्रातुत गति भारत के पूर्व प्रदेशों के लिए उत्तम होती है। इस गति में गमन करने पर बुध बृद्धिजीवियों के लिए उत्तम होता है। कला-कौशल की भी वृद्धि होती है। देश में नवीन कल-कारखाने

स्थापित किये जाते हैं। अनाज अचला उत्तम होता है, वर्षा भी अच्छी होती है। कलिंग—उड़ीसा, बिदेह—मिश्रिला, काशी, बिदर्भ देश के निवासियों को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मरुभूमि—राजस्थान में सुभिक्ष रहता है, वर्षा भी अच्छी होती है। फसल उत्तम होने के साथ मवेशियों को कष्ट होता है। मथुरा और शूरसेन देशवासियों का आर्थिक विकास होता है। व्यापारी वर्ग को साधारण लाभ होता है। सोना और चाँदी के मट्टे में हानि उठानी पड़ती है। जूट का भाव बहुत ऊँचा चढ़ जाता है, जिससे व्यापारियों को हानि होती है।

मृगशिरा, आद्री, मधा और आश्लेषा नक्षत्र में बुध के विचरण करने को मिथा गति कहते हैं। यह गति 30 दिनों तक रहती है। इस गति का फल मध्यम है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में सामान्य वर्षा, उत्तम फसल, रस पदार्थों की कमी, धानुओं के मूल्य में बढ़ि एवं उच्च वर्ग के व्यक्तियों को सभी प्रकार से मुख प्राप्त होता है। बुध की मिथा गति पध्यप्रदेश एवं आसाम के निवासियों के लिए अधिक शुभ होती है। उक्त राज्यों में उनम बृहिं होती है और फसल भी अच्छी ही होती है। पुण्य, पुनर्वंश, पूर्वी फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में संक्षिप्त गति होती है। यह गति 22 दिनों तक रहती है। इस गति का फल भी मध्यम ही है परं विशेषता यह है कि इस गति के होने पर ची, तेज पदार्थों का भाव घर्षण होता है। देश के दक्षिण भाग के निवासियों को साधारण कष्ट होता है। दक्षिण में अन्न की फसल अच्छी होती है। उत्तर में गुड़, चीनी और अन्य मधुर पदार्थों की उत्पत्ति अच्छी होती है। कोयला, लोहा, अचक, ताँबा, सीसा भूमि से अधिक निकलता है। देश का आर्थिक विकास होता है। जिस दिन से बुध उक्त गति आरम्भ करता है, उसी दिन से लंकर जिस दिन यह गति समाप्त होती है, उस दिन तक देश में सुभिक्ष रहता है। देश के सभी राज्यों में अन्न और वस्त्र की कमी नहीं होती। आसाम में बाढ़ आ जाने से फसल नष्ट होती है। विहार के बे प्रदेश भी कष्ट उठाते हैं, जो नदियों के तटबर्ती हैं। उत्तर प्रदेश में सब प्रकार से शान्ति व्याप्त रहती है। पूर्वी भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद, ज्येष्ठा, अश्विनी और रेष्टी नक्षत्र में बुध की गति तीक्ष्ण कहलाती है। यह गति 18 दिन की होती है। इस गति के होने से वर्षा का अभाव, दुष्काल, महामारी, अग्निप्रवोप और शस्त्रप्रवोप होता है। मूल, पूर्वायाहा और उत्तरायाहा नक्षत्र में बुध के विचरण करने से बुध की योगान्तिका गति कहलाती है। यह गति 9 दिन तक रहती है। इस गति का फल अत्यन्त अनिष्टकार है। देश में रोग, शोक, झगड़े आदि के साथ वर्षा का भी अभाव रहता है। थ्रावण ग्रास में साधारण वर्षा होती है, इसके पश्चात् अन्य महीनों में वर्षा नहीं होती है। जब तक बुध इस गति में रहता है, तब तक अधिक लोगों की मृत्यु होती है। आकस्मिक दुर्घटनाएँ अधिक घटती हैं। थ्रावण, चित्रा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में शुक्र के रहने से उसकी

धीर गति कहलाती है। यह गति 15 दिन तक रहती है। जब बुध इस गति में गमन करता है, उस समय देश में अत्याचार, अनीति, चोरी आदि का व्यापक रूप से प्रचार होता है। उत्तर प्रदेश, झजाब, बंगाल और दिल्ली राज्य के लिए यह गति अत्यधिक अनिष्ट करने वाली है। बुध के इस गति में जित्तरण करने से आधिक अति, किसी बड़े नेता की मृत्यु, देश में अर्थ-संकट, अन्नाभाव आदि फल पृष्ठित होते हैं। हस्त, अनुराधा या ज्येष्ठा नक्षत्र में बुध के विचरण करने से पापा गति होती है। इस गति के दिनों की संख्या 11 है। इस गति में बुध के रहने से अनेक प्रकार की हानियाँ उठानी पड़ती हैं। देश में राजनीतिक उलट-फेर होते हैं। बिहार, आसाम और मध्यप्रदेश के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन होता है।

देवल के मत से फलादेश—देवल ने बुध की चार गतियाँ बतलाई हैं—
कृज्वी, वका, अतिवका और विकला। ये गतियाँ क्रमशः 30, 24, 12 और 6 दिन तक रहती हैं। कृज्वी गति प्रजा के लिए हितकारी, वका में शस्त्रभय, अतिवका में धन का नाश, और विकला में भय तथा रोग होते हैं। पीप, आपाह, श्रावण, वैशाख और माघ में बुध दिव्यलाई दे तो संसार को भय, अनेक प्रकार के उत्तात एवं धन-जन की हानि होती है। यदि उत्तात मासों में बुध अस्त हो तो शुभ होता है। आश्विन या कात्तिक मास में बुध दिव्यलाई दे तो शस्त्र, रोग, अग्नि, जल और क्षुधा का भय होता है। पश्चिम दिशा में बुध का उदय अधिक शुभ फल करता है तथा पूरे देश को शुभकारक होता है। स्वर्ण, हरित या सस्यक मणि के समान रंग वाला बुध निर्मल और स्वच्छ होकर उदित होता है, तो सभी राज्यों और देशों के लिए मंगल करने वाला होता है।

एकोनविंशतितमोऽष्ट्यायः

चारं प्रवासं वर्णं च दीप्ति॑ काष्ठांगति॒ फलम् ।
वकानुवक्तनामानि॑ लोहितस्थ॒ निवोधत ॥१॥

मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक और अनुवक आदि का विवेचन किया जाता है ॥१॥

चारेण विशर्ति मासानष्टौ वक्रेण लोहितः ।
चतुरस्तु प्रवासेन समाचारेण गच्छति ॥२॥

मंगल का चार बीम महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होता है ॥२॥

अनूजुः परुषः इथामो ज्वलितो धूमवान् शिखी ।
विवर्णो वामगो व्यस्तः कुद्धो ज्ञेयस्तदाऽशुभः ॥३॥

वक्र, कठोर, इथाम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, कुद्ध और वायों ओर ममन करने वाला मंगल (सदा) अशुभ होता है ॥३॥

यदाऽष्टौ सप्त मासान् वा दीप्तः पुष्टः प्रजापतिः ।
तदा सूजति कल्याणं शस्त्रमूच्छी तु निर्दिशेत् ॥४॥

यदि प्रजापति—मंगल आठ या सात महीने तक दीप्त और पुष्ट होकर निवास करे तो कल्याण होता है तथा शस्त्रमोह उत्पन्न होता है ॥४॥

मन्ददीप्तश्च दृश्येत् यदा भीमो चलेत्सदा ।
तदा नानाविधं दुःखं प्रजानामहितं सृजेत् ॥५॥

जब मंगल मन्द और दीप्त दिखलाई पड़े, चंचल हो, उस समय प्रजा के लिए नाना प्रकार के दुःख और अहित करता है ॥५॥

ताम्रो दक्षिणकाष्ठस्थः प्रशस्तो दस्युनाशनः ।
ताम्रो यदोत्तरे काष्ठे तस्य दस्योस्तदा हितम् ॥६॥

यदि ताम्र वर्ण का मंगल दक्षिण दिशा में हो तो शुभ होता है, और चोरों का नाश करनेवाला होता है। यदि ताम्र वर्ण का मंगल उत्तर दिशा में हो तो चोरों का हित करनेवाले होता है ॥६॥

रोहिणीं स्यात् परिक्रम्य लोहितो दक्षिणं व्रजेत् ।
सुरासुराणां जानातां सर्वेषामभयं वदेत् ॥७॥

यदि रोहिणी की परिक्रमा करके मंगल दक्षिण दिशा की ओर चला जाय तो देव-दानव, मनुष्य सभी को अभय भी प्राप्ति होती है ॥७॥

क्षत्रियाणां विषादश्च दस्यूनां शस्त्रविभ्रमः ।
गाढो गोष्ठ-समुद्राश्च विनश्यन्ति विचेत्सः ॥८॥

यादं रोहिणी नक्षत्रं परं मंगलं कीं कुचेष्टा दिखलाई पड़े तो गाय, गोशाला और सगुद्र का विनाश होता है ॥८॥

स्पूशेलिलखेत् प्रमद्देद् वा रोहिणीं यदि लोहितः ।
तिष्ठते दक्षिणो वाऽपि तदा शोक-भयंकरः ॥९॥

यदि मंगल रोहिणी नक्षत्रं वा स्पर्शं करे, भिदन करे और प्रमदन करे अथवा दक्षिण में निवास करे तो भयंकर शोक की प्राप्ति होती है ॥९॥

सर्वद्वाराणि दृष्ट्वाऽसौ विलम्बं यदि गच्छति ।
सर्वलोकहितो ज्ञेयो दक्षिणोऽसूर् लोहितः ॥१०॥

यदि दक्षिण मंगल सभी हारीं वो देखता हुआ विलम्ब से गमन करे तो समस्त लोक वा हितकारी होता है ॥१०॥

पञ्च वक्षाणि भौमस्थं तानि भेदैन द्वादश ।
उष्णं शोषमुखं व्याजं लोहितं लोहमुद्गरम् ॥११॥

मंगल के पाँच वक्ष होते हैं और नेद की अंगका बारह वक्ष कहे गये हैं । उष्ण, शोषमुख, व्याज, लोहित और लोहमुद्गर--ये पाँच प्रधान वक्ष हैं ॥११॥

उदयात् सप्तमे कृक्षे नवमे वाऽष्टमेऽपि वा ।
यदा भौमो निवर्त्तते तदुष्णं वक्षमुच्चरते ॥१२॥

जब मंगल का उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पार हुआ हो और वह लौट कर गमन करने लगे तो उस उष्ण वक्ष कहते हैं ॥१२॥

सुकृष्टिः प्रबला ज्येष्ठा विष-कीटाग्निमूर्च्छन्तम् ।
ज्वरो जनक्षयो वाऽपि तज्जातानां च विनाशनम् ॥१३॥

इस उष्ण वक्ष में वर्षा जल्दी होती है । विष, कीट और अग्नि की वृद्धि होती है । ज्वर फैलता है । जनक्षय भी होता है तथा जनता को कष्ट होता है ॥१३॥

एकादशे यदा भौमो द्वादशे दशमेऽपि वा ।
निवर्त्तते तदा वक्षं तच्छावस्मुखमुच्यते ॥१४॥

अपोऽन्तरिक्षात् पतितं दूषयति तदा रसान् ।
ते सूजन्ति रसान् दुष्टान् नानाव्याधींस्तु भूतजान् ॥१५॥

शुष्यन्ति वै तडागानि सरांसि सरितस्तथा ।
बीजं न रोहिते तत्र जलमध्येऽपि वापितम् ॥16॥

जब मंगल दशवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्र से लौटता है तो यह शोष-मुख वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र में आकाश से जल की वर्षा होती है, रस दूषित हो जाते हैं तथा रसों के दूषित होने से प्राणियों को नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। जल-वृष्टि भी उक्त प्रकार के वक्र में उत्तम नहीं होती है, जिससे ताजाब सूख जाते हैं तथा जल में भी बोने पर बीज नहीं उगते हैं; अर्थात् फसल की कमी रहती है ॥14-16॥

वयोदशेऽपि नक्षत्रे यदि वाऽपि चतुर्दशे ।
निवर्त्तेत यदा भौमस्तद् वक्रं व्यालमुच्यते ॥17॥

पतंगः सविषाः कीटाः सर्पा जायन्ति तामसाः ।
फलं न बध्यते पुष्पे बीजमुप्तं न रोहति ॥18॥

यदि मंगल चौदशवें अथवा तेरहवें नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्याल-वक्र कहलाता है। पतंग—टीड़ी, विषेले जन्तु, कीट, सर्प आदि तामस प्रकृति के जन्तु उत्पन्न होते हैं, पुष्प में फल नहीं लगता और थोका गया बीज अंकुरित नहीं होता है ॥17-18॥

यदा पञ्चदशे ऋक्षे षोडशे वा निवर्तते ।
लोहितो लोहितं वक्रं कुरुते गुणं तदा ॥19॥
देश-स्नेहाभ्यसां लोपो राज्यभेदश्च जायते ।
संग्रामाश्चात्र वर्तन्ते मांस-शोणित-कर्दमाः ॥20॥

जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र से लौटता है, तब यह लोहित वक्र कहा जाता है। यह गुण उत्पन्न करने वाला है। इस वक्र के फलस्वरूप देश, संह, जल वा लोप हो जाता है, राज्य में मतभेद उत्पन्न हो जाता है तथा युद्ध होते हैं, जिससे रक्त और मांस की खीचड़ हो जाती है ॥19-20॥

यदा सप्तदशे ऋक्षे पुनरष्टादशेऽपि वा ।
प्रजापतिं निवर्त्तेत तद् वक्रं लोहमुद्गरम् ॥21॥
निर्दया निरनुक्रोशा लोहमुद्गरसन्तिभाः ।
प्रणयन्ति नृपा दण्डं क्षीयन्ते येन तत्प्रजाः ॥22॥

जब मंगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र से लौटता है तो लोहमुद्गर वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र में जीवधारियों जी प्रवृत्ति निर्दय और निरकृण

हो जाती है तथा राजा लोग प्रजा को दण्डित करते हैं, जिसमें प्रजा का क्षय होता है ॥२१-२२॥

**धर्मर्थिकामा हीयन्ते विलीयन्ते च दस्यवः ।
तोय-धान्याभि शुष्यन्ति रोगमारी बलीयस्ते ॥२३॥**

उक्त प्रकार के वक्र में धर्म, अर्थ और काम नष्ट हो जाते हैं और चोरों का लोप हो जाता है। जल और धान्य सूख जाते हैं तथा रोग और महामारी बढ़ती है ॥२३॥

**वक्रं कृत्वा यदा भौमो विलम्बेन गति प्रति ।
वक्रानुवक्रयोर्घोरं मरणाय समीहते ॥२४॥**

यदि मंगल वक्र गति को ग्राप्त कर विलम्बित गति हो तो यह वक्रानुवक्र कहलाता है। वक्र और अनुवक्र का फल मरणप्रद होता है ॥२४॥

**कृत्तिकादीनि सप्तेह वक्रेणांगाकश्चरेत् ।
हृत्वा वा दक्षिणस्तिष्ठेत् तत्र वक्ष्याभि यत् फलम् ॥२५॥**

यदि मंगल वक्र गति द्वारा कृत्तिकादि सात नक्षत्रों पर गमन करे अथवा धात कर दक्षिण वी और स्थित रहे तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥२५॥

**साल्वांश्च सारदण्डांश्च विप्रान् क्षत्रांश्च पीडयेत् ।
मेखलांश्चानयोर्घोरं मरणाय समीहते ॥२६॥**

उत्त प्रकार यम मंगल साल्वदेश, सारदण्ड, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णों को निष्कर्षन्देह धोर कण्ठ देता है ॥२६॥

**मघादीनि च सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
चरेद् विवर्णस्तिष्ठेद् वा तदा विन्द्यान्महद्भयम् ॥२७॥**

यदि मध्यादि सात नक्षत्रों में वक्र मंगल विचरण करे अथवा विशुद्ध वर्ण होकर निवारण करे तो महान् भय होता है ॥२७॥

**सौराष्ट्र-सिंधु-सौवीरान् प्रासीलान् द्राविडांगनाम् ।
याङ्गालान् सौरसेनान् वा बाल्मीकीन् नकुलान् वधेत् ॥२८॥**
**मेखलान् वाऽन्यवन्त्यांश्च पार्वतांश्च नूपैः सह ।
जिधासति तदा भौमो ब्रह्म-क्षत्रं विरोधयेत् ॥२९॥**

उक्त प्रकार के मंगल के फलस्वरूप सीराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर, द्राविड़, पांचाल, गौरसेन, बाह्लीक, नकुल, मेघला, आदन्ति, पहाड़ीप्रदेशवासियों और राजाओं का विनाश होता है और ब्रह्मण-अक्षियों का विरोध होता है ॥28-29॥

मैत्रादीनि च सप्तैव यदा सेवेत लोहितः ।
वक्रेण वापगत्या वा महतामनयं बदेत् ॥30॥

राजानस्व विरुद्ध्यन्ते चातुर्दिश्यो विलुप्यते ।
कुरु-पाञ्चालदेशानां मूर्च्छिते तद् भयानि च ॥31॥

यदि मंगल अनुराधा आदि सात नक्षत्रों का भोग करे अथवा वक्रगति से पापगति से विचरण करे तो अत्यन्त अनीति होती है । राजाओं में युद्ध होता है, चारों दर्ण लुप्त हो जाते हैं; कुरु-पाञ्चाल देशों में भय और मूर्च्छा रहती है ॥30-31॥

धनिष्ठादीनि सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
सेवेत उजुगत्या वा तदाऽपि स जुगुप्तिः ॥32॥
धनिनो जलविप्रांश्च तथा चैव ह्यान् गजान् ।
उदीच्यान् नाविकांश्चापि पीडयेत्त्वोहितस्तदा ॥33॥

यदि मंगल वक्रगति से धनिष्ठा आदि सात नक्षत्रों का भोग करे अथवा अहंगति से गमन करे तो वह निनित होता है । धनिक, जलजन्तु, घोड़ा, हाथी, उत्तर के निवासी और नाविकों को पीड़ा देता है ॥32-33॥

भौमो वक्रेण युद्धे वासवीयो चरते हि तः ।
तेषां भयं विजानीयद् येषां ते प्रतिपुद्गलाः ॥34॥

जब मंगल वक्र होकर युद्ध में वासवीय में गमन करता है तो जनता के लिए भय होता है ॥34॥

कूरः कुदृश्च ब्रह्मणो यदि तिष्ठेद् ग्रहैः सह ।
परचक्रायम् विन्द्यात् तासु नक्षत्रवीथिषु ॥35॥
धान्यं तथा न विकेयं संश्रयेच्च बलीयसम् ।
चिनुयात्तुष्ठान्यानि दुर्गाणि च समाश्रयेत् ॥36॥

कूर, कुदृ और ब्रह्मणी होकर मंगल यदि अन्य ग्रहों के साथ उन नक्षत्र

वीथियों में रहे तो परशामन का आगमन होता है। इस प्रकार की स्थिति में धान्य-अनाज नहीं बेचना चाहिए, बलबान् का आश्रय लेना तथा धान्य और भूसा का संग्रह करके दुर्ग का आश्रय लेना चाहिए ॥३५-३६॥

उत्तराफालगुर्वो भौमो यदा लिखति वामतः ।

यदि वा दक्षिणं गच्छेत् । धान्यस्याध्यो महा भवेत् ॥३७॥

जब मंगल उत्तरा फालगुर्वी नक्षत्र को वाम भाग से स्पर्श करता है अथवा दक्षिण की ओर गमन करता है तो धान्य-—अनाज कहुत महँगा होता है ॥३७॥

यदाऽनुराधां प्रविशेभद्र्ये न च लिखेत्तथा ।

सध्यम् तं विजानीयात् तदा भौमविपर्यये ॥३८॥

यदि मंगल अनुराधा में मध्य भे प्रवेश करे, स्पर्श न करे तो यद्यम होता है और विपर्यय प्रवेश करने पर विरीत फल होता है ॥३८॥

स्थूलः सुवर्णो द्युतिमांश्च पीतो रवतः । सुमार्गं रिपुनाशनतय ।

२भौमः प्रसन्नः सुमनः प्रशस्तो भवेत् प्रजानां सुखदस्तदानीम् ॥३९॥

स्थूल, सुवर्ण, कान्तिमान्, सुकर, पीत, रवत, सुमार्गमार्गी, काल्त, प्रसन्न, समग्रामी, विवर्णी मंगल प्रजा की गुण-शान्ति और धन-धान्य देने वाला है ॥३९॥

**इति निर्गन्धभद्रबाहुकं निमित्ते अंगारकचारो नाम
एकोनविशत्तिमोऽध्यायः ॥ १९॥**

विवेचन -भौम का द्वादश राशियों में स्थित होने का फल— ये राशि में मंगल स्थित हो तो सभी प्रकार के अनाज महँगे होते हैं। वार्षीय अल्प होती है तथा धान्य की उत्ताति भी अल्प होती है। पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा साधारणतया अच्छी होती है; उत्तरीय प्रदेशों में खण्डवृष्टि, परिचमीय प्रदेशों में वर्षा का अभाव या अत्यल्प तथा दक्षिणीय प्रदेशों में साधारण वृष्टि होती है। मेष राशि ना मंगल जनता में भय और आतंक भी उत्पन्न करता है। वृष राशि में मंगल के स्थित होने से साधारण वृष्टि देश के सभी भागों में होती है। नना, चीरी और गुड़ का भाव कुछ महँगा होता है। महानारी के कारण मनुष्यों की मृत्यु होती है। वंगाल के लिए मंगल नी उपति स्थिति अधिक भयावह होती है। मंगल की उक्त स्थिति वसी, श्याम, चीन और आपान के लिए राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल करते

१ गुमायंश्च सुर्यो प्रजानाम् यु० २ का० । प्रसन्न गग्नां विनाशकं भौम प्रशस्ता० मुख्यः प्रजानाम् यु० ।

वाली होती है। नेताओं में महेश, शूद्र और जलह रहने से जनसाधारण को भी कष्ट होता है। बांग्लादेश के लिए वृष का मंगल अनिष्टप्रद होता है। छात्रान्त का अभाव होने के साथ भयंकर वीमारियाँ भी उत्पन्न होती हैं। मिथुन राशि में मंगल के स्थित होने से अच्छी वर्षा होती है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में सुभिक्ष, शान्ति, धर्मचिरण, न्याय, नीति और सुख्खाई का प्रसार होता है। अहिंसा और सत्य का व्यवहार बढ़ने से देश में शान्ति बढ़ती है। सभी प्रकार के अनाज संग्रह रहते हैं। गोमा, चौदी, लोहा, ताँबा, काँसा, पीतल आदि खनिज धातुओं के व्यापार में साधारण लाभ होता है। पंजाब में फराल बहुत अच्छी उपजती है। फल और तरकारियाँ भी अच्छी उपजती हैं। कई राशि में मंगल हो तो भी सुभिक्ष और उत्तम वर्षा होती है। उत्तर प्रदेश में काशी, कल्नीज, मथुरा में उत्तम फराल नहीं होती है, अवशेष स्थानों में उत्तम फसल उपजती है। मिह राशि में मंगल के रहने से सभी प्रकार के धान्य महंगे होते हैं। वर्षा भी अच्छी नहीं होती। राजस्थान, गुजरात, गुजरात में साधारण वर्षा होती है। भाद्रपद मास में नर्ता का योग वत्यल्प रक्षिता है। आश्विन मास वर्षा और फराल के लिए उत्तम गति जाते हैं। सिंह राशि के मंगल में कूर कार्य अधिक होते हैं, युड़ और संवर्ध अधिक होते हैं। राजनीति में परिवर्तन होता है। साधारण जनता को भी वाट होता है। आजीविका राधनों में कली आ जाती है। कल्या राशि के मंगल में बुण्डबूटि, धान्य रस्त, शोझी वर्षा, देश में उपद्रव, कूर कार्यों में प्रवृत्ति, अनीति और अत्याचार का व्यापक रूप से प्रचार होता है। बंगाल और पंजाब में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। महामारी का प्रकोप जाती है। बंगाल में दीता है। उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश के लिए कन्या राशि का मंगल अच्छा होता है। नुला राशि के मंगल में किसी बड़े नेता या व्यक्ति की मृत्यु, अस्त-शस्त्र की वृद्धि, सांग में घर, चोरों का विशेष उपद्रव, अराजकता, धान्य का भाव महंगा, रसों का भाव सस्ता और सोना-चौदी का भाव कुछ महंगा होता है। व्यापारियों को हानि उठानी पड़ती है। वृश्चिक राशि के मंगल में साधारण वर्षा, मध्यम फराल, देश का आर्थिक विकास, ग्रामों में अनेक प्रकार की वीमारियाँ का प्राप्त, पहाड़ी प्रदेशों में दुष्काल, नदी के तट-बर्ती प्रदेशों में सुभिक्ष, नेताओं में संघटन की भावना, विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध का विकास, राजनीति में उथल-पुथल एवं पूर्वीय देशों में महामारी फैलती है। धनु राशि के मंगल में सप्तमानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, अनाज का भाव सस्ता, दुष्क-वी आदि पदार्थों की कमी, चीनी-गुड़ आदि मिष्ट पदार्थों की बहुतता एवं दक्षिण ये प्रदेशों में उत्पात होता है। मकर राशि के मंगल में धान्य भीड़ा, फराल में अनेक रोपों की उत्तीर्णि, पवित्री को वाट, चार वर्षों अभाव, व्यापारियों को अल्प लाभ, पश्चिम के व्यापारियों को हानि; गंडे, गुड़ और भशाले के मूल्य

में दुगुनी वृद्धि एवं उत्तर भारत के निवासियों को आर्थिक संकट का रामना करना पड़ता है। कुम्भ के मंगल में खण्डवृष्टि, मध्यम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यल्प, देश का आर्थिक विवास, धार्मिक ब्रातावरण की वृद्धि, जनता में सन्तोष और शान्ति रहती है। मीन राशि के मंगल में एक महीने तक समस्त भारत में सुख-शान्ति रहती है। जाग्नान के लिए मीन राशि का मंगल अनिष्टप्रद है, वहाँ गन्त्रिमण्डल में परिवर्तन, नागरिकों में सन्तोष, खाद्यान्नों की कमी एवं अर्थ-संकट भी उपस्थित होता है। जर्मन के लिए मीन राशि का मंगल शुभ होता है। रूस और अमेरिका में परस्पर महानुभाव इसी मंगल में होता है। मीन राशि का मंगल धान्यों की उत्पत्ति के लिए उत्तम होता है। खनिज पदार्थों की कमी इसी मंगल में होती है। कोयला का भाव ऊँचा उठ जाता है। परथर, सीमिट, चूता आदि के मूल्य में भी वृद्धि होती है। मीन राशि का मंगल जनता के स्वास्थ्य के लिए उत्तम महीने होता।

नक्षत्रों के अनुसार मंगल का फूल... अधिवनी नक्षत्र में मंगल हो तो क्षति, पीड़ा, तृण और अनाज का भाव तेज होता है। समस्त भारत में एक महीने के लिए अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। चौपायों में रोग उत्पन्न होता है। देश में हल्कल होती रहती है। सभी लोगों को किसी-न-किसी प्रकार का कष्ट होता है। गरणी नक्षत्र में मंगल हो तो ब्राह्मणों को पीड़ा, गायों में अनेक प्रकार के कष्ट, नगरों में महामारी का प्रकोप, अन्न वा भाव तेज और रस पदार्थों का भाव सस्ता होता है। पवेणी के मूल्य में वृद्धि हो जाती है तथा चारे के अभाव में भवेणी को कष्ट भी होता है। कुर्तिना नक्षत्र में मंगल के होने से तपास्त्रियों को पीड़ा, देश में उद्ग्रव, अराजकता, जीर्णियों की वृद्धि, अनेतिकता एवं अपाताचार का प्रसार होता है। रोहिणी नक्षत्र में मंगल के रहने से वृक्ष और पवेणी यों कष्ट, कपास और सूत के व्यापार में नाम, धान्य का भाव सस्ता होता है। मृगशिर नक्षत्र में मंगल हो तो कपास वा नाश, जोग वस्त्रुओं वी अच्छी उत्पन्नि होती है। इस नक्षत्र पर मंगल के रहने से देश का आर्थिक विकास होता है। उन्नति के लिए किये गये सभी प्रथास सफल होते हैं। तिळ, तिलहन की कमी रहती है तथा भैंसों के लिए यह मंगल विनाशक है। आद्री नक्षत्र में मंगल के रहने से जन की वर्षा, मुमिश और धान्य का भाव गमता होता है। पुनर्वग्न नक्षत्र में मंगल का रहना देश के लिए मध्यम कलदायक है। दुष्ठिजीवियों के लिए यह मंगल उत्तम होता है। शारीरिक अन करनेवालों को मध्यम रहता है। गेना में प्रविष्ट हुग, व्यवितयों के लिए अनिष्टकर होता है। पुष्य नक्षत्र में हित मंगल से चोरभय, अस्त्रभय, अविनभय, राज्य की शक्ति वा द्वाय, रोगों का विकास, धान्य का अभाव, मधुर पदार्थों की कमी एवं चोर-गुण्डों का उत्पात अधिक होने लगता है। आज्ञेया नक्षत्र में मंगल के स्थित रहने से शस्त्रधात, धान्य वा नाश, वर्षा का अभाव, विषेश जन्मुओं का

प्रकोप, नाना प्रकार की व्याधियों का विकास एवं हर तरह से जनता को कष्ट होता है। मध्य में मंगल के रहने से तिल, उड़द, मूँग का विनाश, मवेशी को कष्ट, जनता में असन्तोष, रोग की वृद्धि, वर्षा की कमी, मौटे अनाजों की अच्छी उत्पत्ति तथा देश के पूर्वीय प्रदेशों में सुभिक्ष होता है। पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रों में मंगल के रहने से खण्डवृद्धि, प्रजा को पीड़ा, तेल, धी के मूल्यों में वृद्धि, थोड़ा जल एवं मवेशी के लिए कष्टप्रद होता है। हस्त नक्षत्र में तूष्णाभाव होने से चारे की कमी बराबर यनी रह जाती है, जिससे मवेशी को कष्ट होता है। चित्रा में मंगल हो तो रोग और पीड़ा, गेहूँ का भाव तेज; चना, जी और ज्वार का भाव कुछ सस्ता होता है। धर्मात्मा व्यक्तियों को सम्मान और शक्ति की प्राप्ति होती है। विष्व में नाना प्रकार के संकट बढ़ते हैं। स्वाति नक्षत्र में मंगल के रहने से अनावृद्धि, विजाया में कपास और गेहूँ की उत्पत्ति कम तथा इन वस्तुओं का भाव महेंगा होता है। अनुराधा में सुभिक्ष और पशुओं को पीड़ा, ज्येष्ठा में मंगल हो तो थोड़ा जल और रोगों की वृद्धि; मूल नक्षत्र में मंगल हो तो द्राघ्नि और धनियों को पीड़ा, तृण और धान्य का भाव तेज, पूर्वपिंडा या उत्तराधादा में मंगल हो तो अच्छी वर्षा, पृथ्वी धन-धान्य से परिपूर्ण, दूध की वृद्धि, मधुर पदार्थों की उत्पत्ति; धयण गे धान्य की माधारण उत्पत्ति, जल की वर्षा, उड़द, मूँग आदि दाल वाले व्रताजों की कमी तथा इनके भाव में तेजी; धनिष्ठा में मंगल के होने से देश की धूब गमृद्धि, भभी पदार्थों का भाव सस्ता, देश का आर्थिक विकास, धम-जन की वृद्धि, पूर्व और दक्षिण के सभी राज्यों में सुभिक्ष, उत्तर के राज्यों में एक सहीने के लिए अर्थसंग्रह, दक्षिण में सुख-शान्ति, कला-वीणल का विकास, मवेशियों की वृद्धि और सभी प्रकार से जनता को सुख; शतभिपा में, मंगल के होने से वीट, पतंग, टीटी, मूँग ह आदि का अधिक प्रकोप, धान्य की अच्छी उत्पत्ति; पूर्वाभाद्रपद में मंगल के होने से तिल, वरच, गुपारी और नारियल के भाव तेज होते हैं। दक्षिण भारत में अनाज का भाव महेंगा होता है। उत्तराभाद्रपद में मंगल के होने में सुभिक्ष, वर्षा की कमी और नाना प्रकार के देशवासियों को कष्ट एवं रेवती नक्षत्र में गंबज के होने से धान्य की अच्छी उत्पत्ति, सुख, सुभिक्ष, यथेष्ट वर्षा, ऊन और कपास की अच्छी उपज होती है। रेवती नक्षत्र का गंगल कार्यमीर, हिमाचल एवं अन्य पहाड़ी प्रदेशों के निवासियों के लिए उत्तम होता है।

मंगल का किसी भी राशि पर वक्ती होना तथा जनि और मंगल का एक ही राशि पर वक्ती होना अत्यन्त अशुभनारक होता है। जिस राशि पर उक्त ग्रह वक्ती होते हैं उस राशि वाले पदार्थों का भाव महेंगा होता है तथा उन वस्तुओं की कमी भी हो जाती है।

विश्वतितमोऽध्यायः

राहुचारं प्रवक्ष्यामि क्षेमाय च सुखाय च ।

द्वादशाङ्गविद्भिः प्रोक्तं नियन्त्यरत्स्ववेदिभिः ॥ १ ॥

द्वादशांग ज्योतिर्लक्षण के अनुसार इसका अर्थ है कि द्वादशांग के बेता निर्यत्य मुनियों के द्वारा प्रतिपादित राहुचार को कल्याण और सुख के लिए निरुपण करता है ॥१॥

इति रुद्रश्च पीतश्च विवरणः कृष्ण एव च।

ब्रह्मण-कात्र-वैश्यानां विजाति-शूद्रयोमंतः ॥१२॥

राहु का श्वेत, रखत, पीत और गुण्डा वर्ण शमशः आहूण, अविष, वैष्य और शुद्रों के लिए गुभाशुभ निशितक भासे गये हैं ॥३॥

षष्ठासान् प्रकृतिज्ञेया प्रहणं वाचिकं भयम् ।

वृथोद्धानां मासानां पुरोधं समादिशेत् ॥३॥

ज्ञातदेशानां मासानां विन्द्याद् वाहनजं भयम् ।

अद् पञ्चदशो मासे बालाना भयमादिशेत् ॥४॥

ष्ट्रोदशानां त सासानां महामस्त्रिभयं वदेत् ।

अहो दशानां मासानां विन्द्याद् राजस्ततो भयम् ॥५॥

प्रक्षेपविशेषकं पूर्वविशेषं कृत्वा नूपं वधेत् ।

अतः परं च यत् सर्वं विन्द्यात् तत्र कलि भुवि ॥१६॥

राहु की प्रकृति छः महीने तक, ग्रहण एक वर्षा तक भय उत्पन्न करता है। विकृत ग्रहण से तिरह महीने तक नगर का अवरोध होता है, चौथे महीने तक बाहर का भय और फट्टह महीने तक सिवयों को भय होता है। सोलह महीने तक महामन्त्रियों को भय, अठारह महीने तक राजाओं को भय होता है। उम्मीस महीने तक राजाओं के वध की संभावना रहती है। इससे अधिक गणया वीस महीने तक राजाओं के वध की संभावना रहती है। इससे अधिक गणया तक फल प्राप्त हो तो पृथ्वी पर कलियुग का ही प्रभाव जानना चाहिए। १३-६॥

पञ्चसंवत्सर घोरं चन्द्रस्य प्रहणं परम् ।

यिग्रहं त् परं विन्द्यात् सूर्यद्वादशवार्षिकम् ॥7॥

चन्द्रग्रहण के पश्चात् पौच वर्ष संकट के और यूर्ध्वग्रहण के बाद बारह वर्ष

संकट के होते हैं ॥७॥

यदा प्रतिपदि चन्द्रः प्रकृत्या विकृतो भवेत् ।

अथ भिन्नो विद्यो वा तदा ज्ञेयो ग्रहामः ॥४॥
Source: <https://dsc.dca/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

जब प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा प्रकृति से विकृत हो और भिन्न वर्ण का हो तो ग्रहागम जानना चाहिए ॥८॥

लिखेद् रश्मिभिर्भूयो वा यदाऽच्छाद्येत् भास्करः ।

पूर्वकाले च सन्ध्यायां ज्ञेयो राहोस्तदाऽगमः ॥९॥

यदि सूर्य किरणों के द्वारा स्पर्श करे अथवा पूर्वकाल की सन्ध्या में सूर्य के द्वारा आच्छादन हो तो राहु का आगम समझना चाहिए ॥९॥

पशु-व्याल-पिण्डाचानां सर्वेतोऽपरदक्षिणम् ।

तुल्यान्यभाणि वातोल्के यदा राहोस्तदाऽगमः ॥१०॥

राहु के आगमन होने पर पशु, सर्प, पिण्डाच आदि दक्षिण से चारों ओर दिखलाई पड़ते हैं तथा रामान मेघ, बायु और उल्कापात भी होता है ॥१०॥

सन्ध्यायां तु यदा शीतं अपरेसासनं ततः ।

सूर्यः पाण्डुश्चला भूमिस्तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥११॥

जब सन्ध्या में शीत हो, अन्य समय में उषणता हो, सूर्य पाण्डुवर्ण हो, भूमि चल हो तो ग्रहागम समझना चाहिए ॥११॥

सरांसि सरितो वृक्षा वल्ल्यो गुल्म-लतावनम् ।

^१सीम्यभाँश्चवस्ते वृक्षा राहोऽप्यस्तदाऽगमः ॥१२॥

तालाव, नदी, वृक्ष, लता, वन, सीम्य कान्तिवाले हों और वृक्ष चंचल हों तो राहु का आगमन समझना चाहिए ॥१२॥

छादयेच्चन्द्र-सूर्यो च यदा मेघा सिताम्बरा^२ ।

सन्ध्यायां च तदा ज्ञेयं राहोरागमनं ध्रुवम् ॥१३॥

जब सन्ध्याकाल में आकाश में मेघ चन्द्र और सूर्य को आच्छादित कर दें, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥१३॥

एतान्येव तु लिङ्गानि भयं कुर्यात् पर्वणि ।

वर्षासु वर्षदानि स्युर्भद्रबाहुवचो यथा ॥१४॥

उक्त चिह्न अपर्व—पूर्णिमा और अमावास्या से भिन्न ताल में भय उत्पन्न करने हैं। वर्षा में कहतु कर्षा करनेवाले होते हैं, ऐसा भद्रबाहु स्वापी का वचन है ॥१४॥

1. सीताम्बरावन्वते गु० । 2. सिताम्बरे शु० ।

शुक्लपक्षे द्वितीयायां सोमशूरंगं तदा प्रभम् ।

स्फुटिताग्रं द्विधा वाऽपि विन्द्याद् राहोस्तदाऽगमम् ॥15॥

जब शुक्ल पक्ष की द्वितीया में चन्द्रशूरंग प्रभावान् हो अथवा उस शूरंग के टूटकर दो हिस्मे दिखलाई पड़ते हों, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥15॥

चन्द्रस्य चौतरा कोटी द्वे शूरंगे दृश्यते यदा ।

धूम्रो विवर्णो ज्वलितस्तदा राहोप्रुचागमः ॥16॥

जब चन्द्रमा की उत्तर कोटि में दो शूरंग दिखलाई पड़ें और चन्द्र धूम्र, विकृत वर्ण और उवलित दिखलाई पड़े, तरंग समय निष्पत्र भे गहु का आगम जानना चाहिए ॥16॥

उदयास्तमने भूयो यदा यश्चोदयो रवौ ।

इन्द्रो वा यदि दृश्येत तदा ज्येष्ठो ग्रहागमः ॥17॥

जब उदय या अस्तकाल में पुनः-पुनः गूर्व और चन्द्रगा दिखलाई पड़े तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥17॥

कवच्छा-परिघा मेषां धूम-रक्तश्च-श्वसः ।

उदगच्छमाने दृश्यन्ते सूर्यं राहोस्तदाऽगमः ॥18॥

जब मेष कवच्छ, परिघ के आकार के हों तथा गूर्व में ध्वना, धूम और रक्त दर्श की उचित्यमान दिखलाई पड़े तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥18॥

आर्गवान् महिषाकारः शकटस्थो यदा शशी ।

उदगच्छन् दृश्यतेऽष्टम्यां तदा ज्येष्ठो ग्रहागमः ॥19॥

जब अष्टमी को चन्द्रमा गार्गी, महिषाकार, गोहिणी नक्षत्र में फटा-टूटा-गा दिखलाई पड़े तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥19॥

सिंह-मेषोष्ट्र-संकाशः परिवेषो यदा शशी ।

अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य तदा ज्येष्ठो ग्रहागमः ॥20॥

जब शुक्ल पक्ष की अष्टमी को चन्द्रमा का परिवेषा सिंह, मैय और ऊंट के समान मालूम पड़े, तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥20॥

श्वेतके सरसङ्काशे रक्त-पीतोऽष्टमो यदा ।

यदा चन्द्रः प्रदृश्येत तदा लूपाद् ग्रहागमः ॥21॥

यदि अष्टमी में चन्द्रमा श्वेतवर्ण, केशररंग या रक्त-पीत दिखलाई पड़े तो यहांगम कहना चाहिए ॥२१॥

उत्तरतो दिशः श्वेतः पूर्वतो रक्तकेसरः ।
दक्षिणतोऽथ पीताभः प्रतीच्यां कृष्णकेसरः ॥२२॥
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि क्षिप्रं चन्द्रः प्रमुच्यते ।
परिवेषो दिनं चन्द्रे विमदेत् विमुच्यते ॥२३॥

जब दिशा उत्तर से उत्तर, पूर्व से रक्त-केसर, दक्षिण से पीतवर्ण और पश्चिम से कृष्ण-पीत हो तो राहु के द्वारा चन्द्र का ग्रहण किये जाने पर भी शीघ्र ही छोड़ दिया जाता है। चन्द्रमा में दिन वा पश्चिम होने पर राहु द्वारा विमदित होने पर भी चन्द्रमा शीघ्र ही छोड़ा जाता है ॥२२-२३॥

द्वितीयायां यदा चन्द्रः श्वेतवर्णः प्रकाशते ।
उद्गच्छमानः सोमी वा तदा गृह्णते राहणा ॥२४॥

यदि चन्द्रगा द्वितीया में श्वेतवर्ण का शोभित हो अथवा उछड़ता हुआ चन्द्रमा हो तो वह राहु के द्वारा ग्रहण किया जाता है ॥२४॥

तृतीयायां यदा रौप्यो विवर्णो दृश्यते यदि ।
पूर्वरात्रे तदा राहुः पौर्णमास्यामुपक्रमेत् ॥२५॥

यदि तृतीया में चन्द्रगा विवर्ण—विकृतवर्ण दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी की पूर्ण रात्रि में राहु द्वारा ग्रस्त होता है अर्थात् ग्रहण होता है ॥२५॥

अष्टम्यां तु यदा चन्द्रो दृश्यते रुधिरप्रभः ।
पौर्णमास्यो तदा राहुरर्धरात्रमुपक्रमेत् ॥२६॥

यदि अष्टमी की चन्द्रमा रुधिर के समान लाल प्रभा का दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी की अर्धरात्रि में राहु द्वारा ग्रस्त होता है — प्राह्य होता है ॥२६॥

नवम्यां तु यदा चन्द्रः परिवेश्य तु सुप्रभः ।
अर्धरात्रमुपक्रम्य तदा राहुरुपक्रमेत् ॥२७॥

यदि नवमी तिथि की सुप्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेश दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी में अर्धरात्रि के अनन्तर राहु द्वारा चन्द्र ग्रस्त होता है अर्थात् अर्धरात्रि के पश्चात् प्राह्य होता है ॥२७॥

कृष्णप्रभो यदा सोमो दशम्यां परिविष्टते ।
पश्चाद् रात्रं तदा राहुः सोमं गृहणात्यसंशयः ॥२८॥

यदि दशमी तिथि को कृष्णवर्ण वी प्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेप दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी को चन्द्रमा राहु द्वारा निस्सन्देह आधीरात के पश्चात् ग्रहण किया जाता है ॥२८॥

अष्टम्यां तु यदा सोमं श्वेताभ्रं परिवेष्टते ।
तदा परिघं वै राहुविमुञ्चति न संशयः ॥२९॥

अष्टमी तिथि को श्वेतवर्ण वी वाभा का चन्द्रमा का परिवेप दिखलाई पड़े तो राहु परिष को छोड़ता है, इसमें गन्देह नहीं है ॥२९॥

कनकाभो यदाऽष्टम्यां परिवेषेण चन्द्रमाः ।
अर्धग्रासं तदा कृत्वा राहुरुद्दिगरते पुनः ॥३०॥

यदि अष्टमी तिथि को ग्रन्थ के समान कान्ति वाले चन्द्रमा का परिवेप दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी को राहु उगका अर्धग्राम करके छोड़ देता है ॥३०॥

परिवेषोदयोऽष्टम्यां चन्द्रमा रुधिरप्रभः ।
सर्वप्रासं तदा कृत्वा राहुस्तञ्च विमुञ्चति ॥३१॥

अष्टमी तिथि को परिवेप में ही चन्द्रमा का उदय हो और चन्द्रमा रुधिर के समान कान्तिवाला हो तो राहु पूर्णमासी तिथि को चन्द्रमा का सर्वप्रास करके छोड़ता है ॥३१॥

²कृष्णपीता यदा कोटिर्दक्षिणा स्याद् ग्रहः सितः ।
पीतो यदाऽष्टम्यां कोटी तदा श्वेतं ग्रहं बदेत् ॥३२॥

जब अष्टमी तिथि को चन्द्र की दक्षिणकोटि कृष्ण-पीत होनी है तो ग्रहण श्वेत होता है तथा पीली कोटि—शूर्ग होने पर भी श्वेत ग्रहण होता है ॥३२॥

दक्षिणा मेचकाभा तु कपोतप्रहमादिशेत् ।
कपोतमेचकाभा तु कोटी ग्रहमुपानयेत् ॥३३॥

यदि चन्द्रमा की दक्षिण कोटि—दक्षिण शूर्ग मेचक वाभा वाला हो तो कपोत रंग का ग्रहण होता है और कपोत-मेचक आभा होने पर ग्रहण का भी वैसा रंग होता है ॥३३॥

१ पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणः रुधिरप्रभः ।
कपोतग्रहणं विन्द्यात् पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥३४॥

यदि अष्टमी तिथि को चन्द्रमा की उत्तर की कोटि-- किनारा लाल हो और दक्षिण का विन्द्यारा रुधिर जैसा हो तो कपोत रंग के ग्रहण की सूचना समझनी चाहिए तथा अन्त में श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥३४॥

पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणा रुधिरप्रभा ।
कपोतग्रहणं विन्द्याद् ग्रहं पश्चात् सितप्रभम् ॥३५॥

यदि चन्द्रमा का उत्तरी किनारा पीला और दक्षिणी रुधिर के गमन का नियमाना हो ही कपोत रंग का ग्रहण समझना चाहिए तथा अन्तिम समय में श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥३५॥

यतोऽभ्रस्तनितं विन्द्यात् मारुतं करकाशनी ।
रुतं वा श्रूयते किञ्चित् तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३६॥

जब बादल गर्जना हो, वायु, ओखे और विजली गिरे तथा किसी प्रकार का शब्द मुनाई पड़े तो ग्रहागम होता है ॥३६॥

मन्दक्षीरा यदा वृक्षाः सर्वदिक् कलुषायते^१ ।
क्रीडते च यदा बालस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३७॥

जब वृक्ष अल्प धीर बाले हों, सभी दिशाएँ कलुषित दिखलाई पड़े, और ऐसे समय में धानन बेनने हीं तो उग समय ग्रहागम जानना चाहिए। यहाँ सर्वत्र ग्रह में तात्पर्य 'ग्रहण' गै है ॥३७॥

ऊर्ध्वं प्रस्पन्दते चन्द्रशिवत्रः संपरिवेष्यते ।
कुरुते मण्डलं स्पष्टस्तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३८॥

यदि चन्द्रमा ऊपर की ओर स्पन्दित होता हो, शिवत्र प्रकार के परिवेष से वैष्णव, शास्त्र भंडलाकार हो तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥३८॥

यतो विषयघातश्च^२ यतश्च पशु-पक्षिणः ।
तिष्ठन्ति मण्डलायन्ते ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३९॥

यदि देव का आपात हो और पशु-पक्षी मण्डलाकार होकर रिथत हों तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥३९॥

1. अनानया क्षिरकोटिर्दक्षिणा विन्द्याद् ग्रहागमम् । कपोत विषयघातानि गर्व पृच्छाव ग्रहागमम् ॥ ३४ ॥ 2. कलुयस भवेत् पृष्ठ । 3. एवा भुवा । 4. अनानया गुरुः ।

पाण्डुर्वा द्वावलीढो वा चन्द्रमा यदि दृश्यते ।
‘व्याधितो हीनरश्मिश्च यदा तत्त्वे निवेशनम् ॥40॥

यदि चन्द्रमा पाण्डु या त्रिगुणित निगला हुआ दिखलाई पड़े, व्यधित और हीन किरण मालूम पड़े तो चन्द्रग्रहण होता है ॥40॥

‘ततः प्रबाध्यते वेष्टस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ।

यतो वा मुच्यते वेष्टस्ततश्चन्द्रो विमुच्यते ॥41॥

जिस परिवेष में चन्द्रमा प्रवाहित हो, उससे ग्रहण होता है और जिसमें चन्द्रमा छोड़ा जाय उससे चन्द्रमा मुक्त होता है ॥41॥

गृहीतो विष्यते चन्द्रो वंशमावंव विष्यते ।

यदा तदा विजानीयात् षष्ठ्यासादग्रहणं पुनः ॥42॥

जब चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा अपना कटा-टूटा वेण प्रकाश वरे तो छः महीने पानात् पुनः चन्द्रग्रहण समझना चाहिए ॥42॥

‘प्रत्युद्गच्छति आदित्यं यदा गृह्णते चन्द्रमाः ।

भयं तदा विजानीयात् ब्राह्मणानां विशेषतः ॥43॥

सूर्य भी और जले हुए चन्द्रमा का ग्रहण हो तो ब्राह्मणों के लिए विशेष भय समझना चाहिए ॥43॥

‘प्रातरासेविते चन्द्रो दृश्यते कनकप्रभः ।

भयं तदा विजानीयादमत्यानां विशेषतः ॥44॥

जब प्रातःकाळ में चन्द्रमा वर्ण की आभा बाला मालूम हो तो भय होता है और विशेष रूप से अमात्यां के लिए भय—आतंक होता है ॥44॥

मध्याह्ने तु यदा चन्द्रो गृह्णते कनकप्रभः ।

अत्रियाणां नृपाणां च तदा भयमुपस्थितम् ॥45॥

मध्याह्न में वर्दि चन्द्रपा कलाप्रभ मालूम हो तो धात्रिय और राजाओं के लिए भय होता है ॥45॥

‘यदा मध्यनिशायां तु राहुणा गृह्णते शशी ।

भयं तदा विजानीयात् वैश्यानां समुपस्थितम् ॥46॥

1. व्यधितो गु० । 2. दृष्टि गु० । 3. प्रव्यन्तग्रहम् गु० । 4. उपस्थितम् गु० ।

5. प्रातरासेविता योगी गृह्णने राहुणाऽऽवृत म० । 6. व्यावर्ते यदि मध्याह्ने गु० ।

जब भय रात्रि में राहु चन्द्रमा को ग्रस्त करता है तब वैष्णों के लिए भय होता है ॥46॥

नीचावलम्बी सोमस्तु यदा गृह्णेत राहुणा ।
सूर्यकारं तदाऽनर्तं मरुकच्छुं च पीडयेत् ॥47॥

नीच राशिस्थ चन्द्रमा—दृश्यक राशिस्थ चन्द्रमा को जब राहु ग्रस्त करता है तो सूर्यकार, आनर्त, मरु और कच्छु देशों को पीड़ित करता है ॥47॥

अल्पचन्द्रं च द्वीपश्च म्लेच्छाः पूर्वापिरा द्विजाः ।
दीक्षिताः क्षत्रियामात्याः शूद्राः पीडामवाप्नुयुः ॥48॥

यदि अल्पचन्द्र का ग्रहण हो तो म्लेच्छ आदि द्वीप, पूर्व-पश्चिम निवासी द्विज, मूर्जि-मात्र, क्षत्रिय, थमात्य और शूद्र पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥48॥

यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्रं ततो यात्रा निवेशयेत् ।
कृत्स्ने विलर्तते याज्ञाः यस्ते उरुमाल्यहुद् भयम् ॥49॥

जब राहु द्वारा चन्द्रग्रहण होता है तो यात्रा में रकावट गमधना चाहिए। चन्द्रग्रहण के दिन यात्रा करने वाला व्यक्ति यों ही बापस लौट आता है, अतः यात्रा में भय है ॥49॥

गृहणीयादेकमासेन चन्द्र-सूर्यो यदा तदा ।
रुदिरवर्णसंसक्ता सङ्ग्रामे जायते मही ॥50॥

जब एक ही महीने में चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हों तो पृथ्वी पर युद्ध होता है और पृथ्वी रक्तरंजित हो जाती है ॥50॥

चौराइच यायिनो म्लेच्छा इनन्ति साधूननायकान् ।
विरुद्ध्यन्ते गणाश्चापि नृपाश्च विलये चराः ॥51॥

उक्त दोनों ग्रहणों के होने पर वे चौर, यायी, म्लेच्छ, नेतृत्वविहीन साधुओं का घात करते हैं तथा देश-विशेष में दूत, राजा और गणों को रोक लिया जाता है ॥51॥

यतोत्साहं तु हत्या तु राजानं निष्क्रमते शशी ।
तदा क्षेमं सुभिक्षञ्च मन्दरोगांश्च निर्दिशेत् ॥52॥

चन्द्रमा गहने राहु को परास्त कर निकल आये तो क्षेम, गुभिक्ष तथा रोगों की मन्दता होती है ॥52॥

1. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है।

पूर्वे दिशि तु यदा हृत्वा राहुः निष्क्रमते शशी ।
रुक्षो वा हीनरश्मिर्वा पूर्वो राजा विनश्यति ॥५३॥

जब राहु पूर्वे दिशा में चन्द्रमा का भेदन कर निकले और चन्द्रमा स्थान किरण मालूम पड़े तो पूर्वे देश के राजा का विनाश होता है ॥५३॥

दक्षिणाभेदने रथे दक्षिणात्याश्च पीडयेत् ।

उत्तराभेदने चैव नाविकांश्च जिघांसति ॥५४॥

दक्षिण दिशा में गर्भे के भेदन होने गे दक्षिणात्य -दक्षिण निवासियों को कष्ट और उत्तर गर्भ का रथन होने से नाविकों का नात होता है ॥५४॥

निश्चलः सुप्रभः कान्तो यदा निर्धारित चन्द्रमाः ।

राजां विजय-लाभाध तदा ज्ञेयः शिवशंकरः ॥५५॥

निश्चल और चन्द्रम का नियत वायना चन्द्रमा जब चन्द्रशङ्खाने में निकलता है तो राजाओं को अगलाम और चन्द्रमे में शर्वज्ञानित होती है ॥५५॥

एतान्येव तु लिगानि चन्द्रे^१ ज्ञेयानि धीमता ।

कृष्णपक्षे यदा चन्द्रः शुभो वा यदि बाऽशुभः ॥५६॥

उत्तरातश्च निमिस्तानि शकुनं लक्षणानि च ।
पर्वकाले यदा सन्ति तदा राहोद्धुर्वागमः ॥५७॥

जब पूर्वे दिशा में उत्पात, निमित्त, शकुन और लक्षण घटित होते हैं, तब जिवलय से राहु का आगमन राहु द्वारा ग्रहण होता है ॥५७॥

रक्तो राहुः शशी सूर्यो हन्तुः क्षत्रान् सितो द्विजान् ।

पोतो वैश्वान् कृष्णः^२ शूद्रान् द्विवर्णस्तु जिघांसति ॥५८॥

जब लाल रंग के राहु, सूर्य और चन्द्रमा हों तो धर्मियों का हनन, एवेत वर्ण के होने पर द्विजों का हनन, पीत वर्ण के होने पर वैश्यों का हनन और कृष्ण वर्ण के होने पर शूद्र और वर्णसकरों का हनन होता है ॥५८॥

चन्द्रमाः पीडितो हन्ति नक्षत्रं यस्य यद्यतः ।

रुक्षः परापरिभित्तश्च वैकृतश्च विनिर्गतः ॥५९॥

1. गृहे गृहः । 2. लगः पृहः ।

रूक्ष, पाप निपिलक, चिकृत और पीड़ित चन्द्रमा निकल कर जिस नक्षत्र का घात करता है, उस नक्षत्र वालों का अशुभ होता है ॥59॥

प्रसन्नः साधुकान्तश्च दृश्यते सुप्रभः शशी ।

यदा तदा नृपान् हन्ति प्रजां पीतः सुवर्चसा ॥60॥

जब ग्रहण से छूटा हुआ चन्द्रमा प्रसन्न, सुन्दर कान्ति और सुप्रभा वाला दिखलाई पड़े तो राजाओं का घात करता है । पीत और तेजस्वी दिखलाई पड़े तो प्रजा का घात करता है ॥60॥

राज्ञे राहुः प्रवासे यानि लिगान्यस्थ पर्वणि ।

यदा गच्छेत् प्रशस्तो वा राजराष्ट्रविभाशनः ॥61॥

पर्व नाम में—पूर्णिमा के अस्त होने पर राहु के जो चिह्न प्रकट हों, उनमें वह प्रशस्त दिखलाई पड़े तो राजा और राष्ट्र का विनाश होता है ॥61॥

यतो राहुप्रमथने ततो यात्रा न सिध्यति ।

प्रशस्तः शकुना यत्र सुनिमित्ता सुयोषितः ॥62॥

शुभ शकुन और श्रेष्ठ निमित्तों के होने पर भी राहु के प्रमथन—अस्थिर अवस्था में रहने पर यात्रा सफल नहीं होती है ॥62॥

राहुश्च चन्द्रश्च तथैव सूर्यो यदा सबर्णो न परस्परघ्नाः ।

काले च राहुर्भजते रवीन्द्रू तदा सुभिक्षं विजयश्च राजः ॥63॥

राहु, सूर्य और चन्द्र जब सबर्ण हों और परस्पर घात न करें तथा समय पर सूर्य और चन्द्रग्रा का गाह योग करें तो राजाओं की विजय होती है और राष्ट्र में सुभिक्ष होता है ॥63॥

इति नैर्यन्थे भद्रवाहुके निमित्ते संहिते राहुवारो नाम विशतितमोऽध्यायः ॥120॥

विजेच ।---हादश राशियों के भ्रमणानुसार राहुफल —जिस वर्ष राहु मीन राशि में रहता है, उस वर्ष विजली का भय रहता है । सौकड़ों व्यक्तियों की मृत्यु विजली के गिरने से होती है । अन्न की कमी रहने से प्रजा को कष्ट होता है । अन्न गेंदूना-तियुना लाभ होता है । एक वर्ष तक दुभिक्ष रहता है, तेरहवें महीने में गुभिक्ष होता है । देश में गृहकलह तथा प्रत्यक्ष परिवार में असान्ति बनी रहती है । यह मीन राशि का राहु बंधान, उड़ीया, उत्तरी विहार, आसाम की छोड़

1. -संग्रहिता गुरु ।

अब जेप सभी प्रदेशों के लिए दुर्भिकारक होता है। अन्न वी कमी ऋधिक रहती है, जिसमें प्रजा को भूमिमयी का कष्ट तो सहन करना ही पड़ता है साथ ही आपस में संघर्ष और लूटनाट होने के कारण अजानित रहती है। चीन राशि के राहु के साथ शनि भी हो तो निष्पत्ति भारत को दुर्भिक वासना बारता पड़ता है। दाने-दाने के लिए, मृदत्ताज होता पड़ता है। जो अन्न का संग्रह करके रखते हैं, उन्हें भी काट उठाना पड़ता है। कुम्भ राशि में राहु हो सो भन, गूत, वल्लास, जूट आदि के संत्रय में जाम रहता है। राहु के साथ मंगल हो तो किस जूट के व्यापार में तिगुना-चौगुना नाभ होता है। व्यापारिक सम्बन्ध भी सभी लोगों के बढ़ते जाने हैं। काम, रुई, मूत, वस्त्र, जूट, भन, पाटादि से बनी वस्तुओं के मूल्य में महंगी आती है। कुम्भ राशि में राहु और मंगल के आक्रमण होने ही छा महीने तक उक्त वस्तुओं का संग्रह करना चाहिए। बानवें महीने में बैच देने से नाभ रहता है।

कुम्भ राशि के राहु में वर्षा साधारण होती है, फसल भी मध्यम होती है तथा धान्य के व्यापार में भी नाभ होता है। खाद्यान्तों की कमी राजस्थान, बम्बई, मुम्बगांव, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा में होती है। बंगाल में भी खाद्यान्तों की कमी आती है, पर दूरकाल की स्थिति नहीं आने पाती। पंजाब, बिहार और मध्य भारत में उत्तम फसल उगजती है। भारत में कुम्भ राशि का राहु खण्डवृष्टि भी करता है। अनि के साथ राहु कुम्भ राशि में रिवति रहे तो प्रजा के लिए अत्यन्त कष्ट कारण हो जाता है। दुर्भिक के साथ खून-खूगविधि भी कराता है। यह संघर्ष और युद्ध का कारण होता है। विदेशों से समाके भी विगड़ जाता है, सन्धियों का महत्त्व समाप्त हो जाता है। जापान और वर्षा में खाद्यान्त की कमी नहीं रहती है। चीन के साथ उक्त राहु की स्थिति में भारत का गीवी गम्बन्ध दृढ़ होता है। मकर राशि में राहु के रहने से गूत, लालास, रुई, वस्त्र, जूट, भन, पाट आदि का संग्रह तीन महीनों तक करना चाहिए। चीनी महीने में उक्त वस्तुओं के बैचने से तिगुना नाभ होता है। ऊनी, रेशमी और सूती वस्त्रों में पुरा नाभ होता है। मकर का राहु गुड़ में हानि करता है तथा चीनी और चीनी से निमिल वस्तुओं के व्यापार में भी पर्याप्त हानि होती है। खाद्यान्त की स्थिति कुछ गुधर जाती है, पर कुम्भ और मकर राशि के राहु ने खाद्यान्तों की कमी रहती है। मकर राशि के राहु के साथ शनि, मंगल या सूर्य के रहने से वस्त्र, जूट और कपास या मूत में पंचगुना नाभ होता है। वर्षा भी साधारण ही हो पाती है, फसल साधारण रह जाती है, जिसमें देश में अन्न का संकट बना रहता है। मध्यभारत और राजस्थान में अन्न की कमी रहती है, जिसमें कट्टौ के निवासियों के लिए काट होता है। धनु राशि के राहु में मवेशी के व्यापार में अधिक नाभ होता है। घोड़ा, खल्चर, हाथी एवं सवारी के गामान माटर, साईकिल, रिवशा आदि में भी अधिक लाग होता है। जो व्यक्ति मवेशी का सचय तीन महीनों तक करके चोथे महीने में मवेशी को

बेचता है, उसे चीगुना तक लाभ होता है। मशीन के बे पार्ट्‌स जिनसे मशीन का सीधा सम्बन्ध रहता है, जिनके बिना मशीन का चलना कठिन ही नहीं, असंभव है, ऐसे पार्ट्‌स के व्यापार में लाभ होता है। जनसाक्षारण में ईज्यर्स, लद्वेग और वैमनस्य का प्रसार होता है।

वृश्चिक राशि में राहु मंगल के साथ स्थित हो तो जूट और वस्त्र के व्यवसाय में अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि में राहु के आरम्भ होने के पाँच महीनों तक वस्तुओं का संग्रह करके छठे महीने में वस्तुओं के बेचने से दुगुना-तिगुना लाभ होता है। खाद्यान्नों का उत्पादन अच्छा होता है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। आसाम, बगान, बिहार, पंजाब, पाकिस्तान, जापान, अमेरिका, चीन में उत्तम फसल उत्पन्न होती है। अनाज के व्यापार में साधारण लाभ होता है। तारिख, सुपाड़ी और आम, इमली आदि की फसल साधारण होती है। वस्त्र-व्यवसाय के लिए उत्तम प्रकार का राहु अच्छा होता है। तुला राशि में राहु स्थित हो तो दुमिक्ष पड़ता है, खण्डवृष्टि होती है। अन्न, धी, तेल, गुड़, चीनी आदि समस्त खाद्य पदार्थों की कमी रहती है। मरेशी को भी कष्ट होता है तथा मरेशी का मूल्य घट जाता है। यदि तुला राशि में राहु उसी दिन आये, जिस दिन तुला की सकान्त हुइ हो, तो भयकर दुष्काल पड़ता है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में खाद्यान्नों की कमी पड़ जाती है। तुला राशि के राहु के साथ शनि, मंगल का रहना। और अविष्टकार होता है। पंजाब, बंगाल और आसाम में अन्न की कमी रहती है, दुष्काल के कारण सहस्रों व्यक्ति भूख से छटपटा कर अपने प्राण गंवा बैठते हैं। कल्या राशि का राहु हानि से विश्व में ज्ञान्ति होती है। अन्न और वस्त्र का अभाव दूर हो जाता है। लौग, पीपल, इलायची और बाली मिर्च के व्यवसाय में मनमाना लाभ होता है। जब कल्या राशि का राहु आरम्भ हो उस समय से लेकर पाँच महीनों तक उक्त पदार्थों का संग्रह करना चाहिए, पश्चात् छठे महीने में उन पदार्थों को बेच देने से अधिक लाभ होता है। चीनी, गुड़, धी और नमक के व्यवसाय में भी साधारण लाभ होता है। सोना, चांदी के व्यापार में कल्या के राहु के छठे महीने के पश्चात् लाभ होता है। जापान, जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, चीन, रूस, भिस्त्र, इटली आदि देशों में खाद्यान्नों वी साधारण कमी होती है। वर्षा में भी अन्न धी कमी हो जाती है। सिंह राशि का राहु होने से सुमिक्ष होता है। सोंठ, धनिया, हल्दी, बाली मिर्च, संधा नमक, पीपल आदि वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है, अन्न के व्यवसाय में हानि होती है। गुड़, चीनी और धी के व्यवसाय में समर्थता रहती है। तज का भाव तंज हो जाता है। सिंह का राहु राजनीति, स्थिति वो गुद्गु करता है। देश में नये भाव और नये विचारों की प्रगति होती है। कल्यानार्थी ने गम्भान व्रात होता है। तथा कला वा सर्वांगीण विद्यास होता है। साहित्य की उन्नति होती है। सभी देश शिक्षा और संस्कृत में

प्रगति करते हैं। कर्क राशि के राहु में सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, गेहूँ, चना, जी, ज्वार, बाजरा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं तथा सुभिक्ष और गुबू़िक होती है। गंतव्य में मुख-शान्ति रहती है। यदि कर्क राशि के राहु के साथ गुड़ हो तो राजनीतिक प्रगति होती है। देश का स्थान अन्य देशों के बीच शेष पाना जाता है। पंजाब, बंगाल, बिहार महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश के लिए यह राहु बहुत अच्छा है। इन स्थानों में वर्षा और फसल दोनों ही उत्तम होती है। आसाम में बाढ़ आने के कारण अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जूट के व्यापार में साधारण लाभ होता है। जापान में फसल बहुत अच्छी होती है; किन्तु भूकम्प आने का भय गर्वदा बना रहता है। कर्क राशि का राहु चीन और लग के लिए उत्तम नहीं है, अवशेष यही राष्ट्रों के लिए उत्तम है। मिथुन राशि के राहु में भी यही पदार्थ सस्ते होते हैं। अनादि पदार्थों की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। तथा सभी देशों में मुकाल रहता है। वृष राशि के राहु में अन्न की कुछ कमी पड़ती है। धी, तेज, तिलहन, चन्दन, केशर, कस्तूरी, गेहूँ, जी, चना, चाबन, ज्वार, भूकम्प, बाजरा, उड़द, अरहर, मूँग, गुड़, चीमी आदि पदार्थों के संचय में लाभ होता है; मेष राशि के राहु में यही यही गाम में सुर्य और अन्द्रग्रहण हो तो निष्ठचयत दुष्किंश पड़ता है। बंगाल, बिहार, आसाम और उत्तर प्रदेश में उनमें वर्षा होती है, दक्षिण भारत में गध्यग वर्षा तथा अवशेष प्रदेशों में वर्षा का अभाव या अल्प वर्षा होती है। यदि राहु के साथ शनि और मंगल हों तो वर्षा का अभाव रहता है। अनाज की उत्पत्ति भी साधारण ही होती है। देश में खाद्यान्त संकट होने से कुछ अणान्ति रहती है। निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं।

राहु द्वारा होने वाले चक्रग्रहण का फल—मेष राशि में चक्र ग्रहण हो तो मनुष्यों की पीड़ा होती है। पहाड़ी प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, दक्षिण भारत, गहाराड़ आन्ध्र, वर्मा आदि प्रदेशों के निवासियों को अनेक प्रकार की शीमानियों का गामना करना पड़ता है। मेष राशि के ग्रहण में शूद्र और वर्णमंडरों की अधिक कष्ट होता है। लाल रंग के पदार्थों में लाभ होता है। वृष राशि के ग्रहण में गोप, भवेषी, पश्चिम, शीघ्रत, वृत्तिक और शेष व्यक्तियों को कष्ट होता है। इस ग्रहण से फसल साधारण होती है, वर्षा भी गठ्यम ही होती है। वृत्तिक पदार्थ और भजानों की उत्पत्ति अधिक होती है। गायों की संख्या घटती है, त्रिमग्नि भी, दूध भी वर्षा होने अग्री है। राजनीतिक दृष्टि से उथल-गुथल होती है। ग्रहण पड़ने के पाक महीने के उपरान्त नेताओं में कम मुटाब आरम्भ होता है। तथा सभी प्रदेशों के गर्वियाँ गण्डारों में परिवर्तन होता है। मिथुन राशि पर अन्द्रग्रहण के साथ यदि गुरु ग्रहण भी हो तो कनारारों, शिल्पियों, वैज्ञानिकों, उद्योतिपियों एवं उग्री प्रवारन के ग्रन्थ ज्येष्ठमासियों को शारीरिक कष्ट होता है। इसी मिथुन इशान आदि देशों में,

विशेषतः मुस्लिम राष्ट्रों में अनेक प्रकार से अशान्ति रहती है। वहाँ अन्न और बस्त्र की कमी रहनी है तथा गृह-वालता भी उत्पन्न होती है। उद्योग-धर्मों में रुकावट उत्पन्न होती है। बर्मा, चीन, जापान, जर्मन, अमेरिका, इंग्लैण्ड और रूस में शान्ति रहती है। यद्यपि इन देशों में भी अर्थसंकट बढ़ता हुआ दिखलाई पड़ता है, किर भी शान्ति रहती है। भारत के लिए भी उक्त राशि पर दोनों ग्रहों का होना अहितकारक होता है। कर्क राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो गर्वभ और अहीरों को काट होता है। कवाली, नाया तथा अन्य पहाड़ी जाति के व्यक्तियों के लिए भी पर्याप्त कष्ट होता है। नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं तथा आर्थिक संकट भी उनके सामने प्रस्तुत रहता है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण भी हो तो अत्रियों को काट होता है। सेनिया तथा अस्थि ग्र व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों को पीड़ा होती है। चोर और डाकुओं के लिए अत्यन्त भय होता है। यह राशि के ग्रहण में बनकर्त्ता दुखी होते हैं, राजा और साहकारों का धन क्षय होता है। कृषकों को भी मार्गसिक चिन्ताएँ रहती हैं। फसल अच्छी नहीं होती तथा फसल में नाना प्रकार के रोग भग जाते हैं। टिड़ी, मुसाँ का भय अधिक रहता है। कठोर दार्थी ग्र आजीविका अर्जन करने वालों को नाभ होता है। व्यवसायियों को हानि उठानी पड़ती है। कन्या राशि के ग्रहण में शिलियों, कवियों, साहित्यकारों, गायों एवं अन्य अनित लक्षाकारों को पर्याप्त काट रहता है। आर्थिक संकट रहने भी उक्त प्रकार के व्यवसायियों को काट होता है। छोटे-छोटे दुकानदारों को भी अनेक प्रकार के काट होते हैं। बंगाल, ब्राह्मण, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बम्बई, दिल्ली, गोदास और पश्य प्रदेश में फसल साधारण होती है। आसाम में अस्थि की कमी रहती है तथा पंजाब में भी अन्न का भाव महँगा रहता है। यदि कन्या राशि पर चन्द्रग्रहण के मात्र सूर्यग्रहण भी हो तो बर्मा, लंका, ज्याम, चीन और जापान में भी अन्न भी कमी पड़ जाती है। अस्थि के व्यापार में अधिक लाभ होता है। जूट, मन, रेशम, कपास, लड्डू और पाट के भाव ग्रहणों के दो महीने के पश्चात् अधिक बढ़ जाते हैं। मिट्टी का तेल, पट्टोल, कोयला आदि पदार्थों की कमी पड़ जाती है। यदि कन्या राशि के चन्द्र ग्रहण पर मंगन या जनि भी दृष्टि हो तो अनाजों की और अधिक कमी पड़ जाती है। तुला राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो साधारण जनता में अस्थोप होता है। गहूँ, गुड़, चीरी, घी और तेल का भाव तेज होता है। व्यापारियों के लिए यह ग्रहण अच्छा होता है, उन्हें व्यापार में अच्छा लाभ होता है। पंजाब, ब्रावणकोर, छोचीन, गलावार नो छोड़ अवश्यप भारत में अच्छी वर्षा होती है। इन प्रदेशों में फसल भी अच्छी नहीं होती है। पशुओं को काट होता है तथा बिहार और उत्तर प्रदेश के निवासियों को अनेक प्रकार की बीमारियों का गामन करना पड़ता है। धी, गुड़, चीरी, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, धनिया, हल्दी आदि पदार्थों का भाव भी महँगा होता है। लोहे के

व्यवसायियों को दूना लाभ होता है। सोना और चाँदी के बाजार में साधारण लाभ होता है। तीवा और पीपल के भाव अधिक तेज होते हैं। अस्त्र-शस्त्र तथा मणीनों का मूल्य भी बढ़ता है। वृश्चिक राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो गमी वर्ष के व्यक्तियों को कष्ट होता है। पंजाब निवासियों को हेजा और चेन्नक का प्रकोप अधिक होता है। बंगाल, बिहार और आसाम में विष्णुले ज्वर के कारण सहस्रों व्यक्तियों की मृत्यु होती है। सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, गोमेद, तीलम आदि गत्तों के गिरा साधारण पापाण, सीमेण्ट और चूना के भाव भी तेज होते हैं। ची, गुड़ और चीनी का भाव सस्ता होता है। यदि वृश्चिक राशि पर चन्द्र-ग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हों तो वर्ष की कभी रहती है। फसल भी सम्यक् रूप से नहीं होती है, जिसमें अन्न की कभी पड़ती है। धनु राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो वैश, डॉकटर, व्यापारी, पोड़ों एवं यत्नों को शारीरिक कष्ट होता है। धनु राशि के ग्रहण में देश में अर्थसंकट व्याप्त होता है, फसल उत्तम नहीं होती है। अनिज पदार्थ, बन और अन्न सभी की कभी रहती है। फल और तरकारियों की भी क्षति पदार्थ, बन और अन्न सभी की कभी रहती है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण हो और शनि से दूष्ट हो तो अटक से कटक तक तथा हिमालय में कल्याकुमारी तक के देशों में आर्थिक संकट रहता है। राजतीर्थि में भी उथन-पुथल होती है। कई गाज्यों के मन्त्रमण्डलों में प्रथित रहता है। मकर राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो नट, मन्त्रवादी, कवि, लेखक और छोटे-छोटे व्यापारियों को शारीरिक कष्ट होते हैं। कुम्भ राशि पर ग्रहण होने में अमीरों को कष्ट तथा पहाड़ी व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। आसाम में भूकम्प भी होता है। अनिजमय, शस्त्रभय और चोरगय समस्त देशों में विष्वास रखता है। मीन राशि पर चन्द्रग्रहण होने से जनजन्म, जन में आजीविका करने वाले, जातिक एवं अन्य इनी प्रकार के व्यक्तियों को धीक्षा होती है।

नक्षत्रानुसार चन्द्रग्रहण का फल— अधिकती नक्षत्र में चन्द्रग्रहण हो तो दान वाले अनात्र मूँग, उड़द, चना अरहर आदि गहरें, भरणी में ग्रहण हो तो व्यिवसायी के व्यवसाय में तीन मास में लाभ; कपास, ढाँचे, गुल, जूट, आदि में भार महीनों में लाभ और कृतिका में हो तो गुबर्ण, चाँदी, प्रवाल, मुक्ता, माणिक्य में लाभ होता है। उक्त दिनों के नक्षत्रों में ग्रहण होने से वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। पृष्ठद्वृष्टि के कारण किसी प्रदेश में वर्षा अच्छी और किसी में कम होती है। रोहिणी नक्षत्र में ग्रहण होने पर कपास, रुई, जूट और पाट के संग्रह में लाभ; मूषिक नक्षत्र में ग्रहण हो तो लाख, रंग एवं थार पदार्थों में लाभ; आद्रों में ग्रहण हो तो धी, गुड़ और चीनी आदि पदार्थ महेंग; गुरुवर्गु नक्षत्र में ग्रहण हो तो बेल, तिनहन, प्रेमफली और चना में लाभ; पूष्य नक्षत्र में ग्रहण हो तो गूर्ह, चायन जी और ज्वार आदि अनाजों में लाभ; मध्या, पूर्वफलगुनी, उत्तरफलगुनी और हस्त, इन चार नक्षत्रों में ग्रहण हो तो चना, गेहूँ, गुड़ और जी में लाभ; चित्रा में

ग्रहण होने से सभी प्रकार के घान्यों में लाभ, स्वाति में ग्रहण होने से तीसरे, पाँचवें और नौवें महीने में अन्न के व्यापार में लाभ; विशाखा नक्षत्र में ग्रहण होने से छठे महीने में कुलधी, काली मिर्च, चीनी, जीरा, धनिया आदि पदार्थों में लाभ; अनुराधा में नौवें महीने में बाजरा, सरसों आदि में लाभ, ज्येष्ठा नक्षत्र में ग्रहण होने से पाँचवें पहिने में गुड़, लीनी मिळी आदि पदार्थों में लाभ; मूल नक्षत्र में ग्रहण होने से चावलों में लाभ; पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में ग्रहण होने से वस्त्र व्यवसाय में लाभ; उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में ग्रहण होने से पाँचवें मास में नारियल, सुपाड़ी, काजू, किसमिस आदि फलों में लाभ; अवण नक्षत्र में ग्रहण होने से मवेशियों के व्यापार में लाभ; घनिष्ठा नक्षत्र में ग्रहण होने से उड्ड, मूँग, मोठ आदि पदार्थों के व्यापार में लाभ; शतभिषा नक्षत्र में ग्रहण होने चना में लाभ, पूर्वभाद्र पद में ग्रहण होने से पीड़ा, उत्तराभाद्रपद में ग्रहण होने से तीन महीनों में तमक, चीनी, गुड़ आदि पदार्थों के व्यापार में विशेष लाभ होता है।

विद्व फल- —राहु वा शनि से विद्व होना भय, रोग, मृत्यु, चिन्ता, अनन्नाभाव एवं अशान्ति सूचना है। मंगल ग्रे विद्व होने पर राहु जनकान्ति, राजनीति में उथल-पुथल एवं युद्ध होते हैं। बुध या शुक्र से विद्व होने पर राहु जनता को सुख-शान्ति, आनन्द, आगोद-प्रगोद, अभय और आरोग्य प्रदान करता है। चन्द्रग्रा से राहु विद्व होने पर जनता को महावृक्षपट होता है। प्रथेक ग्रह का विद्व रूप सप्त-शलासा या पंचशलाका नक्कि से जानना चाहिए।

एकविशतितमोऽध्यायः

कोणज्ञान् पापसम्भूतान् केतुन् वक्ष्यामि ज्योतिषा ।
मृदवो दारणाश्चैव तेषामासं निबोधत ॥१॥

पाप के कारण कोण में उत्पन्न हुए केतुओं का ज्योतिष के अनुसार वर्णन करता है। मृदु और दारण होने के अनुसार उनका फल समझा जा सकता चाहिए ॥ १ ॥

एकादिष् शतान्तेषु वर्षेषु च विशेषतः ।
केतवः सम्भवन्त्येवं विष्वमः पूर्वपापज्ञाः ॥२॥

एकादि ग्रो वर्षों में पूर्व पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होते हैं। इन

विषम केतुओं का फल विषम ही होता है ॥ 2 ॥

**पूर्वलिङ्गानि केतुनामुत्पाताः सदृशाः पुनः ।
ग्रहाः¹ अस्तमनाश्चापि दृश्यन्ते चापि लक्षयेत् ॥3॥**

केतुओं के पूर्व लिङ्ग उत्पात के समान ही हैं, अतः ग्रहों के अस्तोदय को देख कर और लक्ष्यकर फल कहना चाहिए ॥ 3 ॥

**शतानि चैव केतुनां प्रवक्ष्यामि पृथक् पृथक् ।
उत्पातां यादृशां उक्तां ग्रहास्तमनान्यपि ॥4॥**

संकड़ों केतुओं का वर्णन पृथक्-पृथक् निया जायगा । ग्रहों के अस्तोदय तथा जिस प्रकार के उत्पात कहे गये हैं, उनका वर्णन भी वेसा ही किया जाएगा ॥ 4 ॥

**अन्यस्मिन् केतुभवने यदा केतुश्च दृश्यते ।
तदा जनपदव्यूहः प्रोक्तान् देशान् स हिसति ॥5॥**

यदि अन्य केतुभवन गे केतु दिखलाई पड़े तो जनता प्रतिपादित देशों का घात करती है ॥ 5 ॥

**एवं दक्षिणते विन्द्यावदैलोक्तेण च ।
२कृत्तिकादियमान्तेषु नक्षत्रेषु यथाक्रमम् ॥6॥**

इस प्रकार कृतिका नक्षत्र गे भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन दिशाओं में नक्षत्रों में भरणी समझ लिना चाहिए ॥ 6 ॥

**धूमः क्षुद्रश्च यो ज्ञेयः केतुरगारकोऽचिनपः ।
प्राणसंवासयत्राणी स प्राणी संशयो तथा ॥7॥**

केतु, अंगारक और गह धूम वर्ण और क्षुद्र दिखलाई पड़े तो प्राणों का संकट और अनेक प्रकार के संशय उत्पन्न होते हैं ॥ 7 ॥

**त्रिशिरसके हिजमयम् अरणे युद्धमुच्यते ।
अरशिमके नृपापायो विरुद्ध्यन्ते परस्परम् ॥8॥**

यदि तीन सिर वाला केतु दिखलाई पड़े तो द्विजों की भय; अरण केतु दिखलाई पड़े तो युद्ध और त्रिरण रहित केतु दिखलाई पड़े तो राजा और प्रजा में परस्पर विरोध पैदा करता है ॥ 8 ॥

**विकृतेः² विकृतं सर्वं धीणे सर्वपराजयः ।
शृणे शृंगिदधिः पापः कवच्ये जनमृत्युदः ॥9॥**

1. ग्रहास्तमनान्याश्च पृ० । 2. गुरुकर्त्रियं - म० । 3. विशिं विशिं विशिं यर्वं शिली राद्यं पराजयम् म० ।

रोगं सस्पविनाशञ्च । दुस्कालोऽ मृत्युविद्रवः ।
मासं लोहितकं ज्येयं फलमेवं च षञ्चधा ॥10॥

विक्षिल—यदि विकृत केनु दिखलाई पड़े तो प्रजा में फूट और क्षीण केनु दिखलाई पड़े तो प्रराजय, संपुर्ण शुगाकार दिखलाई पड़े तो सीषदाले पशुओं का वध और कबन्ध धड़-आकार दिखलाई पड़े तो मनुष्यों की मृत्यु होती है। इस प्रकार के केनु में रोग उत्पन्न होते हैं, धात्य-फसल का विनाश होता है, अकाल पड़ता है, मृत्यु-उपद्रव होते हैं एवं पृथ्वी भास और खून से भर जाती है, इस प्रकार पाँच प्रकार का फल होता है ॥9-10॥

मानुषः पश-पक्षीणां समयस्तापसक्षये ।

विषाणो दंष्ट्रघाताय सस्थघाताय शंकरः ॥11॥

उपर्युक्त प्रकार का केनु पशु-पक्षियों के लिए मनुष्यों के समान दुखोत्पादक, तपस्वियों को धय करने के लिए समय के समान, दंष्ट्री-दाँत से काटने वाले व्याघ्रादि के लिए विपर्युक्त मर्दि के समान और फसल का विनाश करने के लिए रुद्र के समान है ॥11॥

अंगारकोऽग्निसंकाशो धूमकेनुस्तु धूमवान् ।

नीलसंस्थानसंस्थानो वैदूर्यसदृशप्रभः ॥12॥

अग्नि के तुल्य केनु अंगारक, धूमवर्ण का केनु धूमकेनु और वैदूर्यमणि के समान नीलवर्ण का केनु नीलसंस्थान है ॥12॥

कनकाभा शिखा यस्य स केनुः कनकः समृतः ।

यस्योर्ध्वंगा शिखा शुक्ला स केनुः श्वेता उच्यते ॥13॥

जिभ केनुकी शिखा कनक के समान कान्ति वाली है वह केनु कनकप्रश और जिस केनु के ऊपर की शिखा शुक्ल है वह केनु श्वेत कहा जाता है ॥13॥

त्रिवर्णश्चन्द्रवद् वृत्तः समसर्पवदंकुरः ।

त्रिभिः शिरोभिः शिशिरो गुलमकेनुः स उच्यते ॥14॥

तीनवर्ण वाला एवं चन्द्रमा के समान गोवकेनु समसर्पवदंकुर नाम का होता है, तीन गिर वाला केनु शिशिर कहलाता है और मुलम के समान केनु गुलमकेनु कहलाता है ॥14॥

1. विनाशक २. दंष्ट्राली ३. जानी—शु ४. शुक्ल गृ ५. दग्धप्रश
न शुक्ल गृ ६. केनुका गुलमकेनु गृ ।

विक्रान्तस्य शिखे दीप्ते ऊर्ध्वरे च प्रकीर्तिते ।
ऊर्ध्वमुण्डा शिखा यस्य स खिली केतुरुच्यते ॥15॥

जिस केतुकी शिखा दीप्त हो वह विक्रान्त मंजरा, जिसकी शिखा ऊपर हो वह
ऊर्ध्वमुण्डा शिखा वाला केतु खिली कहा जाता है ॥15॥

शिखे विषाणवद् यस्य स विषाणी प्रकीर्तिः ।
व्युच्छिल्लभानो भीतेन रूक्षा च क्षिलिका शिखा ॥16॥

जिसकी शिखा विषाण के समान हो वह विषाणी तथा भय से रुक्षा और फैनी
हुई शिखा वाला केतु व्युच्छिल्लभान वहा जाता है ॥16॥

शिखाश्चतरसो ग्रीवार्धे कबन्धस्य विधीयते ।
एकरश्मिः प्रदीप्तस्तु स केतुर्दीप्त उच्यते ॥17॥

जिसकी आधी गर्दन हो और शिखा जारी ओर व्याप्त हो वह कवच नाम का
केतु और एक फिरण वाला प्रदीप्त केतु दीप्त कहा जाता है ॥17॥

शिखा मण्डलवद् यस्य स केतुर्मण्डली स्मृतः ।
मयूरपक्षी विज्ञेयो हसनः प्रभयाङ्गपया ॥18॥

जिस केतुकी शिखा मण्डल के समान हो वह मण्डली और अल्प कान्ति से
प्रकाशित होने वाला केतु मयूरपक्षी कहा जाता है ॥18॥

इवेतः सुस्थिक्षदो लेयः सौम्यः शुबलः शुभार्थिषु ।
कृष्णादिषु च वर्णेषु चातुर्वर्ण्य विभावयेत् ॥19॥

इत्वर्ण का केतु गुभिथ धारने वाला; सुन्दर और शुबलवर्ण का केतु शुग फल
देने वाला और श्रुत्या, पीत, रक्त और शुक्लवर्ण के केतु में चारों वर्णों का शुभा-
शुभ जानना चाहिए ॥19॥

केतोः समुत्थितः केतुरत्यो यदि च दृश्यते ।
क्षुच्छस्त्र-रोग-विद्वनस्था प्रजा गच्छति संक्षयम् ॥20॥

केतु में भू उत्पन्न अव्य केतु शिखलाई पड़े तो शृधा, शस्त्र, रोग, विद्वन आदि
में पीड़ित प्रजा अव्य को प्राप्त होती है ॥20॥

एते च केतवः सर्वे धूमकेतुसमं फलम् ।
विचार्य वीथिभिश्चापि प्रभाभिश्च विशेषतः ॥21॥

उपर्युक्त सभी केतु धूमकेतु के समान फल देने वाले हैं तथा पि इनका विशेष

विचार दीथि, प्रभा और वर्ण आदि के अनुसार करना चाहिए ॥२१॥

यां दिशं केतवोऽचिभिर्धूमयन्ति इहन्ति च ।

तां दिशं पीडयन्त्येते क्षुधार्थाः पीडनैर्भृशम् ॥२२॥

जिस दिशा को केतु अग्निमयी फिरणों के द्वारा धूमित करते हैं और जलाते हैं, वह दिशा क्षुधा, रोषादि के द्वारा अत्यन्त पीड़ित होती है ॥२२॥

नक्षत्रं यदि वा केतुर्ग्रहं वाऽप्यथ धूमयेत् ।

ततः शस्त्रोपजीवीनां स्थावरं हिसते ग्रहः ॥२३॥

यदि केतु किसी नक्षत्र या ग्रह वो अभिधूमित करे तो शस्त्र में आजीविका करने वाले ग्रह स्थावरों की हिसा होती है ॥२३॥

स्थावरे धूमिते तज्ज्ञा याधिनो यात्रिधूपने^१ ।

शुद्धरात्रे भिलज्जातीनां पारस्पीकांस्तथेव च ॥२४॥

स्थावर और याधियों के धूमित होने पर ज्वर, मिल्ल और पारसियों को पीड़ित होना पड़ता है ॥२४॥

शुक्रं दीप्त्या यदि हन्याद्धूमकेतुरुपागतः ।

तदा सस्यं नृपान् नागान् दैत्यान् शूरांश्च पीडयेत् ॥२५॥

यदि धूमकेतु अपनी दीप्ति से शुक्र को घातित करे तो धान्य, राजा, नाग, दंत्य और शूरकीरों नो पीड़ा होती है ॥२५॥

शुक्रानां शकुनानां च वृक्षाणां चिरजीविनाम् ।

शकुनि-ग्रहपीडायां फलमेतत् समादिशेत् ॥२६॥

शुकुनि-ग्रह की पीड़ा में शुक्र, पक्षी चिर और वृक्षों का पीड़ा बारक फल बहना चाहिए ॥२६॥

शिशुमारं यदा केतुरुपागत्य प्रधूमयेत् ।

तदा जलचरं तोयं वृद्धवक्षांश्च हिसति ॥२७॥

जब केतु शिशुमार—सूम नामक जलजन्तु को धूमित करता है तब जलचर, जल और वृद्ध वृक्षों का घात होता है ॥२७॥

सप्तर्षीणामन्यतमं यदा केतुः प्रधूमयेत् ।

तदा सर्वभयं विन्द्यात् ब्रह्मणानां न संशयः ॥२८॥

1. जीवायन व्यायर्गश्च म हिमति, पु० । 2. चायिकसाथा मु० । 3. प्राप्तुवस्त्यनपात् शोणां भर्तुर्ग्रीः प्रवीडिता, मु० ।

यदि केतु सप्त कृषियों में से किसी एक को प्रधूमित करे तो ब्राह्मणों को सभी प्रकार का अस्य निस्सन्देह होता है ॥28॥

बृहस्पतिं यदा हन्याद् धूमकेतुरथाचिभिः ।

वेदविद्याविदो वृद्धान् नृपांस्तज्जास्च हिसति ॥29॥

जब धूमकेतु अपनी तेजस्वी किरणों द्वारा बृहस्पति का घात करता है, तब वेदविद्या के पारंगत वृद्ध विद्यान् और राजाओं का विनाश होता है ॥29॥

एवं शेषान् ग्रहान् केतुर्यदा हन्यात् स्वरश्मिभिः ।

ग्रहयुद्धे यदा^१ प्रोक्तं फलं तत्तु समादिशेत् ॥30॥

इस प्रकार अन्य लेप ग्रहों को अपनी किरणों द्वारा केतु घातित करे तो जो फल ग्रहयुद्ध का बतलाया गया है, वही कहना चाहिए ॥30॥

नक्षत्रे पूर्वदिशभागे यदा केतुः प्रदृश्यते ।

तदा देशान् दिशामुग्रां भञ्जन्ते पापदा नृपाः ॥31॥

यदि पूर्व दिशमागवाने नक्षत्र में केतु का उदय दिखलायी पड़े तो पापी राजा देश, दिशा और ग्राम का विनाश करता है ॥31॥

बंगानंगान् कलिगांश्च मगधान् काशनन्दनान् ।

पट्टचावांश्च कौशाम्बीं धेणुसारं सदाहृष्म् ॥32॥

तोसलिगान् सुलान् नेद्रान् माक्रन्दामलदांस्तथा ।

कुनटान् सिथलान् महिषान् माहेन्द्रं पूर्वदक्षिणः ॥33॥

वेणान् विदर्भमालांश्च अश्मकांश्चेव छर्वेणान् ।

द्रविडान् वैदिकान् दाद्रेकलांश्च दक्षिणापये ॥34॥

कोंकणान् दण्डकान् भोजान् गोमान्^२ सूर्यरकाञ्चनम् ।

किञ्चिकन्धान् वनवासांश्च लंकां हन्यात् स नैरुतैः ॥35॥

बंग, अंग, कलिग, मगध, काश, नन्द, पट्ट, कौशाम्बी, धेणुसार, तोस, लिंग, सुल, नेद्र, माक्रन्द, मालद, कुनट, सिथल, महिष, माहेन्द्र, वेण, विदर्भ, माल, और दक्षिणापथ के अश्मक, छर्वेण, द्रविड, वैदिक, दाद्रेकल, कोंकण, दण्डक, भोज, गोमा, सूर्यरि, कञ्चन, किञ्चिकन्धा, वनवास और लंका इन देशों का विनाश उपर्युक्त प्रकार का केतु गरता है ॥32-35॥

अंगान् सौराष्ट्रान् । समुद्रान् भरुकच्छादसेरकान् ।
शूद्रान् हृषिजलरुहान् केतुहन्त्याद्विपथगः ॥36॥

यदि व्रियथम् -कुमारं स्थित केतु हो तो अंग, सौराष्ट्र, समुद्र, भरुकच्छ,
शूद्र, हृषि आदि देशों का विनाश करता है ॥36॥

काम्बोजान् रामगान्धारान् आभीरान् यवरच्छकान् ।
चैत्रसोत्रेयकान् सिन्धुनहरमन्ययुक्तायुजः ॥37॥
बाल्कीकान् बीनविषयान् पर्वतांश्चाप्यदुस्वरान् ।
सौधेयं कुरुत्वैदेहान् केतुहन्त्याद्यदुत्तरान् ॥38॥

केतु उन र दिशों में स्थित काम्बोज, रामगान्धार, आभीर, यवरच्छक, चैत्र-
गान्धेय, सिन्धु, बाल्कीक, बीनविषय, पहाड़ी प्रदेश, गोधेय, तुरु, बिदेह आदि देशों
का विनाश करता है ॥37-38॥

चम्मसुवण्णकलिगान् किरातान् बर्बरान् द्विजान् ।
वैदिस्तमिषुलिन्दांश्च हन्ति स्वात्याः समुच्छ्रुतः ॥39॥

रवानी नक्षत्र में उक्तित केतु चम्मसुवण्ण, भवण्णकलि, कलिग देशवासी, किरात,
बर्बर जातियाँ, द्विज, वैदिक, भीष, पुनिष्ठ आदि जातियों का वध होता है ॥39॥

सदृशाः केतवो हन्त्युस्तासु मध्ये वधं वदेत् ।
ब्याधिं शस्त्रं क्षुधां मृत्युं परचकं च निर्दिशेत् ॥40॥

मदृश केतु नाल करते हैं तथा ब्याधि, शस्त्र, क्षुधा, मृत्यु और परजामन की
गूचना देते हैं ॥40॥

न काले नियता केतुः न नक्षत्रादिकस्तथा ।
आकरिमको भवत्येव कदाचिदुदितो ग्रहः ॥41॥

केतु के उदयास्त का गमय निरिचत नहीं है और नक्षत्र, दिशा आदि भी
अनिरिचत ही हैं । अकस्मात् कदाचित् ग्रह का उदय हो जाता है ॥41॥

षट्क्रिशत् तस्य वर्णाणि प्रवासः परमः स्मृतः ।
मध्यमः सप्तविंशं तु जघन्यस्तु त्रयोदशा ॥42॥

केतु का 36 वर्ष का उच्चुष्ट प्रवाग, 27 वर्ष का मध्यम प्रवास और तेरह
वर्षों का जघन्य प्रवाग होता है ॥42॥

1. मूरुक्षुन् गृहः । 2. गात्रां मु॒० । 3. वैष्ण मु॒० ।

एते प्रयाणा^१ दृश्यन्ते येऽन्ये तीव्रभयादृते ।

प्रवासं शुक्रवर्चस्य विद्युद्युत्पातिकं महत् ॥४३॥

उक्त प्रयाण या भय के अतिरिक्त अन्य प्रयाण केतु के दिखलायी पड़ते हैं ।
शुक्र के रामान केतु का प्रवास ऐसे अत्यन्त उत्पात कारक होता है ॥४३॥

धूमध्वजो धूमशिखो धूमार्चिर्धूमतारकः ।

विकेशी विशिखश्चैव मयूरो विद्वमस्तकः ॥४४॥

महाकेतुश्च श्वेतश्च केतुमान् केतुवाहनः ।

उल्काशिखश्च जाग्वल्यः प्रज्वाली चाम्बरीषकः^२ ॥४५॥

हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेतुः शुक्रवासोऽन्यदन्तकः ।

विद्युत्समो विद्युल्लतो विद्युद्विद्युत्सफुलिंगकः ॥४६॥

चिक्षणो ह्यरुणो गुरुमः कबन्धो ज्वलितांकुरः ।

तालीशः कनकश्चैव विकान्तो मांसरोहितः ॥४७॥

वैवस्वतो धूममाली महाचिश्च विधृमितः ।

दारुणः केतवो ह्येते भयमिच्छुन्ति दारुणम् ॥४८॥

धूमध्वज, धूमशिख, धूमार्चि, धूमतारक, विकेशी, विशिख, मयूर, विद्वमस्तक, महाकेतु, श्वेत, केतुमान, केतुवाहन, उल्काशिख, जाग्वल्य, प्रज्वाली, चाम्बरीषक, हेन्द्रस्वर, हेन्द्रकेतु, शुक्रवास, अन्यदन्तक, विद्युत्स्यग, विद्युल्लत, विद्युत्, विद्युत्सफुलिंगक, चिक्षण, अरुण, गुरुम, कबन्ध, ज्वलितांकुर, तालीश, कनक, विकान्त, मांसरोहित, वैवस्वत, धूममाली, महाचि, विधृमित और दारुण ये केतु दारुण भय उत्पात करने वाले हैं ॥४४-४८॥

जलदो जलकेतुश्च जलरेणुसमप्रभः ।

रुक्षो वा जलवान् शीघ्रं विप्राणो भयमादिशेत् ॥४९॥

जलद, जलकेतु, जलरेणु, रुक्ष, जलवान् केतु शीघ्र ही आक्राणों को भय का निर्देश करता है ॥४९॥

शिखो शिखण्डो विमलो विनाशो धूमशासनः ।

विशिखानः शताचिश्च शमलकेतुरलक्तकः ॥५०॥

घृतो^३ घृताचिश्चयवनश्चलपुष्पविदूषणः ।

विलम्बी विषमोऽस्तिश्च वातको हसनः शिखी ॥५१॥

कुटिलः कड्वखिलंगः कुचित्रगोऽथ निश्चयो ।
नामानि लिखितानि' च येषां नोकतं तु लक्षणम् ॥५२॥

शिखी, शिखण्डी, विमल, विनाशी, श्रूमणासन, विशिखान, शतार्चि, शालकेतु अलवतक, घृत, घृतार्चि, च्यवन, चित्रपुण, विदूषण, विलम्बी, विपस, अग्नि, वातकी हृसन, शिखी, कुटिल, कड्वखिलंग, कुचित्रग इत्यादि केतुओं के नाम लिखे गये हैं, जिनके लक्षण का निरूपण नहीं किया गया है ॥५०-५२॥

येऽन्तरिक्षे जले भूमौ गोपुरेऽद्वालके गृहे ।

बस्त्राभरण-शत्रेषु ते उत्पाता न केतवः ॥५३॥

जो केतु आकाश, जल, भूमि, गोपुर, अद्वाली, घर, बस्त्र, आभरण और शस्य में दिखनायी पड़ते हैं, वे उत्पात नहीं करते ॥५३॥

दीक्षितान् १अर्हद्वेवांश्च आचार्याश्च तथा गुरुन् ।
पूजयेच्छान्तिपृष्ठ्यर्थं पापकेतुसमुत्थिते ॥५४॥

पाप केतुओं की शान्ति के लिए मुनि—आचार्य, गुरु, दीक्षित साधु और तीर्थकर्णों की पूजा करनी चाहिए ॥५४॥

वौरा जानपदा राजा श्रेणीनां³ प्रदरा: नरा: ।

४पूजयेत् सर्वदावेन पापकेतुः समुत्थिते ॥५५॥

पुरवासी, नागरिक, राजा, ब्राह्मण, श्रेष्ठ व्यापारी आदि व्यक्तियों को दान-पूजा का कार्य अवश्य करना चाहिए। अशुभ केतु दान-पूजा द्वारा प्रीति को प्राप्त होता है ॥५५॥

यथा हि बलवान् राजा सामन्तैः सारपूजितः ।

नात्यर्थं बाध्यते ततु तथा केतुः सृपूजितः ॥५६॥

जिस प्रकार बलवान् राजा सामन्तों के द्वारा मौक्षित होने पर शास्त्र रहता है विसी भी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचता, उसी प्रकार दुष्ट केतु भी जिस पाप के उदय से काट पहुँचता है, उस पाप की शान्ति भगवान् की पूजा से हो जाती है, वह पाप काट नहीं पहुँचता है ॥५६॥

सर्पदल्टोः यथा मन्त्रंरगदंश्च चिकित्स्यते ।

केतुदल्टस्तथा लोकैर्दनि५जापैश्चकित्स्यते ॥५७॥

1. रुदीश्व मु० । 2. पितॄदेवांश्च विष्णुन् भूतान् वर्णीपकान् मु० । 3. विष्राम्च वर्णिनो नराः । 4. दान-पूजा भ्रूबं गुरु० । केनोः श्रीतिकरोऽन्वाः गु० । 5. सर्पो दल्टो यदा मु० । 6. जपि मु० ।

जिस प्रकार सर्वे के द्वारा काटा गया व्यक्ति मन्त्र और औषधि से स्वास्थ्य लाभ करता है, उसकी चिकित्सा मन्त्र और औषधि है, उसी प्रकार दुष्ट केतु की चिकित्सा दान-पूजा है। तात्पर्य यह है कि अशुभ केतु पापोदय से प्रकट होता है, पाप शान्त होने पर अशुभ केतु स्वयमेव शान्त हो जाता है। गृहस्थ के लिए पाप शान्ति का उपाय जप-तप के अलावा दान-पूजन ही है ॥५७॥

यः केतुचारमधिलः॑ यथादस् दठितः॒ पुरुषं अमणः॒ सन्तेत्वः॑

स केतुदग्धस्त्यजले हि देशान् प्राप्नोति पूजां च नरेन्द्रभूलात्॥५८॥

जो बुद्धिमान् थमण—मुनि समस्त केतुचार की यथावत् अध्ययन करता है 'वह केतु के द्वारा पीड़ित प्रदेशों का त्यागकर अन्यथा यग्न करता है, और राजाओं से पूजा प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ॥५८॥

इति नैर्यन्ते भद्रबाहुके निमित्ते एकविंशतितमोऽध्यायः ॥२१॥

विवेचन— केतुओं के भेद और स्वरूप—केतु गूमनः तीन प्रकार के हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भूमि । ध्वज, शस्त्र, गूह, वृक्ष, अश्व और हृस्ती आदि में जो केतुरूप दर्शन होता है, वह अन्तरिक्ष केतु; नश्वरों में जो दिखलायी देता है उसे दिव्यकेतु है और इन दोनों के अतिरिक्त अन्य रूप भी केतु हैं। केतुओं की कुल संख्या एक हजार या एक सौ एक है। केतु का फलादेश, उषके उदय, अस्त, अवस्थान, सर्ण और धूम्रस्ता आदि के द्वारा अवगत किया जाता है। केतु जितने दिन तक दिखलायी देता है, उतने साम तक उसके पाल का परिपाप होता है। जो केतु निर्मल, चिकना, सख्त, चविर और शुक्लवर्ण होकर उदित होता है, वह सुभिक्ष और सुखदायक होता है। इसके विषरीत रूपवाणि केतु शुगदायक तरीं होते, परन्तु उनका नाम धूमकेतु होता है। विषेषतः इन्द्रधनुष के रामान अनेक रंगवाणि अथवा दो या तीन चोटी वाले केतु अस्तन्त अशुभकारक होते हैं। हार, मणि या सुवर्ण के समान रूप धारण करने वाले भी चोटीदार केतु यदि पूर्व या पश्चिम में दिखलायी दें तो सूर्य गे उताल कहलाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है। तोता, अग्नि, दुष्पहरिया का फूल, लाख या रक्त के समान जो केतु अग्निकोण में दिखलायी दें, तो वे अग्निसे उताल्न हुए मनि जाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है। पच्चीस केतु टेढ़ी चोटी वाले, रुखे और कुण्डलवर्ण होकर दक्षिण में दिखलाई पड़ते हैं, ये यम से उत्पन्न हुए माने गये हैं। इनके उदय होने से पारी गढ़ती है। दर्पण के समान गोल आकार वाले, शिखा रहित, किरण युक्त और सज्जन रौल के समान कान्ति वाले जो वार्ष्ण्य केतु ईजान दिशा में दिखलायी पड़ते हैं, वे पृथ्वी

में उत्पन्न हुए हैं। इनके उदय से दुर्भिक्षा और भय होता है। चन्द्रकिरण, चाँदी, हिम, कुपुद या कुन्दपुष्ण के समान जो तीन केन्त्र हैं, ये चन्द्रमा के पुत्र हैं और उत्तर दिशा में दिखलाई देते हैं। इनके उदय होने से युभिक्षा होता है। ब्रह्मदण्ड नामक गुगान्तकारी एक केन्त्र ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ है। यह तीन चोटी वाला और तीन रंग का है, इसके उदय होने की दिना का कोई नियम नहीं है। इस प्रकार कुल एक सी एक केन्त्र का वर्णन किया गया है। अवधीप 899 केन्त्रों का वर्णन निम्न प्रकार है—

शुक्रतनय नामक जो चौरासी केन्त्र है, वे उत्तर और ईशान दिशा में दिखलायी पड़ते हैं, ये बहुत—शुक्रवर्ण, तारकाकार, चिकने और तीव्र फल युक्त होते हैं। शनि के पुत्र गाठ केन्त्र हैं, ये कालिसान्, दो शिखा वाले और बानक संजक हैं, इनके उदय होने से अतिकाट होता है। चोटीहीन, चिकने, शुक्रवर्ण, एक तारे के समान दक्षिण दिशा के आधित पंखठ विकथ नामक केन्त्र, बृहस्पति के पुत्र हैं। इनका उदय होने से पृथ्वी गे लोग पापी हो जाते हैं। जो केन्त्र साफ दिखलायी नहीं देते—गृहम, दीर्घ, शुक्रलवण, अनिश्चित दिशावाले तरकार संजक हैं। ये तुध के पुत्र कहनाते हैं। इनमि गृह्या ५। है और ये पाप फल वाले हैं। रक्षा या अग्नि के समान जिनका रंग है, जिनकी तीन शिखाएँ हैं, सारे के समान हैं, इनकी गिनती साठ है। ये उत्तर दिशा में स्थित हैं तथा गौमुग नामक मंभल के पुत्र हैं, ये सभी पाप फल देने वाले हैं। तामगधीय नामक तैतीम केन्त्र, जो राहु के पुत्र हैं तथा चन्द्रसूर्य गत होकर दिखलायी देने हैं। उनका फल अत्यन्त गुभ होता है। जिनका शरीर ज्वाला की माला ग युक्त हो रहा है, ऐसे ग; शी वीम केन्त्र अग्नि विष्वरूप होते हैं। इनका फल वर्ण है—कार्यों को विगड़ा, काट पहुँचाता आदि है। श्यामवर्ण, अमर के समान व्याप्ति चिराम वाले गोन् पवन गे उत्पन्न केन्त्रों की संख्या गतहन्तर है। इनके उदय हीन से भय, आतंक और पाप का प्रसार होता है। तारापुज के समान आकार वाले प्रजापति युत आठ केन्त्र हैं, उनका नाम गयक है। इनके उदय होने से क्रान्ति का प्रसार होता है। विश्व में एक नया परिवर्तन दिखलायी पड़ता है। चाँदी आकार वाले ब्रह्म गन्तान नामक जो केन्त्र हैं, उनकी संख्या दो सी जार है। इन केन्त्रों का फल वर्णभाव और अन्नाभाव उत्पन्न करता है। लता के गुच्छ के समान जिनका आकार है, ऐसे वर्तीय केन्त्र नामक जो केन्त्र हैं, वे वर्षण के पुत्र हैं। इनके उदय हीन से जन्मामाव, जलजन्मुखों को नाट एवं जल से आजीवित नहरने वाले काट प्राप्त करते हैं। जबन्ध के समान आकार वाले छियानवे वाक्य नामक केन्त्र हैं, जो कालगुप्त केन्त्र गये हैं। ये अत्यन्त भयंकर दुखदायी और कुरुष हैं। बड़नाड़े एवं तारेदार नों केन्त्र हैं, ये विदिषा समुत्पन्न हैं। उनका उदय भी काटवार होता है। गरुड़, सूर्यमन और विदर्भ नगरी के लिए उक्त केन्त्र अशुभाकरता होता है।

नेतुओं वी संख्या का पौर्ण निम्न प्रकार है—

$$25+25+25+22+3+1=101; \quad 84+60+65+51+60+33+120+77+8+204+32+96+9=899; \text{ इस प्रकार} \\ \text{कुल } 899+101=1000$$

जो केनु पश्चिम दिशा में उदय होते हैं, उत्तर दिशा में फैलते हैं, बड़े-बड़े स्थग्धमूलि हैं उनको वसाकेनु कहते हैं, इनके उदय होने से मारी पड़ती है और सुभिक्ष होता है। सूक्ष्म, या चिकने वर्ण के बेनु उत्तर दिशा से आरम्भ होकर पश्चिम तक फैलते हैं, उनके उदय से अधारभय, उलट-पुलट और मारी फैलती है। अमावस्या के दिन आकाश के पूर्वार्द्ध में सहस्ररथिम केनु दिखनायी देता है, उसका नाम कणाल केनु है। इसके उदय होने से अधा, मारी, अनावृष्टि और रोगभय होता है। आकाश के पूर्व दक्षिण भाग में जूल के अग्रभाग के समान कपिण, छक्ष, ताम्रवर्ण की किशणों से अधा जो बेनु आकाश के तीन भाग तक यमन करता है, उसको चौद्र केनु कहते हैं, इसका एक वायाल बेनु के समान है। जो धूम्रकेनु पश्चिम दिशा में उदय होता है, दक्षिण की ओर एक अंगूल ऊंची शिखा करके युक्त होता है और उत्तर दिशा की तरफ क्रमानुसार बढ़ता है, उसकी चलकेनु कहते हैं। यह चलकेनु क्रमशः दीर्घ होकर यदि उत्तर ध्रुव, सप्तर्षि भृदल या अभिजित् नक्षत्र को स्पर्श करता हुआ आकाश के एक भाग में जाकर दक्षिण दिशा में अस्त हो जाय, तो प्रयाग से लेकर अवन्ती तक के प्रदेश में दुभिक्ष, रोग एवं नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। मध्यरात्रि में आकाश के पूर्वभाग में दक्षिण के आगे जो केनु दिखनायी दे, उसको धूम्रकेनु कहते हैं। जिस बेनु का आकार गाढ़ी के जुग के समान है, वह युग परिवर्तन के समय मात्र दिन तक दिखनायी पड़ता है। धूम्रकेनु यदि अग्रिम दिनों तक दिखनायी दे तो दण वर्ष तक शहव-प्रकोप लगातार बना रहता है और नाना प्रकार के संताप प्रजा का देता रहता है। ऐत नामक बेनु यदि जटा के समान आकार बाला, छखा, यज्ञिश्वर्ण और आकाश के तीन भाग तक जाकर लौट आये तो प्रजा का नाश होता है। जो केनु धूम्रवर्ण की चोटी से युक्त होकर कृतिता नक्षत्र की स्पर्श करे, उसकी रथिम-केनु कहते हैं। इसका एक ऐत नामक केनु के समान है। अथ नामक एक प्रकार का केनु है इसका आकार, वर्ण, प्रमाण स्थिर नहीं हैं। यह दिव्य, अनन्दिता और भौम तीन प्रकार का होता है। यह स्थग्ध और अनियत फल देता है। जिम केनु की कान्ति कुमुद के समान हो, चोटी पूर्व की ओर फैल रही हो, उसे कुमुद केनु कहते हैं। यह वरावर दस वर्ष तक सुभिक्ष देने वाला है। जो केनु गृष्म तार के समान आकार बाला हो और पश्चिम दिशा में तीन चोटी तक लगातार दिखनायों दे उसका नाम मणिकेनु है। स्तन पर दवाद देने वाले जिम प्रकार दूध का धारा निकलती है, उसी प्रकार जियकी किरणे छिटकती है, यह केनु उर्गा प्रकार

का है। इस केन्तु के उदय से साढ़े चार मास तक सुभिक्ष होता है तथा छोटे-बड़े सभी ग्राणियों को कष्ट होता है। जिस केन्तु की अन्य दिशाओं में ऊँची शिखा हो तथा पिछले भाग में चिकना हो, वह जलकेन्तु कहलाता है। इसके उदय होने से नी महीने तक शान्ति और सुभिक्ष रहता है। सिंह की पूँछ के समान दक्षिणावर्त शिखा-वाला, स्त्रिय, सूक्ष्मतारा युवत पूर्व दिशा में रात में दिखलायी देने वाला भवकेन्तु है। यह भवकेन्तु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने मास तक सुभिक्ष होता है। यदि रुज्जु होता है, तब मरणान्त करने वाला माना जाता है। फुब्बारे के समान किरण वाला, मृणाल के समान गौरवर्ण केन्तु पश्चिम दिशा में रात भर दिखलायी दे तो सात वर्ष तक हर्ष सहित सुभिक्ष होता है। जो केन्तु आधी रात के समय तक शिखाराव्य, अरुण की-सी कम्तिवाला, चिकना दिखलायी देता है, उसे आवर्त कहते हैं। यह केन्तु जितने क्षण तक दिखलायी देता है, उतने मास तक सुभिक्ष रहता है। जो धूम्र या ताप्रबंण की शिखा वाला भव्यकार है और आकाश के तीन भाग तक वो आक्रमण करता हुआ शून के अप्रभाग के मानान आकार वाला होकर सत्त्वाकाल में पश्चिम की ओर दिखलायी दे उसे संवर्त केन्तु कहते हैं। यह केन्तु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने वर्ष तक अस्त्राघात से जनता को काट होता है। इस केन्तु के उदय काल में जिसका जन्म-निधन आकान्त रहता है, उसे भी कष्ट होता है। जिस-जिस निधन को केन्तु आधूमित करे या स्पर्श करे, उस-उस निधन वाले देश और व्यक्तियों को पीड़ा होती है। यदि केन्तु की शिखा उल्का से निदित हो तो शुभफल, गुरुपृष्ठ एवं सुभिक्ष होता है।

केन्तुओं का दिशेष फल

जलकेन्तु पश्चिमास्र शिखा वाला होता है। स्त्रिय केन्तु के अस्त होने में जब नी महीने समय लेप रह जाता है, तब यह पश्चिम में उदय होता है। यह नी महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य करता है तथा अन्य ग्रहों के सब दोषों को नष्ट करता है।

ऊमिश्रीतकेन्तु—जलकेन्तु के कमन्ति गति में आगे १४ वर्ष और १४ वर्ष के अन्तर पर ये केन्तु उदय होते हैं। ऊमि, जंख, हिम, रक्त, कुञ्जि, काम, विसर्पण और शीत ये आठ अमृत से पैदा हुए सहज केन्तु हैं। इनके उदय होने से सुभिक्ष और क्षेम होता है।

भटकेन्तु और भवकेन्तु—ऊमि आदि शीत पर्यन्त के आठ केन्तुओं के चार के समान हो जाने पर तारा के रूप एक रात में भटकेन्तु दिखलायी देता है। यह भटकेन्तु पूर्व दिशा में दाहिनी ओर पूभी हुई वन्दन की पूँछ की तरह शिखा वाला, स्त्रिय और कृतिका के गुच्छ की तरह मुख्य तारा के प्रभाण का होता है। यह जितने मुहूर्त तक स्त्रिय दीवता रहता है उतने महीनों तक सुभिक्ष करता है। रुक्ष दोष Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तो प्राणों का अन्त करने वाला और रोग पैदा करने वाला होगा ।

ओहालक केतु, श्वेत केतु, ककेतु—ओहालक और श्वेत केतु इन दोनों का अग्रभाग दक्षिण की ओर होता है और अद्वैरात्रि में इनका उदय होता है । ककेतु प्राची-प्रतीची दिशा में एक साथ युगाकार से उदय होता है । ओहालक और श्वेतकेतु सात रात तक स्तनधि दिखायी देते हैं । ककेतु कभी अधिक भी दिखता रहता है । वे दोनों स्तनधि होने पर 10 वर्ष तक शुभ फल देते हैं और रुक्ष होने पर शस्त्र आदि से दुख देते हैं । उहालक केतु एक सौ दस वर्ष तक प्रवास में रहकर भटकेनु की गति के अन्त में पूर्व दिशा में दिखायी देता है ।

पदम्केतु—श्वेत केतु के फल के अन्त में श्वेत पदम्केनु का उदय होता है । पश्चिम में एक रात दिखायी देने पर यह सात वर्ष तक आनन्द देता रहता है ।

काश्यप श्वेत केतु—काश्यप श्वेतकेनु तो रुक्ष, ज्याव और जटा ची-मी आकृति का होता है । यह आग्नेय के तीन भाग वो आकृमण करने वाली ओर लीट जाता है । यह उत्तराश गिर्वी 115 वर्ष तक प्रवाहित रहता सहज पदम्केनु की गति के अन्त में दिखायी देता है । यह जितने महीने दिखायी दे उतने ही वर्ष सुभिक्ष करता है । किन्तु ग्रध्य देश के आर्यों का और ओदीच्यों का भाग करता है ।

आदर्श केतु—वेतकेनु के समान होने पर पश्चिम में अद्वैरात्रि के समय ग्रन्थ की आग्नेयता आदर्शकेनु उदित होता है । यह केनु जितने गुहर्त तक दिखायी दे, उतने ही महीने गुभिक्ष करता है । यह गदा संसार में यज्ञोत्पत्ति करता है ।

रश्मि केतु—काश्यप श्वेतकेनु के समान यह ग्रन्थ केनु फल देता है । यह कुछ धूग्रदर्ण की शिखा के भाव गृह्णन के पीछे दिखायी देता है । विशावग्नि ग्रे पैदा हुआ यह ग्रन्थ केनु भी वर्ष प्राप्तित रहाये आवर्ण केनु की गति के अन्त में कृतिका नश्वर के समीग दिखायी देता है ।

वसाकेतु, अस्थिकेतु, शस्त्रकेतु वगांल् तात्त्व ग्रिघ्य, सुभिक्ष आदि महामारीप्रद होता है । यह 130 वर्ष प्रवाहित रहकर उत्तर ओर लभ्या होता हुआ उदित होता है । वसाकेनु के समान अस्थिकेनु रुक्ष हो तो कुद्र भृषावह होनी है (भुखमरी पड़ती है) । पश्चिम में वगांल् की समानता का दीखा हुआ शस्त्रकेनु महामारी करता है ।

कुमुदकेनु—कुमुद की आग्नेयता, पूर्व की तरफ शिखा बाला, स्तनधि और दुम्ध की तरह अवश्छ कुमुदकेनु पश्चिम में वसाकेनु की गति के अन्त में दिखायी देता है । एक ही रात में दिखायी दिया हुआ यह सुभिक्ष और दस वर्ष तक गुहर्दभाव पैदा करता है, किन्तु पात्रवान्ध देशों में कुद्र रोग उत्पन्न करता है ।

कपाल किरण—कपाल केनु पात्री दिजा में अग्नावस्था के दिन उदय हुआ आग्नेय के मध्य में धूम्र विशेषों की शिखावाला होकर गीग, बृहिट, भूष आदि

मृत्यु को देता है। यह 125 वर्ष प्रवास में रहकर अमृतोत्पन्न कुमुद केतु के अन्त में तीन पक्ष से अधिक उदय में रहता है। जितने दिन तक यह दीखता रहता है उतने ही महीनों तक इसका फल मिलता है। जितने मास और वर्ष तक दीखता है, उससे तीन पक्ष अधिक फल रहता है।

मणिकेतु — यह मणिकेतु दूध की धारा के समान स्तिर्थ शिखावाला श्वेत रंग का होता है। यह रात्रि भर एक प्रहर तक सूक्ष्म तारा के रूप में दिखायी देता है। कपाल केतु भी गति के अन्त में यह मणिकेतु पश्चिम दिशा में उदित होता है और उस दिन में साढ़े चार महीने तक सुभिक्ष करता है।

कलिहिरण रोद्ध केतु —(किरण) — कलिकिरण रोद्धकेतु वैश्वानर वीथी के पूर्व की ओर उदित होकर 30 अंश ऊपर चढ़कर फिर अस्त हो जाता है। यह 300 वर्ष 9 महीने तक प्रवास में रहकर अमृतोत्पन्न मणिकेतु की गति के अन्त में उदित होता है। इसकी शिखा तीक्ष्ण, रुखी, घूमिन, ताँचे की तरह भाल, शूल की आकृति वाली और दक्षिण की ओर झुकी हुई होती है। इसका फल तेरहवें महीने होता है। जितने महीने यह दिखायी देता है उतने ही वर्ष तक इसका भय नमज्ञना नहिए। उतने वर्षों तक भूष्म, अनादृष्टि, महामारी आदि रोगों से प्रजा को दुख होता है।

संवर्तकेतु — यह संवर्तकेतु 1008 वर्ष तक प्रवास में रहकर पश्चिम में साध्यवाल के समय आकाश के तीन अंशों का आक्षमण करके दिखायी देता है। घूम्ह वर्ण के शूल की-सी वान्ति वाला, रुखी शिखावाला यह भी रात्रि में जितने गृहर्त्ता तक दिखायी दे उतने ही वर्ष तक अनिष्ट करता है। इसके उदय होने से अवृष्टि, दुष्क्रिया, रोग, शर्वों पा कोण होता है और राजा लोग स्वचक्र और परनक ये दुखी होते हैं। यह संवर्तकेतु ग्रिस भृत्य में उदित होता है और जिस नक्षत्र में अस्त होता है तथा जिसे छोड़ता है अथवा जिसे रुग्ण करता है उसके आधित देशों का नाश हो जाता है।

ध्रुवकेतु — यह ध्रुवकेतु अनियत गति और वर्षों का होता है। मध्ये दिशाओं में जहाँ-तहाँ नाना आकृति का दीख पड़ता है। यु, अन्तरिक्ष वा भूमि पर स्तिर्थ दिखायी दे तो शुभ और गृहस्थों के गृहांगण में तथा राजाओं के, सेना के किसी भाग में दिखायी देने गे विनाशकारी होता है।

अमृतकेतु — जल, भट, पद्म, आवर्त, कुमुद, मणि और संवर्त — ये सात केतु प्रकृति से ही अमृतोत्पन्न माने जाते हैं।

बुद्धकेतु फल — जो दुष्ट केतु हैं वे प्राप्त से अधिवली आदि 27 नक्षत्रों में गये हुए देशों के नरेशों वा नाश करते हैं। विवरण अगले पृष्ठ पर देखें।

27 नक्षत्रों के अनुसार दुष्ट केतुओं का घातक फल

नक्षत्र	देश	नक्षत्र	देश
अश्विनी	अश्वमक देश घातक किंगरात—भीजों का घातक उड़ीसा प्रदेश का घातक श्रीहंसन का घातक उचिन्धन (गङ्गाधार) का घातक आद्रो प्रसवं दु पृथ्ये आङ्गोष्ठा मध्या	स्वार्ली विशाखा अनुराधा जयद्वा सूर्य पूर्वोपाहृ उत्तरायणि श्रवण अग्नि क्रमिक श्रीगंगा पूर्वांकुर उचिन्धन (विद्युती प्रदेश) अच्छित (उचिन्धन प्रान्त) दण्डक (तामिक पूर्ववर्द्धा) कुट्टोनम का घातक	कम्बोज (कश्मीर) का घातक अबध का घातक पूर्ण (मिथिला का क्षेत्र) का घातक काश्यकुञ्ज (कर्नाटक) का घातक मढ़क तथा जाम्भ का घातक काश्ची का घातक अर्जुनायक, योधीय, शिवि एवं चेदि घातक कैकेय (सतलज के नीटे) और व्यास के ओंग का प्रान्त) का घातक पंचनद (पंजाब) मिहल (सीलोन) वंग (वंगान प्रान्त) नैमिप किरात (मूर्दान और आसाम के क्षेत्र का घातक
भरणी			
हुत्तिका			
दोहिणी			
युग्मिन			
आद्रो			
प्रसवं दु			
पृथ्ये			
आङ्गोष्ठा			
मध्या			
पूर्वांकुर			
उचिन्धन			
हृष्ट			
चिच्चा			

जिन्हें दिनों तक ये दीखते हैं, उतने ही महीनों तक और जितने महीनों तक दीखें उतने ही वर्षों तक इनका फल मिलता है। जब ये दीखें तो उसके तीन पक्ष आगे फल देते हैं। जिन केतुओं की जिखा उल्का से ताडित हो रही हो वे केतु हृषि, अफगान, चीन और चोल से अन्यत्र देशों में श्रेयस्कर होते हैं। जो केतु शुक्ल, स्त्रियालय, हृस्व, प्रसन्न, थोड़े समय ही दीखने वाला सीधा हो और जिसके उदित होने से वृक्षि हुई हो वह शुभ फलदायी होता है।

चार प्रकार के भूकम्प ऐन्द्र, बाहुण, वायव्य और आग्नेय होते हैं, इनका कारण भी राहु और केतु का विशेष योग ही है। जब राहु से सातवें मंगल, मंगल से पाँचवें बुध और बुध से चौथे चन्द्रमा होता है, उस समय भूकम्प होता है।

स्वाति, चित्रा, उत्तरास्त्रालयुनी, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु—इन नक्षत्रों में अग्नि केतु या संवत्सर केतु दिखलायी पड़े तो भूकम्प होता है। पुष्य, कृत्तिका, विजाया, पूर्वामांडपद, भरणी, पूर्वास्त्रालयुनी और मणि इन नक्षत्रों का आग्नेय गण्डल वहलाता है। जब कीनक या श्रावनेय केतु इस मण्डल में दिखलायी देते हैं तो भूकम्प होने का योग अस्ति है। चन्द्र, चाल, अर्पि, औदाजक, पद्म और रविरण्म केतु जब प्रकाशमान होकर किसी भी भृष्णुरात्रि में उदित होते हैं, तो उसके तीन सप्ताह में भव्यात् भूकम्प पूर्व के देशों में तथा हल्लम भूकम्प पश्चिम उसके तीन सप्ताह में भव्यात् भूकम्प पूर्व के देशों में तथा हल्लम भूकम्प पश्चिम के देशों में आता है। वसानिनु और कपातकेतु यदि प्रतिष्ठा तिथि को रात्रि के प्रथम प्रहर में दिखलायी पड़े तो भी भूकम्प आता है। भूकम्पों के प्रधान निमित्त केतुओं का उदय है। यों तो ग्रहयोग से गणित द्वारा भूकम्प का समय निकाला केतुओं के उदय है। इन्हें भव्यमाश्रात्मा जब भी केतुओं के उदय के निरीक्षण मात्र में, जाता है, फिन्नु भव्यमाश्रात्मा जब भी केतुओं के उदय के निरीक्षण मात्र में, आकाशदर्शन से ही, भूकम्प का उद्घाटन कर सकता है।

द्वाविशतितमोऽस्यायः

सर्वग्रहेश्वरः सूर्यः प्रवासमुदयं प्रति ।

तस्य चारं प्रदद्यतमि तन्निबोधत तत्त्वतः ॥ ॥ ॥

सभी ग्रहों का स्वामी सूर्य है। इसके प्रवास, उदय और चार का वर्णन करता है, इन्हें यथार्थ समझना चाहिए ॥ ॥ ॥

सुरश्मी रजतप्रख्यः स्फटिकाभो महाद्युतिः ।
उदये दृश्यते सूर्यः सुभिक्षं नृपतेहितम् ॥२॥

यदि अच्छ्री किरणों वाला, रजत के समान कान्तिवाला, सफटिक के ममान निर्मल, महान् कान्तिवाला सूर्य उदय में दिखलाई पड़े तो राजा का कल्याण और सुभिक्ष होता है ॥२॥

रक्तः शस्त्रप्रकोपाय भयाय च महार्घदः ।
नृपाणामहितश्चापि स्थावराणां च कीर्तिः ॥३॥

लाल वर्ण का सूर्य शस्त्रकोप करता है, भय उत्पन्न करता है, वस्तुओं की महेणाई करता है और स्थावर—तदेश नियामी राजाओं का अहित करने वाला होता है ॥३॥

पीतो लोहितरश्मश्च व्याधि-मृत्युकरो रविः ।
विरशिमर्धूमकृणाभः क्षुधात्सृष्टिरोगदः ॥४॥

पीत और लोहित—पीती और लाल किरणवाला सूर्य व्याधि और मृत्यु करने वाला होता है । धूम और कृष्ण वर्ण वाला सूर्य क्षुधा-वीड़ा—भुखमरी और रोग उत्पन्न करने वाला होता है । (यहाँ सूर्य के उपत प्रकार के वर्णों वा प्रातःकाल सूर्योदय समय में ही निरीक्षण करना चाहिए, उभी का उपर्युक्त फल बताया गया है) ॥४॥

कबन्धेनाऽऽवृतः सूर्यो यदि दृश्येत प्राग् दिशि ।
वंगानंगान् कलिगांश्च काशी-कर्णटि-मेखलान् ॥५॥

मागधान् कटकालांश्च कालवक्रोष्टूकणिकान् ।
माहेन्द्रसंबृतोवान्द्रास्तवा¹ हन्याच्च भास्करः ॥६॥

यदि उदयकाल में पूर्व दिशा में कबन्ध—धड़ से ढका हुआ सूर्य दिखलायी पड़े तो बंग, अंग, कलिग, काशी, कर्णटिक, मेखल, मगध, कटक, कालवक्रोष्टू, कणिक, माहेन्द्र, आन्द्र आदि देशों का घात करता है ॥५-६॥

कबन्धो वामपीतो वा दक्षिणेन यदा रविः ।
चर्विलान् मलयानुद्गान् स्त्रीराज्यं वनवासिकान् ॥७॥
किञ्छिन्धाश्च कुनाटांश्च ताङ्गकणीस्तथैव च ।
स वक्र-चक्र-कूरांश्च कुणपांश्च स हिस्ति ॥८॥

1. महेन्द्रमधितानुद्गां पू० ।

जब सूर्य से दक्षिण या बायों और पीतवर्ण का कवन्ध दिखलायी पड़े तो
चर्विल मलय, उड़, स्त्रीराज्य और बनवासी, किलिन्धा, कुनाट, लाम्रकर्ण, वक्र-
चक्र, कूर और कुण्डी का थात करता है ॥7-8॥

अपरेण च कवन्धस्तु दृश्यते द्युतितो यदा ।
युगन्धरायणं मरुत्-सौराष्ट्रान् कच्छगैरिजान् ॥९॥
कोकणानपरान्तांश्च भोजांश्च कालजीविनः ।
अपरांस्तांश्च सर्वान् वै निहन्यात् तादृशो रविः ॥१०॥

यदि पञ्चम की ओर दृतिमान् कवन्ध दिखलायी पड़े तो युगन्धरायण,
मरुत्, सौराष्ट्र, कच्छ, गैरिक, कोकण, आपान्त राष्ट्र, भोज, कालजीवी इत्यादि
राष्ट्रों का थात करता है ॥९-१०॥

उत्तरे उदयोऽकर्स्य कवन्धसदृशस्तदा ।
क्षुद्रकामालवाह्नीकान् सिन्धु-सौवीरदर्दुरस्त् ॥११॥
काश्मीरान् दरदांश्चैव पह्लवान् मागधांस्तया ।
साकेतान् कोशलान् काञ्चीमहिन्छत्रं च हिसति ॥१२॥

यदि कवन्ध के समान उत्तर में सूर्य का उदय हो तो वह क्षुद्रक, मालव,
सिन्धु, सौवीर, दर्दुर, काश्मीर, दरद, पह्लव, मागथ, माकेत, कोशल, काञ्ची
और अहिन्छत्र का थात करता है ॥११-१२॥

कवन्धमुदये भानोर्यदा मध्ये प्रदृश्यते ।
मध्यमा मध्यसाराश्च पीड्यन्ते मध्यदेशजाः ॥१३॥

यदि सूर्य के मध्य में कवन्ध का उदय दिखलायी गई तो मध्य देश में उत्पन्न
व्यक्तियाँ या थात होता है ॥१३॥

नक्षत्रमादित्यवर्णो यस्य दृश्येत भास्करः ।
तस्य पीडा भवेत् पुंसः प्रगत्तेन शिवः स्मृतः ॥१४॥

जिस व्यक्ति के नक्षत्र पर रक्तवर्ण सूर्य दिखलायी पड़ता है, उस व्यक्ति को
पीड़ा होती है और वह यहन के पश्चात् कल्याण होता है ॥१४॥

स्थालीपिठरसंस्थाने सुभिक्षं वित्तदं नृणाम् ।
वित्तलाभस्तु राज्यस्य मृत्युः पिठरसंस्थिते ॥१५॥

1. अद्राम ॥खिलान् शूनि मिन्दा-गौवीर-कुर्दंगान् प० । 2. वदभूर्णं प० । 3. नणी प०

यदि याली-पिठर—गोल याली और मूढ़े के आकार में सूर्य उदयकाल में दिखलायी पड़े तो मनुष्यों को मुभिक और धन-लाभ करानेवाला है। राज्य के लिए भी धनलाभ करानेवाला होता है। पीढ़ा के समान सूर्य दिखलायी पड़े तो मृत्युप्रद होता है ॥ ३॥

सुवर्णवर्णा वर्षं वा मासं चा रजतप्रभं ।

शस्त्रं शोणितवत् सूर्यो दाघो वैश्वानरप्रभे ॥ ४॥

स्वर्ण के समान रंग का सूर्य उदयकाल में दिखलायी पड़े या रजत के समान वर्ण का सूर्य दिखलायी पड़े तो वर्ष या मास सुष्टुप्य अतीत होते हैं। रक्त वर्ण के समान सूर्य दिखलायी पड़े तो शस्त्र पीढ़ा और ब्रह्म के समान दिखलायी पड़े तो दग्ध करनेवाला होता है ॥ ५॥

शृंगी राजां विजयदः कोश-वाहनदृद्धये ।

चित्रः सस्यविनाशाथ भयाय च रविः स्मृतः ॥ ६॥

शृंगी वर्ण का रवि राजाओं के लिए विजय देने वाला, कोश और वाहन की दृष्टि करने वाला होता है। चित्रवर्ण का रवि धान्य का विनाश करता है और भयोत्पादक होता है ॥ ६॥

अस्तंगते यदा सूर्यं चिरं रक्ता वसुन्धरा ।

सर्वलोकभयं विन्द्यात् तदा बृद्धानुशासने ॥ ७॥

जब सूर्य के अस्ति होने पर पृथ्वी बहुत सागर तक रक्तवर्ण की दिखलायी पड़े तो सर्वलोक को भय होता है ॥ ७॥

उदयास्तमने ध्वस्ते यदा च कुरुते रविः ।

महाभयं तदानीके सुभिक्षं क्षेममेव च ॥ ८॥

उदय और अस्तकाल को जब सूर्य ध्वस्त करे तो गेना में महाम् भय होता है तथा सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥ ८॥

एतान्येव तु लिगानि पर्वणां चन्द्र-सूर्ययोः ।

तदा राहुरिति ज्ञेयो चिकारश्च न विद्यते ॥ ९॥

यदि चन्द्रमा और सूर्य के पूर्वकाल—पूर्णमासी या अमावस्या में उक्त चिह्न दिखलायी पड़े तो यह समझना चाहिए, इसमें विकार नहीं होता है ॥ ९॥

शेषमौत्पातिकं प्रोक्तं विधानं भास्करं प्रति ।
ग्रहयुद्धे 'प्रवक्ष्याति सर्वगत्या च साधयेत् ॥२१॥

अब शेष मूर्य का ग्रीतातिक विधान समझना चाहिए। ग्रहयुद्ध का वर्णन करेंगा, उसकी सिद्धि गति आदिग कर लेनी चाहिए ॥२१॥

इति भद्रवाहुविरचिते निमित्तशास्त्र आदित्याचारो नाम
द्वाविशतितमोऽध्यायः ॥२२॥

विवेचन — पूर्वापादा, उत्तरापादा, थ्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अष्टिवनी, अरणी, कृत्तिका, आर्द्धा, पूर्वसू, पृथ्वी, आश्लेषा और मध्या ये 14 नक्षत्र 'चन्द्र नक्षत्र' परं पूर्वाभाद्रपद, शतगिरा, मृगशिरा, रोहिणी, पूर्वार्कालगुनी, उत्तराखालगुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, उत्तराधा और मूल में 13 नक्षत्र 'मूर्य नक्षत्र' विद्वाते हैं। यदि सूर्य नक्षत्रों में चन्द्रमा और चन्द्रनक्षत्रों में सूर्य हो तो वर्षा होती है। चन्द्र नक्षत्रों में यदि सूर्य और चन्द्रमा दोनों हों तो अन्यावृष्टि होती है, किन्तु यदि सूर्य नक्षत्र पर सूर्य-चन्द्रमा दोनों हों तो वृष्टि नहीं होती। सूर्य नक्षत्र पर सूर्य के आगे से वायु चलती है, जिससे वायु-दोष के कारण वर्षा नहीं होती। चन्द्रमा चन्द्र नक्षत्रों पर रहे तो केवल बादल आच्छादित रहते हैं, वर्षा नहीं होती। कर्क संक्रान्ति के दिन रविवार होने से 10 विश्वा, सोमवार होने से 20 विश्वा, मंगलवार होने से 8 विश्वा, बुधवार होने से 12 विश्वा, गुरुवार होने से 18 विश्वा, शुक्रवार होने से भी 18 विश्वा और शनिवार होने से 5 विश्वा वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के दिन शनि, रवि, बुध और मंगलवार होने से अधिक वृष्टि नहीं होती, जिस द्वारा मैं सुवृष्टि होती है। चन्द्रमा के जल-राशि पर स्थित होने पर सूर्य कर्क राशि में आये तो अच्छी वर्षा होती है। मैष, वृष, मिथुन और मीन राशि पर चन्द्रमा के रहते हुए यदि सूर्य कर्क राशि में प्रविष्ट हो तो 100 आढ़क वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के समय धनुष और सिंह राशि पर चन्द्रमा के होने से 50 आढ़क वर्षा होती है। मकर और कन्या राशि पर चन्द्रमा के रहने से 25 आढ़क वर्षा एवं तुला, वृश्चिक, कुम्भ और कर्कराशि पर चन्द्रमा के होने से साढ़े 12 आढ़क प्रमाण वर्षा होती है। कर्कराशि में प्रविष्ट होते हुए सूर्य को यदि वृहस्पति पूर्ण दृष्टि से देखे अथवा तीन चरण दृष्टि से देखे तो अच्छी वर्षा होती है। श्रावण के महीने में यदि कर्क संक्रान्ति के समय मेष खूब छाये हों तो सात महीने तक शुभिध होता है और अच्छी वर्षा होती है। मंगल के दिन सूर्य की कर्क संक्रान्ति और शनिवार की मकर संक्रान्ति

और शनिवार को मकर संक्रान्ति का होना शुभ नहीं है। स्वाति, ज्येष्ठा, भरणी, आद्री, आश्लेषा इन नक्षत्रों के पन्द्रहवें मुहूर्त में मकर राशि या सूर्य के प्रविष्ट होने से अशुभ फल होगा है। पुनर्बंग, विशाखा, रोहिणी और तीनों उत्तरा नक्षत्रों के चीथे या पाँचवें मुहूर्त में सूर्य प्रवेश करे तो शुभ फल होता है। सूर्य की संक्रान्ति के दिन से ग्यारहवें, पच्चीसवें, चीथे या अठारहवें दिन अमावस्या का होना सुभिक्ष मुचक है। यदि पहली संक्रान्ति का नक्षत्र दूसरी संक्रान्ति में आवे तो शुभ फल होता है, किन्तु उस नक्षत्र से दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें नक्षत्र शुभ नहीं होते।

सूर्य की संक्रान्तियों के अनुसार पलादेश मेष की संक्रान्ति के दिन तुला राशि का चन्द्रमा हो तो छः महीने में ध्नात्य की अधिकता करता है। सभी प्रदेशों में सुभिक्ष होता है। वृंदावन और पंजाब में चावल, गेहूं की उपज अधिक होती है। देश के अन्य सभी भागों में भी मोटे धान्यों की उत्पत्ति अधिक होती है। मेष संक्रान्ति प्रातःकाल होने पर शुग, मध्याह्न में होने से निवृष्ट और सन्ध्याकाल में होने से अतिनिवृष्ट फल होता है। मेष संक्रान्ति रात्रि में प्रविष्ट हो तो साधारणतः अशुभ फल होता है। यदि संक्रान्ति काल में अखिली नक्षत्र कूर ग्रहों द्वारा विद्ध हो तो अशुभ फल होता है। रात्रि में अनेक घटकार के उपद्रव होते हैं। दर्द की भी कमी रहती है। मेष संक्रान्ति वर्क संक्रान्ति और मकर संक्रान्ति का फल एक वर्ष तक रहता है। यदि ये तीनों संक्रान्तियाँ अशुभ वार, अशुभ घटियों में आती हैं, तो देश में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। शनिवार को मेष संक्रान्ति पड़ने से जगत् में अशान्ति रहती है। चीन और रूस में अन्न आदि पदार्थों की बहुलता होती है। पर आमतरिक अशान्ति इन राष्ट्रों में भी बनी रहती है।

बृप की संक्रान्ति में वृश्चिक राशि चन्द्रमा के रहने से चार महीने तक अन्न लाभ होता है। सुभिक्ष और शान्ति रहती है। खाद्यान्तों की बहुलता सभी देशों और राष्ट्रों में रहती है। काशी, कन्तीज और विदर्भ में राजनीतिक संघर्ष होता है। बृप की संक्रान्ति बुधवार को होने से श्री के व्यापार में लाभ होता है। शुक्रवार को बृप की संक्रान्ति हो तो रसपदार्थों की महंगी होती है। शनिवार को इस संक्रान्ति के होने से अन्न का भाव तेज होता है। निधुन की संक्रान्ति को धनु का चन्द्रमा हो तो तिर, तैज, अन्न मंग्रह करने से चीथे महीने में लाभ होता है। यदि चन्द्रमा कूर ग्रह सहित हो तो लाभ के स्थान में हानि होती है। कर्क की संक्रान्ति में मकर का चन्द्रमा हो तो दुभिक्ष होता है। इस योग के चार महीने के उपरान्त धनि श्री विर्धन हो जाता है। सभी वी आर्थिक स्थिति विमुक्ती जाती है। देश के उमे-मोने में अन्न की ब्रावश्यकता प्रतीत होती है। जिन राज्यों, प्रदेशों और देशों में अचला अनाज उपजता है, उनमें भी अन्न की कमी हो जाने से अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। कन्या श्री संक्रान्ति होने पर मीन

के चन्द्रमा में छविभंग होता है। उत्तर प्रदेश, बंगाल, घिहार और दिल्ली राज्य में अनेक प्रकार के उपाद्रव होते हैं। बम्बई और मद्रास में अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। तुला की संक्रान्ति में मेष का चन्द्रमा हो तो पाँच महीने में व्यापार में लाभ होता है। अन्न की उपज साधारण होती है। जूट, सूत, कपास और सन की पासल साधारण होती है। अतः इन वस्तुओं के व्यापार में अधिक लाभ होता है। वृश्चिक वी संक्रान्ति में वृषभराशि का चन्द्रमा हो तो तिल, तेल तथा अन्न का संश्रह करना उचित है। इन वस्तुओं के व्यापार में अधिक लाभ होता है। धनु वी संक्रान्ति और मिथुन के चन्द्रमा में पाँच महीने तक अन्न में लाभ होता है। भकर की संक्रान्ति में कर्क का चन्द्रमा हो तो कुलठाओं का विनाश होता है। काशम, धी, सूत में पाँचवें मास में भी लाभ होता है। कुम्भ की संक्रान्ति में भिंह का चन्द्रमा हो तो जीवं महीने में अन्न लाभ होता है। मीन की संक्रान्ति में कब्या का चन्द्रमा होने पर प्रत्येक प्रकार के अनाज में लाभ होता है। अनाज वी कभी भी साधारणतः दिष्यलायी पड़ती है, किन्तु उस कमी को किसी प्रकार पूरा किया जा सकता है। जिस बार वी संक्रान्ति हो, यदि उसी बार में अमावस्या भी पड़ती हो तो यह व्यर्ष योग कहलाता है। यह योग सभी प्रकार के शान्तियों को नष्ट करनेवाला है। यदि प्रथम संक्रान्ति का शनिवार हो, द्वासरी को रविवार, तीसरी को सोमवार, चौथी को मंगलवार, पाँचवीं को बुध, छठी को गुरुवार, गात्री को शुक्रवार, आठवीं को शनिवार, नौवीं को रविवार, दसवीं को सोमवार, श्यारहवीं को मंगलवार और बारहवीं संक्रान्ति को बुधवार हो तो वर्ष योग होता है। इस योग के होने से भी धन-शान्ति और जीव-जन्मुओं का विनाश होता है। यदि वातिक में वृश्चिक की संक्रान्ति रविवारी हो तो श्वेत रंग के पदार्थ महेंग, मैत्रियों में गोग-विपत्ति एवं व्यापारी वर्ष के व्यक्तियों को भी कष्ट होता है। चैत्र मास में मेष वी संक्रान्ति मंगल या शनिवार की हो तो अन्न का भाव नेज, गेहूं, चने, जी आदि समस्त धान्यों का भाव तेज होता है। सूर्य का कूर ग्रहों के साथ रहना, या कूर ग्रहों से विद्ध रहना अथवा कूर ग्रहों के साथ सूर्य का वेद्ध होना, वर्षा, फगल, धान्योत्पत्ति आदि के लिए अशुभ है। सूर्य यदि मृदु गंजक धान्यों का भोग कर रहा हो, उस समय किसी शुभ ग्रह की दृष्टि सूर्य पर हो तो, इस प्रकार की संक्रान्ति जगत् में उथल-उथल करती है। सुभिता और वर्षा के लिए यह योग उत्तम है। यद्यपि संक्रान्ति मात्र के विचार में उनमें इस नहीं भट्टा है, अतः ग्रहों का सभी दृष्टियों से विचार करना आवश्यक है।

लयोविशतितमोऽध्यायः

मासे-मासे समुत्थानं चन्द्रं योऽपश्येत् बुद्धिमान् ।

वर्ण-संस्थानं रात्रौ तु ततो लूप्यात् शुभाशुभम् ॥1॥

जो बुद्धिमान् व्यक्ति रात्रि में प्रत्येक भूमीने में चन्द्रमा के वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदि का दर्शन करता है, उसके लिए शुभाशुभ का निरूपण करता है ॥1॥

स्तिरधः श्वेतो विशालश्च पवित्रश्चन्द्रः शस्यते ।

किञ्चिद्दुत्तरशृङ्खश्च दस्यून् हन्यात् प्रदक्षिणम् ॥2॥

स्तिरधः, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा प्रणीति—अच्छा माना जाता है । यदि चन्द्रगा का शृंग—विनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ हो तो }
दस्युओं का घात करता है ॥2॥

अश्मकान् भरतानुडान् काशि-कलिगमालवान् ।

दक्षिणदीपवासांश्च हन्यादुत्तरशृङ्खवान् ॥3॥

उत्तर शृंगवाला चन्द्रमा अश्मक, भरत, डड़, काशी, कलिग, मालव और दक्षिणदीपवासियों का घात करता है ॥3॥

क्षत्रियान् यवनान् वाल्मीन् हिमवच्छृङ्खमारिथतान् ।

युगन्धर-कुरुन् हन्याद् ब्राह्मणान् दक्षिणोद्धतः ॥4॥

दक्षिणोन्नतशृंग चन्द्र क्षत्रिय, यवन, वाल्मीकि, हिमाचल के निवासी, युगन्धर और कुरु निवासियों तथा ब्राह्मणों का घात करता है ॥4॥

भस्माभो निप्रभो रूक्षः श्वेतशृङ्खोऽतिसंस्थितः ।

चन्द्रमा न प्रशस्येत् सर्ववर्णभयंकरः ॥5॥

भस्म के समान आभा वाला, निप्रभ, रूक्ष, श्वेत और अतिउन्नत शृंगवाला }
चन्द्रमा प्रणीत्य नहीं है; क्योंकि यह गभी वर्ण वालों को भय उत्पन्न करता है ॥5॥

शब्रान् दण्डकानुडान् मद्रांश्च द्रविडांस्तथा ।

शद्रान् महासनान् वृत्यान् समस्तान् सिन्धुसागरान् ॥6॥

आनल्लान्मलकीरांश्च कोंकणान् प्रलयस्त्रिनः ।

“रोमवृत्तान् पुलिन्द्रांश्च मारुश्वभ्रं च कच्छजान् ॥7॥

**प्रथेण हिसते देशानेतान् स्थूलस्तु चन्द्रमा: ।
समे शृंगे च विद्वेष्टी तथा यात्रो न योजयेत् ॥8॥**

स्थूल चन्द्रमा जवर, दण्डक, उड़, मन्त्र, द्रविड, शूद्र, महासन, वृत्य, सभी समुद्र, आनन्द, मलकीर, कोंकण, प्रलयम्बिन, रोभवृत्त, पुलिन्द, महभूमि और कच्छ आदि देशों का घात करता है। यदि चन्द्रमा का समान शृंग हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥6-8॥

**चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी विवर्णो विकृतः शशी ।
यदा मध्येन वा पाति वर्षिणी शुक्लित मालवम् ॥9॥**

जब चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी तिथि को चन्द्रमा विकृत, वदरंग दिखलाई पड़े अथवा वह मध्य से गमन करता हो तो गालव नृप का विनाश करता है ॥9॥

**काञ्ची किरातान् द्विमिलान् शाक्यान् लुद्धास्तु सप्तमी ।
कुमारं युवराजच्च चन्द्रो हन्यात् तथाऽष्टमी ॥10॥**

गप्तमी और अष्टमी का विकृत चन्द्रमा कांधी, किरात, द्विमिल, शाक्य, लुद्धा एवं कुमार और युवराजों का विनाश करता है ॥10॥

**नवमी सन्त्रिणश्चौरान् अध्वगान् वरसन्निभान् ।
दशमी स्थविरान् हन्यात् तथा वै पार्थिवान् प्रियान् ॥11॥**

नवमी का विकृत चन्द्रमा मन्त्री, चोर, पथिक और अन्य श्रेष्ठ लोगों का तथा दशमी का विकृत चन्द्र स्थविर राजा और उनके प्रियों का विनाश करता है ॥11॥

**एकादशी भयं कुर्यात् ग्रामीणांश्च तथा गवाम् ।
द्वादशी राजपुरुषांश्च वस्त्रं सस्थं च पौडयेत् ॥12॥**

एकादशी का विकृत चन्द्रमा ग्रामीण और गायों को भय करता है तथा द्वादशी का चन्द्रमा राजपुरुष—राजकर्मचारी, वस्त्र और अनाज का घात करता है ॥12॥

**त्रयोदशी-चतुर्दश्योर्भयं शश्वतं च मूर्च्छति ।
संग्रामः संभ्रमश्चैव जायते वर्णसंकरः ॥13॥**

त्रयोदशी और चतुर्दशी का विकृत चन्द्रमा भयोत्पादक, शम्तकोप और मूर्च्छा करता है। संग्राम—युद्ध और आकुलता व्याप्त होती है और वर्णसंकर पैदा होता है ॥13॥

नूपा भूत्येविरुद्ध्यन्ते राष्ट्रं चौरैविलुण्ठयते ।
पूर्णिमायां हते चन्द्रे क्रक्षे वा विकृतप्रभे ॥14॥

पूर्णिमा में चन्द्रमा द्वारा घात नक्षत्र पर चन्द्रमा के स्थित होने पर अथवा विकृत प्रभा वाले चन्द्रमा के होने पर राजा और सेवकों में विरोध होता है तथा चोरों के द्वारा राष्ट्र लूटा जाता है ॥14॥

हृस्वो रुक्षश्च चन्द्रश्च इयामश्चापि भयावहः ।
सिंहश्च शुक्रोऽहम्^१ दीक्षांश्चत्तो नक्षावृद्धये ॥15॥

हृस्व, रुक्ष और काला चन्द्र अर्योत्पादक है तथा सिंह, शुक्र और सुन्दर चन्द्र मुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक होता है ॥15॥

श्वेतः पीतश्च रक्तश्च कृष्णश्चापि यथाक्रमम् ।
सुवर्णसुखदशचन्द्रे विपरीतो भयावहः ॥16॥

श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण त्रायामादि चारों वर्णों के निए सुखद यथाक्रम होता है और सुवर्ण - गुरुदर चन्द्र सभी के निए सुखद है । इसके विपरीत चन्द्र भयावह होता है ॥16॥

चन्द्रे प्रतिपदि योऽन्यो ग्रहः प्रविशतेऽसुभः ।
संग्रामो जायते तत्र सप्तराष्ट्रविनाशनः ॥17॥

यदि प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा में अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो गर्यकर संग्राम होता है तथा सप्त राष्ट्रों का विनाश होता है ॥17॥

द्वितीयायां तृतीयायां गर्भनाशापि कल्पते ।
चतुर्थीं च सुधाती च मन्दवृष्टिश्च विद्येत् ॥18॥

यदि द्वितीया, तृतीया तिथि को चन्द्रमा में अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो गर्भनाश करते वाला होता है । चतुर्थी तिथि में प्रवेश करे तो नात और मन्दवृष्टि करने वाला होता है ॥18॥

पञ्चम्यां ब्राह्मणान्^२ सिद्धान् दीक्षितांश्चापि पीडयेत् ।
यवनाय धर्मभ्रष्टाय षष्ठ्यां पीडां ब्रजन्त्यतः ॥19॥

पञ्चमी तिथि में चन्द्रमा में कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो ब्राह्मण, सिद्ध और दीक्षितों को पीड़ा तथा पठ्ठी तिथि में कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो धर्म-भ्रष्ट, यवन आदि को बाष्ट होता है ॥19॥

'महाजनाश्च पीड्यन्ते क्षिप्रमैक्षुरकास्तथा ।

ईतयश्चापि जगन्ते सप्तम्यां सोमपीडने ॥20॥

सप्तमी तिथि को चन्द्रमा के आतित होने पर महाधनिक, नाई, घोवी, कृषक आदि को पीड़ा होती है और ईतिवी-वीमारियाँ उत्पन्न होती हैं ॥20॥

विवर्णप्रवृष्टश्चन्द्रः सत्रीणां राजा निषेवते ।

कपिलोऽपि दक्षिणे मार्गे विन्द्यादग्निभयं तथा² ॥21॥

किसी अन्य अशुभ ग्रह द्वारा निहर्ण जीर परु), इत्यो—रोहिणी आदि का राजा पति—चन्द्रमा सेवन किया जाय तथा कपिल पिग्नवर्ण का चन्द्रमा दक्षिण मार्ग में भी दिखलायी पड़े तो अग्निभय होता है ॥21॥

सन्ध्यायां कृत्तिकां ज्येष्ठां रोहिणीं पितृदेवताम् ।

चित्रां विशाखां मैत्रं च चरेद् दक्षिणतः शशी ॥22॥

सन्ध्या में कृत्तिका, ज्येष्ठा, रोहिणी, मधा, चित्रा, विशाखा और ब्रनुराधा का चन्द्रमा दक्षिण मार्ग से विचरण करता है ॥22॥

सर्वभूतभयं विन्द्यात् तथा³ घोरं तु मासिकम् ।

सस्यं वर्षं वर्धयते चन्द्रस्तद्वद् विपर्ययात् ॥23॥

चन्द्रमा के विपर्यय होने पर समस्त प्राणियों को भय होता है तथा धन्य और वर्षा की वृद्धि होती है ॥23॥

रेवती-पुष्ययोः सोमः श्रीमानुत्तरगो यदा ।

महावर्षीण कल्पन्ते तदा कृतयुगे यथा ॥24॥

जब चन्द्रमा रेवती और पुष्य नक्षत्र में उत्तर दिशा में गमन करता है, उस समय कृतयुग के समान महावर्ष होते हैं ॥24॥

गोवीथोमजवीथो वा वैश्वानरपर्थं तथा ।

विवर्णः सेवते चन्द्रस् 'तदाऽल्पमुदकं भवेत् ॥25॥

जब विवर्ण चन्द्रमा गोवीथि, अजवीथि या वैश्वानर पक्ष में गमन करता है, तब अल्प जल-नृट्टि होती है ॥25॥

गजवीथ्यां नागवीथ्यां सुभिक्षं क्षेमसेव च ।

सुप्रभे प्रकृतिस्थे च महावर्षं च निरिशेत् ॥26॥

1. महाधनाश्व ॥ 2. नदा गुरु ॥ 3. क्षमा गुरु ॥ 4. गदा गुरु ॥

जब सूप्रभ प्रकृतिस्थ चन्द्रमा गजबीयि, नागबीयि में गमन करता है, तब सुभिक, कल्याण और महावर्षी होती है ॥26॥

वैश्वानरपर्थं प्राप्ते चतुरङ्गस्तु दृश्यते ।
सोमो विनाशकूल्लोके तदा वाऽग्निभयङ्कुरः ॥27॥

जब चनुरंग चन्द्रमा वैश्वानर पथ में गमन करता हुआ दिखलायी पड़ता है तब लोक का विनाश होता है अथवा भयंकर अग्नि का प्रकोप होता है ॥27॥

अजबीथीभागते चन्द्रे क्षुत्तष्मिनभयं नृणाम् ।
विवर्णो हीनरशिष्वर्दा भद्रबाहुवचो यथा ॥28॥

विवर्ण या हीन रशिष्वाला चन्द्रमा अजबीयि में गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तो मनुष्यों को क्षुधा, तूफा और अग्नि का भय रहता है। ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥28॥

गोवीथ्यां नागबीथ्यां च चतुर्थीं दृश्यते शशी ।
रोगशस्त्राणि वैराणि वर्षस्य च विवर्धयेत् ॥29॥

जब चन्द्रमा चनुर्थी तिथि में गोवीयि या नागबीयि में गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तब उस वर्ष रोग, अस्त्र और ग्रन्थुता वृद्धिगत होती है ॥29॥

एरावणे चतुर्प्रस्थो महावर्षं स उच्यते ।
चन्द्रः प्रकृतिसम्पत्तः सुरश्मः श्रीरिवोज्ज्वलः ॥30॥

यदि चन्द्रमा प्रकृति सम्पत्ति, गुन्दर किरण वाला, गुन्दर श्री के गमन उज्ज्वल चनुरप्यथ ग्रन्थवत् भाग में दिखलाई पड़े तो वह महावर्ष होता है ॥30॥

श्यामच्छिद्रश्च पक्षादौ यदा दृश्यते यः सितः ।
चन्द्रमा रीरवं घोरं नृपाणां कुरुते तदा ॥31॥

जब चन्द्रमा काला और छिद्र गुक्त प्रथम पक्ष—कृष्ण पक्ष में दिखलायी पड़े तो उस सगय मनुष्यों में घोर मंथर्ष होता है ॥31॥

धनुषा यदि तुल्यः स्यात् पक्षादौ दृश्यते शशी ।
द्वूयात् पराजयं पृष्ठे युद्धं² चैव विनिदिशेत् ॥32॥

यदि प्रथम पक्ष में चन्द्रमा धनुष के तुल्य दिखलायी पड़े तो पराजय होती है }
और पीछे गुद्ध होता है ॥32॥

वैश्वानरपथेऽष्टम्यां तिर्यक् स्थो वा भयं वदेत्¹ ।
परस्परं विरुद्ध्यन्ते नृषाः प्रायः सुचर्चसः ॥33॥

यदि अष्टमी तिथि को वैश्वानर मार्ग में तिर्यक् चन्द्रमा हो तो शक्तिशाली, तेजस्वी राजाओं में युद्ध होता है ॥33॥

दक्षिणं मार्गमाश्रित्य वध्यन्ते प्रवरा नराः ।
चन्द्रस्तूत्तरमार्गस्थः क्षेम-सौभिकारकः ॥34॥

यदि चन्द्रमा दक्षिण मार्ग में हो तो बड़े-बड़े व्यवित्तयों का वध होता है, और उत्तर मार्ग में स्थित रहने वाला चन्द्रमा क्षेम और सुभिका करने वाला होता है ॥34॥

चन्द्रसूर्यो विशृङ्खो तु मध्यच्छिद्रो हृतप्रभो ।
युगान्तामव कुवन्तो तदा यात्रा न लिदृश्यति² ॥35॥

चन्द्रमा और सूर्य विगत शृंग, मध्य छिद्र, कान्ति रहित हो तो युगान्त—प्रलय के समान—कार्य करते हैं, उस समय यात्रा अच्छी नहीं मानी जाती है ॥35॥

अदैकनक्षत्र-गतो कुर्यात् तद्वर्णसंकरम् ।
विनाशं तत्र जानीयाद् विपरीते जयं वदेत् ॥36॥

एक नक्षत्र पर स्थित होकर जहाँ सूर्य और चन्द्र वर्णसंकर—वर्णमिश्वण करें, वहाँ विनाश समझना चाहिए । विपरीत होने पर जय होती है ॥36॥

बहुवोदयको बाऽथ ततो भयप्रदो भवेत् ।
मन्दधाते फलं मन्दं मध्यमं मध्यमेत् तु ॥37॥

शीघ्र उदय को प्राप्त होने वाला चन्द्रपा भयप्रद होता है । मन्दपात होने पर मन्दफल और मध्यम में मध्यमफल होता है ॥37॥

चन्द्रमाः सर्वधातेन रात्रुराज्यभ्यकरः ।
तथापि नागरान् हम्यात् यदा ग्रहसमागमे ॥38॥

सर्वधात के द्वारा चन्द्रमा सम्पूर्ण रात्रि और गजयों के लिए भ्यकर होता है । जब चन्द्रमा अन्य ग्रह के साथ समागम करता है तो नागरिकों का विनाश करता है ॥38॥

नागराणां तदा भेदो विज्ञयस्तु पराजयः ।
यायिनामपि विजेयं यदा युद्धं परस्परम् ॥39॥

1. भवेत् यु । 2. शस्यत गु । 3. गद्यम् । 4. गोप्यजाश्व गु ।

जब चन्द्रमा का अन्य किसी ग्रह के साथ युद्ध होता है, तब नागरिकों में परस्पर फूट रहती है और यायियों—आक्रमिकों की पराजय होती है ॥39॥

भर्गवः^१ गुरवः प्राप्तो पुष्ट्यभिश्चत्रया सह ।

शक्त्य चापरूपं च अह्माणसदृशं फलम् ॥40॥

यदि इन्द्रधनुष के समान सुन्दर चन्द्रमा पृथ्य और चित्रा नक्षत्र के साथ शुक्र और गुरु—वृहस्पति को ग्राप्त करे तो ब्राह्मण रादृश फल होता है ॥40॥

क्षत्रियाश्च भूवि स्याताः कौशास्वी दंवत्तान्यपि^३ ।

पीड्यन्ते तद्भवताश्च लड्यामाश्च गुरोर्बध ॥41॥

उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति में भूगि में प्रसिद्ध कीणाम्बी आदि अवियतथा उनके भक्त पीड़ित होते हैं और युद्ध होते हैं जिससे गुरुजनों की हिंसा होती है ॥41॥

पश्वः पक्षिणोः वैद्या महिषाः शबराः शकाः ।

सिहला द्रामिलाः काचा बन्धुकाः पह्लवा नृपाः ॥42॥

पुलिन्द्राः कोंकणा भोजाः कुरवो दस्यवः क्षमाः ।

शनैश्चरस्य बातेन पीड्यन्ते यज्ञनः सह ॥43॥

चन्द्रमा के द्वारा शनि के गातित होने से १. जु, पक्षी, वैद्य, महिषा—भैंस, शबर, शक, सिहल, द्रामिल, काच, बन्धुक, पह्लव नृप, पुलिन्द्र, कोंकण, भोज, कुरु दस्यु, शनि आदि प्रदेशवासी यज्ञनों च साथ पीड़ित होते हैं ॥42-43॥

यस्य यस्य च नक्षत्रमेकशो द्वन्द्वशोऽपि वा ।

ग्रहा वामं प्रकुर्वन्ति तं तं हिस्ति सबंशः ॥44॥

जिस-जिस नक्षत्र की ओर आ ग्रह या दो-दो ग्रह वाम—बायीं ओर करे, उस-उस नक्षत्र का घात गभी ओर से करने हैं ॥44॥

जन्मनक्षत्रघातेऽथ राज्ञो यात्रान् सिद्ध्यति ।

नागरेण हृतश्चाल्पः स्वपक्षाय त ये भवेत् ॥45॥

यदि कोई राजा जन्मनक्षत्र के घातित होने पर यात्रा करे तो उसकी यात्रा सफल नहीं होती है। जो नगरवासी स्वपक्ष में नहीं होने हैं, उनके द्वारा अलापात होता है ॥45॥

1. स्यावरा मृ० । 2. ग्राहनीं गुरुभद्रशाप मृ० । 3. इतता अग्नि मृ० ।

राजा १चावनिजा गर्भि नागरा दार्जीवितः ।
गोपा गोजीविनश्चापि धनुस्सङ्घामजीविनः ॥४६॥

तिला: कुलस्था माषाश्च मरणा मुद्गाश्चतुष्पदाः ।
पीड्यन्ते बुधघातेन स्थावरं पश्च किञ्चन ॥४७॥

चन्द्रमा के द्वारा बुध के घातित होने से यजा, खान से आजीविका करने वाले, नागरिक, काण्ठ में आजीविका करने वाले, गोप, गायों से आजीविका करने वाले, धनुप और सेना से आजीविका करने वाले, तिल, कुलथी, उड़द, मूँग, चतुष्पद और स्थावर पीड़ित होते हैं ॥४६-४७॥

कनकं भणयो रत्नं शकाश्च पश्चवास्तथा ।
गुञ्जरा^२ पह्लवा मुख्याः क्षत्रिया मन्त्रिणो बलम् ॥४८॥
स्थावरस्य वन्तोकाकुनये सिहला नृपाः ।
वणिजां वनशाख्यं च पीड्यन्ते सूर्यघातने ॥४९॥

सूर्य के घात ये कनक—सेना, भणि, रत्न, शक, धन्त, गुहार, पह्लव आदि भुख्य क्षत्रिय, मन्त्री, सेना, स्थावरों के अन्तर्गत सिहल, वणिज और वनशाखा वाले पीड़ित होते हैं ॥४८-४९॥

पीरिया: शूरसेनाश्च शका बाह्लीकदेशजाः ।
मत्स्याः कच्छाश्च वस्याश्च सौबोरा गन्धिजास्तथा^३ ॥५०॥
पीड्यन्ते केनुघातेन थे च सत्त्वास्तथाथयाः ।
निर्धाता पापवर्षी वा विज्ञेयं बहुशास्तथा ॥५१॥

केनु घात द्वारा पुराणी, शूरमेन, शक, बाह्लीक, मत्स्य, कच्छ, वस्य, सौबोर गन्धिज आदि देश वाले पीड़ित होते हैं तथा यह अनेक प्रकार गे संवर्षेमय पाप वर्ष रहता है ॥५०-५१॥

पाण्ड्याः केरलाश्चोलाः सिहलाः साविकास्तथा ।
कुनपास्ते तथादश्च मूलका वनवासकाः ॥५२॥
किञ्चिकन्धाश्च कुनाटाश्च प्रत्यग्राश्च वनेचराः ।
रक्तपुष्पफलाश्चैव रोहिण्यां सूर्य-चन्द्रयोः ॥५३॥

पाण्ड्य, केरल, ओल, सिहल, साविक, कुनप, विदर्भ, वनवासी, किञ्चिकन्धा, कुनाट, वनचर, अनपुणी और फल आदि विशृङ्खल मूर्य और चन्द्र के संयुक्त होने से

1. या चावनिजा मृ० 2. गुहारा मृ० 3. सौभिरास्तथा

Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पीड़ित होते हैं ॥५२-५३॥

एवं च जायते सर्वं करोति विकृति यदा ।
तदा प्रजा विनश्यन्ति दुष्मिक्षेण भयेन च ॥५४॥

इस प्रकार चन्द्रमा के विकृत होने से दुष्मिक्ष और भय द्वारा प्रजा का विनाश होता है ॥५४॥

अर्धमासं यदा चन्द्रे^१ ग्रहा यान्ति विदक्षिणम् ।
तदा चन्द्रो जये कुर्वन्नागरस्य महीपतेः ॥५५॥

जब चन्द्रमा आये महीने —ग्रह दिन का हो और उस रामय अन्य ग्रह दक्षिण की ओर गमन करते हों तो चन्द्रमा नाशकिन और राजा को विजय देता है ॥५५॥

हीयमाने यदा चन्द्रं ग्रहाः कुर्वन्ति वामतः ।
तदा विजयमाल्यान्ति नागरस्य महीपतेः ॥५६॥

जब चन्द्रमा धीण हो रहा हो - क्षण पक्ष में ग्रह चन्द्रमा को बायी और करते हों तो नाशकिक और राजा को विजय होती है ॥५६॥

गति-सागर्कृति-वर्णमण्डलान्यपि वीथयः ।

चारं नक्षत्रचारांश्च ग्रहाणां शुक्रवद् विदुः ॥५७॥

ग्रहों की गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार और नक्षत्र चार आदि शुक्र के समान समझाना चाहिए ॥५७॥

चन्द्रस्य चारं चरतोऽन्तरिक्षे सुचारदुश्चारसमं प्रचारम् ।

चर्याधुतः लेचरसुप्रणीतं यो वेद भिक्षुः स चरेत्नपाणाम् ॥५८॥

चन्द्रमा के आनाज में विचरण करने पर मुच्चार और दुश्चार दोनों होते हैं । जो भिक्षु प्रसन्नतागुक्त चन्द्रमा की चर्या को जानता है, वह मिश्रु राजाओं के मध्य में विहार करता है ॥५८॥

इति नैर्गच्छं भद्रवाहुके निमित्ते चन्द्रचार संज्ञो नाम त्रयोदिशोऽध्यायः ॥२३॥

विवेचन - अंगठा, मूल, गूचिंदा और उत्तराधा नक्षत्र के दाहिने भाग में चन्द्रमा होते हों तो दीज, जल और धन की हानि होती है । अग्निभय विषेष उत्पन्न होता है । जब विशाखा और अलुराधा नक्षत्र के दायें भाय में चन्द्रमा रहता

है तब पाप चन्द्रमा कहलाता है। पाप चन्द्रमा जगत् में भय उत्पन्न करता है, परन्तु विशाखा, अनुराधा और भूषा नक्षत्र के मध्य भाग में चन्द्रमा के रहने से शुभ फल होता है। रेक्ती से लेकर मृगशिरा तक छ नक्षत्र अनागत होकर मिलते हैं, आद्री से लेकर अनुराधा तक बारह नक्षत्र मध्य भाग में चन्द्रमा के साथ मिलते हैं तथा ज्येष्ठा से लेकर उत्तराभाद्रपद तक नौ नक्षत्र अतिशास्त्र होकर चन्द्रमा के साथ मिलते हैं। यदि चन्द्रमा का शूण्य कुछ ऊँचा होकर नाव के समान विशालता को प्राप्त करे तो नाविकों को कष्ट होता है। आधे उठे हुए चन्द्रमा शूण्य की लांगल कहते हैं, उससे हलजीवी मनुष्यों को पीड़ा होती है। प्रवन्धकों, शासकों और नेताओं में परस्पर मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा देश में सुभिता होता है। चन्द्रमा का शूण्य शूण्य आधा उठा हुआ हो तो उसे दुष्ट लांगल शूण्य कहते हैं, इसका फल पापद्य, चैर, लौल आदि राज्यों में पारस्परिक अनेक व्य होता है। इस प्रकार के शूण्य के दर्शन से वर्षा ऋतु में जलाभाव होता है तथा शीत्य ऋतु में सन्तान होता है।

यदि सामान भाव से चन्द्रमा जा उदय हो तो पहले दिन की तरह सर्वशुभिता, आनन्द, आपोद-प्रभोद, वर्षी, हर्ष आदि होते हैं। दण्ड के समान चन्द्रमा के उदय होने पर गाय, बैलों को पीड़ा होती है और गाजा लोग उग्र दण्डधारी होते हैं। यदि धनुष के आकार का चन्द्रमा उदय हो तो युद्ध होता है, परन्तु जिस ओर उस धनुष की मौर्ची रहती है, उस देश की जय होती है। यदि पदशूण्य दक्षिण और उत्तर में फैला हुआ हो तो भूकम्प, महामारी आदि फल उत्पन्न होते हैं। कृषि के लिए उका प्रकार का चन्द्रमा अच्छा नहीं माना गया है। जिस चन्द्रमा का शूण्य नीचे को मुख लिये हुए हो उसे आवतित शूण्य कहते हैं, इससे मवेशी की कष्ट होता है। घास की उत्तरानि कम होती है तथा हरे चारे ता भी अभाव रहता है। यदि चन्द्रमण्डल के चारों ओर अखण्डित गोनाकार रेखा दिखलायी दे तो 'कुण्ड' नामक शूण्य होता है। इस प्रकार के शूण्य से देश में अशान्ति फैलती है तथा नागा प्रकार के उपद्रव होते हैं। यदि चन्द्रमा का शूण्य उत्तर दिशा की ओर कुछ ऊँचा हो तो ध्रान्य की वृद्धि होती है, वर्षी भी उत्तम होती है। दक्षिण की ओर शूण्य के कुछ ऊँचे रहने से वर्षा का अभाव, ध्रान्य की कमी एवं नाना तरह की वीभारियाँ फैलती हैं।

एक शूण्य वाला, नीचे की ओर गुम्बज वाला, शूण्यहीन अथवा सम्पूर्ण नये प्रकार का चन्द्रमा देखने से देखने वालों में से किसी की मृत्यु होती है। वैयक्तिक दृष्टि से भी उक्त प्रकार के चन्द्रमा का देखना अनिष्टकार माना जाता है। यदि आकार से छोटा चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो दुष्मिक, मृत्यु, रोग आदि अनिष्ट फल घटते हैं तथा बड़ा चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो सुभिता होता है। मध्यम आकार के चन्द्रमा के उदय होने से प्राणियों की धूधा की ब्रेदना सहन करनी पड़ती है। राजाओं,

प्रशासकों एवं अन्य अधिकारियों में अनेक प्रकार के उपद्रव होने से संघर्ष होता रहता है। देश में अगान्ति होती है, तथा नये-नये प्रकार के झगड़े उत्पन्न होते हैं। चन्द्रमा की आड़ति विशाल हो तो धनिकों के यहाँ जल्मी यी वृद्धि, स्थूल हो तो गुभिक, रमणीय हो तो उत्तम धान्य उपजते हैं। यदि चन्द्रमा के शूँग को मंगल ग्रह साड़ित करता हो तो कुत्सित राजनीतिज्ञों का विनाश, येष्ट वर्षा, पर फसल की उत्पत्ति का अभाव और यदि ग्रह के द्वारा चन्द्रशूँग आहत हो तो शस्त्रभय और धुधा का भय होता है। बुध द्वारा चन्द्रमा के शूँग को आहत होने पर अनावृष्टि, दुभिक एवं अनेक प्रकार के संकट आते हैं। शुक्र द्वारा चन्द्रशूँग का गेदन होने से छोटे दर्जे के ग्रासन अधिकारियों में वैमनस्य, धृष्टाचार और अनीति का सामना करना पड़ता है। जब गुरु द्वारा चन्द्रशूँग छिन्न होता है, तब तिगी महान् नेता की मृत्यु या विष्व के फिसी बड़े राजनीतिज्ञ भी मृत्यु होती है।

क्लेण पक्ष में चन्द्रशूँग का ग्रहों द्वारा पीड़ित हो तो मगध, यवन, पुनिक, नेपाल, मर, कर्ण, मूरत, मद्रास, पंजाब, वाराण्सी, कुलूत, पुर्णानन्द और उणीन र प्रदेश में सात महीनों तक रोग व्याप्त रहता है। शुक्र पक्ष में वहाँ द्वारा चन्द्रशूँग का छिन्न होना अधिक ग्रंथुभ नहीं होता है।

यदि नुध द्वारा चन्द्रमा का गेदन होता हो तो भग्ध, मधुरा और वेणा नदी के किनारे वसे हुए देशों की पीड़ा होती है। केतु द्वारा चन्द्रमा पीड़ित होता हो तो अमंगल, व्याधि, दुभिक और ग्रस्त से आर्जाविका करनेवालों का विनाश होता है। चोरों को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। यहूधा केतु से ग्रस्त चन्द्रमा के ऊपर उल्का गिरे तो अगान्ति रहती है। यदि भस्मतुल्य रुखा, अरुणवर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ज, कम्पायमान चन्द्रमा दिखलाई दे तो धुधा, संग्राम, रोगोत्पत्ति, चोरभय और ग्रस्तभय आदि होते हैं। कुमुद, मृणाल और हार के समान शुभ्रवर्ण होकर चन्द्रमा नियमानुसार प्रतिदिन घटता-बढ़ता है तो सुभिक, शान्ति और सुवृष्टि होती है। प्रजा आनन्द के साथ रहती है तथा सन्तानों का विनाश होकर पूर्णतया जाना जाती है।

द्वादश राशियों के अनुसार चन्द्ररस्ता—मेरे राशि में चन्द्रमा वे रहने से राशी धान्य महेंग; वृष में चन्द्रमा के होने से चना तेज, मनुष्यों की मृत्यु और चोरभय; मिथुन में चन्द्रमा के रहने से बीज बोने में गफलता, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; कर्क में चन्द्रमा के रहने से वर्षा; सिंह में रहने से धान्य का भाव महेंगा; वान्या में रहने से खण्डवृष्टि, सभी धान्य मस्ते; तुला में चन्द्रमा के रहने से थोड़ी वर्षा, देशभंग और मार्गभय; वृश्चिक में चन्द्रमा के रहने से मध्यग वर्षा, ग्रामनाश, उपद्रव, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; ध्रुव राशि में चन्द्रमा के रहने से उत्तम वर्षा, मुभिक और शान्ति; मकर राशि में चन्द्रमा के रहने से धान्यनाश, फसल में नाना प्रकार के रोग, मुसां-टिङ्ही आदि का भय; कुम्भ राशि में चन्द्रमा के रहने से अल्प

वर्षा, धान्य का भाव तेज, प्रजा में भय एवं मीन राशि में चन्द्रमा के रहने से सुख-सम्पत्ति और सभी प्रकार के अनाज सरते होते हैं। वैशाख या ज्येष्ठ में चन्द्रमा का उदय उत्तर की ओर होते होते सभी प्रकार के धान्य सरते होते हैं। मैघ का उदय एवं वर्षण उत्तर में होता है।

ज्येष्ठ मास की शुक्रवाहन पक्ष की प्रतिपदा को सूर्यस्ति के समय ही चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो वर्ष पर्वत सुभिक्ष रहता है। चन्द्रमा का शूग उत्तर की ओर होतो सुभिक्ष और दक्षिण की ओर होने में दुर्भिक्ष तथा मध्य का रहने से मध्यम फल देनेवाला होता है। कृतिका, अनुराधा, उयोग्या, चित्रा, रोहिणी, मधा, मृग-शिर, मूल, पूर्वपिंडा, विशाखा ये नक्षत्र चन्द्रमा के उत्तर मार्ग वाले कहलाते हैं। जब चन्द्रमा अपने उत्तर मार्ग में गमन शुरू होता है तो सुभिक्ष, सुवर्षा, ज्ञान्ति, प्रेम, और सोन्दर्य का प्रसार होता है। जनता में धर्मचिरण का भी प्रसार होता है। दक्षिण मार्ग में चन्द्रमा का विचरण करना अशुभ माना जाता है। शुक्रवाहन की द्वितीया के दिन मेष राशि में चन्द्रमा का उदय हो तो श्रीष्टम में धान्य भाव तेज होता है।

वृष में उदय होने से उड़द, तिल, मूँग, अगूर आदि का भाव तेज होता है। निथुन में कपास, सूत, जूट आदि का भाव महेंगा होता है। कर्क राशि के होने से अनावृष्टि, तथा कहीं-कहीं शूण्डवृष्टि; सिंह राशि में चन्द्रमा के उदय होने से धान्य भाव तेज होता है। सोना-चाँदी आदि का भाव भी महेंगा होता है। कन्या में चन्द्रमा का उदय होने से पश्चिमों का विनाश, राजनीतिक गार्टियों में मतभेद, संघर्ष होता है। तुला राशि के चन्द्रमा में उदय होने से व्याधि, व्यापारियों में विरोध वृश्चिक राशि के चन्द्रमा में धान्य की उत्पत्ति, धनु और मकर में चन्द्रमा का उदय होने से दानव वाले अनाज का भाव महेंगा तुम्भ राशि में चन्द्रमा का उदय होने से तिल, तेज, तिलहन, उड़द, मूँग, मटर आदि पदार्थों का भाव तेज और मीन राशि में चन्द्रमा के उदय होने से सुभिक्ष, आरोग्य, क्षेम और समृद्धि होती है।

उदय काल में प्रकाशमान, उज्ज्वल चन्द्रमा दर्शक और राष्ट्र की शक्ति का विकास करता है। पर्दि उदयकाल में चन्द्रमा रक्तवर्ण का मन्द प्रकाश युक्त मालूम पड़े तो धन-धान्य का अभाव होता है।

चतुर्विंशतितमोऽध्यायः

अथातः संप्रदक्षयामि ग्रहयुद्धं यथा तथा ।

जन्तूनां जायते^१ येन तूर्णं जय-पराजयो ॥१॥

अब ग्रहयुद्ध का वर्णन करता है। इसके द्वारा प्राणियों की जय-पराजय का जान होता है ॥१॥

गुरुः सौरश्च नक्षत्रं बुधार्कश्चैव नागराः ।

केतुरंगारकः सोलो राहुः शुक्रश्च यायिनः ॥२॥

गुरु, शनि, बुध और गुरुं नागर संज्ञा एवं केतु, अंगारक, चन्द्र, राहु और शुक्र यायी संज्ञक हैं ॥२॥

श्वेतः पाण्डुश्च पीतश्च कपिलः पद्मलोहितः ।

वर्णस्तु नागरा ज्येया ग्रहयुद्धे विपश्चित्तैः ॥३॥

ग्रहयुद्ध में श्वेत, पाण्डु, पीत, कपिल, लोहितवर्ण भनीयियों द्वारा नागरिक संज्ञक जानना चाहिए ॥३॥

कृष्णो नीलश्च श्यामश्च कपोतो भस्मसन्निभः ।

वर्णस्तु यायिनोऽ ज्येया ग्रहयुद्धे विपश्चित्तैः ॥४॥

कृष्ण, नील, श्याम, कपोत और भस्म के गमन वर्ण ग्रहयुद्ध में विद्वानों द्वारा यायी कहे गये हैं ॥४॥

उल्का ताराऽशनिश्चैव^२ विद्युतोऽश्राणि मारुतः ।

विमिश्रको^३ गणो ज्येयो वधायैव^४ शुभाशुभे ॥५॥

गृहयुद्ध द्वारा शुभाशुभ अवगत करने में उल्का, तारा, अशनि, धिष्ण, विद्युत्, अश्र और मारुत को निधयोणक जानना चाहिए। उल्का, तारा, अशनि, विद्युत्, अश्र तथा मारुत ये विमिश्र संज्ञक हैं और युद्ध के शुभाशुभ फल में ये वधकारक होते हैं ॥५॥

नागरस्यापि^५ यः शीघ्रः^६ स यायीत्यभियोधते ।

मन्दगो यायिनोऽधस्ताननागरः संयुगे भवेत् ॥६॥

नगर में जो शीघ्रगामी है, उस यायी कहते हैं, इस प्रकार यायी की अपेक्षा युद्ध में मन्द-गति होने से नागर नीच कोटि का कहलाता है ॥६॥

1. जायते मु० । 2. जयस्तुर्णं पराजयः मु० । 3. वर्जिनो मु० । 4. स्वर मु० ।
5. ० इन्दिहिष्यं मु० । 6. समस्तिका गणो मु० । 7. वधस्यापि मु० । 8. नातुरेऽस्य गियः
मु० । 9. संयायीत्य० मु० ।

नागरे तु हते विन्द्याक्षागराणां महद्भयम् ।
एवं यायिवधे जंये यायिनां तत्महद्भयम् ॥७॥

नगर संजक ग्रहों के युद्ध होने पर नागरिकों को महान् भय होता है एवं यायी ग्रहों के युद्ध होने पर यायियों—आक्रमकों के लिए महान् भय होता है ॥७॥

हृस्वो विवर्णो रुक्षश्च श्यरमः कान्तोऽप्सव्ययः ।
चिरशिमश्चाप्यरशिमश्च हतो ज्येष्ठो ग्रहो युधिः ॥८॥

युद्ध में विकृत ऋषि या अला रणिं वाला ग्रह राशि, विवर्ण, रुक्ष, श्याम, कान्त, अप्सव्य दिश में रहने वाले हैं—ज्येष्ठ वाला जाना है। अर्थात् पाताजा और हानि कारने वाला होता है ॥८॥

स्थूलः स्तिरः सुवर्णश्च सुरशिमश्च प्रदक्षिणः ।
उषरिष्टात् प्रकृतिमान् ग्रहो जयति तादृशः ॥९॥

स्थूल, स्तिर, सून्दर, अस्त्री रणियों वाला, प्रदक्षिण, उषर रहने वाला और कान्तिमान् ग्रह जय को प्राप्त होता है ॥९॥

उल्कादये हतान् हन्त्युर्नागरान् संयुगे ग्रहान् ।
नागराणां तदा विन्द्याद्भयं धोरमूपस्थितम् ॥१०॥

जब युद्ध में नागर ग्रह उल्कादि के द्वारा यातित हों तो नागरिकों को अत्यन्त भय होता है ॥१०॥

यायिनो वासतो हन्त्युर्ग्रहयुद्धे विमिश्रकाः ।
पीड्यन्ते भौमधीडायां भयं सर्वत्र संयुगे ॥११॥

युद्ध में अदि विमिश्रक—उल्का, तारा, अजनि आदि के द्वारा यायी संजक ग्रह यायी ओर से पीड़ित किये जायें तो भौम धीडा द्वारा पीड़ित होते हैं ॥११॥

सौम्यजातं तथा विप्राः सोम नक्षत्र-राशयः ।
उदीच्याः पार्वतीयाश्च पाञ्चलाद्यास्तथैव च ॥१२॥
पीड्यन्ते सौमधातेन नभो धूमाकुलं भवेत् ।
तन्नामधेयास्तद्भवताः सर्वं पीड्यन्ते तन्समान् ॥१३॥

यदि चन्द्रभा के द्वारा ग्रह पीड़ित हो और आकाश धूम से व्याप्त हो तो

चन्द्रनामधारी, चन्द्रभक्त तथा दूर्घटी के समान अन्य व्यक्ति पीड़ित भी होते हैं तथा ब्राह्मण, चन्द्रनक्षत्र और चन्द्र राशि वाले, उदीच्य और पांचाल भी पीड़ित होते हैं ॥12-13॥

**बर्बराश्च किराताश्च पुलिन्दा द्रमिलास्तथा ।
मालवा मलया बंगा कलिगा पार्वतास्तथा ॥14॥**
**'सूर्यकश्च सुराः क्षुद्राः पिशाचा वनवासिनः ।
तन्नामधेयास्तद्भक्ताः पीड्यन्ते राहुघातने ॥15॥**

राहु के पाल में बर्बर, किरात, पुलिन्द, द्रमिल, मालव, मलय, बंग, कलिग, पार्वत, सूर्यक, देव, क्षुद्र, पिशाच, वनवासी, राहु नामधारी और राहु भवत व्यक्ति पीड़ित होते हैं ॥14-15॥

**यायिनः ख्यातयाः सस्यः सौरठाः द्रविडास्तथा ।
अंगा बंगा कलिगाश्च सौरसेनाश्च क्षत्रियाः ॥16॥**
**बोराइचोश्चाश्च भोजाश्च यज्ञे चन्द्रश्च साधवः ।
पीड्यन्ते शुक्लघटेन संप्राप्तस्वाकुलो भवेत् ॥17॥**

शुक्र घात --युद्ध से यायी, यशस्वी, जालव, द्रविड, अंग, बंग, कलिग, सौर-सेन क्षत्रिय, बोर, उग्र, भोज, गाधु, चन्द्रवंशी पीड़ित होते हैं तथा युद्ध और व्याकुलता व्याप्त होती है ॥16-17॥

**श्वेतः श्वेतं ग्रहं यत्र हन्यत् सुवर्चसाऽ यदा ।
नागराणां मिथो ऐदो विप्राणाऽ तु भयं भवेत् ॥18॥**

जब श्वेत ग्रह श्वेत ग्रह की अपनी शक्ति द्वारा घातित करे तब नागरिकों में परस्पर ऐद एवं ब्राह्मणों को भय होता है ॥18॥

**लोहितो लोहितं हन्यत् यदा ग्रहसमागमे ।
नागराणां मिथो ऐदः क्षत्रियाणाऽ भयं भवेत् ॥19॥**

ग्रहयुद्ध में यदि लोहितग्रह लोहित ग्रह का घात करे तो नागरिकों में परस्पर ऐद एवं क्षत्रियों को भय होता है ॥19॥

**षीतः षोतं यदा हन्याद् ग्रहं ग्रहसमागमे ।
वैश्यानां नागराणां च मिथो ऐदे तदाऽऽदिष्टेत् ॥20॥**

1. गृहकल्पन मूँ । 2. सांस्कारिक ग्रन्थाभ्याम् । 3. गृहीना मूँ । 4. ब्राह्मणानां मूँ । 5. नागराणां तु निर्दिष्टेत् मूँ । 6. धर्मियाणा गृह । 7. नागराणां तु निर्दिष्टेत् मूँ ।

ग्रहयुद्ध में यदि पीतवर्ण का ग्रह पीतवर्ण के ग्रह का धात करे तो वैश्य और नागरिकों में आपस में मतभेद होता है ॥20॥

**कृष्णः कृष्णं यदा हन्यात् ग्रहं ग्रहसमागमे ।
शूद्राणां नागराणाऽन्त्रं च मिथो भेदं तदादिशेत् ॥21॥**

ग्रहयुद्ध में कृष्णवर्ण का ग्रह कृष्णवर्ण के ग्रह का धात करे तो शूद्र और नागरिकों में गरण्यर मतभेद होता है ॥21॥

**इवेतो नीलश्च रीतश्च कपिलः पद्मलोहितः ।
विपद्यते यदा वर्णो नागराणां तदा भयम् ॥22॥**

इवेत, नील, रीत, कपिल और पद्म-लोहित वर्ण के ग्रह जब युद्ध करते हैं तो नागरिकों को भय होता है ॥22॥

**इवेतो बात्र यदा पाण्डुषु हं सम्पद्यते स्वयम् ।
यायिनां विजयं द्रूपाद् भद्रवाहुवचो यथा ॥23॥**

इवेत वर्ण का ग्रह जब पाण्डुवर्ण के ग्रह के साथ युद्ध करता है, तब यायियों की विजय होती है, ऐसा भद्रवाहु स्वाखों का वचन है ॥23॥

**कृष्णो नीलस्तथा श्यामः काषोतो भस्मसन्निभः ।
विपद्यते यदा वर्णो न तदा यायिनां भयम् ॥24॥**

कृष्ण, नील, श्याम, काषोत और भस्म के सुन्दर आभा वाला ग्रह जब युद्ध करता है तब यायियों को भय नहीं होता है ॥24॥

**एवं शिष्टेषु वर्णेषु नागरेषु विचारतः ।
उत्तरसुत्तरा वर्णो यायिनाभ्यपि निर्दिशेत् ॥25॥**

अविशिष्ट वर्ण के नागरिक यहाँ में विचार करते गे उत्तर वर्ण के ग्रह यायियों की इन विजय प्रकट करते हैं ॥25॥

**रक्तो वा यदि वा नीलो ग्रहः सम्पद्यते स्वयम् ।
नागराणां तदा विन्द्रात् जयं वर्णमुपस्थितम् ॥26॥**

रक्त या नील ग्रह जब स्वयं विवर्ति को प्राप्त हो—युद्ध करे तो नागरिकों की विजय होती है ॥26॥

1. अन्तर्यामा यायिनो चैवसा। दशत् म. ३।

नोलाद्यास्तु यदा^१ वर्ण उत्तरा उत्तरं पुनः ।
नागराणां विजानीयात् निर्यन्थे प्रहसंयुगे ॥२७॥
प्रहो ग्रहं यदा हन्यात् प्रविशेद् वा भयं तदा ।
दक्षिणः सर्वभूतानामुत्तरोऽण्डजपक्षिणाम् ॥२८॥

ग्रहयुद्ध में यदि नीलादि वर्ण वाले ग्रह उत्तर दिशा में युद्ध करें तो नागरिकों का अहित होता है, ऐसा निर्यन्थ आवायों का बचन है। यदि दक्षिण से ग्रह ग्रह का घात करे अथवा ग्रह यहाँ में प्रवेश करे तो समस्त प्राणी, अण्डज और पक्षियों की अहितकार होता है ॥२७-२८॥

ग्रहौ गुरु-बुधौ विन्द्यादुत्तरद्वारमाश्रितौ ।
शुक्र-सूर्यौ तथा पूर्वी राहु-भीमौ च दक्षिणाम् ॥२९॥
अपरां चन्द्र-सूर्यौ तु मध्ये केतुमसंशयम् ।
क्षेमंकरो ध्रुवाणां च यायिनां च भयंकरः ॥३०॥

उत्तर द्वारा में स्थित होकर गुरु और बुध युद्ध करे, पूर्व में स्थित होकर शुक्र और सूर्य, दक्षिण में स्थित होकर राहु और मंगल, एशियम में चन्द्र और सूर्य एवं मध्य में तेजु युद्ध करे तो निवासियों के लिए कल्याणप्रद और यायियों के लिए भयंकर होता है ॥२९-३०॥

अहश्च पूर्वसन्ध्या च स्थावरप्रतिपुद्गलाः ।
रात्रिश्चापरसन्ध्या च यायिनां प्रतिपुद्गलाः ॥३१॥

दिन और पूर्व सन्ध्या स्थाविरो— निवासियों के लिए प्रतिपुद्गल तथा रात्रि और अपर सन्ध्या यायियों के लिए प्रतिपुद्गल हैं ॥३१॥

रोहिणी च ग्रहो हन्यात् द्वी वाऽथ बहवोऽपि वा ।
अपग्रहं तदा विन्द्याद् भय वाऽपि न संशयः ॥३२॥

यदि रोहिणी नक्षत्र को एक ग्रह, दो ग्रह या बहुत ग्रह हनन करे— वात करे तो अपग्रह होता है और भय एवं आतंक भी व्याप्त रहता है, इसमें मन्देह नहीं है ॥३२॥

शुक्रः शंखनिकाशः स्थादीषत्पीतो वृहस्पतिः ।
प्रवालसदूशो भीमो बुधस्त्वरुणसन्निभः ॥३३॥

1. ये वर्णां मूः ।

शनैश्चरश्च नीलाभः सोमः पाण्डुर उच्यते ।
बहुवर्णो रविः केतू राहुर्नक्षत्र एव च ॥३४॥

शुक्र अंख वर्ण के समान, बृहस्पति कुछ पीला, मंगल प्रवाल के समान और
बुध नरण के समान, शनैश्चर नील, चन्द्रमा पाण्डु, रवि-केतू अनेक वर्ण एवं
राहु नक्षत्र के समान वर्ण वाला होता है ॥३३-३४॥

उदकस्य प्रभुः शुक्रः सर्वस्य च बृहस्पतिः ।
लोहितः सुख-दुःखस्य केतुः पुष्य-फलस्य च ॥३५॥
बुधस्तु बल-वित्तानां सर्वस्य च रविः स्मृतः ।
उदकानां^१ च दल्लीनां शशांकः प्रभुरुच्यते ॥३६॥

जल का स्वामी शुक्र, भान्य का स्वामी बृहस्पति, सुख-दुःख का स्वामी मंगल,
फल-पुण्य का स्वामी केतु, बल-धन का स्वामी बुध, तभी वस्तुओं का स्वामी सूर्य
एवं लताओं और वृक्षों का स्वामी चन्द्रमा है ॥३५-३६॥

धान्यस्यार्थं तु नक्षत्रं तथाऽऽरः शनिः सर्वशः ।
प्रभुवर्णं सुख-दुःखस्य सर्वं ह्येते त्रिदण्डदत् ॥३७॥

धान्य के लिए जो नक्षत्र होता है, उसमें सभी ताह से स्वामी राहु है, और
सुख-दुःख का स्वामी शनि है। ये प्रह त्रिदण्डदत् होते हैं ॥३७॥

वर्णानां संकरो बिन्द्याद् द्विजातीनां भयंकरम् ।
स्वपक्षो परपक्षे च जातुर्वर्णं विभावयेत्^२ ॥३८॥

जब प्रहों का गुद्ध होता है तो वर्णों का सम्मिश्रण, द्विजातीयों को भय तथा
स्वपक्ष और परपक्ष में जातुर्वर्णं दिखलायी पड़ता है ॥३८॥

वातः श्लेष्मा गुरुर्ज्ञेयशचन्द्रः शुक्रस्तथैव च ।
‘वातिकी’ केतु-सौरी तु पंतिको भीम उच्यते ॥३९॥

चन्द्र, शुक्र और गुरु वात और कफ प्रकृति वाले हैं, केतु और शनि भी वात
प्रकृति वाले हैं तथा मंगल गिरि प्रकृति वाला है ॥३९॥

पित्तश्लेष्मान्तिकः सूर्यो नक्षत्रं देवता भवेत् ।
राहुस्तु भौमे विज्ञेयो प्रकृती च शुभाशुभौ ॥४०॥

गूर्य पित्त श्लेष्मा—पित्त-कफ प्रकृति वाला है। यह नक्षत्रों का देवता होता
है। राहु और मंगल शुभाशुभ प्रकृति वाले हैं ॥४०॥

1. दोक्षानां मु० । 2. शनिस्य मु० । 3. विभावयेत् मु० । 4. वातिकी बृघ - मु० ।

आर्थस्तभादितं चुष्यो धनिष्ठा पौज्णवी च भूत् ।

केतु-सूर्यै तु वैशाखौ राहुर्वृहणसम्भयः ॥४१॥

उत्तरा फाल्गुनी, पुनर्वृशु, पुर्य, धनिष्ठा, हस्त ये चतुर्विदि ग्रहों के नक्षत्र हैं, केतु और सूर्य के विशाखा नक्षत्र और राहु का अतिभिर्णा नक्षत्र हैं ॥४१॥

शुक्रः सोमश्च स्त्रीसंज्ञौ शिषास्तु पुरुषां प्रहाः ।

नक्षत्राणि विजानीयसन्नामभिर्वतेस्तथा ॥४२॥

शुक्र और चन्द्रमा स्त्री संजक हैं, शेष ग्रह पुरुष संजक हैं। नक्षत्रों का लिंग उनके स्वामियों के लिंग के अनुसार अवयवत करना चाहिए ॥४२॥

प्रह्युद्धमिदं सर्वं यः सम्यगवधारयेत् ।

स विजन्नाति निर्ग्रन्थो लक्ष्यं तु शुभत्तुमम् ॥४३॥

जो निर्ग्रन्थ भक्तीमाति पूर्ण प्रह्युद्ध को जानता है, वह शुक्र के शुभत्तुमन्त्र को जानता है ॥४३॥

इति नरोऽप्ये भद्रवाहुके निमित्ते प्रह्युद्धो नाम चतुर्विशतितमोऽध्यायः ॥२४॥

विवेचन—प्रह्युद्ध के चार भूत हैं—ग्रीष्म, उल्केष्व, अंगुष्ठदेव और अपमन्त्र । ऐदयुद्ध में वर्षा का नाश, सुहृद् और कुकीर्णों में भूत होता है । उल्केष्व युद्ध में जस्त्रभय, पत्रिविरोध और दुभिक्ष होता है । अंगुष्ठदेव युद्ध में राजाओं में युद्ध, शस्त्र, रोग, भूख से पीड़ा और अवगर्दन होता है तथा अपमन्त्र युद्ध में राजा यण युद्ध करते हैं । गूर्ध दोषहर में आक्रम होता है, पूर्वाङ्ग में पीर ग्रह तथा आराहू में यायी ग्रह आक्रम संजक होते हैं । बुध, गुरु और शनि ये सदा पीर हैं । चन्द्रमा नित्य आक्रम है । केतु, मंगल, राहु और शुक्र यायी हैं । इन ग्रहों के हत होने से आक्रम, शायी और पीर कमानुसार नाश को प्राप्त होते हैं, जब्ती होने पर स्ववर्ग को जय प्राप्त होती है । पीरग्रह से पीरग्रह के टकराने पर गुरुवारी वर्ष और पीर राजाओं का नाश होता है । इस प्रकार यायी और आक्रम ग्रह या पीर और यायी ग्रह परस्पर हत होने पर अगत-अपने अधिकारियों नो कष्ट कर देते हैं । जो ग्रह दक्षिण दिशा में रुक्षा, कम्यायमान, टेहा, अदूर और फिसी ग्रह में ढैंग हुआ, विचराल, प्रभाहीन और विवर्ण दिव्यलायी पड़ता है, वह पराजित कहलाता है । इससे विपरीत लक्षण वाला ग्रह जयी कहलाता है । वर्षा काल में गूर्ध ये आगे मंगल के रहने से अनावृष्टि, शुक्र के आगे रहने से वर्षा, गुरु के आगे रहने से गर्भी और बुध के आगे रहने से बायु चलती है । गूर्ध-मंगल, शनि-मंगल और गुरु-मंगल

के संयोग से अवर्पा होती है। गुरु-शुक्र और गुरु-बुध का योग अवश्य वर्षा करता है। कूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत बुध और शुक्र एक राशि में स्थित हों और यदि उन्हें बृहस्पति भी देखता हो तो वे अधिक महावृष्टि के देने वाले होते हैं। कूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) बुध और बृहस्पति एक राशि में स्थित हों और यदि शुक्र उन्हें देखता हो तो वे अधिक अच्छी वर्षा करते हैं। कूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) पुह और शुक्र एकथं स्थित हों और यदि बुध उन्हें देखता हो तो वे उत्तम वर्षा करते हैं। शुक्र और चन्द्रमा या मंगल और चन्द्रमा यदि एक राशि पर स्थित हों तो रवेश वर्षा होती है और फसल भी उत्तम होती है। सूर्य के सहित बृहस्पति यदि एक राशि पर स्थित हो तो जब तक वह अस्त न हो जाय, तब तक वर्षा का योग समझना चाहिए। शनि और मंगल का एक राशि पर होना महावृष्टि का कारण होता है। इस योग के होने से दो महीने तक वर्षा होती है, पश्चात् वर्षा में रुकावट उत्पन्न होती है। सौम्य ग्रहों से अदृष्ट और अयुत शनि और मंगल यदि एक स्थान पर स्थित हों तो वायु का प्रकोप और अभिन का भय होता है।

एक राशि या एक ही नक्षत्र पर राहु और मंगल आ जायें सो दोनों वर्षा का नाश करते हैं। गुरु और शुक्र यदि एकत्र स्थित हों तो असमय में वर्षा होती है। सूर्य से आगे शुक्र या बुध जायें तो वर्षा काल में निरन्तर वर्षा होती रहती है। मंगल के आगे सूर्य वीरति हो तो वह वर्षा को नहीं रोकता है। किन्तु सूर्य के आगे मंगल हो तो वर्षा को तत्काल रोक देता है। बृहस्पति के आगे शुक्र हो तो वह अवश्य वृष्टि करता है; किन्तु शुक्र के आगे बृहस्पति हो तो वर्षा का अवरोध होता है। बुध के आगे शुक्र के होने से महावृष्टि और शुक्र के आगे बुध के होने पर अल्प वृष्टि होती है। यदि दोनों के मध्य में सूर्य या अन्य ग्रह आ जायें तो वर्षा नहीं होती। अनिश्चित मार्ग में गमन करता हुआ बुध यदि शुक्र को छोड़ दे तो सात दिन या पाँच दिन तक लगातार वर्षा होती है। उदय या अस्त होता हुआ बुध यदि शुक्र से आगे रहे तो शीत्र ही वर्षा पैदा करता है। जल नाड़ियों में आने पर यह अधिक फल देता है। बुध, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों ग्रह एक ही राशि पर स्थित हों और कूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत हों तो इन्हें महावृष्टि करने वाले रामज्ञने चाहिए। शनि, मंगल और शुक्र तीनों एक राशि पर स्थित हों और गुरु इन्हें देखता हो तो निससन्देह वर्षा होती है। सूर्य, शुक्र और बुध इनके एक राशि पर होने से अल्पवृष्टि होती है। सूर्य, शुक्र और बृहस्पति के एक राशि पर रहने से अतिवृष्टि होती है। शनि, शुक्र और मंगल के एकत्र होते हुए गुरु से देखे जाने पर साधारण वर्षा होती है। शनि, राहु और मंगल ये तीनों एक राशि पर स्थित हों तो ओंक के साथ वर्षा होती है। यहीं ग्रह एक ही राशि पर आ जायें सो दर्भिध अवर्पा और रोग द्वारा कष्ट होता है। शुक्र, मंगल, शनि और बृहस्पति में ग्रह

एक स्थान पर स्थित हों, तो वर्षा रोक देते हैं। उक्त प्रहृष्ट स्थिति में देश में अन्न का भी अभाव हो जाता है। धान्य भाव महेंगा विकला है। रुई, बायास, जूट, सन आदि का भाव भी तेज होता है। विहार में भूकम्प होने की स्थिति आती है। जापान और वर्मा में भूकम्प होते हैं। मंगल, बुध, गुरु और शुक्र के एक स्थान पर स्थित होने से रजो वृद्धि होती है। दुर्भिक्ष; अन्न, घो, गुड़, चीनी, सोना, चाँदी, माणिक्य, मूँगा आदि पदार्थों का भाव भी तेज ही होता है। नगर और गाँवों में अशान्ति दिखलायी पड़ती है। विहार, आसाम, उड़ीसा, बांगलादेश, प० बंगाल आदि पूर्वी क्षेत्रों में साधारण वर्षा और साधारण ही फसल होती है। पंजाब, दिल्ली, अजमेर, गजस्थान और हिमालय प्रदेश की सरकारी के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन होता है। इटली ईरान, अरब, मिश्र इत्यादि मुस्लिम राष्ट्रों में भी बाधान्म की कमी होती है। उक्त राष्ट्रों की राजनीतिश और अधिक स्थिति विगड़ती जाती है। गंगा, शुक्र, गानि आर राहु ये प्रहृष्ट यदि एक राशि पर आ जायें तो मेघ कभी वर्षा नहीं करते; दुर्भिक्ष होता है। धान्य और रास्त दोनों ही प्रकार के अनाजों की कमी होती है तथा इनके संयह में अनेक प्रकार का लाभ होता है। मंगल, बृहस्पति, शुक्र और गानि ये प्रहृष्ट एक साथ बैठे हों तो वर्षा का अभाव होता है। इन प्रहृष्टों के युद्ध में व्यापारियों को भी गष्ट होता है। कागज, कपड़ा, रेशम, चीनी के व्यापार में घटा होता है। भौंटे अनाजों के भाव बहुत उच्च बढ़ते हैं, जिससे खरीदने वालों की संख्या बढ़ जाती है; फिर भी देश में शान्ति रहती है। सूर्य, गुरु, गानि, शुक्र और राहु इन प्रहृष्टों के एक भाव रहने से मेघ वर्षा नहीं करते हैं और सब धान्यों का भाव महेंगा रहता है। चार या पाँच प्रहृष्टों के एक माथ रहने से अधिक जल की वर्षा या मही युधिर व्यावित हो जाती है। बुध, गुरु, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा इन प्रहृष्टों के एक स्थान पर होने गे नैऋत्य दिशा में जनता का यिनाश होता है। दुर्भिक्ष, अन्न और मदेशी का अभाव होता है। उक्त प्रहृष्ट स्थिति वर्मा, लंका, दक्षिण भारत, मद्रास, महाराष्ट्र इन प्रदेशों के लिए अत्यन्त अशुभकारक है। उक्त प्रदेशों में अन्न का अभाव बड़े उपर और व्यापक रूप में होता है।

पूर्वी प्रदेशों —विहार, बंगाल, आसाम में वर्षा की कमी तो नहीं रहती किन्तु फसल अच्छी नहीं होती है। उक्त प्रदेशों में राजनीतिक उलट-फेर भी होते हैं। हैजा, प्लेम जैसी संक्रामक वीमारियों फैलती हैं। घरेलू युद्ध देश के प्रत्येक भाग में आरम्भ हो जाते हैं। पंजाब यी स्थिति विगड़ जाती है, जिससे वहाँ शान्ति स्थापित होने में कठिनाई रहती है। विदेशों के शाश्वत भारत का सम्पर्क बढ़ता है। नये-नये व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। देश के व्यापारियों की स्थिति अच्छी नहीं रहती है। छोटे-छोटे दुकानदारों की लाभ होता है। बड़े-बड़े व्यापारियों की स्थिति बहुत खराब हो जाती है। खनिज पदार्थों की उत्पत्ति बढ़ती है। कला-कौशल का विकास होता है। देश के कलाकारों की सम्मान प्राप्त होता है। साहित्य

की उन्नति होती है। नवीन साहित्य के सूजन के लिए वह उत्तम अवसर है। यदि परम्परानुसार ग्रहों के आगे सौभ्य यह स्थित हो तो वर्षा अच्छी होती है, साथ ही देश का आधिक विकास होता है और देश के नवे मन्त्रिमण्डल का निर्वाचन भी होता है। धारा सभाओं और विवाह सभा के सदस्यों में मतभेद होता है। विश्व में नवीन वस्तुओं का अन्वेषण होता है, जिससे देश की सांस्कृतिक परम्परा का गूरा विकास होता है। नृत्य, गान और इसी प्रकार के अन्य कलाकारों को साधारण सम्मान प्राप्त होता है। यदि शुक्र, जनि, मंगल और बूढ़े ये ग्रह बृहस्पति से युत या दृष्ट हों तो सुभिक्ष होता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। दक्षिण भारत में फसल उत्तम उपजती है। सुपाणी, नारियल, चावल, एवं गुड़ का भाव तेज होता है। जब कूर यह आपस में युद्ध करते हैं तो जन-साधारण में भय, आतंक और हिंसा का प्रभाव अंकित हो जाता है। शुभ ग्रहों का युद्ध शुभ फल देता है।

पञ्चविंशतितमोऽध्यायः

नक्षत्रं प्रहसनमत्था कृत्सनस्थार्थं शुभाशुभम् ।
तस्मात् कुर्यात् सदोत्थाय नक्षत्रग्रहदर्शनम् ॥१॥

समस्त तेजी-मन्दी नक्षत्र और ग्रहों के शुभाशुभ पर निर्भर करती है, अतः सर्वदा प्रातः उठकर नक्षत्रों और ग्रहों का दर्शन करना चाहिए ॥१॥

सर्वे यदुत्तरे काष्ठे ग्रहाः स्युः स्निग्धवर्चसः ।
तदा वस्त्रं च न ग्राह्यं सुसमासाम्यमर्घताम् ॥२॥

यदि स्निग्ध, तेजस्वी ग्रह, उत्तर दिशा में हों तो वस्त्र नहीं लेना चाहिए; क्यों कि वस्त्रों के मूल्य में समता रहती है; मूल्य में घटा-बढ़ी नहीं होती ॥२॥

क्षीरं क्षीद्रं यवाः कंगुरुदाराः सस्यमेव च ।
दीम्बगियं चाधिगच्छन्ति नवानिव्या यद्युधः ॥३॥

दूध, मधु, जी, कंगुर, धान्य आदि पदार्थ दूध की स्थिति के अनुसार तेज और

मन्द होते हैं। अर्थात् उक्त पदार्थों की स्थिति बुध पर आश्रित है ॥३॥

षट्कानां विरामाणां द्रव्याणां^१ परण्डुरस्य^२ च ।
सन-कोद्रव-कंगूनां तीलभानां शनैश्चरः ॥४॥

षट्का चावल, एवेतरंग से भिन्न अन्य रंग के पदार्थ, सन, कोद्रव, कंगून और समस्त नील पदार्थ शनैश्चर के प्रतिपुद्गल हैं ॥४॥

यद्य-रोधूम-बीहीणां शुक्लधान्य-मसूरयोः ।
शूलीनां चेष्ट द्रव्याणां शुक्रस्य प्रतिपुद्गलाः ॥५॥

जौ, गेहू, चावल, एवेत रंग के अनाज, मसूर, गूलर आदि पदार्थ शुक्र के प्रति पुद्गल हैं ॥५॥

मधु-सर्पि-तिलानांच^३ क्षीराणां च तथैव च ।
कुसुमस्यातसीनां च गर्भाणां च बुधः स्मृतः ॥६॥

मधु, धी, तिल, दूध, पुण्य, केसर, तीखी, यर्म आदि बुध के प्रतिपुद्गल हैं ॥६॥

कोशधान्य सर्वपाश्च पीतं रक्तं तथाग्निजम्^४ ।
अंगारकं विजानीयात् सर्वेषां प्रतिपुद्गलाः ॥७॥

कोश, धान्य, सर्वप, पीत-रक्त वर्ण के पदार्थ, अग्नि भे उत्पन्न पदार्थ मंगल के प्रतिपुद्गल हैं ॥७॥

महाधान्यस्य महतामिक्षूणां शर-वंशयोः ।
गुरुणां मन्दपीतानामथो ज्ञेयो बृहस्पतिः ॥८॥

महाधान्य, इकू, वंश तथा बड़े-बड़े मन्द पीते पदार्थ बृहस्पति के प्रतिपुद्गल हैं ॥८॥

मुकुतामणि-जलेशानां सूर-सौक्रीर-सौमिनाम् ।
शुगिणरमुदकानां च सौम्यस्य प्रतिपुद्गलाः ॥९॥

मुकुता-मणि, जल भे उदान्त पदार्थ, सौभलता, चेर या अन्य खट्टे पदार्थ, कांजी, शुगिणी पदार्थ और समस्त जलीय पदार्थ अद्रमा के प्रतिपुद्गल हैं ॥९॥

उद्धिभजानां च जन्तूनां कद्व-मूल-फलस्य च ।
उष्णवीर्यविषाकस्य रवेस्तु प्रतिपुद्गलाः ॥१०॥

1. द्रव्याणां च ॥ 2. प्रणयन मू० । 3. दृष्टानामा मू० । 4. नवाग्निजग्म मू० ।

पृथ्वी के उत्पन्न हुए पदार्थ, कन्दमूल, फल और उष्ण पदार्थ सूर्य के प्रति पुद्गल हैं। यहाँ प्रतिपुद्गल शब्द का अर्थ उस ग्रह की स्थिति द्वारा उक्त पदार्थों की तेजी-मन्दी जानने का रूप है ॥10॥

नक्षत्रं भार्गवः सोमः शोभेते सर्वशो यथा ।

यथा द्वारं तथा विन्द्यात् सर्ववस्तु यथाविधि ॥11॥

किसी भी नक्षत्र में शुक्र और चन्द्र सर्वाय रूप से शोभित हों तो उस नक्षत्र के द्वार, दिशा और स्वरूप आदि के द्वारा वस्तुओं की तेजी-मन्दी कही जाती है ॥11॥

विदर्णी यदि सेवन्ते ग्रहा वै राहुणा समम् ।

दक्षिणां दक्षिणे मार्गे वैश्वानरपथं प्रति ॥12॥

गिरिनिम्ने च निम्नेषु नदी-पल्लवलवारिषु ।

एतेषु वापयेद् बीजं स्थलवज्जे यथा भवेत् ॥13॥

मल्लजा मालवे देशे¹ सौराष्ट्रे सिन्धुसागरे ।

एतेष्वपि तथा मन्दे² श्रियमन्यत् प्रसूयते ॥14॥

यदि भरणी नक्षत्र में राहु के साथ अन्य ग्रह विचुल वर्ण के होकर स्थित हों तथा दक्षिण मार्ग में वैश्वानर पथ के प्रति गमनशील हों तो स्थल—चौरस भूमि को छोड़कर गवंत की ऊंची-नीची तलहटी, नदियों के तट एवं पौखरों में दीज दोना चाहिए। काली गिरच मालव देश, मुजरात, समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों में मन्दी होती है, इसके अतिरिक्त अन्य वरतुदे मर्हगी होती है ॥12-14॥

कृत्तिका-रोहिणीयुक्ता बुध-चन्द्र-शनैश्चराः ।

यदा सेवन्ते सहितास्तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥15॥

आज्यविकं गुडं तेलं कपर्सिं मधु-सर्पिषी ।

सुवर्णं-रजते मुद्राः शालयस्तिलमेव च ॥16॥

स्त्रियो याम्योत्तरे मार्गे पञ्चद्रोणेन शालयः ।

दशाढकं पश्चिमे³ स्थात् दक्षिणे तु षडाढकम् ॥17॥

जब बुध, चन्द्र और शनैश्चर ये तीनों एक साथ कुत्तिका विद्व रोहिणी का भोग करें तब घृत, गुड, तेल, कपर्सी, मधु, स्वर्ण, चंदी, मूर्ग, शाली चावल, तिल आदि पदार्थ पहुँच होते हैं। यदि उक्त ग्रह स्त्रिय दक्षिणोत्तर मार्ग में गमन करते

1. मल्लदा मलवर्ती राज्याना मृ० । 2. मुद्रा मृ० । 3. एवत मृ० ।

हों तो धान्य का भाव पाँच द्रोण प्रमाण होता है। पश्चिम में दश आडक और दक्षिण में छः आडक प्रमाण होता है ॥15-17॥

उत्तरेण तु रोहिण्या चतुष्कं कुम्भमुच्यते ।
दशकं प्रसंगतो विन्द्यात् दक्षिणेन चतुर्दशम् ॥18॥

यदि उत्तर में रोहिणी हो तो चतुष्कं कुम्भ कहा जाता है। इससे दश आडक और दक्षिण में होने से चौदह आडक प्रमाण शाली का भाव कहा गया है ॥18॥

नक्षत्रस्य यदा गच्छेद् दक्षिणं शुक्र-चन्द्रमाः ।
सुवर्णं रजतं रत्नं कल्याणं प्रियतां मिथः¹ ॥19॥

जब शुक्र और चन्द्रमा कृतिका विद्व रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण में जायें तब स्वर्ण, चाँदी, रत्न और धान्य महेंग होते हैं ॥19॥

धान्यं यत्र प्रियं विन्द्यादगावो नात्यर्थेदोहिनः ॥
उत्तरेण यदा यान्ति नैतानि चिनुयात् तदा ॥20॥

जब उक्त ग्रह कृतिका विद्व रोहिणी नक्षत्र के उत्तर में जायें तो धान्य महेंगा होता है, गावें दोहने के लिए प्राप्त नहीं होती हैं अर्थात् महेंगी हो जाती हैं ॥20॥

उत्तरेण तु पुष्यस्य यदा पुष्यति² चन्द्रमाः ।
भौमस्य दक्षिणे पाश्वं मघासु यदि तिष्ठति ॥21॥

मालदा मालं बैदेहा योधेयाः संज्ञनायकाः ।
सुवर्णं रजतं वस्त्रं मणिमुक्ता तथा प्रियम् ॥22॥

जब चन्द्रमा उत्तर में पुष्य नक्षत्र का भोग करता है तथा मध्य में रहकर मंगल का दक्षिण में भौम करता है, तब काली भिंच, नवक, सोना, चाँदी, वस्त्र, मणि, मुक्ता एवं मशाले के पदार्थ गहेंग होते हैं ॥21-22॥

चन्द्रः शुक्रो गुरुभौमो³ मघानां यदि दक्षिणे ।
वस्त्रं च द्रोणमेघं च निदिशेन्तात्र संशयः ॥23॥

चन्द्र, शुक्र, गुरु और मंगल यदि मध्य के दक्षिण में हों तो वस्त्र महेंग होते हैं और मेघ द्वाण प्रमाण वर्षा करते हैं, इसमें मन्देह नहीं है ॥23॥

आरुहेद् वालिवेद्रापि⁴ चन्द्रश्चैव यथोत्तरम् ।
ग्रहैर्युक्तस्तु (वर्षति) तदा कुम्भं तु पञ्चकम् ॥24॥

1. भवति । 2. पुष्यति गुरु । 3. मध्यमी गुरु । 4. वालुवालश्च वर्षा च भद्रं चेत् यदान्तरे मुः ।

यदि ग्रहणकृत चन्द्रमा उत्तर दिशा में आरोहण करे या उत्तर का स्पर्श करे तो पाँच कुम्भ प्रमाण जल की वर्षा होती है अर्थात् खूब जल बरसता है ॥24॥

राहुः केतुः शशी शुक्रो भौमश्चोत्तरतो यदा ।

सेवन्ते चोत्तरं द्वारं यान्त्यस्ते वा कदाचन ॥25॥

तिवृत्तिं चापि कुर्वन्ति भयं देशेषु¹ सर्वशः ।

बहुतोयान् समान् विन्द्यान् महाशालीश्च वापयेत् ॥26॥

कार्पासास्तिल-माधाश्च सर्विश्चात्र प्रियं तथा ।

आशु धान्धानि² वर्धन्ते योगक्षेमं च हीयते ॥27॥

जब राहु, केतु, चन्द्रमा, शुक्र और मंगल उत्तर से उत्तर द्वार का सेवन करें अथवा अस्ते को प्राप्त हों अथवा वज्री हों तो गभी देशों में भय होता है । अधिक जल की वर्षा होती है और चावल भी खूब बोया जाता है । कपास, तिल, उड्ड, शी महंगा होता है । वर्षा की अधिकता के कारण बावड़ी—तालाबों का जल शीघ्र ही बढ़ता है, जिससे धीरा-क्षेम—युजर-बसर में कमी आती है ॥25-27॥

चन्द्रस्य दक्षिणे पाश्वे भार्गवो वा विशेषतः ।

उत्तरांस्तारकान् प्राप्य तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥28॥

महाधान्धानि पुष्पाणि हीयन्ते चासरस्तदा³ ।

कार्पास-तिल-माधाश्च सर्विश्चैवार्घ्यते तथा ॥29॥

यदि शुक्र चन्द्रमा के दक्षिण भाग में हो अथवा विशेष रूप से उत्तर के नक्षत्रों को प्राप्त हुआ हो तो गहाधान्ध गेहूं, जी, पान, चना आदि और पुष्पों—केसर, लंबंगआदि की कमी होती है अर्थात् उक्त पदार्थ महंगे होते हैं । कपास, तिल, उड्ड और शी भी धूम होती है, अतः ये पदार्थ गस्त होते हैं ॥28-29॥

चित्राया दक्षिणे पाश्वे शिखरी नाम तारका ।

तथेन्दुर्यदि दृश्येत तदा बीजं न वापयेत् ॥30॥

निवा नक्षत्र के दक्षिण पाश्व में शिखरी नाम की तात्त्विका है । यदि चन्द्रमा का उदय इग तात्त्विका में दिखता है पड़े तो बीज नहीं बोना चाहिए ॥30॥

गवास्त्रेण हिरण्येन सुवर्ण-मणि-मौकितकैः ।

महिद्यजादिभिर्वस्त्रैर्धात्यं क्रीत्वा निवापयेत् ॥31॥

चन्द्रमा की उक्त स्थिति में गाय, अस्त्र, चाँदी, सोना, मणि, गुक्ता, महिष—

1. वृत्ति ग्र. 2. वाप्तिग्र. मृ. 3. विग्रहान्वया. मृ.

भैस, अजा—यकरो और वस्त्र शुक्रि में धार्य छोड़ कर भी जोका नहीं चाहिए। तात्पार्य यह है कि चन्द्रमा की उपर्युक्त स्थिति में अन्न उत्पन्न नहीं होता है; अतः सभी वस्तुओं से अनाज खोद कर उसका संकलन करना चाहिए ॥31॥

चित्रायां तु यदा शुक्रश्चन्द्रो भवति दक्षिणः ।

षड्गुणं जायते धान्यं योगक्षेमं च जायते ॥32॥

जब चित्रा नक्षत्र में दक्षिण की ओर शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो छः गुना अनाज उत्पन्न होता है और योगक्षेम—मुजर-वसर अच्छी तरह से होती है ॥32॥

इन्द्राभ्यन्देवसंयुक्ता यदि सर्वे ग्रहाः कृशाः ।

अभ्यन्तरेण मार्गस्थास्तारकाः यास्तु वायतः² ॥33॥

कंगु-दार-तिला मुद्गाश्चणकाः षट्काः शुकाः ।

चित्रायोगं त सर्वते चन्द्रमा उत्तरो भवेत् ॥34॥

संग्राह्यं च तदा धान्यं योगक्षेमं न³ जायते ।

अल्पसारा भवन्त्येते चित्रा वर्षा⁴ न संशय ॥35॥

यदि सभी कमजोर ग्रह विशाखा नक्षत्र में युक्त होकर अभ्यन्तर मार्ग से बादल की ओर की ताराओं में स्थित हों और चन्द्रमा उत्तर होकर चित्रा में स्थित हो, तो कंगु, तिल, मूर्ग, चना, साठी का बादल आदि धान्यों का सग्रह करना चाहिए। उक्त प्रकार के योग में योगक्षेम में—भोजन-छाजन में भी कमी रहती है। वर्षा अल्प होती है, इसमें यन्देह नहीं है ॥33-35॥

विशाखामध्यगः शुक्रस्तोयदो धान्यवर्धनः ।

समर्थं यदि विजेयं दशद्वैरेणक्रयं बदेत् ॥36॥

यदि विशाखा नक्षत्र के मध्य में शुक्र का अस्त हो तो धान्य की उपज अच्छी होती है, अनाज का भाव सम रहता है। दश द्वैरेण प्रमाण खोदी जाता है ॥36॥

यायिनी चन्द्र-शुक्री तु दक्षिणामुत्तरो तदा ।

तारा-विशाखयोघतिस्तदाऽर्धन्ति चतुष्पदाः ॥37॥

जब यायी चन्द्र और शुक्र दक्षिण और उत्तर में हों और विशाखा की ताराओं का घात हुआ हो तो जौपायों की बूढ़ि होती है ॥37॥

दक्षिणेनानुराधायां यदा च ब्रजते शशी ।

अप्रभश्च प्रहीणश्च वस्त्रं द्वोणाय कल्पयेत् ॥38॥

1. युक्तः मू० । 2. वायतः मू० । 3. न मू० । 4. वर्षा मू० ।

निष्प्रभ और हीन चन्द्रमा दक्षिण मार्ग से अनुराधा में गमन करता है तो वस्त्र महेंगे होते हैं ॥38॥

ज्येष्ठा-मूलौ यदा चन्द्रो दक्षिणं लजतेऽप्रभः ।

तदा स्स्यं च वस्त्रं च अर्थश्चापि¹ विनश्यति ॥39॥

प्रजानामनयो धोरस्तदा जायन्ति² तामस ।

प्रस्त्रक्रयस्थ वस्त्रस्थ लेन क्षायन्ति तां प्रजाभ् ॥40॥

जब प्रभार हित चन्द्रमा दक्षिण में ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में आता है, तब धान्य, वस्त्र और अर्थ का विनाश होता है। उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति में प्रजा में अन्न और वस्त्र के लिए हाहाकार हो जाता है तथा वस्त्र खरीदने में प्रजा की हानि भी होती है ॥39-40॥

मूलं मन्देव सेवन्ते यदा दक्षिणतः शशी ।

प्रजातिः सर्वधान्यानां आढका नु तदा भवेत् ॥41॥

जब चन्द्रमा दक्षिण से मन्द होता हुआ मूल नक्षत्र का सेवन करता है तब सभी प्रकार के धान्यों की उपज खूब होती है और वर्षा आढक प्रमाण होती है ॥41॥

कृतिकां रोहिणीं चित्रां पुष्या-श्लेषा-पुनर्बंसून् ।

वजति दक्षिणश्चन्द्रो दशप्रस्थं तदा भवेत् ॥42॥

जब दक्षिण चन्द्रमा कृतिका, रोहिणी, पुष्य, श्लेषा, पुनर्बंसु में गमन करता है, तब दश प्रस्थ प्रमाण धान्य की विक्री होती है अर्थात् फसल भी उत्तम होती है ॥42॥

मध्यां विशाखां च ज्येष्ठाऽनुराधे मूलमेव च ।

दक्षिणे व्रजते शुक्रश्चन्द्रे तदाऽढकमेव च ॥43॥

शुक्र और चन्द्र के दक्षिण में मध्या, विशाखा, ज्येष्ठा, अनुराधा और मूल में गमन करने पर आढक प्रमाण धान्य की विक्री होती है अर्थात् फसल कम होती है ॥43॥

कृतिकां रोहिणीं चित्रां विशाखां च मध्यां यदा ।

दक्षिणेन यहा यान्ति चन्द्रस्त्वाढकविक्रयः ॥44॥

जब प्रह दक्षिण से कृतिका, रोहिणी, चित्रा, विशाखा और मध्या नक्षत्र में

1. शर्वरी धार्य मू० । 2. जायति मू० । 3. चेव मू० ।

गमन करते हैं तो आद्वक प्रपाण वस्तुओं की विकी होती है ॥ 44॥

गुरुः शुक्रश्च भौमश्च दक्षिणः सहिता यदा ।

प्रस्थब्रयं¹ तदा वस्त्वैर्यान्ति मृत्युमुखे प्रजाः ॥ 45॥

जब गुरु, शुक्र और मंगल दक्षिण में स्थित हों तब धान्य की विकी तीन प्रस्थ वरी होती है और वस्त्र के लिए प्रजा मृत्यु के मुख में जाती है अर्थात् अन्न और वस्त्र का अभाव होता है ॥ 45॥

उत्तरं भजते मार्गं शुक्रपृष्ठं तु चन्द्रमाः ।

महाधान्यानि वर्धन्ते कृष्णधान्यानि दक्षिणे ॥ 46॥

जब शुक्र उत्तर मार्ग में आये हो और चन्द्रमा के पीछे हो तब महाधान्यों की वृद्धि होती है । यदि यही स्थिति दक्षिण मार्ग में हो तो काले रंग के धान्य वृद्धिगत होते हैं ॥ 46॥

दक्षिणं चन्द्रशूर्गं च तदा वृद्धतरं शवेत् ।

महाधान्यं तदा वृद्धि कृष्णधान्यमथोत्तरम् ॥ 47॥

यदि चन्द्रमा का शूर्ग दक्षिण की ओर बढ़ता दिखलायी गङे तो महाधान्य रोहे, चना, जौ, चावल आदि की वृद्धि होती है तथा उत्तर शूर्ग की वृद्धि होने पर काले रंग के धान्य बढ़ते हैं ॥ 47॥

कृत्तिकानां मधानां च रोहिणीनां विशाख्योः ।

उत्तरेण महाधान्यं कृष्ण धान्यञ्च दक्षिणे ॥ 48॥

कृत्तिका, मधा, रोहिणी और विशाखा के उत्तर होने से महाधान्य और दक्षिण होने से कृष्ण धान्य की वृद्धि होती है ॥ 48॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं न पीडयते यदा यदा ।

तं देशं भिक्षवः स्फीताः संश्येयुस्तदा तदा ॥ 49॥

जिन-जिन देशों के नक्षत्र यहों के द्वारा जव-जव पीड़ित -घातित न हों तब-तब भिक्षुओं को उन देशों में प्रसन्न चित्त होकर जाना चाहिए और वही शान्ति-पूर्वक विहार करता चाहिए ॥ 49॥

धान्यं वस्त्रमिति जेयं तस्यार्थं च शुभाशुभम् ।

ग्रहतक्षत्रान् सम्प्रत्य कथितं भद्रबाहुना ॥ 50॥

1. प्रस्थब्रयं तदा वस्त्वैर्यान्ति मु० । 2. धान्यं तु म० ।

यह और नक्षत्रों के गुभाशुग योग से धान्य और वस्त्रों के भावों की तेजी-मन्दी को भद्रबाहु स्वामी ने कहा है ॥150॥

इति नैर्यन्थे भद्रबाहुनिभित्तेसंश्लेषणोगार्थकाण्डो नाम पञ्चविष्टितमोऽस्यायः ॥25॥

विवेचन—तेजी-मन्दी जगन्नने के अनेक नियम हैं। ग्रहों की स्थिति, उनका मरणी होना या दक्षी होना तथा उनकी ध्रुवाओं पर से तेजी-मन्दी का ज्ञान करना, आदि प्रक्रियाएं प्रचलित हैं। इस संहितायन्थ में ग्रहों की स्थिति पर से वस्तुओं की तेजी-मन्दी का साधारण विचार किया गया है। बारह महीनों की तिथि, वार, नक्षत्र के सम्बन्ध से भी तेजी-मन्दी का विचार 'वर्ष प्रबोध' नापक ग्रन्थ में विस्तार से किया गया है। यहाँ संक्षेप में कुछ प्रमुख योगों का निरूपण किया जायगा।

द्वादश पूर्णमासियों का विचार—चैत्र की पूर्णिमासी को निर्मल आकाश हो तो किसी भी वस्तु से लाभ की सम्भावना नहीं रहती है। यदि इस दिन ग्रहण, भूकम्प, विद्युत्पात, उल्कापात, केतूदय और वृष्टि हो तो धान्य का संग्रह करना चाहिए। गेहूं, जी, चना, उड्ड, मूँग, सोना, चाँदी आदि अन्नों ले इस पूर्णिमा के सातवें महीने के उत्पात लाभ होना है। वैशाखी पूर्णिमा को आकाश के स्वच्छ रहने पर सभी वस्तुएं तीन महीनों तक सस्ती होती हैं। गेहूं, चना, वस्त्र, सोना आदि का भाव प्रायः गम रहता है। बाजार में अधिक घटा-घढ़ी नहीं होती। यदि इस पूर्णिमा को चन्द्र परिक्रम, उल्कापात, विद्युत्पात, भूकम्प, वृष्टि, केतूदय या अन्य किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो धान्य के साथ कपास, बस्त्र, रुई आदि पदार्थ लेज होते हैं। जूट का भाव भी ऊँचा उठता है। गेहूं, मूँग, उड्ड, चना का संग्रह भाद्र द मास में ही लाभ देता है। सभी प्रकार के अन्नों का संग्रह लाभ देता है। चावल, जी, अरहर, कांगुनी, कोंदो, मक्का आदि अनाजों में दुगुना लास होता है। सोने, चाँदी, माणिक्य, मोती इन पदार्थों का मूल्य कुछ नीचे गिर जाता है। वैशाखी पूर्णिमा की मध्यरात्रि में जोर से विजली चमके और थोड़ी-सी वर्षा होकर बन्द हो जाय तो आगामी माघ मास में गुड़ के ब्यापार में अच्छा लाभ होता है। अनाज के संग्रह में भी लाभ होता है। इस पूर्णिमा के प्रातःकाल सूर्योदय के समय बादल दिखलायी पड़े तथा आकाश में अन्धकार दिखलायी पड़े तो अगहन महीने में घी और अनाज में अच्छा लाभ होता है। यों तो सभी महीनों में उक्त पदार्थों में लाभ होता है, किन्तु घी, अनाज और गुड़-चीनी में अच्छा लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमा को स्वाति नक्षत्र का चतुर्थ चरण हो तथा ग्रनिवार या रविवार हो तो उस वर्ष आपारियों को लाभ के साथ हाति भी होती है। बाजार में अनेक प्रकार की घटा-घढ़ी चलती है। ज्येष्ठ

पूर्णिमा को आकाश स्वच्छ हो, बादलों का अभाव रहे, निर्मल चाँदनी वत्सान रहे तो मुमिक्ष होता है, साथ ही अनाज में साधारण लाभ होता है। बाजार सम्प्रसारित रहता है, न अधिक ऊँचा ही जाता है और न नीचा ही। जो व्यक्ति ज्येष्ठ पूर्णिमा की उक्त स्थिति में धान्य, गुड़ का संग्रह करता है, वह भाद्रपद और आश्विन में लाभ उठाता है। गेहूँ, चना, जी, तिलहन में पौष के महीने में अधिक लाभ होता है। यदि इस पूर्णिमा को दिन में मेघ, बर्फ हो और रात में आकाश स्वच्छ रहे तो व्यापारियों को साधारण लाभ होता है तथा मार्गशीर्ण, माघ और फाल्गुन में वस्तुओं में हानि होने की सम्भावना है। रात में इस तिथि को दिजली गिरे, उल्कापात हो, भूकम्प हो, चन्द्र का परिवेष दिखलाई पड़े, उम्ब्राधनुष नाल या काले रंग का दिखलाई पड़े तो अनाज का संग्रह करना चाहिए। इस प्रकार की स्थिति में अनाज में कई यूना लाभ होता है। गोना, चाँदी के मूल्य में साधारण तेजी आती है। ज्येष्ठी पूर्णिमा को मध्य ग्राहि में चन्द्र परिवेष उदास-सा दिखलाई पड़े और स्थार रहन-रहकर बोलें तो अन्तसंग्रह की सूचना समझना चाहिए। चारे का भाव भी तेज हो जाता है और प्रत्येक वस्तु में लाभ होता है। धी का भाव कुछ सस्ता होता है तथा तेल की गैरिमत भी गम्भीर होती है। अगहन और पौष मास में सभी वदायों में लाभ होता है। फाल्गुन का महीना भी नाना के लिए उत्तम है। यदि ज्येष्ठी पूर्णिमा को चन्द्रोदय या चन्द्राल्ल के गम्य उल्कापात हो और आकाश में अनेक रंग-विरंगी लागाएं चमकती हुई भूमि पर गिरे तो सभी प्रकार के अनाजों में तीन महीने के उपरान्त लाभ होता है। तौवा, पीतल, कौसा आदि धानुओं में और मथाले में कुछ घाटा भी होता है।

आपाह्नी पूर्णिमा को आकाश निर्मल और उज्ज्वल चाँदनी दिखलायी पड़े तो सभी प्रकार के अनाज पाँच महीने के भीतर तेज होते हैं। कान्तिक महीने से ही अनाज में लाभ होना प्रारम्भ हो जाता है। गोने का भाव माघ के महीने से मर्हुमा होता है। सद्गुरु के व्यापारियों की साधारण लाभ होता है। सूत, काण्डा और जूट के व्यापार में लाभ होता है; किन्तु इन वस्तुओं का व्यापार अस्थिर रहता है, जिससे हानि होने की भी सम्भावना रहती है। यदि आपाह्नी पूर्णिमा को मध्य रात्रि के पश्चात् आकाश लगातार निर्मल रहे तथा मध्य रात्रि के गहरे आकाश में चाँदन्न रहे तो चैती फसल के अनाज में लाभ होता है। अगहनी और भद्रई फसल के अनाज में लाभ नहीं होता। साधारणतया वस्तुओं के भाव ऊँचे आते हैं। वी, गड़, तेल, चार्दी, बारदामा, गुवाह, मटर आदि वस्तुओं का रस भी नेजी की ओर रहता है। शेयर के बाजार में भी हीनाभिक—चटा-बूढ़ी होती है। लोहा, रेशर एवं उन वदायों में जनी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होने की सम्भावना अधिक रहती है। यदि आपाह्नी पूर्णिमा को दिन भर बर्फ हो और रात में चाँदनी स निकले, बूद्धा-बूढ़ी होती हो तो अनाज में लाभ होने की सम्भावना नहीं

है। केवल सोना, चाँदी और गुड़ के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। गुड़, चीनी में कई गुना लाभ होता है। यदि इसी पूर्णिमा को बुध वक्री हुआ हो तो छः महीने तक सभी पदार्थों में तेजी रहती है। जो पदार्थ विदेशों से आते हैं, उनका भाव अधिक तेज होता है। स्थानीय उत्पादन पदार्थों का भाव अधिक तेज होता है। श्रावणी पूर्णिमा को आकाश निर्मल हो तो सभी वस्तुओं में अच्छा लाभ होता है। यदि इस दिन स्वच्छ चंदनी आकाश में व्याप्त दिखलाई पड़े तो नाना प्रकार के रोग फैलते हैं तथा लाल रंग की सभी वस्तुओं में तेजी आती है। ये हैं और जावज वीं कमी रहती है। जिस स्थान पर श्रावणी के दिन चन्द्रमा स्वच्छ तथा काले ज्येष्ठवाला दिखलाई पड़े, उस स्थान में दुर्भिक्ष के साथ खाद्यान्न की बड़ी भारी कमी हो जाती है, जिसमें सभी व्यक्तियों पर कष्ट होता है। लोहा, चाँदी, नीलम आदि वहुमूल्य पदार्थों का भाव भी तेज होता है। भग्नाद मास की पूर्णिमा निर्मल होने पर धान्य का संग्रह नहीं करना चाहिए। यदि यह पूर्णिमा चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक निर्मल रहे तो धान्य में लाभ नहीं होता है तथा खाद्यान्नों की कमी भी नहीं रहती है। सोना, चाँदी, जेयर, चीनी, गुड़, धी, किराना, वस्त्र, जूट, कपास आदि पदार्थ समर्थ रहते हैं। इन पदार्थों के भावों में अधिक ऊँच-नीच नक्षी होती है। पटा-बढ़ी का कारण जनि, शुक्र और मंगल हैं। यदि इस पूर्णिमा के नक्षत्र को इन तीनों ग्रहों हारा वेधा जाता हो, या दो ग्रहों हारा वेधा जाता हो तो सभी पदार्थ महेंग होते हैं। और तो और मिट्टी का भाव भी महेंगा होता है। जिन पदार्थों की उत्पत्ति मशीनों के द्वारा होती है, उन पदार्थों में कान्तिक मास में महेंगाई होना आरम्भ होता है। आश्विन पूर्णिमा के दिन आकाश स्वच्छ, निर्मल हो तो धान्य का संग्रह करना अनुचित है; क्योंकि वस्तुओं में लाभ होने की सम्भावना ही नहीं होती है। आकाश में ये अच्छादित हों तो अवश्य संग्रह करना चाहिए; क्योंकि इस छठीद में चैत्र के महीने में लाभ होता है।

कान्तिक पूर्णिमा को येचाच्छन्न होने पर अनाज में लाभ होता है। चीनी, गुड़ और धी में हानि होती है। यदि यह पूर्णिमा निर्मल हो तो सामान्य तथा सभी वस्तुओं का भाव स्थिर रहता है। व्यापारियों को न अधिक लाभ ही होता है और न अधिक शाटा ही। मार्गशीर्ष और पौष की पूर्णिमा का फलादेश भी उपर्युक्त कान्तिक पूर्णिमा के तुल्य है। माघी पूर्णिमा को बादल हों तो धान्य छठीद में सातवें महीने में लाभ होता है और फालगुनी पूर्णिमा को बादल हों, उल्कागात या विद्युतात हो तो धान्य में सातवें महीने में अच्छा लाभ होता है। धी, चीनी, गुड़, कपास, लड्डी, जूट, मन और पाट के व्यापार में लाभ होता है। माघी और फालगुनी इन दोनों पूर्णिमाओं के स्वच्छ होने पर सोने के व्यापार में लाभ होता है।

भौम ग्रह की स्थिति के अनुसार तेजी-मन्दी का विचार—जब मंगल मार्गी होता है, तब रुद्धि मन्दी होती है। ऐप राशि का मंगल मार्गी हो तो मन्दी सस्ते होते हैं। वृष का मंगल मार्गी हो तो रुद्धि तेज होकर मन्दी होती है तथा चांदी में घटा-बढ़ी होती है। मिथुन और कर्क राशि के मार्गी मंगल का फल तेजी-मन्दी के लिए नहीं है। सिंह का मंगल मार्गी होने पर एक मात्र तक अलसी और गेहूँ में तेजी रहती है। कल्या का मंगल मार्गी हो तो रुद्धि, अलसी, गेहूँ, तेज, तिलहन आदि पदार्थ तेज होकर गम्भे होते हैं। तुला का मंगल मार्गी होने पर गुजरात और कच्छ में धान्य भाव को महंगा करता है; वृश्चिक का मंगल मार्गी होने पर चौपायों में लाभ भारता है। धनु का मंगल मार्गी होने पर धान्य सस्ता करता है। पक्षर का मंगल मार्गी हो तो पंजाय तथा वंगाल में धान्य का भाव तेज होता है। कुम्भ का मंगल मार्गी होने पर सभी प्रकार के धान्य सस्ते होते हैं और मीन के मंगल में भी धान्य वा भाव सस्ता ही रहता है। ऐप और वृश्चिक के बीच राशियों में मंगल के रहने पर दो मात्र तक धान्य भाव तेज रहता है। जिस भौमीने में सभी ग्रह वक्ती हो जायें, उस दाय में अधिक महेंगाई होती है। मीन में मंगल के वक्ती होने पर धान्य और दी तेज; कुम्भ गे वधी होने पर धान्य रस्ते और धी, तेल आदि तेज; पक्षर में मंगल के वक्ती होने से लोहा, पर्णीनी, विशुद्धयन्त्र, गेहूँ, अलसी आदि पदार्थ तेज होते हैं। कर्क राशि में मंगल के वक्ती होने गे गेहूँ और अलसी में घटा-बढ़ी होती रहती है। जिस राशि में मंगल वक्ती होता है, उस राशि के धान्यादि अवश्य तेज होते हैं। माघ अथवा पालगुन में कुण्ड पक्ष थी 1, 2, 3 तिथि को मंगल के वक्ती होने पर अन्न का गंग्रह करना चाहिए। इस गंग्रह में 15 दिनों के बाद ही चांगुना लाभ हो जाता है। जिस मास में पूणिमा के दिन वर्षा होती है, उस मास में गेहूँ, धी और धान्य तेज होते हैं।

बुध ग्रह को स्थिति से तेजी-मन्दी विचार ऐप राशि में बुध के रहने से सोना महेंगा होता है। 17 दिन में गाय, वैस्त आदि पशुओं वी हानि होती है। मोती, बवाहरात भी तेज होते हैं। वृष राशि के बुध में यभी वस्तुओं में गाधारण घटा-बढ़ी; मिथुन राशि के बुध में सभी प्रकार के अनामि रस्ते; कर्क के बुध में अफीम का भाव तेज होता है। यिह राशि के बुध में धान्य का भाव सग रहता है, खट्टे पदार्थ, देवदार तेज होते हैं और 18 दिन में गुल, बस्त्र, रेखे के स्लीपर, साधारण लवाजी का भाव तेज होता है। कल्या राशि में बुध 6 रहने से छठ पहीन तक सोना, चीनी तेज होते हैं, पश्चात् मन्दे हो जाते हैं। तुला राशि के बुध में धान्य मेंहंगे, वृश्चिक राशि के बुध में चीनीये और अफीम महेंगी, धनु के बुध में अफीम महेंगी, पक्षर के बुध में समभाव, कुम्भ के बुध में धान्य में घटा-बढ़ी और मीन के बुध में रुद्धि, अलसी मेंधी, लींग भी तेज होती है। कालगुन और आगाह महीनों में बुध का उदय होने से धान्य, धी और लाल पदार्थ मेंहंग होते हैं। पूर्व में

बुधोदय होने पर 25 दिन के बाद रुई में 10 प्रतिशत तेजी आती है और पश्चिम में बुधोदय होने पर रुई, कणास, सूत आदि में सस्ती आती है। मार्गशीर्ष में बुधोदय हो तो रुई नेज होती है। पूर्व दिशा में बुध का अस्त होने से 33 दिनों में धान्य, चूतावि मन्दे होने हैं किन्तु रुई में 15 प्रतिशत की तेजी आती है। पश्चिम में बुध के अस्त होने से 15 दिन में रुई 10 प्रतिशत तक सस्ती होती है। मेष राशि रो लेकर सिंह राशि तक बुध के मार्गी होने गे बापड़ा, चावल, हाथी, घोड़ा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कन्या और तुला में बुध के मार्गी होने से चन्दन, गूत, घृत, चीनी, अलगी आदि पदार्थ महँग होते हैं। दृष्टिकोण में बुध के भूमि द्वारे से एरण्ड, बिनीना और मूँगफली तेज हो जायगी। कुम्भ और मीन में बुध के मार्गी होने से गोमा, सुपारी, सरसों, सोंठ, लाख, कपड़ा, गुड़, खींडि, तेल और मूँगफली आदि पदार्थ तेज होते हैं।

गुरु की स्थिति का फलादेश बृष्ण राशि में गुरु के रहने से धी और धान्य का भाव अस्त्यन्त तेज होता है। मिथुन राशि में गुरु के रहने से रुई, तांबा, चाँदी, नारियल, तेल, गृत, अफीम पदार्थ पहले तेज, पश्चात् मन्दे होते हैं। कक्ष राशि में गुरु के रहने से सभी पदार्थ महँग होते हैं। सिंह में बुहस्पति के रहने से गेहूं, धी तेज और कन्या में रहने गे ज्वार, मूँग, सोंठ, चावल, घृत, तेल, शिवाड़ा छः महीने के बाद नेज, रुई तीन-चार महीने में तेज तथा चाँदी मन्दी होती है। वृश्चिक राशि के ग्रह में सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। धनु राशि के गुरु में गेहूं, चावल, जी आदि अन्न महँगः तेल, गुड़, मूँग सस्ते होते हैं। मकार राशि में गुरु के रहने से तीन महीने महँगी पश्चात् मन्दी आती है। मीन राशि के गुरु में सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। गुरु का अस्त होने के 31 दिन शाद रुई में 10-20 रुपये की मन्दी आती है। कालगून मास में गुरु अस्त हो तो धान्य तेज और रुई में 10-20 रुपये की मन्दी आती है। गुरु के बज्जी होने पर मुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, धातु, रुई, केसर, कागूर आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। गुरु के मार्गी होने से चाँदी, सरसों, रुई, चावल, धी में निरस्तर घटा-घटी होती रहती है।

शुक्र की स्थिति का फलादेश—गेष के शुक्र में सभी धान्य महँगे, बृष्ण के शुक्र में अनाज महँगा, रुई, मन्दी और बाफीम तेज; मिथुन के शुक्र में रुई मन्दी, अफीम तेज; वार्ष के शुक्र में सभी वस्तुएँ महँगी, रुई का भाव विशेष तेज; सिंह के शुक्र में लाल रंग के पदार्थ महँगे, कन्या में सभी धान्य महँगे, तुला के शुक्र में अफीम तेज; वृश्चिक के शुक्र में अनाज सस्ता; धनु के शुक्र में धान्य महँगे, मकार के शुक्र में 20 दिन में सभी अन्न महँगे, कुम्भ एवं मीन के शुक्र में अनाज सस्ते होते हैं। सिंह का शब्द, तुला का मंगल, कक्ष का गुरु जब आवा है, अब अन्न महँगा होता है।

शुक्र-उदय के दिन नक्षत्रानुसार फल

अशिकनी में शुक्र के उदय होने पर जी, तिल, उड्ड का भाव तेज होता है। भरणी में शुक्र का उदय होने से तृण, धान्य, तिल, उड्ड, चावल, गहौं का भाव तेज होता है। कृत्तिका में शुक्र उदय होने से सभी प्रकार के अन्न ससंत होते हैं। रोहिणी में समर्पता, मृगशिरा में धान्य महेंगे, आद्रा में अत्यवृद्धि होने से महेंगाई, पुनर्वंश में अन्न का भाव महेंगा, पूष्य में धान्य भाव अत्यन्त महेंगा तथा आश्लेषा से अनुराधा नक्षत्र तक शुक्र के उदय होने से तृण, अन्न, काष्ठ, चतुष्पद आदि सभी पदार्थ महेंगे होते हैं।

शुक्र और गणि जब दोनों एक राशि पर अन्त होती तो खव अनाज तेज होती है। शुक्र बढ़ी हो तो सभी अनाज मन्दे तथा, घृत, रोल तेज होते हैं। शुक्र के मार्गी होने पर 5 दिनों के उपरान्त सोना, चाँदी, मोती, जवाहरजल आदि महेंगे होते हैं।

शनि का फलादेश—शनि के उदय के तीन दिन वाद रुई तेज होती है। मूँग मशालि, चावल, गहौं के भावों में घटा-बढ़ी होती रहती है। जाइकनी और भरणी नक्षत्र में शनि बढ़ी हो तो एक वर्ष तक पीड़ा; धान्य और चीणायों का मूल्य बढ़ जाता है। भवा पर बढ़ी होकर आश्लेषा पर शनि आता है तो गहौं, घृत, शाल, प्रवाल तेज होता है। जयेष्ठा पर बढ़ी होकर अनुराधा पर शनि आता है तो सभी वस्तुओं में अत्यधिक घटा-बढ़ी होती है। गुरु और शनि दोनों एक साथ बढ़ी हो और शनि 10/11 राशि का हो तो गहौं, तिल, तेल आदि पदार्थ 9 महीने तक तेज होते हैं। शनि के बढ़ी होने के तीन महीने उपरान्त गहौं, चावल, मूँग, ज्वार, धान्य, खजूर, जायफल, पी, हल्दी, नील, धनिया, जीरा, मेंथी, अफीम, पीड़ा आदि पदार्थ तेज और सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि पदार्थ मन्दे एवं नारियल, लुपाड़ी, लवंय, तिल, तेल आदि पदार्थों में घटा-बढ़ी होती रहती है। शनि मार्गी हो तो दो मास में नेल, हींग, मिठे मशाले को तेज और अफीम, रुई, सूत, वस्त्र आदि पदार्थों को मन्दा करता है। यदि शनि कृतिका, राहिणी, मृगशिरा, आद्रा, पुनर्वंश, पूष्य और आश्लेषा नक्षत्र में बढ़ी हो तो सभी वस्तुएँ महेंगी होती हैं।

तेजी-मन्दी के लिए उपयोगी पञ्चवार का फल—जिस महीने में पाँच रविवार हों उस महीने में राज्यभाव, महामारी, भोना आदि पदार्थों में तेजी होती है। किसी भी महीने में पाँच सोमवार होने से राष्ट्रपूर्ण पदार्थ मन्दे, घृत-तेल-धान्य के भाव मन्दे रहते हैं। पाँच संयन्त्रवार होने से अभिन्न-भय, वर्षा का निरोध, अफीम गन्दी तथा धान्यभाव घटता-बढ़ता रहता है। पाँच बुधवार होने में भी, गृह, खाँड़ आदि रस तेज होते हैं; रुई, चाँदी घट-बढ़कर अन्त में तेज होती है। पाँच गुरुवार होने से सोना, मूँग, सूत, लग्ज, चावल, चीज़ी आदि पदार्थ मन्द होते हैं। पाँच

शुक्रवार होने से प्रजा की वृद्धि, धान्य मन्दा, लोग सुखी तथा अन्य भोग्य पदार्थ सस्ते होते हैं, पांच शनिवार होने से उषद्रव, अग्निभय, नशीले पदार्थों में मन्दी, धान्यभाव अस्थिर और तेज भवेगा होता है। लोहे का भाव पांच शनिवार होने से भवेगा तथा अस्त्र-प्रस्त्र, मशीन के कल-पुजों का भाव पांच मंगल और पांच गुरु होने से भवेगा होता है।

संकान्ति के बारों का फल- रविवार को संकान्ति का प्रवेश हो तो राज-चित्रह, अनाज भवेगा तेज, धी, इन आदि पदार्थों का संग्रह करने से लाभ होता है। सोमवार यों संकान्ति का प्रवेश हो तो अनाज महेगा, प्रजा को सुख, घृत, तेज, गुड़, चीनी आदि के संग्रह में तीसरे महीने लाभ होता है। मंगलवार को संकान्ति प्रवेश करे तो धी, तेज, धान्य आदि पदार्थ तेज होते हैं। लाल वस्तुओं में अधिक तेजी आदि आनी है तथा सभी वस्तुओं के संग्रह में दूसरे महीने में लाभ होता है। बुधवार यों संकान्ति का प्रवेश होने पर श्वेत वस्त्र, श्वेत रंग के अन्य पदार्थ भवेगे तथा नील, लाल और ध्याम रंग के पदार्थ दूगरे महीने में लाभप्रद होते हैं। गुरुवार को संकान्ति का प्रवेश हो तो प्रजा सुखी, धान्य सस्ते; गुड़, खाँड़ आदि मधुर पदार्थों में दो महीने के उपरान्त जरूर होता है। शुक्रवार को संकान्ति प्रविष्ट हो तो सभी वस्तुएं सस्ती, लोग सुखी-समान, अन्न की अत्यधिक उत्पत्ति, पीली वस्तुएं, श्वेत वस्त्र तेज होते हैं और तेज, गुड़ के संग्रह में चींथ भास में लाभ होता है। शनिवार को संकान्ति के प्रविष्ट होने से धान्य तेज, प्रजा दुखी राजविरोध, पशुओं को पीड़ा, अन्न गाय तथा अन्न वा भाव भी तेज होता है।

जिस बार के दिन संकान्ति या प्रवेश हो, उसी बार को उस मास में अमावास्या हो, तो खप्तंर योग होता है। यह जीवों का और धान्य का नाश करने वाला होता है। इस योग में अनाजों में शटा-बढ़ी चलती रहती है।

पहली संकान्ति शनिवार को प्रविष्ट हुई हो, इससे आगे वाली दूसरी संकान्ति रविवार को प्रविष्ट हुई हो और तीसरी आगे वाली मंगलवार को प्रविष्ट हो तो खप्तंर योग होता है। यह योग अत्यन्त कष्ट देने वाला है।

मकर संकान्ति का फल—पौष महीने में मकर संकान्ति रविवार को प्रविष्ट हो तो धान्य का मूल्य दुगुना होता है। शनिवार छो हो तो तिगुना, मंगल के दिन प्रविष्ट हो तो चौगुना धान्य का मूल्य होता है। बुध और शुक्रवार को प्रविष्ट होने से समान भाव दौर गुरु तथा सोमवार को हो तो आधा भाव होता है।

शनि, रवि और मंगल के दिन मकर संकान्ति का प्रवेश हो तो अनाज का भाव तेज होता है। यदि मेष और वक्र संकान्ति का रवि, मंगल और शनिवार को प्रवेश हो तो अनाज भवेगा, इति-भीति आदि का आतंक रहता है। कार्तिक तथा मार्गशीर्ष यीं संकान्ति के दिन जलवृष्टि हो, तो पौष में अनाज सस्ता होता

है तथा फसल मध्यम होती है। कर्क अथवा सकर संकान्ति शनि, रवि या मंगल बार की हो तो भूकम्प का योग होता है। प्रथम संकान्ति प्रवेश के नक्षत्र में दूसरी संकान्ति प्रवेश का नक्षत्र दूसरा या तीसरा हो तो अनाज सस्ता होता है। चौथे या पाँचवें पर प्रवेश हो तो धान्य लेज एवं छठे नक्षत्र में प्रवेश हो तो दुष्काल होता है।

संकान्ति से गणित द्वारा तेजी-मन्दी का परिज्ञान—संकान्ति का जिस दिन प्रवेश हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसकी संख्या में तिथि और बार की संख्या जो उस दिन की हो, उसे मिला देना चाहिए। इसमें जिस अनाज की तेजी-मन्दी जानना हो उसके नाम के अक्षरों की संख्या मिला देना। जो योगफल हो उसमें तीन का भाग देने से एक शेष बचे तो वह अनाज उस संकान्ति के मास में मन्दा विकास, दो शेष बचे तो समान भाव रहेगा और शून्य शेष बचे तो वह अनाज मर्हना होगा।

संकान्ति जिस प्रहर में जैसी हो, उसके अनुसार गुब्ब-दुध, लाभावाम आदि की जानकारी सिद्ध चक्र द्वारा करनी चाहिए।

द्वारानुसार संकान्ति फलावदोधक चक्र

बार	नक्षत्र	नाम	फल	काल	फल	दिन
रवि	उत्तर	सोरा	घूर्दोको सुख	पूर्वोदय	विषेशोको सुख	पूर्व
सोम	चित्र	ज्वारी	बैरपोको सुख	मध्याह्न	बैरपोको सुख	दण्डिण कोण
मंगल	चर	महोदरी	चोरोको सुख	अपराह्न	शुद्धोको सुख	पश्चिम कोण
बुध	मैत्र	भैशाकिनी	राजाभैश्चोको सुख	प्रदीप	विशाखोको सुख	दण्डिण
गुरु	भूष्य	नन्दा	हिंजणोंको सुख	अर्द्धरात्रि	राष्ट्रभैश्चोको सुख	बृत्तर कोण
बुक	मिथ्य	मिथा	दशुभैश्चोको सुख	अपरहन्ति	नटादिको सुख	पूर्व कोण
शनि	द्वारुग	राष्ट्रमी	चाषदालोको सुख	पश्चात्यकाल	पश्चुपालोको सुख	करण

ग्रुव-स्त्र-उग्र-मिथ्य-लघु-मृदु-तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्र—उत्तरा काल्पनी, उत्तरा-पाहा, उत्तराभ्युपद और रोहिणी ग्रुव संज्ञक; स्वाति, पुनर्वर्ण, ध्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चन संज्ञक; विशाखा और कृत्स्तिका मिथ्य संज्ञक; हस्त, अश्विनी, गुरु और अभिजित् दिग्य या लघु संज्ञक; मृगशिर, रेवती, चित्रा और अनुग्रामा मृदु या मैत्र संज्ञक एवं मूल, व्येष्ठा, आद्रा और व्राण्लेपा तीक्ष्ण या दारुण संज्ञक हैं।

अधोमुख संज्ञक—मूल, आश्वेषा, विशाखा, कृत्स्तिका, पूर्वाकाल्पनी, पूर्वीपाहा पूर्वाभ्युपद, भरणी और भग्ना अधोमुख संज्ञक हैं।

ऊर्ध्वमुख संज्ञक—आद्रा, पुष्य, अवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुख संज्ञक हैं।

तिर्यङ् मुख संज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ् मुख संज्ञक हैं।

दग्धसंज्ञक तत्त्व—रविदग्ध को गरुडी, संगलवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तरापादा, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पतिवार को उत्तराकाल्यगुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेती दग्धसंज्ञक हैं।

मास शून्य नक्षत्र—चंते में रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और ल्वाति, ज्येष्ठ में उत्तरापादा और पूर्ण, आषाढ़ में पूर्वाफाल्यगुनी और धनिष्ठा, अवण में उत्तरापादा और अवण, भाद्रपद में अतभिषा और रेती, आश्विन में पूर्वाभाद्रपद, कार्तिक में दुष्टिका और मध्या, मार्गशीर्ष में चित्रा और विशाखा, पौष में आर्द्धा, अश्विनी और हस्त, माघ में अवण और मूल एवं कालगुन में भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र हैं।

गंकालित प्रवेश के दिन नक्षत्र का स्वभाव और संज्ञा अवयत करके वस्तु वी तेजी-मन्दी जाननी चाहिए। यदि संक्रान्ति का प्रवेश तीक्ष्ण, दग्ध या उथ संज्ञक नक्षत्र में होता है, तो सभी वस्तुओं की तेजी रामझनी चाहिए। मृदु और ध्रुव मंशक नक्षत्रों में गंकालित या प्रवेश होने से समान भाव रहता है। दायण संज्ञक नक्षत्र में संक्रान्ति का प्रवेश होने से खाद्यान्तों का अभाव रहता है, सभी अन्य उपशोग की वस्तुएँ भी उपजब्द नहीं हो पाती।

संक्रान्ति जिस वाहन पर रहती है, जो वस्तु धारण करती है, जिस वस्तु का भक्षण करती है, उस वरतु की कमी होती है तथा वह वस्तु महेंगी भी होती है। अतः संक्रान्ति के वाहनचक्र में भी वस्तुओं की तेजी-मन्दी जानी जा सकेगी।

रवि नक्षत्र चक्र—अश्विनी में सूर्य के रहने से सभी अनाज, सभी रस, वस्त्र, अलसी, एरण्ड, तिल, मेरी, लालबन्दन, इलायची, लौग, मुपारी, नारियल, कपूर, हींग, हिंगलु आदि तेज होते हैं। गरुडी में सूर्य के रहने से चावल, जी, चना, मोठ, अरहर, अलगी, मुड़, ची, अफीम, मैय आदि पदार्थ तेज होते हैं। कृत्तिका में श्वेत पुष्प, जी, चावल, गेहूँ, मूँग, मोठ, राई और गरसों तेज होते हैं। रोहिणी में चावल आदि सभी धान्य, अलसी, गरसों, राई, तेल, दाख, गुड़, खीड़, सुगारी, रुई, शूत-जूट आदि पदार्थ तेज होते हैं। मृगशिरा में सूर्य के रहने से जलोत्पन्न पदार्थ नारियल, शबंधल, रुई, मूल, रेशम, वस्त्र, कपूर, चन्दन, चना आदि पदार्थ तेज होते हैं। आर्द्धा में रवि के रहने से ची, मुड़, चीनी, चावल, चन्दन, लाल नमक, कामाल, रुई, हल्दी, रोट, लोहा, चोदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। पुनर्वसु नक्षत्र में रहने से उड़द, मूँग, मोठ, चावल, मसूर, नमक, सज्जी, लाख, गील, तिल, एरण्ड, मांजुफल, केशर, कपूर, देवदार, लौग, नारियल, श्वेत वस्तु आदि पदार्थ महेंगे होते हैं। पुष्प नक्षत्र में रवि के रहने से तिल, तेल, मदा, गुड़, ज्वार, गुग्गुल, मुपाड़ी, गोठ, मोम, लौग, हल्दी, जट, ऊरी वस्तु आदि नमकि लकड़ियाँ जूते हैं।

संकान्तिवाहनफलबोधक चक्र

करण	यन्त्र	शालव	कोलव	सैतिल	गर	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतु- र्भु	नाम	किस्तुम्
स्थिति	वैदा	वैदा	खडी	सोती	वैदा	वैदा	वैदा	सोती	खडी	सोती	खडी
फल	मध्यम	मध्यम	महर्च	समर्घ	मध्यम	महर्च	महर्च	समर्घ	समर्घ	महर्च	—
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वराह	गर्दभ	हस्ती	महिरा	बोढा	कुत्ता	मेडा	बैल	कुरुकुट
उप- वाहन	गज	अश्व	बैल	मेढा	गर्दभ	ऊंट	मिह	शार्दूल	महिप	व्याघ्र	वानर
फल	भूष	भूष	पोडा	मुभिष्ठ	लक्ष्मी	वलेश	स्थैर्य	मुभिष्ठ	लेश	स्थैर्य	मृग्यु
स्वर्ण	श्वेत	लील	हरिल	वारुदु	वल	शग्गा	जाला	चित्र	हम्बल	नगन	घनवणे
आयुध	भुशुंदा	गदा	खड्ड	दृष्ट	वनुप	तोमर	कुन्त	पाश	पंकुश	तल-	वाल
पात्र	सुवर्ण	रूपा	ताम्र	कांस्य	लोह	तीकर	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठ
भद्र	अस	पाथस	भचय	पक्षास	पय	दधि	चिवालगुड	पधुर	पून	शक्करा	—
लेपन	विलारा	कुड्क	चन्दन	भाटी	गोरो-	भविला	हररा	मुरमा	विन्दू	वगर	काँड़
वर्ण	देव	भूत	सर्प	१४	मृदा	विप्र	जर्वा	वैश्य	शृद	मिथ्र	प्रायज
पुण्य	पुलभा	जागो	वकुल	केनको	बैल	अर्क	कमल	दृवा	महिका	पाठ्य	तापा
भूपण	नुगुर	कंकण	सोती	सैता	मुकुट	पणि	गुजा	कीर्ती	कीलक	पुजाम	मुख्य
कंकुका	विचिक्कर्ण	हरिल	भुज्जपत्र	पोता	१०. खेतील	कुमा	भज्जन	वरकुल	पाण्डुर	—	—
वय	बाला	कुमारी	गला-	युवा	प्रौदा	प्रय-	लुजा	वल्लय	जनि-	उत्र-	मेघ्या

**शकाब्द पर से चंद्राविदि मासों में समस्त वस्तुओं की तेजी-मन्दी
अवगत करने के लिए ध्रुवांक**

मास १२	चंद्र	लैलात	प्रदेष	शकाविदि	अवगति	ना. प.	प्रथम	कार्यालय	संस्कृत	पाठ्य	आधि	लाल्य
यद-जौ	०	२	२	०	०	२	२	२	२	०	२	३
जन	०	२	२	०	०	२	२	२	२	०	२	३
मेहे	०	२	२	२	०	२	२	२	२	०	२	३
फायल	०	२	२	२	०	२	२	२	२	०	२	३
तिल	०	२	२	२	०	२	२	२	२	०	२	३
चौथी	०	२	२	२	०	२	२	२	२	०	२	३
गुड	०	०	२	२	०	२	२	२	२	०	२	३
घी	३	०	०	०	०	३	३	३	३	०	३	३
नमक	३	१	०	०	१	१	१	१	१	१	३	३
उद्ध	२	२	१	१	०	१	१	१	१	०	१	५
भद्रहर	०	०	२	२	०	०	०	०	०	०	०	४
सूर्य	३	३	३	३	०	३	३	३	३	०	३	५
हर्ष	३	३	०	०	३	०	०	०	०	०	३	५
देहा	३	३	०	०	३	०	०	०	०	०	३	५
सूत	२	२	१	१	०	१	१	१	१	०	३	५
वष	२	२	१	१	०	१	१	१	१	०	३	५
कम्बल	०	०	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१
पाट	०	०	२	२	१	१	१	१	१	०	१	१
सूपारी	१	१	०	०	२	१	१	१	१	०	१	१
तांदी	०	०	२	२	१	१	१	१	१	०	१	१
तेल	२	१	१	०	१	१	१	१	१	१	०	१
फिटकिरी	१	०	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१
हींग	२	३	३	०	२	१	१	१	१	१	१	१
हल्दी	२	२	३	३	०	२	१	१	१	१	१	१
जींग	०	०	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१
जीरा	२	१	१	१	०	१	१	१	१	१	१	१
अजवाइन	२	१	१	१	०	१	१	१	१	१	१	१
करूँ	०	०	२	२	१	१	१	१	१	०	१	१
ककुरी	०	०	२	२	१	१	१	१	१	०	१	१
धनिया	१	१	१	१	०	१	१	१	१	१	१	१

आग्नेया में रवि के रहने से अलसी, तिथि, तैल, गुड़, शेमर, नील और अफीम महेंगे होते हैं। पञ्चाम में रवि के रहने से ज्वार, एरण्ड बीज, दाढ़ी, मिरच, तैल और अफीम महेंगे होते हैं। पूर्वी फालगुनी में रहने से सोना, चाँदी, लोहा, धूत, तैल, सरसों, एरण्ड, मुगाही, नील, बांस, अङ्गीक, जूट आदि तेज होते हैं। उत्तरा फालगुनी में रवि के रहने से ज्वार, जी, गुड़, चीनी, जूट, कपास, हल्दी, हरड़, हींग, खार और कत्था आदि तेज होते हैं। हस्त में रवि के रहने से कण्ठा, गेहूँ, सरसों आदि तेज होते हैं। निवा में रहने से गेहूँ, चना, कपास, अरहर, सूत, केशर, लाल चपड़ा तेज होते हैं। स्वाति में रहने से धानु, गुड़, खाँड़, तैल, हिंगुर, कपूर, लाख, हल्दी, रुई, जूट आदि तेज होते हैं। अनुराधा और विशाखा में रहने से चाँदी, चावल, सूत, अफीम आदि महेंगे होते हैं। ज्येष्ठा और मूल में रहने से चावल, सरसों, वस्त्र, अफीम आदि पदार्थ तेज होते हैं। पूर्वायादा में रहने से तिल, तैल, गुड़, गुग्गुल, हल्दी, कपूर, ऊनी वस्त्र, जूट, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तरायादा और श्रवण में रवि के होने से उड़द, मूंग, जूट, सूत, गुड़, कपास, चावल, चाँदी, बांस, सरसों आदि पदार्थ तेज होते हैं। धनिष्ठा में रहने से मूंग, गसूर और नील तेज होते हैं। शतभिषा में रवि के रहने से सरसों, चना, जूट, कपड़ा, तैल, नील, हींग, जायपाल, दाढ़ी, छुहारा, सोंठ आदि तेज होते हैं। पूर्वी भाद्रपद में सूर्य के रहने से मोणा, चाँदी, गेहूँ, चना, उड़द, शी, रुई, रेशम, गुग्गुल, नीपरा मूल आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तरायाद्रापद में रवि के होने ने सभी यस, धान्य और तैल एवं रेक्ती में रहने से भोजी, रस, कन्फूस, गमक, गुग्नित पदार्थ, अरहर, मूंग, उड़द, चावल, लहसुन, लाख, रुई, राजजी आदि पदार्थ तेज होते हैं।

उक्त चक्र द्वारा तेजी-यन्त्री निकालने की विधि

शक खगादिप्रूपोन (1649)शालिवाहदभूपतेः ।

अनेन युक्तो द्रव्याकारवैत्रादि प्रतिसास ॥

द्वद्वेत्रैः हृते शेषे फलं वन्द्रेण मध्यमम् ।

नेत्रेण रसहानिश्च शून्येतार्थं सूतं बृथेः ॥

अर्थात् शक वर्ष की संख्या में से 1649 घटा कर, शेष यिस मास में जिस पदार्थ का भाव जानना हो उसके श्रुत्वांक जोड़कर योगफल में 3 का भाग देने से एक शेष मिलता, दो शेष यन्दा और शून्य शेष, में तेजी कहना चाहिए। विक्रम संवत् में से 135 घटाने पर शक संवत् हो जाता है। उदाहरण—विक्रम संवत् 2013 के ज्येष्ठ मास में चावल की तेजी-यन्त्री जाननी है। अतः सर्वप्रथम विक्रम संवत् बनाया— $2013 - 135 = 1878$ शवा संवत्। सूत-नियम के अनुसार $1878 - 1649 = 229$ और ज्येष्ठ मास में चावल का श्रुत्वांक 1 है, इसे जोड़ा

तो = $229 + 1 = 230$; इसमें 3 से भाग दिया = $230 \div 3 = 76$; शेष 2 रहा। अतः चावल का भाव मन्दा आया। इसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

दैनिक तेजी-मन्दी जानने का नियम—जिस देश में, जिस वस्तु की, जिस दिन तेजी-मन्दी जाननी हो उस देश, वस्तु, बार, नक्षत्र, मास, राशि इन सबके ध्रुवों को जोड़कर 9 का भाग देने से शेष के अनुसार तेजी-मन्दी का ज्ञान 'तेजी-मन्दी के चक्र' के अनुसार देखनी चाहिए।

देश तथा नगरों की ध्रुवा—विहार 166, बंगाल 247, आसाम 791, मध्य-प्रदेश 108, उत्तर प्रदेश 890, बम्बई 198, पंजाब 419, रंगून 167, नेपाल 154, चीन 642, अजमेर 167, हरिद्वार 272, बीकानेर 213, सूरत 128, अमेरिका 322, योरोप 976।

मास ध्रुवा—चैत्र 61, वैशाख 63, ज्येष्ठ 65, आषाढ़ 67, श्रावण 69, भाद्रपद 71, आश्विन 73, कार्तिक 51. माघशीर्ष 53, पौष 55, माघ 57, फाल्गुन 59।

सूर्य राशि ध्रुवा—मेष 520, वृष्ट 762, मिथुन 510, कर्क 218, सिंह 830, कन्या 260, तुला 503, वृश्चिक 711, धनु 524, मकर 554, कुम्भ 270, मीन 586।

तिथि ध्रुवा—प्रतिपदा 610, द्वितीया 710, तृतीया 481, चतुर्थी 357, पञ्चमी 634, षष्ठी 304, षष्ठी 812, अष्टमी 111, नवमी 565, दशमी 305, एकादशी 233, द्वादशी 261, त्रयोदशी 524, चतुर्दशी 552, पूर्णिमा 630, अमावस्या 166।

बार ध्रुवा—विहार 137, सोमवार 94, मंगल 809, बुध 702, गुरु 713, शुक्र 808, शनि 85।

संसार का कुल ध्रुवा—2085।

नक्षत्र ध्रुवा—अश्विनी 176, भर्णी 783, वृत्तिका 370, लोहिणी 775, मूर्गाशीरा 682, आर्द्धा 146, पुत्रवेशु 540, पुष्य 634, शालेया 170, भूमा 73, पूर्वांशालयुनी 85, उत्तरांशालयुनी 148, दृष्ट 810, वित्ता 305, स्वाती 861, विशाखा 734, अमुराधा 712, ज्येष्ठा 716, गूल 743, पूर्वांशादा 614, उत्तरांशादा 623, अभिग्रित् 683, श्रवण 657, धनिष्ठा 500, शतभिषा 564, पूर्वभिष्ठाद 336, उत्तरभिष्ठाद 183, रेखती 720।

पदार्थों की ध्रुवा—सोना 253, चांदी 760, ताँवा 563, गोत्तल 258, नीहा 915, कांसा 249, पत्थर 163, मोती 142, रुई 717, कागड़ा 127, पाट 476, गुर्जी 103, तम्बाकू 240, गुपाड़ी 252, नाह 88, मिरच 268, धी 464, इव 75, गुड़ 256, चीनी 328, ऊन 112, जान्य 811, धान 712, मट्ट 232, लज 801, चावल 774, मूँग 801, सीरी 386, सरसो

858, अरहर 333, नमक 317, जीरा, 156, अफीम 263, सोडा 156, गाय 132, बैल 162, भेंस 612, भेड़ 618, हाथी 830, घोड़ा 835।

तेजी-मन्दी जानने का चक्र - मूर्य । तेज चन्द्र 2 अतिमन्द, भीम 3 तेज, राहु 4 अति तेज, वृहस्पति 5 मन्द, शनि 6 लेज, राहु 7 मम, वेतु 8 तेज, शुक्र 0 तेज ।

उदाहरण—बम्बई में चैत्रमुदि सप्तमी विवार को गेहूं का भाव जानना है। अतः सभी ध्रुवाओं का जोड़ किया। बम्बई की ध्रुवा 198, गूर्य मेष राशि का होते से 520, याम ध्रुवा 61, वारध्रुवा 137, तिथि ध्रुवा 812, इस दिन कृति का दृढ़व ध्रुवा 370, गेहूं ध्रुवा 232 इन गद्वारा घटेग किया। $198 + 520 + 61 + 137 + 812 + 370 + 232 = 2330$ । इसमें 9 का भाव दिया = 2330 : 9 = 258 लक्ष्य, 8 शेष। तेजी-मन्दी जानने के चक्र में देखने के 8 शेष में वेतु तेज करने वाला हुआ अर्थात् तेजी होगी।

दैनिक तेजी-मन्दी निकालने की अन्य रीति

वस्तु विशेषक घानु—सोना 96, चाँदी 71, पीतल 59, मूँगा 51, लोहा 54, सीमा 90, रूमा 127, मोती 95, गाँगा 67, लौंबा 10, कुकुम 25।

अन्नाज और किराना—कर्णुर 102, हरे 73; जीरा 70, चीनी 102, मिथी 103, ज्वार 100, ची 50, लेल 10, नमक 59, हींग 62, मुपारी 204, अरहर 72, मिर्च 83, गूत 94, सरसों 808, कायड़ा 100, चपड़ा 87, मूँग 15, सोंठ 100, गुड़ 40, विनोला 88, मंजीठ 144, नाशियन 78, छुड़ाथा 144, चावल 17, जी 57, साठी 165, गेहूं 14, उड़द 80, तिल 53, चना 56, कपास 127, अफीम 192, हड्डी 77।

पशु—बोडा 270, हाथी 64, भैंस 92, गाय 77, बैल 87, बकरी 60, साँड़ 94, गेड़ 85।

नक्षत्र विशेषक—अश्वनी 10, शशी 10, कृत्तिका 96, रोहिणी 20, मृगशिरा 56, आर्द्धा 86, पुनर्वर्ग 21, पुष्य 64, आश्लेषा 135, भूषा 150, पूर्वाफालगुनी 220, उ० फा० 72, हस्त 334, जित्रा 21, स्वालि 210, विशाखा 320, अनुराधा 493, ज्येष्ठा 559, मूल 552, पू० फा० 142, उ० फा० 420, अवण 450, धनिष्ठा 736, शतभिषा 576, पूर्वाभाद्रपद 775, उत्तरा भाद्रपद 126, रेत्ती 256।

संक्षाति राशि विशेषक—मेष 37, वृष 84, मिथुन 86, कक्ष 109, सिंह 125, कन्या 102, तुला 104, वृश्चिक 144, धनु 144, मकर 198, कुम्भ 190, मीन 180।

तिथि विशेषक—प्रतिपदा 18, द्वितीया 20, तृतीया 22, चतुर्थी 24, पंचमी 26, षष्ठी 25, सप्तमी 23, अष्टमी 21, नवमी 19, दशमी 17, एकादशी 15, द्वादशी 13, अष्टोदशी 11, चतुर्दशी 9, अमावस्या 9, पूर्णिमा 16।

वार—रविवार 40, सोम 50, मंगल 50, बुध 72, गुरु 65, शुक्र 24, शनि 14।

तेजी-मन्दी निकालने की तिथि—जिस मास की या जिस दिन की तेजी-मन्दी निकालनी हो, उस महीने की संक्रान्ति 4। विशेषक ध्रुवा, तिथि, वार और नवम विशेषक ध्रुवाओं को जोड़ 3 का भाग देने से एक शेष रहने से मन्दी, दो शेष में समान और शून्य फेंट में तेजी होती है।

तेजी-मन्दी निकालने का अन्य निपथन—गहुँ की अधिकारिणी राशि कुम्भ, सोना की खेप, मोती की मीन, चीनी की कुम्भ, चावल की खेप, ज्वार की वृश्चिक, रुई की मिथून और चाँदी की कक्ष है। जिस वस्तु गी अधिकारिणी राशि से चन्द्रमा चीथा, आठवीं तथा बारहवीं हो तो वह वस्तु तेज होती है, अन्य राशि पड़ने से रखती होती है।

मूर्य, मंगल, शनि, गाहु, केतु ये कूर ग्रह हैं। ये कूर ग्रह जिस वस्तु की अधिकारिणी राशि से पहले, दूसरे, चौथे पाँचवें, सातवें, आठवें, नौवें, और बारहवें जा रहे हों, वह वस्तु तेज होती है। जितने कूर ग्रह उपर्युक्त स्थानों में जाते हैं, उतनी ही वस्तु अधिक तेज होती है।

षड्विशतितमोऽध्यायः

नमस्कृत्य लहावीरं सुरासुर॑जनैन्ततम् ।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम् ॥१॥

देव श्रीराधार्वों के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर स्वामी को नमस्कार कर शुभाशुभ से युवत स्वप्नाध्याय का वर्णन करता है ॥१॥

स्वप्नमाला दिवास्वप्नोऽनहटचिन्ता मधुफलम् ।

प्रकृता-कृतस्वप्नैश्च नेते प्राह्णा भिसित्ततः ॥२॥

स्वप्नमाला, दिवास्वप्न, चिन्ताओं से उत्पन्न, रोग गे उत्पन्न और प्रकृति के विकार के उत्पन्न स्वप्नफल के लिए तभीं श्रहण करना चाहिए ॥२॥

कर्मजा द्विविधा यत्र शुभाश्चाद्राशुभास्तथा ।

त्रिविधाः संग्रहाः स्वप्नाः कर्मजाः पूर्वसङ्खिताः ॥३॥

कर्मदिय से उत्पन्न स्वप्न दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ तथा पूर्व संचित कर्मदिय से उत्पन्न स्वप्न तीन प्रकार के होते हैं ॥३॥

भवान्तरेषु चाभ्यस्ता भावाः सफल-निष्फलाः ।

तान् प्रवद्यामि तत्त्वेन शुभाशुभफलान्विमान् ॥४॥

जो सफल या निष्फल भाव भवान्तरों में प्रश्परता है, उनके शुभाशुभ प्रवद्यायक भावों को यथार्थ रूप से निरूपण करता है ॥४॥

जलं जलरुहं धात्यं सदलाम्भौजभाजनम् ।

मणि-मुक्ता-प्रवालांश्च स्वप्ने षश्यन्ति श्लेष्मिकाः ॥५॥

जल, जल में उत्पन्न पदार्थ, धात्य, पत्र सहित कमल, मणि, मोती, प्रवाल आदि को स्वप्न में कफ प्रकृति वाला व्यक्ति देखता है ॥५॥

रक्त-पीतानि द्रव्याणि यानि पुष्टान्यन्ततस्मभवान् ।

तस्योपकरणं विन्द्यात् स्वप्ने षश्यन्ति पैत्तिकाः ॥६॥

रक्त-पीत पदार्थ, अग्नि गंसकार से उत्पन्न पदार्थ, इर्वण के आशूपण-उपकरण आदि को पित्त प्रकृति वाला व्यक्ति रक्तप्ति में देखता है ॥६॥

चयवनं प्लवनं यानं पर्वताऽथं द्रुमं गृहम् ।

आहरोहन्ति नराः स्वप्ने वातिकाः पक्षगार्मिनः ॥७॥

वायु प्रकृति वाला व्यक्ति गिरना, तीरना, सवारी पर चढ़ना, पर्वत के ऊपर चढ़ना, वृक्ष और प्रासाद पर चढ़ना आदि वस्तुओं की स्वप्न में देखता है ॥७॥

सिंह-व्याघ्र-गजैर्युक्तो गो-बृषाश्ववैरेत्युतः ।

रथमारह्य यो याति पृथिव्यां स नृपो भवेत् ॥८॥

जो सिंह, व्याघ्र, गज, याय, वैन, घोड़ा और मवायीं से युद्ध होकर ये पर चढ़कर यमन करते हुए स्वप्न में देखता है वह राजा होता है ॥८॥

प्रासादं कुञ्जरवरानारुद्धा सागरं विशेत् ।
तथैव च विकथ्येत्¹ तस्य नीचो नृपो भवेत् ॥9॥

श्रेष्ठ हाथी पर चढ़कर जो महन या समुद्र में प्रवेश करता है या स्वप्न में देखता है वह नीच नृप होता है ॥9॥

पुष्टकरिष्यां तु यस्तीरे भुञ्जीत शालिभोजनम् ।
उवेतं गजे समारुद्धः स राजा अचिराद् भवेत् ॥10॥

जो स्वप्न में श्वेत हाथी पर चढ़कर नदी या नदी के तटपर भात का भोजन करता है आ देखता है, वह श्रीग्र ही राजा होता है ॥10॥

सुवर्ण-रूप्यभाष्डे वा यः पूर्वनवरा स्नुयात् ।
प्रसादे वाऽथ भूमौ वा याने वा राज्यमाप्नुयात् ॥11॥

जो व्यक्ति स्वप्न में शासाद, भूमि या सावारी पर आरुद्ध हो सोने या चाँदी के बर्तनों में स्नान, भोजन-पान आदि यी किवाएँ करता हुआ देखे उसे राज्य की प्राप्ति होती है ॥11॥

दलेष्मसूक्ष्मपुरीषाणि यः स्वप्ने च विकृष्यति ।
राज्यं राज्यफलं वाऽपि सोऽचिरात् प्राप्नुयान्नरः ॥12॥

जो राजा स्वप्न में श्वेत वर्ण के मल, मूत्र आदि को इधर-उधर खीचता है, वह राज्य और राज्य फल को श्रीग्र ही प्राप्त करता है ॥12॥

यत्र वा तत्र वा स्थित्वा जिह्वायां लिखते नखः ।
दीर्घ्या रक्तया स्थित्वा स नीचोऽपि नृपो भवेत् ॥13॥

जो व्यक्ति स्वप्न में जहाँ-तहाँ स्थित होकर जिह्वा - जीभ को नख से खुरचता हुआ देखे अथवा रक्त या जाल वर्ण की दीर्घी—हील में स्थित होता हुआ देखे तो वह व्यक्ति नीच होते पर भी राजा होता है ॥13॥

भूमि ससागरजलां सर्शील-वन-कान्तनाम् ।
साहुभ्यामुद्गरेद्यस्तु स राज्यं प्राप्नुयान्नरः ॥14॥

जो व्यक्ति स्वप्न में वन-पर्वत-अग्न्य ग्रन्ति पृथ्वी सहित समुद्र के जल को भजाओं दारा पार करता हुआ देखता है, वह राज्य प्राप्त करता है ॥14॥

आदित्यं वाऽथ चन्द्रं वा यः स्वप्ने स्पृशते नरः ।
इमशानमध्ये निर्भीकः परं हत्वा चमूर्पतिष्ठ ॥15॥

1. श्वेत पृष्ठ । 2. उच्चे दरीने गतेष पृष्ठ ।

सौभाग्यमर्थं लभते लिङ्गच्छेदात् स्त्रियं नरः ।
भगच्छेदे तथा नारी पुरुषं प्राप्नुयात् फलम् ॥16॥

जो व्यक्ति स्वप्न में सूर्य या चन्द्रमा का सार्ण करता हुआ देखता है अथवा शृंगे नामति को मारकर उपशान भूमि में निर्भीक धूमता हुआ देखता है वह व्यक्ति सामाध्य और धन प्राप्त करता है। लिङ्गच्छेद होना देखने से पुरुष को स्त्री की प्राप्ति तथा भगच्छेद होना देखने से स्त्री को पुरुष की प्राप्ति होती है ॥15-16॥

शिरो वा छिद्यते यस्तु सोऽसिना छिद्यतेऽपि वा ।
सहस्रलाभं जगनीयाद् भोगाश्च विपुलान् तृपः ॥17॥

जो राजा स्वप्न में शिर कटा हुआ देखता है अथवा तलवार के द्वारा छेदित होता हुआ देखता है, वह सहस्रों का नाम तथा प्रचूर भोग प्राप्त करता है ॥17॥

धनरारोहते यस्तु विस्कारण-समार्जने ।
लर्येलाभं विजानीयाद् यद्युपुष्टिरिद्वेष्यम् ॥18॥

जो राजा स्वप्न में धनप पर बाण चढ़ाना, धनप का रकालन करना, प्रत्यंचा का समेटना आदि देखता है, वह अर्थलाभ पायता है, यद्य में जय और गतु का वध होता है ॥18॥

द्विगाढं हस्तिनारूढः शुबलो वाससलंकृतः ।
यः स्वप्ने जायते भीतः समृद्धिं लभते सतीम् ॥19॥

जो स्वप्न में शुक्ल वस्त्र और थोल आभूपणों से अलंकृत होकर हाथी पर चढ़ा हुआ भीत—भयभीत देखता है, वह गगृदि को प्राप्त होता है ॥19॥

देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान् स्वप्ने पश्यन्ति तुष्टिभिः ।
सर्वे ते सुखमिच्छन्ति विपरीते विपर्ययः ॥20॥

जो स्वप्न में सन्तोष के साथ देव, साधु, श्रावणों वा और प्रेतों वा देखते हैं, वे सब सुख चाहते हैं—सुख प्राप्त करते हैं और विपरीत देखने पर विपरीत फल होता है अत्रित स्वप्न में उक्त देव-साधु आदि का कोऽधित होना देखने से उल्टा फल होता है ॥20॥

गृहद्वारं विवर्णमभिज्ञाद्वा यो गृहं नरः ।
व्यसनान्मुच्यते शीघ्रं स्वप्नं दृढद्वा हि तादृशम् ॥21॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गृहद्वार या गृह की विवर्ण देखे या अद्विजाने वह शीघ्र

1. गगतान् गतः । 2. तुष्टिभः पूर्वः । 3. रोक्तिः गतः ।

ही विपति से छृटकारा प्राप्त करता है ॥21॥

प्रपानं यः पिदेत् पानं बढ़ो वा थोड़मिमुच्यते ।
विप्रस्थ सोमपानाय शिष्याणामर्थवृद्धये ॥22॥

यदि स्वप्न में गर्वत या जन की गीता हुआ देखे अथवा किसी वेंधे हुए व्यक्ति को छोड़ता हुआ देखे तो इस स्वप्न का फल ग्राहण के लिए सोमपान और शिष्यों के लिए धनवृद्धिकर होता है ॥22॥

निम्नं कूपजलं छिद्रान् यो भीतः स्थलमारुहेत् ।
स्वप्ने स वर्धते सस्य-धन-धान्येन मेधसा ॥23॥

जो व्यक्ति स्वप्न में नीचे कुर्चि के जल की, छिद्र की और भयभीत होकर स्थन पर चढ़ता हुआ देखता है वह धन-धान्य और बृद्धि के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होता है ॥23॥

शमशाने शुष्कदारं वा बलिलं शुष्कद्रुमं तथा ।
‘यूर्पं च मारुहेश्वरस्तु रवप्ने व्यसनमाप्नुयात् ॥24॥

जो व्यक्ति स्वप्न में शमशान में दूरे लूपा, अथवा एक मूली लकड़ी को देखता है अथवा यज्ञ के बृद्धि पर जो आनंदी चढ़ता हुआ देखता है, वह विपति को प्राप्त होता है ॥24॥

त्रपु-सीसायसं रजजुं नाणकं मक्षिका ३मधुः ।
यस्मिन् स्वप्ने प्रयच्छत्ति ३मरणं तस्य ध्रुवं भवेत् ॥25॥

जो व्यक्ति स्वप्न में घीगा, रोगा, जर्ता, गीवन, रजजु, मिक्षिका तथा मधु का दान करता हुआ देखता है, उसका मरण निश्चय होता है ॥25॥

अकालजं फलं पूष्पं काले वा यज्ञं ३मितम् ।
यस्मै स्वप्ने प्रदायेते ३तादृशायासलक्षणम् ॥26॥

जिस स्वप्न में व्रसमय के फल-फल या शमय पर होने वाले निन्दित फल-फलों को जिसको देते हुए देखा जाए वह स्वप्न आयास लक्षण माना जाता है ॥26॥

अलक्षतकं वाऽथ रोगो वा निवातं यस्य वेशमनि ।
गृहदाघमवाप्नोति चौरैर्वा शस्त्रघातनम् ॥27॥

1. १. यस्य शोडितानि चानि मृ० । 2. एकम् मृ० । 3. गृहायो ध्रुवो मृ० ।
4. वृद्धिनि मृ० । 5. वायास-तायासलक्षणम् मृ० ।

स्वान में जिस घर में लाधारस या रोग अथवा वायु का अभाव देखा जाय उस घर में या तो आग लगती है या चौरों द्वारा शस्त्रघात होता है ॥२७॥

अगम्यागमनं चैव सौभाग्यस्यामिवृद्धये ।

अतं कृत्वा । रसं पीत्वा यस्य वस्त्रयाइच यद्भवते ॥२८॥

जो स्वान में अलंकार बारके, रस पीकर अगम्या गमन - जो स्त्री पूज्य है उसके माथे रमण करना—देखता है, उसके सौभाग्य की वृद्धि होती है ॥२८॥

३शून्यं चतुष्पथं स्वप्ने यो भयं विश्य बुध्यते ।

३पूर्वं न लभते भार्या सुरूपं सुपरिच्छदम् ॥२९॥

स्वप्न में जो व्यक्ति निर्जन चौराहे मार्ग में प्रविष्ट होना देखे, पश्चात् जायत हो जाय तो उसस्ती स्त्री की सुन्दर, गणयमत पूत्र की प्राप्ति नहीं होती है ॥२९॥

दीणां विषं च बहुलकीं स्वप्ने गृह्ण विबुध्यते ।

कन्यां तु लभते भार्या कुलरूपविभूतिताम् ॥३०॥

स्वान में दीणा, बहुलकी और विष को ग्रहण करे, पश्चात् जायत हो जाय तो उसकी स्त्री की सुन्दर सूप मण यक्ता कर्या नि प्राप्ति होती है ॥३०॥

विषेण म्रियते यस्तु विषं वाऽपि विवेन्नरः ।

४स युक्तो धन-धार्येन वध्यते च चिरादि सः ॥३१॥

जो व्यक्ति स्वान में विष भक्षण द्वारा मृत्यु की प्राप्ति हो अथवा विष भक्षण करना देखे वह धन-धार्ये में युक्त होना है तथा चिरादि तत् -अधिक समय तक वह किसी प्रकार के वर्ष्यन में वैधा नहीं रहता है ॥३१॥

५उपाचरन्नासवाऽये भूति गत्वात्यकिञ्चनः ।

ब्रूयाद वै सद्गच्छः किञ्चन्नासत्यं वृद्धये हितम् ॥३२॥

यदि स्वान में कोई व्यक्ति आसन बोर शून एव धान नहीं हुआ देखे अथवा अकिञ्चन निरगहार द्वारा अपने खो परना हुआ देखे तो इस अश्रु स्वप्न की जालित के लिए गथ्य नमग्न बोना चाहिए, वर्णाकि थोड़ा भी अरात्य भाग्य विकाम के लिए हितकारी नहीं होता ॥३२॥

६प्रेतयुक्तं समाख्यो दंष्ट्रियुक्तं च यो रथम् ।

दक्षिणाभिमुखो याति म्रियते सोऽचिरान्नरः ॥३३॥

जो स्वप्न में प्रेतयुद्ध, गर्दग्यक्षत रथ में आलड़ दक्षिण दिशा का ओर जाता है वह देसता है, वह मनव्य शीघ्र ही परण को प्राप्त हो जाता है ॥33॥

बराहयुक्ता या नारी ग्रीवाबद्धं प्रकर्षति ।

सा तरयाः पश्चिमा रात्री १मृत्युः भवति पर्वते ॥34॥

यदि गति के उत्तरार्ध में स्वप्न में कोई शूकर मृत नारी विसी की देखी हुई गई वो शीघ्र तो उसकी किसी पहाड़ पर मृत्यु होती है ॥34॥

खर-शूकरयुक्तेन खरोष्ट्रेण बृकेण च ।

स्थेन दक्षिणा याति दिशं स छियते जरा ॥35॥

स्वप्न में कोई व्यक्ति खर—गर्दभ, शूकर, ठैट, भैंडिया सहित रथ से दक्षिण दिशा को जाय तो जीघ्र उस व्यक्ति का मरण होता है ॥35॥

कृष्णवासा २यदा भूत्वा प्रवासं नावगच्छति ।

मार्गं सभयमाप्नोति ३यति दक्षिणगो वधम् ॥36॥

स्वप्न में यदि कृष्णवास होने पर भी प्रवास को प्राप्त न हो तो मार्ग में भय प्राप्त होता है तथा दक्षिण दिशा वी ओर गमन दिखलाई पड़े तो मृत्यु भी हो जाती है ॥36॥

यूमेकखरं शूलं यः स्वप्नेष्वभिरोहति ।

सा तम्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥37॥

जो व्यक्ति रात्रि न पिछले भाग में स्वप्न में यज स्तम्भ, गर्दभ, शूल पर आगोहित होता है तथा २ यज कल्याण नहीं देख पाता है ॥37॥

दुर्वासः कृष्णभगवश्च वायतैलविपक्षितम् ।

सा तरय पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥38॥

यदि शोई व्यक्ति रात्रि के पिछले प्रहृष्ट में स्वप्न में दुर्वासा, कृष्ण भस्म, तैल एव नारना आदि देखे तो उसका कल्याण नहीं होता है ॥38॥

अभक्ष्यभक्षणं चैव पूजितात्मा च दर्शनम् ।

कालपूष्पफलं चैव लभ्यतेऽर्थस्य सिद्धये ॥39॥

स्वप्न में अभक्ष्य-भक्षण करना, पूज्य व्यक्तियों का दर्शन करना, सामयिक पूज्य वीर्यों का दर्शन करना या पापित के विष होता है ॥39॥

१नागाप्रे वेशमनः सालो यः स्वप्ने २चरते नरः ।

सोऽचिराद् ब्रह्मते लक्ष्मीं क्लेशं चाप्नोति दारुणम् ॥40॥

जो व्यक्ति श्रेष्ठ महल के परकोटे पर चढ़ता हुआ देखे वह श्रेष्ठ लक्ष्मी का ल्याग करता है, भयंकर कष्ट उठाता है ॥40॥

दर्शनं ग्रहणं भग्नं शयनासनमेव च ।

प्रशस्तमाममासं च स्वप्ने बृद्धिकरं हितम् ॥41॥

स्वप्न में कञ्जका मांस का दर्शन, ग्रहण, भग्न तथा शयन, आग्न तथा आग्न करना हितकर और प्रशस्त माना गया है ॥41॥

४२ प्रक्वमासस्य घासाय भक्षणं ग्रहणं तथा ।

स्वप्ने व्याधिभयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥42॥

स्वप्न में पतंज मास का दर्शन, ग्रहण और भक्षण व्याधि, गय पार कष्टोत्पादक माना गया है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥42॥

छर्वने मरणं विन्द्यादर्थनाशो दिरेचने ।

क्षत्रो यानाद्यधार्यानां ग्रहणे माग्नमादिशेत् ॥43॥

स्वप्न में वपन करना देखने से मरण, विरेचन—दस्त लगना देखने से लगना, पान आदि के छत्र को ग्रहण करने से धन-धान्य का अभाव होता है ॥43॥

मधुरे निवेशस्वप्ने दिवा च यस्य वेशमनि ।

तस्यार्थनाशं नियतं मृति वाऽभिनिर्दिशेत् ॥44॥

दिव के स्वप्न में जिगके घर में प्रवेश करता हुआ देखे, उमसम धन नाश निश्चित होता है अथवा वह मूला का निरेश करता है ॥44॥

यः स्वप्ने गायते हसते नृत्यते पठते नरः ।

गायते रोदनं विन्द्यात् ३नर्तने वध-बन्धनम् ॥45॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गाना, हँसना, नाचना और फड़ना देखता है उसे गाना देखने में गोना पड़ता है और नाचना देखने से वध-बन्धन होता है ॥45॥

हसने शोचनं ब्रूयात् कलहं पठने तथा ।

बन्धने स्थानमेव स्यात् ४मुक्तो देशान्तरं व्रजेत् ॥46॥

1. ग्रहण (वराह) मूल । 2. वर्त्त मूल । 3. नृत्या मूल । 4. पूर्णा मूल । 5. वर्त्त

हेसना देखने से जोके, पढ़ना देखने से कलहू, बन्धन देखने से स्थान प्राप्ति और छूटना देखने से देशान्तर ममत होता है ॥46॥

**सरांसि सरितो वृक्षान् पर्वतान् कलशान् गृहान् ।
शोकार्त्तः पश्यति स्वप्ने तस्य शोकोऽभिवधते ॥47॥**

जो व्यक्ति स्वान में तालाव, नदी, वृक्ष पर्वत, कलश और गृहों को शोकार्त्त देखता है उसका शोक बहता है ॥47॥

**३महस्थली तथा भ्रष्टं कान्तारं वृक्षवर्जितम् ।
सरितो नीरहोलाइचं शोकार्त्तस्त्र शुभार्थहौ ॥48॥**

शोकार्त्त व्यक्ति शैदि स्वप्न में महस्थल, वृक्षरहित वन एवं जलरहित नदी को देखता है तो उसके लिए स्वप्न शुभ कलप्रद होते हैं ॥48॥

**आरनं शयनं यानं गृहं वस्त्रं च भूषणम् ।
स्वप्ने ३कस्मै प्रदीयन्ते सुखिनः श्रियमाण्डुयात् ॥49॥**

स्वप्न में जो कोई किसी को आसन, अथवा सवारी, घर, वस्त्र, आभूषण दान करता हुआ देखता है, वह मुझे होता है तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥49॥

**अलंकृतानां द्रव्याणां वर्जि-वारण्योस्तथा ।
वृषभस्य च शुक्लस्य दर्शने प्राण्डुयाद् यशः ॥50॥**

अलंकृत पदार्थ, ज्वेत हाथी, चोड़, वैल आदि का स्वप्न में दर्शन करने गे यश की प्राप्ति होनी है ॥50॥

**पताकाभसियहिं वा शुक्ति-मुवतान् सकाञ्चनान् ।
दीपिकां लभते स्वप्ने योऽपि स लभते धनम् ॥51॥**

पताका, तत्त्वार, नाठी, अथवा, मीण, मोती, मीना; दीपिक आदि को जो भी स्वप्न में प्राप्त करना देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥51॥

**मूर्खं वा कुरुते स्वप्ने पुरीषं वा सलोहितम् ।
प्रतिबुध्येत्था यश्च लभते सोऽर्थनाशनम् ॥52॥**

जो स्वप्न में गेशाय या भूत महित ढूँढ़ी करना देखता है, और स्वप्न देखने के बाद भी जग जाता है, वह धनमाश की प्राप्ति होता है ॥52॥

1. सन् ४२ । २. सादा योऽग्नि दृष्टि अस्ति वर्ण है । ३. यामार्द-दृष्टि वर्ण ।

4. शोभा गृह । मुरान् मूरु ।

अहिर्वा वृद्धिचकः कीटो यं स्वप्ने दशते नरम् ।

प्राप्नुयात् सोऽर्थवान् यः स यदि भीतो न शोचति ॥५३॥

जो व्यक्ति स्वप्न में सौंप, बिच्छू या अन्य कीड़ों द्वारा काटे जाने पर भयभीत नहीं होता और शोक नहीं करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥५३॥

पुरीषं ^१छद्मनं यस्तु भक्षयेत् च ^२शंकयेत् ।

भूतं रेतश्च रक्तं च स शोकात् परिमुच्यते ॥५४॥

जो व्यक्ति स्वप्न में विना घृणा के टट्टी, वमन, मूत्र, वीर्य, रक्त आदि का भक्षण करता हुआ देखता है, वह शोक से छूट जाता है ॥५४॥

कालेषं चन्दनं रोध्रं धर्षणे च प्रशस्यते ।

अत्र लेपानि पिण्डानि तान्येव धनवृद्धये ॥५५॥

जो व्यक्ति स्वप्न में कालापुरु, चन्दन, रोध्र—तग आदि विगत से मुग्धिके कारण प्रशंसा लेता है तथा उनका लेना और वीक्षणा देखता है, उसके धन को वृद्धि होती है ॥५५॥

रक्तानां करवीराणामुत्पलानामुपासयेत् ।

लभ्मो वा दर्शने स्वप्ने प्रप्राणो वा विद्यीयते ॥५६॥

स्वप्न में रक्तकम्ल और नीलकम्लों का धर्षण, यहाँ और ओटन—तोड़ना देखने से प्रयाण होता है ॥५६॥

कृष्णं वासो हयं कृष्णं योऽभिरुद्धः प्रयाति च ।

दक्षिणां दिशमुद्दित्तः ^३सोऽभिप्रेतो यतस्ततः ॥५७॥

जो व्यक्ति स्वप्न में काले वस्त्रधारण कर काले थोड़े पर गवार होकर खिल हो दक्षिण दिश की ओर गमन करता है, वह निष्ठय में गृह्ण की प्राप्त होता है ॥५७॥

आसनं शालमलीं वापि कदलीं ^४पालिभद्रिकाम् ।

पुष्पितां यः समारुद्धः सवितमधि रोहति ॥५८॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गुरुसत जालम नी, दाना जीर देवदान या नीम के वृक्ष पर बैठना या उड़ना देखता है, उसे सम्भालि प्राप्त होती है ॥५८॥

१. अधिन मू० । २. कु ए मू० । ३. मालिप मू० । ४. नी नी नी मू० । ५. परि-
भृकद् मू० ।

रुद्राक्षी विकृता कालो नत्री स्वप्ने च कर्षति ।
उत्तरां दक्षिणां दिशं मृत्युः शीघ्रं समीहते ॥५९॥

भयंकर, विकृत रूपवाली, काली स्त्री यदि स्वप्न में उत्तर या दक्षिण दिशा की ओर खीचि तो जीव ही मृत्यु को प्राप्त होता है ॥५९॥

जटी मुण्डीं विरुपाक्षां मलिनां मलिनवाससाम् ।
स्वप्ने यः पश्यति ग्लानि समूहे भयमादिशेत् ॥६०॥

जटाधारी, मुण्डी, विरुपाक्षी, मलिन एवं मलिन वस्त्र वाली स्त्री को स्वप्न में ग्लानिपूर्वक देखना सामूहिक भय का सूचक है ॥६०॥

'तापसं पुण्डरीकं वा 'भिक्षुं विकलमेव च ।
दृष्ट्वा स्वप्ने विकुञ्जेत ग्लानि तस्य समादिशेत् ॥६१॥

तापसी पुण्डरीक; तथा विकल भिक्षु को स्वप्न में देखकर जो जाग जाता है, उसे ग्लानि फल की प्राप्ति होती है ॥६१॥

स्थले वाऽपि विकीर्णेत जले वा नाशमानुयात् ।
यस्य स्वप्ने नरस्यास्य तस्य विद्यामहद् भयम् ॥६२॥

जो व्यक्ति भूमि पर विकीर्ण—फल जाना और जल में नाश को प्राप्त हो जाना देखता है, उस व्यक्ति को महान् भय होता है ॥६२॥

बल्ली-गुल्मसमी वृक्षो बल्मीको यस्य जायते ।
शरीरे तस्य विज्ञेयं 'तदंगस्य विनाशनम् ॥६३॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अपने शरीर पर लता, गुल्म, वृक्ष, बाल्मीकि आदि का होना देखता है उसके शरीर का विनाश होता है ॥६३॥

मालो वा वेणुगुल्मो वा खर्जूरो हरितो द्रुमः ।
मस्तके जायते स्वप्ने तस्य साप्तोहिकः समृतः ॥६४॥

स्वप्न में जो व्यक्ति अपने मस्तक पर गाला, बौम, गुल्म, खर्जूर अथवा हरे वृक्षों को उपजाने देखता है, उसकी पृष्ठ साताह में मृत्यु होती है ॥६४॥

हृदये यस्य जायन्ते तद्रोगेण विनश्यति ।
अनंगजायमानेषु तदंगस्य विनिर्दिशेत् ॥६५॥

यदि हृदय में उक्त वृक्षादिकों ना उलाल होना स्वप्न में थे तो हृदय रोग से

1. द्रुमः मूः । 2. गृष्म कपलमेव च मूः । 3. नदी यगृ विनश्यत् मूः ।

उसका विनाश होता है। जिस अंग में उक्त दृक्षादिकों का उत्पन्न होना स्वप्न में दिखलाई पड़ता है, उसी अंग की बीमारी द्वारा विनष्ट होती है ॥65॥

रक्तमाला तथा माला रक्तं वा सूक्ष्मेव च ।
यस्मन्नेवावदन्धेत् तदंगेन ^१विकिलश्यति ॥66॥

स्वप्न में लाल माला या लाल सूक्ष्म के द्वारा जो अंग बांधा जाय, उसी अंग में क्लेश होता है ॥66॥

ग्राहो नरं तमं कञ्चित् यदा स्वप्ने च कर्षति ।
बद्धस्य मोक्षमाच्छटे मुक्ति बद्धस्य निर्दिशेत् ॥67॥

जब स्वप्न में कोई मकर या प्रडियान भवुद्य को खीचता हुआ-या दिखलाई पड़े तो, जो अवित बद्ध है—कागार आदि में थक्क है या गुरुदम्भ में पौँगा है, उसकी मुक्ति होती है। छूट जाता है ॥67॥

पीतं पुष्पं फलं परमै रक्तं वा सम्प्रदीयते ।
कृताकृतसुवर्णं वा तस्य ^२लाभो न संशयः ॥68॥

स्वप्न में यदि किसी व्यक्ति को पीन या लाल फल-फूलों की दता दिखलाई पड़े तो उसे सोना, चाँदी का लाभ निःसन्देह होता है ॥68॥

श्वेतमांसासनं यानं सितमाल्यस्य धारणम् ।
श्वेतानां वाऽपि द्रव्याणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ॥69॥

श्वेत मांस, श्वेत आमन, श्वेत बनारी, श्वेत माला का धारण करना तथा अन्य श्वेत द्रव्यों का दर्शन स्वप्न में जूँभ होता है ॥69॥

बलीबद्धतं यानं थोऽभिस्तुः प्रधर्वति ।
प्राचीं दिशमुदीचीं वा सोऽर्थलाभमवानुप्रात् ॥70॥

जो व्यक्ति स्वप्न में थोड़े चैकों के रथ पर चढ़कर पूर्व या उत्तर की ओर गान करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥70॥

नग-वेशम-गुराणं तु दीप्तानां तु शिरस्थितः ।
यः स्वप्ने मानवः सोऽपि महीं भोक्तुः ^३निराभयः ॥71॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गिर पर पर्वत, पर, घण्टहर तथा दीप्तिमान् पदार्थों का दखला है, वह रवव्य होकर गृथी का उपायोग करता है ॥71॥

१. गिरुवार गुरु । २. नामव्य वेशमान् गुरु । ३. विद्यमान् गुरु ।

**मृण्मयं नागमारुढः समारे प्लवते हितः ।
तथैव च विद्युध्येत सोऽचिराद् वसुधाधिपः ॥72॥**

जो रवान में गृजिका के हाथी पर सवार होकर सुख से समुद्र को पार करता हुआ देख तथा उसी स्थिति में जाग जाय तो वह शीघ्र ही पृथ्वी का स्वामी होता है ॥72॥

**पाण्डुराणि च वेशमानि पुष्प-शाखा-फलाच्चितान् ।
यो वृक्षान् पश्यति स्वप्ने सफलं चेष्टते तदा ॥73॥**

जो व्यक्ति रवान में अंत भवनों को तथा पुष्प, फल और शाखाओं से युक्त वृक्षों को देखता है, तो उसी तरटाएँ सफल होती हैं ॥73॥

**वासोभिर्हरितः शुक्लेवैष्ठितः प्रतिबृध्यते ।
दह्यते योऽग्निना वाऽपि वृद्ध्यमानो विद्युच्छ्वते ॥74॥**

जो रवान में शुल्क और हर वृक्षों ये वेष्ठित होकर अपने को देखता है, तथा उसी समय जाग जाता है अथवा अग्नि द्वारा जलता हुआ अपने को देखता है, वह वृद्ध्यमान होते हुए भी छोड़ दिया जाता है ॥74॥

**दुध्ध-तैल-घृतानां वा क्षीरस्य च विशेषतः ।
प्रशस्तं दशनं स्वप्ने भोजनं न प्रशस्यते ॥75॥**

रवान में दूध, तैल, घी का दर्जन शुभ है, भोजन नहीं । विशेष रूप से दूध का दर्जन शुभ माना गया है ॥75॥

**अंग प्रत्यंगयुक्तस्य शरीरस्य विवर्धनम् ।
प्रशस्तं दशनं स्वप्ने लङ्घ-रोमविवर्धनम् ॥76॥**

रवान में शरीर के अंग-प्रत्यंग का बढ़ना तथा नष्ट और रोम का बढ़ना शुभ माना गया है ॥76॥

**उत्संगः पूर्यते स्वप्ने यस्य धार्थ्यरन्तिनिदत्तः ।
फल-पुष्पेश्च सम्प्राप्तः प्राप्नोति महती श्रियम् ॥77॥**

रवान में जिस व्यक्ति की गोद सुन्दर धार्य, फल, पुष्प से भर दी जाय, वह बहुत उन प्राप्त करता है ॥77॥

कन्या वाऽर्थापि वा कन्या रूपमेव विभूषिता ।
प्रकृष्टा दृश्यते स्वप्ने लभते योषितः श्रियम् ॥78॥

यदि स्वप्न में सुन्दर रूपगुस्त कन्या या आर्या दिखाई पड़े तो सुन्दर स्त्री की प्राप्ति होती है ॥78॥

प्रक्षिप्यति यः शस्त्रैः पृथिवीं पर्वतान् प्रति ।
शुभमारोहते यस्य सोऽभिषेकमवाप्नुयात् ॥79॥

जो व्यक्ति स्वप्न में शस्त्रों द्वारा शशुओं को पराहत कर पृथिवी और पर्वतों को अपने अधीन कर लेना देखता है अब वह जो शुभ पर्वतों पर अपने को आरोहण करता हुआ देखता है, वह शार्याभिषेक को प्राप्त होता है ॥79॥

नारीं पुस्त्वं नरः स्त्रीत्वं लभते रूपनदशने ।
बध्येते लादुभौं शोन्नृं कुटुम्बपरिकृद्धये ॥80॥

यदि रूपन में श्री आर्ये को पूछा होता तो उस पूर्ण रत्नी होता देखा गया वह शोन्नृ कुटुम्ब के बन्धन में बेधन है ॥80॥

राजा राजसुत्तश्चौरीं यो सह्याधन-धान्यतः ।
स्वप्ने संजायते कश्चित् स राजामभिवृद्धये ॥81॥

यदि स्वप्न में कोई धन-धन्य गे युक्त हो राजा, राजानुच या जीर होता अपने को देखे वह राजाओं की अभिवृद्धि को पाना है ॥81॥

रुधिराभिषिक्तों कृत्वा यः स्वने परिष्णियने ।
धन्य-धान्य-श्रिया युक्तो न चिरात् जायते नरः ॥82॥

जो व्यक्ति स्वप्न में शशिर में अभिषिक्त होता है विवाह करना हुआ होता है, वह व्यक्ति चिरकाल तना-धन-पाला यापादा में युक्त रही होता है ॥82॥

शस्त्रेण छिथते जिह्वा स्वप्ने यस्य कथञ्चन ।
क्षत्रियो राज्यमाप्तात् शेषा वृद्धिमवाप्नुयुः ॥83॥

यदि स्वप्न में जिह्वा वो शस्त्र गे छिथा करता हुआ दिखाई पड़े तो शत्रियों की राज्य वी प्राप्ति और अन्य वर्ण वासीं का अभ्युदय होता है ॥83॥

देव-साधु-द्विजातीनां युजनं शान्तये हितम् ।
पापरूपमसु कायंत्रय शोधनं चोपवासनम् ॥84॥

पाप-स्वप्नों की ग्रान्ति के लिए देव, साधुजन बन्धु और द्विजातियों का पूजन और सत्कर्म तथा उपवास करना चाहिए ॥८४॥

एते स्वप्ना यथोहिष्टाः प्रायशः फलदा नृणाम् ।

प्रकृत्या कृपया चैव शेषाः साध्या निमित्ततः ॥८५॥

उपर्युक्त पथा अनुसार प्रतिपादित स्वप्न मनुष्यों को प्रायः फल देने वाले हैं, अब्रेष्ट स्वप्नों को निमित्त और स्वभावानुसार समझ लेना चाहिए ॥८५॥

स्वप्नाध्यायममुँ मुख्यं योऽधीयेत शुचिः स्वप्नम् ।

स पूज्यो लभते राजो नानापुण्यश्च साधवः ॥८६॥

जो पवित्रात्मा इस इस स्वप्नाध्याय का अध्ययन करता है, वह राजाओं के द्वारा पूज्य होता है तथा पुण्य प्राप्त करता है ॥८६॥

इसि नैर्धन्ये भद्रबाहुक निमित्ते स्वप्नाध्यायः वद्विश्वोऽध्यायः समाप्तः ॥२६॥

गिरञ्चन—स्वप्नगामन में प्रधानतया निम्नलिखित सात प्रकार के स्वप्न बताये गये हैं :

दृष्ट—जो कुछ जागृत अवस्था में देखा हो उसी को स्वप्नावस्था में देखा जाय ।

श्रुत—सांस के पहले कभी किसी गुना हो उसी को स्वप्नावस्था में देखे ।

अनुभूत—जो जागृत अवस्था में किसी भौति अनुभव किया हो, उसी को स्वप्न में देखे ।

प्रार्थन—जिन सी जागृतावस्था में प्रार्थना देखा वी हो उसी को स्वप्न में देखे ।

कहिष्ठ—जिसी जागृतावस्था में कभी भी कहिष्ठ की गयी हो उसी को स्वप्न में देखे ।

भाविक—जो कभी न तो देखा गया हो और न सुना याहो, पर जो भवित्व में धरित होने वाला हो उसे स्वप्न में देखा जाय ।

दोषज—वात, पित्त और कफ के विकृत हो जान से जो स्वप्न देखा जाय ।

उन सात प्रकार के स्वप्नों में से पहले पांच प्रकार के स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं, बरतुतः भाविक स्वप्न वा पात्र ही सत्य होता है ।

पांचवें प्रहूर के अनुगार स्वप्न का फल—रात्रि के पहले प्रहर में देखे गये रवाना पात्र वर्ग में, दूसरे प्रहर में देखे गये स्वप्न आठ महोन में (चन्द्रमेन मुनि

के मत से ७ महीने में), नीमरे प्रहर में देखे गये स्वप्न तीन महीने म., चीथे प्रहर में देखे गये स्वप्न एक महीने में (वराहमिहिर के मत से १६ दिन में), बाह्य पुरुष (उषाकाल) में देखे गये स्वप्न दस दिन में और प्रातःवान् सूर्योदय से कुछ पूर्व देखे गये स्वप्न अतिशीघ्र फल देते हैं। अब जैनाचार्य ज्योतिषशास्त्र के आधार पर कुछ स्वप्नों का फल उद्घृत किया जाता है—

अगुह—जैनाचार्य भद्रबाहु के मत से— काले रंग का अगुरुदेखने से निराकृदेह अर्थ लाभ होता है। जैनाचार्य सेव मुनि के मत से, मुख मिलता है। वराहमिहिर के मत से, धनलाभ के साथ स्त्रीलाभ भी होता है। वृहस्पति के मत से—इष्ट मित्रों के दर्शन और आचार्य मृदुब्रह्म एवं देवजनवर्य मणपति के मत से अर्थलाभ के लिए विदेश-गमन होता है।

अग्नि—जैनाचार्य चन्द्रमेन मुनि के मत से धूमशुद्धत अग्नि देखने से उत्तम काम्ति, वराहमिहिर और भार्कण्डेय के मत से प्रज्वलित अग्नि देखने से कार्यमिति, देवज गणपति के गति से अग्निभक्षण करना देखने से भूमिलाभ के साथ स्त्री रत्न की प्राप्ति और वृहस्पति के मत से जग्यवन्यमान अग्नि देखने से उत्तमाण होता है।

अग्नि-दग्ध—जो मनुष्य आमन, शृण्या, यात्रा और वाहन पर रवयं प्रियत हो कर अपने शरीर को अग्नि दग्ध होने हुए देखे तो, भत्तान्तर में अस्य की जलता हुआ देखे और तत्त्वज्ञ जाग उठे, तो उसे धन-धात्य की प्राप्ति होती है। अग्नि में जल कर मृत्यु देखने से शोणी पुरुष की मृत्यु और स्वस्थ पुरुष बीमार पड़ता है। मृह अधबा दूसरी वस्तु को जलने हुए देखना शुभ है। वराहमिहिर के मत से अग्नि-लाभ भी शुभ है।

अन्न—अन्न देखने से अर्थ-लाभ और सत्तान ची प्राप्ति होती है। आचार्य चन्द्रमेन के मत से एवेत अन्न देखने से इष्ट मित्रों की प्राप्ति, लाल अन्न देखने से शोण, पीला अनाज देखने से हर्ष और कृष्ण अन्न देखने से मृत्यु होती है।

अलंकार—अलंकार देखना शुभ है, परन्तु पहनना कपटप्रद होता है।

अस्त्र—अस्त्र देखना शुभ फलप्रद, अस्त्र द्वारा शरीर में साधारण चोट लगना तथा अस्त्र लेकर दूसरे का सामना करना विजयप्रद होता है।

अनुलेषण—एवेत रंग की वस्तुओं का अनुलेषण शुभ फल देने वाला होता है। वराहमिहिर के मत से लाल रंग के गन्ध, चन्दन तथा पूष्णमाला आदि के द्वारा अपने की शोभायमान देखे तो शीघ्र मृत्यु होती है।

अन्धकार—अन्धकारमध्य स्थानों में अर्थत् वन, भूमि, गुफा, मुरंग आदि स्थानों में प्रवेश होने हुए देखना रोगसूचक है।

आकाश—भद्रबाहु के मत से निर्मल आकाश देखना शुभ पलप्रद, लाल

बर्ण की आभा वाला आकाश देखना कपटप्रद और नील बर्ण का आकाश देखना Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पत्नोरथ सिद्ध करने वाला होता है।

आरोहण—वृष, माय, हारी, गन्दिर, वृश्च, प्रासाद और पर्वत पर स्वयं आरोहण करने हुए देखना या हूँगे जो आरोहित देखना अर्थ-लाभ सूचक है।

कपास—कपास देखने से स्वस्थ व्यक्ति स्वास होता है और गोमी की मृत्यु होती है। हूँगे को देने हुए कपास देखना जूगप्रद है।

कवच्छ—नाचने हुए छीन कवच्छ देखने से आधि, व्याधि और धन का भाग होता है। वराहमिहिर के मत से मृत्यु होती है।

कलश—कलश देखने से धन, आरोग्य और पूज की प्राप्ति होती है। कलशी देखने से गृह में कम्या उत्पन्न होती है।

कलह—कलह एवं लड़ाई-प्रगड़े देखने से स्वस्थ व्यक्ति स्वरूप होता है और गोमी की मृत्यु होती है।

काक—स्वास में काक, गिर, उम्लु और वृकुर जिसे चारों ओर से घेर कर त्रास उत्पन्न करें तो मृत्यु और अन्य को जास उत्पन्न करते हुए देखें तो अत्यं की मृत्यु होती है।

कृपारी—कृपारी कन्धा या देखने से अर्थेनाभ ५०० मन्त्रानं की प्राप्ति होती है। वराहमिहिर के गत से कृपारी कम्या के साथ आलियन करना देखने से कष्ट एवं धनकाष्य होता है।

कृष—मन्द जल या पंक वाले कृष के अस्त्र गिरना या हूँवना देखने से स्वस्थ व्यक्ति रोगी और गोमी की मृत्यु होती है। नालाव या नदी में प्रवेश करना देखने से रोगी को मरण मुक्त करते होता है।

शीर—नारे के द्वारा स्थायं भपनी या हूँसे द्वी हजासत करना देखने से कष्ट के साथ-साथ धन और पूज का नाश होता है। गणपति दैवज के मत से माता-पिता की मृत्यु, फारंगड़ेय के मन से भार्यागण के साथ माता-पिता की मृत्यु और वृहद्यति के मत से पूज मण होता है।

खेत—अन्यन्त आमन्द के गाथ सेव खेलते हुए देखना तु स्वरूप है। इसका फल वृहद्यति के मत से गोगा, शोक, धरना एवं पञ्चाज्ञान करना ज्ञात्यवैधत्वं पुनाण के मत ने—धन-नाश, उपेक्ष पूज या कन्धा का मरण और भार्या को कष्ट होता है। नारद के मत से गन्तव्य-नाश और पाशजर के गत से—धन-क्षय के साथ अपीलि होती है।

गमन—दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-नाश के साथ कष्ट, पठिचप दिशा की ओर गमन करना देखने से अपमान, उत्तर दिशा की ओर गमन करना देखने से अवान्यन्दाण और मूर्ख दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-प्राप्ति होती है।

गत्त—उच्च स्थान से अविसारमय गत्त में गिर जाना देखने से रोगी की

मृत्यु और स्वस्थ पुरुष हृण होता है। यदि इनमें में गत्ते में गिर जाय और उठने का प्रयत्न करने पर भी बाहर न आ सके तो उसकी दश दिन के भीतर मृत्यु होती है।

गाढ़ी— गाय या बैलों के द्वारा खींची जाने वाली गाढ़ी पर बैठे हुए देखने से गृथी के नीचे से चिर संचित धन की प्राप्ति होती है। बराहमिहिर के मत से—**पीताम्बर धारण** किये स्त्री को एक ही स्थान पर कई दिनों तक देखने से उस धारण पर धन मिलता है। बृहस्पति के मत से स्वप्न में दाहिने हाथ में सर्वि की काटता हुआ देखने से लक्षण रूपये की प्राप्ति अति शीघ्र होती है।

गाना— स्वयं को गाता हुआ देखने से कष्ट होता है। भद्रबाहु स्वामी के मत से स्वयं या दूसरे को मधुर गाना गाते हुए देखने से गुकादमा में विजय, व्यापार में लाभ और यण-प्राप्ति, बृहस्पति के मत से अर्थ-लाभ के साथ भयानक रोमों का शिकार और नारद के मत से सत्तान-कष्ट और अर्थ-लाभ पूर्व मार्कण्डेय के मत से अपार कष्ट होता है।

गाय— दुहने वाले के साथ गाय को देखने से कीति और गुण लाभ होता है। गणगति देवज के मत से—जल गीती गाय देखने से लक्ष्मी के तुल्य गुण वाली कन्या का जन्म और बराहमिहिर के भत में—स्वप्न में गाय का दर्शन सात ही सत्तानोत्पादक है।

गिरना— स्वप्न में घड़खड़ाते हुए गिरना देखने से दुख, चिन्ता एवं मृत्यु होती है।

गृह— गृह में प्रवेश करना, ऊपर चढ़ना एवं किसी से प्राप्त करना देखने से भूमि-लाभ और धन-धार्य की प्राप्ति एवं गृह का गिरना देखने से मृत्यु होती है।

घास— कच्चा घास, शहव (धान), कच्चे गेहूं एवं चने के पीड़िये देखने से भार्या को गर्भ रहता है। परन्तु इनके काटने या खाने से गर्भपात्र होता है।

घृत— घृत देखने से मन्दाग्नि, अन्य से लेना देखने से यश-प्राप्ति, घृत-पान करना देखने से प्रसह और शरीर में लगाना देखने से मानसिक चिन्ताओं के साथ शारीरिक कष्ट होता है।

घोटक— घोड़ा देखने से अर्थ-लाभ, घोड़ा पर चढ़ना देखने से गुट्टम्ब-वृद्धि और घोड़ी का प्रसव करना देखने से सत्तान-लाभ होता है।

चक्षु— स्वप्न में अकस्मात् चक्षुद्रव्य का सप्ट होना देखने से मृत्यु और आँख का फूट जाना देखने से कुटुम्ब में किसी की मृत्यु होती है।

चादर— स्वप्न में शरीर की चादर, चोंगा या कमीज आदि यो ज्वेत और नाल रंग की देखने से सत्तान-हानि होती है।

चिता— अपने को चिता पर आसह देखने से बीमार व्यक्ति की मृत्यु होती है और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है।

जल—रव्वन में नियंत्र जल देखने में कल्पणा, जल ढारा अभियेक देखने से भूमि की प्राप्ति, जल में डूबकर बिलग होना देखने से मृत्यु, जल को तैरकर पार करना देखने में सूरा और जल पीना देखने से कष्ट होता है।

जूना—रव्वन में जूता देखने से विदेश-यात्रा, जूता प्राप्त कर उपभोग करना देखने से उत्तर, एवं जूता से मार-पीट करना देखने से छ महीने में मृत्यु होती है।

शिल-तेल—तिल तेल और खली की प्राप्ति होना देखने से कष्ट, पीना और भक्षण करना देखने में मृत्यु, मालिण करना देखने में मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

दधि—स्वान में दही देखने में प्रीति, भक्षण करना देखने से यश-प्राप्ति, भात के साथ भक्षण करना देखने जे मत्तान-लाभ और दूसरों को देता-लेना देखने से अर्थलाभ होता है।

दौत—दौत कमजोर हो गये हैं और गिरने के लिए तैयार हैं, या घिर रहे हैं। सांडेखने गे धन का निश्च और शामिरिक कष्ट होता है। वराहमिहिर के मत में रक्षण से नष्ट, दौत और केजी या गिरना देखना मृत्युमूर्च्छा है।

दीपक—स्वान में दीपक जला हुआ देखने में प्रथनाभ, अकस्मात् विर्वाण प्राप्त हुआ देखने में मृत्यु और कठर्व ली देखने से यश-प्राप्ति होती है।

देव-प्रतिमा—स्वान में उठा देव का दर्शन पूजन और आह्वान करना देखने में विश्व धन वी प्राप्ति के साथ परमाश में गोदा मिलता है। स्वान में प्रतिमा का अभिन्न होना, गिरना, हिलना, चलना, ताजना और गात हुए देखने से आधिक्यावधि और मृत्यु होती है।

तरन—स्वान में नभ्न होना गस्तक पर लाल रंग की पुष्पमाला धारण करना देखने गे मृत्यु होती है।

तृत्य—स्वान से भव्यं का नृत्य करना देखने से रोग और दूसरों का तृत्य करता हुआ देखने गे अपमान होता है। वराहमिहिर के मत में—तृत्य का किसी भी रूप में देखना अण्मसूचक है।

षट्कान्त—स्वान में पक्वान्त कहीं गे प्राप्त कर भक्षण करता हुआ देखे तो रोगी की मृत्यु होती है। और ग्रवस्थ ग्रवित बीमार होता है। स्वान में पूरी, कच्चीरी, सान्वद्या और मिठान्त जाना देखने में गीद्र मृत्यु होती है।

फल—स्वान में फल देखने से धन की प्राप्ति, फल खाना देखने से रोग एवं मत्तान-नाश, और फल का अपहरण करना देखने से चोरी एवं मृत्यु आदि अनिष्ट फलों की प्राप्ति होती है।

फूल—स्वान में श्वेत पुष्पों का प्राप्त होना देखने से धन-लाभ, रक्तवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने गे रोग, पीतवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से यश एवं धन-लाभ, हरितवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से दृष्ट-भिन्नों का मिलना एवं धन-लाभ के पुष्प देखने गे मृत्यु होती है।

भूकम्प—भूकम्प होना देखने से रोगी की मृत्यु और स्वस्थ व्यवित रण होता है। चक्रसेन मृति के मत से, स्वप्न में भूकम्प देखने से राजा का मरण होता है। भद्रबाहु स्वाधी के मत से, स्वप्न में भूकम्प होना देखने से राज्य विनाश के साथ-साथ देश में बड़ा भारी उपद्रव होता है।

मल-मूत्र—स्वप्न में मल-मूत्र का शरीर में लग जाना देखने से धनप्राप्ति; भक्षण करना देखने से सुख और स्पर्श करना देखने से सम्मान मिलता है।

मृत्यु—स्वप्न में किसी की मृत्यु देखने से शुभ होता है और जिसकी मृत्यु देखते हैं वह दीर्घजीवी होता है। परन्तु अन्य दुखद घटनाएँ मुनने को मिलती हैं।

यज्व—स्वप्न में जी देखने से गर में पूजा, होम और अन्य मांगलिक कार्य होते हैं।

पुद्ध—स्वप्न में युद्ध विजय देखने से शुभ, पराजय देखने से अशुभ और युद्ध रास्ताधी वस्तुओं को देखने से चिन्ता होती है।

रधिर—स्वप्न में शरीर में से रधिर निकलना देखने से धन-धान्य की प्राप्ति; रधिर में अभिषेक करना दुआ देखने से गुण; इनान देखने से वर्ध-वास और रधिर पान करना देखने से विद्या-वास एवं अर्थलाभ होता है।

लता—स्वप्न में कण्टकवाली लता देखने से गुरुन रोग, साधारण फल-फूल वहित लता देखने से नूपदर्शन और लता के कीड़ा करने से रोग होता है।

लोहा—स्वप्न में लोहा देखने ये अनिष्ट और लोहा या लोहे से निर्मित वस्तुओं के प्राप्त करने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

वसन—स्वप्न में वसन और दस्त होना देखने से रोगी की मृत्यु; मल-मूत्र और सोना-चौड़ी का वसन करना देखने से निकट मृत्यु; रधिर वसन करना देखने गे छ: मारु आयु शेष और दुध वसन करना देखने से पुत्र-प्राप्ति होती है।

विवाह—स्वप्न में अन्य के विवाह या विवाहोत्सव में योग देना देखने से पीड़ा, दुख या किसी आत्मीय जन की मृत्यु और अपना विवाह देखने से मृत्यु या मृत्यु-तुल्य पीड़ा होती है।

कीणा—स्वप्न में अगते द्वारा वीणा वजाना देखने से पुत्र-प्राप्ति; दूसरों के द्वारा वीणा वजाना देखने से मृत्यु या मृत्यु तुल्य पीड़ा होती है।

शूंग—स्वप्न में शूंग और नखवाले पशुओं को मारने के निए दीड़ना देखने से राज्य भय और मारते हुए देखने से रोगी होता है।

स्त्री—स्वप्न में श्वेत वस्त्र परिहिता, हाथों में श्वेत पुण्य या माला धारण करने वाली एवं गुणदर आभूषणों वे मुश्लित स्त्री के देखने लक्ष आनिग्रन करने से धन प्राप्ति; रोग मुक्ति होती है। परस्त्रियों का लाभ होना व्रथवा आनिग्रन करना देखने से शुभ फल होता है। पीतवस्त्र परिहिता, पीत पुण्य या पीत माला धारण करने वाली स्त्री को स्वप्न में देखने से फलपाणि; समदरश परिहिता, मुक्त-

केशी और कृष्ण वर्ण के दीन वाली स्त्री का दर्जन या आलिंगन करना देखने से छः मास के भीतर मृत्यु और कृष्ण वर्ण वाली पापिनी आचारविहीना नम्रकेशी लम्बे रुठन वाली और मैं वस्त्र परिहिता स्त्री का दर्जन और आलिंगन करना देखने से शीघ्र मृत्यु होती है।

तिथियों के अनसार स्वप्न का फल —

शुक्लपक्ष को प्रतिपदा — इस तिथि में स्वप्न देखने पर विलम्ब से फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की द्वितीया — इस तिथि में स्वप्न देखने पर विपरीत फल होता है। अपने निष्ठा देखने से दुगरी को और दुसरों के निष्ठा देखने से अपने को फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की तृतीया — इस तिथि में भी शब्दा देखने से विपरीत फल मिलता है। पर फल भी प्राप्ति विवाह से होती है।

शुक्लपक्ष की चतुर्थी और पंचमी — इस तिथियों में स्वप्न देखने से दो महीने से अधिक दो वर्ष तक के भीतर फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की षष्ठी, सप्तमी अष्टमी, नवमी और दशमी — इन तिथियों में स्वप्न देखने से शीघ्र फल भी प्राप्ति होती है तथा स्वप्न मत्त्य निकलता है।

शुक्लपक्ष की एकादशी और द्वादशी — इन तिथियों में स्वप्न देखने से विलम्ब से फल होता है।

शुक्लपक्ष की त्रयोदशी और चतुर्दशी — इन तिथियों में स्वप्न देखने से स्वप्न का फल नहीं मिलता है तथा स्वप्न मिथ्या होता है।

शूणिमा — इस तिथि के स्वप्न का फल अवश्य मिलता है।

कृष्णपक्ष की प्रतिपदा — इस तिथि के स्वप्न का फल नहीं होता है।

कृष्णपक्ष की द्वितीया — इन तिथि के स्वप्न का फल विलम्ब से मिलता है। मतान्तर से, उसका स्वप्न माथेक होता है।

कृष्णपक्ष की तृतीया और चतुर्थी — इन तिथियों के स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्ष की पंचमी और षष्ठी — इन तिथियों के स्वप्न दो महीने बाद और तीन वर्ष के भीतर फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्ष की सप्तमी — इन तिथि का स्वप्न अवश्य शीघ्र ही फल देता है।

कृष्णपक्ष की अष्टमी और नवमी — इन तिथियों के स्वप्न विपरीत फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्ष की दशमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी — इन तिथियों के स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी — इस तिथि का स्वप्न गत्य होता है तथा शीघ्र ही फल देता है।

अवाक्षया—इस तिथि का स्वप्न मिथ्या होता है।

धनप्राप्ति सूचक फल—स्वप्न में हाथी, घोड़ा, बैल, सिंह के ऊपर दैठवार गमन करता हुआ देखे तो शीघ्र धन मिलता है। पहाड़, नगर, ग्राम, नदी और सगुड़ के देखने गे भी अनुल लक्षणी की प्राप्ति होती है। तबवार, शनिप और बन्दुक आदि से जन्मुओं को ध्वंग करता हुआ देखने से अपार धन मिलता है। स्वप्न में हाथी, घोड़ा, बैल, पहाड़, वृक्ष और यह इन पर आरोहण करना हुआ देखने से भूमि के नीचे से धन मिलता है। स्वप्न में गध और रोम से रहित शरीर के देखने से वधु की प्राप्ति होती है। स्वप्न में दही, छवि, कून, चमर, अन्न, वस्त्र, दीपक, ताम्बून, सुर्य, चन्द्रमा, पूर्ण, कमल, चन्दन, देव-पूजा, वीणा और अरत्र देखने से शीघ्र ही अर्थ-नाम होता है। यदि स्वप्न में चिह्नियों के पर पकड़ कर उड़ता हुआ देखे तथा आगामार्ग में देवनाथों की उम्मीदि की आवाज सुने तो पृथ्वी के नीचे से शीघ्र धन मिलता है।

सन्तानोत्पादक स्वप्न—स्वप्न में वृषभ, कनका, माला, गध, चन्दन, श्वेत पूर्ण, आम, अमलद, केला, मन्तारा, नीबू और नारियल इनकी प्राप्ति होने से तथा देवमूर्ति, हाथी, गधुल, सिंह, गधर्व, गृह, वरण, गत, जी, गहू, मारसो, कन्या, रक्तामान करना, अपनी गृह्य देखना, केला, कनावृक्ष, तीर्थ, तोरण, भूषण, राज्यमार्ग, और मट्ठा देखने में शीघ्र ही सन्तान की प्राप्ति होती है। किंबु फल और पुष्पों का भक्षण करना देखने से सन्तान मरण अथवा गर्भपात होता है।

मरण सूचक स्वप्न—स्वप्न में तेल पेणे हुए, नग्न होकर भैंश, गधे, ऊंट, कुण्ड बैल और काले घोड़े पर चढ़कर दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से; रग्डीर्गृह में, नाव पुण्यों में परिपूर्ण बन में और गूतिका गृह में अंग-भग पुस्तक का प्रवेश करना देखने ऐ; झूलना, गता, खिलना, फोड़ना, हैरना, नदी के जल में नीचे जले जाना तथा सुर्य, चन्द्रमा, ध्वजा और ताराओं का गिरना देखने से; भस्म, धी, लोह, लाल्य, गीदड़, मुर्गा, बिलाव, गोह, च्योला, रिक्कू, मञ्ची, सर्प और विदाह आदि उत्तर देखने में एवं स्वप्न में दाढ़ी, मूँछ और सिर के बाल में डुवाना देखने से मृत्यु होती है।

पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार स्वप्नों के फल—यों तो पाश्चात्य विद्वानों ने अधिकांश रूप से स्वप्नों को निस्मार बताया है, पर कुछ ऐसे भी दार्जनिक हैं जो स्वप्नों को सार्थक बतलाते हैं। उनका मत है कि स्वप्न में हमारी जाई अतृप्त इच्छाएँ भी चरितार्थ होती हैं। जैसे हमारे मन में कहीं भ्रमण करने की इच्छा होने पर स्वप्न में यह देखना कोई आश्वर्य की बात नहीं है कि हम कहीं भ्रमण कर रहे हैं। सभ्भव है कि जिस इच्छा ने हमें भ्रमण का स्वप्न दिखाया है वही कालान्तर में हमें भ्रमण कराये। इमनिए स्वप्न में भाथी घटनाओं का आभास मिलना साधारण बात है। कुछ विद्वानों ने इस ध्योरी का नाम सम्भाव्य गणित रक्खा

है। इस सिद्धान्त के अनुसार स्वप्न में देखी गई कुछ अतृप्त इच्छाएँ सत्य रूप में चरितार्थ होती हैं; क्योंकि बहुत समय गे कई इच्छाएँ अज्ञात होने के कारण स्वप्न में प्रकाशित रहती हैं और ये ही इच्छाएँ किसी वारण से मन में उद्दित होकर हमारे तदनुरूप गायं करा सकती हैं। मानव आनी इच्छाओं के बल से ही सांसारिक क्षेत्र में उन्नति या अवनति करता है, उसके जीवन में उत्पन्न इच्छाओं में कुछ इच्छाएँ अप्रस्फुटित अवस्था में ही विलीन हो जाती हैं, लेकिन कुछ इच्छाएँ परिपक्वावस्था तक चलती रहती हैं। इन इच्छाओं में इतनी विशेषता होती है कि ये विना तृप्त हुए लुप्त नहीं हो सकतीं। सम्भाव्य यणित के सिद्धान्तानुसार जब स्वप्न में परिपक्वावस्था बाली अतृप्त इच्छाएँ प्रतीकाधार बोलिये हुए देखी जाती हैं, उग्र समय स्वप्न का भावी फल सत्य निकलता है। अवाध-भावानुसंग में हमारे मन के अनेक गुप्त भाव प्रतीकों से ही प्रकट हो जाते हैं, मन की स्वाभाविक धारा स्वप्न में प्रवाहित होती है, जिसमें स्वप्न में मन की अनेक चिन्ताएँ गुंधी हुई प्रतीत होती हैं। स्वप्न के साथ संश्लिष्ट मन की जिन चिन्ताओं और गुप्त भावों का प्रतीकों ने आजात मिलता है, वही स्वप्न का अवधित अंश भावी फल के रूप में प्रकट होता है। अस्तु, उपरवध सामग्री के आधार पर कुछ स्वप्नों के फल नीजे दिये जाते हैं।

अस्वस्थ— अपने गिवाय अन्य किसी को अस्वस्थ देखने से कष्ट होता है और स्वयं अपने रो अस्वस्थ देखने से प्रगत्यन्ता होती है। जी० एच० मिलर के मत से, स्वप्न में स्वयं अपने को अस्वस्थ देखने से कुटुम्बियों के साथ मेलमिलाप बढ़ता है एवं एक मास के बाद स्वामद्रष्टा जो कुछ जारीरिक कष्ट भी होता है तथा अन्य वो अस्वस्थ देखने ने द्रष्टा शीत्र रोगी होता है। डॉक्टर सी० जे० हिट्टें के मतानुसार, अपने को अस्वस्थ देखने से मुख्य-जानित और दूसरे को अस्वस्थ देखने में विपक्षि होती है। शुक्रग्रात के सिद्धान्तानुसार, अपने और दूसरे को अस्वस्थ देखना गोगगुचक है, विवक्षोनियन और पृथग्विग्रियन के सिद्धान्तानुसार, अपने को अस्वस्थ देखना नीरोग गुचक और दूसरे को अस्वस्थ देखना पुत्र-मित्रादि के गोग को प्रकट करने वाला होता है।

आवाज— स्वप्न में किसी विचित्र आवाज को स्वयं सुनने से अशुभ सन्देश सुनने को मिलता है। यदि स्वप्न की आवाज सुनकर निद्रा भंग हो जाती है तो गारे वायरों में परिवर्तन होने वी गम्भावना होती है। अन्य किसी की आवाज सुनने हुए देखने में पुरु और स्त्री को कष्ट होता है तथा अपने अनि गिकट कुटुम्बियों की आवाज सुनने हुए देखने से किसी आन्मीय की मृत्यु प्रकट होती है। डॉ० जी० एच० मिलर के मत से आवाज सुनना अम का चोतक है।

झार— यदि स्वप्न में कोई चीज अपने ऊपर लटकती हुई दिखाई पड़े और उसके गिरने का सन्देह हो तो गत्रुओं के द्वारा धोखा होता है। झपर मिर जाने

से धन-नाश होता है, यदि ऊपर न गिरकर पास में गिरती है तो धन-हानि के साथ स्त्री-पुत्र एवं अन्य तुलुम्बियों को कट होता है। जी० एच० मिलर के मत से, किसी भी वस्तु का ऊपर गिरना धननाश कारक है। डॉ० श्री० ज० हिंटवे के मत से किसी वस्तु के ऊपर गिरने से तथा गिरकर चोट लयने से मृत्यु तुल्य कट होता है।

कटार—स्वप्न में कटार के देखने से कट और कटार चलाते हुए देखने से धनहानि तथा निकट युद्धी के दर्शन, पात्र औजन एवं पत्नी से ऐस होता है। किसी-किसी के मत में अपने में स्वयं कटार भीकते हुए देखने से किसी के रोगी होने के समाचार सुनाई पड़ते हैं।

कनेर—स्वप्न में कनेर के फूल वृक्ष का दर्शन करने से मात्र-प्रतिष्ठा मिलती है। कनेर के वृक्ष से फूल और पत्तों की गिरना देखने से किसी निकट आत्मीय की मृत्यु होती है। कनेर का फल भक्षण करना शोगभूतक है, तथा एक सप्ताह के भीतर अत्यन्त अशान्ति देने वाला होता है। कनेर के वृक्ष के नीचे शैठकर पुस्तक पढ़ता हुआ आनंद को देखने से दो वर्ष के बाद साहित्यकाल में यश की प्राप्ति होती है, एवं नय-नय प्रदोष का आविनास्ता होता है।

किला—किले की रक्खा के लिए लड़ाई करते हुए देखने से मात्रहानि एवं चिन्ताएँ, किले भें सम्भण करने से शारीरिक कट; किले के दरवाजे पर वहरा लगाने से प्रेमिका से मिलन एवं मित्रों वी प्राप्ति और किले के देखने मात्र से वरदेशी बन्धु से पिलग होता है तथा गुन्दर स्वादिष्ट मांग भक्षण को मिलता है।

केला—स्वप्न में केला का दर्शन शुभफल दायक होता है और केले पर भक्षण अनिष्ट पत्ते देने वाला होता है। किसी के हाथ में जबरदस्ती आना बेकर आने से मृत्यु और केले के पत्तों पर राधाराम शोगम करने से काढ़ गूंच केले के धूम से लगाने से वर गंगाराजिक कार्य होता है।

केश—किसी गुन्दरी के पैशाचिक का स्वप्न में चुम्बन करने से प्रेमिका-मिलन और केश के दर्शन ने गुलदम गंगा यज्ञ एवं दैनिक कार्यों में असफलता मिलती है।

खल—स्वप्न में किसी तुट के दर्शन करने से मित्रों से अनबन और लड़ाई करने से मित्रों से श्रेष्ठ होता है। खल के साथ मिश्रण करने से नाना भव और चिन्ताएँ उत्पन्न होती हैं। खल के साथ भोजन-पान करने से शारीरिक कट, बातचीत करने से रोग और उसके हाथ गंद लेने से सैकड़ों शूलों की प्राप्ति होती है। किसी-किसी के मत में खल का दर्शन शुभ गाना गया है।

खेल—स्वप्न में खेलते हुए देखने से स्वाध्य वृद्धि और दूसरों की खेलने हुए देखने से क्षमता-लाभ होता है। मैता में अपने बां परामित देखन में कार्य साफल्य और जय देखने से कार्य-हानि होती है। खेल का गेदान देखन से गुद में भाग

लेने का संकेत होता है। खिलाफियों का आपस में मत्त्वयुद्ध करते हुए देखना बछड़े भारी रोग का सूचक है।

गाय—यदि स्वप्न में कोई गाय दुहमे की इतजारी में बैठी हुई दिखाई पड़े तो सभी इच्छाओं की पूति होती है। गाय का दर्जन, जी० एच० मिलर के मत से, प्रेमिका-मिलन सूचक बताया गया है। चारा खाते हुए गाय को देखने से अन्न प्राप्ति; बछड़े को पिलाते हुए देखने से पुत्रप्राप्ति; गोबर करते हुए गाय को देखने से धनप्राप्ति और पागुर करते हुए देखने से कायं में सफलता मिलती है।

घड़ी—स्वप्न में घड़ी देखने से शत्रुभय होता है। घड़ी के घण्टों की आवाज सुनने से दुष्कर संवाद सुनते हैं, या किसी मिथ्यी मृत्यु का समाचार सुनाई पड़ता है। किसी के हाथ से घड़ी गिरते हुए देखने से मृत्युतुल्य कष्ट होता है। अपने हाथ की घड़ी का गिरना देखने से छः महीने के भीतर मृत्यु होती है।

चाय—स्वप्न में चाय का पीना देखने से शारीरिक कष्ट; प्रेमिका वियोग एवं व्यापार में हानि होती है। मतान्तर से चाय पीना प्रभकारक भी है।

जन्म—यदि स्वप्न में कोई स्त्री बच्चे का जन्म देखे तो उसकी किसी सखी, सहस्री को पुत्र-प्राप्ति होती है तथा उसे उपहार मिलते हैं। यदि पुरुष यही स्वप्न देखे तो वश-प्राप्ति होती है।

झाड़ू—यदि स्वप्न में नथा झाड़ू दिखाई पड़े तो शोषण ही भाष्योदय होता है। पुराने झाड़ू का दर्शन करने से सहूँ में धन-हानि होती है। यदि स्त्री इसी स्वप्न बो देखे तो उसे भविष्य में नाना कष्टों का सामना करना पड़ता है।

मृत्यु—मृत्यु देखने से किसी आत्मीय वी मृत्यु होती है; किन्तु जिस व्यक्ति की मृत्यु देखी जायी है, उसका कल्पण होता है। मृत्यु का दृश्य देखना, गरते हुए व्यक्ति को छटापटाहट देखना अशुभसूचक है। किसी सवारी से नीचे उतरते ही मृत्यु देखना राजनीति में पराजय का सूचक है। सवारी के ऊपर चढ़ाकर ऊंचा उठना तथा किसी पहाड़ पर ऊंचा चढ़ना शुभफल सूचक होता है।

युद्ध—स्वप्न में युद्ध का दृश्य देखना, युद्ध से भयभीत होना, मारकाट में भाग लेना तथा आने को युद्ध में मूत देखदा जीवन में पराजय का सूचक है। इस प्रकार का स्वप्न देखने से सभी लोगों में असफलता मिलती है। जो व्यक्ति युद्ध में अपनी मृत्यु देखता है, उसे कष्ट सहन करने पड़ते हैं तथा वह प्रेम में असफल होता है। जिससे वह प्रेम करता है, उसकी ओर से ठुकराया जाता है। युद्ध में विजय देखना सफल प्रेम का गूचक है। जिस प्रेमिका या प्रेमी को व्यक्ति चाहता है वह सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है। नभ हीकर युद्ध करते हुए देखने से मृत्यु में सफलता मिलती है तथा जनक रथानं पर भोजन करने का नियम वर्ण मिलता है। यदि नभे ही व्यक्ति किसी सवारी पर आसूँ होकर रणभूमि में जाता

हुआ दृष्टिगोचर हो तो इस प्रकार के स्वरूप के देखने से जीवन में अनेक तरह की सफलता मिलती है।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

थदा स्थितीं जोवनुवौ ससूर्या राशिस्थितानाञ्च तथानुवतिनो ।
नृनामवद्वावरसंगरस्तदा भवन्ति वाताः समुपस्थितान्ताः ॥१॥

जब वृहस्पति और तुव गुर्य के साथ स्थित होकर स्वराशियों में स्थित ग्रहों के अनुवर्ती हों और मनुष्य, राष्ट्र तथा अन्य छोटे जन्म युद्ध करते दिखलायी पड़े तब भयंकर तूफान आता है ॥१॥

न मित्रभावे सुहृदो समेतान चाल्पतरमस्तु ददाति वासवः ।
भितत्ति बज्रेण तदा शिरांसि महीभृतां चाप्यथवर्षणं च ॥२॥

यदि प्रभु यह मित्रभाव में स्थित न हों तो वर्षा का अभाव रहता है तथा इन्द्र एवंतों के महत्वक वो वज्र गे जूर करता है—एवंतों पर विष्णुत्पात होता है और अवधिषं रहता है ॥२॥

सोमग्रहे निवृत्तेषु पक्षान्ते चेद् भवेद्ग्रहः ।
तत्रानयः प्रजातां च दस्पत्योवैरमादिशेत् ॥३॥

चन्द्रमा की निवृत्ति होने पर पक्षान्त में यदि कोई अशुभ ग्रह हो तो प्रजा में अनीति—अन्याय और दस्पति वैर होता है ॥३॥

कृत्तिकायां दहत्यानीं रोहिण्यामर्थसम्पदः ।
दंशन्ति मूष्मिकाः सौम्ये चाद्र्यायां प्राणराशयः ॥४॥

कृत्तिका नथात्र में न तीन वस्त्र या नवीन लक्ष्मी धारण करने में अग्रिम जलार्थी है, गेहिणी में धन-ममानि की प्राप्ति होती है, मूष्मिका मूष्मिका जाटते हैं और चाद्र्या में प्राणों का संग्रह उत्पन्न हो जाता है ॥४॥

धान्यं पुनर्वसौ वस्त्रं पुष्ट्यः सर्वार्थसाधकः ।
आश्लेषासु भवेद्रोगः शमशानं स्यान्मधासु च ॥५॥

पुनर्वसु में नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करने से धान्य की प्राप्ति होती है, पुष्ट्य नक्षत्र में धारण करने से सभी अभिलाषाओं की पूति होती है, आश्लेषा में रोग होता है और मधा नक्षत्र में शमशान — मरण प्राप्त होता है ॥५॥

पूर्वाकालगुनी शुभदा ^१राज्यदोत्तरफालगुनी ।
वस्त्रदा संस्मृता लोके तूत्तरभाद्रपदा शुभा ॥६॥

पूर्वा फालगुनी में नवीन वस्त्र धारण करने से शुभ होता है, उत्तरा फालगुनी में राज्य की प्राप्ति होती है, और उत्तराभाद्रपद शुभ और वस्त्र देने वाली कही गयी है ॥६॥

हस्ते च ध्रुवकमर्णणि चित्रास्वाभरणं शुभम् ।
मिष्ठानं लभ्यते स्वातो विशाखा प्रियदर्शिका ॥७॥

हस्त नक्षत्र में ध्रुव कार्य — स्थिर कर्त्त्य करना शुभ होता है, चित्रा नक्षत्र में आभरण धारण करना शुभ होता है, स्वाति नक्षत्र में वस्त्र, आभरण धारण करने से मिष्ठान सी प्राप्ति होती है और विशाखा नक्षत्र में धारण करने से प्रिय का दर्शन होता है ॥७॥

अनुराधा वस्त्रदात्री ज्येष्ठा वस्त्रविनाशिनी ।
मरणाय तर्थवोक्ता हानिकारणलक्षणा ॥८॥

नथे वस्त्राभरण धारण करने वालों को अनुराधा नक्षत्र वस्त्र देने वाला, ज्येष्ठा वस्त्र का विनाश करने वाला, मरण देने वाला और हानि करने वाला होता है ॥८॥

मूलेन विलश्यते वस्त्रं ^२पूषायां रोगसम्भवः ।
उत्तरा वस्त्रदा रुद्धाता श्रवणो नेत्ररोगदः ॥९॥

मूल नक्षत्र में वस्त्र धारण करने वाले को क्लेश, पूर्वाषाढ़ा में रोग, उत्तरा भाद्रपद में वस्त्र-प्राप्ति और थ्रवण नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से नेत्र रोग होता है ॥९॥

धनिष्ठा धन्तलाभाय शतमिषा विषाद्भयम् ।
पूर्वभाद्रपदात्तोयमुत्तरा बहुवस्त्रदा ॥१०॥

घनिष्ठा नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से धनलाभ, शतभिमा में धारण करने से विष का भय तथा पूर्वभाद्रपद में और उत्तरभाद्रपद नक्षत्रों में धारण करने से बहुत वस्त्रों की प्राप्ति होती है ॥10॥

रेवती लोहिताय स्याद् बहुवस्त्रा तथाशिवनी ।
भरणी यमलोकार्थमेवमेव तु कष्टदा ॥11॥

रेवती नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से लोहित-जंग लगता, अशिवनी में धारण करने से बहुत अचन्द्रों की जाति होता जो रुद्रणी नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से गृण या तनुलय बाष्ट होता है ॥11॥

शुभग्रहाः फलं दद्युः पञ्चाशहित्रसेषु तु ।
षष्ठ्यहः स्वथवा सर्वे पापा तद्विनान्तरम् ॥12॥

शुभग्रह पञ्चाश या सात दिनों के इन्द्रग्रह तथा पापग्रह नो दिनों के उपरात फल देते हैं ॥12॥

शुभाशुभे वीक्ष्यतु दोग्रहाणां गृहो सुयस्त्वद्यवहारकारी ।
समोदयेऽवाप्य समस्तभोगं निरस्तरोगो व्यसनैर्विमुक्तः ॥13॥

जो यूहस्थ ग्रहों के शुभाशुभत्व की देखकर वस्त्रों का व्यवहार करता है, वह समस्त भोगों को प्राप्त कर आनन्दित होता है तथा रोग और व्यसनों से छुटकारा प्राप्त करता है ॥13॥

इति श्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमेत्सास्त्रे सत्त्विशतितम् ।
दस्त्रव्यवहारनिमित्तकोऽध्ययः ॥27॥

॥ निमित्तं परिसमाप्तम् ॥

विवेचन ग्रह और नक्षत्र शुभाशुभ, कूर्म-ग्राम्य त्रादि जनक प्रकार के होते हैं। शुभ ग्रह और शुभ नक्षत्रों का एक सूम्य भी नक्षत्र यह जोर अशुभ नक्षत्रा का फल अशुभ होता है। इस जट्ठवाय में गायारणतया तर्वान वस्त्राभरणादि धारण करने के लिए चाहने का नहीं। शुभ तो जोर करना अशुभ है, जोर करना पूरा किया गया है। यद्यपि मैं विश्रेप करती कहा चाहती हूँ कि उत्तरी गजालों का विश्वसण ॥३॥ जापिया ॥

शान्ति, गृह, वाटिका विधायक नक्षत्र

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥

उत्तरात्रालग्नी, उत्तरायांदा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार, इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य करना, बीज दोना, घर बनवाना, शान्ति कार्य करना, गाँव के समीप बगीचा लथाना आदि कार्यों के साथ मृदु कार्य करना भी शुभ होता है।

हाथी-घोड़े की सवारी विधायक नक्षत्र

स्वात्यादित्ये थ्रुतेस्थ्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिमारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥

स्वाति, पुरुषेगु, थ्रवण, धनिया, शतभिया ये पाँच नक्षत्र और सामवार इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी-घोड़े आदि पर चढ़ना, बगीचे आदि में जाना, यात्रा करना आदि शुभ होता है।

विषशस्त्रादि विधायक नक्षत्र

पूर्वव्रयं पात्यमष्टे उत्रं कूरं कुञ्जस्तथा ।
तस्मिन् वाताभिनशान्द्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ।
विशाखाभ्येयमें सौम्यो मिथ्रं भाद्रारणं स्मृतम् ।
तत्रात्मिकार्णं मिथ्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥

पूर्वाभ्येयगुणी, पूर्वपियांदा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मध्या ये पाँच नक्षत्र और मंगल दिन की कूर और उत्र संज्ञा है। इनमें मारण, अग्नि-कार्य, धूर्ततामूर्ण कार्य, विष-कार्य, भस्त्र-शस्त्र निर्माण एवं उनके ब्लावहार करने का कार्य सिद्ध होता है।

विशाखा, वृचिकाय दो नक्षत्र और बुध दिन इनकी मिथ्र और भाद्रारण संज्ञा है। इसमें अग्निहोत्र, भाद्रारण कार्य, वृषोत्सर्ग आदि कार्य सिद्ध होते हैं।

आभूषणादि विधायक नक्षत्र

हृषीकेषपुर्याभिजितः शिरं लच्छुरुस्तदा ।
तस्मिन् पृथ्वे तिजामेभूपाशिल्पकलादिकम् ॥

हृत, अभिष्ठनी, पृथ्व, अभिजित ये चार नक्षत्र और वृहस्पति दिन, इनकी भिष्य और अग्न भीरु गुरु संज्ञा है। उनमें बाजार का कार्य, दस्ती-रस्मभोग, अस्त्रादि का शान, आभूषणों का बनवाना और पहिनना, चित्रकार्णी, गाना-वजाना आदि कार्य सफल होता है।

मित्रकार्यादि विधायक नक्षेत्र

मृगान्त्यचिप्रापित्रधर्मं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा ।

तत्र गीताम्बरकीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥

मृगनिरा, रेत्वती, चित्रा, अनुराधा ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा हैं। इनमें गाना, बस्त्र पहनना, स्त्री के साथ रुति करना, मित्र का कार्य और आभूषण पहनना शुभ होता है।

पशुओं को शिक्षित करना तथा दारु-तोक्षण कार्य विधायक नक्षत्र

मूर्खेन्द्राद्विहिभं सौरिस्तीर्णं दारुसंज्ञकम् ।

तथा पित्रारणातोप्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥

मूर्ख, जेहाड़ा, आद्रि, आज्ञाना ये चार नक्षत्र और अनि तीर्ण और दारुसंज्ञक। इनमें भयानक कार्य करना, भारती पीटना, हाथी-पोड़े आदि को शिखना ये कार्य सिद्ध होते हैं।

ग्रहों का स्वरूप

ग्रहों का स्वरूप जान लेना भी आवश्यक है।

सूर्य—यह पूर्व दिशा का स्वामी, पुरुष ग्रह, सम वर्ण, पितृ प्रकृति और पाप ग्रह है। वह सिंह राशि का स्वामी है। सूर्य भासा, रुद्रभाव, आरोग्यता, राज्य और दद्यालय का सूचक है। पिता के गम्भीर में सूर्य ने विचार, निया जाता है। नेत्र, कल्पजा, मामदण्ड और द्वार्घु आदि अवयवों पर उसका विजेता प्रभाव पड़ता है। यह लम्फि से सम्बन्ध स्थान में बनी मणा माया है। मकर में शुक्र राशि पर्यन्त विष्टाव ही है। उसमें आर्द्धिक रोग, गिरवद्दि, जाग्न, वय, महात्म्व, अतिमार, पद्मासन, वर्द्धिताग्र, मार्गार्थिक रोग, उत्तरार्थीकर्ता, खेद, अपमार एवं कलह आदि का विचार किया जाता है।

चन्द्रमा—पञ्चिमोत्तर दिशा का स्वामी, चंद्री, अंतर्वर्ण और गत्यह है। यह कलंदिश का स्वामी है। ब्रह्मज्वला इसकी धातु है। माता-पिता, चित्रवृत्ति, शारीरिक पुरिटि, राजागुरुह, सम्भाल ज्ञान चन्द्रुर्म स्थान का धारक है। चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा कली और मकर से नियमों में इसका विद्यावल है। चुण गदा की पट्ठी में लुकाए देवी देवता की दशमी तक दीप्ति चन्द्रमा रहने के कारण जान्यह और चुन्नि पथ ही दशमी में चुणे गदा की पट्ठी तक पूर्ण रूपों रहने से गुम्फह और वर्णी नामा गया है। इसमें पालुर्मी, गत्व तथा विष्टाव रोग, मूर्क्कुर्म, श्वीजन्य रोग, मार्गार्थ, रोग, उदय एवं मार्गवर्क सम्बन्धी रोगों का विचार किया जाता है।

मंगल—दूसरा दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, पितृप्रकृति, रक्तवर्ण और

अन्नि तत्त्व है। यह स्वभावतः पाप ग्रह है, और तथा पराक्रम का स्वामी है। यह मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी है। यह तीसरे और छठे स्थान में बली और द्वितीय स्थान पर निष्ठल होता है।

बुध—उत्तर दिशा का स्वामी, नपुसक, विदोष प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पापग्रह सू०, मू०, रा०, कै०, श० के साथ रहने से अशुभ और चन्द्रमा, गुरु और शुक्र के साथ रहने से शुभ फलदायक होता है। इससे वाणी का विचार किया जाता है। मिथुन और कन्या राशि का स्वामी है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, शीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह चर्वी और कफ की वृद्धि करने वाला है। यह धनु और मीन का स्वामी है।

शुक्र—दक्षिण-पूर्व वा स्वामी, स्त्री, श्याम-गौर वर्ण एवं कर्म कुशल है। छठे स्थान में यह निष्ठल और सातवें में अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ, चीर्य आदि धातुओं वा कारक माना गया है। वृष्णि और तुला राशि का स्वामी है।

शनि—पश्चिम दिशा का स्वामी, नपुसक, वातश्वेतपिमा, कुण्डलवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सातम स्थान में बली, वकी या चन्द्रमा के साथ रहने से चेष्टा-बली होता है। यह भक्त और कुम्भ राशियों का अधिगति है।

रघु—दक्षिण दिशा का स्वामी, कृष्णवर्ण और कूर ग्रह है। जिस स्थान पर यह रहता है, उस स्थान की उत्तरति को रोकता है।

केतु—कृष्ण वर्ण और कूर ग्रह है।

जिस देश या राज्य में कूर-ग्रहों वा प्रगाढ़ रहता है या कूर ग्रह वकी, मार्गी होते हैं, उस देश या राज्य में दुष्काळ, अवर्पो तथा नाना प्रकार के अच्यु उष्णद्रव होते हैं। शुभग्रहों के उदय और प्रभाव वा राज्य या देश में शान्ति रहती है। नवीन वस्त्रों का बुध, गुरु और शुक्र को, द्वितीया, पंचमी, सतमी, एकादशी, व्रद्योदर्शी और पूर्णिमा तिथि को तथा अल्पिनी, गोहिणी, मृगशिर, आद्री, पुनर्वंग, पृथ्वी, उत्तर तीनों, स्वाति, अग्नुराधा, अवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्र में व्यवहार करना चाहिए। नवीन वस्त्र गर्वदा पूर्वोदय में धारण करना चाहिए।

परिशिष्टाध्यायः

अथ वक्ष्यामि केषात्तिचनिमित्तानां प्रस्तुपणम् ।
कालज्ञानादिभेदेन यदुवतं पूर्वसूरिभिः ॥१०॥

अब मैं कृतिपूर्य निमित्तों का वक्ष्यन् करना चाहता हूँ। इन निमित्तों का प्रतिपादन पूर्वान्नायों ने कालज्ञान आदि के निमित्तों द्वारा किया है ॥१०॥

श्रीमद्भीरजिनं नत्वा भारतीञ्च पुलिन्दनीम् ।
स्मृत्वा निमित्तानि वक्ष्ये स्वात्मनः कार्यसिद्धये ॥११॥

भगवान् महाबीर और जिनवाणी को नगरकार कर तथा निमित्तों की अधिकारिणी पुलिन्दनी देवी का स्परण कर स्वात्मा के कार्य की शिद्धि के लिए समाधिसरण प्राप्ति के लिए मैं निमित्तों का वर्णन करता हूँ ॥११॥

भीमान्तरिक्षादिभिर्वा अच्छी तेऽस्य बृधिर्भूताः ।
ते सर्वेऽप्यत्र विज्ञेयाः प्रज्ञावदिभविशेषतः ॥१२॥

भीम, अन्तरिक्ष आदि के भौद भै आठ प्रकार के निमित्त विद्वानों के बतलाये हैं। इन सभी प्रकार के निमित्तों का उपर्योग प्रायुर्वानि भै निर्गुणतामानादिः ॥१२॥

व्याधेः कोट्यः पञ्च भवन्त्यपाधिकष्ठिलक्षाणि ।
नवनवति-सहस्राणि पञ्चशती चतुरशीत्यधिकाः ॥१३॥

रोगों की संख्या दर्शक अड़सठ लाख निवानवे हजार पाँच सौ चौरासी बताई गई है ॥१३॥

एतत्संख्यात् महारोगान् पश्यन्ति न पश्यति ।
इन्द्रियमांहितो मृढः परलोकपराङ्मुखः ॥१४॥

उन्द्रियासक्त, परलोक की चिन्ता से रहित व्यक्ति उपर्युक्त संख्यक रोगों को देखते हुए भी नहीं देखता है। अर्थात् विषयासक्त प्राणी संसार के विषयों में इतना रत रहता है जिससे वह उपर्युक्त रोगों की परवाह नहीं करता ॥१४॥

नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते जिनधर्मे महोन्नते ।
द्विधा सद्लेखनां कर्तुं कोऽपि भव्यः प्रवर्तते ॥१५॥

दुर्लभ मनुष्य पर्याय के प्राप्त होने पर भी आत्मा का उन्नतिकारक जीवधर्म बढ़े सीधार्थ रो प्राप्त होता है। इस महात्म धर्म के प्राप्त होने पर भी कोई प्राप्त भव्य ही दोनों प्रकार वी सल्वेखनार्थ करने के लिए प्रवृत्त होता है ॥१५॥

कृशत्वं नीयते कायः कषायोऽप्यतिसूक्ष्मताम् ।
उपवासादिभिः पूर्वो ज्ञानध्यानादिभिः परः ॥१६॥

उत्थाग इत्यादि के द्वारा शरीर और कपायों को कृष कर आत्मशोधन में लगना सल्लेखन है, इग किया जो करने वाला व्यक्ति ज्ञान, ध्यान में संलग्न रहता है ॥7॥

**शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा सङ्ग्रामे यस्तु मुहृति ।
द्विषोस्तरम् कृत्वास्त्रान्वे मुनेतर्थं तथा द्रवतम् ॥8॥**

शास्त्र-स्वाध्याय करने पर भी जिशकी बुद्धि इन्द्रियों में आसक्त रहती है उस मुनि के व्रत हाथी के स्तान की तरह व्यर्थ है अर्थात् जिस प्रकार हाथी स्तान करने के अनन्तर पृथक् धूनि अपने शरीर पर विशेष लेता है, उसी प्रकार जो मुनि वा आत्मगाधक शास्त्राभ्याग करने पर भी सल्लेखना नहीं धारण करता है और इन्द्रियों में आसक्त रहता है उसके व्रत व्यर्थ है; अतः जीवन का वास्तविक उद्देश्य सल्लेखना धारण करता है ॥8॥

**विरतः कोऽपि संसारी संसारभयभीरुकः ।
विन्द्यादिषान्यरिष्टानि भाव्यभावाभ्यनुक्रमत् ॥9॥**

जो कोई संसार में विरत तथा संगार भय से युक्त व्यक्ति आत्म-कल्याण करना चाहता है उसके निए शरीर में उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के अरिष्टों का मैं निरूपण करता हूँ ॥9॥

**पूर्वचार्यस्तथा प्रोक्तं दुर्गद्वैलादिभिः यथा ।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाभ्यहम् ॥10॥**

दुर्गचार्य, ऐनाचार्य आदि पूर्वचार्यों के कथन अभिप्राय को लेकर ही मैं अरिष्टों का कथन करता हूँ ॥10॥

**पिण्डस्थञ्च पदस्थञ्च रूपस्थञ्च त्रिभेदतः ।
आसन्नमरणे प्राप्ते जायतेऽरिष्टसन्ततिः ॥11॥**

जिन व्यक्ति का शीघ्र ही मरण होने वाला है उसके शरीर में पिण्डस्थ, पदस्थ त्रीरूपस्थ ये तीन प्रकार के अरिष्ट उत्पन्न होते हैं ॥11॥

**विकृतिर्दृश्यते कायेऽरिष्टं पिण्डस्थमुच्यते ।
अनेकधा तत्पिण्डस्थं ज्ञात्व्यं शास्त्रवेदिभिः ॥12॥**

शरीर में अप्राकृतिक रूप से अनेक प्रकार की विकृति होने को शास्त्र के जानने वालों ने पिण्डस्थ अनिष्ट कहा है ॥12॥

**सुकुमारं करयुगलं कृष्णं कठिनमवेद्यदायस्य ।
न स्फुटन्ति वाङ्गमुलयस्तस्थारिष्टं विजानीहि ॥13॥**

यदि किसी के दाँतों सुकुमार हाथ अकारण ही कठोर और कृष्ण ही जायं
तथा अंगुलियाँ नींधी न हों तो उसे अग्रिट भमज्जना चाहिए अर्थात् उसन लक्षण
वाले व्यक्ति का पर्ण मात दिन में ही होता है ॥ 3॥

स्तब्धं लोचनयोर्युभ्यं विवर्णा काष्ठवस्तनः ।

प्रस्वेदो यस्य भालस्थः विकृतं वदनं तथा ॥ 4॥

जिसके दोनों नेत्र स्तब्ध अर्थात् बिश्रृत ही जायें तथा शरीर विश्रृत वर्ण और
काठ के समान कठोर ही जाय और मस्तक पर अविरुपगीता आये तथा मृत्यु विश्रृत
ही जाय तो अग्रिट भमज्जना चाहिए अर्थात् मात दिनों में मृत्यु होती है ॥ 4॥

निनिमित्तो मुखे हासश्चक्षुभ्या जलबिन्दवः ।

अहोरात्रं स्ववन्त्येव नखरोमार्णि यान्ति च ॥ 5॥

बिना किसी कारण के अधिक हँसी आगे, आँखों में अंगु व्याप्त हों और
नख तथा रोम के छिद्रों में गमीता निकलना हो तो मात दिन में मृत्यु भमज्जनी
चाहिए ॥ 5॥

सुकृष्णा दशना यस्य न घोषाकर्णनं पुनः ।

एतेश्चक्षुस्तु प्रत्येकं तस्यायुदिनसप्तकम् ॥ 6॥

जिसके दाँत काले हो जायें तथा कर्णछिद्रों को बन्द करने पर भीतर में होने
वाली आवाज सुनाई न पड़े तो सात दिन की आयु भमज्जनी चाहिए ॥ 6॥

निर्मच्छुस्तुट्यते वायुस्तस्य पक्षैकजीवनम् ।

नेत्रयोर्भीत्तनाज्ज्योतिरदृष्टौ दिनसप्तकम् ॥ 7॥

यदि शरीर से निकलती हुई वायु दीक्ष में टृट-सी जाय तो पन्द्रह दिन की
आयु शेष समज्जनी चाहिए अथवा बहर निकलने में श्वास रोज हो तो पन्द्रह दिन
की आयु भमज्जनी चाहिए । दोनों नेत्रों के अग्रभाग को खोड़ा-सा बन्द करने पर
उनमें से जो ऊपोति निकलती है यदि वह ज्योति निकलती हुई दिखलाई न पड़े
तो सात दिन की आयु भमज्जनी चाहिए ॥ 7॥

भ्रूमध्ये नासिका जिह्वादर्शने च यथाक्रमम् ।

नवत्र्येकदिनान्येव सरोगी जीवति भ्रुवम् ॥ 8॥

यदि भौह के मध्य भाग को न देख सके तो ती दिन, नासिका न दिखलाई पड़े
तो तीन दिन और जिह्वा न दिखलाई पड़े तो एक दिन की आयु होती है, अर्थात्
उस रोगी की गूर्वोक्त दिनों में मृत्यु हो जाती है ॥ 8॥

पाणिपादोपरि क्षिप्तं तोयं शीघ्रं विशुद्ध्यति ।
दिवक्रयं च तस्यायुः कथितं पूर्वसूरिभिः ॥19॥

हाथ-पैरों पर ढाना गया यदि शीघ्र ही सूख जाय तो उसकी लेज दिन की आयु रामजनी नाहिए, ऐसा पूर्वाचार्योंने कहा है ॥19॥

निर्विआमो मुखाच्छ्वासो मुखाद्वक्तं पतेष्वदा ।
यद्दुष्टः स्तव्या निष्पन्दा वर्णचैतन्यहीनता ॥20॥

जिसके मुख में अधिक ज्वाग गिरती हो, मुख से रक्त गिरता हो, दृष्टि स्तव्य और तिरपन्द हो तथा सुख विवरण शीर चैतन्यहीन दिष्टलाई पढ़े तो उसकी निकट मृत्यु रामजनी चाहिए ॥20॥

एद्वा शीवा न यरयास्ति सोच्छ्वासो हृदि रुद्ध्यते ।
नासाबदनगुह्येभ्यः शीतलः पवनो नहेत् ॥21॥

जिसकी गईन शिथर न रहे, वेडी हो जाय या ज्वास हृदय में रह जाय तथा मृत्यु, गाइ शीर गुलेन्दिन में शीतल वायु निकलने लगे तो शीघ्र मरण होता है ॥21॥

न जानाति निजं कार्यं पाणिपादो च पीडितौ ।
प्रत्येकमेभिस्त्वरिष्टैस्तस्य मृत्युर्भवेल्लघुः ॥22॥

हाथ, पर आदि के पीडित न होने पर भी जिसे पीड़ा का अनुभव न हो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥22॥

स्थलो याति कृशत्वं कृशोऽप्यकस्माच्च जायते स्थूलः ।
स्थगस्यगतिर्यस्य कायः कृतशोष्ठहस्तो निरन्तरं श्रेते ॥23॥

अकस्मात् स्थूल शरीर का कृश हो जाना तथा कृश शरीर का स्थूल हो जाना और शरीर का कौपने लगना पर्व अपने निर पर हाथ रखकर निरन्तर सोना एक गाय की आयु वा द्योतन है ॥23॥

शीदोपरि करबन्धां गच्छत्यङ्गुलीभिर्दृढबन्धं च ।
अमेषोदामहीनस्तस्याधुमसिपर्यन्तम् ॥24॥

गाढ बन्धन करने के लिए जिसकी अंगुलियां गले में डाली जायें पर अंगुलियों से दृढ बन्धन न हो सके तथा धीरे-धीरे जिसकी कार्य-क्षमता शटती जाये तो ऐसे बघित की आयु एक महीना अवधार रहती है ॥24॥

अधरनखदशनरसनाः कृष्णा अवन्ति विना निमित्तेन ।
षड्रसमेदमवेताः तस्याधुमसिपरिमाणम् ॥25॥

ब्रिना किसी निमित्त के ओढ़, नख, दन्त और जिहा परि काली हो जाय तथा घड़ रस का अनुभव न हो तो उसकी आयु एक महीना शेष होती है ॥२५॥

ललाटे तिलकं यस्य विद्यमानं न दृश्यते ।

जिह्वा यस्यातिकृष्णत्वं मासमेकं स जीवति ॥२६॥

जिसके मस्तक पर लगा हुआ तिलक किसी को दिखलाई न पड़े तथा जिह्वा अत्यन्त काली हो जाय तो उसकी आयु एक महीने की होती है ॥२६॥

धूतिमदनविनाशो निद्रानाशोऽपि यस्य जायेत ।

भवति निरन्तरं निद्रा मासचतुष्कन्तु तस्यायुः ॥२७॥

धैर्य, कामशक्ति और निद्रा के नाश होने से चार महीने की आयु शेष समझनी चाहिए । अधिक निद्रा का आना, दिन-रात सोते रहना भी चार मास की आयु का सूचक है ॥२७॥

इत्यदोच्चमरिष्टानि पिण्डरथानि समाप्तः ।

इतः परं प्रवक्ष्यामि पदार्थस्थान्यनुश्रमात् ॥२८॥

इस प्रकार पिण्डरथ अरिष्टों का वर्णन किया । अब पदार्थ अरिष्टों का वर्णन करता हूँ ॥२८॥

चन्द्रसूर्यप्रदीपादीन् विपरीतेन पश्यति ।

पदार्थस्थमरिष्टं तत्कथयन्ति मनीषिणः ॥२९॥

चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु का विपरीत रूप से देखना पदस्थ या पदार्थ स्थित अरिष्ट विद्वानों ने कहा है ॥२९॥

स्नात्वा देहमलंकृत्य गन्धमालयादिभूषणः ।

शुभ्रे स्ततो जिनं पूज्य चेदं मन्त्रं पठेत् सुधीः ॥३०॥

अँ हीं णमो अरहंताणं कमले-कमले-विमले-विमले उदरदवदेवी इटि भिटि पुलिन्दिनी स्वाहा ।

एकविश्वतिवेलाभिः पठित्वा मन्त्रमुत्तमम् ।

गुरुपदेशमाश्रित्य ततोऽरिष्टं निरीक्षयेत् ॥३१॥

पदस्थ अरिष्ट वो जानने की विधि का मिल्यण करते हुए बताया गया है कि स्नान कर, ऐत वस्त्र धारण कर, सुगन्धित द्रव्य तथा आभूषणों में अपने को सजाकर एवं जिनन्द भगवान् की पूजा कर “अँ हीं णमो अरहंताणं कमले-कमले विमले-विमले उदरदव देवि इटि भिटि पुलिन्दिनी स्वाहा” इस मंत्र का इक्कीस बार उच्चारण कर, गुरु-उपर्देश के अनुसार अरिष्टों का निरीक्षण करें ॥३०-३१॥

चन्द्रभास्करयोविम्बं नानारूपेण पश्यति ।
सच्छद्रं यदि वा खण्डं तस्यायुर्वर्षमात्रतः ॥३२॥

जो कोई गंगार में चन्द्रगा और सूर्य को नाना रूपों में तथा छिद्रों से परिपूर्ण देखता है उसकी आयु एक वर्ष की होती है ॥३२॥

दीपशिखां बहुरूपां हिमदवदाधां यथा दिशा सर्वागम् ।
यः पश्यति रोगस्थो लघुमरणं तस्य निर्दिष्टम् ॥३३॥

जो रोगी व्यक्ति दीपक के प्रकाश की ली को अनेक रूप में देखता है तथा दिशाओं को अग्नि या शीत ने जलने हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समय में होती है ॥३३॥

बहुचिल्द्रान्वितं विम्बं सूर्यचन्द्रमसोभुवि ।
षतन्निरीक्ष्यते यस्तु तस्यायुर्दशवासरम् ॥३४॥

जो गोई गूँधी पर सूर्य और चन्द्रमा के विम्ब को अनेक छिद्रों से युक्त भूमि पर गिरने हुए देखता है उसकी आयु दस दिन की होती है ॥३४॥

चतुर्दिक्षु रवीन्द्रनां पश्येद् विम्बं चतुष्टयम् ।
छिद्रं वा तद्दिनान्येव चत्वारश्च मुहूर्तकाः ॥३५॥

जो सूर्य या चन्द्रमा के चारों विम्बों को चारों दिशाओं में देखे वह चार उठिका अर्थात् एक घण्टा छहीस मिनट जीवित रहता है ॥३५॥

तयोविम्बं यदा नीलं पश्येदायुश्चतुर्दिनम् ।
तयोश्छिल्द्रे विशन्तं भ्रमरोच्चयं……… ॥३६॥

यदि गोई गूँध और चन्द्रमा के विम्ब को नील वर्ण का देखता है तो उसकी आयु चार दिन की होती है। गलिद गूर्यविम्ब और चन्द्रविम्ब में भीरों के समूह को प्रत्रेण करने हुए इन्हने में भी चार दिन की आयु होती है ॥३६॥

प्रज्वलद्वासधूमं वा मुञ्चद्वा रुधिरं जलम् ।
यः पश्येद् विम्बमाकाशे तस्यायुः स्थाद्विनानि षट् ॥३७॥

जो गोई गूँध शूर्य और चन्द्र विम्ब में से छुआ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्रविम्ब गलने हुए देखे तथा शूर्य चन्द्र विम्ब में से रुधिर निकलते हुए देखे तो वह उह दिन जीवित रहता है ॥३७॥

वाणीभिन्नमिवालीढं विम्बं कज्जलरेखया ।
यो वा पश्यति खण्डानि षष्ठ्मासे तस्य जीवितम् ॥३८॥

जो रोगी सूर्य और चन्द्र-विष्व को बाणों में छिन्न-भिन्न या दोनों के विष्व के मध्य काली रेखा देखता है अथवा दोनों के विष्व के टुकड़े होने हुए देखता है, उसकी आयु उह पहीने की होती है ॥३८॥

रात्रि दिने रात्रि यः पश्येदातुरस्तथा ।

शीतलां वा शिखां दीपे शीघ्रं मृत्युं समादिशेत् ॥३९॥

जो शोषी यात्रि में दिन का अनुभव करता है और दिन में यात्रि का तथा दीपक भी भी को शीतल अनुभव करता है, उस रोगी भी शीघ्र मृत्यु होती है ॥३९॥

तन्दुलैस्त्रियते यस्याञ्जलिस्तेषां भवतं च पच्यते ।

जहोत्यधिकं तदा चूर्णं भवतं रथाहलघुमृत्यवः ॥४०॥

एक अवृत्तिनि चाक्षण नेकर भात बनाया जाय, यदि एक जाने के अवसर भात उस अवृत्तिनि पारमाण में ब्रह्मित या ऐस हो तो उभी निरुट मृत्यु समझनी चाहिए ॥४०॥

अभिमन्त्र्यस्तत्र ततुः तद्वरण्मर्मपिषेच्च सन्ध्यायाम् ।

अपि ते पुनः प्रभाते सूर्ये न्यूने हि मासमायुष्कम् ॥४१॥

“ऊँ ऊँ गमो वरिहृताणं कमन्व-कमन्वे विमने-विमने उदरदवदेवि इति मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा” इस मन्त्र में शूर की मन्त्रित कर उसमें मार्यान गंगी के गिर में लेकर पैर तक नापा जाय और प्रातःकान पुनः उर्धा शूर में गिर में पैर तक नापा जाय यदि प्रातःकान नापने पर सूर छोड़ा हो तो वह व्यक्ति अधिक से अधिक गाग जीवित रहता है ॥४१॥

स्वेताः कृष्णाः पीताः रक्ताश्च येन दृश्यन्ते दत्ताः ।

स्वस्य परस्य च मुकुरे लघुमृत्युस्तस्य निर्दिष्टः ॥४२॥

यदि वोई व्यक्ति धर्मण में नापे या अच्य व्यक्तिने दोनों को काना, गफेद, नाल या गींवे गंग रा देने तो उस नि निरुट मृत्यु समझनी चाहिए ॥४२॥

ह्रितीयायाः शार्ङ्गविष्वं पश्येन त्रिशृंगपरिहीनम् ।

उपरि सधूमज्ज्ञायं खण्डं वा तस्य गतमायुः ॥४३॥

जब एक यो ह्रितीया वो यदि वोई अन्द्रमा के विष्व को दीन काण के या बिना कोण के रेखे या धूमिक रूप में देखे तो उस व्यक्ति दो शीघ्र मरण होता है ॥४३॥

अथवा भूगांकहीनं मलिनं चन्द्रञ्च पुरुषसादृश्यम् ।
प्राणी पश्यति नूनं मासादूर्ध्वं भवान्तरं याति ॥44॥

यदि कोई चन्द्रमा की भूगचिह्न से रहित धूमिल, और गुरुषाकार में देखे तो वह एक मार्ग जीवित रहता है ॥44॥

इति प्रोक्तं पदार्थस्थमरिष्टं शास्त्रदृष्टितः ।

इतः परं प्रवक्ष्यामि रूपस्थञ्च यथागमम् ॥45॥

इस प्रकार पदार्थ अरिष्टों का शास्त्रानुसार निरूपण किया, अब रूपस्थ अरिष्टों का आगमानुसार निरूपण करता है ॥45॥

स्वरूपं दृश्यते यत्र रूपस्थं तत्रिरूप्यते ।

नहुमेदं भवेत्तत्र कमेणैव निमत्तते ॥46॥

जहाँ सा दिव्यजाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है । यह रूपस्थ अरिष्ट अनेक प्रकार का होता है । इसका अव क्रमणः कथन किया जायेगा ॥46॥

द्वायपुरुष स्वप्नं प्रत्यक्षतया च लिङ्गनिर्विष्टम् ।

प्रश्नगतं प्रभणन्ति तद्रूपस्थं निमित्तज्ञाः ॥47॥

छायापूर्ण, स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रधन द्वारा निरूपित को अरिष्टवेत्ताओं ने रूपस्थ अरिष्ट कहा है ॥47॥

प्रक्षालितनिजदेहः सितवस्त्रादैविभूषितः ।

सम्यक् स्वच्छायामेकान्ते पश्यतु मन्त्रेण मन्त्रित्वा ॥48॥

ॐ नमः रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिहमस्तकरामा । इहे कूपाणिडनी देवि । मम शरीरे अवतर अवतर छाया गत्यो कुरु कुरु छीं स्वाहा ।

इति मन्त्रितसर्वांगे मन्त्री पश्येन्नरस्य वरछायाम् ।

शुभदिवसे परिहीने जलधरपवनेन परिहीने ॥49॥

समशुभत्त्वेऽस्मिन् तोयतुषांगारचर्मपरिहीने ।

इतरच्छायारहिते त्रिकरणशुद्ध्या प्रपश्यन्तु ॥50॥

रतान कर, श्वेत और स्वच्छ वस्त्रों से सुसज्जित हो एकान्त में “ॐ नमः रक्ते रक्तप्रिये सिहमस्तकरामा । इहे कूपाणिडनी देवि । मम शरीरे अवतर अवतर छाया गत्यो कुरु कुरु छीं स्वाहा ॥” इस मन्त्र में शरीर की मन्त्रित कर शुभ वारों में — वृथा, गृह, गृह और शुक्रवार के पूर्वाङ्ग में बायु और मेघरहित आकाश के होते पर नग-नचन और काय की शुद्धता के साथ समतल और जल, धूसा,

कोयला, चमड़ा या अन्य किसी प्रकार की छाया से रहित भू-पृष्ठ पर छाया का दर्शन करें ॥48-50॥

**न पश्यति आत्मरश्छायां निजां तदैव संस्थितः ।
दशदिनान्तरं पाति धर्मराजस्य मन्दिरम् ॥51॥**

जो रोगी उक्त प्रकार के भू-पृष्ठ पर स्थित हो आनी छाया को न देखे निष्ठय से वह दश दिन में मरण को प्राप्त हो जाता है ॥51॥

**अधोमुखो निजच्छायां छायायमञ्च पश्यति ।
दिनहुयञ्च तस्यायुभावितं मुनिषुगर्वैः ॥52॥**

जो रोगी व्यक्ति अपनी छाया को अधोमुखी रूप में देखे तथा छाया को दो दिनों में विभक्त देखे उसकी दो दिन में मृत्यु हो जाती है, ऐसा थोष मुनियों ने कहा है ॥52॥

**मन्त्री न पश्यति छायामातृस्य निमित्तिकाम् ।
सम्यक् निरीक्ष्यमाणोऽपि दिनमेकं स जीवति ॥53॥**

यदि रोगी व्यक्ति उपर्युक्त मन्त्र का जागकर छाया पर दृष्टि रखते हुए भी उसे न देख सके, उसका जीवन एक दिन का समझना नाहिं ॥53॥

**वृषभकरिमहिवरासभमेषाश्वादिकविवर्णपाकारः ।
पश्येत् स्वच्छायां लघु चेत् मरणं तस्य सम्भवति ॥54॥**

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को बैल, हाथी, महिंग, गधा, भूजा और घोड़ा इत्यादि अनेक रूपों में देखता है तो उसका तत्काल मरण जानना चाहिए ॥54॥

**छायाविम्बं ज्वलत्प्रान्तं सधूमं वौक्षयते निजम् ।
नीयमानं नरैः कृष्णैस्तस्य मृत्युलघु मतः ॥55॥**

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को अग्नि में प्रज्वलित, धूम से आण्डादित और कृष्ण वर्ण के व्यवितरणों के हारा ले जाते हुए देखता है उसकी शीत्र मृत्यु होती है ॥55॥

**नीला पीता तथा कृष्णो छायां रक्तां च पश्यति ।
त्रिचतुःपञ्चषड्रात्रं क्रमेणैव स जीवति ॥56॥**

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को नीली, पीती, तपती और रात्रि रूपों में देखता है वह क्रमशः तीन, चार, पाँच और कह दिन रात तक जीवते रहता है ॥56॥

मुद्गरसबलछुरिकानाराचखड्गादिशस्वघातेन ।
चूर्णीकृतनिजविष्वं पश्यति दिनसप्तकं चायुः ॥५७॥

जो व्यक्ति ब्राती छाया को मुद्गर, छुरी, वर्णी, भावन, बाण आदि से टुकड़े किये जाते हुए देखता है उसकी आयु शात दिन की होती है ॥५७॥

निजच्छाया तथा प्रोक्ता परच्छायापि तदृशी ।
दिशेषोन्तरुच्यते शशिन्द्रो नृष्टः शास्त्रवेदिभिः ॥५८॥

इस प्रकार निजच्छाया दर्शन और उसके फलाफल का वर्णन किया है। परच्छाया दर्शन का फल भी निजच्छाया दर्शन के समान ही रामजना चाहिए। किन्तु शास्त्रों के ममंजनों ने जो प्रधान दिशेषताएँ व्रतलायी हैं उनका वर्णन किया जाता है ॥५८॥

रुपी तरुणः पुरुषो न्यूनाधिकमस्तवर्जितो नूनम् ।
प्रक्षालितसवर्गो विलिष्यते स्वेन गन्धेन ॥५९॥

एक अत्यन्त गुन्दर युवक को जो न नाटा हो न लम्बा हो, स्नान करके उज्ज्वल गुगन्धित गन्ध लेपन से बुक्त करें ॥५९॥

अभिमन्त्र्य तस्य कायं पश्चादुक्ते महीतले विमले ।
छायां पश्यतु स नरो धूत्वा तं रोगिणं हृदये ॥६०॥

उग उपम गुरुप के शरीर को पूर्वांकित—“ऊँ न्हीं रक्ते रक्तप्रिये सिहमस्तक-
गमारुदे कूरासापिङ्गनीदिवि अस्य शरीरे अवतर अवतर छायामन्त्रां गुरु शुद्ध न्हीं
स्वाहा” मत्ता गे मन्त्रित वार स्वच्छ भूमि पर रिथत ही उस व्यक्ति ये रोगी का
ध्यान कराते हुए छाया का दर्शन करें ॥६०॥

या वक्ता प्राङ्मुखोच्छायाऽद्वी वाधोमुखवतिनी ।
दृश्यते रोगिणो यस्य स जीवति दिनद्वयम् ॥६१॥

प्रिय रोगी का ध्यान कर छाया का दर्शन किया जाय, परि छाया टेही, अधो-
गुच्छी, पराङ्मुखी दिखाई पड़े तो वह रोगी दो दिन जीवित रहता है ॥६१॥

हसन्ती कथयेन्मासं रुदन्ती च दिनद्वयम् ।
धावन्ती तिदिन छाया पाइका च चतुर्दिनम् ॥६२॥

हृती हुई छाया देखने में एक भर्तीने की आयु, रोती हुई छाया देखने से दो दिन की आयु, दीनी हुई छाया देखने में तीन दिन की आयु और एक पैर की छाया देखने में चार दिन की आयु रामजनी चाहिए ॥६२॥

**वर्षद्वयं तु हस्तेका कर्णहीने कवत्सरम् ।
केशहीने कषण्मासं जानुहीना दिनैककम् ॥६३॥**

एक हाथ से हीने छाया दिखलायी पड़ने पर दो वर्ष की आयु, एक कान से रहित छाया दिखलायी पड़ने पर एक वर्ष की आयु, केवल से रहित छाया दिखलायी पड़ने पर छह महीना और जानु से रहित दिखलायी पड़ने पर एक दिन की आयु होती है ॥६३॥

**बाहुसितासमायुक्तं कटिहीना दिनद्वयम् ।
दिनार्थं शिरसा हीना सा षण्मासमनासिका ॥६४॥**

बाहु से युक्त तथा कमर से रहित छाया दिखलाई पड़े तो दो दिन की आयु होती है। शिर से रहित छाया दिखलाई पड़े तो आधे दिन की आयु एवं नासिका रहित छाया दिखलाई पड़े तो छह महीने की आयु होती है ॥६४॥

**हस्तपादाग्रहीना वा त्रिपक्षं सार्वमासकम् ।
अग्निस्फुलिगान् मुञ्चन्ती लघुमृत्युं समादिगेत् ॥६५॥**

हाथ और पाँव से रहित छाया दिखलाई पड़े तो तीन पक्ष या डेढ़ महीने की आयु समझनी चाहिए। यदि छाया अग्नि स्फुलिगों को उगलनी हुई दिखलाई पड़े तो गीव मृत्यु समझनी चाहिए ॥६५॥

**रक्तं भज्जाञ्च मुञ्चन्ती पूतितेलं तथा जलम् ।
एकद्वित्रिदिनान्धेव दिनाद्वं दिनपञ्चकम् ॥६६॥**

रक्त, चबी, पीप जल और तेल को उगलनी हुई छाया दिखलाई पड़े तो कमः एक, दो, तीन, डेढ़ दिन और पाँव दिन की आयु समझनी चाहिए ॥६६॥

**परछायादिशेषोऽयं निदिष्टः पूर्वसूरिभिः ।
निजच्छायाफलं चोक्तं सर्वं बोद्धव्यमत्र च ॥६७॥**

**उवता निजपरच्छाया शास्त्रदृष्ट्या समासतः ।
इतः परं ब्रुवे छायापुरुषं लोकसम्मतम् ॥६८॥**

पूर्वोच्चाया ने परछाया के सम्बन्ध में ये विशेष बातें बतलाई हैं। अवश्य अन्य बताते नहीं निजच्छाया के समान गमन लेना चाहिए। गंधोप में शास्त्रानुसार निज-पर छाया का यह वर्णन किया गया है। इसके अनन्तर नोगममत छायापुरुष का वर्णन करते हैं ॥६७-६८॥

मद्मदनविकृतिहीनः पूर्वविधानेन वीक्ष्यते ।

सम्यक् मन्त्रो स्वप्नरच्छायां छायापुरुषः कथ्यते सदिभः ॥६५॥

वह परमित व्यक्ति निश्चय से छायापुरुष है जो अभिमान, विषय-वासना और छल-कपट से रहित होकर पूर्वोक्त कूष्माण्डनी देवी के मन्त्र के जाप हारा पवित्र होकर अपनी छाया को देखता है ॥६५॥

समभूमितले स्थित्वा समचरणयुगप्रलभ्बभुजयुगलः ।

बाधारहिते धर्मे विवर्जिते क्षुद्रजन्तुगणः ॥७०॥

जो रामतल —बरावर चौरस भूमि में खड़ा होकर पैरों को समानान्तर करके हाथों को लटकान्तर, बाधा रहित और छोटे जीवों से रहित (सूर्य की धूप में छाया का दर्शन करता है) वह छायापुरुष कहलाता है ॥७०॥

नाशाग्रे स्तनमध्ये गुह्ये चरणान्तदेशे ।

गगनतलेऽपि छायापुरुषो दृश्यते निमित्तज्ञः ॥७१॥

निमित्तज्ञों ने उसे छायापुरुष कहा है जिसका सम्बन्ध नाक के अप्रभाग से, दोनों स्तनों के मध्य भाग से, गुप्तांगों से, पैर के कोने से, प्राकाश से अथवा ललाट से हो ॥७१॥

विशेष—छाया पुरुष की व्युत्पत्ति कोा में 'छायायां पुरुषः दृष्टः पुरुषाकृतिविशेषः' की गयी है अर्थात् आकाश में अपनी छाया की भाँति दिखाई देने वाला पुरुष छायापुरुष कहलाता है । तन्त्र में वताया यथा है—पार्वती जी ने शिवजी से भावी घटनाओं को अवगत करने के लिए उपाय पूछा, उसी के उत्तर में शिव ने छायापुरुष के स्वरूप का वर्णन किया है । वताया यथा है कि मनुष्य शुद्धचित्त होकर अपनी छाया आकाश में देख सकता है । उसके दर्शन से पापों का नाश और छह मास के भीतर होने वाली घटनाओं का ज्ञान किया जा सकता है । पर्वती ने पुनः पूछा—मनुष्य कैसे अपनी भूमि की छाया को आकाश में देख सकता है ? और कैसे छह माह आग की बात मालूम हो सकती है ? महादेवजी ने वताया कि आकाश के भेषशूल्य और निर्मल होने पर निश्चल चित्त से अपनी छाया की ओर मुह कर खड़ा हो गुरु के उपदेशानुसार अपनी छाया में कृष्ण देखकर निर्निमेप नयनों से समुखरथ गगनतल को देखने पर स्फटिका भणिवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखलाई देता है । इस छायापुरुष के दर्शन विशुद्ध चरित्र वाले क्यवितयों को पुण्योदय के होने पर हो जाते हैं । अतः गुरु के वचनों का विश्वास कर उनकी संवा-शुश्रूपा हारा छायापुरुष सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर उसका दर्शन करना चाहिए । छाया-

पुरुष के देखने से छह मास तक मृत्यु नहीं होती, लेकिन छायापुरुष के मरतक शून्य देखने से छह मास के भीतर ही मृत्यु अवश्यमधारी है ॥71॥

छायाबिम्बं स्फुटं पश्येद्यावत्तावत् स जीवति ।

द्याधिविघ्नादिभिस्त्यवतः सर्वसीख्याद्यधिष्ठितः ॥72॥

छायापुरुष को स्पष्ट रूप से देखने पर व्यक्ति दीर्घजीवी होता है तथा व्याधि विघ्न इत्यादि पे रहित हो जुली रूप में चिकित्सा करता है ॥72॥

आकाशे विमले छायापुरुषं हीनमस्तकम् ।

यस्थार्थं वीक्ष्यते मन्त्री लग्नासं सोऽपि जीवति ॥73॥

मन्त्रित अस्ति यदि निर्मल आकाश में छायापुरुष हो तिना मरता का दंडे तो जिग रोमी के लिए छायापुरुष का दर्शन किया जा रहा है वह छह मास जीवित रहता है ॥73॥

पादहीने नरे दृष्टे जीवितं वत्सरत्रयम् ।

जंघाहीने समायुक्तं जानुहीने च वत्सरम् ॥74॥

मन्त्रित पुरुष को छायापुरुष तिना गैर के दिखलाई पड़े तो जिगके लिए देखा जा रहा है वह व्यक्ति तीन बर्ष तक जीवित रहता है, जंघाहीन और घुटन-हीन छायापुरुष दिखलाई पड़े तो एक बर्ष तक जीवित रहता है ॥74॥

उरोहीने तथाष्टादशमासा अपि जीवति ।

पञ्चदशा कटिहीनेऽप्ती मासात् हृदयं विता ॥75॥

यदि छायापुरुष हृदय रहित दिखलाई पड़े तो आठ महीने की आयु, बद्ध-स्थल रहित दिखलाई पड़े तो अठारह महीने की आयु और कटिहीन दिखलाई पड़े तो पचदह महीने की आयु समझनी चाहिए ॥75॥

षड्दिनं गुह्याहीनेऽपि करहीने चतुर्दिनम् ।

बाहुहीने त्वहर्युस्मां स्कन्धहीने दिनेककम् ॥76॥

यदि छाया पुरुष गुप्तांगों से रहित दिखलाई पड़े तो छह दिन की आयु, हाथ से रहित दिखलाई पड़े तो चार दिन की आयु, शाहीन दिखलाई पड़े तो दो दिन की आयु और स्कन्धहीन दिखलाई पड़े तो एक दिन की आयु समझनी चाहिए ॥76॥

थो नरोऽत्रैव सम्पूर्णः सांगोपांगविशेषते ।

स जीवति चिरं काजं न कर्तव्योऽत्र संशयः ॥77॥

जो मनुष्य समूर्ज अंगोंपांगों से सहित छाया पुरुष का दर्शन करता है वह निरकाल तक जीवित रहता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥77॥

आस्तां तु जीवितं मरणं लाभालाभं शुभाशुभम् ।
यच्चिन्तितमनेकार्थं छायामालेण दीक्ष्यते ॥78॥

जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, शुभ, अशुभ इत्यादि अनेक बातें छाया पुरुष के दर्शन से जानी जा सकती हैं ॥78॥

स्वप्नफलं पूर्वगतं त्वद्याये चाधुना परः ।

निमित्तं शेषमपि तत्र प्रकथ्यते सूत्रतः क्रमशः ॥79॥

यद्योऽस्त्रियस्त्रियाद्यापि निरुपणं पूर्वं अध्याद्यमें हो चुका है फिर भी सूत्र क्रमानुसार फल जाने का लिए स्वप्न का निरुपण किया जा रहा है ॥79॥

दशपञ्चवर्षेण्टया पञ्चदशदिनः क्रमशः ।

रजनीनां प्रतियामं स्वप्नः फलत्येवायुषः प्रश्ने ॥80॥

आगु के विनाय-क्रम में रात्रि के विभिन्न प्रहरों में देखे गये स्वप्नों का फल क्रमशः दम यां, पाँच वर्ष, पाँच दिन तथा दस दिन से प्राप्त होता है ॥80॥

शेषप्रश्नविजेये द्वादशशट्येकमासकैरेव ।

स्वप्नः क्रमेण फलति प्रतियामं शर्वरी दृष्टः ॥81॥

आगु के विनाय-क्रम के प्रथमों का फल रात्रि के विभिन्न प्रहरों के अनुसार क्रमणः वार्ष, शुक्ल, तीन और एक महीने में प्राप्त होता है ॥81॥

करचरणजानुमस्तकजंघासोदरविभंगिते दृष्टे ।

जिनविम्बस्य च स्वाने तस्य फलं कथ्यते क्रमशः ॥82॥

हाथ, पैर, मूटों, गगड़ी, जंघा, कन्धा तथा उदर का स्वप्न में भंगित होने का फल तथा रक्त में जिन विम्ब के दर्शन का फल क्रमशः वर्णन करेंगे ॥82॥

करभंगे चतुमर्सिः त्रिमासैः पदभंगतः ।

जानुभंगे तु वर्षेण मस्तके दिनपञ्चभिः ॥83॥

त्वाम म करभंग (हाथ का टूटना) देखने से चार महीने में मृत्यु, पदभंग देखने से तीन महीने में, जानुभंग देखने में एक वर्ष में और मस्तक भंग देखने से पाँच दिन में मृत्यु होती ॥83॥

वर्षागुमेन जंघायामंसहोनि द्विपक्षतः ।

त्रियात् प्राप्तः फलं मन्त्रो पञ्चेणोदरभंगतः ॥84॥

स्वप्न में समस्त जंथा का टूटना देखने से दो वर्ष में मृत्यु, और कन्धों का भ्रंग होना देखने से दो पञ्च में मृत्यु एवं उदर भ्रंग देखने से एक पञ्च में मृत्यु होती है। स्वप्नदर्शक मन्त्र का प्रयोग कर तथा स्वच्छ और शुद्धतापूर्वक जब रात्रि में शयन करता है तभी स्वप्न का उक्त फल घटित होता है ॥४४॥

छत्रस्थं परिवारस्य भंगे दृष्टे निमित्तवित् ।

नृपस्थं परिवारस्य ध्रुवं मृत्युं समादिशेत् ॥४५॥

स्वप्न में राजा के छत्र का भ्रंग देखने में राजा के परिवार के निसी अवित्त की मृत्यु होती है ॥४५॥

विलयं याति यः स्वप्ने भक्ष्यते ग्रहवायसः ।

अथ करोति यश्छर्दि मासयुगमं स जीवति ॥४६॥

जो अवित्त स्वप्न में अपना विलयन तथा गृह वीर कीओं द्वारा अग्ना पांस भक्षण देखता है एवं चर्चा का वर्णन करते हुए देखता है उग्रती दो महीने की आयु होती है ॥४६॥

महिषोद्भुवरारुद्धो वीयते दक्षिणं दिशम् ।

घृततेलादिभिलिप्ता मासमेकं स जीवति ॥४७॥

स्वप्न में घृत और तेल में स्नान व्यवित धृष्टिग्रह (भैसा), ऊट और गधे के ऊपर सवार हो दक्षिण दिशा की ओर जाता हुआ दिखता है एवं यहीं वी आयु समझनी नाहिए ॥४७॥

ग्रहणं रविचन्द्राणां नरशं वा पतनं भूवि ।

रात्रो पश्यति यः स्वप्ने त्रिपक्षं तस्य जीवतम् ॥४८॥

यदि रात्रि के गग्न मध्यान में धूप, चन्द्र वादि ग्रहों का विनाश अथवा पृथ्वी पर पतन दिखलाई पड़े, तो तीन पक्ष की आयु समझनी चाहिए ॥४८॥

मृहादाकृष्य लीयेत कूलण्मत्यर्भयप्रदैः ।

काष्ठायां यमराजस्य शीद्रं तस्य भवान्तरम् ॥४९॥

यदि स्वप्न में कूलण वर्ण के अव्याप्त अवित्त या भीनकर दक्षिण दिशा की ओर ले जाते हुए दिखलाई पड़े तो शीद्र ही मरण होता है ॥४९॥

भिन्नते यस्तु शस्त्रेण स्वयं बुद्ध्यति कोपतः ।

अथवा हन्ति तान् स्वप्ने तस्यायुदिविशतिः ॥५०॥

जो स्वान में अपने को किसी ग्रस्त्र में कटा हुआ देखता है अथवा अन्ध द्वारा

अपनी मृत्यु के दर्शन करता है अथवा अस्त्रों को ही लोड़ देता है उसकी मृत्यु बीस दिन में ही हो जाती है ॥90॥

यो नृत्यन् नीयते बद्धवा रक्तपूष्वैरलङ्कृतः ।
सन्निवेशं कृतान्तस्य मासादूर्ध्वं स नश्यति ॥91॥

जो स्वप्न में मृतक के समान लाल फूलों से सजाया हुआ नृत्य करते हुए दक्षिण दिशा नीं ओर आगे को बाँधकर ले जाते हुए देखता है वह एक मास से कुछ अधिक जीवित रहता है ॥91॥

तैलपूरितगत्यां रक्तकीकसपूरिभिः ।
स्वं मरनं वीक्ष्यते स्वप्ने मासाद्वं श्रियते स वै ॥92॥

जो स्वप्न में रुधिर, चर्वी, पीर (पीव), चमड़ा, बी और तेल से भरे गड्ढे में गिरकार डूबता हुआ देखता है उसकी निश्चित 15 दिनों में मृत्यु हो जाती है ॥92॥

बन्धनेऽथ वरस्थाने मोक्षे प्रयाणके ध्रुवम् ।
सौरभेये सिते दृष्टे यशोलाभं निरन्तरम् ॥93॥

स्वप्न में ग्रेवत गाय धैर्यी हुई, तथा खुटे से खुनी हुई एवं चलती हुई दिखलाई पड़े तो हमेणा यश प्राप्ति होती है ॥93॥

नदीवृक्षसरोभूभूत् गृहकुम्भान् मनोहरान् ।
स्वप्ने पश्यति शोकात्मः सोऽपि शोकेन मुच्यते ॥94॥

स्वप्न में नदी, वृक्ष, नालाब, गवत, घर तथा मुन्द्रर मनोहर कलश दिखलाई पड़े तो दृष्टी अवित भी यस से मुक्त हो जाता है ॥94॥

शयनाशतजं पानं गृहं वस्त्रं सर्भेषणम् ।
सालंकारं द्विषं वाहं पश्यन् शर्मकदम्बभाक् ॥95॥

जो स्वप्न में सीना, भोजन-पान, घर, वस्त्रा-भूषण, अलंकार, हाथी तथा अन्य वाहन आदि का दर्शन करता है उस सभी प्रकार के सुख उपलब्ध होते हैं ॥95॥

पताकामसियटि च पुष्पमालां सशवितकाम् ।
काञ्चनं दीपसंयुक्तं लात्वा बुद्धो धनं भजेत् ॥96॥

यदि स्वप्न में पताका, लकड़ार, भांडी, पुष्पमाला आदि की स्वर्णदीपक के द्वारा देखता हुआ दिखलाई पड़े तो धन को प्राप्ति होती है ॥96॥

**वृश्चकं दन्वशूकं वा कीटकं वा भयप्रदम् ।
निर्भयं लभते यस्तु धनलाभो भविष्यति ॥१७॥**

जो स्वप्न में बिज्ञु, सौंप तथा अन्य भयकारक जन्म आओ गे निर्भय अवस्था को प्राप्त होते हुए देखे उसे धनलाभ होता है ॥१७॥

**पुरीषं छदितं मूर्कं रक्तं रेतो वसान्तितम् ।
भक्षयेत् घृण्या हीनस्तस्य शोकविमोचनम् ॥१८॥**

जो स्वप्न में टट्टी, वमन, मूर्क, रक्त, वीर्य, चर्वी इत्यादिक घृणित वस्तुओं को घृणा रहित भक्षण करते हुए देखे उसका शोक नष्ट होता है ॥१८॥

**वृषकुञ्जरप्रासादक्षीरवृक्षशिलोच्चये ।
अश्यारोहणं शुभस्थाने दृष्टमुन्नतिकारणम् ॥१९॥**

जो स्वप्न में बैल, हाथी, महल, पीपल, बड़, पर्वत एव धोड़े के ऊपर चढ़ता हुआ देखे उसकी उन्नति होती है ॥१९॥

**भूषकुञ्जरगोवाहधनलक्ष्मीमनोभुवः ।
भूषितानामलंकारदर्दशनं लिङ्गिकारणम् ॥२०॥**

जो स्वप्न में राजा, हाथी, गाय, सवारी, धन, लक्ष्मी, कामदेव तथा अलंकार और आभूषणों से युक्त पुरुष का दर्शन करता है उसकी भाग्य की वृद्धि होती है ॥२०॥

**पथोर्धि तरति स्वप्ने भुद्भते प्रासादमस्तके ।
देवतः लभते मन्त्रं तस्य वैश्वर्यमद्भुतम् ॥२१॥**

जो स्वप्न में अग्ने को समुद्र पार करते हुए, महल के ऊपर भोजन करते हुए तथा किसी अभीष्ट देवता से मन्त्र प्राप्त करते हुए देखता है, उसे अद्भुत ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ॥२१॥

**शुभ्रालंकारवस्त्राद्या प्रमदा च प्रियदर्शना ।
शिलष्यति यं तरं स्वप्ने तस्य सम्पत्समागमः ॥२२॥**

जिसे स्वप्न में स्वच्छ वस्त्रों और अलंकारों में युक्त सुन्दर रुधी आविष्णव करती हुई दिखता ई पड़े, उसे सम्पत्ति प्राप्ति होती है ॥२२॥

**सूर्यचन्द्रमसी पश्येदुदयाचलमस्तके ।
स लात्यभ्युदयं मत्यो दुःखं तस्य च तश्यति ॥२३॥**

जो स्वप्न में उदयाचल पर सूर्य और चन्द्रमा को उदित होते हुए देखे उस

मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है तथा उसका दुःख नष्ट हो जाता है ॥103॥

बन्धनं बाहुपाशेन निगडः परदबन्धनम् ।

स्वस्य पश्यति यः स्वप्ने लाति मान्यं सुपुत्रकम् ॥104॥

जो स्वप्न में आगे हाथ और पैर को बैधा हुआ देखता है उसे पुत्र की प्राप्ति होता है ॥104॥

दृश्यते श्वेतसर्वेण दक्षिणांगं पुमान् भुवि ।

महान् लाभो भवेत्स्य वृद्ध्यते यदि शोध्रतः ॥105॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अपनी दाहिनी ओर श्वेत मणि को देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् तत्काल उठ जाता है, उसे अत्यन्त लाभ होता है ॥105॥

अगस्यागमनं पश्येदपेयं पानकं नरः ।

विद्यार्थकामलाभस्तु जायते तस्य निश्चितम् ॥106॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अगम्य रक्षी के साथ ममागम करते हुए देखता है तथा प्राण चलनुभीं को पीते हुए देखता है, उसे विद्या, विषयमुख और प्रबलाग होता है ॥106॥

सफेनं पिवति क्षीरं रोप्यभाजनसंस्थितम् ।

धनधान्यादिसम्पत्तिविद्यालाभस्तु तस्य वै ॥107॥

जो व्यक्ति स्वप्न में चाँदी के बर्तन में विश्वित केन महित दूध को पीते हुए देखता है, उसे निश्चय में धन-धान्य आदि गमनि की प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है ॥107॥

घटिताघटितं ऐमं पीतं पुष्टं फलं तथा ।

तस्मै दत्ते जनः कोऽपि लाभस्तस्य सुवर्णजः ॥108॥

जो व्यक्ति रवान में न्दर्ध अथवा स्वर्ण के आभूषण तथा पीत पुष्ट या फल को अन्य किसी व्यक्ति द्वारा प्रहण करते हुए देखता है, उसे स्वर्ण की, स्वर्ण-भूषणों की प्राप्ति होती है ॥108॥

शुभं वृषेभवहानां कृष्णानामपि दर्शनम् ।

शेषाणां कृष्णद्रव्याणामालोको निन्दितो बुधः ॥109॥

रवान में शुभ वर्ण के बैन, हाथी आदि वाहनों का दर्शन शुभकारक होता है तथा अन्य शुभ वर्ण की चलनुभीं का दर्शन विहानों द्वारा निन्दित कहा गया है ॥109॥

दब्नेष्टसज्जनप्रेम गोदूम् । सौख्यसंगमः ।

जिनपूजा यवैदृष्टः सिद्धार्थलभते शुभम् ॥110॥

स्वप्न में दही के दर्जन से सज्जन-प्रेम की प्राप्ति, गोदूम के दर्जन में सुख की प्राप्ति, जो दर्जन से जिन-पूजा की प्राप्ति एवं पीली मरमों के देखने से शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥110॥

शयनासतयातावां स्वांगवाहृत्वेशमनाम् ।

दाहं दृष्ट्वा ततो बुद्धो लभते कामितां शियम् ॥111॥

स्वप्न में शयन, आसन, सबारी स्वांगवाहृत्व और मकान या जलना देखने के उपरान्त शीघ्र ही जाग जाने से अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है ॥111॥

निजाक्षियेष्टयेद् ग्रामं स भवेत् मण्डलाधिपः ।

नगरं वेष्टयेद्यस्तु स पुनः पृथिवीपतिः ॥112॥

जो स्वप्न में अपने शरीर की नरों से गाँव को वेष्टित करते हुए, देखे वह मण्डलाधिप तथा जो नगर को वेष्टित करते हुए, देखे वह पृथिवीपति— शाजा होता है ॥112॥

सरोमध्ये स्थितः पावे पायसं धो हि भक्ष्यति ।

आसनस्थस्तु निश्चिन्तः स महाभूमिषो भवेत् ॥113॥

जो स्वप्न में तालाब में स्थित हो, वर्णन में रुद्धी हुई शरीर वो निश्चिन्त होकर खाते हुए देखता है, वह चक्रवर्ती राजा होता है ॥113॥

देवेष्टा पितरो गात्रो लिङिनो मुखस्थस्त्रियः ।

वरं ददति यं स्वप्ने स तथैव भविष्यति ॥114॥

स्वप्न में देवपूजिका, पितर—व्यन्तर आदि वीर भक्ता, या देव का श्राविगम करने वाली नारियाँ जिस प्रकार का वरदान देती हुई दिखलाई पड़े, उसी प्रकार का फल समझना चाहिए ॥114॥

सितं छतं सितं बस्त्रं सितं कर्णूरचन्दनम् ।

लभते पश्यति स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥115॥

जो स्वप्न में श्वेत छत, श्वेत बस्त्र श्वेत चन्दन एवं कर्णुर आदि अमुकों को प्राप्त करते हुए देखता है, उसे सभी प्रकार के अभ्युदय प्राप्त होते हैं ॥115॥

पतन्ति दशना यस्य निजकेशाश्वमस्तकात् ।

स्वधनमित्रयोनश्चो बाधा भवति शरीरके ॥116॥

जो स्वप्न में अपने दाँतों को गिरने हुए तथा अपने सिर से बालों को गिरते या जगड़ते हुए देखता है, उभके धन और बान्धव नाश को प्राप्त होते हैं और शारीरिक काट भी उमे होता है ॥१६॥

दंष्ट्री शृंगी वराहो वा बानरो भूगनायकः ।

अभिद्रवन्ति यं स्वप्ने भवेत्तस्य महूद्भयम् ॥१७॥

जो स्वप्न में अपने पीछे दाँत बाले और सींग वाले शूकर, बन्दर एवं सिंह आदि प्राणियों को दौड़ते हुए देखता है, उसे महान् भय प्राप्त होता है ॥१७॥

घृतनैलादिभिः स्वांगे वाभ्यां निशि पश्यति ।

यस्ततो बुद्ध्यते स्वप्ने व्याधिस्तस्य भजायते ॥१८॥

जो स्वप्न में ब्राह्मण शरीर में छो या नेत्र की मालिङ्ग करते हुए देखता है तथा स्वप्न दर्शन के पञ्चात् उभकी निद्रा खुल जाती है, उमे रोगोत्पत्ति होती है ॥१८॥

रक्तवस्त्राग्नलंकारैर्भूषिता प्रमदा निशि ।

यमालिगति सस्नेहा विष्टतस्य महृत्यपि ॥१९॥

जो स्वप्न में रात्रि के समय लाल वर्ण के वस्त्रालंकारों से युक्त नारी का रसनेह आलिगत करते हुए देखता है, उसे महती विषति का साम्राज्य करना पड़ता है ॥१९॥

पीतवर्णप्रसूनैर्वलङ्घकृता पीतवाससा ।

स्वप्ने गृहति यं नारी रोगस्तस्य भविष्यति ॥२०॥

जो स्वप्न में पीत वर्ण के पुष्पों द्वारा अलंकृत तथा पीत वर्ण के वस्त्रों से गङ्गित नारी द्वारा अपने को छिपाया हुआ देखे वह शीघ्र ही रोगी होता है ॥२०॥

पुरीषं लोहितं स्वप्ने मूत्रं वा कुरुते तथा ।

तदा जागति यो मत्यो द्रव्यं तस्य विनश्यति ॥२१॥

जो स्वप्न में लाल वर्ण की टट्ठी करते हुए या लाल वर्ण का मूत्र करते हुए देखे तथा अवान दर्शन के पञ्चात् जाग जाय तो उसका धन नाज होता है ॥२१॥

विष्टा लोमानि रौद्रं वा कुकुमं रक्तचन्दनम् ।

दृट्वा यो चुद्धयते सुप्तो यस्तस्यार्थो विलीयते ॥२२॥

त्रिंशि स्वप्न में विष्टा—टट्ठी, रोम, अग्नि, कुकुम—रोशी एवं लाल चन्दन

दिखलाई पड़े और स्वप्न दर्शन के अनन्तर निदा टूट जाय, उसके धन का विनाश होता है ॥ १२२ ॥

रक्तान्तं करवीराणामुत्पन्नानामुपानहम् ।
लाभे वा दर्शनं स्वप्ने प्रयातस्य विनिर्देशेत् ॥ १२३ ॥

यदि स्वप्न में लाल-लाल तलवार धारण किये हुए वीरपुरुषों के जूते का दर्शन या लाभ हो तो यात्रा की सफलता समझनी चाहिए ॥ १२३ ॥

कृष्णवाहाधिरूढो यः कृष्णवासो विभूषितः ।
उद्दिग्नश्व दिशो याति दक्षिणां गत एव सः ॥ १२४ ॥

स्वप्न में कृष्ण सवारी पर आरूढ़, कृष्ण वस्त्रों से विभूषित एवं उद्दिग्न होता हुआ दक्षिण दिशा की ओर जाते हुए देखे तो मृत्यु समझनी चाहिए ॥ १२४ ॥

कृष्णा च विकृता नारी रौद्राक्षी च भयप्रदा ।
कर्षति दक्षिणाशायां यं ज्ञेयो मृत एव सः ॥ १२५ ॥

स्वप्न में ज़िग व्यक्ति को कान्धी कलूटी विकृत वर्ण की भयानक नारी दक्षिण दिशा की ओर छोड़ती हुई दिखनायी पड़े उसकी निश्चित रूप से मृत्यु समझनी चाहिए ॥ १२५ ॥

मुण्डितं जटिलं रूक्षं मलिनं नीलब्रासस्तम् ।
रुष्टं पश्यति यः स्वप्ने भयं तस्य प्रजायते ॥ १२६ ॥

जो स्वप्न में मुण्डित, जटिल, रूक्ष, मलिन और नील ब्रस्त्र धारण किये हुए हाट रूप में आगते की देखता है उसे भय की प्राप्ति होती है ॥ १२६ ॥

दुर्गन्धं पाण्डुरं भीमं तापसं व्याधिविकृतिम् ।
पश्यति स्वप्ने (००) ग्लानि तस्य तिरुपयेत् ॥ १२७ ॥

स्वप्न में जो दुर्गन्धपूर्ण, गीने एवं भयंकर व्याधिक्युक्त तापसी को देखता है उसे ग्लानि होती है ॥ १२७ ॥

वृक्षं बल्लीं चश्चपगुल्मं वल्मीकिं निजांकगाम् ।
दृष्ट्वा जागति यः स्वप्ने ज्ञेयस्तस्य धनक्षयः ॥ १२८ ॥

जो स्वप्न में वृक्ष, लता, छोटे-छोटे गुच्छ या वल्मीकि—बौद्धी को अपनी गोदी में देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् जाग जाता है उसके धन का विनाश होता है ॥ १२८ ॥

खर्जूरोऽप्यनलो वेणुगुल्मो वाप्यहितो द्रुमः ।

मस्तके तस्य जयेत् गत एव स निश्चितम् ॥ १२९ ॥

स्वप्न में जिसके मस्तक पर खर्जूर, अग्नि गंयुक्त वर्ण लता एवं वृक्ष पेंदा हुए दिखलायी हैं उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥ १२९ ॥

हृदये वा समुत्पन्नात् हृद्रोगेण स नश्यति ।

ओषांमेषु प्रलडास्ते तत्तदंगविनाशकाः ॥ ३० ॥

जो स्वप्न में बक्षस्थल पर उपर्युक्त खर्जूर, वर्ण क्रादि को उत्पन्न हुआ देखता है उससी हृदयगोत्र गंगूल्म होती है तथा अग्नि इं ओषांगों में से जिस अंग पर उपर्युक्त पदार्थों की उत्पन्न होती हुए देखता है उग्न-उमा अंग का विनाश होता है ॥ ३० ॥

रक्तसूबरसूबैर्वा रक्तपुण्ड्रैविशेषतः ।

यदंगं वेष्ट्यते स्वप्ने तदेवांगं विनश्यति ॥ ३१ ॥

जो स्वप्न गं भग्ने विग्रहं अंगं तो नालगूल, नालपूल, या रक्ता लता-लतुओं में वेष्टित देखता है उग्नके उस अंग का विनाश होता है ॥ ३१ ॥

द्विषो ग्रहो मनुष्यो वा स्वप्ने कर्त्तति य नरम् ।

मोक्षं बद्धस्य बन्धे वा मुक्तिं च समादिशेत् ॥ ३२ ॥

स्वप्न में जिस मनुष्य की जो हाथी, पांड या मनुष्य डारा खीचते हुए देखता है उसकी कारणात् गं मुक्ति होती है ॥ ३२ ॥

मधु छद्मे विशेषं रक्तप्ने दिवा वा यस्य वेष्टमनि ।

अथेतस्थो भवेत्सस्य भरणं वा विनिर्दिशेत् ॥ ३३ ॥

स्वप्न में जिसके घटे में दिव में भधु-मध्यस्थी का छना प्रवेश होते हुए दिखलाई पड़े, उसका धन-वाश अथवा परण होता है ॥ ३३ ॥

विरेचनेऽर्थनाजः स्थात् छद्मे मरणं ध्रुवम् ।

वाहे प्रदपछत्राणां गृह्णाणां इवं समादिशेत् ॥ ३४ ॥

जो स्वप्न में विरेचन वर्णति वक्तु नप्ते हुए देखता है उसके धन का नाश होता है । वधु नप्ते द्वारा देखते गं मरण होता है । वृक्ष की चोटी पर नढ़ते हुए देखते में घर का नाश होता है ॥ ३४ ॥

स्वप्ने रोदते विश्वात् नर्तने व्रध्वन्धनम् ।

हृतने शोकसन्तापं गमने कलहं तथा ॥ ३५ ॥

स्वप्न में को गाना गाने हुए देखने से रोगा, नाचना देखने से बघबन्धन, हैमना देखने में शोक-सन्ताप एवं गमन देखने से कलह आदि कथ प्राप्त होते हैं ॥ 135॥

**सर्वेषां शुभ्रवस्त्राणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ।
भस्मास्थितकार्यसिद्धनं त शुभप्रदम् ॥136॥**

स्वप्न में जूँच—जोग चरता का देखना उत्तम कलदायक है तिलु भरप, हड्डी, पट्टा और बगाया का देखना शुभ होता है ॥ 136॥

**शुक्लमाल्यो शुक्लालङ्घारादीनां धारणं शुभम् ।
रक्ततारितादिवस्त्राणं धारणं त शुभं मतम् ॥137॥**

स्वप्न में जूँच माल्य और रक्ततारि आदि का धारण करना शुभ है । रक्त-गीत एवं तीलादि करने का धारण करना शुभ नहीं है ॥ 137॥

**मत्तज्ञः पाण्डूरस्थो वातादिदोषजस्तथा ।
दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च चिन्तोत्पन्नः स्वभावजः ॥138॥
पुण्यं परमं भवेद्वर्वं मन्त्रज्ञो चरदो मतः ।
तस्यात्तो मत्यभूतो च लेघाः षट्किञ्जलः स्मृताः ॥139॥**

ग्राम भाट प्रकार के द्रविन हैं । पाण्ड रहित मंथ-साधना हारा सम्बन्ध मंथन, वातादि दोषों से उत्पन्न धीपज, दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, चिन्तोत्पन्न, स्वभावज, पुण्य-प्रयाप के आपना देव । इन भाट प्रकार के स्वप्नों में गंत्रज और देव स्वप्न सत्य होते हैं । ऐप छान्न प्रकार के भवन प्राप्त निष्कल होते हैं ॥ 138-139॥

**मलमूत्रादिवायोत्थं आधि-व्याधिसमुद्भवः ।
मालात्वभावदिवास्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्कलः ॥140॥**

मल-मूत्र आदि की वाधा ये उत्पन्न होने वाले स्वप्न, आधि-व्याधि अथवा गोगादि ये उत्पन्न रथन, आवृत्य इत्यादि गे उत्पन्न व्यष्ट, दिवा एवं स्वप्न जानने अवश्या में देखे गये पदार्थों के गंत्रकार से उत्पन्न स्वप्न प्राप्त निष्कल होते हैं ॥ 140॥

**शुभः प्राप्तशुभं पद्मादशुभः प्राप्तं शुभस्ततः ।
पाइचल्यः फलदः स्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्कलः ॥141॥**

यदि स्वप्न पूर्व में शुभ पञ्चान् अशुभ होते हैं, प्रथमा पूर्व में अग्रम और बाद में शुभ होते हैं तो वाद पञ्चाद अवश्या में देखा गया स्वप्न कलदायक तथा पूर्ववर्ती

अवस्था का स्वप्न निष्पल होता है ॥ १४१ ॥

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ।

शुभे जाते पुनः स्वप्ने सफलः स तु तुष्टिकृत् ॥ १४२ ॥

अशुभ स्वप्न के आने पर व्यक्ति स्वप्न के पश्चात् जगकर पुनः सो जाय तो अशुभ स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है । यदि अशुभ स्वप्न के अनन्तर पुनः शुभ स्वप्न दिखलायी पड़े तो अशुभ फल नष्ट होकर शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥ १४२ ॥

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने जप्त्वा पञ्चनमस्त्रियाम् ।

दृष्टे स्वप्ने शुभेनैव दुःस्वप्ने शान्तिमाचरेत् ॥ १४३ ॥

अशुभ स्वप्न के दिखलायी पड़ने पर जगकर णमोनार मंत्र का पाठ करना चाहिए । यदि अशुभ स्वप्न के पश्चात् शुभ स्वप्न आये तो दुष्ट स्वप्न की शान्ति का उपाय करने नी आवश्यकता नहीं ॥ १४३ ॥

स्वं प्रकाशय गुरोरग्ने सुधीः स्वप्ने शुभाशुभम् ।

परेवामशुभं स्वप्नं पुरो नैव प्रकाशयेत् ॥ १४४ ॥

बुद्धिमान् व्यक्ति ने अपने गुण के सम्बन्ध गृभ और अशुभ स्वप्नों का वर्थने करना चाहिए, इन्हुं अशुभ स्वप्न को गृष्ण के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध कभी भी नहीं प्रकाशित करना चाहिए ॥ १४४ ॥

निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा पूर्वशास्त्रानुसारतः ।

लिङ्गेन तं ब्रुवे इष्टं निर्दिष्टं च यथागमम् ॥ १४५ ॥

पूर्व शास्त्रों के अनुसार स्वप्न निमित्त वा वर्णन किया गया है अब लिंग के अनुसार इसके डाटानिष्ट वा आगमानुकूल वर्णन करते हैं ॥ १४५ ॥

शरीरं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं जलमध्यगम् ।

यथोक्तं गौतमेनैव तथैवं प्रोक्षयते मया ॥ १४६ ॥

प्रथम लिंग शारीर है और द्वितीय लिंग जलमध्यग है, इहका जिस प्रकार से गहने गीतम रुदामी ने वर्णन किया है वैगा ही मैं वर्णन करता हूँ ॥ १४६ ॥

स्नातं लिप्तं सुगन्धेन वरमन्त्रेण मन्त्रितम् ।

अष्टोत्तरशतेनापि यत्त्रो पश्येतदङ्गकम् ॥ १४७ ॥

ऋं ह्रीं ला॒ हू॑ पः लङ्गमी॑ भूवी॑ कुरु॑ कुरु॑ स्वाहा॑ ।

स्नान का गुणनिधित ने १ लगाकर 108 बार इस मंत्र से मंत्रित होकर स्वप्न

का दर्जन करें। इस प्रकार स्वाम का देखता हो मंत्रज कहता है। “ऊं ही ना
हः पः लक्ष्मी अवीं कुरु कुरु स्वाहा” इस मंत्र का 108 बार जाए करना
चाहिए ॥ 147॥

सर्वगेषु यदा तस्य लीयते मक्षिकागणः ।

षष्ठ्यासं जीवितं तस्य कथितं जानदृष्टिभिः ॥ 148॥

जिस व्यक्ति के समस्त शरीर पर अकाशण ही अधिक भविष्यती नमी हों
उसकी आयु ज्ञानियों ने उह महीने बतलायी है। यहाँ में प्रत्यक्ष अग्रिमी का वर्णन
आचार्य करते हैं ॥ 148॥

दिग्भागं हरितं पश्येत् पीतरुपेण शुभ्रकम् ।

गन्धं किञ्चिच्चन्नं यो वेत्ति सृत्युस्तस्य विनिश्चितम् ॥ 149॥

जिसका अकाशण ही दिग्गंडी होती, जोकी अपि एव इसमें दिग्गलाली पड़े
तथा गन्ध का जान भी जिसे न हो उसकी पृथ्वी निश्चित है ॥ 149॥

शशिसूर्यो गतौ यस्य सुखरवात्योपणीतली ।

मरणं तस्य निर्दिष्टं शोद्धतोऽरिष्टेदिभिः ॥ 150॥

जिस गूर्ध और चन्द्रमा दिखलायी न पड़े तथा जिसके मुख में ज्वास अधिक
और नेंजी से निरुत्ता हो उसका शीघ्र मरण किछीतों में कहा है ॥ 150॥

जिह्वा मलं न मुञ्चति न वेत्ति रसना रसम् ।

निरीक्षते न रूपञ्च सप्तदिनं स जीवति ॥ 151॥

जिल्की जिह्वा पर सर्वदा अधिक मैल रहता हो तबा जिसे निरी भी रस का
स्वाद न आता हो और न वस्तुओं के रूप को देख नाना ही उसकी आगु यात
दिन की होती है ॥ 151॥

बह्लिचन्द्रो न पश्येच्च शुभ्रं वदति कुरुणकम् ।

तुङ्गच्छायां न जानाति सृत्युस्तस्य समागतः ॥ 152॥

जिसे अग्नि और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ते हों और कार्मी वस्तु ज्वेत मालूम
पड़ती हो, उन्नत लापा परिज्ञात न हो उसकी आगत एवं रहती है ॥ 152॥

षष्ठ्यन्त्रित्वा स्वमुखं गोगी जानुदध्ने जले स्थितः ।

न पश्येत् स्वमुखच्छायां षष्ठ्यासं तस्य जीवितम् ॥ 153॥

जो गोगी मंत्रित होकर बुद्धे पश्चिम जल में बढ़ा हो अपने मुख की लाया—
प्रतिविम्ब न देख सके उसकी आयु छह महीने की होती है ॥ 153॥

ॐ हों लाः ह्वः पः लःमी भवीं कुरु कुरु स्वाहा ।

भूतं मन्त्रिततैलेन मार्जितं ता प्रभाजनम् ।

पिहितं शुक्लवस्त्रेण सन्ध्यायां स्थापयेत् सुधीः ॥154॥

तस्योवरि पुनर्दत्त्वा नूतनां कुण्डिकां ततः ।

जातिषुण्ठेर्जपेदेवं स्वष्टाधिकशतं ततः ॥155॥

क्षीरान्तभोजनं कृत्वा भूमीं सुप्तेत मन्त्रिणा ।

प्रातः पश्येत्स तत्रैव तैलमध्ये निजं मुखम् ॥156॥

निजास्यं चेन्न पश्येच्च षष्ठमासं च जीवति ।

इत्येवं च समाप्तेन द्विधा लिङं प्रभाषितम् ॥157॥

अब आचार्य तेल में मुखदर्शन की विधि द्वारा आयु का निश्चय करने की जानिया बतानी है कि “ॐ एवं नाम इति लःमी भवीं कुरु कुरु स्वाहा” इस मंत्र द्वारा मन्त्रित तेल से भरे हुए एक मुखदर गाफ या स्वच्छ तांदे को वर्तने को सन्ध्या समय शुक्ल वस्त्रे ढककर रखे, पुनः उस पर एक ज्वीन कुण्डिका स्थापित कर उपर्युक्त मंत्र का गुही के पुणों से 108 बार जाप करे, तत्पात्रात् खोर का भोजन कर मन्त्रित भूमि पर गमन करे और प्रातःकाल उक्तके उस तेल में आने मुख दो देखे। यदि अपना मुख इस तेल में न दिखलाई पड़े तो छह मास की आयु समझनी चाहिए। इस प्रकार संकेत में आचार्य ने दोनों प्रकार के लिंगों का वर्णन किया है ॥ 154-157॥

शब्दनिमित्तं पूर्वं स्नात्वा निमित्ततः शुद्धिदासा विशुद्धधीः ।

अम्बिकाप्रतिमा शुद्धों स्नापयित्वा रसादिकं ॥158॥

अच्छित्वा चन्दनैः पूर्वैः श्वेतवस्त्रसुवेष्टिताम् ।

प्रक्षिप्य वामकक्षायां गृहीत्वा पुरुषस्ततः ॥159॥

शब्द निमित्त का वर्णन करते हुए आचार्यों ने बतलाया है कि शब्द यो प्रकार के होते हैं—दैवी और प्राकृतिक। यहाँ दैवी शब्द का कथन किया जा रहा है। स्नातक श्वच्छ ओर शुद्ध वस्त्र धारण करे। अनन्तर अम्बिका की मृति का जल, दुग्धादि से अमिषेक कर श्वेत वस्त्रों से उपे आच्छादित करे। पश्चात् चन्दन, पुष्प, नैवेद्य आदि से उनकी पूजा करे। वर्तमान वर्षे हाथ के नीचे रुद्रार (शब्द गुनने के सिंह निम्न विधि का प्रयोग है) ॥ 158-159॥

निशायाः प्रथमे यामे प्रभाते यदि वा धर्जेत् ।

इमं मन्त्रं पठन् व्यक्तं श्रोतुं शब्दं शुभाशुभम् ॥160॥

ऊँ ह्रीं अम्बे कूष्मा पिण्डनो (नि) रुद्राणि वद एव बागीश्वरी (रि) स्वादा ।

पुरवीथ्यां वजन् शब्दसाद्यं श्रुत्वा शुभाशुभम् ।

स्मरन् व्यावर्तते तस्मादागत्य प्रविचारयेत् ॥161॥

रात्रि में प्रथम प्रहर में या प्रातःकाल में “ऊँ ह्रीं अम्बे कूष्मा पिण्डनि ब्राह्मणि देवि वद वद बागीश्वरि स्वादा” इस गंत्र का जापन् शुभाशुभ शब्द सुनने के निमित्त नगर में अमण करे। इस प्रकार नगर की गड्ढाओं और गलियों में अमण करते समय जो भी शुभ या अशुभ शब्द पहले सुनाई पड़े, उसे मुनकार वापस लौट आवे और उसी शब्द के अनुषार शुभाशुभ फल अवगत करे। अर्थात् अशुभ शब्द सुनने से मृत्यु, बेदना, पीड़ा आदि फल लाया शुभ शब्द सुनने से नीरोगता, स्वास्थ्य-जाभ एवं कार्य-गिद्धि आदि शुभ फल प्राप्त होते हैं ॥160-161॥

अर्द्धादिस्तवो राजा सिद्धिर्बुद्धिस्तु मंगलम् ।

बृहद्श्री जयऋद्धिश्च धनधान्यादसम्पदः ॥162॥

जन्मोत्तवप्रतिठाद्याः देवष्ट्र्यादिशुभक्षियाः ।

द्रव्यादिनामश्वदणाः शुभाः शब्दाः प्रकीर्तिताः ॥163॥

नगर में अमण करते समय प्रथम शब्द अर्द्धत भगवान् का नाम, उसका स्लवन, राजा, गिद्धि, बुद्धि, बृद्धि, जय, चन्द्रघा, श्री ऋद्धि, धन-धान्य, शम्पति, जन्मोत्तव, प्रतिठोत्तव, देवपूजन, द्रव्यादिका नाम आदि अवदों का सुनना शुभ बतलाया गया है ॥162-163॥

अम्बिकाशब्दनिमित्तं छञ्चलालाद्वजायन्धदूर्णकुम्भादिसंयुतः ।

वृषाश्च यृहिणः पुंसः सपुत्राः भूषितास्त्रियः ॥164॥

अम्बिका देवी, छञ्चल, माला, श्वज, गन्ध युक्त चालन, वैल, गृहन्त्र, पुत्र गहित अलंकृत वृषी आदि या दर्शन सभी कार्यों से शुभ होता है। जब ध्रुकरण होने से उचत वस्तुओं के नामों का अवण भी शुभ माना जाता है ॥163-164॥

इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठं सर्वकार्येषु सिद्धिदम् ।

छत्रादिकातभंगादि दर्शनं शोभनं न हि ॥165॥

किसी भी कार्य के आरम्भ में लक्षण, छपात आदि का दर्शन और शब्द-शब्दण अशुभ समझा जाता है; अर्थात् उक्त वस्तुओं के दर्शन या उक्त वस्तुओं के नामों का सुनने से कार्यसिद्धि में नाना प्रकार की वाचाएं आती हैं ॥165॥

विशेष - वसन्तरात्र शकुन में शुभ-अशुभों का वर्णन करते हुए बताया है कि दधि, पृत, दूर्वा, तण्डुन-भावल, जल पूर्ण कुम्भ, श्वेत गर्णा, चन्दन, दांण, शश,

मत्स्य, मृत्तिका, पोरोचन, गोधूलि, देवमूर्ति, फल, पुष्प, अजन, अलंकार, ताम्बूल, भ्रात, आगन, मथ, ध्वज, कुव, माला, व्यंजन, वस्त्र, पद्म - कपल, भृगार, प्रज्वलित अग्नि, हाथी, बकरी, कुज, चामर, रत्न, मूर्वण, रूप्य, ताम्र, औषधि, पल्लव, एवं हरित त्रृक्ष का दर्शन किसी भी कार्य के आरम्भ में सिद्धिदायक बताया जाया है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रजगु—रससी, कीचड़, कार्पास—कपास, दाल या फलों के क्लिक, अस्थि, मूत्र, मल, मलिन व्यक्ति, अपांग या विकृत व्यक्ति, लोहा, काले वर्ण का अनाज, पत्थर, केश, साँप, तेल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तक, शुखला, रजस्वला स्त्री, विधवा स्त्री एवं दीना, मलिन-वदन, मुक्तकेशा स्त्री का दर्शन किसी भी कार्य में अणुम होता है।

नष्टो भग्नश्च शोकस्थः पतितो लुक्षितो गतः ।

शान्तितः पातितो बद्धो भीतो दष्टश्च चूर्णितः ॥166॥

चोरो बद्धो हतः कालः प्रदधः खण्डितो मृतः ।

उद्वासितः पुनर्यर्थम् इत्याद्याः दुःखदाः स्मृताः ॥167॥

नष्ट, शग्न, दुःखी, मुण्डित शिर, गिरता-गड़ता, बढ़, भवभीत, वाटा हुआ, चोर, रससी या शुखला गंजाड़ा, वेदनायस्त, जला हुआ, खण्डित, मुर्दा, गर्व से निष्कासित होने के पश्चात् पुनः गाँव में निवार करने वाला इत्यादि प्रकार के व्यक्तियों का दर्शन दृष्टिप्रद होता है ॥166-167॥

इत्येवं निमित्तकं सर्वं कार्यं निवेदनम् ।

मन्त्रोऽयं जपितः सिद्धेद्वौरस्य प्रतिमाप्रतः ॥168॥

इस प्रकार कार्यभिद्धि के लिए निमित्तों का परिचान करना चाहिए। निम्न मन्त्र की भगवान् महाबीर की प्रतिमा के समुख भाष्टना करनी चाहिए। मन्त्र-जाप करने से ही सिद्ध हो जाता है ॥168॥

अष्टोत्तरशतैर्पूष्पैः मालतीनां मनोहरैः ।

ऊँ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा ।

मन्त्रेणानेन हस्तस्य दक्षिणस्य च तर्जनी ।

अष्टाधिकशतं वारमभिमन्त्र्य मषीकृतम् ॥169॥

भगवान् महाबीर स्वामी की प्रतिमा के समक्ष उत्तम मालती के पूष्पों से 'ॐ ह्रीं अहं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्र का 108 बार जाप करने से मन्त्र सिद्ध हो जायगा। पश्चात् मन्त्रसाधक अपने दाहिने हाथ की तर्जनी

को एक सौ आठ बार मन्त्रित कर गोगी की धोकों पर रख ॥169॥

तज्जन्या स्थापयेद्भूमौ रविविम्बं सुबर्तुलम् ।

रोगी पश्यति चेद्द्विम्बसायुःस्त्रिमसमध्यम् ॥170॥

उपर्युक्त क्रिया के अनन्तर गोगी को भूमि की ओर देखने का कहा । यदि गोगी भूमि पर सूर्य के योगात्मक विम्ब का दर्जन करे तो उसे महीने की आयु समझी चाहिए ॥170॥

इत्यंगुलिप्रशननिमित्तं शतवारं सुध्रीपञ्चयावनम् ।

कांस्यभाजने तेन प्रक्षालय हस्तयुगलं रोगिणः पुनः ॥171॥

एकवर्णजज्जिज्जीराष्ट्राधिकैः शतविन्दुभिः ।

प्रक्षालय दीयते लेपो गोमूत्रज्ञीरथोः क्रमात् ॥172॥

प्रक्षालितकरयुगलयिच्छन्तय दिनसासक्रमशः ।

पञ्चदशवाणहस्ते पञ्चवदशतिथिश्च दक्षिणं पाणी ॥173॥

इस प्रकार अंगुली प्रश्न का वर्णन किया । अब अनन्त और गोगीचन प्रश्न-विधि का विवरण करते हैं । विदान व्यवि ३५ द्वी शह पर्मा जाग्रत्ताणं नी अबतर अबतर इवाहों प्रश्न का जाप कर किसी हाँसे के बतान में अनन्त—जाति को भरकर मन्त्रित करे । अनन्तर गोगी के हाथ, वैर आदि अंगों की धोकर शुद्ध करे । पश्चात् भीमूर्त्र और युग्मित जल गे गोगी के हाथों का प्रक्षालन करे । अनन्तर दिन, सहीना और दर्ज का निष्ठान करे । पञ्चदश वाणी गाया ती बार्ये हाथ में और पञ्चदश वाणी गाया की दाढ़िन हाथ में वस्त्रना करे ॥171-173॥

शब्दं पक्षं वामे दक्षिणहस्ते च चित्तयेत् कृष्णम् ।

प्रतिपत्रमुखास्तिथय उभकरयोः पर्वरेखास् ॥174॥

बाये हाथ में शुक्रलक्ष्मी की और दाढ़िने हाथ में कृष्णलक्ष्मी की कलाना करे । प्रतिपदादि तिथियों की दोनों हाथ की पर्वरेखाओं—माठ अथानों पर कलाना करे ॥174॥

एकद्वित्रिवतुःसंहयमरिष्टं तत्र चिन्तयेत् ।

यदि उपल क्रिया के अनन्तर पर्वरेखाओं में पा, दो, तीन वा चार गंग्या में कृष्णलक्ष्मी दिव्यलायी परे हो तो उपरिष्ट गपउगा चाहिए ।

हस्तयुगलं तथोद्दत्त्वं ग्रातः गोगोचतरसैः ॥175॥

अभिमन्त्रितशतवारं पश्येत्तत्र करयुगलम् ।

करे करपवंणि यावस्मात्राश्च दिनदबः कृष्णः ॥176॥

दिनानि तावन्मात्राणि मासान् वा वत्सराणि वा ।

स्वस्थितो जीवति प्राणी बीक्षितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥177॥

प्रातःकाल लाक्षण प्रश्न के समान स्नानादि क्रियाश्रों से निवृत्त होकर उपर्युक्त मन्त्र से मन्त्रित हो सो धार मन्त्रित गोरोचन से हाथों का प्रश्नालन कर दोनों हाथों का दर्शन करे। उक्त क्रिया करने वाला रोगी व्यक्ति उतने ही दिन, मास और वर्ष तक जीवित रहता है, जितने क्रृष्णविन्दु उसके हाथ के पवर्ण में लगे रहते हैं, इस प्रकार का कथम ज्ञानियों का है ॥174 1/2-177॥

विशेष अलक्षण प्रश्न की विधि यह है कि किसी चोरस भूमि को एक वर्ष की गाय के घोवर से लीपकर उस स्थान पर 'ॐ हौं अहं णगी अरिहन्ताणं हौं अवतर अवतर स्वाहा' इम मन्त्र को 108 बार जगता चाहिए। फिर काँसि के बत्तन में अलक्षण को भरकर सो बार मन्त्र से मन्त्रित कर उक्त भूमि पर उस बत्तन को रख देना चाहिए, पश्चात् रोगी के हाथों को गोमूत्र और दूध से धोकर दोनों हाथों पर मन्त्र पढ़ने हुए दिन, मास और वर्ष की कल्पना करनी चाहिए। अनन्तर पुनः सी बार उक्त मन्त्र को पढ़कर उक्त अलक्षण से रोगी के हाथ धोने चाहिए। इस क्रिया के पश्चात् रोगी के हाथ धोना चाहिए। उनके हाथों के सन्धि स्थानों में जितने विन्दु काले रंग के दिखलायी पड़ें, उतने ही दिन, मास और वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

गोरोचन प्रश्न की विधि यह है कि अनन्तर प्रश्न के समान एक वर्ष की गाय के घोवर से भूमि सो लीपकर उपर्युक्त मन्त्र से 108 बार मन्त्रित कर काँसि के बत्तन में गोरोचन की सो बार मन्त्र से मन्त्रित करना चाहिए। पश्चात् रोगी के हाथ गोमूत्र और दूध से धोकर मन्त्र पढ़ने हुए हाथों पर वर्ष, मास और दिन की कल्पना करनी चाहिए। पुनः सी बार मन्त्रित गोरोचन से रोगी के हाथ धुलाएर उस हाथों में रोगी के मरण-समय की परीक्षा करनी चाहिए। रोगी के सन्धि स्थानों में जितने काले रंग के विन्दु दिखलायी पड़ें, उतने ही संख्यक दिन, मास और वर्ष में उगर्णी मृत्यु समझनी चाहिए।

रोचनाकुंकुमैलक्षानामिकारकतसंयुता ।

षोडशाक्षरं लियेत्पद्मं तद्बहिइचैव तत्समस् ॥178॥

षोडशाक्षरतो बाह्ये मूलबीजं दले दले ।

प्रथमे च दले वषट्निमासांश्चैव बहिर्दले ॥179॥

दिवसान् षोडशीरेव साध्यनामसुकण्ठिके ।

सप्ताहं पूजयेच्चकं तदा तं च निरीक्षयेत् ॥180॥

लाक्षा कुनूम, गोरोचना इत्यादि विद्यियों से आयु की परीक्षा करने के उपरान्त चक द्वारा आयु परीक्षा की विधि का निरूपण करते हैं।

सोलह दल का एक कमल भीतर रखा इस कमल के बाहर भी सोलह दल का एक दूसरा कमल दराना चाहिए। बाहर कमल के पत्तों पर वा आदि मूल स्वरों की स्थापना करनी चाहिए। भीतर बाले कमल के पत्तों पर वर्णों की तथा बाहर बाले कमल के पत्तों पर महीनों की स्थापना करनी चाहिए। कणिकाओं में दिवसों की स्थापना करनी चाहिए। इस प्रकार निर्मित चक्र की एक सप्ताह तक पूजा करनी चाहिए, पश्चात् उपरा निरीक्षण कर शुभाशुभ फल की जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए ॥ 178-180॥

यद्यले चाक्षरं लुप्तं तद्दिने ऋयते ध्रुवम् ।

वर्षं भासं दिनं पश्येत् स्वस्य नामं परस्य च ॥ 181॥

निरीक्षण करने पर जिस तिथि, मास या वर्षे की स्थापना वाले दल का स्वर लुप्त हो, उसी तिथि, मास और वर्षे में अपनी या अन्य व्यक्ति की जिसके लिए परीक्षा की जा रही है, मृत्यु गमजनी चाहिए ॥ 181॥

यदा वर्णं न लुप्तं स्यातदा मृत्युर्व विद्यते ।

वर्षं द्वादशपर्यन्तं कालज्ञानं विनोदितम् ॥ 182॥

यदि कोई भी स्वर लुप्त न हो तो जिसके सावन्य में विचार किया जा रहा है, उसकी मृत्यु नहीं होती। इस चक द्वारा चक्रह वर्ष की आयु का ही ज्ञान किया जाता है ॥ 182॥

प्रभूत्वप्रदाश्विनः अरण्यर्थपिद्विषी ।

प्रदह्याग्निदेवते प्रजेश्वरेऽर्थसिद्धये ॥ 183॥

अश्विनी नक्षत्रे में नवीन वर्ष धारण करने में वहुन वर्ष मिलते हैं, भरणी में नवीन वर्ष धारण करने में अर्थ की हानि होती है, शूलिका में नवीन वर्ष धारण करने में वर्ष दग्ध होता है, नीहिणी में नवीन वर्ष धारण करने में धन प्राप्ति होती है ॥ 183॥

मृगे तु मूषकाद्भयं व्यसुत्वमेव जांकरे ।

पुरवंसो शुभाग्नन्तदग्रमेऽघनेयुतिः ॥ 184॥

मूषकाद्भय में नवीन वर्ष धारण करने में वस्त्रों के चूहों के लाटन का भय, जाग्री में नवीन वर्ष धारण करने में गुण, गुणांगु में वस्त्र धारण करने से शुभ को प्राप्ति और गुण में वर्ष धारण करने से धनजाम होता है ॥ 184॥

**भूजंगमे विलुप्यते मधासु मृत्युमादिशेत् ।
भगाह्ये नृपाद्भयं धनागमाय चोत्तरा ॥ ४५॥**

आश्लेषा में पहनने से वस्त्र का नष्ट हो जाना, मवा नक्षत्र में मृत्यु, पूर्वी-फालगुनी में राजा से भय एवं उत्तराराष्ट्रगुनी में वस्त्र धारण करने से धन की प्राप्ति होती है ॥ ४५॥

**करेण धर्मसिद्धयः शुभागमस्तु चित्रया ।
शुभं च भोज्यमानिले द्विदेवते जनप्रियः ॥ ४६॥**

हस्त नक्षत्र में वस्त्र धारण करने से कार्यसिद्धि होती है, चित्रा में शुभ की प्राप्ति, त्वाति में उत्तम भोजन का मिलना एवं विशाखा में जनप्रिय होता है ॥ ४६॥

**सुहृद्युतिश्च मित्रमे पुरच्छरेऽस्वरक्षायः ।
जलाप्लुतिश्च नैऋते रुजो जलधिदेवते ॥ ४७॥**

अनुराधा में वस्त्र धारण करने से मित्र गमागम, ज्येष्ठा में वस्त्र का शय, मूल में नवीन वस्त्र धारण करने से जल में डूबना और पूर्वायादा में गोग होता है ॥ ४७॥

**मिष्टमन्तनमथ विश्वदेवते
वैष्णवे भवति नेत्ररोगता ।
धान्यलब्धिमणि वासवे विदु-
र्वाणे विषकृतं महद्भयम् ॥ ४८॥**

उत्तराराष्ट्रा में मिष्टान्त की प्राप्ति, श्रवण में नवीन वस्त्र धारण करने से नेत्ररोग, द्रविणा में नवीन वस्त्र धारण करने से अनन्काभ एवं जटभिपा में विष का बहुत भय होता है ॥ ४८॥

**भद्रपदासु भयं सलिलोर्थं
तत्परतश्च भवेत्सुतलविधः ।
रत्नयुति कथयन्ति च धीरणे
योऽभि नवास्वरमिच्छति भोक्तुम् ॥ ४९॥**

पूर्वोभाद्रपदा में जन्मभय, उत्तराराष्ट्रपदा में पूर्वायाम और रेवती नक्षत्र में नवीन वस्त्र धारण करने से रत्न लाभ होता है ॥ ४९॥

वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति देवा
नराश्च पाशान्तशास्त्रमध्ये ।
शेषास्त्रयश्चात्र निशाचरांशा-
हतथैव शयनासनपादुकासु ॥190॥

नवीन वस्त्र धारण करते समय उसके शुभाशुभत्व का विचार निम्न प्रकार से करना चाहिए। नये वस्त्र के दो भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणों के चार भागों में देवता, पाशान्त के दो भागों में मनुष्य और मध्य के तीन भागों में राजस निवास करते हैं। इसी प्रकार शशा, आसन और घडाऊं के नी भाग करके फल का विचार करना चाहिए ॥190॥

लिप्ते मषी कर्दमगोमयाऽयै-
शिष्ठन्ने प्रदर्श्य स्फुटिते च विन्द्यात् ।
पुष्टे नदेऽल्पाल्पतरं च भुड्बते
पापे शुभं वाधिकमृत्तरीये ॥191॥

यदि धारण करते ही नये वस्त्र में रुद्धाही, गोवर, कीचड़ आदि लग जाय, फट जाय, जल जाय तो अशुभ फल होता है। यह पुष्ट उत्तरीय वस्त्र में विशेष रूप से घटित होता है ॥191॥

रुग्माक्षसांशेष्वथ वापि मृत्युः
पुंजन्मतेजश्च मनुष्यभागे ।
भागेऽमराणामथभीगवृद्धिः
प्रान्तेषु सर्वत्र वदन्त्यनिष्टम् ॥192॥

राक्षसों के भागों में वस्त्र में छेद हों तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु हो, मनुष्य भागों में छेद हों हो गृथबन्ध और कान्ति-जाभ, देवताओं के भागों में छेद आदि हों तो भीगों में वृद्धि एवं सभी भागों में छेद हों तो अनिष्ट फल होता है। सप्तम नवीन वस्त्र में छिद्र होना अशुभ है ॥192॥

कंकलवोलूककपोतकाक-
क्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पः ।
छेदाकृतिर्देवतभागशापि,
पुंसां भय मृत्युसमं करोति ॥193॥

कंक पक्षी, मेढ़क, उलू, कपोत, मामभक्षी गृद्रादि, जम्बुक, गधा, ऊंट और सर्प के आकार का छेद देवताओं के भाग में भी हो तो भी मृत्यु के समान व्यक्तियों

को पीड़ा कारक एवं भयप्रद होता है। वस्त्र के छिद्र के आकार पर ही फल निर्भर करता है ॥ 193 ॥

छत्रध्वजस्वस्तिकवर्धमान-

श्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतोरणाद्याः ।
छेदाकृतिनैऋतभागगापि,

पुंसां विद्यते न चिरेण लक्ष्मीम् ॥ 194 ॥

छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, वर्धमान—मिट्ठी का सोनोरा, बैल, कलश, कमल, तोरणादि के आकार का छिद्र राधास भाग में हो तो मनुष्यों को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। अन्य भागों में होने पर तो अत्यन्त शुभफल प्राप्त होता है ॥ 194 ॥

भोवतु नवाम्बरं शस्तमृक्षेऽपि गुणवर्जिते ।
विवाहे राजसम्माने प्रतिष्ठासुनिदर्शने ॥ 195 ॥

विवाह में, राज्योत्तरव में या राजसम्मान के समय, प्रतिष्ठोत्तरव में, मुनियों के दर्जन के समय चित्त उत्तरव में भी वस्त्र भारण करना शुभ है ॥ 195 ॥

इति वस्त्रविच्छेदननिमित्तम् ।

इति श्रीभद्रबाहुसंहिताद्यां निमित्तनामाद्याद्यो त्रिशत्तमोऽयम् 30 सम्पूर्णः ॥

इलोकानामकाराद्यनुक्रमः

अ	अथ वद्यामि केऽपाचिन्	461
अंग-प्रत्यंगयुक्तस्य	442 अथवा पूर्णाकहीनं	468
अंगानां च कुरुणां च	310 अथ गणेशगतोऽस्मिन्धा	64
अंगान् सीराम्भान्	370 अथ मूर्याद विनिष्कम्य	66
अंगारकान् नवान्	164 अथातः अंप्रवद्यामि 44, 63, 84,	
अंगारकोऽग्निसंकाशो	366 94, 104, 121, 141, 162,	
अकालजलं फलं पूर्वं	434 175, 222, 263, 399	
अकाले उद्दितः शुक्रः	264 अद्वाये इत्यकारण	243
अगम्यागमनं चैव	435 अधरनखदशनस्मना	464
अगम्यागमनं पश्येत्	478 अघोमृष्टी निजच्छाया	469
अग्निस्मिन्प्रभा	23 अनन्तरां दिशं दीप्ता	24
अन्तस्तु सापाणां	187 अनायाः कच्छ-योधेयाः	269
अप्रतो या पतेदुल्का	30 अनावृतिभयं घोरं	97
अचिरेणैव कर्मेन	192 अनावृतिभयं गोरं	88
अजबीथीभवुप्राप्तः	296, 297 अनावृतिरुहता देशा	318
अजबीथीमागते चन्द्रे	391 अनुगच्छन्ति याश्चोल्का	24
अजबीयी विजाखा च	270 अनुराधा वयवदाश्री	456
अत ऊर्ध्वं प्रवद्यामि	292 अनुराधासिथतो शुक्रो	283
अतः परं प्रवद्यामि	94 अनुकोपो यदाऽनीके	113
अतीतं वर्तमानं च	181 अनुलोमो यदा स्तिथः	113
अतोऽस्य येऽन्यथाभावा	299 अनुनोमो विजयं त्रूते	290
अत्यम्बु च विशायायां	321 अनूजुः परायः इयामो	340
अथ गोमृतवतिमान्	265 अनेकवर्णनक्षत्र-	21
अथ चन्द्राद् विविष्कम्य	66 अनेकवर्णसंस्थानं	145
अथ यद्युभयोः सेनां	29 अन्तःपुरविनाशाय	200

अन्तःपुरेषु द्वारेषु	242	अमनोजैः कलैः पुष्पैः	203
अन्तेवश्चादवन्तश्च	268	अम्बरेषूदकं विन्द्यात्	146
अन्धकारसमुत्पन्ना	167	अग्निकाशब्दनिमित्तं	487
अन्यस्मिन् केतुभवने	365	अस्ता सन्वणाः स्त्रिया	227
आप्रहं विजानीयात्	128	अरथाति तु सर्वाणि	146
अपरस्तु तथा लूः	103	अस्तित्वा रहस्ये गृहीः	486
अपरो चन्द्रमूर्यौ तु	403	अद्वचन्द्र निवाशस्तु	49
अपरेण च कवचस्तु	382	अद्वैतृता प्रधावन्ति	199
अपरेण तु या विद्युत्	64	अध्र्मामां यदा चन्द्रे	395
अपरोत्तरा तु या विद्युत्	64	अहंत्यु वर्णो रुद्रे	236
अपसव्यं नक्षत्रस्य	308	अहंदादिस्तवो गाजा	487
अपि लक्षणवान् मुख्यः	179	अलकारोपवाताय	279
अपोन्तरिक्षात् पतितं	340	अलंकृताभां दद्याणां	438
अप्रशस्तो यदा वायुः	114	अलवतकं वाय रोगो वा	434
अपरागणां च सत्त्वानां	74	अलचन्द्रं च द्वीपाश्च	356
अपरागणां तु सदृशाः	166	अलोनापि तु ज्ञानं	179
अभृत्यभक्षणां चैव	436	अवृलिष्ट्वा अयं घोरं	277
अभिजिज्ञानुग्राहा च	322	अजनिश्चक्रसंस्थाना	17
अभिजिज्ञावणं चापि	273	अशक्तान् भरतानुद्गान्	387
अभिजितस्थः कुरुन्	284	अशुपूर्णसुखादीमां	197
अभिजिद् द्वे तथापादे	270	अज्ञपण्योपजीविनो	287
अभिद्रवन्ति घोपेण	77	अटाभ्यां तु यदा चन्द्रो	352
अभिद्रवन्ति यां सेनां	289	अपटाभ्या तु यदा सोमं	353
अभिमन्त्रितशतवारं	489	अपटादशषु मासेषु	223
अभिमन्त्र्य तस्य कार्यं	470	अपटोन रशतः पुष्पैः	488
अभिमन्त्र्यस्तत्र तनुः	467	अपमव्यं विशीणुं तु	144
अभीष्टं चापि सुरतस्य	246	असाम्बृद्धभूयिष्ठे	203
अभ्युदित्यतायां च सेनायां	198	अविज्ञिततोभराणां	76
अभ्युनतो यदा श्वेतो	46	अस्तर्गतं यदा मूर्ये	383
अभ्युक्तं गमच्छान्नं	76	अस्तं यातमशादित्यं	28
अभ्रजकितर्पतो गच्छेत्	78	अस्तमायाति दीप्ता	142
अभ्राणां यानि रूपाणि	86, 98	अस्तिकाय विनीताय	175
अभ्राणां लक्षणं कृत्स्नं	73	अस्थिभासैः पश्चनां च	241
अभ्रेष च विवर्णेष	194	अहं कृत नूपं करं	175

अहश्च पूर्वसन्ध्या च	403	आस्ता तु जीवितं मरणं	474
अहिच्छुश्रू च कच्छु च	266	आस्तिकाय विनीताय	137
अहिर्वा वृश्चिकः कीटो	439	आहारस्थितयः सर्वे	111
अंशुमाली यदा तु	48		इ
आ		इतरेतरयोगास्तु	229
आकाशे विमले छाया-	473	इतरेतरयोगेभ्यः	118
आमेयो अभिनमाख्याति	86	इति प्रोक्तं पदार्थस्तम्-	468
आज्यविकं गुडं तेलं	410	इति भन्ति तसर्वाणि	468
आद्वानि तु द्वात्रिष्ठाद्	126	इत्यंगुलिप्रस्तनिमित्तं	489
आढकानि धनिठायां	123	इत्यवोचमरिष्टानि	465
आढकान्येक नवति-	125	इत्यादिदर्शनं शेषं	487
आढकान्येकपंचाशत्	125	इत्येतावत्समाभेत	17
आढकान्येकविश्च	125	इत्येतन निमित्तकं सर्वं	488
आदानाच्चैव पाताच्च	105	इन्द्रस्य प्रतिमायां तु	234
आदित्यं परिवेषस्तु	46	इन्द्राणि देवसंयुक्ता	413
आदित्यं वाथ चन्द्रं वा	432	इन्द्राण्या समृत्यातः	235
आदित्ये विचरेद् गोयं	274	इन्द्रायुधं निशिष्वेतं	232
आनन्दनि मलकीरांश्च	387	इन्द्रायुधसर्वणं च	143
आनन्दी शीरसेनाश्च	308	इन्द्रायुधसर्वणस्तु	112
आपो होतुः पतेद्	185	इमं यात्राविधिं कृत्स्नां	206
आप्यं ग्राह्यं च वैश्वं च	320	इमानि पानि बीजानि	321
आरण्या ग्रामसायान्ति	223		इ
आरहेद् वा निवेदाणि	411	ईतयश्च महाधार्थं	321
आरोग्यं जीवितं लाभं	181	ईति व्याधिभ्यर्थं चौरात्	274
आद्री हृत्वा निवर्तते	279	ईशाने वर्षणं ज्ञेयं	115
आद्रिश्लेषामु ज्येष्ठामु	165		उ
आर्यस्तमादितं पुष्प्यो	405	उच्छ्रुतं चापि वैशाखात्	165
आषाढा श्रवणं चैव	277	उत्तरं भजते मार्गं	415
आषाढी पूणिमायां तु	105, 106	उत्तरतो दिशः इवेतः	352
		उत्तरां तु यदा सेवते	286
आपादे तोयसंक्षीणं	322	उत्तराणि च पूर्वाणि	335
आषाढे शुक्लग्रूपाणि	122	उत्तराम्यायापादाभ्याम्	122
आग्नं शयनं पानं	438	उत्तरायां तु फालगुण्यां	127
आसनं शास्त्रली वापि	439	उत्तरे उदयोऽक्षस्य	382

उत्तरेण तु पृष्ठस्य	411	उल्का नीचैः समा स्निग्धा	23
उत्तरेण तु रोहिण्यां	411	उल्कापात् सनिधत्	251
उत्तरेणोत्तरं विद्यात्	274	उल्कापातोऽय निधत्ताः	184
उत्तरे त्वनयोः सीम्यो	335	उल्का रूक्षेण वर्णेन	29
उत्पद्यन्ते च राजानः	124	उल्कावत् साधनं चात्रे	130
उत्पाता विकृताऽचागि	194	उल्कावत् साधनं ज्ञेयं	51, 67, 99
उत्पाता विविधा ये तु	240	उल्कावत् साधनं दिक्षु	146
उत्पाताश्च निमित्तानि	357	उल्कावत् साधनं सर्वं	89
उत्पाताश्चापि जायन्ते	195	उल्काव्यूहाष्वनीकेषु	29
उत्संगः पूर्यने स्वप्ने	442	उल्काऽणनिश्च धिष्ण्यं	21
उदकस्य प्रभः शुक्रः	404	उल्काऽणनिश्च विद्युच्च	22
उदयात् राष्ट्रमे ऋक्षे	341	उल्का समाना हेषन्ते	250
उदयास्तमने भूयो	351	उल्का समासतो व्यासात्	3
उदयास्तमने धवस्ते	383	उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते	25
उदयास्तमनेऽर्कस्य	86	उल्कास्तु बहवः पीताः	29
उदये च प्रवागे च	287	उल्कास्तु लोहिताः सूक्ष्मा	29
उदये भागकरस्योत्का	28	ऊ	
उदीच्यां व्याह्याणान् हन्ति	24	ऊर्ध्वं प्रसन्नन्ते चन्द्र	354
उदीच्यां यथ पूर्वाणि	73	ऊर्ध्वं वृषो यदा नदेत	245
उदगच्छत् मोमधकं	27	ऊर्ध्वंस्थितं नृणां पाप	245
उदगच्छमानः सविता	237	ऋ	
उदगच्छमाने नादित्ये	85	ऋक्षवानरसंस्थानाः	22
उदगच्छत् मोमधकं	28	ए	
उदिभजानां न जन्मनां	409	एकद्वित्रिचतुः संख्य-	489
उद्विजन्ति च राजानो	107	एकपादस्त्रिपादो	197
उपथातन चक्रेण	324	एकवणजिह्वीर-	489
उपसर्पति भित्रादि	317	एकविशं यदा गत्वा	292
उपाचरन्नासवाऽये	435	एकविशति यदा गत्वा	294
उग्रोहीने तथाऽटादण	473	एकविशति वेलाभिः	465
उलूका वा विडाना वा	196	एकादशी भयं कुर्यात्	388
उलूका ताऽणनिश्चन्द्र	399	एकादशो यदा भौमो	341
उल्कादयो हतान् हन्त्यु-	400	एकादिशु शतान्तेषु	364
उल्कानां पुलिन्दानां	310	एकोनविशकं पर्वं	
उल्कानां प्रभवं रूपं	16		351

एकोनविशत्तिविन्द्यात्	124	एषां यदा दक्षिणतो	273
एकोनविन्द्यात्	291	एषामन्यतरं हित्वा	251
एकोनानि तु पञ्चाशत्	341	एषैवास्तगते उल्कः	28
एतत्संख्यान् महारोगान्	461		
एतद व्याख्येन कथितं	130	ऐरावण पर्यं प्राप्तः	296, 298
एतानि शीणि वक्ताणि	293	ऐरावण पर्यं विन्द्यात्	270, 234,
एतानि पञ्च वक्ताणि	294		235, 289
एतान्येव तु लिगानि	350, 357, 383	ऐरावणे चतुष्प्रस्थो	391
एतावदुक्तगुलामानां	33		
एताषां नामसिद्धर्थं	63	कंकलवोलूक कपोत	493
एते च तेत्वः सर्वे	367	कंगुदारतिलामुदग्या	413
एते प्रयाणा दृश्यन्ते	371	कट्टकष्टकिनो रुक्षाः	227
एते प्रवासाः शुक्रस्थ	298	वृत्तकं गणयो रत्नं	394
एतेषां तु यदा शुक्रो	271	वृत्तकामा शिखा वस्य	366
एतेषामेव मध्येन	271, 272, 273,	कनकामो यदाऽष्टभ्यां	353
	276	कन्याऽयर्पि या कन्या	443
एतेषामेव यदा शुक्रो	272	कपिलं गस्य श्राताय	143
एते संवत्यग्राम्योक्ताः	322	कपिले रक्तं पीतो वा	196
एते स्वर्णा यथोदिष्टाः	444	कथन्धमुदयो भानो-	482
एवं च जायने सर्वे	395	कथन्धा गरिष्ठा गंधा	351
एवं दक्षिणतो विन्द्यात्	365	कथन्धेनावृतः सूर्यः	481
एवं देशं च जातीं च	237	कथन्धो बामपीतो वा	481
एवं नक्षत्रं शेषेषु	251	करंकजौषितं मांसं	240
एवं नक्षणसंयुक्ता	25, 97	करचरणजानुपस्थितक	474
एवं विजाय वातानां	111	करभगे चतुर्भूसिः	474
एवं शिष्टेषु वर्णेषु	402	करेण धर्मसिद्धयः	492
एवं शेषान् यद्यान्	369	कर्मजा द्विविधा	431
एवं शेषेषु वर्णेषु	239	कषायमधुगस्तिकता	277
एवं ममत्थाराच्येषु	86	काका गृह्णाः शृगान्दान्त	196
एवं हयवृष्टाञ्चानि	183	काञ्चीं लिङ्गान् द्रविजान्	388
एवमहत्मनं कालं	80	कामजस्य यदा गायी	231
एवमेतत्कलं कुर्यात्	287	काम्बोजान् रामणान्धारान्	370
एवमेवं विजानीयात्	299	कात्तिकं चाऽश्र पीपं	165
एवमेव यदा शुक्रो	274	कार्पसास्तिलमाणाञ्च	412

कार्याणि धर्मतः कुर्यात्	205	कृष्णे शुश्वन्ति सरितो	310
कालेयं चन्दनं रोप्ते	439	कृष्णो नीलश्च श्यामश्च	399
काञ्छांश्च रेवतीहस्ते	281	कृष्णो भीलस्तथा श्यामः	402
काशधीशन् दग्धांश्च	382	कृष्णो नीलाश्च रक्ताश्च	166
काशमीन् वर्षा गोणडा	270	कृष्णो वा विकृतो रूपो	184
किञ्चिध्वाश्च गुनादाश्च	381	केतोः समुत्थितः केतु-	367
कीटदृष्टस्य वृक्षस्य	228	कोऽकणान् परामृतांश्च	382
कीटाः पतंगः जनभा-	309	कोऽकणान् दण्डकान् गोजान्	369
कुञ्जस्तु तदा नर्वेत्	183	कोणजान् पापसम्भूतान्	364
कुटिनः काङ्गिलग	370	कोद्रवाणां वीजानां	272
कृतिवान् नोहिणी चित्रां	276, 414	कोविदार ममालीर्ण	203
कृतिकादि भगान्तश्च	317	कोऽधार्यं सर्वगाश्च	469
कृतिकादीनि सप्तह	343	कोण्डजा पुरुषादाश्च	267
कृतिकानां मयानां च	415	कव्यादाः पक्षिणो यत्र	189
कृतिकाषाणं गतो नित्यं	322	कव्यादाः शकुना यत्र	246
कृतिकायां दहत्प्रस्ती	435	कूरे नदन्ति विषम	201
कृतिकायां यदा शुकः	278	कूरः कुद्दश्च ब्रह्माण-	344
कृतिका रोहिणी चार्दी-	272	कूरप्रहयुतश्च चन्द्रो	238
कृतिकारोहिणीयुक्ता	410	क्रीचकरेण स्तिर्घेन	198
कृतिकामु च यशाकिं	309	क्वचिन्निष्पत्तेः सम्य	108
कृतिकास्तु यदोऽपातो	250	अत्रस्य परिवारस्य	475
कृतिकास्वभिदो रक्तो	134	अत्रियाणां विपादरच	340
कृशत्वं नीयते कायः	461	अत्रियान् यवतान् वाह्नीन्	387
कृष्ण वासो हयं कृष्ण-	439	अत्रियाः पुष्पितेऽवत्य	232
कृष्णः कृष्णं गदा हन्त्यात्	401	अत्रियाश्च भुविष्यातः	393
कृष्णवागा यदा भृत्या	436	आरे वा कटुकं वाऽय	98
कृष्णपीता यदा कोटि-	353	क्षिप्रमानि विज्ञोभानि	78
कृष्णप्रभो यदा सोमो	353	क्षिप्रमोदं च वस्त्रं च	293
कृष्णदाहाधिरूपो यः	481	क्षीयते वा म्रियते वा	247
कृष्णा च विकृता नारी	481	क्षीर शवनिभृशचन्द्रे	45
कृष्णानि पीत-ताङ्गाणि	74	क्षीरान्नभोजनं बुत्वा	486
कृष्णा नीला च रुक्षाश्च	24	क्षीरो धौद्रं यवा कंगु-	408
कृष्णा रुक्षा मुखण्डा-	167	क्षुधामरणरोगेभ्य-	269
कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षं	45	क्षेपाण्ड्रं प्ररोहन्ति	123

क्षेत्रं सुभिक्षमागेयं	107, 123, 124	गृह्णीयादेवमामेन	356
ख		गोत्तागवा॒जिना॑	201
खण्डं विशीर्ण सच्छद्	143	गोपालं वर्जयेत् तत्र	308
खरवद्भीमनादेन	248	मोक्षीथीमजदीथीं चा	390
खर-गृकरशुक्लेन	436	गोक्षीथी रेखती चेव	270
खजूरी अयनलो वेणु-	482	गोक्षीथीं समनुप्राप्तः	296, 297
खारी द्वित्रिशिका जेया	271	गोक्षीथां नागवीथ्यां	391
खारीस्तु वारिणो विन्यात्	123	ग्रहणं रविचन्द्राणां	475
ग		ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां	48
गजवीथीमनुप्राप्तः	297, 298	ग्रहनक्षत्रिययो	175
गजवीथां नागवीथ्यां	390	ग्रहानादित्यचन्द्रो	25
गति प्रदासमुदयं	331	गदा परम्परं यत्र	339
गतिमार्गाक्षितिवर्ण-	395	ग्रहो यहं भट्टा हृष्णान्	403
गन्धर्वनगरं लिप्रं	144	ग्रही गुरुकुम्ही विन्यात्	403
गन्धर्वनगरं गमनि॑	3	ग्रामाणां नगराणां च	294
गन्धर्वनगरं व्योम्भि॑	143	ग्राम्या वा यदि वाऽरुण्या	197
गन्धर्वनगरं लिप्तं	143	ग्राहो नरं नगं कञ्जित्	441
गभाधिनादयो मासा-	164	ग्रीवोपरकरकन्द्यो	464
गभी यत्र न दृश्यते	168	घ	
गभस्तु विविधा जेया	164	घटितावटितं ह्रयं	478
गवास्त्रेण हिरण्येन	412	घृतीकादिभिरुपांि	480
गिरि निम्ने च निम्नेषु	410	घृतो घृताचिक्ष्यवन-	381
गुरुणा प्रहतं मार्गं	242	च	
गुरुभाग्यवचन्द्राणां	264	चतुरुंगाभिकौ युद्ध	180
गुरुः शुक्रस्त्र भौमस्त्र	415	चतुरस्रो यदा चापि	49
गुरुः सौरस्त्र नक्षत्रं	399	चतुर्वै चैत यष्ठं च	265
गुरोः शुक्रस्य भौमस्य	333	चतुर्वीषं चन्द्री परिष्ठ	387
गृहद्वारं विवर्णप-	431	चतुर्वै परम्परो गुरुं	268
गृहयुद्धमिदं भर्त्	405	चतुर्वै विवर्णं गुरुं	275
गृहणां चरितं च-	164	चतुर्दशानां पापानां	349
गृहादाकृष्ण नीवत्	415	चतुर्दिक्षु यदा पृतना	30
गृहांश्च वनखण्डांश्च	293	चतुर्दिक्षु रवीन्द्रनां	466
गृहीतो विष्यते चन्द्रो	355	चतुर्भागिकला तारा	17

चतुर्विशत्यहानि	288	चित्रामेव विशाखा च	277
चतुर्विधोऽप्य विष्णकम्	177	चित्रायां तु यदा शुक्र-	413
चतुष्कं च चतुर्कं च	65	चित्रायां दक्षिणे पाश्वे	412
चतुषदानां पक्षिणां	75	चित्रायन्तर्घमुलिगानि	229
चतुष्पदानां मनुजा-	197	चिरस्थायीनि तोयानि	230
चतुष्पदानां सर्वेषां	231	चिह्नं कुर्यात् नवचित्	193
चतुष्पदिमादकानि 122, 124, 126	225	चैत्यवृक्षा रसान् यद्दत्	225
चत्वारिंश्च द्वे वानि	126	चोरो बद्धो हृतः कालः	488
चत्वारिंशत् पंचाशत्	289	चौराश्च यायिनो म्लेच्छाः	356
चत्वारि वा यदा गच्छत्	307	च्यवनं प्लवनं यानं	431
चत्वारि पट् तथाप्टी	332	छ	
चन्द्रभासारयोविम्बं	466	छत्रध्वजस्वरितक-	493
चन्द्रमा पीडितो हन्ति	357	छर्दने परणं विन्द्यात्	437
चन्द्रमा सर्वधानं	292	छादयेत्तचन्द्रसूर्यो	350
चन्द्रः अनैश्चरं प्राप्तो	308	छायापुरुषं स्वप्नं	468
चन्द्रः शुक्रो गुरु भीमो	411	छायाविम्बं ज्वलत् प्राप्तं	469
चन्द्रसूर्ये प्रदीपादीन्	465	छायाविम्बं स्फुटं पश्येत्	473
चन्द्रसूर्यो विशृंखो तु	392	छायालक्षणगुण्डकं	177
चन्द्रः सीरि यदा प्राप्तः	308	छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत्	186
चन्द्रस्य चारं चरतो	395	ज	
चन्द्रस्य चोनया कोटी	351	जटीं मुङ्डीं विरूपाक्षं	440
चन्द्रस्पद दक्षिणे पाश्वे	412	जन्मनश्च ब्रह्मतेऽय	393
चन्द्रस्य गरिवेशस्तु	46	जन्मोत्तमव प्रतिष्ठाद्याः	487
चन्द्रस्य वर्णस्यापि	237	जरदूषवपवंश्राप्तः	297
चन्द्रे प्रतिपदि योन्यो	389	जरदूषवपवं प्राप्तः	296
चमगुवर्णकलिगान्	370	जलं जलरूहं धान्यं	431
चान्द्रस्य दक्षिणो वीथीं	333	जलजानि तु मेवन्ते	273
चारं गतो या भूयः	306	जलदो जनकेनुश्च	371
चारं प्रवासं वर्णं च	339	जातीयादनुशाधायां	129
चिकित्सानिषुणः वावंः	177	जामदग्ने यदा रामं	236
चिकिणो हृगणो गुल्मः	371	जायते चक्राणो व्याधिः	193
चित्रभूतिश्च चित्राश्च	333	जिह्वामलं न मुञ्चन्ति	485
चित्रमूलाश्च चिषुरो	282	जुहतो दक्षिणं देशं	186
चित्रां गीत्यन्तं च	282	ज्ञात्यग्नामप्ण आनं	186

ज्ञानविज्ञानयुक्तोऽपि	179	तस्माद्वाजा निमित्तं	180
ज्येष्ठानुराधयोश्चैव	288	तस्य व्याधिसं चागि	192
ज्येष्ठामूलं च सौम्यं च	320	तस्यैव तु यदा घूमो	200
ज्येष्ठामूलमावस्यां	163	तस्योपरि पुनर्दत्त्वा	486
ज्येष्ठामूलो यदा चन्द्रो	414	तापसं पुण्डरीकं वा	440
ज्येष्ठायामनुपूर्वेण	335	ताम्रो दक्षिणकालस्थ	340
ज्येष्ठायामाहक्षणि	129	ताश्चां च प्रसारं च	16
ज्येष्ठास्थः गीड्येत्	283	तिथिश्च करणं नैव	32
ज्येष्ठे मूलमतिक्रम्य	122	तिथीनां करणानां च	115
ज्योतिषं केवलं कालं	4	तिथी मूहत्तकरणे	97
ज्वलन्ति यथा शस्त्राणि	195	तिर्थकुपानि गच्छन्ति	76
		तिलाः कुलस्था प्रापात्त्वा	394
डिम्भरूणा नृपतये	30	तिष्ठो ज्येष्ठा तथाऽङ्गेवा	271
		तीक्ष्णायां दशरात्रेण	331
तज्जातप्रतिरूपं	270	तृतीयायां यदा रोमो	352
ततः पञ्चदशक्षणि	291	तृतीये चिरमो व्याधि	275
ततः प्रबाध्यते वेश-	355	तृतीये मण्डले शुक्रो	267
ततः प्रोवाच भगवान्	16	तेन सञ्जनितं गर्भं	105
ततः शप्तानभूतास्थि	295	तैलपूरितगतयां	476
तत्र तात्र तथा धिष्यं	17	तैलिका सारिकाऽचान्तं	279
तत्रासीनं महात्मानं	2	तोषावहानि सर्वाणि	229
तत्रास्ति मेमजिद् राजा	1	तोषलिंगान् मुकान्	369
तथा मूलाभिष्ठातेन	323	त्रिपुसीमायतं रज्जुं	434
तथैवोऽवर्मधो वाऽपि	65	त्रयोदशी-त्रितुर्दश्यो-	388
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि	352	त्रयोदशोऽपि नक्षत्रे	342
तदा प्राप्तं भगरं धायं	293	श्रासयन्तो विग्रेपन्तो	248
तदा निम्नानि वातानि	122	त्रिकोटि यदि दृश्येत्	49
तदाऽन्योन्यं तु राजानो	294	त्रिमण्डलपरिग्रहितो	87
तनुः समार्पी यदि	336	त्रिवर्णश्चद्रवत् वृत्तः	366
तद्वुलैगिरिते धस्यां	467	त्रिविशति यदा गत्वा	293
तथोविष्वं यदा नीलं	466	त्रिशिरस्के द्विजायं	365
तर्जन्यां स्थापयेद् भूमी	489	त्रीणि याऽत्रावस्थायन्ते	50
तस्मात् स्वर्गस्थिरं	182	त्रैमासिकः प्रवासः स्यात्	288
तस्माद् देशं च काले	181		

व			
देष्ट्री शूरी वराहो वा	479	दिवा हस्ते तु रेवत्यां	191
दक्षिणं चन्द्रशृंगं च	415	दिवि मध्ये प्रदा दृश्येत्	264
दक्षिणं पांगगामित्य	392	दीक्षितानहंदेवांश्च	372
दक्षिणः क्षेगकुञ्जेयो	283	दीप्यन्ते यत्र गस्त्राणि	466
दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति	282	दुष्पत्तेलघृतानां च	225
दक्षिणः स्थविशान् हन्ति	286	दुर्गंन्धं पाण्डुरं भीमं	442
दक्षिणस्यां दिशि यदा	105	दुर्गं भवति संदासो	481
दक्षिणात्प्रती दृष्टः	245	दुभिक्षं चाप्यवृण्टि च	306
दक्षिणा भवते गर्भे	357	दुर्बार्णाश्च दुर्गन्धा-	110
दक्षिणा मेचकाभा तु	353	दुर्वासा कृष्णभस्मश्च	204
दक्षिणे चन्द्रशृंगे च	238	दृतोपजीवनो वैद्यान्	436
दक्षिणे तु यदा मार्त्यं	307	दूरं प्रवासिका पान्ति	286
दक्षिणे धनिनो हन्ति	285	दृश्यते श्वेतसपैण	129
दक्षिणे तु पाण्ड्येण	336	देवतं तु यदा वाह्यं	478
दक्षिणे तु चक्रेण	318	देवताऽतिथिभृत्येभ्यो	188
दक्षिणे यदा गच्छेत्	279	देवतान् दीक्षितान् दद्रान्	195
दक्षिणे यदा शुक्रो	272	देवतान् पूजयेत् वृढान्	194
दक्षिणेनानुराधायां	413	देव-साधु-दिवातीनां	205
दक्षिणे नीचकम्पाणि	285	देवान् प्रव्रजितान्	443
दक्षिणे राजपीडा स्यान्	247	देवान् साधु-दिवान् प्रेतान्	252
दक्षिणे अथवां गच्छेत्	285	देवेष्टा नितरो गात्रो	433
दक्षिणे स्थविरान् हन्ति	284	देवो वा यत्र नो वर्षेत्	479
दक्षि थीक्रं घृतं तोयं	225	देशस्नेहाभसां लोपो	194
दक्षेष्टसज्जनश्रेष्ठ	479	देशा नहास्तो योधाश्च	342
दक्षनं ग्रहणं भर्तं	437	देवज्ञा भिक्षवः प्राजा	309
दक्षपञ्चवर्षस्तथा	474	द्वोत्यन्ती दिशा सर्वा-	243
दक्षाहं द्वादशाहं वा	113	द्वात्रिंशदाढकानि स्यु-	88
दिवभागं हरितं पञ्चेत्	485	द्वादशांपरय वेत्तारं	128, 130
दिवानि तावन्मात्राणि	490	द्वादशाहं च विशाहं	2
दिवसान् पोडशीरेव	490	द्वादशीकोन्दिविषद्वा	292
दिवसार्धं यदा वाति	106	द्वारं शस्त्रश्रहं वेशम्	291
दिवाकरं वहुविधः	47	द्वाविष्णति यदा गत्वा	241
दिवा समुद्दितो गर्भो	163	द्वाशीर्ति चतुरासीर्ति	293

द्विगाढं हस्तिनारूढः	433	धूमं रजः पिण्डाचार्यव	164
द्विगुणं धान्यमधेण	269	धूमः कुणिपगत्थो	185
द्वितीयमङ्गले शुक्रो	266, 275	धूमकेतुं च सोमं च	50
द्वितीयायां तूलीदायां	389	धूमकेतुहतं पार्णि	242
द्वितीयायां यदा चन्द्र-	352	धूमज्यालां रजो भस्म	241
द्वितीयायाः शशिविष्व	467	धूमध्यज्ञो धूमशिखो	371
द्वित्क्षत्रस्य चारस्य	320	धूम्रधुदग्न्यं यो ज्येः	365
द्विरदशचतुष्पदो	193	धूम्रबर्णी बहुच्छिद्वा	88
द्विषदाज्जतुष्पदाः	88, 195	धृतिसदनविताशो	465
द्विषो यहो मनुष्यो च।	482	इवजानां च पताकानां	73
द्विमासिकास्तदा	125	न	
द्वे नक्षत्रे यदा सीरि:	306	न कालं नियता केतुं	370
ध		नक्षत्रं ग्रहसम्पत्त्वा	408
धनधान्यं न विक्रेयं	106	नक्षत्रं यदि या केतु	368
धनिनो जल-विप्रांश्च	344	नक्षत्रं यम्य पत्पुंसः	21
धनिष्ठादीनि सप्तीव	344	नक्षत्रं श्रक्षयाहेन	331
धनिष्ठाधनलाभाय	436	नक्षत्रमादित्यवर्णो	382
धनिष्ठायां जलं हन्ति	336	नक्षत्रस्य चिह्नानि	332
धनिष्ठास्थो धनं हन्ति	285	नक्षत्रस्य यदा सच्चेत्	411
धनुरारोहते यस्तु	433	नक्षत्राणि चरेत्यच	332
धनुषां कवचानां च	76	नक्षत्राणि मूर्दतीश्च	163
धन्वन्तरे समुत्पातो	236	नक्षत्राणि विमुञ्चन्त्यः	26
धनुषा यदि तुल्यः	391	नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे	369
धर्मकार्यार्थं वर्तन्ते	122	नक्षत्रे भार्गवः सोमः	410
धर्मविकामा लूप्यन्ते	277, 295	नक्षत्रेषु तिथो चापि	167
धर्मविकामा हीयन्ते	343	नवरेषूपसृष्टेषु	27
धर्मोत्सवान् विवाहाण्	205	नगवेश्मपुराणं तु	441
धान्यं तदा न विक्रेयं	344	नमं प्रश्नजितं दृष्टवा	188
धान्यं पुनर्वसी वस्ते	456	न चरण्ति यदा ग्रासं	197
धान्यं यत्र प्रियं विन्द्यात्	411	न जानाति निजं वायं	464
धान्यं वस्त्रमिति ज्ञेयं	415	नदीवृक्षसरोभृभृत्	476
धान्यस्यार्थं तु नक्षत्रं	404	न पश्यति स्वकार्याणि	246
धारितं याचितं गर्भं	105	न पश्यति आतुरच्छायां	469
धार्मिकाः शुरुयनाऽप्य	266	नभस्तृतीयभागं च	291

नमस्कृत्य जिर्व वीरं	1	निम्नं कूपजलं छिद्रान्	434
नमस्कृत्य महावीरं	430	निम्नेषु वापयेद् वीरं	128
न मित्रचित्तो भूतेषु	246	निरिन्धनो यदा चाग्नि-	225
न मित्रशावे मुहूर्दो	455	निर्गच्छंस्तुद्यते वायु-	463
न गच्छे दुर्लभे प्राप्तं	461	तिर्गन्धा यथा गर्भाश्च	168
नरा यथा विपद्यन्ते	202	निघति कम्पने भूमौ	231
नवतिराहकानि स्यु-	124	निर्दया निरनुक्रेशा-	342
नवधी मन्त्रिणःचीरान्	388	निनिमित्तोमुखे हास	4 3
नवम्यां तु यदा चन्द्रः	352	निविधामो मुखात् इवासो	464
नव वस्त्रं प्रसंगेन	246	निवर्तते यदि छाया	243
न वेदा नापि चांगानि	181	निविष्टो यदि सेनानिः	194
नष्टो भग्नः शोकस्थः	488	निवृत्ति चापि कुर्वन्ति	412
नागरस्यापि यः शीघ्र-	399	निशायाः प्रथमे यामे	486
नागराणां तदा भेदो	392	निश्चयाश्तदा विपद्यन्ते	273
नापरं तु हते विन्द्यात्	400	निश्चलः मुप्रभः कम्त्वे	357
नागवीथिगनुप्राप्तः	297, 298	निष्कुट्यन्ति पादैर्बा	197
नागवीथीति विजेया	270	निष्णातिः सर्वधान्यानां	273
नागमे वेष्मन् सालो	437	निष्पत्यते च शस्यानि	272
नानाल्प्रहरणीः	76	नीचावलम्बी सोमस्तु	356
नानारूपो यदा	49	नीचैनिविष्टभूपस्य	204
नानावश्च गमान्तराना	226	नीलवस्त्रैस्तथाशेणीन्	226
नानावृक्षरामा लीणी	1	नीलां गीतां तथा कृष्णो	469
नारी पुस्तवं नरः स्त्रीत्वं	443	नीला ताम्रा च गीग	67
नाशामे स्तनमध्ये	472	नीलाम्यास्तु यंदा वर्णी	403
निन्दयाश्च विवश्यन्ति	274	नृपा भृत्यैविरुद्धयन्ते	389
निजछाया तथा प्रोक्ता	470	नृपाश्च विमपच्छाया	320
निजाचीर्णेऽप्यद् ग्रामं	479	नैमित्तः साधुसम्बन्धो	177
निजाच्छ्वेत्वेच्च	486	प	
निलोदिभ्नो नृपहिते	178	पवक्षमांसस्य घागाय	437
निवति द्रुपनिकृत्वा	246	पक्षिणः पश्चात् भत्यर्था	224
तितातन्धयतो यदै	201	पक्षिणश्च यदा सत्ता	223
निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा	484	पक्षिणश्चापि क्रव्यादा-	97
निमित्तादनुपूर्वच्च	32	पक्षिणां द्विपदानां च	74
निमित्ते लक्ष्येदेहां	177	पदमश्वयुजे चापि	126

पञ्चप्रकारा विजेया:	44	पापमुत्त्यातिकं दृष्टवा	2
पञ्चमे विचरन् शुक्रे	275	पापा: धोरफलं दद्युः	17
पञ्चम्यां ब्राह्मणान् सिद्धान्	389	पापमूलकाणु यद्यस्तु	31
पञ्चयोजनिका सन्ध्या	89	पाणिवानो हितार्थ्यि	2
पञ्चवक्राणि भौमस्य	341	पाण्वे तदा भृं वृ॒यात्	247
पञ्चविशतिरात्रेण	236	पाशवज्ञामिश्रदृशाः	22
पञ्चसंबत्सरं धोरं	349	पिण्डस्वं च पदस्थं च	462
पञ्चाशिति विजानीयात्	127	पितायहर्षयः सर्वे	233
पतंगाः सविपाः कीटाः	342	पितृदेव तथा इत्येति	334
पतन्ति दशना यस्य	479	पितृश्लेष्मान्तिकः मूर्यो	404
पताकामसियहिं	438	पिजाचा यत्र दृ॒ष्ट्यते	240
पतेत्विमने यथाप्यभ्यो	183	पीडितोऽपचयं कुर्यात्	188
पथोधि तरति स्वर्वते	477	पीड्यन्ते केतुवातेन	394
परञ्चकं नृपभयं	228	पीड्यन्ते पूर्ववत् सर्वे	266
परञ्चायाविशेषोऽयं	471	पीड्यन्ते भयेनाथ	267
परस्य विषयं नव्यवा	204	पीड्यन्ते सोमधातेन	400
परिधार्गना वापादं	242	पीतं गन्धर्वनगरं	142
परिवर्तेद् यदा बात्	190	पीतं पुण्यं फलं यस्मै	441
परिवेषोदयोऽप्तम्याः	353	पीतः पीतं यदा हृथ्यात्	401
परिवेषो विरुद्धेषु	48	पीतपुण्णनिभो षम्नु	94
पश्चवः पक्षिणो वैक्षाः	393	पीतवर्णप्रसूनैर्बा	480
पशुव्यालपिणाचानां	350	पीतोत्तरा यदा कोटि-	354
पांशुवातं रजो धूपं	292	पीतो यदोत्तरं श्रीर्थीं	334
पांशुवृद्धिस्तथोऽक्षा	244	पीतो नोद्दितश्चिमश्च	481
पाञ्चाला कुरवच्चेव	207	पृच्छत् पृष्ठतो देण	22
पाणिपादी हरिग्रीष्म	464	पुण्यं पाणं भयेद्वा	483
पाण्डुराणि न वेष्मानि	442	पुण्यजीवो जयो राजा	268
पाण्डुर्बी द्रावर्णादो या	355	पुत्रवंश् यदा रोहत्	279
पाण्डुयोरलचोलाश्च	278	पुत्रंसुमाणादां	276
पाण्डुयोर्केन्द्राचोलाः	394	पुरुषीश्वा ग्रजन् अद्व-	487
पादं पादेन गुलामि	199	पुरुषान् गत्त गुरुं	336
पादहीनं गते दूरे	473	पुरीपं छर्दनं यस्तु	439
पादैः पदान् विवर्णनि	202	पुरीपं छर्दितं मूर्खं	477
पापघाते तु वातानां	110	पुरीपं नाहितं व्वर्षे	480

पुलिद्रा कोकणा भोजः	393	प्रकृतेयो विपर्यसिः	222
पुष्करिण्यां तु पस्तीरे	432	प्रक्षालितकरयुगल-	489
पुष्पं पुष्पे निबध्येत्	250	प्रक्षालितनिजदेहः	468
पुष्पाणि पीतरक्तानि	202	प्रतिपृथिति य गस्त्रैः	443
पुष्पं प्राप्तो द्विजान्	286	प्रजानामनयोर्वौर-	414
पुष्पेण मैत्रयोगेन	191	प्रजापत्यमाषाढां	277
पुष्पे हते हत पुष्पं	321	प्रज्वलद्वासधूमं वा	466
पुष्पो यदि द्विनक्षत्रे	320	प्रतिलोमोऽनुलोमो-	319
पूजितः सानुगंण	188	प्रतिलोमो यदाऽनीके	113
पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा	357	प्रतिसूयमिमस्तश्च	87
पूर्वतः श्रीरूपलिङ्गान्	266	प्रत्युदगच्छति आदित्यं	355
पूर्वतः समभारेण	291	प्रत्युपे पूर्वतः शुक्रः	277
पूर्वं रात्रणरित्येषा-	87	प्रथमं च द्वितीयं च	265
पूर्वलिङ्गानि केन्त्राणां	365	प्रथमं सण्डले शुक्रो	266, 275
पूर्ववातं यदा हत्यात्	109	प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य	308
पूर्ववातो यदा तूर्णं	111	प्रदक्षिणं तु कुर्वीन्	324
पूर्वमन्ध्यां नायराणां	50	प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं	324
पूर्वमन्ध्यां यदा वायु	112	प्रदक्षिणं प्रयातस्य	287
पूर्वसन्ध्यारामुतान्तः	163	प्रदक्षिणं यदा याति	278
पूर्वसूरे यदा शोरं	142	प्रदक्षिणं यदा वास्ति	110
पूर्वचिर्वस्तथा प्रोक्त	462	प्रदक्षिणे प्रयाणे तु	280
पूर्वफालगुनी गवेत्	281	प्रद्युम्ने वाऽय उत्पातो	234
पूर्वी फालगुनी शुभदा	456	प्रपातं य गिरेत् गानं	434
पूर्वमात्रपदाणां तु	123	प्रभूनवरत्रदास्त्विनी	49
पूर्वमिदीचीर्मशानी	165	प्रयाणे निष्ठंदृत्का	186
पूर्वार्धदिवसं ज्ञेयी	106	प्रयाणे पुरुषा वापि	190
पूर्वेण विजक्रृष्णाणि	292	प्रयातं पर्थिवं यवं	98
पूर्वोदये फलं यत्	299	प्रयातास्तु गोनाथां	189
पूर्वोवातः स्मृतः	109	प्रयातो यदि वा राजा	189
पृष्ठतः पुरुषाभाग	332	प्रवरं प्रातिग्रहं भृत्य	190
पृष्ठतो वर्षनः थोर्णु	96	प्रवालि सर्वतो वाता-	111
पौरा जानादा तेजा	372	प्रवाणं दृष्टिणे भागं	306
पौरेषा शुभग्नमात्र्य	394	प्रवाभग्नूरय वक्तं	306
प्रकृतोर्योग्याभागादा	16	प्रवारा: पंचशुक्रस्य	288

प्रशस्तु यदा वात	114	बुधस्तु वलवित्तानां	404
प्रसन्नाः साधुकाम्तश्च	358	बृषदीशिमनु प्राप्तः	296, 297
प्रसरयित्वा गोवा	250	बृहस्पति यदा हन्दात्	369
प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने	484	बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो	324
प्रहेषन्ते प्रथातेषु	198	आह्मी रोम्या प्रतीची च	309
प्राकारपरिखाणां च	111	भ	
प्राकाराट्टालिका	49	भथितं मन्त्रितं यच्च	247
प्रायेण हिसते देशान्	388	भग्नं दध्यं च जक्षं	189
प्रासादं कुञ्जरवरान्	432	भज्यते नव्यते तत्	233
प्रेतयुक्तं सामारुद्धो	435	भद्रताली विकुर्वन्ति	235
फ		भद्रगदामु भयं सविल	492
फलं वा यदि वा पृष्ठं	192	गणान्तिकं नामराणां	286
फले फलं यदा विनित्	240	भवेष्यादीनि चत्वारि	264
फलगुन्यश्च भरण्यो च	217	भवदिभर्यदहं गृष्ठो	16
फाल्गुनीषु च पूर्वम्	127	भवने यदि धूयन्ते	230
ब		भवान्तरेषु चाभ्यस्ता	431
बंगानंगान् विगांश्च	369	भवेतामुभये सहये	124
बन्धनं बहुपाणेन	478	भस्मारांशुरजस्कीर्णा	108
बन्धनेऽय वरस्थाने	476	भस्माभो गिःप्रभो रूक्षः	387
बद्धराश्च किराताश्च	401	भार्गवः गुरुवः प्राप्तो	393
बलधोऽसो भवेच्छ्यामे	290	भार्गवस्योत्तरां वीथीं	333
बलावलं च सर्वेषां	4	भास्करं तु यदा रूक्षः	46
बलीवर्दयुतं यातं	441	भित्वा यदोत्तरां वीथीं	334
बहुच्छिद्दान्तिवं विम्बं	466	भित्तं यस्तु भस्मेण	475
बहिरंगाश्च जायन्ते	183	भिनति सोमे मध्येन	238
बहुजा दीना शीलाश्च	127	भीमात्वगिक्षादिभदा	461
बहु बोदशको वाऽथ	392	भुजंगमे विलुप्यते	492
बहूदकानि जानीयात्	320	भूतं द्रव्यं भवद् वृत्ति	264
बहूदका सस्यवती	109	भूतेषु यः समुत्तातः	236
बालाऽन्नवृक्षपरणं	76	भूपकुञ्जरगोवाह-	477
बाहुसितासमायुक्तं	471	भूमि सप्ताशजनां	432
बाह्लीकान् वीतविषयान्	370	भूमिर्यन् नभो याति	241
बुद्धो यदोत्तरे मार्गं	332	भूम्यां यस्तिवा यार्गं	249
बुधो विवर्णो मध्येन	335	भूतं मन्त्रिततैलेन	486

मृत्यकरान् यवनांश्च	287	मध्याह्ने वार्षीरावे	112
मृत्यामात्या स्थियः	181	मध्येन प्रज्वलन् गच्छन्	283
भेरीशंखमृदांगाश्च	194	मन्त्रजः पापदूरस्थो	483
भेषाजमहिषाकाराः	22	मंत्रित्वा स्वमुखं रोगी	485
भोक्तुं नवाम्बरं शस्त-	493	मन्त्री न पश्यति छायाम्	469
भोजनेषु भयं विन्द्यात्	233	मन्त्रेणानेन हस्तस्य	488
सोजान् कर्लिगानुमाश्च	266	मन्दक्षीरा यदा वृक्षाः	354
भीतिकानां शरीराणां	16	मन्ददीप्तश्च दृष्टेत्	340
भौमान्तिरिक्षादिभेदा	369	मन्दवृष्टिमनावृष्टिः	167
भौमेनापि हतं मार्गं	242	मन्दोदा प्रथमे मासे	168
भौमो वक्रेण युद्धे	344	मन्दस्थलीं तथा छष्टं	438
भूमङ्गे जागिका जिह्वा-	463	पर्दनारोगे हन्ति	286
म		पलमूआदिवाधोत्थ	483
मक्षिका वा पर्तंगो वा	185	मलिनानि विवरणानि	77
मधां विशाखां च ज्येष्ठा	414	मल्लजा मालवे देशे	410
मधादीनि च गत्तेव	343	महतोऽपि समुद्भूतान्	115
मधानां दक्षिणं पाश्वं	280	महाकेतुश्च प्रवेतश्च	371
मधानामुत्तरं पाश्वं	281	महाजनाश्च पीड्यन्ते	390
मधार्या च विशाखाणां	276	महात्मानश्च ये सन्तो	309
मधाशु खारी विजेया	127	महाध्रान्यस्य महतो	409
मत्ता यथा विपद्यन्ते	203	महाधान्यानि पुण्याणि	412
मत्स्यभागीरथीनां	280	महान्तश्चसुरसाश्च	227
मदमदत्विकृतिहीनः	472	महापिपीलिकाराशिः	232
मद्यानि रुधिराऽस्थीनि	224	महापिपीलिकादृन्दं	231
मधुछत्रं विशेषं स्वप्ने	482	महामात्याश्च पीड्यन्ते	125
मधुराः क्षीरवृक्षाश्च	227	महावृक्षो यदा शाश्वां	244
मधुरे निवेशस्वप्ने	437	महिषोप्त्रखरारूद्धो	475
मधुसपिस्तनानां च	409	मायधान् कटकालांश्च	481
मध्यदेशे तु दुर्भिकं	283	मागधेषु पुरं रुयात्	1
मध्यमं वविद्युत्कृष्टं	108	माघजात् थवणे विन्द्यात्	167
मध्यमं गजाध्यक्ष-	247	माघमल्पोदकं विन्द्यात्	321
मध्यमे तु यदा मार्गं	307	मानुषः पशुाक्षीणां	366
मध्यमे मध्यमं वर्षं	67	मानोऽमानप्रभाषुक्तो	177
मध्याह्ने तु यदा चन्द्रं	355	मारुतः तत्रभवा गर्भा	166

माहतो दक्षिणे वापि	187	मेचकः कपिलः श्यामः	317
मार्गमेकं समाधित्य	170	मेचकश्चेनमृतं भवं	217
मार्गवान् महिषाकारः	351	मेषाजमहिषाकाराः	22
मार्गशीर्ये तु गर्भा	167	मंत्रादीनि च रास्तैव	344
मालदा पालं वैदेहा	411	मैथुनेन विपर्यासं	197
पालो वा वैणमुल्मो वा	440		य
मासे मासे समुत्थान	387	यः केतुचारमखिलं	373
मासोदितोऽनुराधायां	335	यजनोच्छेदनं यस्य	243
मिश्राणि स्वजनाः पुत्रा	295	यतः खण्डस्तु दृश्येत्	47
मिष्टभव्यमय विश्व	492	यतः सेताभिपतेत् तस्य	30
मुच्छितं जटिलं रूक्षं	481	यतोत्साहं तु हत्वा	356
मुक्तामणिजलेशानां	409	यतोऽधस्तनितं विन्द्यान्	354
मुद्गर-सबल-लुरिका	470	यतो राहुण्डेच्चन्द्रं	356
मुहूर्ते शकुने वापि	77	यतो राहुप्रसथने	358
मुहुर्मुहुर्यदा राजा	189	यतो विषयचातश्च	354
मूर्त्रं पुरीषं बहुषो	249	यत्किञ्चित् परिहीनं	204
मूलं मन्देव सेवने	414	यत्र देश समुत्पाता	252
मूलं वा कुरुते स्वप्ने	438	यत्रात्मातः न दृश्यन्ते	251
मूलमुत्तरतो याति	318	यत्रोदितश्च विनेरन्	274
मूलादिदक्षिणो मार्गः	288	यत्र वा तत्र वा स्थित्वा	532
मूलेन क्लिश्यते वक्रं	456	यथान्तरिक्षात् पतितं	182
मूलेन खारी विज्ञेया	129	यथा गृहं तथा कृष्णं	27
मूपवो नकुलस्थानं	185	यथाज्ञानप्रस्फोटं	204
मूपके तु यदा हृस्वो	318	यथान्धः पथिको भ्रष्टः	180
मृगवीर्थं पुनः प्राप्तः	296	यथाऽभिवृत्याः स्तिर्घा	31
मृगवीर्थमनुप्राप्तः	297	यथा मार्गं यथा बृद्धि	31
मृण्मयं नागमाल्दः	442	यथा वको रथो गत्वा	180
मृगे तु मूपकात्भयं	491	यथावदनुपूर्वेण	22
मेखलान् वायवन्याश्च	343	यथा बृद्धो नरो कश्चित्	228
मेघशंखस्वराभास्तु	176	यथास्थितं शुभं येधं	95
मेघशब्देन महता	96	यथा हि वलवान् राजा	372
मेघा यथाभिवर्पन्ति	96	यथोचितानि सर्वाणि	205
मेघा यदाऽभिवर्पन्ति	96	यदा मन्धवेसगरं	143, 144
मेघा सविद्युतश्चैव	98	यदा गृहमवच्छाद्य	50

यदाग्निवर्णो रवि-	299	यदा भाद्रपदां सेवेत्	286
यदा चन्द्रे वर्षणे	323	यदा भूघरश्च गाणि	231
यदा च पृथिवी शुक्रः	278	यदाऽध्रवजितो वाति	113
यदा चान्ये ग्रहा वान्मित	268	यदाऽध्रश्चितदृश्येत्	48
यदा चान्ये तिरोहन्ति	266	यदा मधुरश्चदेन	198
यदा चान्येऽभिगच्छन्ति	269, 270	यदा मध्यनिशायां तु	355
यदाऽज्जनतिसो मेधः	94	यदा मुंचन्ति शुष्ठाभि	202
यदा चाभ्रं धनेपित्रं	145	यदा राजा निवेशेत्	203
यदा चोत्तरतः स्वाति	318	यदा राजा प्रयाणे	75
यदा तमसि सम्भवः	180	यदा राजा प्रयातस्य 112, 190, 199	
यदा तु ग्रहनक्षत्रे	50	यदा वर्णं न लुप्तं स्यात्	491
यदा तु तत्परां गेतां	187	यदा वाऽन्येति रोहन्ति	267
यदा तु श्रीणि चत्वारि	307	यदाऽऽलहेत् प्रमदेत्	284
यदा तु धात्ययां वानां	78	यदार्द्धप्रतिसायां तु	235
यदा तु पञ्चमे शुक्रः	268	यदा वान्ये तिरोहन्ति	267
यदा तु षष्ठिले पाठे	269, 275	यदा चा युगपद् युक्तः	309
यदा तु बाताऽचत्वारो	110	यदा विष्णुं हेषन्ते	249
यदा तु रोपमुदितं	46	यदा शैवानजले वापि	250
यदाऽति क्रमते चारम्	294	यदा श्वेताऽस्त्रवृक्षस्य	66
यदाऽति मुच्यते शीघ्रं	47	यदाऽऽटो सप्तमासान्	340
यदात्युष्णं भवेच्छीते	223	यदा सपरिष्ठा सन्ध्या	114
यदा त्रिवर्गपर्यन्तं	47	यदा सप्तदशे कृष्णे	342
यदा द्वारेण नगरं	242	यदा स्थिती जीवबुधो	455
यदा धुमन्ति सीदन्ति	202	यदि शूमाभिभूता स्यात्	184
यदानुराधायां प्रविशत्	345	यदि राहुमपि प्राप्तं	50
यदानन्दं पादवारि वा	201	यदि वैश्वरणे कण्ठित्	233
यदा पञ्चदेशे ऋक्षे	342	यदि होता तु सेनायाः	185
यदा प्रतिपदि चन्द्रः	349	यदि होतुः पथे शीघ्रं	184
यदाप्युक्तो मात्र	191	यदोत्पातोऽयमेक-	233
यदा वाला ग्ररक्षन्ते	249	यदैकनक्त्रगतो कुर्यात्	392
यदा वुधोऽरुणामः	333	यद्वले जाक्षरं लुप्तं	491
यदा दृहस्ततिः शुक्रः	239	यदेवाऽग्नुरयुद्धे	179
यदा प्रदक्षिणं मन्त्रेत्	284	यद्यग्रतस्तु प्रयातेन	195
यदा भंगो भवत्येषां	247	यद्याज्यभाजने केशा	185

यद्युत्तगमु तिष्ठेत्	284	येषां निदर्शने किञ्चित्	192
यद्युत्पातः शिष्या करिचित्	215	येषां वर्णन संयुक्ता	21
यद्युत्पातः प्रदृश्यन्ते	235	येषां सेनापु निपतते	29
यद्युत्पातो वसन्तेवे	234	यो नरोऽवैव सम्पूर्णे	473
यः प्रकृतेविषयामः	16	यो नृत्यन् नीयते ब्रदध्वा	476
यवयोधूमदीद्वाणा-	409		
यगदु नक्षणमप्यन्तो	179	र	
यस्गाददेवासुरे युद्धे	176	रक्तं गत्त्वर्वनगरं	142, 146
यस्मिन् वर्णिमत् नक्षत्रे	310	रक्तं गीतानि द्रव्याणि	431
यस्य देशस्य नक्षत्रं	290, 415	रक्तं गजज्ञो च मुच्चती	471
यस्य यस्य न नक्षत्रं	393	रक्तपाता तथा माया	441
यस्य वा सम्ब्रहासस्य	186	रक्तवणो ददा भेद-	95
यस्याणि जन्मनक्षत्रं	31	रक्तवस्त्राद्यलंकारैः	480
यस्याः प्रणाणे सेनाया-	187	रक्तः ग्राम्यप्रदोषेण	381
यः स्वप्ने गायते हसते	437	रक्तयूवरसूत्रैर्वा	482
यो दिशो केतवोऽचिभि-	368	रक्तागांकरबीणादां	439, 481
या चादित्यात् पनेतुल्का	24	रक्ता गीता नभयु-	25
या तु पूर्वोत्तरा विद्युत्	65	रक्ता रक्तेषु चाश्रेषु	66
यात्रामुगस्थितोपकरणं	192	रक्तेः पांशुः सधूमं	96
यानानि वृक्ष-वेष्मानि	230	रक्ते पुत्रभयं विन्द्यात्	226
यानि रुग्णाणि दृश्यन्ते	168	रक्तो वा यथाभ्यु-	47
यायिनः छ्यातर्याः सस्यः	401	रक्तो वा यदि वा नीलो	402
यायिनो यामतो हन्त्यु-	400	रक्तो यहुः शशि सूर्यो	357
यायिनी चन्द्र-जुडी ती	413	रनिप्रदाना मोदन्ति	307
या वक्ता प्राण्डुमुखो छाया	470	रथायुधानामव्यानां	75
यावच्छायाकृति रवै-	176	रश्मिवती ऐदिनी भाति	64
युगान्त इति विष्ण्यातः	25	रगाः पांचाल-वाह्नीकाः	269
युद्धप्रियेषु हूटेषु	196	रत्नाश्च विरगा यत्र	244
युद्धानि कलहा वाधा	244	रागद्वेषी च योहं च	182
यूपांकधरं शूलं ॥	436	रागदीपां निष्टतं	243
ये रुचिवद् विषयिनाम्	198	राजवंशं न वीचित्यात्	205
ये तु पुर्वेण दृश्यन्ते	165	राजा वावनिजा गर्भा	394
येऽन्तरिक्षे जले भूमी	372	राजानश्च विरुद्ध्यन्ते	344
ये विदिक्षु विषिधाश्च	228	राजा तत्रतिरुपैरत्	97

राजा परिजनो वापि	184	ल
राजाभिः पूजिताः सर्वे	2	लकाटे तिलकं यस्य
राजा राजसुत्थोरो	443	लिखेत् सोमः शृगेण
राजोपकरणे भग्ने	232	लिखेद् रश्मिभिर्मूर्यो
राजो चक्रधरणो च	333	लिखे मरी कर्द्यमगो-
राजा वहुशुतेनापि	175	लुप्यते च क्रिया मर्वा
राजो यदि प्रयातस्य	195	लोहितो लोहितं हन्यात्
राजो राहुः इवार्थे	151	
रात्री तु सम्प्रवक्ष्यामि	44	व
रात्री दिनं दिने रात्रि	467	वंगा उत्कल-चाण्डालाः
राहु केतु-शणी शुक्रे	412	वकं शृद्वा यदा भीषो
राहुचारं प्रवक्ष्यामि	349	वकं वाते ह्रादशाहं
राहुणा गृह्यते चन्द्रो	238	वक्याष्युवतानि सर्वाणि
राहुणा संवृतं चन्द्र-	97	वत्सा विदेश-जिह्वाश्च
राहुश्च चन्द्रश्च तथैव	358	वधु सतापतेष्णापि
रुप्राक्षसाशेषवश्च	493	वगहयुक्ता या नारी
रुद्राक्षी विकृता काली	440	वर्ण गति च संस्थानं
रुद्रे च वरुणे कश्चिद्	234	वर्णानां संकरो विन्यात्
रुधिराभिपितां वृत्त्वा	443	वर्द्धमानश्वजाकाराः
रुधिरोदकवर्णानि	77	वर्द्धने चापि जीर्यन्ते
रुक्षा खण्डाश्च बग्माश्च	44	वर्षं भर्य सत्या क्षेमं
रुक्षा वाताश्च प्रकुब्जित्	97	वर्षदयं तु हस्तिका
रुक्षा विवर्णा विकृता	233	वर्षयुग्मेन जंघायां
रुषी तरुणः पुरुषो	470	वल्मीकस्थाशु जनने
रुष्यपारावताभश्च	45	वल्मीयुग्मगमो वृक्षो
रेवती-पुष्ययोः सोमः	390	वर्णीकृतेषु मध्येषु
रेवती योहताय स्याद्	457	वर्मु कुर्वादितिस्थूलो
रोगं शस्य विनाशं च	366	वग्रधा वारि वा यस्य
रोगात्ता इव हेतने	248	वस्त्रस्य कोणे निवर्यन्ति
रोचनाकुमुखाक्षि-	490	वहिंगाश्च जायन्ते
रोहिणी च ग्रहो हन्यात्	403	वक्त्रचंद्री न पश्यन्ते
रोहिणी शक्ते शुक्रे	278	वाजिवारणयानां
रोहिणी स्यात् परिकम्य	340	वाटधानाः कुनाटाश्च
रोहिण्या तु यदा धोपो	251	वाणीभिन्नमिवालीदं

वाणिजश्चैव वालजः	267	विचिठ्नविषमृणालं	289
वातः श्लेष्मा गुरुज्ञेय	404	विदिक्षु चापि सर्वासु	145
वाताक्षिरोगो-मात्रजले	290	विद्युतं तु यदा विद्युत्	67
वातिकं चाथ स्वप्नाश्च	3	विद्रवन्ति च राष्ट्राणि	108
वातेऽग्नी वासुभद्रे च	236	विपरीतं यदा कुर्वत्	190
वादिनश्चदाः श्रूयन्ते	229	विपरीता यदा छाया	244
वापि-कूप-तडागाश्च	166	विभ्राजमानो रक्तो वा	334
वाप्यानि सर्वबोजानि	105	विरतः कोऽपि संसारी	462
वामं न करोति नक्षत्रं	323	विरागान्यनुलोमानि	78
वामभूमिजले चारं	284	विरेचने अर्यलाभः	482
वामशृणं यदा वा स्थात्	245	विलम्बेन यदा तिष्ठेत्	281
वामाधीशायिनश्चैव	201	विलयं याति यः स्वप्ने	475
वामो ब्रदेद् यदा खारी	288	विलोमेषु च वात्पु	196
वरयमानेऽनिले पूर्वे	115	विलीयन्ते च राष्ट्रा-	295
वायव्यं वैष्णवं पुर्यं	27	विवदत्सु च लिङेषु	245
वायव्यामथ वारुण्यां	166	विवर्णप्रसावम्भः	390
वायव्ये वायवो दृष्टा	323	विवर्णा यदि गेवन्ते	410
वायुवेगसमां विन्द्यात्	294	विशाखा कृत्तिका चैव	320
वारुणे जलजं तोयं	323	विशाखा मध्यगः शुक-	413
वामुदेवं यद्युत्पातं	234	विशाखा समाख्यां समाख्यो	282
वासोभिहंसितः शुक्रे-	442	विशाखा रोहिणी भानु-	191
वाहकस्य वधं विन्द्यात्	200	विशाखाम् विजनीयात्	128
वाहनं महिषीपुर्वं	251	विषेषतामपसर्वं	144
विशका विशका खारी	289	विश्वादिसमयान्तरच	317
विशतियोजनानि स्युः	88	विषेण ग्रियते यस्तु	435
विश्वस्यजीतिकां खारी	289	विष्टां लोभानि रीढ्रं वा	480
विशति तु यदा गत्वा	294	विस्तीर्ण हादशांगं तु	3
विकीर्यमाणा कपिना	21	विश्वरं रवमानस्तु	77
विउताकृति संस्थाना	241	विहारानुस्तव्यांश्चापि	226
विकृतिर्दृष्यते काष्ठे	462	वीणां विषं च वल्लवीं	191
विकृते विकृतं सर्वं	365	वीर्यम्भरेषु या विद्युत्	435
विकृतैः पाणिपदादौः	224	वीरस्थाने शमशाने च	67
विकृन्तस्य शिखे शीप्ते	367	वीराश्चोग्राश्च भोजाश्च	255

वृक्षं वल्लीं च्छुपयुत्तमं	481	शम्बुरान् पुलिदकांशच	286
वृद्धा द्रुमा स्वन्ति	228	शयनासनजं पानं	476
वृद्धान् साधून् समागम्य	175	शयनाशनयानानां	479
वृश्चिकं दन्दशूकं वा	477	शयनासने परीक्षा	248
वृषकुजरप्रापाद-	477	शय्यासनं यानयुग्मं	181
वृषभ-करि-महिष-	462	शरीरं केसरं पुच्छं	249
वृषवीथिमनुप्राप्तः	296, 297	शरीरं प्रथमं लिङ्मं	484
वेणान् विद्यमालांश्च	369	श्लाकिनः जिलाकृतान्	285
वैजयन्तो विवर्णस्तु	188	शशिसूवौ गतौ यस्य	485
वैवस्वतो भूममात्री	369	शस्त्रं रक्तं भयं पीते	245
वैश्यश्च शिलिगनश्चापि	334	शस्त्रवकोपात् प्रधावन्ते	230
वैश्वानरपथं प्राप्तः	296, 297	शस्त्रधातोस्तत्याद्रीणां	323
वैश्वानरपथं प्राप्ते	391	शस्त्रेण छिद्रे जिह्वा	443
वैश्वानरपथे विद्युत्	66	शास्त्राप्रहृष्टा धर्मर्ता	248
वैश्वानरपथेऽप्तम्यां	392	शारद्यो नाभिवर्णन्ति	65
वैश्वानरपथो नामा	271	शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा	462
व्याधयः प्रबला यथा	246	शिशुमारो यदा वेतु	368
व्याधयश्च प्रयातानां	193	शिरामण्डलवत् यस्य	367
व्याधिश्चेतिप्च तु वृद्धिः	276	शिशीं शिखण्डीं विगलो	371
व्याधेः कोटयः पञ्च	461	शिरस्थास्ये च दृश्यन्ते	199
व्याला सरीसुपाश्चैव	125	शिरो वा छिद्रे वर्णु	433
श		शिखं विषाणवद् यस्य	367
शकुनेः कारणैश्चापि	74	शिल्पिना दाहजीवानां	334
शक्तिलांभूलसंस्थाना-	22	शिशिरे चापि वैदेन्ति	65
शतानि चैव केतुनां	365	शिष्टं सुभिर्णं विज्ञेयं	166
शनैश्चरं चारमिदं	310	शीतघातश्च विद्युत्त्वं	164
शनैश्चरणता एव	176	शुकानां शकुनानां च	368
शनैश्चरो यदा सीम्य-	238	शुक्रं दीप्त्या यदि हन्यान्	368
शनैश्चरश्च नीलाभः	404	शुक्रः जंखनिकाशः स्याद्	403
शब्रान् दण्डकानुडान्	387	शुक्रः शोषक्त्वं स्त्रीसंज्ञः	405
शब्रान् प्रतिलिमानि	281	शुक्रस्थ दक्षिणां वीर्यां	333
शब्दनिमित्तं पूर्वं	486	शुक्रोदं ग्रहो यानि	290
शब्दान् मुचन्ति दीप्तायु	25	शुक्रो नीलश्च कुण्ठश्च	298
शब्देन महता भूमि	240	शुक्लं पर्वं वामं दक्षिण-	489

शुक्लं प्रतिपदि चन्द्रे	244	श्रेष्ठे चतुर्थ-पष्ठे च	285
शुक्लपक्षे द्वितीयायां	351	श्वप्नविषीलिकावृन्दं	232
शुक्लमात्यां शुक्लालंकार-	483	श्लेषमूत्रपुरीषाणि	432
शुक्लवर्णो यदा भेघः	95	श्वेतं गन्धर्वनगरे	142
शुक्लवस्त्रो द्विजान्	225	श्वेतकेशरसंकाशे	351
शुक्ला रक्ता च पीता	23	श्वेतः पाण्डुरुच धीतश्च	399
शुभं दृष्टेभवाहानां	478	श्वेतः पीतश्च रक्तश्च	389
शुभग्रहाः फलं दद्युः	457	श्वेतमासारानं वानं	441
शुभः प्रायशुभा पश्चाद्	483	श्वेतः श्वेतं ग्रहं यत्र	401
शुभाशुभं विजानीयात्	146	श्वेतः सुभिक्षदो ज्ञेयः	367
शुभाशुभं समुद्भूतं	2	श्वेतस्थ कृष्णं दृश्येत्	200
शुभाशुभं वीक्ष्यतु यो	457	श्वेताः कृष्णः पीताः	467
शुभ्रालंकारवस्त्राद्या	477	श्वेते सुभिक्षं जानीयात्	309
शुष्कं काष्ठं तृणं वापि	250	श्वेतो ग्रहो यदा पीतो	239
शुष्कं प्रदद्यते यदा	185	श्वेतो नीलश्च पीतश्च	402
शुद्ध्यन्ति वै तडागानि	342	श्वेतो बाढ्य यदा पाण्डु	402
शुद्ध्यन्ते तोयधान्यानि	271	श्वेतो रक्तश्च पीतश्च	349
शून्यं चतुष्णाथं स्वप्ने	435	श्वेतो रसो द्विजान्	228
शृंगी राज्ञां विजयदः	383		ष
शेरते दक्षिणे पाश्वे	240	पद्मिशलं तस्य वर्णाणि	370
शेषप्रश्नविशेषे हा-	474	पद्मिनं गुह्यहीनेऽपि	473
शेषमौतादिकं प्रोक्तं	384	पण्मासं द्विष्णुं चापि	224
शीर्वशस्त्रवक्ष्योवेतः	177	पण्मासा प्रकृतिर्ज्ञेया	349
प्रमाणातास्त्विर रजः-	203	पटिकानां विरागाणां	409
प्रमाणे शुष्कं दाह	434	पोड्याक्षरतो वाह्ये	490
प्रामङ्गिद्रश्च पक्षादी	391	पोड्यानां तु मामानां	349
श्वामलोहितवर्णी	323		स
श्रमणा शाहृगणा वृद्धाः	250	संलयानभृप्तेवानो	278
श्रवणेन वारि विज्ञेयं	123	संग्रहे यापि नक्षत्रे	77
श्रवणे राज्यविश्रांशो	335	संध्रामा रोखास्तत्र	319
श्रावणः स्थिर्यालक्षा	2	संग्रामाप्तापि जायन्ते	145
श्रावणे प्रथमे गानं	126	संग्रामाण्वानुष्ठर्धन्ते	128
श्रीमद्वीरजितं नत्वा	461	संग्राम्यं च तदा धार्यं	413

संघजास्त्रानुपर्येत्	29	सर्वं निष्पद्यते धम्यं	272
संवत्समुपरथाप्य	309	सर्वकालं प्रबृह्यामि	111
संवत्सरे भाद्रपदे	322	सर्वंग्रहेष्वरः सूर्यः	380
सचित्ते शुभिक्षे देशे	252	सर्वंत्रैव प्रयाणेन	98
सदृशाः केतवो हन्त्यु-	370	सर्वंथा बलवान् वायु	113
सधूम्रा या सनिष्ठता	25	सर्वद्वाराणि दृष्ट्वासी	341
सध्वजं सप्ताकं वा	144, 145	सर्वधान्यानि जायन्ते	123
सन्ध्यानां रोहिणी गीव्यं	27	सर्वभूतभयं विन्द्यात्	390
सन्ध्यायां कृतिकां ज्येष्ठां	390	सर्वभूतहितं रक्तं	264
सन्ध्यायां तु यदा शीते	350	सर्वलक्षणसम्पन्ना	115
सन्ध्यायामेकरश्मस्तु	87	सर्वं इवेतं तदा धान्यं	268
सन्ध्यायां यानि रूपाणि	168	सर्वंगेषु तदा तस्य	485
गम्भायां सुप्रदीप्तायां	248	सर्वाप्यदि निमित्तानि	182
सन्ध्योत्तरा जयं राज्ञः	85	सर्वार्थिषु प्रमत्तश्च	188
सन्नाहितो यदा युक्ता	198	सर्वानितान् यथोद्दिष्टान्	4
सफेन्तं पिवति शीरं	478	सर्वास्वापि यदा दिश्म्	143
शमन्ततो यदा वान्ति	110	सर्वं वदुत्तरे काष्ठे	408
समन्ताद् बध्यते यस्तु	49	सर्वेषामेव सत्त्वानां	3
सप्तभूमित्वेऽस्मिन्	472	सर्वेषां शकुनानां च	192
सप्ततिं चात्र वाऽर्जीति	468	सर्वेषां शुभ्रवस्त्राणां	483
सप्तगो सप्तमं भासे	289	सर्वकचारं यो वेत्ति	299
सप्तरात्रं दिनार्धं च	163	सविशुल्मार्गो वायु	113
सप्तर्षीणामन्यतम्	111	सस्यवातं विजानीयात्	127
गप्तार्धं यदि वाष्टार्धं	368	सस्यनाशोऽनावृद्धिः	319
सप्ताहमव्याप्तरात्रं वा	319	सस्यानि फलवान्ति	127
समाध्यां यदि शून्याध्यां	223	माल्याद्वच मारदण्डाश्च	343
गरस्तडाग्नप्रतिमा	244	शिहमेषोऽद्वसंकाशः	351
भरसि सरितो वृक्षान्	88	सिद्धनानां विराजानां	310
सरीरूपा जलचणा-	438	सिहव्याव्रगजं युक्तो	431
सरोमध्ये स्थिता, गात्रे	225	सिहव्याव्रवराहोऽद्	22
सर्वदृष्टो यथा मन्त्रे	479	सिहा शूगाल-माजरि-	97
गर्वणे हयने चापि	370	मिहासनरथाकारा	26
सर्वात्मेनिकाशरु	224	मित्रं छत्रं भित्र वस्त्रं	479
	34	सितकुमुमनिभस्तु	292

सुकुमारं करयुगलं	462	स्कन्धावारनिवेशे	175
सुकृष्णा दण्डा यस्य	463	स्तब्धं लोचनयोर्युग्मं	463
सुखग्राहं लघुप्रन्थं	3	स्तम्भयन्तोऽथ लोगूलं	249
सुगन्धगन्धा ये मेघा	95	स्त्रीराज्यं ताङ्गकण्ठिच	268
सुगन्धेषु प्रशान्तेषु	115	स्थले वापि विकीर्यत्	440
सुनिमित्तेन संयुक्त-	183	स्थलेष्वभिं च यद्वीजं	109
सुभिर्धं क्षेममारोग्यं	125	स्थालीगिट्टसंस्थाने	382
सुरक्षी रजतप्रख्यः	381	स्थावरस्य वनीका	394
सुवसायां घदोत्पातः	236	स्थावराणां जयं विन्द्यात्	78
सुवर्णरूप्यभाष्टे	432	स्थावरे धूमिने तज्ज्ञा	368
सुवर्णवर्णो वर्ष वा	383	स्थिराणां गीवा न यस्य	464
सुवृद्धिः प्रबला ज्ञेया	341	स्थिराणां कम्पसरणे	224
सुसंस्थानाः सुवर्णश्च	167	स्थूलमुवर्णो द्युतिमात्रच	345
सुहृद्युतिश्च मिक्तमे	492	स्थूलः स्त्रियः सुवर्णश्च	400
सूर्यकाष्ठं सुराङ्गुद्राः	401	स्थूलो याति कृशित्वं	464
सूर्यचन्द्रमसौ पश्येद्	477	स्त्रातं लिप्तं सुगन्धेन	404
सेनां यान्ति प्रयातां	186	ज्ञात्वा देहमलंकृत्य	465
सेनाये हृष्यमानस्य	184	स्त्रियः प्रसन्नो विमले	324
सेनापतिवधं विन्द्यात्	200	स्त्रियबर्णमती सम्म्या	87
सेनामभिमुखी भूत्वा	28	स्त्रियबर्णश्चिन्नं ते मेघा-	95
सेनायास्तु प्रथातावा	193	स्त्रियः श्वेतो विजालश्च	387
सेनायास्तु समुद्योगे	27	स्त्रियान्यध्राणि यावन्ति	73
सोमगुहे निवृत्तेषु	455	स्त्रियाः सर्वेषु वर्णेषु	95
सोमो राहुश्च शुक्रश्च	26	स्त्रियास्त्रियोषु चाभ्रेषु	64
सोदाभिनी च पूर्वा च	63	स्त्रिये याम्योन्तरे मार्गे	410
सौभाग्यमर्थं लभते	433	स्त्रियोऽल्पघोषो धूमो	184
सौम्यं वाह्यं नरेन्द्रस्य	198	स्तेहवत्योऽन्यगामिन्यो	23
सौम्यजातं तथा विप्राः	400	स्तृशेलिलेत् प्रमदेहं	341
सौम्यां गति समुत्थाय	331	स्फीताश्च रामदेशान्च	268
सौम्या विमिथा संक्षिप्ता	331	र्वं प्रकाश्य गुरोर्ग्रे	484
सौरसेनाण्यच मत्स्यांश्च	285	स्वगाने शोदनं विद्यात्	482
सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान्	343	स्वतो गृहमन्यं श्वेतं	239
सौरेण तु हतं मार्गं	242	स्वप्नफलं पूर्वगतं	474
सौसुप्यते घदा नागः	201	स्वप्नमाला दिवास्वप्नो	431



COLLECTION OF VARIOUS

- HINDUISM SCRIPTURES
- HINDU COMICS
- AYURVEDA
- MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By
Avinash/Shashi

[creator of
hinduism
server]

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहुः
 स्वप्नोध्यायममुं मुख्य-
 स्वर्गेण तादृशा प्रीतिः
 स्वरूपं दृश्यते यत्र
 स्वातौ च दशाणाश्चिति
 स्वातौ च भैश्चदेवं च

ह

हन्ति मूलफलं मूले
 हन्यादशिवनीप्राप्तः
 हन्युर्मध्येन या उल्का
 हया तत्र तदेत्पातं
 हयानां ज्वलिते चाभिः
 हरिता मधुवणीश्च
 हरिते सर्वसगस्यानां
 हरितो नीलपथेन्तः
 हसने रोदने नुत्ये
 हसने शोचनं ब्रूयात्
 हमन्ति कथयेन्मार्गं
 हसन्ति यत्र निर्जिवाः
 हस्तपादाग्रहीका वा
 हस्ते च ध्रुवकमणि

182	हस्तयश्वरथपादात्	175
444	हिमो विवर्णः पिण्डो	178
182	हित्वा पूर्वं तु दिवसं	106
468	हिनस्ति वीजं सोयं च	323
282	हीनांगा जटिला बद्धा	187
165	हीने चारे जनपदान्	276
	हीते मुहूर्ते नक्ते	191
283	हीयमानं यदा चन्द्र	395
287	हूदये यस्य जायन्ते	440
26	हृदये वा गमुत्पन्नात्	482
248	हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेनुः	371
199	हेमन्ते त्रिणिते रत्नतः	236, 298
65	हेमवर्णः सुतोयाय	237
46	हेषन्ते तु यदा राजा	249
47	हेषन्त्यभीष्मामश्वा	202
229	हेषमानस्य दीप्तासु	199
437	हृस्वायचं तरवो षेषन्ते	227
470	हृस्वे भवति दुष्मिकं	319
243	हृस्वो रुक्षपृच्छ चन्द्रपृच्छ	389
471	हृस्वो विवर्णो रुक्षपृच्छ	400
456		

□